

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया प्रमेयचन्द्रिकाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्

॥ श्री-भगवतीसूत्रम् ॥

(सप्तदशो भागः)

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि

पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

राजकोटनिवासी-श्रेष्ठिश्री-शामजीभाई-वेलजीभाई वीराणी

तथा कडवीभाई-वीराणी इमारकट्टस्टप्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्ति

वीर-संवत्

विक्रम-संवत्

ईसवीसन्

प्रति १२००

२४२८

२०२८

१९७२

मूल्यम्-रु० ३५-०-०

अण्वालं देहाद्युः
श्री. म. रा. २२, स्थानदेवारी
जैनशास्त्रोद्धार समिति,
ठ. गरेडिया कुवा रोड,
राजकोट, (सौराष्ट्र).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैप यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालोद्यमं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



एरिगीतच्छन्दः

करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेया मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुलपृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥



मूल्यः ३. ३५=००

प्रथम आवृत्ति प्रत १२००
वीर संवत् २४६८
विक्रम संवत् २०२६
धम्मवीसन १६७२

: मुद्रक :
मणिलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धीकांटा रोड, अमदावाद.

श्री भगवतीसूत्र भाग सत्तरहवें की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
	अठाइसवां शतक उद्देशक पहला	
१	जीवों के पापकर्म समार्जन का निरूपण	१-११
	दूसरा उद्देशक	
२	अनन्तरोपपन्नक नारक जीवों के पापकर्म समार्जन का निरूपण	१२-१६
	तीसरा उद्देशक से ग्यारहवां उद्देशक पर्यन्त	
३	उद्देशकों की परिपाटि का कथन	१७-२०
	उन्तीसवें शतक का पहला उद्देशक	
४	पापकर्म भोगने का एवं उनको नष्ट करने का कथन	२१-३७
	दूसरा उद्देशक	
५	अनन्तरोपपन्नक नारकादिकों को आश्रित करके पापकर्म प्रस्थापन आदि का कथन	३८-४७
	तीसरा उद्देशक से ग्यारहवें पर्यन्तके उद्देशकों का कथन	
६	नैरयिकों के अचरमत्व, पापकर्म भोगनेका कथन	४८-६०
	तीसवें शतक का प्रारंभ-प्रथम उद्देशक	
७	जीवों के कर्मबन्ध होने के कारणों का कथन	६१-७४
८	जीवों के आयुबन्ध का निरूपण	७४-९७
९	नैरयिकों के आयुबन्ध का निरूपण	९७-११८
१०	क्रियावादि जीवों के भवसिद्धि आदि होने का कथन	११९-१३३
	३० दूसरा उद्देशक	
११	अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों के क्रियावादी आदि होने का कथन	१३४-१४६

तीसरा उद्देशक

- १३ परंपरोपपन्नक नैरयिकों के क्रियावादी
आदि होने का कथन १४७-१४९
- चौथे उद्देशक से ग्यारहवें पर्यन्त के उद्देशक
- १३ उद्देशकों के परिपाटि का कथन १५०-१५४
- इकतीसवें शतक का प्रथम उद्देशक
- १४ चार प्रकार के युगों का कथन १५५-१७६
- दूसरा उद्देशक
- १५ कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुगम नैरयिक
आदि के उत्पाद का कथन १७७-१८८
- तीसरा उद्देशक
- १६ नीललेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुगम नैरयिक
आदिकों के उत्पात आदि का कथन १८९-१९४
- चतुर्थ उद्देशक
- १७ कापोतलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुगम नैरयिकों के
उत्पात आदि का कथन १९५-२०२
- पांचवां उद्देशक
- १८ भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुगम नैरयिकों
के उत्पात आदि का कथन २०३-२१०
- छठा उद्देशक
- १९ कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुगम
नैरयिकों के उत्पात आदि का कथन २११-२१४
- सातवां उद्देशक
- २० नीललेश्यावाले भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुगम
नैरयिकों के उत्पात आदि का कथन २१६-२१५
- आठवां उद्देशक
- २१ कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक चार उद्देशकों का कथन २१६-२१७

नववे से बारहवे पर्यन्त के उद्देशकों का कथन

२२. ३०) अभवसिद्धिक नैरयिकों के एवं कृष्णादि लेश्या-
युक्त नैरयिकों के उत्पत्ति आदि का कथन २१८-२१९
- तेरहवे से सोलहवे पर्यन्त के उद्देशकों का कथन
२३. ३२) कृष्णादि लेश्यायुक्त सम्प्रसृष्टि नारकों के
चार उद्देशकों द्वारा उत्पत्ति आदि का कथन २२०-२२३
- सत्तरवे से बीसवे पर्यन्त के उद्देशकों का कथन
२४. कृष्णादि चार लेश्यायुक्त मिथ्यादृष्टि
नारकों के चार उद्देशकों द्वारा कथन २२३-
१९ से २४ पर्यन्त के चार उद्देशक का कथन
२५. कृष्णादि लेश्यायुक्त कृष्णपाक्षिक नैरयिकों
के उत्पत्ति आदि का चार उद्देशक द्वारा कथन २२४-
२५ से २८ पर्यन्त के चार उद्देशकों का कथन
२६. कृष्णादि चार लेश्यायुक्त शुक्लपाक्षिक क्षुल्लक
कृतयुग्म नैरयिकों का चार उद्देशक से कथन २२५-२२७
वत्तीसवां शतक का प्रथम उद्देशक
३७. नारकादि जीवों की उद्घर्तना का निरूपण २२८-२३५
दूसरे उद्देशक से २८ पर्यन्त के उद्देशक का कथन
३८. कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म नैरयिक आदि के
उद्देशकों के निर्देशपूर्वक कथन २३६-२३८
तेतीसवे शतक का प्रथम उद्देशक
२९. एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण २३९-२५५
दूसरा उद्देशक
३०. अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण २५६-२६५
तीसरा उद्देशक प्रथम अवान्तर शतक
३१. परंपरोपपन्नक एकेन्द्रिय से अचरम पर्यन्त के
एकेन्द्रियों का निरूपण २६६-२७५

	दूसरा एकेन्द्रिय शतक	
३२	कृष्णादि लेश्यायुक्त एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण	२७६-२८८
	तीसरा एकेन्द्रिय शतक	
३३	नीललेश्यायुक्त एकेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति आदि का निरूपण	२८९-
३४	कापोतलेश्यायुक्त एकेन्द्रियों के उत्पत्ति आदि कथनयुक्त चतुर्थ शतक	२९०-
	पांचवां एकेन्द्रिय शतक	
३५	अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों का निरूपण छद्मा एकेन्द्रिय शतक	२९०-२९४
३६	कृष्णलेश्यायुक्त भवसिद्धिक आदि एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण	२९४-३०३
	सातवां एवं आठवां एकेन्द्रिय शतक	
३७	नीललेश्यायुक्त भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के एकादश उद्देशात्मक शतक का कथन	३०३-३०४
३८	कापोतलेश्यायुक्त भवसिद्धिकों के ग्यारह उद्देशात्मक आठवें शतक का कथन	३०४-३०६
	नववां शतक	
३९	अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों का निरूपण दशवां ग्यारहवां एवं बारहवें शतक का कथन	३०५-३०७
४०	कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिका एकादश उद्देशात्मक दसवां एकेन्द्रिय शतक नीललेश्यायुक्त अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों का ग्यारह उद्देशात्मक ग्यारहवां शतक तथा कापोतलेश्यायुक्त अभवसिद्धिकों का बारहवां शतक का निरूपण	३०७-३११
	चौतीसवें शतक का आरंभ	
	पहला अवान्तर शतक प्रथम उद्देशक	
४१	विग्रहगति से एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण	३१२-३३२

- ४२ विग्रहगति से जीवों के उत्पात का निरूपण ३३३-३५६
- ४३ रत्नमभापृथिव्याश्रित पृथिव्याद्येकेन्द्रिय
जीवों का निरूपण ३५७-
- ४४ शर्करामभा पृथिव्याश्रित एकेन्द्रिय जीवों के
उत्पात आदि का कथन ३५८-३६८
- ४५ सामान्य से अधःक्षेत्र उर्ध्वक्षेत्र का आश्रय-
करके एकेन्द्रिय जीवों के उत्पात का कथन ३६९-३७४
- ४६ अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकाय आदि के अधोलोक में
विग्रहगति से उत्पात आदिका कथन ३७५-३९४
- ४७ लोक के पोरस्त्यादि चरमान्त विषय
अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायके उत्पत्ति आदि का कथन ३९४-४१४
- ४८ अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव का लोक के
दक्षिण चरमान्तमें उत्पत्ति आदि का कथन ४१४-४२४
- ४९ वादर पृथ्वीकाय आदि के स्थान आदि का निरूपण
दूसरा उद्देशक ४२४-४४४
- ५० अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रियों के भेद आदि का निरूपण
तीसरा उद्देशक ४४५-४६४
- ५१ परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव के भेदों का निरूपण
चौथे उद्देशक से ११ वे पर्यन्त के उद्देशक का कथन ४६५-४७०
- ५२ अनन्तरावगाह से अचरम पर्यन्त के जीवों के
भेदों का कथन
दूसरा एकेन्द्रिय शतक ४७१-४७२
- ५३ कृष्णलेश्यायुक्त एकेन्द्रियों के भेदों का निरूपण
तीसरा चौथा और पांचवां शतक ४७३-४७८
- ५४ नील-कापोत एवं शुक्ललेश्यावाले एकेन्द्रिय
जीवों के ग्यारह उद्देशान्मक शतकों द्वारा कथन ४७९-४८१

	छटा एकेन्द्रिय शतक	७५
५५	छुपणलेश्यायुक्त भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के भेदों का कथन	४८२-४८९
	सातवें से १२ वें पर्यन्त के एकेन्द्रिय शतक	४८९
५६	होलादि लेश्यायुक्त भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के उद्देशात्मक शतक से निरूपण	४९०-४९६
५७	पैंतीसवां शतक का प्रथम उद्देशक	४९६-५१४
५८	राशि के क्रम से महायुगों का निरूपण	४९६-५१४
५९	कृतयुग, कृतयुग एकेन्द्रिय जीव के उत्पत्ति आदि का निरूपण	५११-५३६
६०	अवशिष्ट पन्द्रह भेद कृतयुग ऋज आदि के उत्पत्ति आदि का निरूपण	५२९-६४३
	दूसरा उद्देशक	
६०	प्रथमसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का निरूपण	६४४-६४९
	तीसरे उद्देशक से ११ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन	
६१	प्रथम समय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रियों के उत्पत्ति आदि का कथन	६५०-६५४
६२	द्वितीयसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रियों के उत्पत्ति का निरूपण	६५५-६६७
६३	अचरमसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रियों के उत्पत्ति का निरूपण	६५७-६५८
६४	प्रथमसमय प्रथमसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रिय के उत्पत्ति का निरूपण	६५९-६६०
६५	प्रथमअप्रथमसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रिय के उत्पत्ति का निरूपण	६६०-६६२
६६	प्रथमचरमसमय कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का निरूपण	६६२-६६३

- ६७ प्रथमअवस्थासमय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५६४-५६५
- ६८ चरमचरण, एवं चरण अवस्थासमय कृतयुग्म
कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५६६-५६९
दूसरा एकेन्द्रियमहायुग्मसतक
- ६९ कृष्णलेखावाले कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५७०-५७४
- ७० प्रथमसमय कृष्णलेखावाले कृतयुग्म कृतयुग्म
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५७४-५७८
तीसरा एकेन्द्रिय महायुग्म सतक
- ७१ नीललेखायुक्त कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५७९-५८०
चतुर्थ एकेन्द्रिय महायुग्म सतक
- ७२ कापोतलेखायुक्त कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५८१-
५ से १२ पर्यन्तके एकेन्द्रिय सतक
- ७३ भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५८२-५८५
- ७४ कृष्णलेखानाले भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म
एकेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति का निरूपण ५८६
- ७५ नीललेख भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय
जीवों की उत्पत्ति का निरूपण ५८७
- ७६ कापोतलेखानाले भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म
एकेन्द्रियों की उत्पत्ति का निरूपण ५८८-५८९
- ७७ भवसिद्धिवाले के चार सतकों का कथन
छत्तीसवें सतक में प्रथम द्वीन्द्रिय
महायुग्म सतक के प्रथम उद्देशक ५८९-५९०

- ७८ कृतयुगम कृतयुगम त्रीन्द्रिय जीवों के
उत्पत्ति का निरूपण ५९१-५९७
२ से ग्यारह पर्यन्त के उद्देशक
- ७९ प्रथमसमय कृतयुगम कृतयुगम द्वीन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का निरूपण ५९८-६०३
२ से ४ द्वीन्द्रिय महायुगम शतक
- ८० कृष्णछैश्यावाले कृतयुगम कृतयुगम द्वीन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का कथन ६०४-६०६
५ से १२ पर्यन्त के द्वीन्द्रिय महायुगम
शतकों का कथन
- ८१ भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम द्वीन्द्रिय
जीवों के एवं अभवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम
द्वीन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का कथन ६०६-६१२
सडतीसवां त्रीन्द्रिय शतक
- ८२ कृतयुगमकृतयुगम त्रीन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का कथन ६१३-६१५
अडतीसवां शतक
- ८३ कृतयुगमकृतयुगम चतुरिन्द्रिय जीवों के
उत्पत्ति का कथन ६१६-६१८
उन्चालीसवां शतक
- ८४ कृतयुगमकृतयुगम असंज्ञिषञ्चेन्द्रिय जीवों के
उत्पत्ति का कथन ६१९-६२१
चालीसवां शतक प्रथम उद्देशक
- ८५ कृतयुगमकृतयुगम संज्ञिषञ्चेन्द्रिय जीवों के
उत्पत्ति का कथन ६२२-६३९
दूसरा उद्देशक
- ८६ प्रथमसमय कृतयुगम कृतयुगम संज्ञिषञ्चेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का कथन ६३९-६४३

- दूसरा कृष्णलेश्य संज्ञिपञ्चेन्द्रिय महायुग्म शतक
 ८७ कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 आदि जे उत्पत्ति का कथन ६४४-६४९
- ८८ प्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रियो
 के उत्पत्ति का कथन ६५०-६५३
- ८९ अप्रथमसमय से लेकर चरमाचरम पर्यन्त के
 उद्देशको का कथन ६५३
- तीसरा संज्ञिमहायुग्म शतक
 ९० नीललेश्यायुक्त कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६५४-६५६
 चतुर्थ संज्ञिमहायुग्म शतक
- ९१ कापोतलेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६५७-६५९
 पांचवां महायुग्म शतक
- ९२ तेजोलेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६६०-६६१
 छट्टा महायुग्म शतक
- ९३ पद्मलेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६६२-६६५
 सातवां संज्ञिमहायुग्म शतक
- ९४ शुक्ललेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६६५-६६८
 आठवां संज्ञिमहायुग्म शतक
- ९५ भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय
 जीवों के उत्पत्ति का कथन ६६९-६७१
 नववां संज्ञिमहायुग्म शतक
- ९६ कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म
 संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का कथन ६७१-६७२

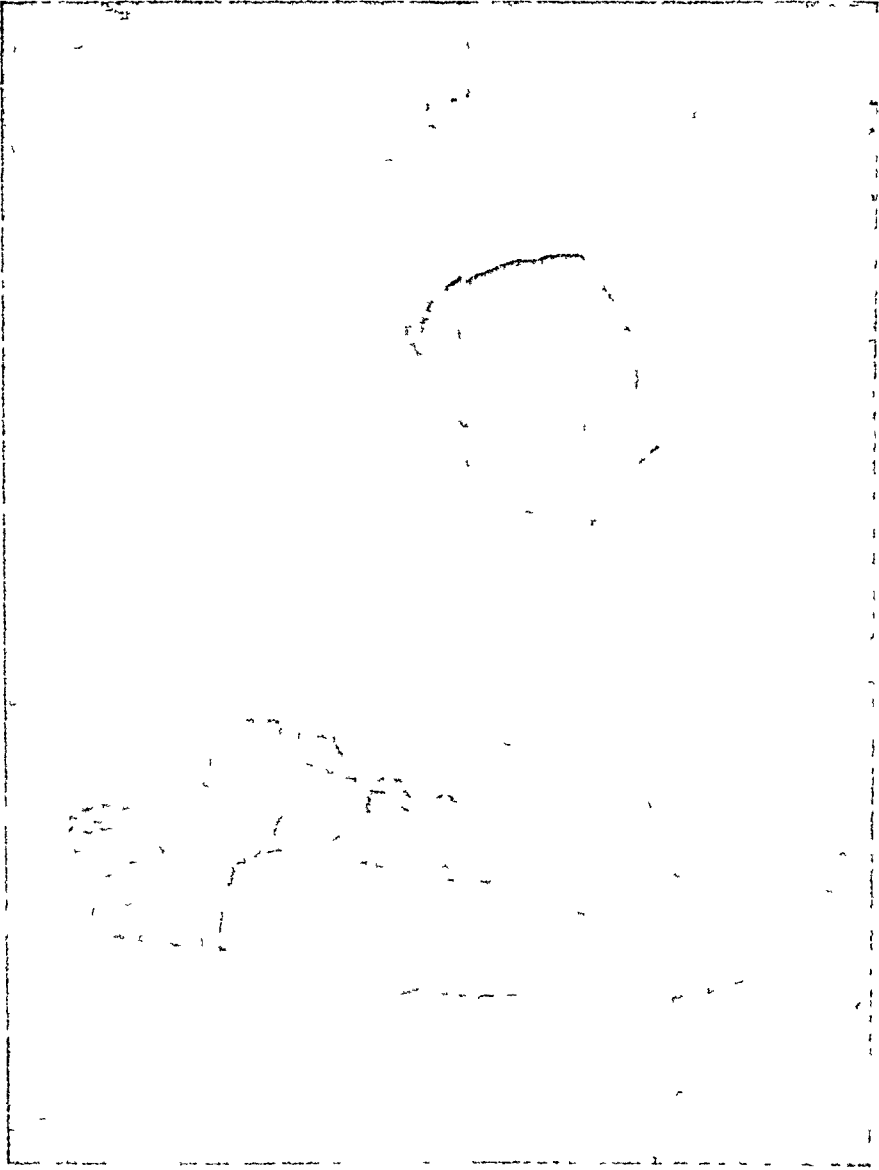
दसवां संज्ञितहायुग्न शत

- ९७ नीललेश्यावाले कृतयुग्नकृतयुग्न संज्ञितश्चेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का कथन ६७३-६७५
११ वें से १४ पर्यन्त के संज्ञितहायुग्न शतक
- ९८ भवसिद्धिक एकैन्द्रिय के सात शतकों का कथन ६७५-६७७
पन्द्रहवां संज्ञितहायुग्न शत
- ९९ अभवसिद्धिक कृतयुग्नकृतयुग्न संज्ञितश्चेन्द्रिय
जीवों के उत्पत्ति का कथन ६७८-६८४
दूसरा उद्देशक
- १०० मथमसमय अभवसिद्धिक कृतयुग्नकृतयुग्न संज्ञि-
पश्चेन्द्रिय जीवों के उत्पत्ति का कथन ६८५-६८७
सोलहवां संज्ञितहायुग्न शत
- १०१ कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिक कृतयुग्नकृतयुग्न
संज्ञितश्चेन्द्रियों के उत्पत्ति का कथन ६८८-६९७
१७ से २१ पर्यन्तके महायुग्न शत
- १०२ नील, कापोत आदि छह लेश्यायुक्त
अभवसिद्धियों के उत्पत्ति आदि का कथन ६९१-६९६
४१ वां शतक का प्रथम उद्देशा
- १०३ राशियुग्न का निरूपण ६९७-७१७
दूसरा उद्देशा
- १०४ राशियुग्न त्र्योजनेन्द्रियों के उत्पाद का निरूपण ७१८-७२२
तीसरा उद्देशा
- १०५ राशियुग्न द्वापरयुग्नराशिनाले नैरशियों के
उत्पाद का कथन ७२३-७२५
चौथा उद्देशा
- १०६ राशियुग्न कल्योज नैरशियों के उत्पाद का निरूपण ७२६-७२८

- ६ वें से आठवां पर्यन्त के चार उद्देशक
 १०७ कुण्डलेश्यावाले राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के
 उत्पाद का कथन ७२९-७३१
- १०८ कुण्डलेश्यावाले त्रयोदश-द्वापरयुग्म, कलयोज
 राशिवाले नैरयिकों के उत्पाद का कथन ७३२-७३३
 नवमे से १२ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन
- १०९ नीलेश्यावाले चार उद्देशकों के नैरयिकों के
 उत्पाद का कथन ७३४-७३६
 १३ वें से नील पर्यन्तके उद्देशक
- ११० कापोतलेश्यायुक्त नैरयिकों के उत्पाद का
 चार उद्देशक एवं तेजोलेश्यावाले नैरयिकों के
 चार उद्देशकों द्वारा कथन ७३६-७३९
 २१ से २८ पर्यन्त के उद्देशक का कथन
- १११ पत्रलेश्या शुक्ललेश्या से युक्त चार चार
 उद्देशकों का कथन ७३९-७४२
 २९ से ५६ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन
- ११२ भवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों की
 उत्पत्ति का कथन ७४३-७४६
- ११३ कुण्डलेश्यायुक्त भवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म
 नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन ७४५-७४६
- ११४ नीललेश्या एवं कापोतलेश्यायुक्त भवसिद्धिक
 राशियुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन ७४७-
- ११५ तेजोलेश्या पत्रलेश्यायुक्त भवसिद्धिकों का
 चार चार उद्देशक ७४८-
- ११६ शुक्ललेश्यायुक्त भवसिद्धिकों का चार
 उद्देशकों से कथन ७४९-

	५७ से ८४ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन	
११७	अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७५०-७५२
११८	कृष्णलेख्यावाले अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७५३-
११९	नीललेख्यावाले आदि लेख्यायुक्त अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७५४-७५७
	८५ से ११२ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन	
१२०	सम्यग्दृष्टि आदि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का निरूपण	७५७-७५९
१२१	कृष्णादि लेख्यायुक्त राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का निरूपण	७५९-७६१
	११३ वे से १४० पर्यन्तके उद्देशक का कथन	
१२२	मिथ्यादृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७६२-७६३
	१४१ से १६८ पर्यन्त के उद्देशक का कथन	
१२३	कृष्णपाक्षिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७६४-७६५
	१६९ से १९६ पर्यन्त के उद्देशकों का कथन	
१२४	शुक्लपाक्षिक यावत् शुक्लपाक्षिक शुक्ललेश्य राशियुग्म नैरयिकों के उत्पत्ति का कथन	७६६-७७२
१२५	भगवतीसूत्र के शतक एवं उद्देशकों का कथन	७७३-७७४
१२६	भगवतीसूत्र के उपदेश के प्रकार का कथन	७७५-७८०

“ असंख्यं जीवियं मा पमायए ”



श्री विनोदकुमार वीराणी
(दीक्षा लीधा पहेलां शास्त्रालयास करता)
जन्म पोर्टसुदान सा. १९९२

दीक्षा

भीमन - (राजस्थान)
सं. २०१३ वैशाख वद १२
ता. २६-५-५७ रविवार

निर्वाण

इलोही - (राजस्थान)
सां २०१३ श्रावण सुद १२
ता. ७-८-५७ शुधवार

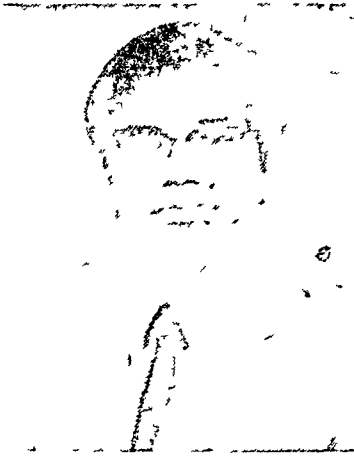
આવમુરખીત્રીઓ



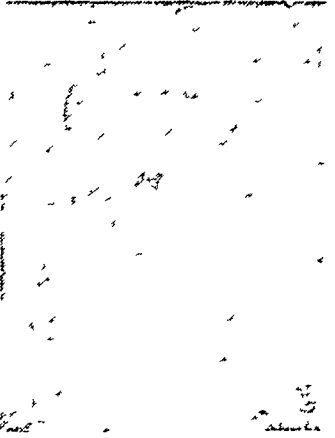
ગૅ શ્રી શાતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.



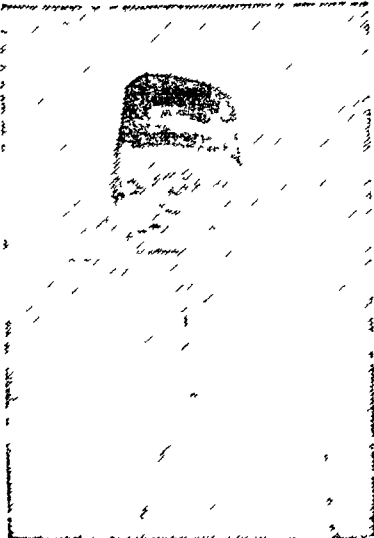
(સ્વ) શેઠશ્રી શામળભાઈ વેલજભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ



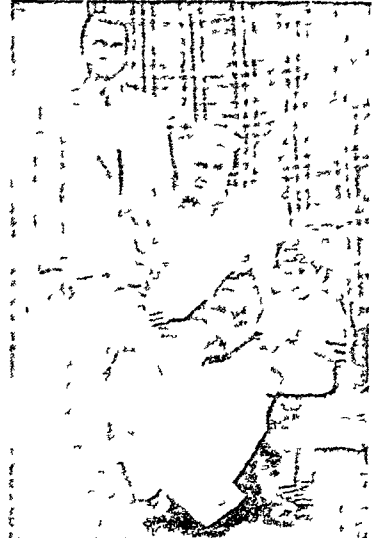
સ્વ. સુધીરભાઈ જય તીલાલ ઝવેરી
મુંબઈ.



(સ્વ) શેઠશ્રી જગનલાલ શામળદાસ
ભાવસાર અમદાવાદ.

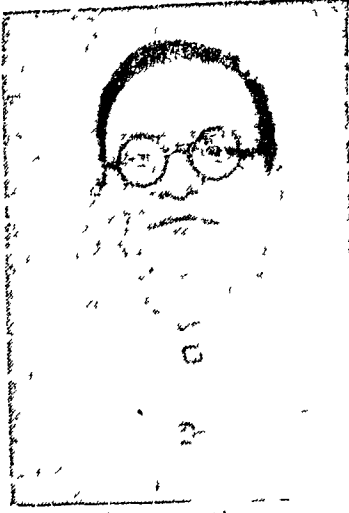


ગૅશ્રી શામળભાઈ શામળભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.

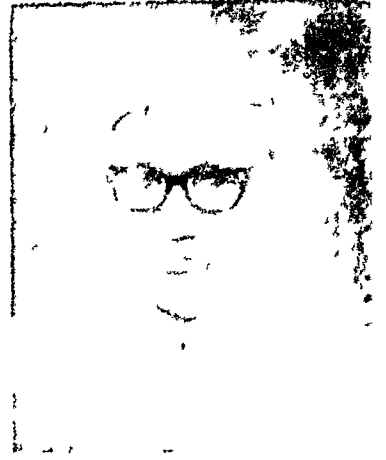


વચ્ચે ખેડેલા
લાલાજી કિશનચંદ્રજી સા જોડેરી
કેમેલા સુપુત્ર ત્રિ મહેતાખચનજીસા.
નાના - અનિલકુમાર જૈન (દોષના)

આઘમુરઘ્ઘીશ્રીઓ



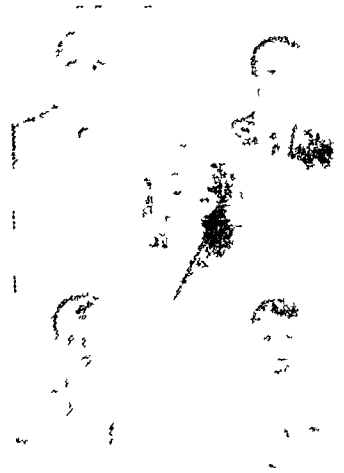
શ્રીમાન્ શેઠ પોપટલાલ માવજીભાઈ
મહેતા, જામજોધપુર



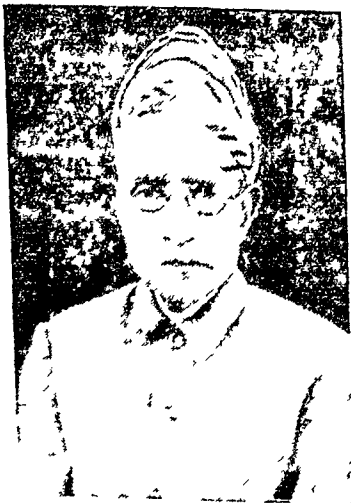
શ્રીમાન્ શેઠ ઘનરાજજી પન્નાલાલજી
જાંગડા, મુ. જાલના



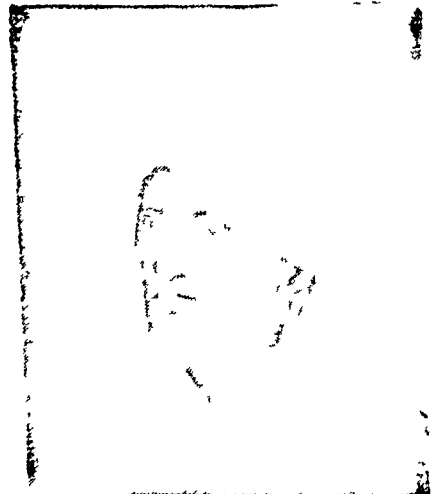
શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી લાલચંદજી સા. લુષિયા
તથા શેઠશ્રી નેવંતરાજજી લાલચંદજી સા



શેઠ પ્રભુદાસભાઈ મુલચંદભાઈ દેશી
રાજકોટ

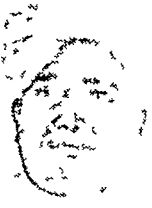


ઘાનવીર શેઠશ્રી અગરચન્દજી
મેહુઘાનજી સા. સેઠિયા, મુ. ઘોકાનેર



શ્રીમાન્ શેઠશ્રી મુકનચંદજી સા.
બાલિયા પાલી મારઘાડ

આચમુરખીશ્રીઓ



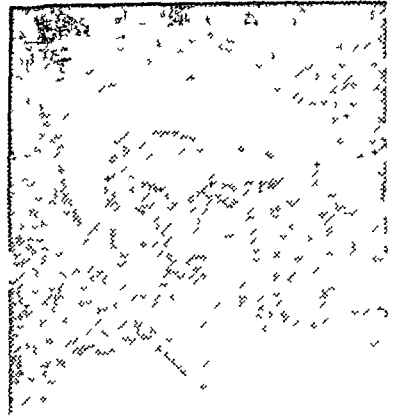
(સ્વ) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિયા
ભાણવડ.



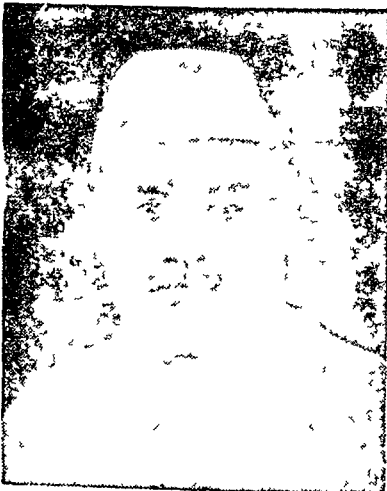
(સ્વ) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી જીવરાજભાઈ મૂલચંદભાઈ
ધ્રાંગધ્રા

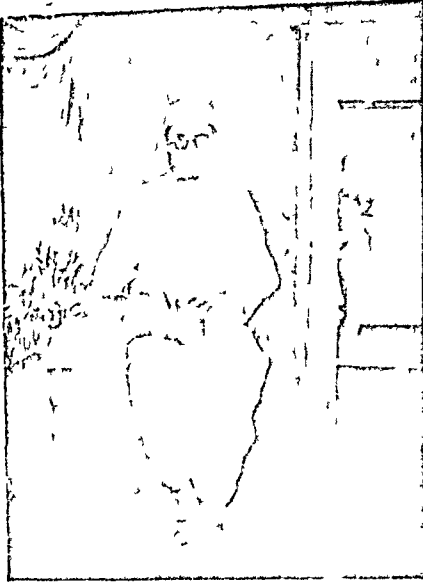


શેઠશ્રી જ્ઞેસિંગભાઈ પોચાલાલભાઈ
અમદાવાદ

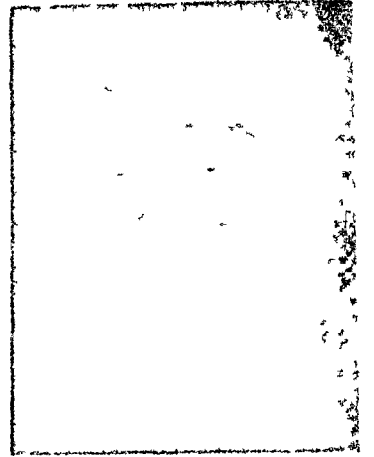


સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ

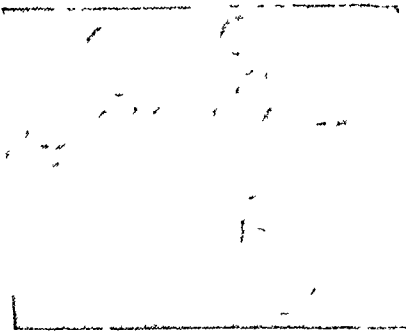
આવમુરખીશ્રીઓ



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
ખંભાત.



સ્વ. શેઠ તારાચંદજી નાહેવ મોલટા
મદ્રાસ.



શ્રીમાન્ શેઠ સા. ચીમનલાલજી સા.
ક્રમચંદ્રજી સા અજીતવાલે (સપરિવાર)



શેઠ દીનલાલજી દુસરજી સા
ખે ગલોશવાળા



સ્વ. ગોઠેલા મોહાલાલ શ્રીમાન્ મૂલચંદ્ર
નવાદીરલાલજી પરડિયા
૨ આનુમા ગોઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી પરડિયા
૩ ઉમેલા સૌથી નનાલાલ પૂનમચંદ પરડિયા

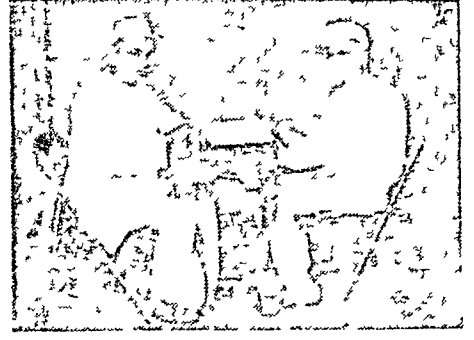


શ્રીમાન્ શેઠશ્રી
શ્રીમરાજજી સા. ચોરડિયા

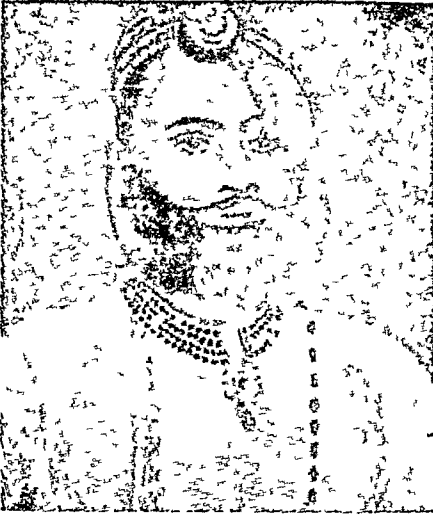
આવમુરુખીશ્રીઓ



પટેલ ડોસાભાઈ ગોપાલદાસ
મુ. સાણુંદ (જી. અમદાવાદ)



૧ અમીચંદભાઈ તથા
૨ ગીરધરભાઈ બાંટવિયા



શાહજી શ્રી મોહીલાલજી ગલુન્ડિયા



સ્વર્ગસ્થ ન્યાયમતિ
રતીલાલભાઈ ભાયચંદભાઈ મહેતા

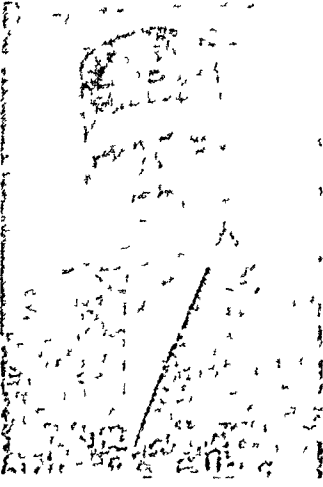


સ્વ૦ શેઠ માણિક્યંદ નેમચંદ
માંગરોલવાળા ('મુંબઈ')

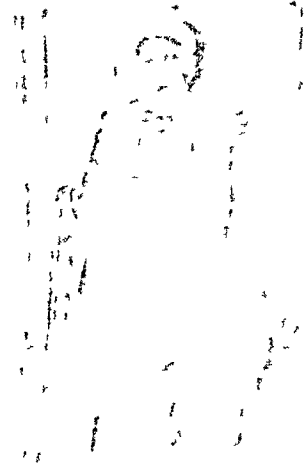


શ્રીમાન્ શેઠ સા.
શ્રી કાનુગા ધિગડમલજી

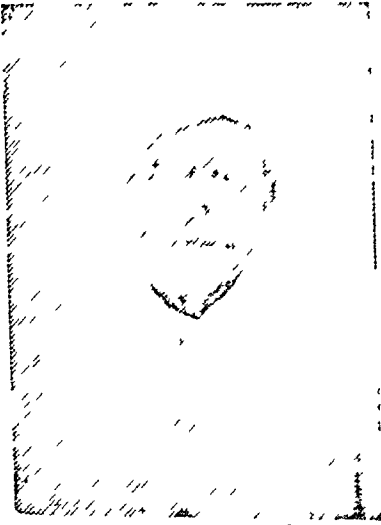
आद्यमुखीश्रीओ



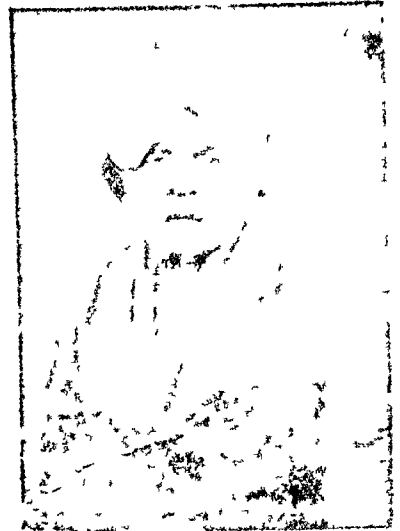
श्रीमान् शेठ मणीलाल पोपटलाल वोरा
अमदावाद, जन्म ता. १०-६-१९०४



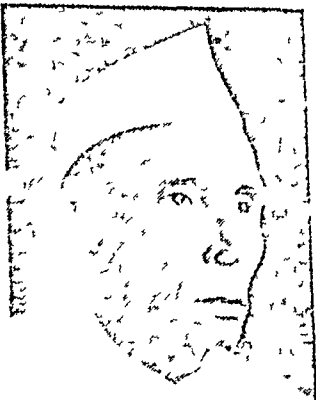
श्रीमान् शेठ लालाजी कपूरचन्द्रजी
नाहटा, मु. देहली



श्री वृजलाल दुर्लालजी पारेख
राजकोट.



डोहारी दुरगाबाय कृष्णभाई
राजकोट.



श्रीश्री मणीलाल जेठुलाल
पालनपुरवाला

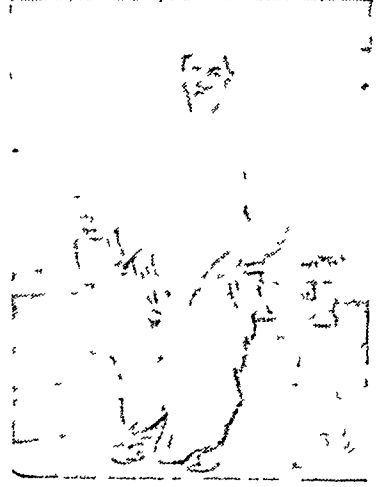


कपूरचन्द्र नाहटा देहलीवाला

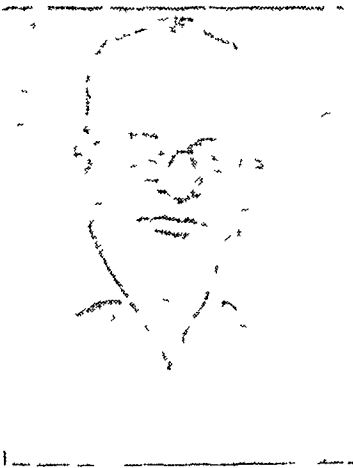
आद्यमुख्खीश्रीओ



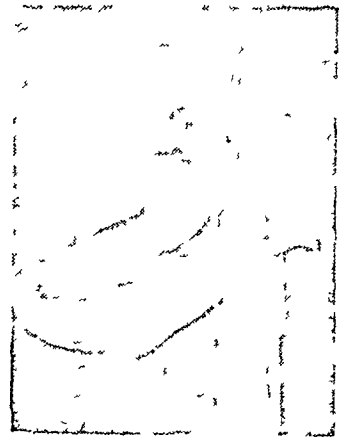
(स्व.) शेठश्री धारशीलाध अयणुलाल
भारसी



श्रीमान् शेठ जगजीवनभाई रतनसीभाई
वगडिया, मु. दामनगर



शेठश्री देवचंदभाई फोजीलालभाई
बलाणी-सुरत



अभुलपलार्ध मलुक्य र
पालनपुरवाला

બા. ધ્ર. શ્રી વિનોદમુનિનું સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર

પરમ વૈરાગી અને દયાના પુંજ જેવા આ પુરુષનો જન્મ વિક્રમ સંવત્ ૧૯૯૨ પોર્ટુગલ (આફ્રિકા)માં કે જ્યાં વીરાણી કુટુંબનો વ્યાપાર આજ દિવસ સુધી ચાલુ છે, ત્યાં થયો હતો.

શ્રી વિનોદકુમારના પુણ્યવાન પિતાશ્રીનું નામ શેઠશ્રી દુર્લભજી શામજી વીરાણી અને મહાલાગ્યવંતા તેમના માતૃશ્રીનું નામ જેન મણિજેન વીરાણી. બન્નેનું અસલ વતન રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર) છે. જેન મણિજેન ધાર્મિક ક્રિયામાં પહેલેથી જ રુચિવાળા હતા, પરંતુ શ્રી વિનોદકુમાર ગર્ભમાં આવ્યા પછી વધારે દૃઢધર્મી અને પ્રિયધર્મી બન્યા હતા.

પૂર્વલવના સંસ્કારથી શ્રી વિનોદકુમારનું લક્ષ ધાર્મિક અભ્યાસ અને ત્યાગ ભાવ તરફ વધારે હોવા છતાં તેઓશ્રીએ નોનમેટ્રીક સુધી અભ્યાસ કરી વ્યવહારિક કેળવણી લીધેલી અને વ્યાપારની પેઢીમાં કુશળતા ખતાવેલી.

તેઓશ્રીએ યુનાઇટેડ કિંગડમ, ફ્રાન્સ, બેલ્જિયમ, હોલેન્ડ, જર્મની સ્વી-ઝેડેન્ડ, તેમજ ઇટાલી, ઇજિપ્ત વગેરે દેશોમાં પ્રવાસ કરેલ સં. ૨૦૦૯ના વેશાખ માસ, સને ૧૯૫૩માં લંડનમાં રાણી એલીઝાબેથના રાજ્યારોહણ પ્રસંગે તેઓશ્રી લંડન ગયા હતા. કાશ્મીરનો પ્રવાસ પણ તેમણે કરેલ, દેશ પરદેશ ફરવા છતાં પણ તેમણે કોઈ વખતે પણ કંદમૂળનો આહાર વાપરેલ નહીં.

ઉગતી આવતી યુવાનીમાં તેઓશ્રીએ દુનિયાના રમણીય સ્થળો જેવાં કે કાશ્મીર, ઇજિપ્ત અને યુરોપનાં સુંદર સ્થળોની મુલાકાત લીધી હોવા છતાંએ તેઓને તે રમણીય સ્થળો કે રમણીય યુવતીઓનું આકર્ષણ થયું નહીં. એ એના પૂર્વલવના ધાર્મિક સંસ્કારનો જ રંગ હતો અને એ રંગે જ તેમને તે બધું ન ગમ્યું અને તુરત ત્યાંથી પાછા ફર્યા અને સાધુ-સાધવીજનાં દર્શન-કરવાને ઠેકઠેકાણે ગયા અને તેમના ઉપદેશનો લાભ લીધો અને વૈરાગ્યમાં જ મન લગાડ્યું. હુંડાકાલ અવસર્પિણિના આ દુષ્ક્રમ નામના પાંચમાં આરાનું [વચિત્ર વાતાવરણ જોઈ તેમને કંઈક શ્વાભ થતો કે તુરત જ તેનો ખુલાસો મેળવી લેતા અને ત્યાગ ભાવમાં સ્થિર રહેતા. દેશ પરદેશમાં પણ સામાયિક, પ્રતિક્રમણ, ચોવિહાર આદિ પરચક્રખાણુ વિ. ધર્મકાર્ય તેઓ ચૂકયા નહીં ઊંચી કોટિની શૈયાનો ત્યાગ કરી તેઓ સૂવા માટે માત્ર એક શેતરજી, એક ઓસીકું અને ઓઠવા એક આદર ફક્ત વાપરતા અને પ્રલંગ ઉપર નહીં પણ ભૂમિ પર જ

શયન કરતા. અને પહેરવા માટે એક ખાદીનો લેંઘો અને ઝખ્લો વાપરતા, કોઈ વખતે કબજો પહેરતા બહુ ઠંડી હોય તો વખતે સાદો ગરમ કે.ટ પહેરી લેતા અને મુહપત્તિ, પાથરણું, રઝોહરણ અને જે ચાર ધાર્મિક પુસ્તકની ઝોળી સાથે રાખતા સંડાસમાં નહીં પણ જંગલમાં એકાંત જગ્યામાં ઘણે ભાગે શરીરની અશુચિ દૂર કરવા જતા, હાલનાં ચાલતાં, સંડાસ અને પેશાબ સંબંધમાં જીવહયાની ધરાબર જાતના કરતા.

દેશમાં કે પરદેશમાં જ્યારે તેમને કોઈની સાથે સળવાતું થતું ત્યારે તેમની સાથે અહિંસામય જૈનધર્મનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યા વગર રહેતા નહીં.

દીક્ષાર્થીઓને દીક્ષા લેવાની પ્રેરણા કરતા અને એમ જ કહેતા કે જીવોને કોઈ ભરોસો નથી “જસંસ્વયં જીવિયં મા પમાવણ” આયુષ્ય તૂટતાં વાર લાગતી નથી, જીવન તૂટ્યું સંધાતું નથી માટે ધર્મકરણીમાં સમયમાત્રનો પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

ગોંડલ સંપ્રદાયના ઘણાખરા પૂ. સુનિવરો અને પૂ. મહામતીજીઓનો તથા ઘોટાદ સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્યશ્રી માણેકચંદજીમહારાજ અને દરિયાપુરી સંપ્રદાયના શાંત-શાસ્ત્રજી પૂ. સુનિશ્રી લાયચંદજી મહારાજ શ્રમણસંઘના મુખ્ય આચાર્યશ્રીજી આત્મારામજી મહારાજ તપોમય જ્ઞાનનિધિ શાસ્ત્રોદ્ધારક બા. ડ. પૂ. આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાચીલાલજી મહારાજ બંગેરે અનેક સાધુ-સાધ્વીના ઉપદેશનો તેમણે લાભ લીધેલ મુખર્ધમાં સં. ૨૦૧૧ સાલમાં શ્રી ધર્મસિંહજી મહારાજના સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન શ્રી લાલચંદજી મહારાજનો પરિચય થયો. લાલચંદજી મહારાજ પોતે, તથા સંચારપક્ષના ત્રણ પુત્રો અને જે પુત્રીઓ એમ કુલ ૬ બંદકે આખા કુટુંબે સંયમ અગીકાર કરેલ. તે બાણી તેમને અદ્ભૂત ત્યાગભાવના પ્રગટ થઈ કે જે કદી ક્ષય પામી નહીં.

આ પહેલાં તેઓ જ્યારે માતા-પિતા સાથે પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી માણેકચંદજી મહારાજના દર્શને ઘોટાદ ગયેલા ત્યારે તેમના ઉપદેશની જે અસર થઈ તે મુખ્ય અમર પહેલી હતી અને બીજી અસર તે પૂજ્ય લાલચંદજી મહારાજના સહકૃતબની દીક્ષા એ હતી. આ છેલ્લે પ્રસંગે પૂર્વલવની બાકી રહેલી આરાધનાને પૂરી કરવાના નિનિત્તકર્ય હોઈને વખતોવખત તેઓ માતા-પિતા પાસે દીક્ષાની આજ્ઞા માગતા હતા અને તેનો જવાબ તેમના પિતાશ્રી તન્કરથી એક જ હતો. ‘જે હજી વાર છે સમય પાકવા દીઓ જ્ઞાનાભ્યાસ વધારો,

સં. ૨૦૧૨ના અષાઠ સુધી ૧૫ થી શ્રી વિનોદકુમારે ગોંડલ સંપ્રદાયના શાસ્ત્ર પૂ આચાર્યશ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબ પાસે વેરાવળ ચાતુર્માસ દરમ્યાન ખાસ નિયમિત રીતે દીક્ષાની તૈયારી કરવા માટે તેમની પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ કર્યો. તેની સાથે પૂ આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજના સંસાર પક્ષના કુટુંબી દીક્ષાના ભાવિક શ્રી જસરાજભાઈ પણ જ્ઞાનાભ્યાસ કરતા હતા. તેઓએ ત્યાં એવો નિર્ણય કરેલો કે આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમ મહારાજ પાસે આપણે બન્નેએ દીક્ષા લેવી, પહેલાં વિનોદકુમારે અને પછી શ્રી જસરાજભાઈએ દીક્ષા લેવી, શ્રી જસરાજભાઈની દીક્ષાતિથિ પૂં શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબે સં. ૨૦૧૩ના જેઠ સુદ ૫ ને સોમવારે માંગરોલ મુકામે નક્કી કરી શ્રી જસરાજભાઈ વિનોદકુમારને રાજકોટ મળ્યા. શ્રી વિનોદકુમારે શ્રી જસરાજભાઈની યથાયોગ્ય સેવા બજાવી, માંગરોળ રવાના કર્યા અને પોતે નિશ્ચયપૂર્વક દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી પણ તેઓના પિતાશ્રીની એકને એક વાણી સાંભળીને તેમને મનમાં આઘાત થયો અને દીક્ષા માટેનો તેમણે બીજો રસ્તો શોધી કાઢ્યો.

પૂજ્યશ્રી લાલચંદજી મહારાજ અને તેમના શિષ્યોનો પરિચય મુંબઈમાં થયેલ હતો અને ત્યારબાદ કોઈ વખત પત્રવહવાર પણ થતો હતો. છેલ્લા પત્રથી તેમણે જાણેલ હતું, જે પૂં શ્રી લાલચંદજી મહારાજ. ખીચન ગામે પૂ. આચાર્ય શ્રી સમરથમલજી મહારાજ સાહેબ પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ અર્થે ગયા છે. પોતાને પિતાશ્રીની આજ્ઞા (દીક્ષા માટે) મળે તેમ નથી અને દીક્ષા તો લેવી જ છે આજ્ઞા વિના કોઈ સાધુ મુનિરાજ દીક્ષા આપે નહીં અને સ્વયમેવ દીક્ષા સૌરાષ્ટ્રમાં લઈને આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ પાસે જવામાં ઘણાં વિઘ્નો થશે, એમ ધારીને તેઓએ દૂર રાજસ્થાનમાં ચાલ્યા જવાનું નક્કી કર્યું.

તા. ૨૪-૫-૫૭ સં. ૨૦૧૩ના વૈશાખ વદ ૧૦ ને શુક્રવારના રોજ સાંજના તેમના માતૃશ્રી સાથે છેલ્લું જમણું કર્યું. લોજન કરી, માતૃશ્રી સામાયિકમાં બેસી ગયા. તે વખતે કોઈને જાણુ કર્યા વગર દીક્ષાના વિઘ્નોમાંથી બચવા માટે ઘર, કુટુંબ, સૌરાષ્ટ્રભૂમિ અને ગોંડલ સંપ્રદાયનો પણ ત્યાગ કરી તેઓ ખીચન તરફ રવાના થયા.

શ્રી વિનોદમુનિના નિવેદન પરથી માલૂમ પડ્યું કે તા. ૨૪-૫-૫૭ના રોજ રાત્રે આઠ વાગે ઘેરથી નીકળી, રાજકોટ જંકશને જઈ જોધપુરની ટિકિટ લીધી તા. ૨૫-૫-૫૭ના સવારે આઠ વાગ્યે મહેસાણા પહોંચ્યા ત્યાં અઢી કલાક ગાડી પડી રહે છે, તે દરમ્યાન ગામમાં જઈને લોચ કરવા માટેના વાળ રાખીને બાકીના કઠાવી નાખ્યાં અને ગાડીમાં બેસી ગયા મારવાડ જંકશન તથા જોધપુર જંકશન થઈને તા. ૨૬-૫-૫૭ની સવારે ૪|| વાગ્યે કલોદી

પહોંચ્યા ત્યાંથી પુઝે અધીને ખીચત ઉપાશ્રયમાં જઈ ત્યાં ઊરાજતા મુનિવરોના દર્શન કર્યાં વંદણુ નગરકાર કરી મુખશાતા પૂછી, બંદાર નીકળ્યા અને પોતાના સામાયિકના કપડાં પહેર્યાં અને પછી પૂજ્ય શ્રી મુનિવરોની ગન્ધુજ સામાયિક કરવા બેઠા, તેમાં “જાવ નિયમં પજ્જુવાસાધિ દુવિહં નિનિદેણં” ના બદલે “જાવજીવપજ્જુવાસાધિ નિવિહં તિરિદેણ” બોલ્યા તે શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજે સાંભળ્યું અને તેઓશ્રીએ પૂછ્યું કે વિનોદકુમાર ! તમે આ શું કરો છો ? તેનો જવાબ આપવાને બદલે “જન્માણં કોમિરામિ” બોલી પાઠ પૂરો કર્યો અને પછી વિનયપૂર્વક બે હાથ ઢેરીને બાદમાં કે “સાહેબ ! એ તો બની ચૂક્યું અને શે’ સ્વયમેવ દીક્ષા લઈ લીધી, તે બરોબર છે અને તેમાં કાંઈ ફેરફાર થઈ ગયું તેમ નથી. આ શિવાય આપશ્રીની ખીજ કાંઈપણ પ્રકારની આજ્ઞા હોય તો ફરમાવો.”

તેજ દિવસે બપોરના શાશ્વત પૂ. મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ સાહેબે શ્રી વિનોદકુમાર મુનિને પોતાની પાસે બોલાવ્યા અને સમબંધ્યા કે “તમે એક સારા જ્ઞાનદાન કુટુંબની વ્યક્તિ છો. તમારી આ દીક્ષા યાગીકાર કરવાની રીત બરાબર નથી, કારણ કે તમારા માતા પિતાને આ યજ્ઞકલ્પી હુ ગણાય અને તેથી મારી સંચિત છે કે રજોદરણની ડાંડી ઉપરથી કપડું કાઢી નાખો જેથી તમે શ્રાવક ગણાવ અને જરૂર પડે તો શ્રાવકોનો સાથ લઈ શકો, એમ વ્રણનાર પૂ. મહારાજશ્રીએ સમબંધેલા પરંતુ તેમણે વ્રણેય વળત એક જ ઉત્તર આપેલો કે “જે થયું, તે થયું હવે મારે આગળ શું કરવું તે ફરમાવો.”

શ્રી વિનોદમુનિના શ્રી સમરથમલજી જેવા મહારાજુનિના પ્રશ્નના જવાબ પછી ખીચતનો અતુર્વિધ સઘ વિચારમાં પડી ગયો અને મુનિશ્રીએ પર સંસારીઓને દોષ પણ પ્રકાશનો નિષ્કાંણ હુમલો ન આવે તે માટે વિનોદમુનિને જણાવવામાં આવ્યું કે “તમારી સલામતી માટે તમારે બહાર નિવેદન બહાર પાડવાની જરૂર છે” ત્યારે શ્રી વિનોદમુનિએ પોતાના હસ્તાશ્રયે નિવેદન શ્રીસંઘ સમક્ષ પ્રગટ કર્યું, તેનો સાર નીચે મુજબ છે:-

મારા માતા-પિતા ચોહને વણ થઈને દીક્ષાની આજ્ઞા આપે તેમ ન હતું અને “અસંસ્રવ જીવિત્ત્વં જા પમાત્તવ” ને આધારે હું એક ક્ષણ પણ દીક્ષાથી વચિત રહી શકું તેમ નથી, એમ મને લાગ્યું. શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજ સાહેબ-વગેરેએ મને મારી દીક્ષા માટે વિચારી પછી પગલું ભરવાનું કહેલ પરંતુ મને

સમય માત્રનો પ્રમાદ કરવો ઠીક ન લાગ્યો, તેથી શ્રી અરિહંત લગવતો તમા શ્રી સિદ્ધ લગવતોની સાક્ષીએ મારા ગુરુ મહારાજ સમક્ષ પ્રવચનો પાઠ લાવીને મારા અત્માના કલ્યાણ માટે દીક્ષા અંગીકાર કરી છે. સમાજને જોટો ખ્યાલ ન આવે કે મારી દીક્ષા ક્ષણિક જુસ્સાથી અગર ગેરસમજથી થઈ છે તેથી તથા સમાજમાં જૈનશાસનની પ્રભાવના થાય તે હેતુથી મારે મારો વૃત્તાત પ્રગટ કરવો ઉચિત છે.

ઉત્તરાધ્યયનજી સૂત્રના ૧૬ મા અધ્યયન પરથી મને લાગ્યું કે મહુષ્ય જીવનનું ખરૂં કર્તવ્ય મોક્ષકળ આપનારી દીક્ષા જ છે.

છેવટ સુધી મેં મારા બાપુજી પાસે દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી અને તે વખતે પણ પહેલાની જેમ વાત ઉઠાવી દીધી અને અનંત ઉપકારી એવા મારા બાપુજી સમક્ષ હું તેમને કડક લાપામાં પણ કહી શકતો ન હતો અને ખીજી બાબુથી મને થયું કે આયુષ્ય અશાશ્વત છે અને આવા ઉત્તમ કાર્ય માટે જરાપણ પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી, તેથી મેં વિચારીને આ પગલું ભયું છે અને મને પૂર્ણ વિશ્વાસ છે કે શ્રી વીરપ્રભુ મહાવીર સ્વામીનો સકળ સંઘ મારા આ કાર્યને અનુમોદશે જ “ તથાસ્તુ ”.

રાજકોટમાં શ્રી વિનોદકુમારના ગયા પછી પાછળથી ખખર પડી કે વિનોદ-કુમાર દેખાતા નથી એટલે તપાસ થવા માડી ગામમાં ક્યાંય પત્તો ન લાગ્યો એટલે બહારગામ તારો કર્યા ક્યાંયથી પણ સંતોષકારક સમાચાર સાપડયા નહીં. અર્થાત્ પત્તો મળ્યો જ નહીં. આમ વિસાસણના પરિણામે તેમના પિતાશ્રીને જે મહિના પહેલાની એક વાતની યાદ આવી તે એ હતી કે તે વખતે શ્રી વિનોદકુમારે આજ્ઞા માગેલી કે “ બાપુજી ! આપની આજ્ઞા હોય તો આ ચાતુર્માસમાં ખીચત (રાજસ્થાન) જાઉં કારણ કે ખીચતમાં પૂઠ ગુરુમહારાજ શ્રી સમરથમલજી મહારાજ કે જેઓ સિદ્ધાંત વિશારદ છે અને અનેકાંતવાદના પૂરા બાણકાર છે, તેઓ ત્યાં ગિરાજમાન છે જેઓશ્રી પાસે શાસ્ત્રાભ્યાસ કરવા માટે પૂ શ્રી લાલચંદજી મહારાજ આદિ ઠાણા યજ્ઞાના છે. તો મારી ઇચ્છા પણ ત્યાં તેમની પાસે જવાની છે.

આ વાતચીતનું સ્મરણ પિતાશ્રીને આવવા સાથે તેઓએ પં. પૂર્ણચંદ્રજી દેકને પોતાની પાસે ઊલાવ્યા અને વિનોદકુમાર માટેની પોતાની ચિંતા વ્યક્ત કરી. પંડિતનું આ વાતને સમર્થન મળ્યું. તેઓશ્રીએ જણાવ્યું કે થોડા સમય પૂર્વે વિનોદકુમારે મારી પાસે જાણવા માગ્યું હતું કે, ખીચતમાં કેવા પ્રકારની

સગવડ છે? આમ મારી સાથે વાર્તાલાપ થયો હતો. બંને આ પ્રમાણે એકમત થતાં તેમના પિતાશ્રીએ ખીચન તાર કરવા સૂચના કરી તા. ૨૭-૫-૫૭ ના રોજ પૃથ્વીરાજજી માલુ ખીચન (રાજસ્થાન) ઉપર તાર કર્યો.

તા.૨૮-૫-૫૭ના રોજ જવાબ આપ્યો કે શ્રી વિનોદલાલજીએ ખીચનમાં સ્વયંમેવ દીક્ષા ગ્રહણ કરી છે એટલે તેમના પિતાશ્રીએ રાવબહાદુરશ્રી એમ. પી. સાહેબ શ્રી કેશવલાલલાલ પારેખ અને પંડિતજી પૂર્ણચંદ્રજી દક એમ ત્રણેયને શ્રી વિનોદકુમારને પાછા તેડી લાવવા માટે ખીચન મોકલ્યા તા. ૨૮-૫-૫૭ના રોજ રવાના થઈ તા. ૩૦-૫-૫૭ના રોજ સવારે ફ્લોદી સ્ટેશને પહોંચ્યા. બગદગાડીમાં તેઓ ખીચન ગયા કે જ્યાં સ્થવિર મુનિશ્રી શીરોમલજી મહારાજ પૂજ્ય પંડિતરત્ન શાસ્ત્ર વિશારદ શ્રી સમરથમલજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૮ તથા પૂજ્ય તપસ્વી મહારાજ શ્રી લાલચંદજી મહારાજ આદિ ઠા. ૪ બિરાજમાન હતા. કુલ્લે સાધુ-સાધ્વીની સંખ્યા અઠ્ઠાવીસથી ત્રીસની હતી.

પૂછપરછના જવાબમાં શ્રી વિનોદમુનિએ કેશવલાલલાલ પારેખને કહ્યું કે “મેં તો દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી છે તેમાં કાંઈ ફેરફાર થાય તેમ નથી. તમો અમારા વીરાણી કુટુંબના હિતૈષી છો. અને જો સાચા હિતૈષી હો તો મારા પૂ બા અને બાપુજીને સમજાવીને મારી હવે પછીની મોટી દીક્ષાની આજ્ઞા અઠવાડિયાની અંદર અપાવી દો એટલું જ નહીં પણ “સવિ જીવ કર્મ શાસન રસી”ની લાવનામાં અને આજ દિવસ સુધીના મારી ઉપરના ઉપકારના બદલામાં આગમને અનુલક્ષીને મારી લાવના એ જ હોય કે, મારી દીક્ષા તેઓની દીક્ષાતું નિમિત્ત બને અને મારા માતા-પિતા સદ્ગતિને સાધે અર્થાત્ મારી સાથે દીક્ષા લીએ.

આવા દેઠ જવાબના પરિણામે તેજ સમયે શ્રી વિનોદકુમારને પાછા લઈ જવાની લાવનાને નિબંધતા સાંપડી અને તા. ૩૧-૫-૫૭ ની રાત્રીના રવાના થઈ તા. ૨-૬-૫૭ના સવારે મહા પરીષદરૂપ ક્ષેત્રનો અનુભવ કરી, શ્રી વિનોદકુમારના પિતાશ્રીને તમામ વાતથી વાકેફ કર્યાં.

થોડા વખતમાં ફ્લોદીના શ્રી સંઘે પૂ શ્રી લાલચંદજી મહારાજને ફ્લોદીમાં ચોમાસુ કરવાની વિનંતી કરી તેનો અસ્વીકાર થવાથી સંઘ ગમગીન બન્યો એટલે નિર્ણય ફેરવ્યો અને અષાઠ શુદ્ધ ૧૩ ના રોજ ખીચનથી વિહાર કરી ફ્લોદી આપ્યા.

હૌક્ષા પછી ચઢી મહિનાને આંતરે ક્ષ્લોહી ચોમાસા દરમ્યાન શ્રી વિનોદ-મુનિને હાજતે જવાની સંજ્ઞા થઈ અને તે માટે જવા તૈયાર થયા એટલે તેમના ગુરુએ કહ્યું કે બહુ ગરમી છે, જરાવાર થોભી જાવ એટલે શ્રી વિનોદ-મુનિએ રજોહરણ વગેરેની પ્રતિલેખના કરી તે દરમ્યાન ન રોકી શકાય એવી હાજત લાગી તેથી ફરી આજ્ઞા માગતાં જણાવ્યું કે મને હાજત બહુ લાગી છે તેથી જાઉં છું, જલદી પાછો ફરીશ કાળની ગહન ગતિને દુઃખદ્ રચના રચવી હતી. આજે જ હાજતે એકલા જવાનો બનાવ બન્યો હતો, હંમેશાં તો બધા સાધુઓ સાથે મળીને દિશાએ જતા.

હાજતથી મોકળા થઈ પાછા ફરતા હતા, ત્યાં રેલ્વે લાઈન ઉપર બે ગાયો આવી રહી હતી. ખીજી બાજુથી ટ્રેન પણ આવી રહી હતી તેની ઊંઠસલ વાગવા છતાં પણ ગાયો ખસતી ન હતી શ્રી વિનોદમુનિનું હૃદય થરથરી ઉઠ્યું અને મહા અતુકંપાએ મુનિના હૃદયમાં સ્થાન લીધું. હાથમાં રજોહરણ લઈ જાનના જોખમની પરવા કર્યા વગર ગાયોને બચાવવા ગયા. ગાયોને તો બચાવી જ લીધી પરંતુ આ ક્રિયામાં છકાય જીવની દયાના સાધનભૂત જે રજોહરણ કે વિનોદમુનિને આત્માથી વધારે પ્યાડું હતું, તે રેલ્વે લાઈન ઉપર પડી ગયું. અને શ્રી વિનોદમુનિએ તે પાછું સંપાદન કરવામાં જડવાદને સિદ્ધ કરતાં રાક્ષસી એન્જિનને ઝપાટે આવ્યા અને પોતાનું બલિદાન આપ્યું. અરિહંત....અરિહંત...એવા શબ્દો મુખમાંથી નીકળ્યા અને શરીર તૂટી પડ્યું. રક્ત પ્રવાહ છૂટી પડ્યો અને થોડા જ વખતમાં પ્રાણાંત થઈ ગયો, બધા લોકો કહેવા લાગ્યા કે ગૌરક્ષામાં મુનિશ્રીએ પ્રાણ આપ્યા અંતિમ સમયે મુનિશ્રીના ચહેરા પર ભવ્ય શાન્તિ જ દેખાતી હતી

હંમેશાં તેઓ જે તરફ હાજતે જતા હતા તે તરફ ક્ષ્લોહીથી પોકરણ તરફ જવાની રેલ્વે લાઈન હતી. આ લાઈન ઉપર રેલ્વે સત્તાવાળાઓએ ફાટક મૂકેલ નથી ત્યાં રસ્તો પણ છે એટલે પશુઓની અવરજવર હોય છે. અને વખતો વખત ત્યાં ઢોરો રેલ્વેની હડફેટે ચડી જવાના પ્રસંગ બને છે.

ક્ષ્લોહી સંઘે આ દુર્ઘટનાના બળર રાજકોટ, ટેલીફોનથી આપ્યા. જે વખતે ટેલીફોન આવ્યો તે વખતે વિનોદમુનિના પિતાશ્રી બહાર ગયા હતા. અને માતૃશ્રી મણિબેન સામાયિક-પ્રતિક્રમણમાં બેઠાં હતાં, માત્ર એક નોકર જ ઘરમાં હતો કે જેણે ટેલીફોન ઉઠાવ્યો પણ તે કાંઈ ટેલીફોનમાં હકીકત સમજી શક્યો નહીં અને સાચા સમાચાર મોડા મળ્યા. જેથી તેઓ સ્પેશ્યલ પ્લેનથી ક્ષ્લોહી પહોંચે તે પહેલાં અગ્નિસંસ્કાર થઈ ગયો સુચનાનો ટેલીફોન

-અર્ધા કલાક મોડા પહોંચ્યો જો સંદેશો સમગ્રપર પહોંચ્યો હાત તે માતા-પિતાને શ્રી વિનોદમુનિના શગરૂપે પણ ગ્રહણે જોવાનો અનં અનિરા દર્શનનો પ્રસંગ મળત પરંતુ અંતરાય કર્યે તેમ જન્મું નહીં.

આથી ધ્વેષનનો પ્રોગ્રામ પડતો મૂકવામાં આવ્યો અને માતા-પિતા તા. ૧૪-૮-૫૭ના રોજ ટ્રેઈન મારફત ફ્લોદી પહોંચ્યાં, શ્રી દુર્લભલભાઈ અને મણિબેને પૂજ્ય તપસ્વીશ્રી લાલચંદ્રજી મહારાજ સાહેબના દર્શન કર્યાં.

આ પ્રસંગે શ્રી લાલચંદ્રજી મહારાજ સાહેબે અવસરને પિછાણીને અને ધૈર્યનું એકાએક એકય કરીને. શ્રી વિનોદમુનિના માતા-પિતાના સાંત્વન અર્થે ઉપદેશ શરૂ કર્યો જેનો ટૂંકમાં સાર આ પ્રમાણે છે—

“હવે તો રત્ન ગ્યાદ્યુ’ ગયું! સસાજનો આશાદીપક જોલવાઈ ગયો! ઝટ ભગીને આથમી ગયો! હવે એ દીપ ફરીથી આવી શકે તેમ નથી”

શ્રી વિનોદમુનિના સંસારપક્ષના માતૃશ્રી મણિબેનને મુનિશ્રીએ કહ્યું કે:-
બેન! ભાવિ પ્રમળ છે. આ યાગતમાં મહાપુરુષોએ પણ હાથ ધોઈનાખ્યા છે એમ સૌને મરણને શરણ થવું પડે છે, તો પછી આપણા જેવા પામર પ્રાણીનું શું ગબ્બું છે? હવે તો શોક દૂર કરીને આપણે એમના મૃત્યુનો આદર્શ લેઈને માત્ર ધીરજ ધરવાની રહી.

પૃ. શ્રી સમરથમલજી મહારાજ સાહેબનો અભિપ્રાય:-

પ્રાથમિક તેમ જ અલ્પકાળના પરિચયથી મને શ્રી વિનોદમુનિના વિષે અનુભવ થયો, કે તેમની ધર્મપ્રિયતા અને ધર્માભિલાષા ‘અદ્વિમિત્રા પેરાણુરાગમત્તે’ નો પરિચય કરાવતી હતી પ્રાપ્ત સંસારિક પ્રચર વેલવ તરફ તેમની રુચિ દ્વિગોચર થતી ન હતી પરંતુ તેઓ પીતરાગવાણીના સંસર્ગથી વિપયવિમુખ ધર્મકાર્યમાં સદા તત્પર અને તલ્લીન દેખાતા હતા. આસ પરિચયના અભાવે વૈરાગ્ય પણ તેમની ધારાથી તેમની ધર્માનુરાગિતા તથા જીવનચર્યાથી કઠિન કાર્ય કરવામાં પણ ગભરાટના રથાને સુખાનુભવની વૃત્તિ લક્ષમાં આવતી હતી.

હવે

શ્રી વિનોદમુનિના જીવનના જે પ્રશ્નો ઉપસ્થિત થાય છે તેનો ખુલાસો કરવામાં આવે છે.

પ્ર. ૧. તેમણે આજ્ઞા વગર સ્વયમેવ દીક્ષા કેમ લીધી?

ઉત્તર -પંચમાં આરાનાં ભદ્રા શેઠાણીના પુત્ર એવંતા (અતિમુક્ત) કેમ્બારને તેમની માતૃશ્રીએ દીક્ષાની આજ્ઞા આપવાની તદ્દન ના પાડી એટલે તેણે

સ્વયમેવ દીક્ષા લીધી. ત્યાર બાદ લદ્દા શેઠાણીએ પોતાના કુમારને ગુરુને સોંપી દીધા તેજ રાત્રે તેણે બારમી લિખ્ખુની પહિમા અંગીકાર કરી અને શિયાળણીના પરીષદથી કળ કરી નદીનગુદમ વિમાનમાં ગયા તેવી જ રીતે શ્રી વિનોદકુમાર સ્વયં દીક્ષિત થયા.

પ્ર. ૨. આવા વૈરાગી જીવને આવો ભયંકર પરીષદ કેમ આવે ?

ઉત્તર:—કેટલાક ચરમ શરીરી જીવને મારણાંતિક ઉપસર્ગ આવેલ છે. જુઓ ગજસુકુમાર મુનિ, એનાર્ગ મુનિ, કોશલ મુનિ, કારણ કે તેમની સત્તામાં હજારો ભવનાં કર્મ હોવા ભેદએ ત્યારે તેમને એકદમ મોક્ષ જવું હતું, તો મારણુ તિક ઉપસર્ગ આવ્યા વગર એટલાં બધાં કર્મ કેવી રીતે ખરે ? બા. ધ્ર. શ્રી વિનોદમુનિને આવો પરીષદ આવ્યો, જે ઉપરથી એમ અનુમાન થાય છે કે તે એકાવતારી જીવ હોય.

શ્રી વિનોદમુનિનું વિસ્તૃત જીવનચરિત્ર બુદ્ધા પુસ્તકથી ગુજરાતી ભાષા નથા હિન્દી ભાષામાં છપાયેલ છે તેમાંથી પ્રાર રૂપે અહીં સંક્ષેપ કરેલ છે.



॥ श्री-भगवतीसूत्रम् ॥

(सप्तदशो भागः)

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितया
प्रमेयचन्द्रिकाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

॥ श्री-भगवतीसूत्रम् ॥

(सप्तदशो भागः)

॥ अथाष्टाविंशतितमं शतकमारभते ॥

कर्मवक्तव्यता संवलितं सप्तविंशतितमं शतकं व्याख्यातम् अथ क्रमप्राप्तं
तथाविधमेव अष्टाविंशतितमं शतकं व्याख्यायते, अत्रापि एकादशोद्देशकाः जीवा
येकादशद्वाराजुगत पापकर्मादि दण्डकोपेताः सन्ति, तदनेन सम्बन्धेन आयातस्या-
ष्टाविंशतितमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्येदं सूत्रम्—'जीवा णं भंते' इत्यादि,

सूत्रम्—जीवा णं भंते ! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु कहिं
समायरिसु ? गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा१,
अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य होज्जा२, अहवा
तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा३, अहवा तिरिक्ख-
जोणिएसु य देवेषु य होज्जा४, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य
नेरइएसु य मणुस्सेसु य होज्जा५, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य
नेरइएसु य देवेषु य होज्जा६, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य
मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा७, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य
नेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा८ । सलेस्सा णं भंते !
जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु ? कहिं समायरिसु ? एवं
षेव । एवं कणहलेस्सा जाव अलेस्सा । कणहपक्खिया सुक्क-
पक्खिया । एवं जाव अणागारोवउत्ता । नेरइया णं भंते ! पावं
कम्मं कहिं समज्जिणिसु ? कहिं समायरिसु ? गोयमा ! सव्वे वि
तिरिक्खजोणिएसु होज्जं त्ति एवं षेव अट्ट भंगा भाणियव्वा ।
एवं सव्वत्थ अट्ट भंगा एवं जाव अणागारोवउत्ता वि । एवं
जाव वेमाणियाणं । एवं णाणावरणिज्जेण दंडओ एवं जाव

अंतराङ्गं । एवं एष जीवादीया वैमाणियपञ्जवसाणा नव
दंडगा भवन्ति । सेवं भन्ते ! सेवं भन्ते ! त्ति जाव विहरइ ॥सू० १॥

अष्टावीसइमे सए पढमो उद्देशो समत्तो ॥२८-१॥

छाया-जीवाः खलु भदन्त ! पापं कर्म कुत्र समाजन् कुत्र समाचरन् ? गौतम !
सर्वेऽपि तावत् तिर्यग्योनिकेषु भवेयुः १, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च
भवेयुः २, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च मनुष्येषु च भवेयुः, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च
देवेषु च भवेयुः ४, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च मनुष्येषु च भवेयुः ५,
अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च देवेषु च भवेयुः ६, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च
मनुष्येषु च देवेषु च भवेयुः ७, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च मनुष्येषु च
देवेषु च भवेयुः सत्त्वश्याः खलु भदन्त ! जीवाः पापं कर्म कुत्र समाजन् कुत्र
समाचरन् गौतम ! सर्वेऽपि तावत् तिर्यग्योनिकेषु भवेयुरिति एवमेवाष्टौ भङ्गा
भणितव्याः । एवं सर्वत्राष्टौ भङ्गाः, एवं यावदनाकारोपयुक्ता अपि । एवं यावद्वैमा
निकानाम् । एवं ज्ञानावरणियेनापि दण्डकाः । एवं यावद् अन्तरायिकेण । एवमेते
जीवादिकाः वैमानिकपर्यवसाना नवदण्डका भवन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं
भदन्त ! इति यावद्विहरति । सू० १ ॥

अष्टाविंशतितमशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२८-१॥

टीका—'जीवा णं भन्ते !' जीवाः खलु भदन्त ! 'पापं कर्म' पापम्-अशुभं
कर्म 'कहिं' कुत्र-कस्यां गतौ 'समज्जिणिंसु' समाजन्-गृहीतवन्तः कस्यां गतौ

अष्टावीस वे शतकका पहेला उद्देशक का प्रारंभ

कर्मवक्तव्यता सहित २७ वां शतक व्याख्यात हो चुका अब
क्रम प्राप्त २८ वां शतक प्रारम्भ होता है । यहाँ पर भी ११ उद्देशक
हैं । और ये उद्देशक जीवादिक ११ द्वारों में अनुगत पापकर्मादिक
दण्डकों से युक्त हैं ।

'जीवा णं भन्ते ! पापं कर्म कहिं समज्जिणिंसु' इत्यादि ।

टीकार्थ—गौतमस्वामीने इस सूत्रद्वारा प्रभुश्री से ऐसा पूछा है

अठ्यावीसमा शतकना पहेला उद्देशानो प्रारंभ—

कर्मना संभधमां सत्यावीसभुं शतक उद्देवाधं गयुं हुवे कुमथी आवेला
आ अठ्यावीसमा शतकनो प्रारंभ थाय छे, आ अठ्यावीसमा शतकमां पधु
११ अगीयार उद्देशाओ उद्देशा छे अने आ उद्देशाओ ७व विगेरे दंडका
सहित उद्देशा छे—'जीवा णं भन्ते ! पापं कर्म कहिं समज्जिणिंसु' इत्यादि

टीकार्थ—गौतम स्वामीने आसूत्रद्वारा प्रभुश्री ने जेवुं पूछयुं छे के-

वर्तमाना जीवाः पापकर्मणां सावयवमकुर्वन्नित्यर्थः । 'कहिं समायर्सि' कस्यो गतो
वर्तमाना जीवाः पापं कर्म समाचरन्-पापकर्माचरणं कृतवन्तः पापकर्महेतु
समाचरणेन तद्विपाकानुभवनेन वा, भगवानाह-'गोयमा' हे गौतम ! 'सव्वे वि
ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा' सर्वेऽपि तावत् जीवा स्तिर्यग्योनिकेषु भवेयुः
इह तिर्यग्योत्रिः सर्वजीवानां मातृस्थानीया तस्या बहुत्वात्, ततश्च सर्वेऽपि
तिर्यग्योऽन्ये नैरयिकाद् ये जीवा स्तिर्यग्योनिकेभ्यः समागत्योत्पन्नाः कदाचि-
द्भवेयुः ततस्ते सर्वेऽपि तिर्यग्योनिकेषु अभूवन्निति व्यपदिश्यन्ते, तदयमर्थः
ये जीवा विविक्षितसमये नारकादयोऽभूदन् ते अल्पत्वेन समस्ता अपि सिद्धिगम-

कि 'जीवा णं भंते ! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु' हे भदन्त ! जीवों
ने किसगति में पापकर्म का उपार्जन किया है ? 'कहिं समायर्सि'
और किसगति में वर्तमान जीवों ने पापकर्म का आचरण किया है ?
अर्थात् पापकर्म के हेतुओं के समाचरण से-सेवन से-और तज्जन्य
विपाक के अनुभव से पापकर्म का आचरण किया है ? उसका फल
भोगा है ? इसके उत्तर में प्रभुश्रीने उनसे ऐसा कहा है-'गोयमा !
सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा' हे गौतम ! समस्त जीव
पहिले तिर्यग्योनि में रहें हुए हैं-इसलिये तिर्यग्योनि में होने के
कारण वह योनि उनकी माता के स्थानापन्न हैं। क्योंकि तिर्यग्योनि
बहुत हैं। इसलिये तिर्यग्योत्रि से अग्नि जो नैरयिकादि जीव हैं वे सब
तिर्यग्योत्रिकों में से आ करके उत्पन्न हुए हैं। इसलिये वे सब पहिले
तिर्यग्योत्रिकों में रहे हुए हैं ऐसा कहा जाता है। इस कारण तिर्य-

'जीवा णं भंते ! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु' हे भगवन् एवमेव कथं गतिमां
पापकर्मणुं उपार्जनं कथुं छे ? 'कहिं समायर्सि' अने कथं गतिमां रडेला
एवमेव पापकर्मणुं आचरणं कथुं छे ? अर्थात् पापकर्मणां हेतुयोगानां आचरणयुथी
ओटले के सेवनयुथी अने तेनाथी थनारा विपाकना अनुभवयुथी पापकर्मणुं
आचरणं कथुं छे ? अने तेनुं इण लोअयुं छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री
गौतम स्वामीने कडे छे के 'गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा'
हे गौतम ! सधणा एवो पडेलां तिर्यग्योनिमां रडेला छे, तेथी तिर्यग्योनिमां
डेवाने कारणे ते योनि तेनी माताने स्थाने गणाय छे. केम के-तिर्यग्योनि
धणी छे. तेथी तिर्यग्योत्रि अन्ये नैरयिके विगेरे एवो छे, ते तिर्यग्यो-
त्रिकेमांथी आवीने उत्पन्न थयेला छे. तेथी ते अथा पडेलां तिर्यग्यो-
त्रिकेमां रडेला छे. ओ प्रमाणे कडेवामां आवे छे. आ कारणयुथी-तिर्यग्यो-

तिर्यग्गतिप्रवेशेन च निर्लेपतया उद्भृत्ताः ततश्च तिर्यग्गतेरनन्तत्वेन अनि-
र्लेपनीयत्वात् तत उद्भृत्ता स्तिर्यश्च स्तत्स्थानेषु नारकादित्वेन उत्पन्नाः, ततस्ते
तिर्यग्गतौ नारकगस्यादिकारणिभूतं पापं कर्म समर्जितवन्त इति प्रथमो भङ्गः १।
'अहवा तिरिक्खजोणिएसु च नेरइएसु य होज्जार' अथवा तिर्यग्योनिकेषु च
नैरयिकेषु च भवेयुः, विवक्षितसमये ये मनुष्या देवा वा अभूवन् ते निर्लेपतया
तथैवोद्भृत्ताः तत्स्थानेषु च तिर्यग्नारकेभ्य आगतयोत्पन्नाः ते च एवं व्यपदिश्यन्ते-
तिर्यग्नैरयिकेषु अभूवन्नेते, ये च यत्राभूवन् ते तत्रैव कर्मोपार्जितवन्त इत्यर्थो-
ल्लभ्यते इति द्वितीयो भङ्गः २। 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा'
अथवा तिर्यग्योनिकेषु च मनुष्येषु च भवेयुः विवक्षितसमये ये नैरयिका देवा वा

प्रगति से निकले हुए जीव उन-२ स्थानों में-नारकादि रूप में जो
उत्पन्न हुए हैं सो वहाँ पर तिर्यग्गति में उन्होंने नारक गति आदि
में प्राप्त होने के कारण भूतकाल में पापकर्म को उपार्जन किया है।
ऐसा यह प्रथम भंग है।

'अहवा--तिरिक्खजोणिएसु य नेरइए सु य होज्जार' अथवा-
समस्त जीव तिर्यग्योनिकों में और नैरयिकों में रहे हुए हैं-विवक्षित
समय में जो मनुष्य अथवा देव हुए हैं वे उन स्थानों में तिर्यग्यो-
निकों से या नारकों से आकर के उत्पन्न हुए हैं, इसलिये ऐसा कहा
जा सकता है कि ये पहिले तिर्यग्योनि कों में या नैरयिकों में रहे हुए
हैं, जो जहाँ रहा हुआ है उसने वहीं पर कर्म का उपार्जन किया है,
ऐसा यह द्वितीय भंग है। 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य

गतिमांथी निकणेलो लुवो ते-ते स्थानोमां नारक विगेशे इपथी उत्पन्न
थया छे, तेओ तिय"य गतिमां, नारक गति विगेशेमां, उत्पन्न थवाने कारणे
भूतकाणमां पापकर्मनुं उपाज्जन कथुं छे ओ प्रभाणे आ पडेलो लंग छे. १
'अहवा-तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य होज्जा' अथवा-सधणा लुवो तिय"य
योनिक्कोमां अने नैरयिकोमां रडेला छे.-विवक्षित समयमां जेओ मनुष्य
अथवा देव थया छे, तेओ ते स्थानोमां तिय"य योनिक्कोथी नारकोथी आवीने
उत्पन्न थया छे. तेथी ओम कडेवामां आवे छे तेओ पडेलां तिय"य
योनिक्कोमां अथवा नैरयिकोमां रडेला छे, जेओ त्यां रडेला छे, तेओओ
त्यांज कर्मनुं उपाज्जन कथुं छे, ओ प्रभाणे आ णीजे लंग कडेयो छे. २

'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा' अथवा सधणा लुवो
तिर्यग्योनिकोंमां अथवा मनुष्योमां रडेला छे. तेथी त्यांथी निकणीने

ते तथैव निर्लेपतया उद्वृत्ताः तत्स्थानेषु च तिर्यङ् मनुष्येभ्य आगत्य समुत्पन्नाः
तेचैवं व्यपदिश्यन्ते—तिर्यग्मनुष्योऽभूवन्नेते, ये च यत्राभूवन् ते तत्रैव कर्म उपा
र्जितवन्त इति तृतीयो भङ्गः ३ इति । एवमेवाग्रेऽपि अनयैव भावनयाऽर्थो विधेयः ।
चतुर्थभङ्गमाह 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा' अथवा तिर्य-
ग्गोनिकेषु च देवेषु च भवेयुरिति चतुर्थो भङ्गः ४, 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु
य नेरइएसु मणुस्सेसु य होज्जा' अथवा तिर्यग्गोनिकेषु च नैरयिकेषु च मनुष्येषु
च भवेयुरिति पञ्चमो भङ्गः । 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु

होज्जा' अथवा—समस्त जीव तिर्यग्गोनिकों में या मनुष्यों में रहे
हुए हैं इसलिये वहां से निकलकर जो जीव विवक्षित समय में
नैरयिक या देव रूप से उत्पन्न हुए हैं वे उन-उन तिर्यश्च एवं मनुष्यों
से आकरके उत्पन्न हुए हैं—इसलिये ऐसा कहा जाता है कि ये तिर्यश्च
या मनुष्यों से आकरके उत्पन्न हुए हैं । जो जीव जहां रहा हुआ
है उसने वहीं पर कर्म का उपार्जन किया है । ऐसा यह तृतीय भंग
है । इसी प्रकार से आगे भी ऐसा ही अर्थ समझना चाहिये, चतुर्थ
भंग इस प्रकार से हैं—'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा'
अथवा समस्त जीव तिर्यग्गोनिकों में और देवों में रहे हुए हैं । पंचम
भंग इस प्रकार से है—'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणु-
स्सेसु य होज्जा' अथवा—समस्त जीव तिर्यग्गोनिकों में और नैरयिकों
में एवं मनुष्यों में रहे हुए हैं । छठा भंग इस प्रकार से है—'अहवा-
तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु य होज्जा' अथवा—समस्त जीव

विवक्षित जे एव नैरयिक अथवा देव पणुथी उत्पन्न थया छे, तेओ ते ते
तिर्य"य अथवा मनुष्येथी आवीने उत्पन्न थया छे. तेथी ओपुं कडेवाभां
आवे छे के—आ तिर्य"य अथवा मनुष्येभांथी आवीने उत्पन्न थया छे. जे
एवे नयां रहेला छे, तेओ त्यांज कर्मनुं उपार्जन क्युं छे. ओ प्रभाओ आ
त्रीने लंग कही छे. आगण पणु आ प्रभाओ ज समजवुं.

ओथी लंग आ प्रभाओ छे —'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य
होज्जा' अथवा सधणा एवे तिर्य"य योनिकेभां अथवा देवेभां रहेल छे.
ओ प्रभाओ आ ओथी लंग कही छे. 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य
नेरइएसु य मणुस्सेसु य होज्जा' अथवा सधणा एवे तिर्य"ययोनिकेभां अने
नैरयिकेभां तथा मनुष्येभां रहेला छे ओ प्रभाओ आ पांचमे लंग कही छे.

'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु य होज्जा' अथवा सधणा

य होज्जा' अथवा तिर्यग्योनिकेषु नैरयिकेषु च देवेषु च भवेयुरिति षष्ठो भङ्गः ६। 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा तिर्यग्योनिकेषु च मनुष्येषु च देवेषु च भवेयुरिति सप्तमो भङ्गः ७। 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च मनुष्येषु च देवेषु च भवेयु रिति-अष्टमो भङ्ग इति।

तिर्यग्योनिकों में, नैरयिकों में और देवों में रहे हुए हैं। सातवां भंग इस प्रकार से है—'अहवा-तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा-समस्त जीव तिर्यग्योनिकों में मनुष्यों में और देवों में रहे हुए हैं। आठवां भंग इस प्रकार से है—'अहवा-तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा-समस्त जीव तिर्यग्योनिकों में नैरयिकों में, मनुष्यों में और देवों में रहे हुए हैं, इस प्रकार से ये आठ भंग हैं। इनमें प्रथम भंग तिर्यग्गति को ही लेकर हुआ है। अन्य तीन भंग तिर्यग्नारकों के, तिर्यग् मनुष्यों के, तिर्यग्देवों के संयोग को लेकर हुए हैं। इस प्रकार से ये चार भंग हो जाते हैं। त्रिक संयोग को लेकर-तिर्यग्नारक मनुष्य के, तिर्यग्नारक देव के तिर्यग्मनुष्य देवके संयोग से त्रिक संयोगी भंग तीन होते हैं, इस प्रकार से सात भंग हो जाते हैं। चतुष्क संयोग में-तिर्यग्नारक मनुष्य देव, इनके

७वो तिर्यग्योनिकेमां नैरयिकेमां, अने देवेमां रहैला छे, अे प्रभाणे आ छठो लंग कछो छे.

'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा सधणा ७वो तिर्यग्योनिकेमां मनुष्येमां अने देवेमां तथा छे. अे शीते आ सातमे लंग कछो छे, 'अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेषु य होज्जा' अथवा सधणा ७वो तिर्यग्योनिकेमां, नैरयिकेमां, मनुष्येमां अने देवेमां तथा छे. आ शीते आ आठमे लंग कछो छे आमां पहिलो लंग तिर्यग्गतिने लधने कछयो छे अने णाहीना त्रयु लंगो तिर्यग्य नारकेना, तिर्यग्य मनुष्येना, तिर्यग् देवेना संयोगथी तथा छे आ शीते आ आर लंगो थछं नय छे. त्रिकसंयोगने लधने तिर्यग्य मनुष्यना, तिर्यग् नारकेना तिर्यग् देवना, संयोगथी त्रिकसंयोगी त्रयु लंगो डाय छे. आ शीते सात लंगो थछं नय छे.

चतुष्क संयोगमां-तिर्यग्, नारक, मनुष्य देव, आना संयोगथी अेक

तदेवमष्टौ भङ्गाः प्रदर्शिता स्तत्र प्रथमो भङ्गः केवलं तिर्यग्गत्यैव भवति । १ । अन्ये त्रयो द्विकसंयोगेन भवन्ति, तथाहि तिर्यग्ग्नारकाभ्यां तिर्यङ्मनुष्याभ्यां तिर्यग्देवाभ्यामिति त्रयो भङ्गा द्विकसंयोगिनः, एते सङ्कलनया जाताश्चत्वारः, तथा तिर्यग्ग्नारकमनुष्यैः १, तिर्यग्ग्नारकदेवैः २, तिर्यङ्मनुष्यदेवैः ३ रिति त्रयो भङ्गाः त्रिकसंयोगिनः, जाता सप्त । एक स्तिर्यग्ग्नारकमनुष्यदेवै रिति चतुष्कसंयोगी अष्टमो भङ्गः ८ । सङ्कलनया सर्वे अष्टौ भङ्गा । भवन्तीत्युत्तरम् । 'सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु कहिं समायरिसु' सलेस्याः—लेस्यासहिता जीवाः पावं कर्म कुत्र कस्यां गतौ समार्जन कस्यां गतौ समाचरन् ? इति प्रश्नः । भगवानाह—हे गौतम ! 'एवं चेव' एवमेव—पूर्वदेव अष्टौ भङ्गान् कृत्वा उत्तरं कर्तव्यमिति । 'एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा' एवं कृष्णलेस्यावन्तो जीवा यावत् अलेस्या लेस्यारहिता जीवाः कस्यां गतौ पाप कर्म समर्जितवन्तः समा-

संयोग में एक ही भंग होता है । सब मिलाकर कुल आठ भंग हो जाते हैं । ऐसे थे आठ भंग गौतमस्वामी के प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री ने कहे हैं । 'सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु कहिं समायरिसु' हे भदन् ! समस्त लेस्या सहित जीवों ने पापकर्म का उपार्जन किस गति में किया है ? किस गति में उसका समाचरण किया है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—गोयमा ! एवं चेव' हे गौतम ! पूर्व के जैसे यहां आठ भंग बनाकर उत्तर समझना चाहिये, 'एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा' हे भदन् ! लेस्या सहित जीवों ने एवं लेस्या रहित जीवों ने किस गति में पापकर्म का उपार्जन किया है ? और किस गति में उसका समाचरण किया है—फल भोगा है ? इसके उत्तर में प्रभु ने कहा है—कि हे गौतम ! यहां पर, भी आठ भंग बनाकर

भाग डोय छे तमाभ भणीने कुल आठ भंगो थं जय छे. जे प्रभाणेना आ आठ भंगो गौतम स्वामीने प्रभुश्रीजे तेमना प्रश्नना उत्तरमां कथा छे.

'सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिसु कहिं समायरिसु' छे भगवन् सधणा देस्यावाणा जेवोअे कथं गतिमा पापकर्मतुं उपार्जनं कथुं छे ? कथं गतिमां तेतुं समाचरणं कथुं छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—'गोयमा ! एवं चेव' छे गौतम ! पहिलां कथा प्रभाणे आ विषयमां आठ भंगोवाणे उत्तर समज्जेवो 'एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा' छे भगवन् देस्यावाणा जेवोअे अने देस्या विताना जेवोअे कथं गतिमां पापकर्मतुं उपार्जनं कथुं छे ? अने कथं गतिमां तेतुं कथं लोअुं छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—हे गौतम ! आ विषयमां पथु

चरितवन्त इति प्रश्नः, अष्टमङ्गैरुत्तरं पूर्ववदेवेति, अत्र यावत्पदेन नीलकापो-
ततेजः पद्म शुक्ललेश्यावतां संग्रहो भवति । सर्वत्राऽऽलापप्रकारः स्वयमेव
उहनीय इति । 'कण्हपक्खिया सुक्कपक्खिया एव' कृष्णपाक्षिकाः शुक्लपाक्षिका
एवम्-एवमेव-पूर्वोक्तवदेव विज्ञेयाः । कियत्पर्यन्तमित्याह- 'जाव अणागारोवउत्ता'
यावदनाकारोपयुक्ताः अनाकारोपयुक्तप्रकरणपर्यन्तमिति, अत्र यावत्पदेन सम्य-
ग्दृष्टि-मिथ्यादृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टि-ज्ञान्याभिनिबोधिकज्ञानि-श्रुतज्ञानि याव-
त्केवलज्ञान्यज्ञानि-मत्यज्ञानि-श्रुतज्ञानि-विभङ्गज्ञान्याहारसंज्ञोपयुक्त यावन्नो संज्ञो-
पयुक्तसवेदक-यावदवेदक-सकपायि-यावदकपायि-सयोगि-मनोयोगि-वाग्यो-
गि-काययोग्ययोगि-साकारोपयुक्तानां संग्रहो भवतीति ।

उनका उत्तर समझना चाहिये, यहाँ यावत्पद से नीललेश्यावालो का,
कापोतलेश्यावालो का, पीतलेश्यावालो का, पद्मलेश्यावालो का और
शुक्ललेश्यावालो का ग्रहण हुआ है । इनमें आद्या का प्रकार अपने
आप उद्भावित करना चाहिये, 'कण्हपक्खिया सुक्कपक्खिया एव'
कृष्णपाक्षिक और शुक्लपाक्षिक जीवों के सम्बन्ध में भी ऐसा ही
कथन यावत् अनाकारोपयुक्त प्रकरण तक जानना चाहिये, यहाँ यावत्
पद से 'सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी अभिनि-
बोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी यावत् केवलज्ञानी, अज्ञानी, मत्यज्ञानी श्रुत-
ज्ञानी विभंगज्ञानी, आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् नोसंज्ञोपयुक्त, सवेदक,
यावत् अवेदक, सकपायी-यावत् अकपायी, सयोगी, मनोयोगी, वाक्
योगी, काययोगी और साकारोपयुक्त' इन पदों का संग्रह हुआ है ।

आठ लगे अनावीने तेने उत्तर समल लेवे, अडियां यावत् पदथी नील
लेश्यावाणाओनुं कापोत लेश्यावाणाओनुं पीतलेश्यावाणाओनुं पद्मलेश्यावाणा
ओनुं अने शुक्ल लेश्यावाणाओनुं अडिष्णु करायुं छे. तेओना आलापकेने
प्रकार स्वयं अनावीने समल लेवे. 'कण्हपक्खिया सुक्कपक्खिया एव'
कृष्णपाक्षिक अने शुक्लपाक्षिक लवेना संबंधमां पणु ओण प्रमाणे कथन
यावत् अनाकारोपयोगवाणाना प्रकरण सुधी समल लेवुं. अडियां यावत्
पदथी 'सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधि-
कज्ञानी, श्रुतज्ञानी, ओधिकज्ञानी, अज्ञानी, मति अज्ञानी श्रुत अज्ञानी, विभंग-
ज्ञानी, आहारसंज्ञोपयोगवाणा, यावत् परिग्रह संज्ञोपयोगवाणा, सवेदक,
नयुंसः वेदक, सकपायी, यावत् लोलकपायी, सयोगी, मनोयोगी, वचनयोगी
अने साकारोपयोगवाणाओ अडिष्णु कराया छे.

सामान्यतो जीवानां कस्यां गतौ पापार्जनं भवतीति प्रदर्श्य विशेषतो जीवानां तद्वर्णयितुं प्रश्नवन्नाह—‘नेरइयाणं’ इत्यादि । ‘नेरइयाणं भंते’ नैरयिकाः खलु भदन्त ! ‘पावं कम्मं क्कहिं समज्जिणिसु क्कहिं समायरिसु’ पापम्—अशुभं कर्म कुत्र—कस्यां गतौ समाजंन् कुत्र—कस्यां गतौ पापं कर्म समाचरन् कां गतिमाश्चित्य कर्मणां संचयं कुर्वन्ति येन कर्मणा एतेषां नारकगतौ गमनं भवतीति वदन्तः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा त्ति, एवं चेव अट्ट भंगा भाणियव्वा’ सर्वेऽपि तावत् जीवाः तिर्यग्योनिकेषु अभूवन् इति एतं प्रकारेण अष्टावपि भङ्गाः द्वितीयद्वारभ्याष्टा गताः प्ररूपणीया इति । ‘एवं सव्वत्थ वि अट्ट भंगा’ एवमेव

सामान्य रीते जीवों के द्वारा किस गति में पापकर्म का उपार्जन किया जाता है यह प्रकट करके अब सूत्रकार इसी बात को विशेष रूप से प्रकट करते हैं—इस में गौतमस्वामी ने प्रभुश्री से ऐसा पूछा है—‘नेरइयाणं भंते ! पावं कम्मं क्कहिं समज्जिणिसु क्कहिं समायरिसु’ हे भदन्त ! नैरयिकजीवों ने किस गति में पापकर्म का उपार्जन किया है और किस गति में सखता समाचरण किया है ? अर्थात् किस गति में रहकर ये कर्मों का संचय करते हैं कि जिस कर्म से इनका नारकगति में गमन होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा एवं चेव अट्ट भंगा भाणियव्वा’ हे गौतम ! समस्त जीव तिर्यग्योनिक में रहे हैं इस प्रकार से यहां पूर्व के अनुसार आठ भंग उत्तर रूप में कहना चाहिये, ‘एवं सव्वत्थ वि अट्ट भंगा’ इसी प्रकार से सर्वत्र सलेश्यादि नारक पदों में उत्तर

सामान्य रीते जेवो द्वारा क्कं गतिमां पापकर्मणुं उपाजंन करवामो आवे छे, आ विषय प्रकट करीने डवे सूत्रकार आ वातने विशेष रूपथी भतावे छे.—आमां गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने जेबुं पूछथुं छे के—‘नेरइयाणं भंते ! पावं कम्मं क्कहिं समज्जिणिसु क्कहिं समायरिसु’ हे भगवन् नैरयिक जेवोजे क्कं गतिमां पापकर्मणुं समाचरणे क्कथुं छे ? अर्थात् क्कं गतिमां रहिने तेजो कर्मोनि संचय—संचय करे छे ? के जे कर्मथी तेजो नारक गतिमां लय छे आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—‘गोयमा सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा एवं चेव अट्ट भंगा भाणियव्वा’ हे गौतम ! सधणा जेवो तिर्यथ योनीमां रखा छे, आ रीते अडिया पथु पडेवा क्कहा प्रभाणे आठ भंगा उत्तर रूपे समज्ज देवा, ‘एवं सव्वत्थ वि अट्ट भंगा’ जेव प्रभाणे सलेश्यादि नारक पदोमां भये जे

સર્વત્ર સલેશ્યાદિનારકપદેષુ ઉત્તરપક્ષે અષ્ટૌ મજ્ઞાઃ કર્તવ્યાઃ 'एवं जाव अणागारोवउत्ता वि' एवं यावदनाकारोपयुक्ता अपि । अत्र यावत्पदेन कृष्ण-
 लेश्यादित आरभ्य साकारोपयोगयुक्तानां सर्वेषां ग्रहणं कर्तव्यमिति, सर्वत्र पदेषु
 अष्टौ मज्ज्ञाः प्ररूपणीया इति । 'एवं जाव वेमाणियाणं' एवं नारकवदेव
 यावद्वैमानिकानाम्, यावत्पदेन एकेन्द्रियादि सर्वजीवानां ग्रहणं भवति । 'एवं
 णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' एवं पापकर्मदण्डकवदेव ज्ञानावरणीयकर्मणा अपि
 दण्डको भणितव्यः । 'एवं जाव अंतराइएणं' एवं यावत् अन्तरायिकेण कर्मणा-
 ऽपि दण्डको भणितव्यः, यावत्पदेन दर्शनावरणीयादीनां संग्रहो भवतीति ।
 'एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा नवदंडगा भवन्ति' एवमेते जीवादिका

પક્ષ મેં આઠ ભંગ કહના ચાહિયે, 'एवं जाव अणागारोवउत्ता वि' इसी
 प्रकार से यावत् अनाकारोपयुक्त तक के पदों में भी आठ भंग कहना
 चाहिये, यहां यावत् पद से कृष्णलेश्या से लेकर साकारोपयुक्त तक के
 नरक पदों का ग्रहण हुआ है । 'एवं जाव वेमाणियाणं' नारक के जैसा
 यावत् वैमानिकों तक प्रत्येक दंडक में भी आठ भंग कहना चाहिये,
 यहां यावत् पद से एकेन्द्रियादि सर्व जीवों का ग्रहण हुआ है । 'एवं
 णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्म दण्डक के जैसा ज्ञानावरणीय
 कर्म के साथ भी ऐसा ही दण्डक कहना चाहिये, 'एवं जाव अंत-
 राइयं' इसी प्रकार से यावत् अंतराय कर्म के साथ भी ऐसा ही दण्डक
 कहना चाहिये, यहां यावत् पद से दर्शनावरणीय आदि कर्मों का
 संग्रह हुआ है । 'एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा नव दंडगा

ઉત્તર પક્ષમાં આઠ આઠ ભંગો સમજાવેલા 'एवं जाव अणागारोवउत्ता वि'
 એજ પ્રમાણે યાવત્ અનાકારોપયોગવાળાના કથન પર્યાન્તના પદોમાં પણ
 આઠ આઠ ભંગો સમજાવેલા. અહિયાં યાવત્પદથી કૃષ્ણલેશ્યાથી લઈને સાકારોપ
 યોગ સુધીના પદો ગ્રહણ કરાયા છે. 'एवं जाव वेमाणियाणं' નારકના કથન
 પ્રમાણે યાવત્ વૈમાનિકોને પણ આઠ આઠ ભંગો સમજાવેલા- અહિયાં યાવત્પદથી
 એક ઈન્દ્રિય વિગેરે સઘળા ભવે ગ્રહણ કરાયા છે.

'एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्मना दंडकना कथन प्रमाणे
 ज्ञानावरणीय कर्मની સાથે એજ પ્રમાણેના દંડકો કહેવા ભેઈ એ અહિયાં
 યાવત્પદથી દર્શનાવરણીય વિગેરે કર્મોના સંગ્રહ થયો છે

'एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा नव दंडगा भवन्ति' આ રીતે ભવ
 ણી લઈને વૈમાનિક સુધીના ભવોમાં આ નવ દંડકો થાય છે, તેમ સમજાવું.

वैमानिकपर्यवसानाः जीवादारभ्य वैमानिकान्तेषु नवदण्डका भवन्ति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ तदेवं भदन्त ! तदेवं भवन्त ! इति यावद्विहरति, हे भदन्त ! जीवानां कर्मोपार्जनविषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

॥ इति श्री विश्वखिल्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-बाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भग
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां अष्टाविंशतितमशतके
प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२८-१॥

भवन्ति' इस प्रकार से जीव से लेकर वैमानिकान्त जीवों में ये नौ दण्डक होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भदन्त जीवों के कर्मोपार्जन के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । ऐसा कह कर गौतमने प्रभु को वन्दना की और नमस्कार किया और फिर वे वन्दना नमस्कार कर संयम और तप से आत्मा को भाविन करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके अठावीसवें शतकका

॥प्रथम उद्देशक समाप्त ॥२८-१॥

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे लगवन् एवोना कर्मेना उपाज्जना सणंधमां आप देवानुप्रिये जे कथन कथुं छे, ते सवणु कथन सर्वथा सत्य छे, हे लगवन् आप देवानुप्रियतुं कथन आसुं होवथी सर्वथा सत्य जे छे, आ प्रभाणु कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेज्जे संयम अने तपथी पोताना आत्माने लपित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया, ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अठ्यावीसमा शतकने पड़ेले उद्देशक समाप्त ॥२८-१॥

॥ अथद्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

अथ क्रमप्राप्तं द्वितीयोद्देशकमारभते—‘अणंतरोवचनगा णं’ इत्यादि ।

मूलम्—अणंतरोवचनगा णं भंते ! नेरइया पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु ? गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरि-
क्खजोणिंसु होज्जा एवं एत्थ वि अट्टु भंगा । एवं अणंतरो-
वचनगाणं नेरइयाईणं जस्स जं अत्थि लेस्सादिपं अणा-
गारोवजोगपज्जवसाणं तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं
जाव वेमाणियाणं । नवरं अणंतरेसु जे परिहारियव्वा ते जहा
बंधिसए तहा इहंपि । एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ एवं
जाव अंतराइएणं निरवसेसं । एसो वि नवदंडगसंगहिओ
उद्देशओ भाणियव्वो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

अट्टुवीसइमे सए वीओ उद्देशओ ससत्तो ॥२८—२॥

छाया—अनन्तरोपपन्नकाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः पापं कर्म कुत्र समाजिन्
कुत्र समाचरन्, गौतम ! सर्वेऽपि तावत् तिर्यग्योनिकेषु अभूवन् एवमत्रापि अष्टौ
भङ्गाः, एवमनन्तरोपपन्नकानां नैरयिकादीनां यस्य यदस्ति लेखादिकमनाकारो-
पयोगपर्यवसानं तत्सर्वम् एतया भजनया अणितव्यं यथाऽष्टौनामिकानाम्, नवर-
मनन्तरेषु ये परिहर्तव्या स्ते यथा बन्धिशते तथा इहापि । एवं ज्ञानावरणीये-
नापि दण्डकाः, एवं यावद्दान्तरायिकेन निरवशेषम्, एषः अपि नवदण्डकसंगृहीत
उद्देशको अणितव्यः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

अष्टाविंशतितमे शतके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥२९—२॥

टीका—‘अणंतरोवचनगा णं भंते ! नेरइया’ अनन्तरोपपन्नकाः प्रथमसमये
जायमानाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः ‘पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु’ पापम्—

दूसरा उद्देशक का प्रारंभ

‘अणंतरोवचनगा णं भंते ! नेरइया पावं कम्मं’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों ने पापकर्म का
उपार्जन किस गति में किया है और किस गति में उसका समाचरण

॥शील उद्देशाने। प्रारंभ—

‘अणंतरोवचनगा णं भंते ! पावं कम्मं’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् अनन्तरोपपन्नक नैरयिकेण्ये पापकर्मनीं प्राप्तिं कथं
गतिमां करे छे ? अने कथं गतिमां तेने लोगवे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री

अशुभं कर्म कुत्र—कस्यां गतौ समर्जितवन्तः—गृहीतवन्तः 'कहिं समायर्षिसु' कुत्र—
कस्यां गतौ समाचरन् समाचरितवन्तः अशुभकर्मणां बन्धनं कस्यां गतौ कृतवन्त
इति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम । 'सव्वे वि ताव
तिरिक्खजोणिएसु होज्जा' सर्वेऽपि अनन्तरोपपन्नकाः तावत् तिर्यग्योनिकेषु
अभूवन् 'एवं एत्थ वि अट्ट भंगा' एवमत्रापि अष्टौ भङ्गा भणितवन्ताः, ये चाष्टौ
अस्य शतकस्य प्रथमोद्देशके कथिताः तथाहि—सर्वेऽपि तावत् तिर्यग्योनिकेषु
अभूवन् १ अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु चाभूवन् २ अथवा तिर्यग्योनिकेषु
च मनुष्येषु चाभूवन् ३, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च देवेषु चाभूवन् ४, अथवा तिर्य-
ग्योनिकेषु च नैरयिकेषु चाभूवन् ५, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च
देवेषु चाभूवन् ६, अथवा तिर्यग्योनिकेषु च मनुष्येषु च देवेषु चाभूवन् ७, अथवा
तिर्यग्योनिकेषु च नैरयिकेषु च मनुष्येषु च देवेषु चाभूवन्निति ८ । 'एवं अनन्तरो-

किया है—फलोपभोग किया है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा !
'सव्वे वि तावतिरिक्खजोणिएसु होज्जा' हे गौतम ! स्वमस्त अनन्तरो-
पपन्नक जीवों ने पापकर्म का उपार्जन तिर्यग्योनिकों में जन्म लेकर
किया है इस प्रकार से पूर्वोक्त कथन के जैसे आठ भंग उत्तर रूप में
यहां कहना चाहिये, जैसे—स्वमस्त अनन्तरोपपन्नक नैरयिक नैरयिक
पर्याय प्राप्ति के पहिले तिर्यग्गति में थे १ अथवा—तिर्यग्योनिकों में
थे, और नैरयिकों में थे २ अथवा—तिर्यग्योनिकों में और मनुष्यों में
थे ३ अथवा तिर्यग्योनिकों में और देवों में थे ४ अथवा—तिर्यग्यो-
निकों में नैरयिकों में और मनुष्यों में थे, ५ अथवा—तिर्यग्यो-
निकों में नैरयिकों में और देवों में थे, ६ अथवा तिर्यग्योनिकों में
मनुष्यों में और देवों में थे ७ अथवा तिर्यग्योनिकों में नैरयिकों

गौतम स्वामीने उडे छे डे—'सव्वेवि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा' डे गौतम ।
सधणा अनन्तरोपपन्नक एवेत्थे तिर्यग् योनीमां जन्म लधने पापकर्मसु
उपार्जनं कथुं छे आ रीते पडेलं उडेल प्रकारथी आठ लंओ उत्तरइये
अहियांसमज्जा जेम डे—सधणा अनन्तरोपपन्नक नैरयिकपर्याय प्राप्तिनी पडेलं
तिर्यग् गतिमां हुता १ अथवा तिर्यग् योनिडेमां हुता अने नैरयिकेमां
हुता. २ अथवा तिर्यग् योनिडेमां अने मनुष्येमां हुता. ३ अथवा तिर्यग्
योनिडेमां नैरयिकेमां हुता अने देवेमां हुता ४ अथवा तिर्यग् योनिडेमां
अने नैरयिकेमां अने मनुष्येमां हुता. ५ अथवा तिर्यग् योनिडेमां नैर-
यिकेमां अने देवेमां हुता ६ अथवा तिर्यग् योनिडेमां मनुष्येमां अने
देवेमां हुता. ७ अथवा तिर्यग् योनिडेमां नैरयिकेमां मनुष्येमां अने

वचन्ननेरइयाई णं' एवम् अनन्तरोपपन्नकनैरयिकादीनाम् 'जस्स जं अत्थि
 लेस्सादियं' यस्य नैरयिकादे र्यत् लेश्यादिकमस्ति विद्यते 'अणागारोवजोगपज्ज
 वसाणं' अनाकारोपयोगपर्यवसानं लेश्यादित आरभ्य अनाकारोपयोगपर्यन्तम्
 'तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं' तत्सर्वं लेश्यादिकं स्थानम् एतया भजनया
 भणितव्यं वक्तव्यमेव । कियत्पर्यन्तं वक्तव्यं तत्राह—'जाव' इत्यादि, 'जाव वेमा-
 णियाणं' यावद्द्वैमानिकानाम् एकेन्द्रियादित आरभ्य वैमानिकान्तेषु सर्वत्र लेश्या-
 दिकं यस्य यदस्ति तस्य तद् वक्तव्यमेवेति भावः । 'नवरं' अणंतरेसु परिहरियव्वा
 ते जहा वंधिसए तथा इहंपि' नवरम्—केवलम् अनन्तरेषु—अनन्तरोपपन्ननार
 कादिषु यानि सम्यग्भिध्यात्वमनोयोगवाग्योगादीनि पदानि परिहर्त्तव्यानि
 असंभवान्न प्रच्छनीयानि तानि यथा वन्धिशतके पड्विंशतितमे गतके द्वितीयो-

में मनुष्यों में और देवों में थे ८, 'एवं अणंतरोवचन्न नेरइयाईणं' इस
 प्रकार अनन्तरोपपन्न नैरयिक आदिकों के मध्य में 'जस्स जं अत्थि
 लेस्सादियं' जिस नैरयिक आदि के जो लेश्यादिक अनाकारोपयोग
 पद तक है 'तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं' वह सब लेश्यादिक
 स्थान इस अजना से यावत् वैमानिक तक कहना चाहिये, यहां यावत्
 पद से 'एकेन्द्रिय आदि से लेकर वैमानिकान्त पदों' में सर्वत्र जो
 लेश्यादिक जिस के हैं उसके वह कहना चाहिये' यह पाठ ग्रहीत हुआ
 है । 'णवरं अणंतरेसु परिहरियव्वा ते जहा वंधिसए तथा इहंपि'
 किन्तु अनन्तरोपपन्न नारकादिकों में सम्यग्भिध्यात्व मनोयोग, वाग्-
 योग आदि जो पद है वे पूछने के योग असंभव होने से नहीं हैं ।
 इनके विषय का कथन जैसा हमने वन्धि शतक में द्वितीय उद्देशक में

द्वेषोभा उता. ८ एवं अणंतरोवचन्ननेरइयाई णं' आञ्ज प्रक.रथी अनंत-
 रोपपन्नक नैरयिक विगेरेमां 'जस्स जं अत्थि लेस्सादियं' ने नैरयिक विगेरेने
 ने लेश्या विगेरे अनाकारोपयोग पद सुधीमां उछा छे, 'तं सव्वं' एयाए
 भयणाए भाणियव्वं' ते तमाम लेश्या विगेरे स्थाने आ लज्जाथी—विहृपथी
 यावत् वैमानिक सुधीना कथनमां समञ्ज देवा. अहियां यावत्पथी ओकधंद्रिय
 विगेरेथी लधने वैमानिक सुधीना पदोमां मधे ने लेश्या विगेरे नेने उछा
 छे, तेने तेञ्ज लेश्या विगेरे उछेवा लोछये. आ पाठ ग्रहणु करायो छे.
 'णवरं' अणंतरेसु परिहरियव्वा ते जहा वंधिसए तथा इहंपि' अनंतरोपपन्नक
 नारक विगेरेमां सम्यग्भिध्यात्व, मनोयोग वचनयोग विगेरे ने पदो छे, ते
 असंभव डोवाथी पूछवायोग्य नथी. तेना संबंधमां वंधिशतकमां गीण उद्देशा-
 मां ने प्रभाणु कथन उछेवामां आञ्जु छे. ओञ्ज प्रभाणुतुं कथन अहियां समञ्जुं.

देशके कथितानि तथैवहापि ज्ञातव्यानि । 'एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ' एवं पापकर्मवदेव ज्ञानावरणीयकर्मणाऽपि दण्डको विधेयः, आलापप्रकारश्चेत्थम् 'अणंतरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया नाणावरणिज्जं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु ? गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा' इत्यादि सर्वत्र स्वयमेवोहनीय इति । 'एव जाव अंतराइएण निरवसेस' एवं ज्ञानावरणीयेन कर्मणा यथा दण्डको निरूपित स्तथैव यावत् आन्तरायिककर्मणाऽपि निरवशेषं सर्वं दण्डकादि कर्तव्यम् अत्र यावत्पदेन दर्शनावरणीय-वेदनीय-मोहनीया-यु-नामगोत्रकर्मणां संग्रहो भवतीति । 'एसो वि नव दण्डगसंहिओ उद्देसओ भाणि यव्वो' एषोऽपि नवदण्डकसंगृहीत उद्देशकः पापकर्म ज्ञानावरणीयादित आरभ्य अन्तरायपर्यन्तो भणितव्य इति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त !

किया है-वैसा ही वह यहाँ जानना चाहिये, 'एवंनाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्म के दण्डक के जैसे ही ज्ञानावरणीयादिक कर्म के साथ भी दण्डक बनाकर कहना चाहिये, उसका आलाप इस प्रकार से है 'अणंतरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया नाणावरणिज्जं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु-गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्ख-जोणिएसु होज्जा एवं जाव अंतराइएणं निरवसेस' ज्ञानावरणीय कर्म के साथ जैसा दण्डक बतलाया गया है उसी प्रकार से दंडक यावत् आन्तरायिक कर्म के साथ सम्पूर्ण रूप से करना चाहिये यहाँ यावत् पद से 'दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय आयु, नाम और गोत्र 'इन कर्मों का संग्रह हुआ है । 'एसो वि नव दण्डगसंहिओ उद्देसओ' भाणियव्वो !' नव दण्डक सहित यह उद्देश भी पापकर्म ज्ञानावरणी यादि से प्रारम्भ कर अन्तराय कर्म तक भणितव्य है । 'सेवं भंते !

— 'एवं-णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्मना दंडकोना कथन प्रमाणे न ज्ञानावरणीय विगरे कर्मनी साथे दंडको अनावीने समञ्ज देवा तेना आलापकेना प्रकार आ प्रमाणे छे -- 'अणंतरोववण्णएणं भंते नेरइया णाणा-वरणिज्जं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु कहिं समायरिंसु गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा एवं जाव अंतराइएणं निरवसेस' ज्ञानावरणीय कर्मनी साथे न प्रमाणे दंडक कहे छे अथ प्रमाणेना दंडक यावत् अंतराय कर्मनी साथे संपूर्ण पण्थाथी कहेवे नोथअ. अडियां यावत्पदथी 'दर्शनावरणीय, वेदनीय, आयु, नाम, अने गोत्र, आ कर्मप्रकृतियो अहणु करवामां आवेल छे 'एसो वि नव दंडगसंहिओ उद्देसओ भाणियव्वो' नव दंडको सहित आ उद्देशो पणु पापकर्म, ज्ञानावरणीय कर्मथी आरंभ करीने अंतराय कर्म सुधी कहेवे नोथअ.

तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक नारकादीनां पापकर्मादि संग्रह विषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव-सर्वथा सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्कृति, वन्दित्वा नमस्कृत्या संयमेन तपसा आत्मानं भास्यन् विहरतीति ॥सू० १॥

॥ इति श्री विश्वप्रिययात-जगद्दल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कालितललितकलापाठ्यापकप्रविशुद्धगणपत्रनरुग्रन्थनिर्मापक,
वादिमाननन्दक-श्रीसाहूचरणपति कोल्हापुरराजपदच-
' जैनाचार्य ' पदधूपित-कोल्हापुरराजगुरु-
वालब्रह्मचारि — जैनानार्य — जैनधर्मद्विवाकर
-पूज्यश्री घाम्बिलात्रतिनिश्चितायां श्री ' भग-
वतीसूत्रस्य " प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् अष्टाविंशतितमशतके
द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥२८-२॥

सेव भते ! ति' हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक आदिकों के पापकर्म आदि के उपार्जन स्वभाचरण करने के विषय में जो आप देवानुप्रियेने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री की स्तुति-वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से आत्मा को ध्यावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घाम्बिलात्रजीमहागजकृत "अगवनीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके अष्टादशवे शतक का द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥२८-२॥

'सेव भते ! सेव भते ! ति' हे भगवन् अनन्तरोपपन्नक नैरयिक विगेरे ना पापकर्म विगेरे ना उपार्जन समाचरण (भोगवपुं) करवाना विषयमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे, हे भगवन् आप देवानुप्रियेण आप्त कथन सर्वथा सत्य न छे, आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कथी वंदना नमस्कार करीने तेओ संयम अने तपसी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घाम्बिलात्र महागजकृत 'अगवनीसूत्र'नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अष्टादशवे शतकेनी उद्देशक समाप्त ॥२८-२॥

अथ तृतीयादारभ्य एकादशान्ता उद्देशका आरभन्ते

अथ द्वितीयमुद्देशकं व्याख्याय क्रमप्राप्तान् तृतीयाद्येकादशान्तान् उद्देशकान् निरूपयन्नाह—‘एवं एएणं क्रमेणं’ इत्यादि ।

मूलम्—एवं एएणं क्रमेणं जहेव बंधिसए उद्देशगाणं परिवाडी तहेव इहंपि अट्टसु भंगेसु नेयव्वा । नवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव् अचरिसुद्देशो । सव्वे वि एए एकारस उद्देशगा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ।सू० १। अट्टावीसइमे सए तइयाइ एगारस उद्देशगा समत्ता ॥२८-३-११॥

अट्टावीसइमं कम्मससज्जणसयं समत्तं ॥२८॥

छाया—एवमेतेन क्रमेण यथैव बन्धिशतके उद्देशकानां परिपाटी तथैवेहापि अष्टसु भङ्गेषु नेतव्याः । नवरं ज्ञातव्यं यत् यस्यास्ति तत् तस्य भणितव्यं यावच्चरमोद्देशकः सर्वेऽपि एते एकादशोद्देशकाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद् विहरति ॥सू० १॥

अष्टाविंशतितमे शतके तृतीयाद्येकादश उद्देशकाः समाप्ताः ॥२८-३-११॥

अष्टाविंशतितमं कर्मसमर्जनशतकं समाप्तम् ॥२८॥

टीका—‘एवं एएणं क्रमेणं’ एवमेतेन क्रमेण—पूर्वप्रदर्शितप्रकारेण ‘जहेव बंधिसए उद्देशगाणं परिवाडी’ यथैव बन्धिशतके षड्विंशतितमे शतके उद्देशकानां

अठाहसवे शतक का तीसरा उद्देशक का प्रारंभ

द्वितीय उद्देशक का व्याख्यान कर के अब सूत्रकार क्रम प्राप्त तृतीय उद्देशक से लेकर ११ वें उद्देशक तक के उद्देशकों का निरूपण करते हैं -

‘एवं एएणं क्रमेणं जहेव बंधिसए’—इत्यादि ।

टीकार्थ—एवं एएणं क्रमेणं’ पूर्व प्रदर्शित प्रकार से जैसी कि बन्धिशतक में—२६ वें शतक में उद्देशकों की—तृतीय चतुर्थ आदि

त्रीण उद्देशानां प्रारंभ—

त्रीण उद्देशानुं कथन करीने डेवे सूत्रकार कभथी आवेला आ त्रीण उद्देशाथी लधने अगियारमां उद्देशा सुधीना उद्देशाओनुं कथन करे छे, ‘एवं एएणं क्रमेणं जहेव बंधिसए’ इत्यादि

टीकार्थ—पडेला अतावेद प्रकारथी ने प्रमाणे अंध शतकमां अर्थात् छवीसमा शतकमां उद्देशाओनी ओट्टे के त्रीण अने योथा विगेरे उद्देशा-

तृतीयचतुर्थादीनां परिपाटी प्रक्रिया कथिता 'तदेव इहं पि अट्टसु भंगेषु ज्ञेयत्वा' तथैव तेनैव रूपेण इहापि अष्टाविंशतितमगतकेऽपि तृतीयाहुद्देशकोक्तेषु अष्टसु भंगेषु परिपाटी नेतव्या ज्ञातव्येति । पूर्वशतकापेक्षया 'नवरं जाणियव्वं' नवरं केवलं वैलक्षण्यं ज्ञातव्यम् किं तदित्याह—'जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरमुद्देशो' यत् लेख्यादि यादृशं यदय जीवस्य नारकादिर्भवति तदेव तस्य जीवस्य भणितव्यं नान्यद्यन्यस्य, कियत्पर्यन्तमित्याह—यावत् अचरमोद्देशः—अचरमोद्देशकान्तम् अनन्तरोपपन्नकः परम्परोपपन्नकानन्तरावगाढपरम्परावगाढानन्तराहारकपरम्पराहारकानन्तरपर्याप्तपरम्परपर्याप्तचरमपर्यन्तानां नवानामुद्देशकानां संग्रहो भवतीति, 'सव्वे वि एए एकारस उद्देशगा' सर्वेऽपि एते सामान्यो-

उद्देशकों की-परिपाटी-प्रक्रिया-कही गई है 'तदेव' उसी प्रकार से 'इहंपि अट्टसु भंगेषु ज्ञेयत्वा' यहाँ अटाहसर्वे शतक में भी तृतीयादि उद्देशकों में उक्त आठ भंगों में परिपाटी जाननी चाहिये, यहाँ पूर्व की अपेक्षा यदि भिन्नता है तो वह 'नवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरमुद्देशो' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रगट की गई है, अर्थात् जो जैसी लेख्यादिक जिस नारकादि जीव के हो वह वैसी लेख्यादिक उस नारकादि जीव को कहनी चाहिये—अन्य की अन्य को नहीं कहनी चाहिये, और ऐसा कथन यावत् अचरम उद्देशक तक करना चाहिये, यहाँ यावत् शब्द से—'अनन्तरोपपन्नक परम्परोपपन्नक, अनन्तरावगाढ, परम्परावगाढ, अनन्तराहारक, परम्पराहारक, अनन्तरपर्याप्त, परम्परपर्याप्त और चरम इन नव उद्देशकों का संग्रह हुआ है, 'सव्वे वि एए एकारस उद्देशगा' सामान्य उद्देशक से लेकर अचरम

ओनी-परिपाटी-प्रक्रिया कहेवाभां आवेल छे, 'तदेव' ओण प्रमाणे 'इहंपि अट्टसु भंगेषु ज्ञेयत्वा' आ अठयावीसभा शतकभां पणु त्रीण विगेरे उद्देशा-ओभां उक्त आठ लंगोभां प्रक्रिया समन्वी अहियां पडेलां करतां ने कांथ ईरक्षर छे, ते नवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरमुद्देशो' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रगट करेल छे. अर्थात् ने नैरकादिने ने ने देश्या विगेरे कहेल डोय तेने तेण प्रमाणेनी देश्या विगेरे कहेवा लेधओ णीणनी देश्या विगेरे णीणने कहेवाना नथी. अने आ प्रमाणेतुं कथन अचरमना उद्देशा सुधी कहेवुं लेधओ. अहियां यावत् शब्दथी—'अनन्तरोपपन्नक, परंपरोपपन्नक, अनन्तरावगाढ, परंपरावगाढ अनन्तराहारक, परंपराहारक, अनन्तर पर्याप्त, परंपरपर्याप्त अने चरम पर्याप्त आ नव उद्देशाओ प्रकृत कराय छे. 'सव्वे वि एए एकारस उद्देशगा' अवथी लधने चरम उद्देशा

देशकत आरभ्याचरपर्यन्ता एकादशोद्देशका भवन्ति । ननु प्रथमभङ्गके सर्व-
जीवाः तिर्यग्भ्य आगत्य समुत्पन्ना इति कथं संभवेत् आनतादिदेवानां तीर्थ-
करादि मनुष्यविशेषानां च तिर्यग्भ्य आगतानामनुत्पत्तेः एवं द्वितीयतृतीयादि
भङ्गकेऽपि प्रश्नाः, इति चेदत्रोच्यते बाहुल्यमाश्रित्य एते भङ्गा ग्रहीतव्या इति ।
'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति जाव बिहरइ' तदेव' भदन्त ! तदेव' भदन्त ! इति
यावद्विहरति, हे भदन्त ! गतप्रकरणे यद्देशानुप्रियेण कथितं तत् सर्वम् एवमेव-

उद्देशक तक इस प्रकार से यहाँ सर्वत्र ग्यारह उद्देशक हो जाते हैं ।

शंका-प्रथम भंग में जो ऐसा कहा गया है कि समस्त जीव
तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न हुए हैं-सो यह कथन कैसे
संभवित हो सकता है ? कर्षों की आनतादि देवों की एवं तीर्थकर
आदि विशेष मनुष्यों की उत्पत्ति तिर्यग्गति से आये हुए जीवों में
से नहीं होती है । अर्थात् तिर्यग्गति से आये हुए जीव आनतादि
देवों के रूप से और तीर्थकरादि के रूप से उत्पन्न नहीं होते हैं ।
इसी प्रकार से द्वितीय तृतीयादि भंगों में भी यह प्रश्न होता है ।

उत्तर—समस्त जीव तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न हुए हैं-
विवक्षित पर्यायरूप से जन्मे हैं-ऐसा जो कहा गया है वह बाहुल्य को
आश्रित करके कहा गया है इसलिये बाहुल्य को आश्रित करके इन
भंगों को ग्रहण करना चाहिये, 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति जाव
बिहरइ' हे भदन्त ! गत प्रकरण में जो आप देशानुप्रियेने कहा है वह

सुधीमां आहुयां अत्रा मणीने अगियार उद्देशाओ थछ नय छे.

शंका--पडेल ल'गमां ने अेपुं कलुं छे के-सधणा लुवे। तिय'अ
येनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थया छे. तो आ कथन केवी रीते संभवित
थछ शके छे ? केम के-आनत विगेरे देवे। अने तीर्थ'कर विगेरे विशेष मनु-
ष्येनी उत्पत्ती तिर्यग्गतिथी आवेला लुवेमांथी थती नथी. अर्थात् तिय'अ
गतिथी आवेला लुवे। आनत विगेरे देवपण्थाथी अने तीर्थ'कर विगेरे रुपथी
उत्पन्न थता नथी. अेअ रीते पीण अने त्रीण विगेरे ल'गोमां पणु आं
प्रश्नो समजवा.

उत्तर--सधणा लुवे। तिय'अ येनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थया छे.
विवक्षित पर्याप्त पण्थाथी जन्म्या छे. अेपुं ने कडेल छे, ते अहुअ पण्थाने
आश्रय करीने आ ल'गे अहुअ करवा जेछअे.

'सेव' भंते सेव' भंते ! त्ति जाव बिहरइ' हे भगवन् आगला प्रकरण-
मां आप देवानुप्रिये ने कथन करेद छे, ते सर्व कथन सर्वथा सत्य छे,

सर्वथा सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदश्रूषित -कोल्हापुरराजगुरु-वाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भग
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां अष्टाविंशतितमशतके
तृतीयाधिकादशान्ता उद्देशकाः
समाप्ताः ॥२८-३-११॥

॥ अष्टाविंशतितमं कर्मसमर्जनशतं समाप्तम् ॥

सर्वथा सत्य ही है । ऐसा कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके अठावीसवें शतकका
तृतीय उद्देशक से लेकर ग्यारह वें उद्देशक तक नौ उद्देशक समाप्त ॥

॥ २८ वां शतक समाप्त ॥

आप देवानुप्रियनुं कथन सत्य ज्ञ छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीने
प्रभुश्रीने वंदना करी तेणोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने संयम
अने तपशी पोताना आत्माने भावित करता थका तेणो पोताना स्थान पर
विराजमान थया. ॥सू. १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना सत्यावीसमा शतकना त्रीण उद्देशाथी अगीयारमां
उद्देशोणो सुधीना नव उद्देशोणो समाप्त ॥३-११॥

॥अठ्यावीससु' शतक समाप्त ॥२८॥

अथैकोनत्रिंशत्तमे शतके प्रथमोद्देशकः प्रारभ्यते

पापकर्मादि वक्तव्यताऽनुगतमष्टाविंशतितमं शतकं व्याख्याय क्रमप्राप्तं तथाविधमेव एकोनत्रिंशं शतमारभते, अत्रापि च तथैव एकादशोद्देशकाः सन्ति, तेषु चाद्यस्य उद्देशकस्येदं सूत्रम्—‘जीवा णं भंते ! पावं कम्मं’ इत्यादि ।

मूलम्—जीवा णं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु ?
 समायं निट्टविंसु१, समायं पट्टविंसु, विसमायं निट्टविंसु२,
 विसमायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु३, विसमायं पट्टविंसु विस-
 मायं निट्टविंसु ?४, गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्टविंसु समायं
 निट्टविंसु१, जाव अत्थेगइया विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्ट-
 विंसु४ । से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइया समायं पट्ट-
 विंसु समायं निट्टविंसु तं चेव ? गोयमा ! जीवा चउव्विहा पन्नत्ता
 तं जहा अत्थेगइया सप्पाउया समोववन्नगा१, अत्थेगइया
 समाउया विसमोववन्नगा२, अत्थेगइया विसप्पाउया समोवव-
 न्नगा३, अत्थेगइया विसप्पाउया विसमोववन्नगा४ । तत्थ णं जे
 ते समाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु विस-
 मायं निट्टविंसु१ । तत्थ णं जे ते सप्पाउया विसमोववन्नगा ते णं
 पावं कम्मं समायं पट्टविंसु विसमाइं निट्टविंसु२ । तत्थ णं जे ते
 विसप्पाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु
 समायं निट्टविंसु३ । तत्थ णं जे ते विसप्पाउया विसमोववन्नगा
 तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु४, से
 तेणट्टेणं गोयमा ! तं चेव । सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं०
 एवं चेव एवं सव्वट्टाणैसु वि जाव अणागारोवउत्ता । एए सव्वे
 वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियवा । नेरइया णं भंते ! पावं
 कम्मं किं समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु ? पुच्छा, गोयमा !
 अत्थेगइया समायं पट्टविंसु—एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणि-

यत्वं जाव अणागारोवउत्ता । एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जं
अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणियत्वं । जहा पावेण दंडओ
एएणं कमेणं अट्टसु वि कम्मपगडीसु अट्ट दंडगा भाणियत्वा
जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा । एसो नवदंडगसंगहिओ
पढमो उद्देशो भाणियत्तो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

एगूणतीसइमे सए पढमो उद्देशो समत्तो ॥२९-१॥

छाया—जीवाः खलु भदन्त । पापं कर्म किं समकं प्रास्थापयन् समकं
न्यस्थापयन् १, समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् २, विषमकं प्रास्थापयन्
समकं न्यस्थापयन् ३, विषमकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् ४, गौतम ।
अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् १, यावद् अस्त्येकके विषमकं
प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् ४, । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते अस्त्ये
कके समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् तदेव, गौतम ! जीवाश्चतुर्विधाः
प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अस्त्येकके समायुष्काः समोपपन्नकाः १, अस्त्येकके समा-
युष्का विषमोपपन्नकाः २, अस्त्येकके विषमायुष्काः समोपपन्नकाः ३ अस्त्येकके
विषमायुष्का विषमोपपन्नकाः ४ । तत्र खलु ये ते समायुष्काः समोपपन्नका स्ते खलु
पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् १, तत्र खलु ये ते समायुष्का
विषमोपपन्नका स्ते खलु पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् २, तत्र
खलु ये ते विषमायुष्काः समोपपन्नका स्ते खलु पापं कर्म विषमकं प्रास्थापयन्
समकं न्यस्थापयन् तत्र खलु ये ते विषमायुष्का विषमोपपन्नका स्ते खलु पापं
कर्म विषमकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् । तत्तेनार्थेन गौतम ! तदेव ।
सलेश्याः खलु भदन्त । जीवाः पापं कर्म—एवमेव, एवं सर्वस्थानेष्वपि यावदना-
कारोपयुक्ताः । एतानि सर्वाण्यपि पदानि एतया वक्तव्यतया भणितव्यानि ।
नैरयिकाः खलु भदन्त । पापं कर्म किं समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन्,
पृच्छा, गौतम ! अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् एवं यथैव जीवानां तथैव भणितव्यं
यावत् अनाकारोपयुक्ताः । एवं यात्रद्वैमानिकानाम् यस्य यदस्ति तद् एतेनैव क्रमेण
भणितव्यम्, यथा पापेन दण्डकः, एतेन क्रमेणाष्टास्वपि कर्मप्रकृतिषु अष्ट
दण्डका भणितव्या जीवादिका वैमानिकपर्यवसानाः । एषो नवदण्डकसंगृहीतः
प्रथमोद्देशो भणितव्यः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

एकोनविंशत्तमे शतके प्रथमोद्देशः समाप्तः ॥२९-१॥

टीका--'जीवा णं भंते' जीवाः खलु भदन्त ! 'पाव कम्मं' पापम्-अशुभं कर्म 'किं समायं पट्टविंसु' समकम्-बहवो जीवाः युगपदित्यर्थः प्रास्थापयन्-प्रस्थापितवन्तः प्रथमतया वेदयितु मारब्धवन्तः किम् तथा-'समायं निट्टविंसु' समकमेव न्यस्थापयन्-निष्ठापितवन्तः नाशितवन्तः पापकर्मणो नाशमकुर्वन् इत्यर्थः, इति प्रथमो भङ्गः १, तथा 'समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु २' समकं-युगपदेव अनेके जीवाः प्रास्थापयन् प्रस्थापितवन्तः युगपदनेकेन्यस्थापयन्-निष्ठापितवन्त इति द्वितीयो भङ्गः २, तथा 'विसमायं पट्टविंसु समायं निट्ट-

२९ वां शतकके पहला उद्देशक

पापकर्म आदि की वक्तव्यता से अनुगत २८ वें शतक की व्याख्या करके अब क्रम प्राप्त २९ वां शतक प्रारम्भ होता है, यहां पर भी पूर्वोक्त जैसे ११ उद्देशक हैं। इनमें से आदि के उद्देशक का 'जीवाणं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु'-इत्यादि

टीकार्थ-गौतमस्वामीने प्रसुश्री से ऐसा पूछा है-'जीवा णं भंते ! पावं कम्मं' हे भन्दत ! अनेक जीव जो पापकर्म को भोगते हैं और नष्ट करते हैं सो क्या वे उस पापकर्म को 'किं समायं पट्टविंसु' भोगने का प्रारम्भ एक काल में करते हैं और 'समायं निट्टविंसु' एक ही काल में वे उसका विनाश करते हैं ? अथवा-वे उस 'समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु २' पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक काल में करते हैं और

ओगणुत्रीसभा शतकने प्रारंभ--

पडेला उद्देशो.

पापकर्म विगेरे ना कथनना संबंधमां अठ्यावीसभा शतकतुं कथन करीने हुवे कुमथी आवेल आ ओगणुत्रीसभा शतकने प्रारंभ करवामां आवे छे. आ ओगणुत्रीसभा शतकमां पणु पडेला कथा प्रभाणु अगीयार उद्देशोओ कथा छे तेमां पडेला उद्देशातुं पडेळुं सूत्र नीचे प्रभाणु छे -'जीवा णं भंते पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु' इत्यादि

टीकार्थ--गौतमस्वामीओ प्रसुश्रीने ओतुं पूछथुं छे के--'जीवा णं भंते पावं कम्मं' हे लगवन् अनेक ओवे ओओ पापकर्म लोगवे छे, अने तेना क्षय करे छे तो थुं ते तेओ पापकर्मने 'समायं पट्टविंसु' लोगववाने प्रारंभ ओकओ समयमां करे छे ? अने 'समायं निट्टविंसु' ओक ओ समयमां तेओ तेना विनाश करे छे ? अथवा-तेओ 'समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु' पापकर्मने लोगववाने प्रारंभ ओक समयमां करे छे ? अने तेना विनाश-

વિંસુ' વિપમં યથા ભવતિ વિપમતયૈત્યર્થઃ પ્રસ્થાપિતવન્તઃ, સમકં નિષ્ઠાપિતવન્ત
 इति तृतीयः, तथा-‘विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु’ विपममेव यथा
 भवति तथा प्रस्थापितवन्तः तथा विपमं विपमतयैत्र निष्ठापितवन्त इति चतुर्थो
 भङ्गः ४, हे भदन्त ! अनेके जीवाः पापं कर्म भोक्तुमेकस्मिन्नेव काले प्रयतमाना
 भवन्ति स्म तथा सममेककाले एतादृशं कर्म विनाशयन्ति स्म किम् ? अथवा
 एकदैव सर्वे जीवाः कर्मभोगाय प्रवर्तन्ते विपमतया अन्तकरणाय प्रवर्तन्ते,
 अथवा-विपमतया प्रारभन्ते समकमेव तत् कर्म विनाशयन्ति अथवा विपमतया
 प्रारभन्ते विपमतयैव निवर्तन्ते ? किम् ? इति चतुर्णांमपि भङ्गानां भाव इति प्रश्नः
 मगधानाह-‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अत्येगइया समायं पट्टविंसु
 समायं निट्टविंसु’ अस्येकके जीवाः समकमेव प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन्
 केचन अनेके जीवाः पापं कर्म भोगाय एकदैव प्रारभन्ते तथा तादृशं कर्म

उसका विनाश भिन्न-भिन्न काल में करते हैं ? अथवा ‘विसमायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु’ वे भिन्नकाल में उस पापकर्म का भोगना प्रारंभ करते हैं और एक काल में उसे विनिष्ट करते हैं ? अथवा ‘विसमायं पट्टविंसु, विसमायं निट्टविंसु’ भिन्न-भिन्न काल में वे उसका भोगना प्रारंभ करते हैं और भिन्न-भिन्न काल में ही उसका विनाश करते हैं ? इस प्रकार से ४ अंगों से युक्त प्रश्न गौतमस्वामीने प्रभुश्री से पूछा है, इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री गौतमस्वामीसे कहते हैं-‘गोयमा ! अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु’ हे गौतम ! कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो पापकर्म को भोगने का प्रारंभ एक साथ करते हैं और एक ही साथ उसका विनाश करते हैं अर्थात् पापकर्म को एक ही साथ एक काल में भोगते हैं और एक ही

જુદા જુદા કાળમાં કરે છે ? ૨ અથવા ‘વિસમાયં પટ્ટવિંસુ સમાયં નિટ્ટવિંસુ’ તેઓ ભિન્ન કાળમાં તે પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે ? અને એક કાળમાં તેનો નાશ કરે છે ? ૩ અથવા ‘વિસમાયં પટ્ટવિંસુ સમાયં નિટ્ટવિંસુ’ તેઓ ભિન્ન કાળમાં તે પાપ કર્મને લોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે ? અને એક કાળમાં તેનો નાશ કરે છે ? ૪ આ પ્રમાણે ચાર ભંગોવાળો પ્રશ્ન ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને પૂછ્યો છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે- ‘ગોયમા ! અત્યેગइय समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु’ हे गौतम ! કેટલાક જીવો એવા હોય છે કે-જેઓ એક સાથે પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે. અને તેનો વિનાશ પણ એક સાથે જ કરે છે. અર્થાત્ પાપકર્મને એક સાથે એક કાળમાં લોગવે છે. અને એક સાથે જ એક કાળમાં તેનો નાશ કરે છે,

विनाशायपि युगपदेव प्रवर्त्तमाना भवन्तीत्यर्थः । 'जात्र अत्येगइया विसमायं पट्ट-
विंसु विसमायं निट्टविंसु' यावत् अनेके विषमकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन्,
अत्र यावत्पदेन अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन्, अस्त्येकके
विषमं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् इत्यनयो द्वितीयतृतीयभङ्गयोर्ग्रहणं भवति,
एवं चत्वारोऽपि भङ्गा उत्तरे समर्थिता भगवतेति । पुनः प्रश्नयन्नाह—'से केणट्टेण'
इत्यादि । 'से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ' तर्कैनार्थेन भदन्त । एवमुच्यते 'अत्ये-
गइया समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु त चेव' समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्था-

साथ एक कालमें उसके नष्ट भी करते हैं ? 'जात्र अत्येगइया विसमायं
पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु' इसी रीति से यावत् कितनेक जीव ऐसे
भी हैं जो पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ भिन्न-भिन्नकाल में करते
हैं और भिन्न-भिन्न काल में ही उसका विनाश करते हैं । यहां यावत्
शब्द से द्वितीय और तृतीय भंगों का ग्रहण हुआ है । वे द्वितीय तृतीय
भंग इस प्रकार से हैं 'अस्त्येकके जीवा समकं प्रास्थापयन् विषमकं
न्यस्थापयन् अस्त्येकके विषमकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् ३'
दोनों भंगों का अर्थ स्पष्ट है । इस प्रकार से प्रभुश्रीने यहां चारों भंगों
का समर्थन उत्तर वाक्य में किया है ।

'से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं
निट्टविंसु' हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि अनेक
जीव ऐसे हैं जो पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक साथ एककाल में
करते हैं और उसका अन्त भी एक साथ एक ही काल में करते हैं ?

'जात्र अत्येगइया विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु' आण प्रभाणे
केटलाक एवे अवा पणु होय छे, के जेओ जुदा-जुदा कणमां पापकर्म
लोगववाने प्रारंभ करे छे, अने जुदा-जुदा कणमां तेने विनाश करे छे.
अडियां यावत् शब्दथा पीने अने त्रीने अे जे लंग अडणु थया छे. ते
जे लंगो आ प्रभाणे छे—'अस्त्येकके जीवा समकं प्रास्थापयन् विषमकं
न्यस्थापयन् अस्त्येकके विषमकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् ३' आ अने
लंगोने अर्थ स्पष्ट छे. आ प्रभाणे प्रभुश्रीअे उत्तर वाक्यमां अडियां आरे
लंगोने स्वीकार कर्यो छे.

'से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ' अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं
निट्टविंसु' हे लगवन् आप आ प्रभाणे शा कारणे कहे छे ? के अनेक एवे
अवा होय छे के-जेओ पापकर्मने लोगववाने प्रारंभ अेकी साथे अने
अेक कणमां करे छे ? अने तेने नाश पणु अेकी साथे अने अेक

पयन् समकं प्रास्थापयन् विपमकं न्यस्थापयन् विपमकं प्रास्थापयन् समकं न्य-
स्थापयन् विपमकं प्रास्थापयन् विपमकं न्यस्थापयन् इत्येवान्तरपदनः, भगवा-
नाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘जीवा चउच्चिहा पन्नत्ता’ जीवा-
धतुर्विधाः—चतुष्प्रकारकाः प्रज्ञप्ताः कथिताः ‘तं जहा’ तद्यथा—‘अत्थेगइया समा-
उया समोववन्नगा’ अस्त्येकके समायुष्काः समायुष उदयापेक्षया समकालायु-
ष्कोदया इत्यर्थः, समोपपन्नकाः विवक्षितायुषः क्षये समकमेव भवान्तरे उपपन्नाः
समोपपन्नकाः, यैचैवविधास्ते समकमेव प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् ।

तथा अनेक जीव ऐसे भी हैं जो पापकर्म को भोगनेका प्रारम्भ तो
एक काल में करते हैं और उसका अन्त भिन्न-भिन्न काल में करते
हैं २ तथा अनेक जीव ऐसे हैं जो पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ
भिन्न-भिन्न काल में करते हैं और उसका अन्त एक काल में करते
हैं ३ तथा अनेक जीव ऐसे हैं जो पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ भी
भिन्न-भिन्न काल में करते हैं और विनाश भी उसका भिन्न-भिन्न
काल में करते हैं ? ४ इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—“गोयमा ! जीवा
चउच्चिहा पन्नत्ता’ हे गौतम ! जीव चार प्रकार के कहे गये हैं ‘तं जहा’
जैसे—‘अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा ? अत्थेगइया समाउया
विसमोववन्नगार’ कितनेक जीव ऐसे होते हैं कि उदयकी अपेक्षा से
जिनकी आयु समान है अर्थात् जिनकी आयुका उदय समान काल
में हुआ है और उसविवक्षित आयु के क्षय होने पर एक ही समय
में जिनका भवान्तर में उत्पाद हुआ है, ऐसे जो जीव होते हैं वे
पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक साथ करते हैं और एक ही साथ

समयमां करे छे ? २ तथा अनेक लुवे जेवा डोय छे के—पापकर्मने लोग-
ववाने प्रारंभ जुदा-जुदा समयमां करे छे ? अने तेना अन्त जेक कालमां
करे छे ? ३ तथा अनेक लुवे जेवा डोय छे के जेजो पापकर्मने लोग
ववाने प्रारंभ जुदा-जुदा कालमां करे छे ? अने तेना विनाश पणु जुदा-
जुदा कालमां करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा !
जीवा चउच्चिहा पन्नत्ता’ हे गौतम ! लुवे चार प्रकारना कथा छे. ‘तं जहा’
ते आ प्रमाणे छे. ‘अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा ? अत्थेगइया समाउया
विसमोववन्नगार’ केटलाके लुवे जेवा डोय छे के—उदयनी अपेक्षाथी जे
जोनु आयुष्य सरणु छे. अर्थात् जेजोना आयुष्यने उदय समान कालमां
थये डोय छे, ते विवक्षित आयुष्यने क्षय थवाथी जेक जे समयमां भवान्तरमां
जेजोना उत्पाद उत्पत्ति थयेल डोय जेवा जे लुवे डोय छे. तेजो पाप
कर्म लोगववाने प्रारंभ जेकी साथे करे छे. अने जेकी साथे तेना विनाश

‘अत्येगइया समाउया विसमोवन्नगा’ अस्त्येकके जीवाः समायुषो विषमोपपन्नकाः
 ‘अत्येगइया विसमाउया समोवन्नगा’ अस्त्येकके जीवाः विषमायुषः समोपप-
 न्नकाः, ‘अत्येगइया विसमाउया विसमोवन्नगा’ अस्त्येकके विषमायुषो विषमो-
 पपन्नकाः तदेवं चतुष्प्रकारा जीवा भवन्ति । एतदेव स्पष्टयति—‘तत्थ णं’ इत्यादि,
 ‘तत्थ णं जे ते समाउया समोवन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु समायं
 निट्टविंसु’ तत्र खलु तेषु चतुर्षु जीवेषु ये ते समायुरः समोपपन्नकाश्च ते जीवा
 खलु पापं कर्म समकमेव प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् इति । ननु आयुः
 कर्म वाश्रित्यैवमुपपद्यते न तु पापं कर्माश्रित्य, तद्धि न आयुष्कं कर्मण उदयापेक्षं
 प्रस्थाप्यते निष्ठाप्यते च ? इति चेदत्रोच्यते कर्मणामुदयस्य क्षयस्य च भवा-
 पेक्षत्वात् भवस्य चायुष्कापेक्षत्वाद् आयुः कर्माश्रित्य कथनं न विरुद्धमिति । अत
 एवोक्तम् ‘तत्थ णं जे ते समाउया समोवन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु
 समायं निट्टविंसु’ तत्र चतुर्विधजीवमध्यात् खलु ये जीवाः समायुष्काः

उसका विनाश करते हैं । ‘अत्येगइया समाउया विसमोवन्नगा’
 तथा—कितनेक जीव ऐसे होते हैं जो एक ही आयुवाले होते हैं और
 भिन्न-भिन्न समय में परभव में उत्पन्न होते हैं २ ‘अत्येगइया विस-
 माउया समोवन्नगा’ तथा—कितनेक जीव ऐसे होते हैं जो विषम
 आयुवाले होते हैं और परभव में साथ-साथ उत्पन्न होते हैं । तथा
 ‘अत्येगइया विसमाउया विसमोवन्नगा’ कितनेक जीव ऐसे होते हैं
 कि जिनकी आयु बराबर नहीं होती है और भिन्न भिन्न समय में जो
 परभव में उत्पन्न हुए होते हैं । इस प्रकार से जीव चार प्रकार के होते
 हैं । इसी कथन का सूत्रकार स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं—‘तत्थ णं
 जे ते समाउया समोवन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु समायं

पणु करे छे. ‘अत्येगइया समाउया विसमोवन्नगा’ तथा केटलाक ७वे। ओवा
 डोय छे के-७ओ ओक सरभा आयुष्य वाणा डोय छे. अने जुदा-जुदा
 समयमां परलवमां उत्पन्न थाय छे. तथा ‘अत्येगइया विसमाउया समोव-
 वन्नगा’ तथा केटलाक ७वे। ओवा डोय छे के-७ओ विषय आयुष्यवाणा
 डोय छे. परलवमां ओकी साथे उत्पन्न थाय छे. तथा ‘अत्येगइया विसमाउया
 विसमोवन्नगा’ केटलाक ७वे। ओवा डोय छे के-७ओनुं आयुष्य परापर
 डोतु नथी. अने जुदा-जुदा समयमां ७ओ परलवमां उत्पन्न थयेला डोय
 छे. आ रीते ७वे। आर प्रकारना डोय छे आण कथननुं स्पष्टी करणु करता
 कडे छे के-‘तत्थ णं जे ते समाउया समोवन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ट-
 विंसु समायं निट्टविंसु’ आमां ७े ७वे। सरभा समयमां परलवमां उत्पन्न

समोपपन्नकाः ते समकमेव प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् चेति १ ।
 'तत्थ णं जे ते समाउया विसमोवन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्ट-
 विसु विसमायं निट्टविसु' तत्र ये खलु समायुषो विपमोपपन्नाः समकालायुष्कोदया
 विषमतया परभवोत्पन्नाः मरणकालवैषम्यात् ते खलु समकं प्रास्थापयन् आयु-
 षकर्मविशेषोदयसंघाद्यत्वात् पापकर्मवेदनविशेषस्य, विषमकं विषमतया न्य-
 स्थापयन् मरणवैषम्येण पापकर्मवेदनविशेषस्य विषमतया निष्ठा संभवादिति
 द्वितीयः २ । तथा 'तत्थ णं जे ते विसमाउया समोवन्नगा तेणं पावं कम्मं विस-
 मायं पट्टविसु समायं निट्टविसु' तत्र खलु ये जीवा विषमकालायुष्कोदयाः सम-
 कालभवान्तरोत्पत्तयः ते खलु जीवाः विषमं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन्

निट्टविसु' इनमें जो जीव समान काल में आयुषके उदयवाले होते हैं और
 समान समय में परभव में उत्पन्न हुए होते हैं ऐसे वे जीव एक ही काल
 में तो पापकर्म का भोगना प्रारम्भ करते हैं और उसका अन्त भी
 एक ही काल में—साथ—साथ करते हैं १ । 'तत्थ णं जे ते समाउया विस-
 मोवन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविसु विसमायं निट्टविसु' तथा—
 जो जीव समान आयुष के उदयवाले होते हैं और भिन्न—२ काल में
 परभव में जन्मे हुए होते हैं—ऐसे वे जीव पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ
 एक ही साथ करते हैं पर उसका अन्त भिन्न—२ समय में करते हैं २ ।
 तथा—'तत्थ णं जे ते विसमाउया समोवन्नगा तेणं पावं कम्मं विसमायं
 पट्टविसु समायं निट्टविसु' जो जीव भिन्न—भिन्न समय में आयुष के
 उदयवाले होते हैं और साथ—साथ में परभव में उत्पन्न हुए होते हैं वे
 जीव 'पावं कम्मं विसमायं पट्टविसु समायं निट्टविसु' पापकर्म को भोगने

थयेला डोय छे, जेवा ते जेवा जेक जे कालमां तो पापकर्म लोगववाने प्रारंभ
 करे छे, अने तेना अंतपणु जेक जे कालमां जेक साथे करे छे. १ तत्थ णं
 जे ते समाउया विसमोवन्नगा तेण पावं कम्मं समायं पट्टविसु विसमायं
 निट्टविसु' तथा जे जेवा समान आयुष्यना उदयवाणा डोय छे, अने जुहा
 जुहा कालमा परलपमां जन्मेला डोय छे. जेवा ते जेवा पापकर्म लोगववाने
 प्रारंभ जेकी साथे करे छे. परंतु तेना अंत जुहा—जुहा समयमां करे छे.
 तथा 'तत्थ णं जे ते विसमाउया समोवन्नगा तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्ट-
 विसु समायं निट्टविसु' जे जेवा जुहा—जुहा समयमां आयुष्यना उदयवाणा
 डोय छे, ते जेवा 'पावं कम्मं विसमायं पट्टविसु समायं निट्टविसु ४' पाप
 कर्म लोगववाने प्रारंभ जुहा—जुहा समयमां करे छे, परंतु तेना अंत जेकी

इति तृतीयः३ । 'तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा' तत्र खलु ये जीवा विषमायुष्काः विषमोपपन्नकाः 'तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु' ते खलु जीवाः पापं कर्म विषमतया प्रास्थापयन् विषमतया न्यस्था

का प्रारम्भ भिन्न-भिन्न समयमें करते हैं पर उसका अन्त एक ही साथ करते हैं । 'तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा 'तथा-जो जीव भीन्न-भिन्न समय में आयुष के उदयवाले होते हैं, और भिन्न-भिन्न समय में परभव में उत्पन्न हुए होते हैं 'तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु' ऐसे वे जीव पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ भिन्न-भिन्न समय में करते हैं और उसका अन्त भी भिन्न-भिन्न समय में करते हैं । यहां ऐसी शंका हो सकती है कि जो तुम ऐसा कहते हो कि उदय की अपेक्षा जिनकी आयु समान है और जो परभव में साथ-साथ उत्पन्न हुए हैं ऐसे वे जीव पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ करते हैं और साथ-साथ ही उसका अन्त करते हैं-सो ऐसा यह कथन आयुकर्म को लेकर ही बन सकता है पापकर्म को लेकर नहीं-अतःपापकर्म का भोगना एक साथ और एक साथ उसका विनाश होना यह आयुकर्म के उदय की अपेक्षावाला कैसे हो सकता है ? सो इसका उत्तर इस प्रकार से है- कर्मों का उदय या क्षय अन्वये होता है और भव आयुकर्म के

साथे જ કરે છે. 'તત્થ ણં જે તે વિક્ષમાઉયા વિક્ષમોવવન્નગા' તથા જે જીવો જુદા-જુદા-સમયમાં આયુષ્યના ઉદયવાળા હોય છે, અને જુદા જુદા સમયમાં પરલવમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે. 'તે ણં પાવં કમ્મં વિક્ષમાયં નિટ્ટવિંસુ' એવા તે જીવો પાપકર્મને ભોગવવાનો આરંભ જુદા-જુદા સમયમાં કરે છે, અને તેનો અંત પણ જુદા જુદા સમયમાં કરે છે,

આ કથનમાં એવી શંકા થઈ શકે છે.-કેજે એવું કહેવામાં આવ્યું કે ઉદયની અપેક્ષાએ જેઓનું આયુષ્ય સમાન છે, અને જેઓ પરલવમાં એકી સાથે ઉત્પન્ન થયા છે, તે જીવો પાપકર્મ ભોગવવાનો આરંભ એક સાથે કરે છે, અને એક સાથે તેનો અંત કરે છે.—તો આ પ્રમાણેનું કથન આયુ કર્મને લઈને જ બની શકે છે પાપકર્મના સંબંધમાં બની શકતું નથી. તેથી પાપકર્મ ભોગવવાનું એક સાથે અને તેનો વિનાશ એક સાથે હોવાનું આયુકર્મના ઉદયની અપેક્ષાથી કેવી રીતે થઈ શકે છે ? તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-કર્મોનો ઉદય અથવા ક્ષય ભવની અપેક્ષાથી હોય છે, અને ભવ

आधीन होता है, इसलिये आयुक्रम को आधीन करके ऐसा कथन विरुद्ध नहीं पडता है। इसीलिये ऐसा कहा गया है कि जो जीव समान आयुवाले हैं और समोपपन्नक हैं वे जीव पापकर्म को भोगना एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही उसका विनाश करते हैं। तथा—‘तत्थ णं जे समाउया विसमोववन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु’ ऐसा जो द्वितीय भंग के विषय में उत्तर दिया गया है, उसका तात्पर्य ऐसा है कि जिनजीवों की आयु समान है—समानकाल में आयुके उदयवाले हैं—पर जुदे-जुदे समय में परभव में उत्पन्न हुए हैं वे मरणकाल की विषमता से पापकर्म को वेदन यद्यपि आयुष्कर्म के विशेषोदय से संपाद्य होने के कारण एक साथ करने पर भी उसका निष्ठापन विनाश-भिन्न काल में करते हैं। तथा—‘तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववन्नगा, तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु’ ऐसा जो तृतीय भंग के विषय में उत्तर दिया गया है—सो उसका-तात्पर्य ऐसा है कि जो जीव विषमकाल में-भिन्न भिन्न समय में आयुके उदयवाले हैं पर परभव में एक ही साथ उत्पन्न हुए हैं ऐसे वे जीव पापकर्म को भोगना भिन्न-भिन्न समय में

आयुक्रमने आधीन होय छे. तेथी आयुक्रमने आधीन करवाथी आ कथन विरुद्ध थतुं नथी. तेथी ओबुं कडेवाभां आयुं छे के-के ओवे समान आयुष्य वाणा होय छे, अने साथे ज उत्पन्न थवावाणा होय छे, तेवा ओवे ओकी साथे पापकर्म भोगववाने प्रारंभ करे छे-अने ओकी साथे तेने विनाश करे छे. १, तथा ‘तत्थ णं जे समाउया विसमोववन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु’ आ प्रमाणेने के भील लंगना संधमां उत्तर आपवाभां आयो छे. तेतुं तात्पर्यं ओ छे के के ओवेतुं आयु समान छे. समानक्षणमां आयुना उदयवाणा छे,—परंतु जुदा जुदा समयमां परलवमां उत्पन्न थया छे, तेओ मरुषु क्षणना विषम पण्णाथी पापकर्मनुं वेदन-लेके आयुष्य कर्मना विशेषोदयथी संपादित थवाने कारणे ओकी साथे करवाथी तेने विनाश जुदा जुदा समयमां करे छे. तथा ‘तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववन्नगा, तेणं पावं कम्मं विसमायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु’ आ रीते के त्रील लंगना संधमां उत्तर आयो छे, तेतुं तात्पर्यं ओ छे के—के ओवे विषम क्षणमां ओटले के जुदा जुदा समयमां आयुक्रमना उदयवाणा छे, परंतु परलवमां ओटले के भील लवमां ओकी साथे ज उत्पन्न थया छे,

पयन् इति चतुर्थं ४ । 'से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव' तत् तेनार्थेन गौतम ! तदेव हे गौतम ! एतेन कारणेन कथयामि यत् केचन जीवाः खलु पापं कर्म समकमेव प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् इत्यादिना, 'सल्लेस्साणं भंते ! जीवा पावं कम्मं एवं चेव' सल्लेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः पापं कर्म किं समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् अथवा समकं प्रास्थापयन् विषमतया न्यस्थापयन् अथवा विषमतया प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् अथवा विषमतया प्रास्थापयन् विषमतया न्यस्थापयन् इति प्रश्नः, हे गौतम ! केचन सल्लेश्या जीवाः समकमेव

करते हैं और उसका अन्त साथ-साथ करते हैं । चतुर्थ भंग के विषय में दिये गये उत्तर का तात्पर्य स्पष्ट है । 'से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव' इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीव पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ करते हैं और साथ-साथ ही उसका अन्त करते हैं इत्यादि । 'सल्लेस्साणं भंते ! जीवा पावं कम्मं एवं चेव' हे भदन्त ! जो लेश्यावाले जीव हैं— वे क्या पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ करते हैं और साथ-साथ ही उसका विनाश करते हैं ? १ अथवा—पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ करते हैं और विनाश भिन्न-भिन्न समय में करते हैं ? २ अथवा—पापकर्म का भोगना भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और विनाश साथ-साथ करते हैं ? ३ अथवा पापकर्म का भोगना भी भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और विनाश भी उसका भिन्न-भिन्न समय में करते हैं ? ४ ऐसा यह प्रश्न गौतमस्वामीने प्रभुश्री से लेश्यावाले जीवों

जोवा ते लोवो जुहा जुहा समये पापकर्मने लोगवे छे. अने तेना अंत छोडी साथे न करे छे. योथा लंगना संधमां कडेल उत्तरनुं तात्पर्य स्पष्ट न छे. 'से तणट्ठेण गोयमा ! तं चेव' आ कारणथी छे गौतम ! में जेवुं कहुं छे के-केटलाक लोवो पापकर्मने लोगववानुं ओक साथे प्रारंभ करे छे, अने तेना अंत पणुं छोडी साथे न करे छे. इत्यादि

'सल्लेस्साणं भंते जीवा पावं कम्मं एवं चेव' छे लोगवन् लेश्यावागा न लोवो छे, तेजो ओक साथे पापकर्म लोगववानो प्रारंभ करे छे ? अने छोडी साथे न तेना अंत करे छे ? १ अथवा—पापकर्मने उपलोग छोडी साथे करे छे, अने जुहा जुहा समयमां तेना विनाश करे छे ? २ अथवा पापकर्मने उपलोग जुहा जुहा समये करे छे, अने तेना विनाश छोडी साथे करे छे ? ३ अथवा पापकर्म लोगववानुं जुहा जुहा समयमां करे छे, अने तेना विनाश पणुं जुहा जुहा समये करे छे ? आ प्रमाणेना प्रश्न गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने

પ્રાસ્થાપયન્ સમકસ્યેવ ન્યસ્થાપયન્, તથા એકે કેચન જીવાઃ સમકં પ્રાસ્થાપયન્ વિષમતયા ન્યસ્થાપયન્ તથા કેચન સલેશ્યાજીવાઃ વિષમતયા પ્રાસ્થાપયન્ સમકં ન્યસ્થાપયન્ તથા એકે કેચન સલેશ્ય જીવાઃ વિષમતયા પ્રાસ્થાપયન્ વિષમતયા ન્યસ્થાપયન્ ઇતિ ચતુર્મજ્જયોત્તરમ્ । તત્કેનાર્થેન ધદન્ત ! એવમુચ્યતે સમકં પ્રાસ્થાપયન્ સલેશ્યજીવાઃ સમકં ન્યસ્થાપયન્ ઇત્યાદિ પ્રશ્નઃ, હે ગૌતમ ! ચતુ-

કો લેકર પાપકર્મ કે ઓગને કા ઓર વિનાશ કે વિષય મેં પૂછા હૈ-સો પ્રભુ હસકા ઉત્તર દેતે છુએ અનેકે કહતે હૈ-‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! કિતનેક લેશ્યાવાલે જીવ એસે બી હોતે હૈ જો પાપકર્મ કા ઓગના એક હી સાથ પ્રારમ્ભ કરતે હૈ ઓર એક સાથ ઉસકા વિનાશ કરતે હૈ ? તથા-કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈ-જો પાપકર્મ કા ઓગના તો સાથ-સાથ પ્રારમ્ભ કરતે હૈ-પર વિનાશ ઉસકા ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં કરતે હૈ ? તથા-કિતનેક સલેશ્ય જીવ એસે બી હોતે હૈ જો ભિન્ન-ભિન્ન કાલ મેં પાપકર્મ કા ઓગના પ્રારમ્ભ કરતે હૈ ઓર એક હી કાલ મેં ઉસકા વિનાશ કરતે હૈ ? તથા-કિતનેક સલેશ્ય જીવ એસે બી હોતે હૈ-જો ભિન્ન-ભિન્નકાલ મેં પાપકર્મ કા ઓગના પ્રારમ્ભ કરતે હૈ ઓર ભિન્ન ભિન્ન કાલ મેં હી ઉસકા વિનાશ કરતે હૈ ? હા. હસ પર પુનઃ ગૌતમસ્વામી પ્રભુશ્રી સે એસા પૂછા હૈ-હે ધદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ કિતનેક સલેશ્ય જીવ પાપકર્મ કા ઓગના સાથ-સાથ પ્રારમ્ભ કરતે હૈ ઓર સાથ-સાથ-હી ઉસકા વિનાશ કરતે હૈ ઇત્યાદિ,

લેશ્યાવાળા જીવોને ઉદેશીને પાપકર્મ ભોગવવાના તથા તેના વિનાશના સંબંધમાં પૂછેલ છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે-‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! કેટલાક લેશ્યાવાળા જીવો એવા પણ હોય છે કે-જેઓ એકી સાથે જ પાપકર્મને ઉપભોગ કરે છે. અને તેનો વિનાશ પણ એકી સાથે જ કરે છે. ૧ કેટલાક જીવો એવા હોય છે કે જેઓ પાપકર્મ ભોગવવાનો તો એક સાથે પ્રારંભ કરે છે. પરંતુ તેનો વિનાશ જુદા જુદા સમયે કરે છે. ૨ તથા કેટલાક સલેશ્ય-લેશ્યાવાળા જીવો એવા પણ હોય છે કે-જેઓ જુદા જુદા સમયમાં પાપકર્મ ભોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે અને એકી સાથે એક સમયે તેનો વિનાશ કરે છે ૩, તથા કેટલાક લેશ્યાવાળા જીવો એવા હોય છે કે જેઓ જુદા જુદા સમયમાં પાપકર્મને ભોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે, પરંતુ જુદા જુદા કાળમાં તેનો વિનાશ કરે છે. ૪

કરીથી આ વિષયમાં ગૌતમસ્વામી પ્રભુશ્રીને પૂછે છે કે-હે ભગવન્ એવું આપ શા કારણથી કહો છો કે કેટલાક લેશ્યાવાળા જીવો પાપકર્મ ભોગવવાનું એક સાથે કરે છે, અને તેનો અંત પણ એક સાથે જ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

विधा जीवाः प्रज्ञप्ता इत्याद्युत्तरम् । एष एव 'एवं चैव' इति प्रकरणस्याभिप्राय इति । 'एवं' सव्वट्ठाणेसु वि जाव अणागारोवउत्ता' एवं' यथा सल्लेश्यापदे कथितं लेश्यापदमाश्रित्य यथा यथा विचारः कृत स्तेनैव रूपेण सर्वपदेवपि कृष्णलेश्यादि पदेभ्य यावदनाकारोपयोगपर्यन्त पदान्याश्रित्य विचारः करणीयः, कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः पापं कर्म समकं न्यस्थापयन् इत्यादिरूपेण आलापका ज्ञातव्याः । 'एए सव्वे वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा' एतानि लेश्यादिनी सर्वाण्यपि पदानि एतया वक्तव्यतया भणितव्यानि । वक्तव्यता प्रकारस्तु सामान्यजीवप्रकरणवदेव चतुर्भङ्गीतया ज्ञातव्य इति । सामान्यतो जीवमाश्रित्य

इस प्रश्न के उत्तर दैते हुए गौतमस्वामी से प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम ! जीव चार प्रकार के कहे गये हैं—ऐसा कथन जो जीवके प्रकरण में कहा जा चुका है—वैसा ही कथन यहां पर भी उत्तर के रूप में जानना चाहिये, यही अभिप्राय 'एवं चैव' इस सूत्रपाठ का है । 'एवं सव्वट्ठाणेसु वि जाव अणागारोवउत्ता' जैसा—जैसा कथन सल्लेश्य पद को आश्रित करके किया गया है वैसा—ही कथन यावत् अनाकारोपयुक्त पद तक के समस्त पदों को आश्रित करके कहना चाहिये, यहां आलापक 'कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन्' इत्यादि रूप में जानना चाहिये । 'एए सव्वे वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा' ये लेश्यादिक समस्त ही पद इस वक्तव्यता से ही जानना चाहिये । वक्तव्यता का प्रकार तो सामान्य जीव प्रकरण के जैसा ही चतुर्भङ्गी रूप से समझना चाहिये,

आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के-डे 'गौतम ! एवे-यार प्रकार ना कथा छे, ओ प्रमाणेनुं कथन एवना संभंधमां एव प्रकरणमां ने कडेवामां आवी गयुं छे, ओए प्रमाणेनुं कथन अडियां पुण उत्तरइये समज्जपुं. ओए अलिप्रायथी प्रभुश्रीओ 'एवं चैव' आ प्रमाणे सूत्रपाठ कडेव छे. 'सव्वट्ठाणेसु वि जाव अणागारोवउत्ता' ने प्रमाणे नुं कथन लेश्यावाणा ओ आश्रय करीने करेव छे, ओए प्रमाणेनुं कथन यावत् अनाकारोप योगवाणा सुधीना सधणा पदेनी आश्रय करीने कडेवा नेधओ. तेना संभंधमां आलापके आ प्रमाणे छे— 'कृष्णलेश्याः खलु भदन्त जीवाः पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन्' विगेरे इथी समज्जवा नेधओ 'एए सव्वे वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा' आ लेश्या विगेरे सधणा पदे आ कथनथी ए समज्जवा नेधओ अने कथनने प्रकार सामान्य एवनी नेमज्ज यार लंगात्तुं क समज्जवे नेधओ

विचारः कृतः, अथ जीवविशेषमाश्रित्य विचारयन्नाह—'नैरइया णं' इत्यादि, 'नैरइया णं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु पुच्छा' नैरयिकाः खलु भदन्त ! पापं कर्म किं समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् ? अथवा समकं प्रास्थापयन् विपमतया न्यस्थापयन् ? इत्यादि सम्पूर्णमपि प्रश्न प्रकरणं पृच्छया संग्राह्यम् । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु' अस्त्येकके नारकाः समकमेव

इस प्रकार सामान्य जीव को आश्रित करके विचार किया—अथ जीव विशेष को आश्रित करके विचार करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—'नैरइयाणं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु' हे भदन्त ! नैरयिक क्या पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक काल में—साथकरते हैं और एक ही काल में—साथ—में क्या उसका अन्त करते हैं ? अथवा—पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक काल में करते हैं और उसका अन्त भिन्न—भिन्न काल में करते हैं अथवा उसका भोगने का प्रारंभ भिन्न—भिन्न काल में करते हैं और अन्त एक काल में करते हैं अथवा उसका भोगने का प्रारंभ भी वे भिन्न भिन्न काल में करते हैं और उसका अन्त भी भिन्न भिन्न काल में करते हैं ? इस प्रकार से पृच्छा शब्द से गृहीत इस प्रश्न प्रकरण के कारण उत्तर रूप में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! हे गौतम ! 'अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु' कितनेक नारक जीव ऐसे होते हैं जो पापकर्म का भोगना एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक ही साथ उसका अन्त

आ रीते सामान्य लुवणे आश्रय करीने विचार करवाभां आवेल छे.

हुवे लुव विशेषणे आश्रय करीने विचार प्रगट करवा भाटे सूत्रकार कहे छे के—'नैरइयाणं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु' हे भगवन् नैरयिके पापकर्मणे प्रारंभ जेक कालभां—जेक साथे करे छे ? अने तेणे अंत पणु जेकी साथे ज करे छे ? अथवा—पापकर्मणे लोणवणे प्रारंभ जेक कालभां करे छे ? अने तेणे अंत जुदा जुदा कालभां करे छे ? २ अथवा तेने जुदा जुदा समये लोणवे छे ? अने अंत जेक कालभां करे छे ? ३ अथवा तेने लोण पणु जुदा जुदा समये करे छे, अने अंत पणु जुदा जुदा समये करे छे ? आ प्रमाणेने आर लंगात्मक प्रश्न 'पुच्छा' शब्दथी अहणु करीने पूछेल छे, आ प्रश्नना उत्तरभां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के 'गोयमा' ! हे गौतम ! 'अत्येगइया समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु' केवलक लुवो जेवा होय छे के—जेणे आ पापकर्मणे लोणवणेने प्रारंभ जेक साथे करे छे, अने

प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् 'एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणियव्वं जाव अणागारोवउत्ता' एवं यथैव जीवानां तथैव भणितव्यं यावदनारकारोपयुक्ताः, सामान्यतो जीवप्रकरणे येन प्रकारेण कथितं प्रश्नोत्तरादिकं तेनैव क्रमेण नारक-जीवप्रकरणेऽपि सर्वं प्रश्नोत्तरादिकं ज्ञातव्यम्, यावदनाकारोपयुक्तप्रकरणम् । सलेश्यनारकमधिकृत्य चतुर्भङ्गा वक्तव्याः कृष्णलेश्यनारकमधिकृत्य चतुर्भङ्गी वक्तव्या यावदनाकारोपयोगयुक्तनारकमधिकृत्य सामान्यजीवदण्डकवदेव सर्वत्र पदेषु चतुर्भङ्गी वक्तव्या । 'एवं जाव वेमाणियाणं' एवं यावद्वैमानिकानाम् एवं यथा नारकदण्डके लेश्यादिद्वाराणि अनाकारोपयोगान्तानि पदान्याश्रित्य चतु-

करते हैं । 'एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणियव्वं जाव अणागारोवउत्ता' इस प्रकार से जैसे कथन जीव के सम्बन्ध में किया गया है—वैसा ही समस्त कथन नैरयिकों के सम्बन्ध में भी यावत् अनाकारोपयुक्त नैरयिक पद तक समझना चाहिये । अर्थात्—सामान्य जीव के प्रकरण में जिस प्रकार से प्रश्नोत्तरादिक कहा गया है उसी प्रकार से नारक जीव प्रकरण में भी सब प्रश्नोत्तर आदिक जानना—चाहिये । और यह कथन यावत् अनाकारोपयुक्त प्रकरण तक समझना चाहिये । सलेश्य नारक को लेकर चतुर्भङ्गी कृष्णलेश्य नारक को लेकर चतुर्भङ्गी, यावत् अनाकारोपयुक्त नारक को लेकर चतुर्भङ्गी सामान्य जीव दण्डक के जैसी समस्त पदों में कहनी चाहिये, 'एवं जाव वेमाणियाणं' जिस प्रकार से नारक दण्डक में लेश्यादिद्वार से लेकर अनाकारोपयोग तक के पदों को आश्रित करके चतुर्भङ्गी प्रकट की गई है उसी प्रकार से

तेना अन्त यत्तु अेकी साथे न् उरे छे. १ 'एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणियव्वं' जाव अणागारोवउत्ता' आ प्रभात्ते न् रीते लुवना संभंधमां कथन उहेल छे, अेन प्रभात्ते सधणुं कथन नैरयिकेना संभंधमां यत्तु यावत् अनाकारोपयुक्त नैरयिक पद सुधी समलु देवुं. अर्थात् सामान्य लुवना प्रकरणमां न् प्रभात्ते प्रश्नोत्तर विगेरे कथा छे, अेन प्रभात्ते नारक लुव प्रकरणमां यत्तु प्रश्नोत्तरे समलु देवा. अने आ सधणुं कथन यावत् अनाकारोपयोगना प्रकरण सुधीनुं अडियां समलुवुं. देश्यावाणा नारकने लधने आर लंगे, कृष्णलेश्यावाणा नारकने लधने आर लंगे, यावत् अनाकारोपयोगवाणा नारक ने लधने आर लंगे. सामान्य दंडकमां कथा प्रभात्ते सधणा पदोमां समलुवा. 'एवं जाव वेमाणियाणं'ने प्रभात्ते नारक ना दंडकमां देश्या विगेरे द्वारथी लधने अनाकारोपयोग सुधीना पदोने. आश्रय करीने आर लंगे कथा छे, अेन प्रभात्ते अेक धदियवाणा पृथ्वी

भङ्गी दर्शिता तथैव एकेन्द्रियपृथिव्यादित आरभ्य वैमानिकान्त सर्वदण्डकेषु
 लेश्यादित आरभ्य अनाकारोपयोगान्त सर्वपदानाश्रित्य सर्वत्र चतुर्भङ्ग्यादि
 विचारः कर्तव्य इति । विशेषमाह—‘जस्स जं अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणि-
 यव्वं’ यस्य जीवस्य यत् लेश्यादिकमस्ति विद्यते तस्य तत् लेश्यादिकम् एतेनै-
 वोपरिदर्शितेनैव प्रकारेण चतुर्भङ्ग्यादिरूपेण भणितव्यं वक्तव्यमिति । कथमिवे-
 त्याह—‘जहा पावेणं दंडओ’ यथा पापेन दण्डकः चतुर्भङ्गीकः कृतः, एवम् ‘एएणं
 कमेणं अट्टसु वि कम्मपगडीसु अट्टदण्डगा भाणियव्वा जीवादीया वैमाणिय
 पज्जवसाणा’ एतेनोपरिदर्शितेन क्रमेण प्रकारेणाष्टास्रपि कर्मप्रकृतिषु अष्टौ
 दण्डका भणितव्या जीवादिका वैमानिकपर्यवसानाः ज्ञानावरणीयाचारभ्य अन्त-
 रायपर्यन्तेषु नारकवदेव जीवादारभ्य वैमानिकपर्यन्तेषु दण्डके निर्मातव्य इति ।

एकेन्द्रिय पृथिवी आदिकों से लेकर वैमानिकान्त समस्त दण्डकों में
 लेश्याआदि से लेकर अनाकारोपयोगान्त तक अपने अपने योग्य सर्व
 पदों को लेकर सर्वत्र चतुर्भङ्गी का विचार करना चाहिये । ‘जं जस्स
 अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणियव्वं’ परन्तु इतना ध्यान अवश्य
 रखना चाहिये कि जिस जीव के जो लेश्यादिक हैं वे उसी जीव के ऊपर
 में दिखाये गये प्रकार के अनुसार चतुर्भङ्गी आदि रूप से कहना चाहिये
 ‘जहा पावेणं दंडओ’ जैसा पाप के साथ चतुर्भङ्गी कृत दण्डक कहा
 गया है वैसा ही दण्डक ‘एएणं कमेणं अट्टसु वि कम्मपगडीसु’ इसी
 क्रम से आठों कर्म प्रकृतियों में भी ‘अट्टदण्डगा भाणियव्वा’ आठ दण्डक
 कहना चाहिये—‘जीवादीया वैमाणियपज्जवसाणा’ अर्थात् जीव से
 लेकर वैमानिक तक के पदों में ज्ञानावरणीय आदिकर्मों के सम्बन्ध
 में आठ दण्डक पूर्वोक्त चार भंगोंवाला बना-बना कर कहना चाहिये,

छाधिकेथी आरंलीने वैमानिके सुधी सधणा दंडकेमां लेश्या विगेरे ने लधने
 अनाकारोपयोग सुधीना पट्टेने लधने ञधे ञ चार लंगात्मक विचार समञ्जो.

‘जं जस्स अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणियव्वं’ परन्तु जो थाल
 अंशय्य राभयो लोभयो के—जे अपने जे लेश्या विगेरे क्हा छे. ते अपने ते
 लेश्या विगेरे उपर जातावेला प्रकार प्रमाणे चार लंग पण्णथी कडेवा
 लोभयो. ‘जहा पावेणं दंडओ’ जे प्रमाणे पापकर्मना संघंधमां चतुर्भंगा-
 त्मक दंडके क्हा छे, जे प्रमाणेना दंडके ‘एएणं कमेणं अट्टसु वि कम्मपगडीसु’
 आञ्ज क्मथी आठे कर्मप्रकृतियोंमां पणु ‘अट्टदण्डगा भाणियव्वा’ आठ दंडके
 क्हेवा लोभयो ‘जीवादीया वैमाणियपज्जवसाणा’ अथी आरंलीने वैमानिक
 सुधीना पट्टेमां ज्ञानावरणीय विगेरे कर्मेना संघंधमां पूर्वोक्त चार लंगो

‘एसो नवदण्डगसंगहिओ पढमो उद्देशो भाणियव्वो’ एषः नवदण्डकसंगृहीतः प्रथमोद्देशको भणितव्य इति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! अनेके जीवाः पापकर्मणापुपभोगं तत्समाप्तिं च सहैव—एककाले एव कुर्वन्तीत्यादिकं यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव सर्वथा सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

इति श्री विश्वविख्यात जगद्बल्लभादिपदभूषित बालब्रह्मचारि ‘जैनाचार्य’ पदभूषित पूज्यश्री ‘घासीलाल’ प्रतिविरचितायां श्री “भगवती” सूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका ख्यायां व्याख्यायां स्कान्दत्रिशतके शतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२९-१॥

‘एसो नव दण्डगसंगहिओ पढमो उद्देशो भाणियव्वो’ इस प्रकार से नव दण्डक सहित यह प्रथम उद्देशक कहने के योग्य हैं ।

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! अनेक जीव पापकर्मों का उपभोग और उनका विनाश एक काल में ही करते हैं इत्यादि विषय जो आप देवानुप्रियेने कहा है—वह सब सर्वथा सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की—नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके उनतीसवें शतकका ॥ प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ २९-१॥

वाणा आऽ उडको णतापीने ते उडेवा नेधये ‘एसो नव दण्डगसंगहिओ पढमो उद्देशो भाणियव्वो’ आ प्रभाणु नव दण्डको सहित आ पडेवो उद्देशो उडेवो नेधये.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् अनेक जेवो पापकर्मोने उय लोण अने तेने क्षय ओक कणमांज करे छे. धत्यादि विषयमां आप देवानु-प्रिये ने कथन कयुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियणुं कथन आप डेवथी सर्वथा सत्य ज छे, आ प्रभाणु उडीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपधी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराज मान थया ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत ‘भगवतीसूत्र’नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना ओगणुत्रीसभा शतकेने पडेवो उद्देशो समाप्त ॥२९-१॥

अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते—

अनेकेषां जीवानामेकस्मिन् काले कर्मभोगस्तत्परिसमाप्तिश्च भवतीति प्रथमो-
द्देशके प्रदर्शितं द्वितीये तु अनन्तरोपपन्नकानां नारकादीनां तद्दर्शयिष्यति तद्-
नेन सम्बन्धेन आयात्स्य द्वितीयोद्देशकस्येदं सूत्रम्—‘अणंतरोववन्नगाणं’ इत्यादि ।

मूलम्—अणंतरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया पावं कम्मं किं
समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगइया
समायं पट्टविंसु समायं निट्टविंसु१, अत्थेगइया समायं पट्टविंसु
विसमायं निट्टविंसु२ । से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ अत्थे-
गइया समायं पट्टविंसु तं चेव, गोयमा ! अणंतरोववन्नगा
नेरइया दुविहा पन्नत्ता तं जहा—अत्थेगइया समाउया समोव-
वन्नगा१, अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा२ । तत्थ णं
जे ते समाउया समोववन्नगा तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु
समायं निट्टविंसु१, तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा,
तेणं पावं कम्मं समायं पट्टविंसु विसमायं निट्टविंसु२ से तेण-
ट्टेणं तं चेव । सलेस्सा णं भंते ! अणंतरोववण्णगा नेरइया पावं
कम्मं एवं चेव । एवं जाव अणागारोवउत्ता । एवं असुरकुमाराणं
एवं जाव वेसाणियाणं । नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणि-
यव्वं । एवं नाणावरणिज्जेणं वि ढंडओ, एवं निरवसेसं जाव
अंतराइएणं सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥सू० १॥
एगूणातिसइमे सए वीओ उद्देशो समत्तो ॥२९—३॥

छाया—अनन्तरोपपन्नकाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः पापं कर्म किं समकं
प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् पृच्छा, गौतम ! अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन्
समकं न्यस्थापयन्१, अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् २ ।
तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् तदेव गौतम !
अनन्तरोपपन्नका नैरयिका द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—अस्त्येकके समायुष्काः
समोपपन्नकाः१, अस्त्येकके समायुष्का विषमोपपन्नकाः २ । तत्र खलु ये ते

સમાયુક્તાઃ સમોપપન્નકાઃ તે સ્વલુ પાપં કર્મં સમકં પ્રાસ્થાપયન્, સમકં ન્ય-
સ્થાપયન્ ૧, તત્ર સ્વલુ યે તે સમાયુક્તા વિષમોપપન્નકા સ્તે સ્વલુ પાપં કર્મં સમકં
પ્રાસ્થાપયન્ વિષમકં ન્યસ્થાપયન્ તત્તૉ તૈનાર્થેન તદેવ । સહેશ્યાઃ સ્વલુ ભદન્ત !
અનન્તરોપપન્નકા નૈરયિકાઃ પાપંૉ એવમેવ એવં યાવદનાકારોપયુક્તાઃ એવમસુર-
કુમારાઃ । એવં યાવદ્ વૈમાનિકાઃ । નવરં યત્તૉ યસ્યાસ્તિ તત્તૉ તસ્ય ભણિતવ્યમ્ ।
એવં જ્ઞાનાવરણીયેનાપિ દણ્ડકઃ । એવં યાવત્તૉ નિરવશેષં યાવદન્તરાયિકેન । તદેવં
ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ડતિ યાવદ્વિહરતિ ॥સૂૉ ૧॥

એકોનવિંશત્તમે શતકે દ્વિતીયોદ્દેશકઃ સમાપ્તઃ ॥૨૧-૨॥

ટીકા—‘અણંતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહ્યા’ અનન્તરોપપન્નકાઃ—પ્રથમસમયે ઉત્પ-
ત્તિમન્તઃ સ્વલુ નૈરયિકાઃ ‘પાવં કર્મ્મં કિં સમાયં પદ્ધવિસુ સમાય નિર્ટાવ્સુ’ પાપં કર્મ
સમકં પ્રાસ્થાપયન્—પ્રસ્થાપિતવન્તઃ સમકં—સમકાલમેવ ન્યસ્થાપયન્—નિષ્ઠાપિત-

દ્વિતીય ઉદ્દેશક કા પ્રારંભ

અનેક જીવોં કા એક કાલ મેં મી કર્મભોગ હોતા હૈ ઓર કર્મ સે
સુક્ત હોતે હૈં ડત્યાદિ વિષય પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં પ્રકટ કરને મેં આયા હૈ—
અબ ડસ ક્રમપ્રાપ્ત દ્વિતીય ઉદ્દેશે મેં અનન્તરોપપન્નક નૈરયિકાદિકોં
કે વિષય મેં મી યહી વાત પ્રકટ કી જાવેગી—ડસી સમ્બન્ધ કો લેકર
સૂત્રકાર ને યહ દ્વિતીય ઉદ્દેશક પ્રારંભ કિયા હૈ—

‘અણંતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહ્યા પાવં કર્મ્મં કિં સમાયં’—ડત્યાદિ
ટીકાર્થ—ગૌતમસ્વામીને પ્રભુશ્રી સે એસા પૂછા હૈ કિ ‘અણંતરો-
વવન્નગાણં મંતે ! નેરહ્યાૉ’ હે ભદન્ત ! જો અનન્તરોપપન્નક નૈરયિક
હૈં વે ક્યા એક સાથ હી પાપકર્મ કો ઓગના પ્રારંભ કરતે હૈં ? અર્થાત્

બીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ —

અનેક જીવોનો એક કાળમાં કર્મભોગ થાય છે, અને કર્મથી સુક્ત
થાય છે વિગેરે વિષય પહેલા ઉદ્દેશમાં પ્રગટ કરવામાં આવ્યો છે. હવે આ
ક્રમ પ્રાપ્ત બીજા ઉદ્દેશમાં અનંતરોપપન્નક નૈરયિકા વિગેરેના સંબંધમાં પણ
એજ હકીકત કહેવામાં આવે છે. એ સંબંધ ને લઈને સૂત્રકારે આ બીજા
ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરેલ છે — ‘અણંતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહ્યા પાવં કર્મ્મં કિં
સમાયં ડત્યાદિ

ટીકાર્થ—ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને એવું પૂછ્યું છે કે—‘અણંતરોવવન્નગાણં
મંતે નેરહ્યા’ હે ભગવન્ અનંતરોપપન્નક જે નૈરયિકા છે, તેઓ એક સમયમાં
એક સાથે જ પાપકર્મ ભોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે ? અર્થાત્ ભોગવે છે ? અને

વન્તઃ ૧, અથવા સમકં પ્રાસ્થાપયન્-પ્રસ્થાપિતવન્તઃ વિપમકં-વિપમતયા ન્યસ્થાપયન્
 નિષ્ઠાપિતવન્તઃ ૨, 'પુચ્છા' પૃચ્છા-પ્રકન, અનેન સંગ્રાહ્યપદો યથા-અથવા વિપમકં-
 વિપમતયા-પ્રાસ્થાપયન્ સમકં ન્યસ્થાપયન્ ૩, અથવા વિપમકં પ્રાસ્થાપયન્
 વિપમકં ન્યસ્થાપયન્ ઇતિ । મગધાનાહ-‘મોચમા’ ઇત્યાદિ, ‘મોચમા’ હે ગૌતમ !
 ‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ સમાયં નિટ્ટવિંસુ’ અસ્થ્યેકકે અનન્તરોપપન્નકા
 જીવાઃ સમકં પ્રાસ્થાપયન્ સમકં ન્યસ્થાપયન્ ૧, અથવા જીવા અનન્ત-
 રોપપન્નકાઃ યુગપદેવ પ્રથમતયા પાપં કર્મ વેદગિતુમારશ્વન્ત સ્તથા યુગપદેવ
 નિષ્ઠાં નીતવન્તઃ ઇતિ પ્રથમમદ્ગઃ ૧, તથા-‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ નિસમાયં
 નિટ્ટવિંસુ’ સમકં પ્રાસ્થાપયન્ તથા નિપમં યથા ભવન્તિ તથા વિપમતયા ન્યસ્થાપયન્

ભોગતે હૈં ? ઓર ઇક સાથ ઈ ડસકા વિનાશ કરતે હૈં ? (પ્રથમ સમય
 મેં ઉત્પત્તિવાલે જો નૈરયિક હૈં વે અનન્તરોપપન્નક નૈરયિક હૈ) અથવા
 વે પાપકર્મ કા ભોગના સાથ-સાથ પ્રારમ્ભ કરતે હૈં ઓર વિનાશ
 ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં કરતે હૈં ? અથવા-પાપકર્મકા ભોગને કા પ્રારંભ
 ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં કરતે હૈં ઓર વિનાશ ઇક સાથ કરતે હૈં ? ૩
 અથવા-પાપકર્મકા ભોગના ભી ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં કરતે હૈં ઓર
 વિનાશ ભી ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં કરતે હૈં ? ૪ હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી
 ડનસે કહતે હૈં-‘મોચમા !’ હે ગૌતમ ! ‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ
 સમાયં નિટ્ટવિંસુ’ કિતનેક અનન્તરોપપન્નક નૈરયિક ષેસે હૈં જો ઇક સાથ
 હી પાપકર્મ કા ભોગના પ્રારંભ કરતે હૈં ઓર ઇક સાથ ઈ ડસકા
 વિનાશ કરતે હૈં ? તથા-‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ નિસમાયં નિટ્ટવિંસુ’

એક સાથે જ તેનો ક્ષય કરે છે ? પ્રથમ સમયમાં ઉત્પત્તિવાળા જે નૈરયિકો છે,
 તે અનંતરોપપન્નક નૈરયિક કહેવાય છે. અથવા-તેનો પાપકર્મ લોગવવાનું એક
 સાથે કરે છે ? અથવા-પાપકર્મ લોગવવાનું એક સાથે કરે છે ? અને તેનો
 ક્ષય જુદા જુદા સમયમાં કરે છે ? ૨ અથવા-પાપકર્મ લોગવવાનું જુદા જુદા
 સમયે કરે છે ? અને તેનો વિનાશ એક સાથે કરે છે ? ૩ અથવા પાપકર્મ
 લોગવવાનું પણ જુદા જુદા સમયમાં કરે છે ? અને તેનો વિનાશ પણ જુદા જુદા
 સમયે કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-
 ‘મોચમા’ હે ગૌતમ ! ‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ સમાયં નિટ્ટવિંસુ’ કેટલાક
 અનંતરોપપન્નક નૈરયિકો એવા હોય છે કે-જેઓ એક સાથે જ પાપકર્મ લોગ
 વવાનો પ્રારંભ કરે છે, અને તેનો ક્ષય-વિનાશ પણ એક સાથે જ કરે છે. ૧
 તથા ‘અત્યેગહ્યા સમાયં પટ્ટવિંસુ નિસમાયં નિટ્ટવિંસુ’ કેટલાક અનંતરોપપન્નક

एकसमये एव जायमानत्वात् भङ्गद्वयमेव भवति । अनन्तरोपपन्नत्वेन तृतीयचतुर्थयोर्भङ्गयोरभाव इति । पुनः प्रश्नयन्नाह—‘से केणट्टेणं’ इत्यादि, ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइया समायं पट्टविंसु—तं चेव’ तत् केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते यत् अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् समकमेव न्यस्थापयन् तदेवेति तथा समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन् इत्यवान्तरप्रश्नः, भगवान्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अणंतरोवन्नगा नेरइया दुविहा पन्नत्ता’ अनन्तरोपपन्नका नैरयिका द्विविधाः—द्विषकारकाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः ‘तं जहा’ तद्यथा ‘समाउया समोवन्नगा’ समायुष स्तुल्यायुष्कवन्तः अनन्तरोपपन्नकानां

कितनेक अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ऐसे हैं—जो एक साथ तो पापकर्मका भोगना प्रारंभ करते हैं पर उसका विनाश एक साथ नहीं करते—भिन्न-भिन्न समय में करते हैं, यहाँ ये दो ही भंग होते हैं, क्योंकि अनन्तरोपपन्नक जीवों में तृतीय और चतुर्थ ये दो भंग नहीं होते हैं ।

‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ, अत्थेगइया समायं पट्टविंसु तं चेव’ हे भदन्त ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि कितनेक अनन्तरोपपन्नक नैरयिक जीव ऐसे होते हैं कि एक साथ पापकर्म को भोगना प्रारंभ करते हैं और एक साथ ही उसका विनाश करते हैं ? तथा कितनेक अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ऐसे होते हैं जो एक साथ तो पापकर्म का भोगना प्रारंभ करते हैं पर भिन्न भिन्न समय में उसका विनाश करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! अणंतरोवन्नगा नेरइया दुविहा पन्नत्ता’ हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक

नैरयिके जेवा डोय छे के—जेजो पापकर्म लोगववाने प्रारंभ तो जेक साथे ज करे छे, परंतु तेने क्षय विनाश जेक साथे करता नथी. अर्थात् जुदा जुदा समये तेने क्षय करे छे. अडियां आ जेज लगेो कइया छे. केभके—अनंतरोपपन्नक जेवोमां त्रीजे अने जेथे जे जे लगेो होता नथी.

से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ. अत्थेगइया समायं पट्टविंसु तं चेव, हे भगवन् आप जेपुं शा डारण्ठी कडे छे ? के डेटलाक अनंतरोपपन्नक नैरयिक जेवा जेवा डोय छे के जेजो जेक साथे पापकर्म लोगववाने प्रारंभ करे छे, अने जेकी साथे ज तेने क्षय करे छे ? तथा डेटलाक अनंतरोपपन्नक नैरयिक जेवा जेवा डोय छे के जेजो पापकर्म लोगववाने प्रारंभतो जेक साथे करे छे. परंतु तेने विनाश जुदा जुदा समये करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा ! अणंतरोवन्नगा नेरइया दुविहा पन्नत्ता’ हे गौतम ! अनंतरोपपन्नक नैरयिक

સમ વાચુરુદ્યો ભવતિ આયુષો વૈપમ્યે અનન્તરોપપન્નત્વગેવ ન સ્યાત્, આયુઃ પ્રથમસમયવર્તિત્વા સેપાં સમોપપન્નકાઃ મરણાનન્તરં પરમ્નોત્પત્તિમાશ્રિત્ય તે ચ મરણકાલે ભૂતપૂર્વગત્યા અનન્તરોપપન્નકાઃ કથ્યન્તે ઇતિ । ‘અસ્થેગઈયા સમાડયા વિસમોવવન્નગા’ અસ્થેકકે સમાયુષો વિપમોપપન્નકાઃ વિપમોપપન્નકત્વમ્ અત્રાપિ સંભવતિ, મરણવૈપમ્યાદિતિ । અનન્તરોપપન્નકેષુ તૃતીયચતુર્થમઙ્ગો ન સંભવતોડતોડત્ર તૃતીયચતુર્થો ન દર્શિતો અનન્તરોપપન્નત્વાદેવેતિ । ‘તત્થ ણં જે તે સમાડયા સમોવવન્નગા’ તત્ર તયો દ્વેયોરનન્તરોપપન્નકયોર્મધ્યે યે ઘનન્તરોપપન્નનારકાઃ સમાયુષઃ સમોપપન્નકાશ્ચ ‘તેણં પાવં કમ્મ સમાયં પટ્ટવિસુ

નૈરઘિક દો પ્રકાર કે હોતે હૈ—‘તં જહા’ જૈસે કિ—‘સમાડયા સમોવવન્નગા’ એક વે જો તુલ્ય આયુવાલે હો ઓર સમાનકાલ મેં પરમ્ભવ મેં ઉત્પન્ન હુવે હૈં ૧ તથા—દ્વિતીય વે—જો સમકાલ મેં આયુષ કે ઉદયવાલે હો ઓર પરમ્ભવ મેં ભિન્ન-ભિન્ન સમય મેં ઉદય હુવે હોં ૨ અનન્તરોપપન્નક જીવોં કી આયુકા ઉદય સમાન હી હોતા હૈ । આયુકી વિષમતા મેં ડનમેં અનન્તરોપપન્નતા હી નહીં ઘનતી હૈ । યે સબ સમોપપન્નક આયુકે પ્રથમ સમયવર્તી હોતે હૈં । તથા યે સમોપપન્નક હસલિયે કહે ગયે હૈં કિ યે મરણ કે અનન્તર હી પરમ્ભવ મેં ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । હસલિયે યે મરણકાલ મેં ભૂતપૂર્વ ગતિ સે અનન્તરોપપન્નક કહલાતે હૈં । તથા દ્વિતીય મંગ મેં મરણ કી વિષમતા સે ડનમેં વિપમોપપન્નકતા કહી ગઈ હૈ । યહાં આદિ કે યે દો મંગ હી સંભવિત હૈ—તૃતીય ચતુર્થ નહીં । હસલિયે વે યહાં પ્રકટ નહીં કિયે ગયે હૈં । ‘તત્થ ણં

એ પ્રકારના હોય છે, ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે. ‘સમાડયા સમોવવન્નગા’ એક એ કે જેઓ સમાન આયુવાળા હોય છે, અને સમાન કાળમાં પરમ્ભવમાં ઉત્પન્ન થયા હોય ૧ તથા—બીજા એ કે જેઓ સમાન કાળમાં આયુના ઉદયવાળા થયા હોય ૨ અનન્તરોપપન્નક જીવોના આયુષ્યને ઉદય સમાન જ હોય છે. આયુના વિષમપણામાં તેઓમાં અનન્તરોપપન્નકપણું જ બનતું નથી. તેઓ બધા સમોપપન્નક આયુના પ્રથમ સમયમાં રહેનારા હોય છે. તથા તેઓને સમોપપન્નક એ માટે કહ્યા છે કે—તેઓ મરણ પછી જ પરમ્ભવમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તેથી તેઓ મરણ કાળમાં ભૂતપૂર્વ ગતિથી અનન્તરોપપન્નક કહેવડાવે છે. તથ બીજા ભંગમાં મરણના વિષમપણાથી તેઓમાં વિષમોપપન્નકપણું કહેલ છે. આહિયાં પહેલો અને બીજો એ બે ભંગો જ સંભવિત કહ્યા છે. ત્રીજો અને ચોથો એ ભંગો તેઓને હોતા નથી. તેથી તે બે ભંગો અહીં કહ્યા નથી. ‘તત્થ ણં જે તે સમાડયા સમોવવન્નગા’

સમાયં નિદ્વિંસુ' તે અનન્તરોપપન્નકાઃ સ્વલુ નારકાઃ પાપમ્-અશુભં કર્મ સમકમેવ પ્રાસ્થાપયન્ સમકમેવ ન્યસ્થાપયન્ ચેતિ । 'તત્થ ણં જે તે સમાડયા વિસમોવવન્નગા' તત્ર દ્વયોર્મધ્યે સ્વલુ યે નારકાઃ સમાયુષો વિષમોપપન્નકાઃ 'તેણં પાવં કર્મ્મં સમાયં પદ્ધવિંસુ વિસમાયં નિદ્ધવિંસુ' તે સ્વલુ પાપં કર્મ સમકમેવ પ્રાસ્થાપયન્ વિષમકં-વિષમતયા ન્યસ્થાપયન્ ઇતિ 'સે તેણદ્દેણં તં ચેવ' તત્તેનાથેન હે ગૌતમ ! ઇવમુચ્ચતે અસ્ત્યેકકે સમકં પ્રાસ્થાપયન્ સમકં ન્યસ્થાપયન્, અસ્ત્યે-કકે સમકં પ્રાસ્થાપયન્ વિષમકં ન્યસ્થાપયન્, ઇતિ । 'સલેસ્સા ણં મંતે ! અણં-તરોવવન્નગા નેરહયા પાવં' સલેહયાઃ સ્વલુ મદન્ત ! અનન્તરોપપન્નકા નારકાઃ સમકં પ્રાસ્થાપયન્ સમકમેવ ન્યસ્થાપયન્, અથવા સમકમેવ પ્રાસ્થાપયન્ વિષમકં

જે તે સમાડયા સમોવવન્નગા' હનર્મે જો અનન્તરોપપન્નનારક સમાન આયુવાલે ઓર સમોપપન્નક હૈં ' તેણં પાવં કર્મ્મં સમાયં પદ્ધવિંસુ સમાયં નિદ્ધવિંસુ' વે પાપકર્મ કા ઓગના ઇક સાથ પ્રારમ્મ કરતે હૈં ઓર ઇક સાથ ડનકા વિનાશ કરતે હૈં । તથા- 'તત્થ ણં જે તે સમાડયા વિસમો-વવન્નગા-તેણં પાવં કર્મ્મં સમાયં પદ્ધવિંસુ વિસમાયં નિદ્ધવિંસુ' જો અનન્તરોપપન્નનારક સમાન આયુવાલે હોતે હુઇ ઓ મિન્ન-મિન્ન સમય મેં પરમ્ભ મેં ઉત્પત્તિવાલે હૈં-વે પાપકર્મ કો ઇક સાથ તો ઓગતે હૈં પર ડસકા વિનાશ વે મિન્ન-મિન્ન સમય મેં કરતે હૈં 'સે તેણદ્દેણં તં ચેવ' હલ્લિયે હે ગૌતમ ! મેંને ઇસા કહા હે કિતનેક અનન્ત-પરોપપન્નક નૈરથિક જીવ ઇસે હોતે હૈં જો પાપકર્મ કા ઓગના સાથ-સાથ પ્રારમ્મ કરતે હૈં ઓર સાથ-સાથ-ડમ્મકા વિનાશ કરતે હૈં ઇત્યાદિ, 'સલેરસાણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા નેરહયા પાવં' હે મદન્ત !

આમાં જે અનંતરોપપન્નક નારક સમાન આયુવાળા અને સમાન કાળમાં ઉત્પન્ન થવાવાળા હોય છે, 'પાવં કર્મ્મ સમાયં પદ્ધવિંસુ સમાયં નિદ્ધવિંસુ' તેઓ પાપકર્મ લોગવવાનું એક સાથે જ કરે છે, અને તેનો વિનાશ પણ એક સાથે જ કરે છે. તથા 'તત્થ ણં જે તે સમાડયા વિસમોવવન્નગા તેણં પાવં કર્મ્મં સમાયં પદ્ધવિંસુ વિસમાયં નિદ્ધવિંસુ' જે અનંતરોપપન્નક નારક સમાન આયુવાળા હોવા છતાં પણ બુદ્ધિ બુદ્ધિ સમયમાં પરસ્પરમાં ઉત્પન્ન થવાવાળા હોય છે, તેઓ એક સાથે પાપકર્મને લોગવે તો છે, પરંતુ તેનો વિનાશ બુદ્ધિ બુદ્ધિ સમયે કરે છે, 'સે તેણ દ્દેણં તં ચેવ' તેથી હે ગૌતમ ! મેં એવું કહ્યું છે કે-કેટલાક અનંતરોપપન્નક નૈરથિક હોવા એવા હોય છે કે-જેઓ એક સાથે પાપકર્મને લોગવે છે, અને એકી સાથે તેનો વિનાશ કરે છે, ઇત્યાદિ

'સલેરસાણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા ! નેરહયા પાવં' હે લગવન્ જેઓ દેશ્યાવાળા અનંતરોપપન્નક નૈરથિક છે તેઓ પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ

न्यस्थापयन् इत्यादि क्रमेण चतुर्भङ्गकः प्रश्नः, उत्तरमाह—‘एवं चेव त्ति’ एवमेव यथैवानन्तरोपपन्नकनारकाणां द्विभङ्गकमेवोत्तरम् तथैव सलेइयानन्तरोपपन्नकेऽपि द्विभङ्गकमेवोत्तरम्, अस्त्येकके समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् तथा—केचन सलेइयानन्तरोपपन्ननारकाः समकं प्रास्थापयन् विपमकं न्यस्थापयन् इति । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते सलेइया अनन्तरोपपन्नका नारकाः केचन समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् केचन तथाविधा नारकाः समकमेव प्रास्थापयन् विपमकं न्यस्थापयन् गौतम ! सलेइया अनन्तरोपपन्ननारका द्विप्रकारका भवन्ति

जो सलेइय अनन्तरोपपन्नक नैरयिक हैं वे पापकर्म को एक साथ भोगना प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही उसका विनाश करते हैं क्या ? अथवा—एक साथ पापकर्म का भोगना प्रारम्भ करते हैं और विनाश उसका भिन्न-भिन्न समय में करते हैं क्या ? इत्यादि रूप से यहां चार भंगोवाला प्रश्न गौतमस्वामी की तरफ से उपस्थित किया गया है । इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं चेव त्ति’ हे गौतम ! जिस प्रकारका उत्तर दो भंगो को लेकर अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों के प्रकरण में दिया गया है—ठीक वैसा ही उत्तर आदि के दो भंगों को लेकर यहां पर भी समझना चाहिये, इस प्रकार कितनेक सलेइय अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ऐसे होते हैं जो एक साथ पापकर्म का भोगना प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही उसका विनाश करते हैं—तथा कितनेक सलेइय अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ऐसे होते हैं जो पापकर्म का भोगना एक साथ तो प्रारम्भ करते हैं पर उसका विनाश भिन्न भिन्न काल में करते हैं ।

એક સાથે કરે છે ? અને તેનો વિનાશ પણ એક સાથે જ કરે છે । અથવા—એક સાથે પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે ? અને તેનો વિનાશ બુદ્ધ સમયે કરે છે ? વિગેરે પ્રકારથી અહિયાં ચાર ભંગોવાળો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામીએ પૂછેલ છે, આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—‘एवं चेव त्ति’ हे गौतम ! જે પ્રમાણેનો ઉત્તર બંને ભંગોના સંબંધમાં અનંતરોપપન્નક નૈરયિકોના પ્રકરણમાં આપેલ છે, એજ પ્રમાણેનો ઉત્તર પડેલો અને બીજો એ યે ભંગોને લઈને અહિયાં પણ સમજી લેવા, આ રીતે કેટલાક દેશ્યાવાળા અનંતરોપપન્નક નૈરયિકો એવા હોય છે કે—એક સાથે પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ કરે છે. અને એકી સાથે જ તેનો ક્ષય વિનાશ કરે છે. તથા—કેટલાક દેશ્યાવાળા અનંતરોપપન્નક નૈરયિકો એવા હોય છે, કે જેઓ પાપકર્મ લોગવવાનો પ્રારંભ એક સાથે કરે છે. પરંતુ તેનો ક્ષય વિનાશ બુદ્ધ બુદ્ધ કાળમાં કરે છે, કે ભગવાન આપ એવું શા કારણથી

केचन समायुषः समोपपन्नकाः केचन समायुषो विषमोपपन्नकाः तत्र ये ते समायुषः समोपपन्नका स्ते पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् तथा तत्र खलु ये ते समायुषो विषमोपपन्नका स्ते समकं प्रास्थापयन् विषमकं न्यस्थापयन्, एतेन कारणेन कथयामि यत् सलेश्यानन्तरोपपन्नकारकाः समकं

हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि जो सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिक हैं उनमें से कितनेक सलेश्य अनन्तरोपपन्न नैरयिक पापकर्म का भोगना एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ उसका विनाश करते हैं ? तथा—कितनेक अनन्तरोपपन्न नैरयिक पापकर्म का भोगना एक साथ तो प्रारम्भ करते हैं पर उसका विनाश वे भिन्न काल में करते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री उनसे कहते हैं—हे गौतम ! सलेश्य अनन्तरोपपन्न नैरयिक दो प्रकार के होते हैं—कितनेक समान आयुवाले समोपपन्नक और कितनेक समान आयुवाले विषमोपपन्नक, इनमें जो प्रथम प्रकार के सलेश्य अनन्तरोपपन्न नैरयिक हैं वे पापकर्म का भोगना एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ ही उसका विनाश करते हैं, तथा द्वितीय प्रकार के जो सलेश्य अनन्तरोपपन्न नैरयिक हैं वे पापकर्म का भोगना यद्यपि एक साथ प्रारंभ करते हैं पर उसका विनाश भिन्न भिन्न काल में करते हैं । इसीलिये हे गौतम ! मैंने पूर्वोक्त रूप से ऐसा कहा है कि कितनेक सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ऐसे होते हैं कि जो पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ

करो। छे। के-वे सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिके छे, तेओ पैकी डेटलाक लेश्यावाणा अनन्तरोपपन्नक नैरयिके पापकर्म लोगववाने प्रारंभ अक साथे करे छे, अने तेने विनाश पणु अक साथे न करे छे ? तथा डेटलाक अनन्तरोपपन्नक नैरयिके पापकर्म लोगववाने प्रारंभतो अक साथे करे छे, परंतु तेने विनाश तेओ लुहा लुहा समये करे छे, आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री तेओने कहे छे के-हे गौतम ! लेश्यावाणा अनन्तरोपपन्नक नैरयिके जे प्रकारना होय छे, डेटलाक समान आयुष्यवाणा समोपपन्नक अने डेटलाक समान आयुष्यवाणा विषमोपपन्नक, आमां जेओ पडेला प्रकारना लेश्यावाणा अनन्तरोपपन्नक नैरयिके होय छे, तेओ पापकर्म लोगववाने प्रारंभ अक साथे करे छे, अने अक साथे न तेने विनाश करे छे, तथा भील प्रकारना जेओ लेश्यावाणा अनन्तरोपपन्नक नैरयिके छे, तेओ पापकर्म लोगववाने प्रारंभ जेके अक साथे करे छे, परंतु तेने विनाश लुहा लुहा कालमां करे छे, ते कारणथी हे गौतम ! मैं पूर्वोक्त प्रकारथी जेपुं कहु छे के-डेटलाक लेश्यावाणा

पापं कर्म प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन् केचन सलेश्यानन्तरोपपन्ननारकाः
पापं कर्म समकं प्रास्थापयन् विपमकमेव न्यस्थापयन्, एतदेव 'एवं चेव' इति
प्रकरणेन कथितमिति । 'एवं जाव अणागारोवउत्ता' एवं लेश्यापदवदेव
यावदनाकारोपयुक्ताः, अत्र यावत्पदेन कृष्णलेश्यापदत् आरभ्य साकारोपयोग-
पदपर्यन्तानां ग्रहणं भवति तथा च कृष्णपाक्षिकानन्तरोपपन्ननारकादारभ्य
अनाकारोपयुक्त पर्यन्तनारकविषये पापकर्मणः प्रस्थापने निष्ठापने च समानैव
रीतिर्ज्ञेयेतिभावः । 'एवं असुरकुमाराणं' एवम्-नारकवदेव असुरकुमाराणामपि
सर्वपदेषु एवमेव प्रक्रिया ज्ञातव्या । 'एवं जाव वेमाणियाणं' एवम्-असुरकुमार-
वदेव यावद्वैमानिकानाम्-वैमानिकपर्यन्तानाम् 'नवरं जं जरुस अत्थि तं तस्स

करते हैं और उसका विनाश भिन्न भिन्न काल में करते हैं इत्यादि,
'एवं जाव अणागारोवउत्ता' लेश्यापद के जैसे ही यावत् अनाकारो-
पयुक्त पद तक भी यही कथन का क्रम जानना चाहिये, यहाँ यावत्पद
से नरक योग्य कृष्णलेश्या पद से आरम्भ कर साकारोपयोग पद तक
के नैरयिकों का ग्रहण हुआ है-तथा च-कृष्णलेश्य अनन्तरोपपन्नक
नारक से लेकर अनाकारोपयोगयुक्त तक के पद वाले नारकों के विषय
में पापकर्म के भोगने में और उसके विनाश करने में समान रीति
जाननी चाहिये, 'एवं असुरकुमाराणं' नारक की जैसी रीति ही असुर-
कुमारों के समस्त पदों में भी समझनी चाहिये, 'एवं जाव वेमाणि-
याणं' और इसी प्रकार की रीति यावत् वैमानिकों के विषय में पापकर्मों
के भोगने में और उसके विनाश करने में जाननी चाहिये, परन्तु
इसमें इतनी विशेषताका ध्यान रखना चाहिये कि जो लेश्यादिक जिसके
हो वही उसको कहना चाहिये । ढण्डकों की रचना उन-उन पदों

अनन्तरोपपन्नक नैरयिके एवा डाय छे के जेओ पापकर्म लोगववाने प्रारंभ
ओक साथे करे छे, अने तेनो विनाश जुहा जुहा समयमां करे छे. इत्यादि
'एवं जाव अणागारोवउत्ता' लेश्यापदना कथन प्रमाछे न यावत् अना-
कारोपयोगवाणा पद सुधी आ प्रमाछे न कथननो कम समयवो जेछओ.
अहीया यावत्पदथी कृष्णलेश्यापदथी आरलीने साकारोपयोग पद
सुधीना नैरयिके अकण्ड करया छे. तथा-कृष्णपाक्षिक अनन्तरोपपन्नक
नारकेथी लधने अनाकारोपयुक्त सुधीना पदवाणा नारकेना, विषयमां
पापकर्मना लोगववामां अने तेनो विनाश करवामां सरणी रीते समजवा.
'एवं असुरकुमाराणं' नारकेना कथन प्रमाछे न असुरकुमारोना सधणा पदोमां
पण्य समजवुं. 'एवं जाव वेमाणियाणं' आज प्रमाछेनी रीत यावत् वैमानिको
ना संधमां पापकर्म लोगववामां अने तेनो विनाश करवामां समजवी.

भाणियव्व' नवरं यत् लेश्यादिकं यस्यास्ति-विद्यते तदेव तस्य वक्तव्यम् तत्तत् पदमाश्रित्यैव तत्र दण्डको विधेय इति । 'एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' एवं पापकर्मप्रस्थापनवदेव ज्ञानावरणियकर्मणाऽपि दण्डको शणितव्य इति । 'एवं निरवसेसं जाव अंतराइए णं' एव ज्ञानावरणीयदण्डकवदेव यावत् अन्तरायिके-नाऽपि निरवशेषो दण्डको शणितव्य इति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति यावद्विहरति हे भदन्त ! कर्मप्रस्था-पनादिविषये यदेवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव-सर्वथा सत्यमेव इति कथयि-त्वा गौतमो भगवन्त वन्दते नमस्स्यति, बन्दित्वा नमस्स्यत्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, इति ॥सू० १॥

इति एकोनत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥२९-२॥

को लगाकर वहां करनी चाहिये । 'एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्म के प्रस्थापन के जैसा ही ज्ञानावरणीय कर्म के साथ भी दण्डक कहना चाहिये, 'एवं निरवसेसं जाव अंतराइयं' और यह सब ज्ञाना-वरणीय के जैसा कथन यावत् अन्तराय कर्म तक करना चाहिये, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भदन्त ! कर्मप्रस्थापनादि के विषय में जो आप देवानुप्रियेने कहा है-वह सब कथन सर्वथा सत्य ही है इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभु को वन्दना की और उन्हें नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥२९-२॥

परंतु तेषां अत्र विशेष पद्यानुं ध्यान राखवुं के अत्र लेश्या विगेरे अने कहा होय तेअ लेश्या विगेरे तेने कडेवा लेधअ. दंडकोनी स्थाना ते ते पढो लणावीने कही देवी. 'एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ' पापकर्मना कथन प्रमाणे अ ज्ञानावरणीय कर्मनी साथे पद्य दंडको कडेवा लेधअ. 'एवं निरवसेसं जाव अंतराइयं' अने ज्ञानावरणीय कर्म प्रमाणेतुं कथन यावत् अंतराकर्म सुधी समजवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भगवन् कर्मना प्रस्थापन विगेरे विषयमां आपदेवानुप्रिये अ कथन कथुं छे. ते सद्यु कथन सर्वथा सत्य अ छे आप देवानुप्रिये आ विषयना संभंधमां कडेवा कथन आप्त होवाथी सर्वथा सत्य अ छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीअ प्रभुश्रीने वंदना करी तेअने नमस्कार कर्या वंदना करीने ते पछी तेअो संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका. पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू. १॥

अने उद्देशो समाप्त ॥२९-२॥

तृतीयोद्देशकत आरभ्यैकादशान्ता उद्देशका आरभ्यन्ते

द्वितीयोद्देशकं निरूप्य क्रमप्राप्तान् तृतीयोद्देशकादारभ्य एकादशान्तान् उद्देशकान् निरूपयन्नाह—‘एवं’ इत्यादि ।

सूत्रम्—एवं एएणं गमएणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगपरिवाडी सञ्चेव इह वि भाणियव्वा जाव अचरिसीत्ति । अणंतर उद्देशगाणं चउण्हं वि एक्का वत्तव्वया, सैसाणं सत्तण्हं एक्का ॥सू० १॥

एगूणतीसइमे सए तइयाइ एगारस उद्देशगा समत्ता ॥२९॥३-११॥

एगूणतीसइसं कम्मपट्टवणसयं समत्तं ॥२९॥

छाया—एवमेतेन गमकेन यैव वन्धिशतके उद्देशकपरिपाटी सैवेहापि भणितव्या यावदचरम इति । अनन्तरोद्देशकानां चतुर्णामपि एका वक्तव्यता, शेषाणां सप्तानामेका ॥सू० १॥

॥ एकोनत्रिंशत्तमे शतके तृतीयत एकादशान्ता उद्देशकाः समाप्ताः ॥

॥ एकोनत्रिंशत्तमं कर्मप्रस्थापनशतकं समाप्तम् । २९॥

टीका—‘एवं’ एवम्—द्वितीयोद्देशकवदेव ‘एए णं गमए णं’ एतेन—उपरि प्रदर्शितेन गमकेन—गमकक्रमेण ‘जञ्चेव वंधिसए उद्देशगपरिवाडी’ यैव वन्धि

उद्देशक ३-११-

द्वितीय उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार क्रम प्राप्त तृतीय उद्देशक से प्रारम्भ कर ११ ग्यारहवें उद्देशक पर्यन्त के उद्देशकों का निरूपण करते हैं—‘एवं एएण गमएणं जञ्चेव वंधिसए’—इत्यादि

टीकार्थ—उपर्युक्त गमक क्रम से जो वन्धिशतक में—२६ वें शतक में—उद्देशकों—११ उद्देशकों की परिपाटी—प्रणाली—दिखलाई गई है

त्रीण उद्देशानां प्रारंभ—

त्रीण उद्देशानुं निरूपय्थु करीने हुवे सूत्रकार कुमथी आवेल आ त्रीण उद्देशाथी प्रारंभ करीने अगीयारमा उद्देशाओ सुधीना नव उद्देशाओनुं निरूपय्थु करे छे—‘एवं एएण गमएण जञ्चेव वंधिसए’ इत्यादि

टीकार्थ—उपरि उद्देशा गमकना प्रमाणे अंधी शतकमां अट्ठे के—२६ अण्वीसमां शतकमां अगियार उद्देशाओनी परिपाटी—प्रणाली अताववामां

शतके षड्विंशतितमे शतके उद्देशकानाम् एकादशसंख्यकानां परिपाटी-प्रणा-
लीपदर्जिता 'सन्धेव इह वि भाणियन्वा' सैव परिपाटी इहापि एकोनत्रिंशत्तमशत-
कस्य तृतीयाद्येकादशान्तोद्देशकेषु भणितव्या 'जाव अचरिमोत्ति' यावद् अचरम
इति, अचरमः खलु भदन्त ! नारकः किं समकं प्रास्थापयन् समकं न्यस्थापयन्
इत्यादि सर्वत्रपि प्रकरणं वक्तव्यमिति, यावत्पदेन परम्परोपपन्ना-अनन्तरावगाढ-
परम्परावगाढा-अनन्तराहारक - परम्पराहारका - अनन्तरपर्याप्त-परम्परपर्याप्त-
चरमोद्देशकपर्यन्तानामष्टानामुद्देशकानां संग्रहोऽत्र करणीयः 'अणंतरउद्देशगाणं
चउण्हं वि एका वत्तव्वा' अनन्तरोद्देशकानाम्-अनन्तरपदविशिष्टानां चतुर्णां-
द्वितीय-चतुर्थ-षष्ठा-ह्यमानाम्-उपपन्ना-अवगाढा-आहारक-पर्याप्तोद्देशकानाम-

वही परिपाटी इत्य २९ वे शतक के तृतीय उद्देशक से लेकर ११ वे उद्देश-
क पर्यन्त के उद्देशकों में कहनी चाहिये, अचरम (अन्तिम) उद्देशक
ग्यारहवां उद्देशक है सो यहां तक के उद्देशकों में पूर्वोक्त पद्धति के
अनुसार सब कथन करना चाहिये, जैसे कि-हे भदन्त ! जो नैरयिक
अचरम होते हैं वे क्या पापकर्म का भोगना साथ-साथ प्रारम्भ करते हैं
और एक साथ ही क्या उसका विनाश करते हैं ? इत्यादि रूप से समस्त
प्रकरण यहां कहना चाहिये, यावत्पद से यहां परम्परोपपन्न, अनन्त-
रावगाढ, परम्परावगाढ, अनन्तराहारक, परम्पराहारक अनन्तरपर्याप्त,
परम्परपर्याप्त और चरम इन आठ उद्देशकों का संग्रह किया गया है।
'अणंतरउद्देशगाणं चउण्हं वि एका वत्तव्वा' अनन्तर पद विशिष्ट
चारों उद्देशकों की द्वितीय उद्देशक, चतुर्थ उद्देशक, षष्ठ उद्देशक और
आठवां उद्देशक-इनकी-तथा-उपपन्न, अवगाढ, आहारक एवं पर्याप्त

आवी छे. ओण प्रणाली आ २८ ओगणुत्तीसमा शतकना त्रीण उद्देशाथी
लधने अगियारमा उद्देशाओ सुधीना सवणा उद्देशाओमां कडेवुं नेउओ
अचरम (छेव्वा) उद्देशो अगियारमा उद्देशो छे तो ते अगियारमा उद्देशा
सुधीना उद्देशाओमां पूर्वोक्त पद्धति प्रमाणे सधणु कथन कडेवुं नेउओ
नेम डे-डे भगवन् ने नैरयिके अचरम डोय छे, तेओ ओक साथे पाप
कर्म भोगववनेो प्रारंभ करे छे ? अने ओक साथे न तेने क्षय करे छे ?
विगेरे प्रकारथी समथ प्रकारणु अडियां कडेवुं नेउओ अडिया यावत्पद्धती
परंपरोपपन्नक, अनंतरावगाढ, परंपरावगाढ, अनतराहारक, परंपराहारक,
अनंतरपर्याप्त, परंपरपर्याप्त अने चरम आ आठ उद्देशाओनेो संग्रह थये छे.
'अणंतरउद्देशगाणं चउण्हं वि एका वत्तव्वा' अनंतर पद्धती युक्त थारे उद्देशाओनुं
ओटवे के णीण, थोथा, छट्ठा अने आठमा उद्देशाओनुं तथा उपपन्न, अप

पि एका समाना वक्तव्यता भणितव्या 'सेसाणं सत्तण्हं एका' शेषाणां सप्तानां समुच्चयोद्देशकपरस्परपदविशिष्टोपपन्नाद्युद्देशकचतुष्टक-चरमाचरमाख्यां प्रथम-तृतीय-पञ्चम-सप्तम-नवम-दशमैकादशानामुद्देशकानामेका वक्तव्यता भणितव्या आलापप्रकारश्च सर्वत्र बन्धिशतकीयोद्देशकवदेव स्वयमेवोद्घनीय इति ॥सू० १॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बलभादिपदभूषितवालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य' पूज्यश्री-घासीलालब्रतिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्ययां व्याख्यायां एकोनत्रिंशत्तमे शतके तृतीयादारभ्यैकादशान्ता उद्देशकाः समाप्ताः।

एकोनत्रिंशत्तमं कर्मस्थानशतकं समाप्तम् ॥२९॥

इन उद्देशकों की वक्तव्यता समान है, तथा-'सेसाणं सत्तण्हं एवको' शेष मातो-प्रथम, तृतीय, पंचम, सप्तम, नवम, दशम और एकादश इन उद्देशकों की वक्तव्यता एक सी है। यहाँ सब जगह आलापक प्रकार बन्धि शतकीय उद्देशकों के जैसे अपने आप उत्पन्न करना चाहिये, तृतीय उद्देशक से लेकर ११ वें तक के ९ उद्देशक का कथन समाप्त ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके उनतीसवें शतकका तीसरा उद्देशक से ग्यारहवां पर्यन्त के नव उद्देशक समाप्त ॥२९-३-१॥

२९ वां शतक समाप्त

गाढ आहारक अने पर्याप्त आ उद्देशान्तेन कथन सरभुं ७ छे, तथा 'सेसाण सत्तण्हं एका' गाधीना साते ओटले के-पडेले, त्रीने, पांचमे सातमे, नवमे, दशमे अने अगीयारमे आ साते उद्देशान्तेन कथन ओक सरभुं छे. अडियां भधा ७ उद्देशान्तेमां आलापकने प्रकार गधी शतकमां कडेला उद्देशान्ते प्रमाणे स्वयं समञ्ज लेवे आ प्रमाणे आ त्रीने उद्देशाथी लधने अगीयारमां उद्देशा सुधीनुं कथन कडेल छे ॥सू० ३-११॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना ओगणुत्रीसमा शतकेना त्रीने उद्देशा सुधीना अगीयार उद्देशा सुधीना नव उद्देशा समाप्त ॥२९-३-११॥

॥ओगणुत्रीसमु' शतक समाप्ता॥

१ समुच्चय उद्देशक परस्परपदयुक्त उपपन्न आदि ४ उद्देशक, चरम और अचरम उद्देशक इस प्रकार के ७ सात उद्देशक हैं।

अथ त्रिशत्तमं शतकमारभते

व्याख्यातमेकोनत्रिशत्तमं शतकम् क्रमप्राप्तं त्रिशत्तमं शतकमारभते, अस्य च पूर्वशतकेनापमभिसम्बन्धः—पूर्वशतके कर्मप्रस्थापनायाश्चित्य जीवा विचारिताः अत्र तु त्रिशत्तमे शतके कर्मवन्धादिकारणस्वरूपवस्तुवादमाश्रित्य जीवा एव विचार्यन्ते, तदनेन सम्बन्धेन आयातरयास्य त्रिशत्तमशतकस्य द्वादशोद्देशकात्मकस्येदं प्रथमोद्देशकादिसूत्रम्—‘कइ णं भंते’ इत्यादि ।

मूलम्—कइ णं भंते ! समोसरणा पन्नत्ता ? गोयमा ! चत्तारि समोसरणा पन्नत्ता, तं जहा किरियावाई१, अकिरियावाई२, अन्नाणिय वाई३, वेणइयवाई४ । जीवा णं भंते ! किं किरियावाई अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई ? गोयमा ! जीवा वि रेयावाई वि, अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि सलेस्सा णं भंते ! जीवा किं किरियावाई पुच्छा, गोयमा ! किरियावाई वि, अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि४ । एवं जाव सुक्कलेस्सा । अलेस्साणं भंते ! जीवा पुच्छा, गोयमा ! किरियावाई, नो अकिरियावाई नो अन्नाणियवाई नो वेणइयवाई । कण्हपक्खियाणं भंते ! जीवा किं किरियावाई पुच्छा, गोयमा ! नो किरियावाई अकिरियावाई अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि । सुक्खपक्खिया जहा सलेस्सा । सम्मादिट्ठी जहा अलेस्सा । सिच्छा-कण्हपक्खिया । सम्मासिच्छादिट्ठी णं पुच्छा, नो किरियावाई नो अकिरियावाई अन्नाणियवाई वि वाई वि । नाणी जाव केवलनाणी जहा अलेस्सा । अन्ना-जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया । आहारसन्नोवउत्ता परिगहसन्नोवउत्ता जहा सलेस्सा । नो सन्नोवउत्ता जहा

अलेस्सा । सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा । अवेदगा
जहा अलेस्सा । सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा ।
अकसाई जहा अलेस्सा । सजोगी जाव कायजोगी जहा सले-
स्सा । अजोगी जहा अलेस्सा । सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता
जहा सलेस्सा । नेरइयाणं भंते ! किं किरियावाई पुच्छा, गोथमा !
किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि । सलेस्सा णं भंते ! नेरइया
किं किरियावाई पुच्छा, एवं चेव । एवं जाव काउलेस्सा, ऋणह-
पक्खिया, किरिया विवज्जिया । एवं एएणं कमेणं जच्चेव जीवाणं
वत्तव्वया सच्चैव नेरइयाणं वत्तव्वया वि जाव अणागारोव-
उत्ता नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं, सेसं न सण्णइ । जहा
नेरइया, एवं जाव थणियकुमारा । पुढवीकाइयाणं भंते ! किं
किरियावाई पुच्छा, गोथमा ! नो किरियावाई अकिरियावाई
वि, अन्नाणियवाई वि, नो वेणइयवाई । एवं पुढविक्काइयाणं जं
अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एथाइं दो सज्झल्लाईं समोसरणाइं
जाव अणागारोवउत्ता वि । एवं जाव चउरिंदियाणं सव्वट्टाणैसु
एथाइं चेव सज्झल्लागाइं दो समोसरणाइं । समत्तनाणे हि वि
एयाणि चेव सज्झल्लागाइं दो समोसरणाइं । पंचिंदियतिरिक्ख-
जोगिया जहा जीवा नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं । मणुस्सा
जहा जीवा तहेव निरवसेसं । वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया
जहा असुरकुमारा ॥सू० १॥

छाया — कति खलु भदन्त ! समयसरणानि प्रज्ञप्तानि ? गौतम ! चत्वारि
समयसरणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—क्रियावादी अक्रियावादी अज्ञानवादी विनयवादी
च । जीवाः खलु भदन्त ! किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनः अज्ञानवादिनः वै-
यिक्रवादिनः ? गौतम ! जीवाः क्रियावादिनोऽपि अक्रियावादिनोऽपि आज्ञानिक-

वादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः किं क्रिया-
वादिनः पृच्छा, गौतम । क्रियावादिनोऽपि अक्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनो
ऽपि वैनयिकवादिनोऽपि । एवं यावत् शुक्ललेश्याः । अलेश्याः खलु भदन्त !
जीवाः पृच्छा, गौतम ! क्रियावादिनः, नो अक्रियावादिनः, नो वैनयिकवादिनः ।
कृष्णपाक्षिकाः खलु भदन्त ! जीवाः किं क्रियावादिनः, पृच्छा, गौतम ! नो
क्रियावादिनः, अक्रियावादिनः, अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि ।
शुक्लपाक्षिकाः यथा सलेश्याः, सम्यग्दृष्टयो यथा अलेश्याः मिथ्यादृष्टयो
यथा कृष्णपाक्षिकाः । सम्यग्मिथ्यादृष्टयः खलु पृच्छा, गौतम ! नो क्रिया-
वादिनः नो अक्रियावादिनः, अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि ।
ज्ञानिनो यावत् केवलज्ञानिनः, यथा अलेश्याः । अज्ञानिनो यावद्
विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः । आहारसंज्ञोपयुक्ता यावत्परिग्रहसंज्ञोपयुक्ता
यथा सलेश्याः । नो संज्ञोपयुक्ता यथा अलेश्याः । सवेदका यावत् नपुंसक-
वेदकाः यथा सलेश्याः । अवेदका यथा अलेश्याः । सकषायिनो यावत् लोभ-
कषायिनो यथा सलेश्याः । अरूपादिनो यथा अलेश्याः सयोगिनो यावत् काय-
योगिनो यथा सलेश्याः । अयोगिनो यथा अलेश्याः, साकारोपयुक्ता अनाकारो-
पयुक्ता यथा सलेश्याः । नैरयिकाः खलु भदन्त ! किं क्रियावादिनः ? पृच्छा,
गौतम ! क्रियावादिनो यावत् वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! नैर-
यिकाः किं क्रियावादिन एवमेव । एवं यावत् कापोल्लेश्याः । कृष्णपाक्षिकाः
क्रिया विवर्जिताः । एवमेतेन क्रमेण यैव जीवानां वक्तव्यता सैव नैरयिकाणां
वक्तव्यताऽपि यावद्नाकारोपयुक्ताः । नवरं यदस्ति तद्भणितव्यम्, शेषं न
भण्यते । यथा नैरयिकाः, एवं यावत् स्तनितकुमाराः । पृथिवीकायिकाः खलु
भदन्त ! किं क्रियावादिनः पृच्छा, गौतम । नो क्रियावादिनः, अक्रियावादिनो-
ऽपि, अज्ञानिकवादिनोऽपि, नो वैनयिकवादिनः । एवं पृथिवीकायिकानां यदस्ति
तत्र सर्वत्रापि एते द्वे मध्यमे समवसरणे यावत् अनाकारोपयुक्ता अपि । एवं यावत्
चतुरिन्द्रियाणाम्, सर्वस्थानेषु एते एव मध्यमे द्वे समवसरणे । सम्यग्ज्ञानिभिरपि
एते एव मध्यमे द्वे समवसरणे । पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भ्योनिका यथा जीवाः । नवरं यद-
स्ति तद् भणितव्यम् । मनुष्या यथा जीवा स्वयैव निरवशेषम् । वानव्यन्तरज्यो-
तिष्कवैमानिका यथा असुरकुमाराः ॥सू० १॥

टीका—‘कइ णं भंते ! समोसरणा पन्नत्ता’ कति खलु भदन्त ! समवसर-
णानि प्रज्ञप्तानि अनेकप्रकारकपरिणासवन्तो जीवाः समवसरन्ति कथंचित्

तुल्यतया तिष्ठन्ति येषु मतेषु दर्शनेषु वा तानि समवसरणानि मतानि दर्शनानि वा, तानि कति प्रकारकाणि भवन्तीति समवसरणविषयकः प्रश्नः, भगवानाह—

तीसरे शतक का प्रथम उद्देशक का प्रारंभ

२९ वां शतक व्याख्यात हो चुका, अब क्रमशः ३० वां शतक प्रारंभ होता है, इस शतक का पूर्व शतक के साथ ऐसा सम्बन्ध है कि उस पूर्व शतक में कर्मप्रस्थापनादि को लेकर जीवों का विचार किया है, परन्तु अब इस शतक में कर्मबन्ध आदि के कारणभूत वस्तुवाद को आश्रित करके उन जीवों का विचार होता है। इस सम्बन्ध को लेकर यह ३० तीसरा शतक कहा जा रहा है। इसमें १२ बार उद्देशक हैं। 'कइ णं भंते ! समोसरणा पणत्ता—इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! समवसरण—किनने प्रकार के कहे गये हैं। 'अनेक प्रकारकपरिणामवन्तो जीवा, समवसरन्ति कथंचित् तुल्यतया तिष्ठन्ति येषु मतेषु दर्शनेषु वा तानि समवसरणानि' इस व्युत्पत्ति के अनुसार समवसरण शब्द से यहाँ मत या दर्शन गृहीत हुए हैं। क्योंकि इन मतादिकों में अनेक प्रकार के परिणामोवाले मनुष्य प्राणी रहा करते

तीसरा शतक का प्रारंभ—

“उद्देशो पडेत्ते।”

योग्यतीसरा शतक कहेवाछ गथुं. डवे कम प्राप्त आ तीसराशतकने प्रारंभ थाय छे. पूर्व शतकनी साथे आ शतकने अे प्रमाणे स'अंध छे के—पूर्व शतकमां कर्मप्रस्थापना विगेरेने लधने लवेनो विचार करवामां आव्यो छे—परंतु डवे आ शतकमां कर्म अंधना कारणभूत वस्तुवादने आश्रय करीने ते लवेनो विचार करवामां आवशे, आ स'अंधथी आ उ० तीसराशतक कहेवाछ रह्युं छे. आ शतकमां गार उद्देशो आ छे.

‘कइ णं भंते ! समोसरणा पन्नत्ता’ इत्यादि

टीकार्थ—डे लगवन् समवसरण—मत डेटला प्रकारना कहा छे ? 'अनेक प्रकारकपरिणामवन्तो जीवाः समवसरन्ति कथंचित् तुल्यतया तिष्ठन्ति येषु मतेषु दर्शनेषु वा तानि समवसरणानि' आ व्युत्पत्ति अनुसार समवसरण शब्दथी अडियां मत—अथवा दर्शन अडिणु करयेल छे. कम के आ मत विगेरेमां अनेक प्रकारना परिणामवाला मनुष्य प्राणी रहा छे. आ रीते गौतमस्वामीअे

‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘चत्वारि समोसरणा पणत्ता’ चत्वारि-
चतुष्प्रकारकाणि समवसरणानि प्रज्ञप्तानि-कथितानि-इति । ‘तं जहा’ तद्यथा-
‘किरियावाई’ क्रियावादिनः-क्रियाचारित्रपरिपालनात्मककार्यरूपा, सा च कर्तार-
मन्तरेण अद्भुतपद्यमाना कर्तारमाक्षिपन्ती आत्मसमवायिनीति वदन्ति एवं शीलं
वा ये ते क्रियावादिनः । अथवा क्रियैव प्रधानं न ज्ञानम्, नहि गुडमाधुर्यज्ञान-
वान् अनुभवति रसनया गुडास्वादम् अतो न ज्ञानं प्रधानम् अपि तु क्रियैव सर्वत्र
प्रधाना एतादृश क्रियावादनशीलाः क्रियावादिनः । अथवा क्रिया-जीवादिपदा-
र्थोऽस्तीत्यादिकां वदितुं शीलं येषां ते क्रियावादिनः, ते चात्मास्तित्व प्रतिपत्ति-

है । इस प्रकार से गौतमने यह प्रश्न समवसरण के सम्बन्ध में किया है ।
इसके उत्तर में प्रभुश्री उनसे कहते हैं-‘गोयमा ! चत्वारि समोसरणा
पणत्ता’ हे गौतम ! समवसरण चार प्रकार के बहे गये हैं । ‘तं जहा’-
जैसे कि-‘किरियावाई’ क्रियावादि चरित्रको पालन करने रूप जो प्रकृति
है उसका नाम क्रिया है । यह क्रिया कर्ता के बिना होती नहीं है । इस-
लिये कर्ता रूप आत्माकी सिद्धि इससे होती है । इस प्रकार आत्मा के
अस्तित्व को माननेवाले जो हैं वे सब क्रियावादी हैं । अथवा-क्रिया
ही प्रधान है, ज्ञान नहीं । कहीं गुड की केवल मधुरता का ज्ञानवाला
व्यक्ति मात्र जिह्वा से गुडके आस्वाद को थोड़े ही जानता है, गुड के
आस्वाद को जानने के लिये उसके खाने रूप क्रिया की आवश्यकता
होती है । अतः क्रिया ही सर्वत्र प्रधान है ज्ञान नहीं । इस प्रकार से जो
क्रिया की प्रधानता माननेवाले हैं वे क्रियावादी हैं । अथवा-जीवादि
पदार्थों की अस्तित्व रूप क्रिया को माननेवाले जो हैं वे क्रियावादी हैं ।

समवसरणुना संभ्रमं प्रश्न करेद छे. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतम
स्वामीने कहे छे हे-‘गोयमा ! चत्वारि समोसरणा पणत्ता’ हे गौतम !
समवसरणु चार प्रकारना कहेद छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रमाणे छे,--‘किरिया
वाई’ क्रियावादी, चरित्रने पालन करवा रूप जे प्रकृति छे, तेतुं नाम क्रिया
छे. आ क्रिया कर्ता शिवाय थती नथी, कौण गौणना केवण मधुरपणुना ज्ञान
वाणे। पुत्रुण लक्ष्मी गौणनी भीठाशने स्वाद थोडा न लखे छे ? गौणना
स्वादो लखुवा भाटे तेने आवाश्य क्रियानी जरत होय छे न तेथी क्रिया
न सर्वत्र मुख्य छे, ज्ञान नही. आ रीते जेओ क्रियाने न मुख्य मान-
नारा छे. तेओ क्रियावादी कहेवाय छे. अथवा-लव विगेरेना अस्तित्व-
विधमानपणुनी क्रियाने जेओ माननारा छे, तेओ क्रियावादी कहेवाय छे.

લક્ષણા અશીત્યધિક્ષતસંખ્યકાઃ સૂત્રકૃતાઙ્ગાદિતો જ્ઞાતવ્યાઃ તત્તથ્ચ ક્રિયાવાદિ-
સમ્બન્ધાત્ સમવસરણમપિ ક્રિયાવાદિ, સમવસરણ સમવસરણવ્રતાસભેદોપચારાત્
ક્રિયાવાદિન ઇવ સમવસરણમિતિ, 'અક્રિયાવાદી' અક્રિયાવાદિનઃ ન ક્રિયા
અક્રિયા, તાં ક્રિયાયા અભાગં, ન હિ અનવસ્થિતમ્ય ક્ષરણનિદપિ પદાર્થસ્ય ક્રિયા
મવતિ, ક્રિયા સત્વે ચાનવસ્થિતેરેવ અભાવાદિત્યેચં વદન્તિ યે તે અક્રિયાવાદિનઃ,
તથા ચોક્તમ્— 'ક્ષણિકાઃ સર્વસંસ્કારાઃ, અસ્થિતાનાં ક્રુતઃ ક્રિયા ।

મૂતિ ચેપાં ક્રિયા સૈવ, કારકં સૈવ ચોચ્યતે ॥૧॥ ઇતિ ।

અન્યે તુ અક્રિયાં 'જીવાદિપદાર્થઃ સાર્થો નાસ્તી' ત્યાદિકાં વદિતું શીલં વિદ્યતે યેપાં
તેઽક્રિયાવાદિનઃ, તે ચાત્માદિપદાર્થનાસ્તિત્ય પ્રતિપત્તિલક્ષણા ચતુરશીતિ વિકલ્પાઃ

યે સ્વ ક્રિયાવાદી આત્મા કે અસ્તિત્વ કો માનનેવાલે હૈં । હનકી
સંખ્યા ૧૮૦ હૈં । હનકા સ્વરૂપ સૂત્રકૃતાઙ્ગ આદિ સે જાના જા સક્ષમા હૈં ।
ક્રિયાવાદી કે સ્વસ્વન્ધ સે સમવસરણ મી ક્રિયાવાદી કહા ગયા હૈં ।
કર્મો કી સમવસરણ ઓર સમવસરણવાલો મેં અભેદ કા યહાં ઉપચાર
ક્રિયા ગયા હૈં । અક્રિયાવાદી અનવસ્થિત કિસી મી પદાર્થ મેં ક્રિયા
નહીં હોતી હૈં । યદિ વહાં ક્રિયા કા સત્વ માના જાય તો પદાર્થ મેં
અવસ્થિતિ નહીં માની જા સકતી હૈં કર્મો કિ હસ સ્થિતિ મેં વહાં અન-
વસ્થિતિ કા અભાવ હો જાતા હૈં । હસ પ્રકાર સે જો કહતે હૈં વે અક્રિ-
યાવાદી હૈં—તથા કહા મી હૈં—'ક્ષણિકાઃ સર્વસંસ્કારા' ઇત્યાદિ ।

દૂસરે ઇસા કહતે હૈં—'જીવાદિક પદાર્થ નહીં હૈં' ઇત્યાદિ રૂપ ક્રિયા
કો જો માનતે હૈં વે અક્રિયાવાદી હૈં । યે અક્રિયાવાદી આત્માદિ પદાર્થ

આ સઘળા ક્રિયાવાદીઓ આત્માના અસ્તિત્વને માનનારા છે આ ક્રિયાવાદીઓની
સંખ્યા ૧૮૦ એકસોએસીની છે આ ક્રિયાવાદીઓનું લક્ષણ સૂત્રકૃતાઙ્ગ વિગરે
શાસ્ત્રોમાંથી સમજી લેવું. ક્રિયાવાદીના સઘળા સમવસરણ પણ ક્રિયાવાદી
કહેવામાં આવેલ છે. કેમ કે—સમવસરણ અને સમવસરણવાળાઓમાં અક્રિયા
અભેદપણાને ઉપચાર કરવામાં આવેલ છે. આ ક્રિયાવાદી—અનવસ્થિત કોઈ-
પણ પદાર્થમાં ક્રિયા થતી નથી જો તેમાં ક્રિયાનું અસ્તિત્વપણું માનવામાં
આવે તો પદાર્થમાં અવસ્થિતિ માની શકાય નહીં કેમ કે—અસ્થિતિમાં ત્યાં
અનવસ્થિતિનો અભાવ થઈ જાય છે. આ રીતે જોઓ કહે છે, તેઓ આ
ક્રિયાવાદી છે તથા કહ્યું પણ છે—'ક્ષણિકા સર્વસંસ્કારા' ઇત્યાદિ

બીજાએ એવું કહ્યું છે કે—'જો વિગરે કોઈ પદાર્થ નથી' ઇત્યાદિ
પ્રકારથી જોઓ ક્રિયાને માને છે. તેઓ અક્રિયાવાદી છે. આ અક્રિયાવાદીઓ

स्थानान्तराद् ज्ञातव्या इति । अथवा अक्रियावादि बौद्धा ये इत्थं कथयन्ति क्रियाया नान्यत्फलं केवलं चित्तशुद्धिरेव फलमिति ते बौद्धा अक्रियावादिन इति । 'अन्नाणियवाई' अज्ञानिकवादिनः कुत्सितं ज्ञानमज्ञानम्, तद् विद्यते येषां ते अज्ञानिका इत्थंभूतश्च ते वादिन इति अज्ञानिकवादिनः, ते इत्थं प्रतिपादयन्ति—अज्ञानमेव श्रेयस्करम्, ज्ञानाद्धि तीव्रं कर्म बध्यते तथा अज्ञानपूर्वकं कृतं कर्म न बन्धाय भवति, तथा कस्यापि पुरुषस्य क्वचिदपि वस्तुनि सम्पूर्णरूपेण ज्ञानं न भवति प्रमाणानां सम्पूर्णवस्तु विषयत्वात्, इत्येवमभ्युपगमवन्तोऽज्ञानिकवादिनः सप्तषष्ठसंख्यकाः स्थानान्तरादवसेया इति । 'वेणइयवाई' वैनयिकवादिनः विनयेन

के नास्तित्व को मानते हैं । इनके चोरासी भेद हैं । ये भेद ग्रन्थान्तर से जाने जा सकते हैं । अथवा—अक्रियावादी बौद्ध हैं—इनका ऐसा कहना है कि क्रिया का और कोई फल नहीं है केवल चित्त की शुद्धि ही क्रिया का फल है । 'अन्नाणियवाई' अज्ञानिकवादी—कुत्सित ज्ञान का नाम अज्ञान है, इस अज्ञानवाले जो है वे अज्ञानवादी हैं—इनका ऐसा कहना है कि अज्ञान ही श्रेयस्कर है क्योंकि ज्ञान से तीव्र कर्म का बन्ध होता है । तथा—अज्ञानपूर्वक क्रिया गया कर्म बन्ध के लिये नहीं होता है । तथा—किसी भी पुरुष को किसी भी वस्तु का सम्पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं होता है । प्रमाण ही सम्पूर्ण वस्तु को विषय करनेवाला होता है । इस प्रकार की मान्यतावाले जन अज्ञानवादी हैं । इनकी संख्या ६७ सडसठ की है । इनका स्वरूप नन्दीसूत्र की ज्ञानचन्द्रिका टीका से समझना चाहिये ।

आत्मा विगेरे पदार्थना अविद्यमानपणाने माने छे, तेओना ८४ योयांशी लेहो छे आ लेहो अन्य शास्त्रोमांथी समञ्ज देवा

अथवा—अक्रियावादी बौद्धो छे—तेओनु कडेवु ओवुं छे के—क्रियानुं भीणुं कांठ न इण नथी केवण चित्तनी शुद्धी न क्रियानुं इण छे 'अन्नाणियवाई' अज्ञानिकवादी, कुत्सित ज्ञाननुं नाम अज्ञान छे, आ अज्ञान वाणा ओओ होय छे तेओ अज्ञानवादी कडेवाय छे, तेओनुं कडेवुं ओवुं छे छे के—अज्ञान न कल्याणकारी छे, केमके ज्ञानथी तीव्र कर्मनो अंध थाय छे, तथा अज्ञान पूर्वक करवामां आवेल कर्म अंधन करनार होतु नथी तथा केठपणु पुइपने केठपणु वस्तुनुं संपूर्ण ज्ञान होतुं नथी, प्रमाण न समञ्ज वस्तुनो विषय करवानुं होय छे, आ प्रमाणेनी मान्यतावाणा मनुओ अज्ञान वादी कडेवाय छे, तेओनी संख्या ६७ सडसठनी छे, तेओनु स्वरूप नन्दी-सूत्रनी ज्ञानचन्द्रिका टीकाभांथी समञ्ज देवुं ।

चरन्ति, अथवा विनय एव प्रयोजनं येषां ते वैनयिकाः वैनयिकाश्च ते वादिन इति वैनयिकवादिनः, विनयएव वा वैनयिकं, तदेव ये स्वर्गादि हेतुतया वदन्ति इत्येवं शीलाश्च ते वैनयिकवादिनः, ते च स्वर्गादिसाधनं विनयमेव वदन्ति विनयस्यैव प्राधान्येन स्त्रीकुर्वाणाः अनवधृतलिङ्गाचारशास्त्रः, विनयप्रतिपत्तिलक्षणाः द्वात्रिंशत्प्रकारकाः स्थानान्तरात् सूत्रकृताङ्गादिभ्युजात् अनवगन्तव्या इति ।

अत्रार्थे भवति गाथा—‘अत्थि त्ति किरियवाई, वयंति नत्थि त्तिऽकिरियवाइओ ।
अज्ञाणि य अन्नानं, वेणइया विणयं वायंति’ ॥१॥

छाया--अस्तीति क्रियावादिनो वदन्ति, नास्तीत्य क्रियावादिनः ।

अज्ञानिका अज्ञानं, वैनयिका विनयत्वादमिति ॥१॥

एते सर्वेऽपि यद्यप्यन्यत्र मिथ्यादृष्टयः कथिताः तथाप्यत्र क्रियावादिनः सम्यग्दृष्टयो ग्राह्याः, क्रियावादिनो हि जीवादीनामस्तित्त्वं स्वीकारेण सम्यग्दृष्टय एव स्वीकर्त्तव्या इति । ‘जीवा णं भन्ते ! किं किरियावाई, अकिरियावाई, अन्नाणियवाई, वेणइयवाई’ जीवाः खलु भदन्त । किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानि-

‘वेणइयवाई’ वैनयिकवादी-हनका मन्तव्य एसा है कि विनय ही स्वर्ग मोक्ष आदिका हेतु है । ये विनय को ही प्रधान रूप से मानते हैं । इनका कोई निश्चित आचार, लिङ्ग या शास्त्र नहीं होता है । सिर्फ ये तो विनय को ही अत्यस्वर मानते हैं । ये ३२ बत्तीस प्रकार के होते हैं । इनका स्वरूप नन्दीसूत्रकी ज्ञानचन्द्रिका टीका से जाना जा सकता है । इस विषय की गाथा ऐसी है—‘अत्थि त्ति किरियवाह’ इत्यादि ये सब क्रियावादी अक्रियावादी आदि जग यद्यपि अन्यत्र मिथ्यादृष्टि कहे गये हैं परन्तु फिर भी वहाँ पर क्रियावादी जीवादि के अस्तित्व को सम्यक् प्रकार से माननेवाला होने के कारण सम्यग्दृष्टि रूप से गृहीत किया गया है । ‘जीवा णं भन्ते ! किं किरियावादी अकिरियावादी अन्नाणियवादी

‘वेणइयवाई’ वैनयिकवादी-तेजोनी मान्यता जेवी छे डे-विनय न स्वर्ग मोक्ष विगेरेनुं कारणु छे. तेजो विनयने न प्रधान माने छे. तेजोने डेअ निश्चित आचारदिंग अथवा शास्त्र छोटुं नथी डेवण तेजो विनयने न श्रेयस्कर-उट्याणुकारक माने छे, तेजो उर गत्तीस प्रकारना छाय छे. तेजोनुं स्वरूप-प्रकार नन्दीसूत्रकी ज्ञानचन्द्रिका टीकाभां आपवाभां आवेल छे. त्यांथी समणु देवु

‘अत्थि त्ति किरियावाई’ इत्यादि आ सधणा क्रियावादीथे, अक्रियावादीथे विगेरेने जे डे अन्य स्थणे सिथ्या दृष्टि डहेवामां अ व्या छे, परंतु अहियां क्रियावादी एव विगेरेना अस्तित्वने मानवावाणा छेवाथी सम्यग्दृष्टि पक्षुथी वळुंवेल छे. ‘जीवा णं भन्ते ! किरियावादी अकिरियावाई अन्नाणियवादी, वेणइयवादी

ક્રવાદિનો વૈનયિકવાદિનો ચેતિ સમુચ્ચતો જીવમધિકૃત્ય પ્રશ્નઃ, મગવાનાહ-
'ગોયમા' ઇત્યાદિ । 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'જીવા કિરિયાવાઈ વિ' જીવાઃ સામા-
ન્યતઃ ક્રિયાવાદિનોડપિ ભવન્તિ તથા- 'અકિરિયાવાઈ વિ' અક્રિયાવાદિનોડપિ
ભવન્તિ તથા- 'અજ્ઞાણિયવાઈ વિ' અજ્ઞાનિકવાદિનોડપિ ભવન્તિ તથા- 'વેણહ્ય-
વાઈ વિ' વૈનયિકવાદિનોડપિ ભવન્તીત્યુત્તરમ્ । સામાન્યતો જીવાશ્ચતુર્વિધા અપિ
ભવન્તિ તાદૃશ સ્વભાવરૂપાદિતિ । જીવવિશેષમધિકૃત્ય પ્રશ્નયન્નાહ- 'સલેસ્તા ણં'
ઇત્યાદિ । 'સલેસ્તા ણં મંતે ! જીવા કિં કિરિયાવાઈ પુચ્છા' સલેશ્યાઃ-કૃષ્ણનીલા-
દ્યન્યતમલેશ્યાવન્તો જીવા કિં ક્રિયાવાદિનો મરન્તિ અથવા અક્રિયાવાદિનો ભવન્તિ
અથવા અજ્ઞાનિકવાદિનો ભવન્તિ, અથવા વૈનયિકવાદિનો ભવન્તીતિ પ્રશ્નઃ પૃચ્છયા

વેણહ્યવાદી' હે ભદન્ત ! જીવ કયા ક્રિયાવાદી હૈં ? યા અક્રિયાવાદી
હૈ ? યા અજ્ઞાનવાદી હૈ ? યા વિનયવાદી હૈ ? એસા યહ પ્રશ્ન સામાન્ય
જીવ કો લેકર ક્રિયા યયા હૈ, હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં- 'ગોયમા !
જીવા કિરિયાવાઈ વિ' હે ગૌતમ ! જીવ સામાન્યતઃ ક્રિયાવાદી ઓ
હોતે હૈં । તથા 'અકિરિયાવાઈ વિ' અક્રિયાવાદી ઓ હોતે હૈં 'અજ્ઞાણિ-
યવાઈ વિ' અજ્ઞાનવાદી ઓ હોતે હૈં । 'વેણહ્યવાઈ વિ' ઓર વૈનયિક-
વાદી ઓ હોતે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહી હૈ કિ સામાન્ય સે જીવ ચારોં
પ્રકાર કે ઓ હોતે હૈં । કયોંકિ જીવ કા સ્વભાવ હી કુહ એસા હોતા
હૈ । જીવ વિશેષ કો લેકર પ્રશ્ન- 'સલેસ્તા ણં મંતે ! જીવા કિં કિરિયા-
વાઈ પુચ્છા' હે ભદન્ત ! કૃષ્ણ, નીલ આદિ લેશ્યાઓં મેં સે કોઈ
એક લેશ્યા વાલે જીવ કયા ક્રિયાવાદી હોતે હૈં ? યા અક્રિયાવાદી
હોતે હૈં ? યા અજ્ઞાનવાદી હોતે હૈં ? યા વૈનયિકવાદી હોતે હૈં ? ઉત્તર

હે ભગવન્ ભવ શુ' ક્રિયાવાદી છે ? અથવા અક્રિયાવાદી છે ? અથવા અજ્ઞાન-
વાદી છે ? અથવા વિનયવાદી છે ? આ પ્રમાણેના પ્રશ્ન સામાન્ય ભવનો આશ્રય
કરીને પૂછવામાં આવેલ છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે
છે કે- 'ગોયમા ! જીવા કિરિયાવાદિતિ' હે ગૌતમ ! ભવે સામાન્યતઃ ક્રિયાવાદી
પણુ હોય છે. 'અકિરિયાવાઈ વિ' અક્રિયાવાદી પણુ હોય છે. તથા- 'અજ્ઞાણિયવાઈ વિ'
અજ્ઞાન વાદી પણુ હોય છે. 'વેણહ્યવાઈવિ' અને વૈનયિકવાદી પણુ હોય છે.
કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે- સામાન્યથી ભવે ચારે પ્રકારના પણુ હોય છે.
કેમ કે ભવનો સ્વભાવ જ ક'ઈડ એવો હોય છે. હવે ભવ વિશેષના સંબં-
ધમાં ગૌતમસ્વામી પ્રભુશ્રીને પૂછે છે- 'સલેસ્તા ણં મંતે ! જીવા કિં કિરિયાવાઈ
પુચ્છા' હે ભગવન્ કૃષ્ણનીલ વિગેરે લેશ્યાઓ પૈકી કોઈ એક લેશ્યાવાળો
ભવ શુ' ક્રિયાવાદી હોય છે ? અથવા અક્રિયાવાદી હોય છે ? અથવા અજ્ઞાન

संगृह्यते, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘किरियावाई वि’ क्रियावादिनोऽपि भवन्ति सलेश्या जीवाः, तथा ‘अकिरियावाई वि’ अक्रियावादिनोऽपि भवन्ति, तथा—‘अन्नाणियवाई वि’ अज्ञानिकवादिनोऽपि भवन्ति तथा ‘वेणइयवाई वि’ वैनयिकवादिनोऽपि भवन्ति सलेश्यजीवानां तथा तथा स्वभावत्वादिति । ‘एव जाव सुकलेस्सा’ एवम्—सलेश्यजीववदेव यावत् कृष्णलेश्यजीवादारभ्य पद्मलेश्यजीवपर्यन्ताः सर्वेऽपि जीवाः चतुर्विधा अपि भवन्ति तथास्वभावत्वादितिभावः । ‘अलेस्सा णं भंते ! जीवा पुच्छा’ अलेश्याः—लेश्यारहिता जीवाः खलु भदन्त ! क्रियावादिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनो भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘किरियावाई’ क्रियावादिनोऽलेश्या जीवा भवन्ति अलेश्याः त्रयोनिः सिद्धाश्च भवन्ति तेचायोगिनः सिद्धाश्च क्रियावादिन एव

में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! किरियावाई वि, अकिरियावाई वि अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि’ हे गौतम सलेश्य जीव क्रियावादी भी होते हैं, अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं । ‘एवं जाव सुकलेस्सा’ सलेश्य जीव के जैसे ही यावत् कृष्णलेश्य जीव से लेकर शुक्ललेश्य जीव तक समस्त जीव चारों प्रकार के भी होते हैं । क्योंकि इन जीवों का स्वभाव ही ऐसा होता है । ‘अलेस्सा णं भंते ! जीवा पुच्छा’ हे भदन्त ! जो जीव लेश्यारहित है वे क्या क्रियावादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानवादी होते हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! किरियावाई’ हे गौतम ! अलेश्य जीव क्रियावादी

वादी होय छे ? अथवा वैनयिकवादी होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—‘गोयमा ! किरियावाई वि अकिरिया वाईवि अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि’ हे गौतम ! लेश्यावाणा ओवो क्रियावादी पणु होय छे, अक्रियावादी पणु होय छे, अज्ञानवादी पणु होय छे, अने वैनयिकवादी पणु होय छे. ‘एवं जाव सुकलेस्सा’ लेश्यवाणा ओवना कथन प्रमाणे न यावत् कृष्णलेश्यवाणा ओवथी लथने शुक्ल लेश्यावाणा ओव सुधीना सधणा ओवो आरे प्रकाशना पणु होय छे केम के आ ओवोने स्वभाव न ओवो होय छे ‘अलेस्सा णं भंते ! जीवा पुच्छा’ हे लगवन् न ओवो लेश्या विनाना होय छे, तेओ शुं क्रियावादी होय छे ? अथवा अक्रियावादी होय छे ? अथवा अज्ञानवादी होय छे ? अथवा वैनयिकवादी होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्रीने कहे छे के छे के—‘गोयमा ! किरियावाई’ हे गौतम ! लेश्या

क्रियावादकारणीभूत यथावस्थितद्रव्यपर्यायात्मकार्यपरिच्छेदयुक्तत्वात् । अत्र खलु यानि सम्प्रदृष्टियोग्यस्थानानि अलेश्यत्वसम्पद्दर्शनज्ञानिनो असंज्ञोपयुक्तत्वावेदकत्वादीनि तानि सर्वाण्यपि क्रियावादे एव निक्षिप्यन्ते । यानि खलु मिथ्यादृष्टि स्थानानि मिथ्यात्वाज्ञानादीनि तानि शेष समवसरणत्रये निक्षिप्यन्ते 'नो अकिरियावाइ' अलेश्या जीवा अक्रियावादिनो नो भवन्ति द्रव्यपर्यायात्मक वस्तु परिच्छेदयुक्तत्वादिति । 'नो अन्नाणियवाइ' नो न वा अज्ञानिकवादिनः पूर्वोक्तयुक्तेरेव । 'नो वेणइयवाइ' नो न वा वैनयिकवादिनो भवन्ति अलेश्या जीवा इति ! 'कण्हपक्खियाणं भंते ! जीवा किं किरियावाइ पुच्छा' कृष्णपाक्षिकाः खलु

होते हैं । अयोगी और सिद्ध ये अलेश्य जीव हैं । ये क्रियावादी ही होते हैं । क्यों की इन में क्रियावाद के कारणीभूत यथावस्थित द्रव्य पर्यायात्मक पदार्थ के परिच्छेद से युक्तता है । यहां सम्प्रदृष्टि के योग्य अलेश्यत्व, सम्पद्दर्शन, ज्ञानी, नो संज्ञोपयुक्त और अवेदकत्व आदि स्थान हैं—सो इन सबका क्रियावाद में ही समावेश हुआ है तथा—जो मिथ्यादृष्टि के योग्य मिथ्यात्व, अज्ञान आदि स्थान हैं सो इनका शेष समवसरण त्रय में समावेश हुआ है । 'नो अकिरियावाइ' अलेश्य जीव अक्रियावादी नहीं होते हैं । क्योंकि ये द्रव्य पर्यायात्मक वस्तु के ज्ञान से युक्त होते हैं । 'नो अन्नाणियवाइ' इसी प्रकार वे अज्ञानिकवादी भी नहीं होते हैं । 'नो वेणइयवाइ' वैनयिकवादी भी नहीं होते हैं । क्यों की ये द्रव्यपर्यायात्मक वस्तुके ज्ञानवाले होते हैं । 'कण्हपक्खियाणं भंते ! जीवा किरियावाइ पुच्छा' हे भदन्त ! जो कृष्णपाक्षिक

विनाना एवे क्रियावादी डाय छे. अयोगी अने सिद्ध ये अलेश्य एव छे. ये क्रियावादी न डाय छे केम के तेओ क्रियावादाना कारणभूत यथा वस्थितद्रव्य पर्यायात्मिक पदार्थना परिच्छेदथी युक्त डाय छे अडियां सम्प्रदृष्टिने योग्य अलेश्यपणुमां, सम्पद्दर्शनज्ञानी नोसंज्ञोपयुक्त अने अवेदकपणु विगेरे स्थानो छे ते सधणानो क्रियावादाना समावेश थाय छे. तथा नो मिथ्यादृष्टिने योग्य मिथ्यात्व, अज्ञान. विगेरे स्थानो छे, तेने समावेश समवसरणत्रयमां थयेव छे

'नो अकिरियावाइ' अलेश्याविनाना एवे अक्रियावादी डोता नथी. केम के तेओ द्रव्य पर्यायात्मक वस्तुना ज्ञानथी युक्त डाय छे 'नो अन्नाणियवाइ' येन प्रमाणे अज्ञानवादी पणु डोता नथी. 'नो वेणइयवाइ' वैनयिकवादी पणु ये प्रमाणेना डोता नथी. केम के तेओ द्रव्य पर्यायात्मक वस्तुमां ज्ञानवाणा डाय छे

'कण्हपक्खियाणं भंते ! जीवा किं किरियावाइ पुच्छा' हे भगवन् नो कृष्णपाक्षिक एवे छे, तेओ शुं क्रियावादी डाय छे ? अक्रियावादी डाय छे ?

भवन्ति ! जीवा किं क्रियावादिनो भवन्ति अक्रियावादिनो वा भवन्ति अज्ञानिकवा-
दिनो वा भवन्ति वैनयिकवादिनो वा भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते ! भगवा-
नाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो किरियावाई’ नो क्रियावादिनः
कृष्णपाक्षिका भवन्ति यथावस्थितद्रव्यपर्यायात्मकवस्तुपरिच्छेदरहितत्वात् ।
‘अकिरियावाई वि अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि’ अक्रियावादिनोऽपि
भवन्ति अज्ञानिकवादिनोऽपि भवन्ति तथा वैनयिकवादिनोऽपि भवन्तीति ।
‘सुकपक्खिया जहा सलेस्सा’ शुक्लपाक्षिकाः जीवाः सलेश्यजीववदेव क्रिया-
वादिनोऽपि अक्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि
भवन्तीति भावः ‘सम्मादिट्ठी जहा अलेस्सा’ सम्यग्दृष्टयो तथा—अलेश्याः तथैव
क्रियावादिनो भवन्ति यथावस्थितद्रव्यपर्यायात्मकवस्तुपरिच्छेदयुक्तत्वात् न तु
अक्रियावादिनो भवन्ति न वा अज्ञानिकवादिनो, न वा वैनयिकवादिनो भवन्तीति

जीव हैं वे क्या क्रियावादी होते हैं? या अक्रियावादी होते हैं? या
अज्ञानवादी होते हैं? या वैनयिकवादी होते हैं? इसके उत्तर में प्रभुश्री
कहते हैं—‘गोयमा ! गो किरियावाई’ हे गौतम कृष्णपाक्षिक जीव
क्रियावादी नहीं होते हैं, क्यों कि ये यथावस्थित द्रव्यपर्यायात्मक
वस्तु के वेदन से रहित होते हैं । इसलिये ये ‘अकिरियावाई वि अन्ना-
णियवाई वि वेणइयवाई वि’ ये अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी
भी हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं, ‘सुकपक्खिया जहा सलेस्सा’
शुक्लपाक्षिक जीव सलेश्य जीव के जैसे क्रियावादि भी होते हैं,
अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी
भी होते हैं ! ‘सम्मादिट्ठी जहा अलेस्सा’ सम्यग्दृष्टि जीव अलेश्य जीव
के जैसे यथावस्थित द्रव्यपर्यायात्मक वस्तु के परिच्छेदक होने से
क्रियावादी ही होते हैं । अक्रियावादी, अज्ञानवादी और वैनयिकवादी

अथवा अज्ञानवादी होय छे ? अथवा वैनयिकवादी होय छे ? आ प्रश्ना
उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—‘गोयमा ! गो किरियावाई’ हे गौतम ! कृष्ण-
पाक्षिक एव क्रियावादी होता नथी, केम के तेज्यो यथावस्थित द्रव्य पर्याया-
त्मक वस्तुनी वेदनाथी रहित होय छे. ‘अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई
वि वेणइयवाई वि’ अक्रियावादी पणु होय छे, अज्ञानवादी पणु होय छे, अने
वैनयिकवादी पणु होय छे. ‘सुकपक्खिया जहा सलेस्सा’ सलेश्य एवना कथन
प्रमाणेण शुक्लपाक्षिकने पणु समणु देवा ‘सम्मादिट्ठी जहा अलेस्सा’ सम्यग्दृष्टि
वाणा एवा लेश्याविनाना एवना कथन प्रमाणे यथावस्थित द्रव्य पर्यायात्मक
वस्तुना परिच्छेदक होवाथी क्रियावादीणु होय छे, तेज्यो अक्रियावादी, अज्ञान
वादी अने वैनयिकवादी होता नथी।

भावः। मिच्छादिद्वी जहा कणहपक्खिया' मिथ्यादृष्टयः कृष्णपाक्षिकवत् नो क्रियावादिनः किन्तु अक्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि भवन्तीति ! 'सम्मामिच्छादिद्वी णं पुच्छा' सम्यग्मिथ्यादृष्टयो मिश्रदृष्टयः किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनो वा भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो किरियावाई' नो क्रियावादिनः नो वा अक्रियावादिनो भवन्ति किन्तु 'अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि' अज्ञानिकवादिनोऽपि भवन्ति वैनयिकवादिनोऽपि भवन्ति, मिश्रदृष्टयोहि जीवाः साधारणपरिणामत्वान्नो आस्तिका न वा नास्तिकाः किन्तु अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि भवन्तीति भावः। 'नाणी जाव केवलनाणी जहा अल्लेस्से' ज्ञानिनो यावत्केवलज्ञानिनो हि अलेश्यजीववदेव क्रियावा-

नहीं होते हैं। 'मिच्छादिद्वी जहा कणहपक्खिया' मिथ्यादृष्टि जीव कृष्णपाक्षिक के जैसे क्रियावादी नहीं होते हैं। किन्तु वे अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं। 'सम्मामिच्छादिद्वीणं पुच्छा' हे भदन्त ! जो जीव मिश्रदृष्टि होते हैं वे क्या क्रियावादी हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानवादी होते हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं— 'गोयमा ! नो किरियावाई, नो अक्रियावाई' हे गौतम ! वे न क्रियावादी होते हैं और न अक्रियावादी होते हैं। किन्तु वे 'अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि' अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं। क्यों की मिश्रदृष्टि जीव साधारण परिणामवाले होते हैं इसलिये वे न आस्तिक होते हैं और न नास्तिक होते हैं। 'नाणी जाव केवलनाणी जहा अल्लेस्से' ज्ञानी जीव यावत् केवल ज्ञानी जीव अलेश्य जीव के

'मिच्छादिद्वी जहा कणहपक्खिया' मिथ्यादृष्टि एवो कृष्णपाक्षिकना कथन प्रभाषे क्रियावादी होता नथी परंतु तेजो अक्रियावादी पणु डेय छे. अज्ञानवादी पणु डेय छे अने वैनयिकवादी पणु डेय छे 'सम्मामिच्छादिद्वीणं पुच्छा' डे लगवन् ने एवो मिश्रदृष्टीवाणा डेय छे, तेजो शुं क्रियावादी डेय छे ? अथवा अक्रियावादी डेय छे ? अथवा अज्ञानवादी डेय छे ? अथवा वैनयिकवादी डेय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे 'गोयमा नो किरियावाई नो अक्रियावाई' डे गौतम ! तेजो क्रियावादी होता नथी. तथा अक्रियावादी पणु डेय छे 'अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई' तेजो अज्ञानवादी पणु डेय छे, अने वैनयिकवादी पणु डेय छे, डेम डे मिश्रदृष्टीवाणा एवो साधारण परिणामवाणा डेय छे. 'नाणी जाव केवलनाणी जहा अल्लेस्से'

દિનો ભવન્તિ દ્રવ્યપર્યાયાત્મકયથાવસ્થિતવસ્તુપરિચ્છેદયુક્તત્વાત્ નો અક્રિયાવાદિનો નો વા અજ્ઞાનિક્વાદિનો નો વા વૈનયિક્વાદિનો ભવન્તીતિ ભાવઃ । અત્ર યાવત્પદેન આભિનિબોધિક્જ્ઞાનિ શ્રુતજ્ઞાન્યવધિજ્ઞાનિ મનઃપર્યવજ્ઞાનિનાં સંગ્રહઃ, एतेषां यथावस्थितवस्तुपरिच्छेदवत्वात् । ‘अन्नाणी जाव विभंगनाणि जहा कण्हपक्खिया’ अज्ञानिनो यावद् विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः, अत्र यावत्पदेन मत्स्यज्ञानि-श्रुताज्ञानिनोः संग्रहः, तन्मत्स्याज्ञानि-मत्स्यज्ञानि-श्रुताज्ञानि-विभङ्गज्ञानिनः सर्वेऽपि नो क्रियावादिनो भवन्ति किन्तु अक्रियावादिनोऽज्ञानि-

जैसे क्रियावादी होते हैं, वे अक्रियावादी नहीं होते हैं, अज्ञानवादी भी नहीं होते हैं और न वैनयिकवादी होते हैं । क्योंकि ये सब द्रव्य पर्यायात्मक वस्तु के यथार्थ बोधवाले होते हैं । यहां यावत्पद से आभिनिबोधिकज्ञानी श्रुतज्ञानी अवधिज्ञानी और मनः पर्यवज्ञानी इन सबका ग्रहण हुआ है । ये सब क्रियावादी होते हैं—क्यों की इन में यथार्थ वस्तु की परिच्छेदकता का सद्भाव रहता है । ‘अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया’ ‘अज्ञानी यावत् विभङ्गज्ञानी कृष्णपाक्षिक के जैसे क्रियावादी नहीं होते हैं किन्तु ये अक्रियावादी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं । यहां यावत्पद से मत्स्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी इन दो का संग्रह हुआ है । अतः ये सब क्रियावादी नहीं होते हैं किन्तु शेष तीन समवसरणवाले होते हैं ‘आहारसन्नोवउत्ता जाव परिग्गहसन्नोवउत्ता जहा सलेस्सा’ जिस

ज्ञानी एव यावत् કેવળ જ્ઞાનવાળા એવો અદેશ્ય એવની જેમ ક્રિયાવાદી જ હોય છે. તેઓ અક્રિયાવાદી હોતા નથી અજ્ઞાનવાદી હોતા નથી તથા વૈનયિકવાદી પણ હોતા નથી કેમ કે આ બધા દ્રવ્યપર્યાયાત્મક વસ્તુના યથાર્થ બોધવાળા હોય છે અહિયાં યાવત્પદથી આભિનિબોધિક્જ્ઞાની શ્રુતજ્ઞાની અવધિજ્ઞાની અને, મનઃપર્યવજ્ઞાની આ સઘળા ગ્રહણ કરાયા છે આ બધા ક્રિયાવાદી હોય છે. કેમ કે તેઓમાં યથાર્થ વસ્તુના પરિચ્છેદક પણાનો સદ્ભાવ રહે છે. ‘અન્નાણી જાવ વિભંગનાણી જહા કણ્હપક્કિયા’ અજ્ઞાની યાવત્ વિભંગજ્ઞાની કૃષ્ણપાક્ષિકના કથન પ્રમાણે ક્રિયાવાદી હોતા નથી પરંતુ તેઓ અક્રિયાવાદી જ હોય છે, અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે. અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. અહિયાં યાવત્પદથી મતિઅજ્ઞાની અને શ્રુતઅજ્ઞાની ગ્રહણ કરયા છે. આ બધા ક્રિયાવાદી હોતા નથી, પરંતુ અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી, અને વૈનયિકવાદી હોય છે, ‘આહારસન્નોવઉત્તા જાવ પરિગ્ગહસન્નોવઉત્તા જહા

વાદિનો વૈનયિકવાદિશ્ચ ભવન્તીતિ । ‘આહારસન્નોવત્તા જાત્ત પરિગ્રહસન્નોવત્તા જહા સલેસ્મા’ આહારસંજ્ઞોપયુક્તા યાવત્પરિગ્રહસંજ્ઞોપયુક્તા યથા સલેશ્યાઃ, અત્ર યાવત્પદેન ભયસંજ્ઞા ઐથુનસંજ્ઞયોઃ સંગ્રહઃ, તથા ચૈતે સર્વેઽપિ ક્રિયાવાદિનો- ઽપિ ભવન્તિ અક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ અજ્ઞાનિકવાદિનોઽપિ વૈનયિકવાદિનો- ઽપિ ભવન્તિ તથાવિધવિલક્ષણપરિણામવત્ત્વાદિતિભાવઃ । ‘નોસન્નોવત્તા જહા અલેસ્મા’ નો સંજ્ઞોપયુક્તા જીવા અલેશ્યજીવવદેવ કેવલં ક્રિયાવાદિન એવ ન તુ અક્રિયાવાદિનો ન વા અજ્ઞાનિકવાદિનો ન વા વૈનયિકવાદિનો ભવન્તીતિ । ‘સવેદ- ગા જાત્ત નપુંસગવેદ્યા જહા સલેસ્મા’ સવેદકા જીવા યાવત્ નપુંસકવેદકા યથા

પ્રકાર સલેશ્ય જીવ ક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં, અક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં, અજ્ઞાનવાદી બી હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી બી હોતે હૈં, ડકી પ્રકાર સે આહારસંજ્ઞોપયુક્ત જીવ યાવત્ પરિગ્રહ સંજ્ઞોપયુક્ત જીવ બી ચારો પ્રકાર કે સમવસરણવાલે હોતે હૈં । કયોં કિ હનકા પરિણામ વિલક્ષણ પ્રકાર કા હોતા હૈં । યહાં યાવત્ શબ્દ સૈ ભયસંજ્ઞોપયુક્ત ઓર ઐથુન- સંજ્ઞોપયુક્ત હનકા ગ્રહણ હુઆ હૈં । તથા ચ-યે સવ ક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં અક્રિયાવાદિ બિ હોતે હૈં અજ્ઞાનવાદી બી હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી બી હોતે હૈં । ‘નો સન્નોવત્તા જહા અલેસ્મા’ નો સંજ્ઞોપયુક્ત જીવ અલે શ્ય જીવ કે જૈસે કેવલ ક્રિયાવાદી હી હોતે હૈં । અક્રિયાવાદી અજ્ઞાન- વાદી ઓર વૈનયિકવાદી નહીં હોતે હૈં । ‘સવેદગા જાત્ત નપુંસગવેદગા જહા સલેસ્મા’ સવેદક જીવ યાવત્ નપુંસકવેદક જીવ સલેશ્ય

‘સલેસ્મા’ સલેશ્ય એવો જે પ્રમાણે ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અક્રિયાવાદી પણ હોય છે. અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે. અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે એજ પ્રમાણે આહાર સંજ્ઞોપયોગવાળા એવો પણ યાવત્ પરિગ્રહ સંજ્ઞોપ યુક્ત એવ પણ ચારે પ્રકાર ના સમવસરણવાળા હોય છે. કેમ કે તેઓનું પરિણામ વિલક્ષણ પ્રકારનું હોય છે. અહિયાં યાવત્ શબ્દથી ભયસંજ્ઞોપ યોગવાળા અને ઐથુનસંજ્ઞોપયોગવાળા એ બે ગ્રહણ કરાયા છે. તથા આ બધા ક્રિયાવાદી પણ હોય છે અક્રિયાવાદી પણ હોય છે. અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. ‘નો સન્નોવત્તા જહા અલેસ્મા’ નો સંજ્ઞોપયુક્ત એવો સલેશ્યાવાળા એવના કથન પ્રમાણે કેવળ ક્રિયાવાદી જ હોય છે. અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી, અને વૈનયિકવાદી હોતા નથી ‘સવેદગા જાત્ત નપુંસગવેદગા જહા સલેસ્મા’ સવેદક એવ યાવત્ નપુંસકવેદક એવ

સલેશ્યાઃ યાવત્પદેન સ્ત્રીવેદકપુરુષવેદકયોઃ સંગ્રહો ભવતિ, તતશ્ચૈતે સર્વેઽપિ ક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ અક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ અજ્ઞાનિકવાદિનો વૈનયિકવાદિનશ્ચાપિ ભવન્તિ વિલક્ષણ તાદૃશ પરિણામત્ત્વાદિતિ । ‘અવેદગા જહા અલેસ્સા’ અવેદકાઃ સામાન્યતો વેદરહિતા જીવાઃ અલેશ્યજીવવદેવ કેવલં ક્રિયાવાદિનો ભવન્તિ ન તુ અક્રિયાવાદિનો નો અજ્ઞાનિકવાદિનો નો વૈનયિકવાદિનો વા ભવન્તીતિ ભાવઃ, ‘સકસાઈ જાવ લોમકસાઈ જહા સલેસ્સા’ સકષાયિનો યાવત્ લોમકષાયિનઃ સલેશ્યજીવવદેવ ક્રિયાવાદિનોઽપિ અક્રિયાવાદિનોઽપિ અજ્ઞાનિકવાદિનોઽપિ વૈનયિકવાદિનોઽપિ ભવન્તીતિ, યાવત્પદેન ક્રોધકષાયિ માનકષાયિ માયાવપાયિનાં ગ્રહણં ભવતીતિ । ‘અકસાઈ જહા અલેસ્સા’ અકષાયિનોઽલેશ્યવદેવ કેવલં ક્રિયા-

જીવોં કે જૈસે ક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં અક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં, અજ્ઞાનવાદી બી હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી બી હોતે હૈં । ક્યોં કિ હનકે એસે હી વિલક્ષણ પરિણામ હોતે હૈં । યહાં યાવત્પદ સે સ્ત્રી વેદક ઓર પુરુષ વેદક હનકા ગ્રહણ હુઆ હૈં । ‘અવેદગા જહા અલેસ્સા’ સામાન્ય સે વેદ રહિત જીવ અલેશ્ય જીવોં કે જૈસે કેવલ ક્રિયાવાદી હી હોતે હૈં । અક્રિયાવાદી નહીં હોતે હૈં, અજ્ઞાનવાદી નહીં હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી બી નહીં હોતે હૈં । ‘સકસાઈ જાવ લોમકસાઈ જહા સલેસ્સા’ સકષાયી જીવ યાવત્ લોમકષાયી જીવ સલેશ્ય જીવોં કે જૈસે ક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં ઓર અક્રિયાવાદી બી હોતે હૈં, અજ્ઞાનવાદી બી હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી બી હોતે હૈં । યહાં યાવત્ પદ સે ક્રોધ કષાયી માન કષાયી ઓર માયા કષાયી જીવોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈં । ‘અકસાઈ

લેશ્યાવાળા ઊવોના કથન પ્રમાણે ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે, અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. કેમ કે તેઓના પરિણામો એવા વિલક્ષણ જ હોય છે. અહિયાં યાવત્પદથી સ્ત્રીવેદવાળા અને પુરુષવેદવાળાઓ ગ્રહણ કરાયા છે. ‘અવેદગા જહા અલેસ્સા’ સામાન્યથી વેદરહિત ઊવો અલેશ્ય ઊવોના કથન પ્રમાણે કેવળ ક્રિયાવાદી જ હોય છે, અક્રિયાવાદી હોતા નથી તથા અજ્ઞાનવાદી પણ હોતા નથી અને વૈનયિકવાદી પણ હોતા નથી. ‘સકસાઈ જાવ લોમકસાઈ જહા સલેસ્સા’ કષાયવાળા ઊવો યાવત્ લોમકષાયવાળા ઊવો લેશ્યાવાળા ઊવોના કથન પ્રમાણે ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે. અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. અહિયાં યાવત્ પદથી માનકષાય વાળા, માયાકષાયવાળા, અને લોમકષાયવાળા, ઊવો ગ્રહણ કરાયા છે,

વાદિનો ન તુ અક્રિયાઽજ્ઞાનિકૃત્તૈનયિક્વાદિનો ભવન્તિ । ‘સજોગી જાવ કાયજોગી જહા સલેસ્સા’ સયોગિનો યાવત્ પદેન મનોયોગિનો વચનયોગિનઃ કાયયોગિનઃ સલેશ્યજીવવદેવ ક્રિયાવાદિનોઽપિ અક્રિયાવાદિનોઽપિ અજ્ઞાનિક્વાદિનોઽપિ વૈનયિક્વાદિનોઽપિ ભવન્તીતિ । ‘અજોગી જહા અલેસ્સા’ અયોગિનો યથા અલેશ્યાઃ, અલેશ્યજીવવદેવ અયોગિનઃ કેવલં ક્રિયાવાદિનો ભવન્તિ ત તુ અક્રિયાવાદિનોઽ જ્ઞાનિક્વાદિનો વૈનયિક્વાદિદશ્ચ । ‘સાગારોવૃત્તા અનાગારોવૃત્તા જહા સલેસ્સા’ સલેશ્યજીવવદેવ સાકારોપયોગયુક્તા અનાગારોપયોગયુક્તાઃ ક્રિયાવાદિનો યાવદ્ વૈનયિક્વાદિનો ભવન્તીતિ । ‘નેરહ્યાણં મંતે ! કિં કિરિયાવાઈ પુચ્છા’ નૈરયિકાઃ

જહા અલેસ્સા’ અકષાયી જીવ અલેશ્ય જીવોં કે જૈસે કેવલ ક્રિયાવાદી હી હોતે હૈ અક્રિયાવાદી નહીં હોતે હૈ, અજ્ઞાનવાદી મી નહીં હોતે ઓર ન વૈનયિક્વાદી ણી હોતે હૈ । ‘સજોગી જાવ કાયજોગી જહા સલેસ્સા’ સલેશ્ય જીવોં કે જૈસે સયોગી યાવત્ કાયયોગી જીવ ક્રિયાવાદી મી હોતે હૈ, અક્રિયાવાદી મી હોતે હૈ અજ્ઞાનવાદી મી હોતે હૈ ઓર વૈનયિક્વાદી મી હોતે હૈ યહાં યાવત્પદ સે મનોયોગી, વચનયોગી કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘અજોગી જહા અલેસ્સા’ અયોગી જીવ અલેશ્ય જીવોં કે જૈસે કેવલ ક્રિયાવાદી હી હોતે હૈ । અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી ઓર વૈનયિક્વાદી નહીં હોતે હૈ । ‘સાગારોવૃત્તા અનાગારોવૃત્તા જહા સલેસ્સા’ સલેશ્ય જીવોં કે જૈસે સાકારોપયુક્ત ઓર અનાકારોપયુક્ત જીવ ક્રિયાવાદી મી હોતે હૈ, અક્રિયાવાદી મી હોતે હૈ, અજ્ઞાનવાદી મી હોતે હૈ ઓર વૈનયિક્વાદી મી હોતે હૈ । ‘નેરહ્યાણં મંતે ! કિં કિરિયાવાઈ પુચ્છા—’હે મદન્ત ! નૈરયિક જીવ કયા ક્રિયા-

‘અકસાઈ જહા અલેસ્સા’ અકષાયી જીવ લેશ્યા વિનાના જીવોના કથન પ્રમાણે કેવળ ક્રિયાવાદી જ હોય છે. અક્રિયાવાદી હોતા નથી. અજ્ઞાનવાદી પણ હોતા નથી. તથા વૈનયિક્વાદી પણ હોતા નથી. ‘સજોગી જાવ કાયજોગી જહા સલેસ્સા’ લેશ્યાવાળા જીવોના કથન પ્રમાણે સયોગી યાવત્કાય યોગવાળા જીવો ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અક્રિયાવાદી પણ હોય છે અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે, અને વૈનયિક્વાદી પણ હોય છે. અહિયાં યાવત્પદથી મનોયોગવાળા, અને વચનયોગવાળાઓ, ગ્રહણ કરાયા છે. ‘અજોગી જહા અલેસ્સા’ અયોગી જીવ અલેશ્ય જીવોની જેમ કેવળ ક્રિયાવાદી જ હોય છે. અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી, અને વૈનયિક્વાદી હોતા નથી. ‘સાગારોવૃત્તા અનાગારોવૃત્તા જહા સલેસ્સા’ લેશ્યાવાળા જીવોની જેમ સાકારોપયુક્ત અને અનાકારોપયુક્ત જીવો ક્રિયાવાદી પણ હોય છે. અક્રિયાવાદી પણ હોય છે. અને અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે. અને વૈનયિક્

खलु भदन्त ! किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनो वेति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि’ क्रियावादिनोऽपि चारुद्वैनयिकवादिनोऽपि भवन्ति विलक्षणपरिणामवत्त्वात् अत्र यावत्पदेना क्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनोऽपि, इत्यनयोः संग्रहः । ‘सलेस्सा णं भंते । नेरइया किं किरियावाई०’ सलेइयाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं क्रियावादिनो यावद् वैनयिकवादिन इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । उत्तरमाह—‘एवं—चेव’ एवम्—सामान्यतो नारकदेव सलेइयनारका अपि क्रियावादिनो यावद् वैनयिकवादिनो भवन्तीति ।

वादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानवादी होते हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि’ हे गौतम ! नैरयिक जीव क्रियावादी भी होते हैं, अक्रियावादी भी होते हैं अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं । क्यों की इनके इसी प्रकार के विलक्षण परिणाम होते हैं । ‘सलेस्सा णं भंते ! नेरइया किं किरियावाई०’ हे भदन्त ! जो नैरयिक जीव सलेइय होते हैं वे क्या क्रियावादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानवादी होते हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं चेव’ हे गौतम ! सामान्य नारक के जैसे सलेइय नारक भी क्रियावादी भी होते हैं, अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी

वादी पणु डोय छे. नेरइया णं भंते ! किं किरियावाई पुच्छा’ डे भगवन् नैरयिक लुपो शुं क्रियावादी डोय छे ? अक्रियावादी डोय छे ? अथवा अज्ञानवादी डोय छे ? अथवा वैनयिकवादी डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे ‘गोयमा ! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि’ डे गौतम ! नैरयिक लुपो क्रियावादी पणु डोय छे. अक्रियावादी पणु डोय छे, अज्ञानवादी पणु डोय छे अने वैनयिकवादी पणु डोय छे. डेम डे तेअने ओ प्रमाणेतुं विलक्षण परिणाम डोय छे. ‘सलेस्सा णं भंते ! नेरइया किं किरियावाई’ डे भगवन् ने नैरयिक लुपो देश्यावाणा डोय छे तेओ शुं क्रियावादी डोय छे ? अथवा अक्रियावादी डोय अथवा अज्ञानवादी डोय छे ? अथवा वैनयिकवादी डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे—‘एवं चेव’ डे गौतम ! सामान्य नारकना कथन प्रमाणे देश्यावाणा नारक पणु क्रियावादी पणु डोय छे, अक्रियावादी पणु डोय छे, अज्ञानवादी पणु डोय छे, अने

‘एवं जाव काउलेस्सा’ एवं सलेश्यनारकवदेव यावत्पदेन कृष्णनीलकापोत-
 लेश्यावन्तः कृष्णलेश्यादिका नारकाः क्रियावादिनो यावद्वैनयिकवादिनो भवन्ति।
 ‘कण्हपक्खिया किरिया विवज्जिया’ कृष्णपाक्षिका नारकाः क्रियाविवर्जिताः
 कृष्णपाक्षिका नारका न क्रियावादिनोऽपि तु अक्रियावादिनो यावद्वैनयिकवादिनो
 भवन्तीति भावः। ‘एवं एएणं कमेणं जच्चेव जीवाणं वत्तव्वया’ एवमेतेन—उपरि
 दर्शितप्रकारेण यैव जीवानां वक्तव्यता कथिता ‘सच्चेव नेरइयाणं वत्तव्वयावि’
 सैव नैरयिकाणां वक्तव्यताऽपि भणितव्या कियत्पर्यन्तं जीववक्तव्यताऽत्र भणि-
 तव्या तत्राह—‘जाव’ इत्यादि, ‘जाव अणागारोवउत्ता’ यावदनाकारोपयोगयुक्ता
 एतदन्तप्रकरणं सर्वमिहापि ज्ञातव्यम् अज्ञानित आरभ्य साकारोपयोगयुक्तान्त
 सम्पूर्णं प्रकरणस्य संग्रहो ज्ञातव्यइति। ‘नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं’ नवरं
 यद् ज्ञानादिकं यस्यास्ति विद्यते तस्य तदेव भणितव्यम् ‘सेसं न भणणइ’ शेषं न
 होते है। ‘एवं जाव काउलेस्सा’ सलेश्यनारक के जैसे ही कृष्णले-
 श्यावाले, नील लेश्यावाले और कापोतलेश्यावाले नैरयिक जीव क्रिया-
 वादी भी होते हैं यावत् वैनयिकवादी भी होते हैं। ‘कण्हपक्खिया
 किरिया विवज्जिया’ कृष्णपाक्षिक नारक क्रियावादी नहीं होते हैं—
 किन्तु अक्रियावादी यावत् वैनयिकवादी होते हैं। ‘एवं एएणं कमेणं
 जच्चेव जीवाणं वत्तव्वया’ इस प्रकार से ऊपर में प्रकटित किये गये
 अनुसार जो जीवों की वक्तव्यता कही गई है, ‘सच्चेव नेरइयाणं
 वत्तव्वया वि’ वही वक्तव्यता यहां नैरयिकों के सम्बन्ध में ‘जाव अणा-
 गारोवउत्ता’ यावत् अनाकारोपयोगवाले नैरयिकों के प्रकरण तक सब
 कहनी चाहिये। ‘नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं’ परन्तु इस वक्तव्यता
 में जो जिसके हो वही उल्लेख करना चाहिये। ‘सेसं न भणणइ’ और

वैनयिकवादी पण्डु होय छे. ‘एवं जाव काउलेस्सा’ लेश्यावाणा नारकना कथन
 प्रमाणे ७ कृष्णलेश्यावाणा, नीललेश्यावाणा, अने कापोत लेश्यावाणा, नैरयिक
 एवो क्रियावादी पण्डु होय छे, यावत् वैनयिकवादी पण्डु होय छे ‘कण्ह-
 पक्खिया किरिया विवज्जिया’ कृष्णपाक्षिक नारक क्रियावादी होता नथी. परंतु
 अक्रियवादी यावत् वैनयिकवादी होय छे. ‘एवं एएणं कमेणं जच्चेव जीवाणं
 वत्तव्वया’ आ प्रमाणे उपर यतावेल प्रकारथी एवोना संबधमां ने
 कथन कडेल छे, ‘सच्चेव नेरइयाणं वत्तव्वया वि’ ओण कथन अडिथा नैरयिको
 ना संबधमां ‘जाव अणागारोवउत्ता’ यावत् अनाकारोपयोगवाणा नैरयिकोना
 प्रकरण पर्यन्त सबणुं कथन कडेवुं लेधये ‘नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं’ परंतु
 आ कथनमां ने स्थान नेना संबधी होय ते स्थान तेने कडेवा लेधये. ‘सेसं

भण्यते यत् तस्य नास्ति तत् तस्य न वक्तव्यम् इति । 'जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा' यथा नैरयिकाणां लेश्यादि विशिष्टानामविशिष्टानां च वक्तव्यता कथिता तथैव असुरकुमारादारभ्य स्तनितकुमारपर्यन्तानां वक्तव्यता कथनीया इति भावः । 'पुढवीकाइयाणं भंते ! किरियावाई पुच्छा' पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त । किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनो वेति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो किरियावाई' पृथिवीकायिका जीवाः क्रियावादिनो नो भवन्ति 'अकिरियावाई वि अन्नाणियवाई वि' मिथ्यादृष्टित्वात् पृथिवीकायिका अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनश्च भवन्ति चाग्योगाभावेन वादाभावेऽपि तद्वादयोग्य जीवपरिणामसद्भावात् 'नो वेणइयवाई' नो वैनयिकवादिन स्ते भवन्ति तेषां चाग्योगाभावेन वादाभावेऽपि

जो जिसके न हो वह उसके नहीं कहना चाहिये । 'जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा' जैसा कथन नैरयिकों के सम्बन्ध में प्रकट किया गया है—वैसा ही कथन यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिये । 'पुढवीकाइयाणं भंते ! किरियावाई पुच्छा' हे भदन्त ! पृथिवीकायिक जीव क्या क्रियावादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानवादी होते हैं ? वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! नो किरियावाई' हे गौतम ! पृथिवीकायिक जीव क्रियावादी नहीं होते हैं 'अकिरियावाई, वि अन्नाणियवाई वि' किन्तु वे अक्रियावादी भी होते हैं और अज्ञानवादी भी होते हैं । क्योंकि ये मिथ्यादृष्टि होते हैं । अद्यपि चार्योगी के अभाव से इनमें वादका अभाव है तथा भी तत्तद्भाव के योग्य जीव परिणाम का सद्भाव होने से इनमें इनका सद्भाव कहा गया है । 'नो वेणइयवाई' पृथिवीकायिक जीव

न भण्णइ' ने नेने न डाय ते तेने कडेवा न नेणये. 'जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा' नैरयिकना सम्बंधमां ने प्रमाणेतुं कथन कथुं' छे अने प्रमाणेतु कथन थावत् स्तनितकुमारो सुधी समणु देपुं. 'पुढवीकाइयाणं भंते ! किरियावाई पुच्छा' छे लगवन् पृथ्वीकायिक अणु शुं क्रियावादी डाय छे ? अथवा अक्रियावादी डाय छे ? अथवा अज्ञानवादी डाय छे ? अथवा वैनयिकवादी डाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! नो किरियावाई' छे गौतम ! पृथ्वीकायिक अणु क्रियावादी डोता नथी. 'अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई वि' परंतु तेओ अक्रियावादी डाय छे, अने अज्ञानवादी पणु डाय छे. केम के—तेओ मिथ्यादृष्टि डाय छे, जेके वचन योगीना अभावथी तेओमां वचन वादना अभाव छे. तो पणु ते ते लावने योग्य अणु परिणामने।

तत्प्रयोजकजीवपरिणामसद्भावाद्वादिन इति कथितम् । 'एवं पृथ्वीकाइयां जं अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एयाइं दो मज्झल्लाइं समोसरणाइं' एवं पृथिवीकायिकानां यदस्ति तत्र सर्वत्रापि एते द्वे मध्यमे समवसरणे, पृथिवीकायिकानां यदस्ति सलेश्यादिपदं तत्र सर्वत्रापि मध्यमम् 'अक्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनोऽपि' इत्याकारकं समवसरणद्वयं ज्ञातव्यम्, सलेश्य-कृष्णलेश्य-नीललेश्य-कापोतलेश्य-तेजोलेश्य-कृष्णपाक्षिक-सम्भग्दृष्टि-मिथ्यादृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टि-ज्ञान्याभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञान्यौषिकज्ञान्यज्ञानिमत्यज्ञानि श्रुताज्ञानि विभङ्गज्ञान्याहारसंज्ञोपयुक्त यावत्परिग्रहसंज्ञोपयुक्त सवेदकनपुंसकवेदकसकषायि यावत्लोभकषायि संयोगि-मनोयोगि-वचनयोगि साकारोपयुक्ताः, इत्यादिषु यत्पदं सम्भवति तेषु पदेषु

वैनयिकवादी नहीं होते हैं । क्योंकि इनमें विनयवाद के योग्य परिणाम नहीं है । 'एवं पृथ्वीकाइयाणं जं अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एयाइं दो मज्झल्लाइं समोसरणाइं' इसी प्रकार से पृथिवीकायिक जीवों में जो-जो लेश्यादिक पद संभवित होते होंगे उन-उन समस्त पदों में ये दो ही-अक्रियावादित्व और अज्ञानवादित्व-समवसरण कहना चाहिये । इस प्रकार सलेश्य कृष्णलेश्य, नीललेश्य कापोतलेश्य, तेजोलेश्य, कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक, सम्भग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी अज्ञानी, मत्यज्ञान, श्रुताज्ञानी, विभङ्गज्ञानी, आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रह संज्ञोपयुक्त, सवेदक नपुंसकवेदक, सकषायी, यावत् लोभकषायी, संयोगी, मनोयोगी, वचनयोगी, साकारोपयुक्त, अनाकारोपयुक्त, इत्यादि

सद्भावाद्वादिनां तेषामां वचन योगिनो सद्भावाद्वादी छे. 'जो वेणइयवाइं' पृथ्वीकायिक एव वैनयिकवादी होता नथी. केअ के तेषामां विनयवादाने योग्य परिणाम होता नथी. 'एवं पृथ्वीकाइयाणं जं अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एयाइं दो मज्झल्लाइं समोसरणाइं' एण प्रभावे पृथ्वीकायिक एवेमां ने ने लेश्या विगेरे पदे संभवित होय छे, ते ते सधणा पदेमां आ जेअ अटले के-अक्रियावादी पणुं अने अज्ञानवादी पणुं समवसरणु कडेवा लेधये. आ रीते लेश्यावाणा, कृष्णलेश्यावाणा, नीललेश्यावाणा, कापोतलेश्यावाणा, तेजोलेश्यावाणा, कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक, सम्भग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, अज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुतअज्ञानी, विभङ्गज्ञानी आहारसंज्ञोपयोगी यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त, सवेदक, नपुंसकवेदक, सकषायी यावत् लोभकषायी, संयोगी, मनोयोगी वचनयोगी, साकारोपयोगवाणा, अनाकारोपयोगवाणा वि... दे... पीडी ने-ने

मध्यमं समवसरणद्वयं ज्ञातव्यमिति । क्रियत्पर्यन्तपदेषु समवसरणद्वयं मध्यमं ज्ञातव्यम्, तत्राह—‘जाव’ इत्यादि । ‘जाव अणाकारोपउत्ता त्रि’ यावद् अनाकारोपयुक्ता अपि अनाकारोपयोगयुक्त पृथिवीकायिकपर्यन्तं मध्यमं समवसरणद्वयं ज्ञातव्यमिति । ‘एवं जाव चउरिंदियाणं’ एवं पृथिवीकायिकवदेव अप्कायिकादारभ्य चतुरिन्द्रियपर्यन्तानाम् ‘सव्वट्टाणेषु एयाइ चैव मज्झिल्लाइं दो समोसरणाइं’ सर्वस्थानेषु लेश्यादि सम्भविताद्वारेषु एते एव मध्यमे द्वे समवसरणे ज्ञातव्ये । ननु द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रियादि जीवानां सासादनभावेन सम्यक्त्वं ज्ञानं चेष्ट्यते इति द्वीन्द्रियादि जीवेषु क्रियावादित्वमेव युक्तं तद्वत्त्वात् तत्कथमुच्यते मध्यममेव समवसरणद्वयमेतेषामित्याशंक्याह—‘सम्मत्त’ इत्यादि, ‘सम्मत्तनाणेहि वि एयाणि चैव

पदों में से जो-जो पद इनमें संभवित होते होंगे उनमें से यावत् अनाकारोप युक्त पृथिवीकायिक पद तक इन दो मध्य के समवसरणों काही कथन करना चाहिये ।

‘एवं जाव चउरिंदियाणं’ पृथिवीकायिक के जैसे ही अप्कायिक से लेकर चतुरिन्द्रियतक के जीवों के ‘सव्वट्टाणेषु एयाइं चैव मज्झिल्लाइं दो समोसरणाइं’ समस्त लेश्यादिक संभवित स्थानों में ये दो ही मध्य के समवसरण उक्तव्य हुए हैं ऐसा जानना चाहिये ।

शंका—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय जीवों के सासादन भाव से सम्यक्त्व और ज्ञान माने गये हैं अतः इनमें क्रियावादित्व रूप समवसरणही कहना चाहिये था, तो फिर आप इनमें मध्य के दो समवसरण ही क्यों प्रकट कर रहे हैं ?

उत्तर—‘सम्मत्तनाणेहि वि एयाणि चैव मज्झिल्लागाइं दो समो-

पटो आ पृथ्वीकायिकेमां संभवित होता होय तेमाथी अनाकारोपयोगवाणा पृथिवीकायिक संधी पट सुधी आ जे मध्यना समवसरणो कडेवा नेछो

‘एवं जाव चउरिंदियाणं’ पृथ्वीकायिकना कथन प्रमाणे न् अप्कायिकथी लोने आर इन्द्रियवाणा अत्र सुधीना लोने ‘सव्वट्टाणेषु एयाइं चैव मज्झिल्लाइं दो समोसरणाइं’ सधणा लेश्यादि संभवित स्थानोमां आ जे न् ओटले के अक्रियावाही अने अज्ञानवाहीपणुना जे मध्यना समवसरण कडेवा लायक दहा छे तेम समञ्जुं ।

शंका—जे इन्द्रियवाणा अने त्रणु इन्द्रियवाणा लोने सासादन लावथी सम्यक्त्व अने ज्ञान भाननामां आवेद छे नेथी तेओमां क्रियावाही रूप समवसरण न् कडेवुं नेछो परंतु आप तेओमां अने समवसरणो केम कडो छे ?

उत्तर—‘सम्मत्तनाणेहि वि एयाणि चैव मज्झिल्लागाइं दो समोसरणाइं’ ने

मज्झिमनिकायं दो समोसरणाइं' सम्यक्त्वज्ञानयोरपि एते एव मध्यमे द्वे समवसरणे ज्ञातव्ये क्रियावादविनयवादी हि विशिष्टतरे सम्यक्त्वादिपरिणामे स्यातां न तु सासादनरूपे इति भावः । यद्यपि द्वीन्द्रियादि चतुरिन्द्रियान्तेषु सम्यक्त्वं ज्ञानं च विद्यते तथापि अपर्याप्तावस्थायामेव तयोः सद्भावात् स्तोककालभावित्वेन विशिष्टरूपं सम्यक्त्वं ज्ञानं च नास्ति, अतः मध्यममेव समवसरणद्वयमिति । 'पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया जहा जीवा' पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोनिका यथा जीवाः सामान्यजीववदेव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोनिकाः क्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनोऽपि भवन्तीति । 'नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं' नवरं जीवापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत्

सरणाहं 'यद्यपि इनके सासादन भाव से सम्यक्त्व और ज्ञान माने गये हैं—पर वे वहाँ अंश रूप से माने गये हैं' इसलिये इनके सम्यक्त्व एवं ज्ञान में भी ये दो ही मध्य के समवसरण होने कहे गये हैं, क्यों कि क्रियावाद और विनयवाद ये दो विशिष्टतर सम्यक्त्वादि परिणामों के होने पर होते हैं । सासादन रूप सम्यक्त्व ज्ञान के होने पर नहीं होते हैं । यद्यपि द्वीन्द्रिय से लेकर चौद्विन्द्रिय तक के जीवों में सम्यक्त्व और ज्ञान हैं परन्तु वे अपर्याप्त अवस्था में ही उनके सद्भाव रूप से माने गये हैं—अतः उनमें इनका सद्भाव बहुत ही कम समयतक रहता है इसलिये ये विशिष्ट रूप में वहाँ नहीं हैं । इसी कारण वहाँ बीच के दो समवसरण माने गये हैं । 'पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया जहा जीवा' सामान्य जीव के जैसे पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोनिक जीव क्रियावादी भी होते हैं अक्रियावादी भी होते हैं, अज्ञानवादी भी होते हैं और वैनयिकवादी भी होते हैं । 'नवरं ज अत्थि

के आ जे ध'द्रियादिकेमां सासादन लावथी सम्यक्त्व अने ज्ञान मानवामां आवेल छे, ते पणु ते अडियां अंश रूपथी मानेला छे तेथी तेओने सम्यक्त्व अने ज्ञानमां पणु आ जे मध्यना समवसरणु होवातुं उडेल छे. केमके क्रियावाद अने विनयवाद ओ जे विशेष प्रकारना सम्यक्त्व विगेरे परिष्ठाभा होय तारे होय छे सासादनरूप सम्यक्त्वज्ञान होय तारे होता नथी. जे के जे ध'न्द्रियथी लधने आर ध'द्रियवाणा सुधीना जेवामां सम्यक्त्व अने ज्ञान छे, परंतु ते अपर्याप्तावस्थामां जे तेना सद्भाव रूपथी मानेला छे, तेथी तेओमां तेना सद्भाव घणु जे ओछा समय सुधी रहे छे. तेथी तेओ विशेष प्रकारथी त्यां होता नथी. ओज उतरणुथी त्यां मध्यना जे समवसरणु मानेला छे

'पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणियाणं जहा जीवा' सामान्य जेवना उथन प्रभाणे पञ्चेन्द्रिय तिय'यथैनिवाणा जेवो क्रियावादी पणु होय छे. अक्रियावादी पणु होय छे.

यदेव लेश्यादिकं थोग्यत्वात् सम्भवति पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां तदेव छेद्यादिकं भणितव्यं नान्यदिति । 'मणुस्सा जहा जीवा तहेव निरवसेसं' मनुष्या यथा जीवा स्तथैव निरवशेषं जीववदेव सर्वाऽपि परिपाटी मनुष्येषु वक्तव्येति । 'वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा' असुरकुमारवदेव वानव्यन्तरज्योतिषिकवैमानिकाः क्रियावादिनो याद्वैतयिकवादिनो भवन्तीति ॥सू० १॥

जीवनारकादि पञ्चविंशतितमदण्डकेषु यत् समवसरणं यत्रास्ति तत् समवसरणं विभज्य तत्र तत्राक्तम्, अथ तेष्वेव जीवादि पञ्चविंशतितमदण्डकेषु आयुर्वन्धं निरूपयन्नाह—'किरियावाई णं भंते ।' इत्यादि ।

मूलम्—किरियावाई णं भंते ! किं नेरइयाउयं पकरेंति तिरिक्खजोगियाउयं पकरेंति ? मणुस्साउयं पकरेंति ? देवाउयं पकरेंति ? गोयसा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति, नो तिरिक्खजोगियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति देवाउयं पि पकरेंति ।

तं भाणियव्व' परन्तु जीव के कथन की अपेक्षा इनके कथन में यही विशेषता जाननी चाहिये कि इन पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों को जो पद संभवित होता हो वे ही पद उनमें कहने चाहिये—अन्य पद नहीं । 'मणुस्सा जहा जीवा तहेव निरवसेसं' मनुष्यो' में जीव के जैसी ही समस्त परिपाटी कहनी चाहिये, 'वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा' असुरकुमारो' के जैसी परिपाटी वानव्यन्तरज्योतिषिक और वैमानिक इनमें कहनी चाहिये, अर्थात् ये सब क्रियावादी भी होते हैं अक्रियावादी भी होते हैं अज्ञानवादी भी होते हैं और वैतनिकवादी भी होते हैं इत्यादि ॥१॥

'नवरं ज अत्थि तं भाणियव्व' परन्तु अथवा कथननी अपेक्षाथी तेओना कथनमां ओण विशेषपणुं छे के—आ पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकोने ने पदो संभवित यता होय ओण पदो तेओमां कहेवा नेधं ओ. तेथी अन्य कहेवाना नथी.

'मणुस्सा जहा जीवा तहेव निरवसेसं' मनुष्योमां अथवा कथन प्रमाणे ओ अधणुं कथन कहेवुं नेधं ओ. 'वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया जहा असुरकुमारा' असुरकुमारोना संभंधमां ने प्रमाणे कथन कहेल छे, ओण प्रमाणे वानव्यन्तर ज्योतिषिक अने वैमानिकोना संभंधमां कहेवुं नेधं ओ. अर्थात् आ अथा क्रियावादी पणुं होय छे, अक्रियावादी पणुं होय छे, अने वैतनिकवादी पणुं होय छे. ते समणुं. ॥सू०१॥

जइ देवाउयं पकरेंति ? किं भवणवासिदेवाउयं पकरेंति जाव
वेमाणियदेवाउयं पकरेंति गोयमा ! नो भवणवासिदेवाउयं
पकरेंति, नो वाणसंतरदेवाउयं पकरेंति, नो जोइस्सिय देवाउयं
पकरेंति, वेमाणियदेवाउयं पकरेंति । अकिरियावाई णं भंते !
जीवा किं नेरइयाउयं पकरेंति तिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा ! नेर-
इयाउयं पि पकरेंति जाव देवाउयं पि पकरेंति । एवं अन्नाणिय-
वाई वि वेणइयवाई वि । सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई
किं नेरइयाउयं पकरेंति, पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पक-
रेंति एवं जहा जीवा तहेव सलेस्सा वि चउहिं वि समोसरणेहिं
भाणियव्वा । कणहलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेर-
इयाउयं पकरेंति, पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति
नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति नो देवा-
उयं पकरेंति । अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई य
चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति । एवं नीललेस्सा वि काउलेस्सा
वि । तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं
पकरेंति पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति नो तिरि-
क्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, देवाउयं पि पक-
रेंति । जइ देवाउयं पकरेंति तहेव । तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा
अकिरियावाई किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं
पकरेंति मणुस्साउयं पि पकरेंति तिरिक्खजोणियाउयं पि
पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति । एवं अन्नाणियवाई वि वेणइय-
वाई वि जहा तेउलेस्सा, एवं परहलेस्सा वि सुकलेस्सा वि
नायव्वा । सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं
पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति नो तिरिक्ख० नो मणुस्स०

नो देवाउयं पकरेंति । कण्हपक्खिया णं भंते ! जीवा अकिरि-
यावाई किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नेरइयाउयं पि पकरेंति ।
एवं चउठ्विहं पि । एवं अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि ।
सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा । सम्मदिट्ठी णं भंते ! जीवा किरि-
यावाई किं नेरइयाउयं पुच्छा गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति,
नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति मणुस्साउयं पकरेंति देवाउयं
पि पकरेंति । मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया । सम्मामिच्छा-
दिट्ठी भंते ! जीवा अन्नाणियवाई किं नेरइयाउयं जहा अलेस्सा ।
एवं वेणइयवाई वि । णाणी आभिणिबोहियणाणी य सुयणाणी
य ओहियणाणी य जहा सम्मदिट्ठी । मणपज्जवणाणी णं भंते !
पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति नो तिरिक्ख० नो
मणुस्स० देवाउयं पकरेंति । जइ देवाउयं पकरेंति किं भवण-
वासि० पुच्छा, गोयमा ! णो भवणवासिदेवाउयं पकरेंति
नो वाणसंतर० नो जोइसिय० वेसाणियदेवाउयं पकरेंति ।
केवलणाणी जहा अलेस्सा । अन्नाणी जाव विभंगणाणी जहा
कण्हपक्खिया, सन्नासु चउसु वि जहा सलेस्सा । नो सन्नोवउत्ता
जहा मणपज्जवणाणी सवेदगा जाव नपुंसगवेयगा जहा सलेस्सा ।
अवेयगा जहा अलेस्सा । सकसाई जाव लोभकसाई जहा सले-
स्सा । अकसाई जहा अलेस्सा । सजोगी जाव कायजोगी
जहा सलेस्सा । अजोगी जहा अलेस्सा । सागारोवउत्ता य
अणागारोवउत्ता य जहा सलेस्सा ॥सू० २॥

छाया—क्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ?
तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ?
गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्क-
मपि प्रकुर्वन्ति देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति । यदि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति किं भवनवासि-

देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति यावद्वैवमानिकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! नो भवनवासि-
 देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो वानव्यन्तरदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति नो ज्योतिष्कदेवा-
 युष्कं प्रकुर्वन्ति, वैमानिकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । अक्रियावादिनः खलु भदन्त !
 जीवाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तिर्यगू० पृच्छा, गौतम ! नैरयिकायुष्कमपि
 प्रकुर्वन्ति यावद्देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति ! एवमज्ञानिकवादिनोऽपि, वैनयिक-
 वादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं
 प्रकुर्वन्ति पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, एवं यथैव जीवा
 स्तथैव सलेश्या अपि चतुर्भिरपि समवसरणै र्भणितव्याः कृष्णलेश्याः खलु भदन्त
 जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति पृच्छा, गौतम ! नो नैरयि-
 कायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति
 नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च
 चत्वारि अपि आयुष्काणि प्रकुर्वन्ति, एव नीललेश्या अपि, कापोतलेश्या अपि
 तेजोलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति
 पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति,
 मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति, देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति । यदि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति तथैव ।
 तेजोलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः अक्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छा,
 गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति, तिर्यग्योनिका-
 युष्कमपि प्रकुर्वन्ति, देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति । एवमज्ञानिकवादिनोऽपि, वैनयिक-
 वादिनोऽपि यथा तेजोलेश्याः । एवं पद्मलेश्या अपि शुक्ललेश्या अपि ज्ञातव्याः ।
 अलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छा, गौतम !
 नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो तिर्यगू० नो मनु० नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । कृष्ण-
 पाक्षिकाः खलु भदन्त ! जीवा अक्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छा, गौतम !
 नैरयिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति एवं चतुर्विधमपि । एवमज्ञानिकवादिनोऽपि, वैनयिक-
 वादिनोऽपि । शुक्लपाक्षिका यथा सलेश्याः । सम्यग्दृष्टयः खलु भदन्त ! जीवाः
 क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति,
 नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति ।
 मिथ्यादृष्टयो यथा कृष्णपाक्षिकाः । सम्यग्मिथ्यादृष्टयः खलु भदन्त ! जीवाः
 अज्ञानिकवादिनः किं नैरयिकायुष्कं यथा अलेश्याः । एवं वैनयिकवादिनोऽपि ।
 ज्ञानि आभिनिबोधिकज्ञानी च श्रुतज्ञानि च अवधिज्ञानी च यथा सम्यग्दृष्टिः ।
 मनःपर्यवज्ञानिनश्च भदन्त ! पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति नो तिर्यगू०
 नो मनुष्य० देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । यदि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति किं भवनवासि० पृच्छा,

गौतम ! नो भवनवासि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति नो वानव्यन्तर० नो ज्योतिष्कं
 वैमानिकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । केवलज्ञानिनो यथा अलेक्ष्याः । अज्ञानिनो यावद्
 विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः । संज्ञासु चतसृष्वपि यथा सलेक्ष्याः । नो संज्ञोप-
 युक्ता यथा मनःपर्यवज्ञानिनः । सवेदका यावत् नपुंसकवेदकाः यथा सलेक्ष्याः ।
 अवेदका यथा अलेक्ष्याः । सक्रवायिनो यावत् स्त्रीप्रकपायिणः यथा सलेक्ष्याः । अक-
 पायिनो यथा अलेक्ष्याः । सयोगिनो यावत् काययोगिनो यथा सलेक्ष्याः । अयोगिनो
 यथा अलेक्ष्याः । साकारोपयुक्ताश्च, अनाकारोपयुक्ताश्च यथा सलेक्ष्याः ॥सू० २॥

टीका—‘किरियावर्द्धं ण भंते । जीवा’ क्रियावादिनः खलु भदन्त । जीवाः
 ‘किं नेरइयाउयं पकरे’ति’ किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति नारकभवसम्बन्धि आयु-
 र्वधनातीत्यर्थः अथवा ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति’ तिर्यग्योनिकसम्बन्धि
 आयुष्कं प्रकुर्वन्ति तादृशायुष्कर्मवन्धं कुर्वन्तीति, अथवा—‘मणुस्साउयं पकरे’ति’
 मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा ‘देवाउयं पकरे’ति’ देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? इति
 प्रश्नः भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम । ‘नो नेरइयाउयं पक-
 रे’ति’ नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति नारकभवसम्बन्धि आयुष्कर्मवन्धनं कुर्वन्ती-

जीव नारकादि २५ दण्डकों में जो-जो समवसरण जहाँ-जहाँ
 है वह-वह समवसरण वहाँ-वहाँ विभक्त करके प्रकट किया गया है ।
 अब उन्हीं जीवादि २५ दण्डकों में आयु के बन्ध का निरूपण किया
 जाता है ।—‘किरियावर्द्धं ण भंते ! जीवा नेरइयाउयं पकरे’ति’—

टीकार्थ—हे भदन्त जो जीव क्रियावादी हैं वे क्या नैरयिक आयु-
 ष्क का बन्ध करते हैं ? ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति’ तिर्यग्आयुका-
 बन्ध करते हैं ? ‘मणुस्साउयं पकरे’ति’ मनुष्यायुका बन्ध करते हैं ?
 ‘देवाउयं पकरे’ति’ अथवा—देवायु का बन्ध करते हैं ? इसके उत्तर में
 प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । नो नेरइयाउयं पकरे’ति’ हे गौतम । क्रिया-
 वादी जीव नैरयिक आयुका बन्ध नहीं करते हैं, ‘णो तिरिक्खजोणिया-

एव नारक विगेरे दंडकोमां ने-ने समवसरण न्यां न्यां डाय छे,
 ते ते समवसरण त्यां त्यां जुवा जुवा प्रगट करेला छे डवे ते एव विगेरे
 २५ पञ्चीस दंडकोमां आयुना बंधनुं निरूपण करवाभां आवे छे.—
 ‘किरियावर्द्धं ण भंते ! जीवा किं नेरइयाउयं पकरे’ति’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् ने एवो क्रियावादी छे, तेओ शुं नैरयिक
 आयुष्यने। बंध करे छे ? ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति’ तिर्यग् आयुष्यने।
 बंध करे छे ? ‘देवाउयं पकरे’ति’ अथवा देव आयुष्यने। बंध करे छे ? आ
 प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कहे छे के—‘गोयमा । नो नेरइयाउयं पकरे’ति’ हे गौतम ।
 क्रियावादी एव नैरयिक आयुष्यने। बंध करता नथी, ‘णो तिरिक्खजोणिया-

त्यर्थः । 'नो तिरिक्त्वजोणियाउयं पकरेति' नो-न वा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु 'मणुस्साउयं पकरेति देवाउयं पकरेति' मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति, देवायुष्कमपि कुर्वन्तीत्युत्तरम् । 'जइ देवाउयं पकरेति' यादं क्रियावादिनो जीवा देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति तदा 'किं भवणवासि देवाउयं पकरेति जाव वेमाणिय देवाउयं पकरेति' किं भवनवासिदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति यावत् वैमानिक-देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति यावत्पदेन वानव्यन्तरज्योतिष्कदेवयोः संग्रहः एषु कत-मदायुर्वन्धं प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम । 'णो भवणवासि देवाउयं पकरेति' नो भवनवासि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति 'णो वाणमंतरदेवाउयं पकरेति' नो न वा वानव्यन्तरदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति 'णो जोइसियदेवाउयं पकरेति' नो न वा ज्योतिष्कदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति अपि तु 'वेमाणियदेवाउयं पकरेति' वैमानिकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति क्रियावादिनो

उयं पकरेति' तिर्यञ्च आयु की बन्ध नहीं करते हैं, किन्तु 'मणुस्साउयं पि पकरेति देवाउयं पि पकरेति' मनुष्य आयुका भी बन्ध करते हैं और देवायु का भी बन्ध करते हैं । 'जइ देवाउयं पकरेति किं भवण-वासिदेवाउयं पकरेति जाव वेमाणियदेवाउयं पकरेति' यदि वे देवायु का बन्ध करते हैं तो क्या भवनवासी देवों की आयुका बन्ध करते हैं या यावत् वैमानिक देवों की आयुका बन्ध करते हैं ? यहाँ यावत् शब्द से वानव्यन्तर और ज्योतिषिक इन दो का ग्रहण हुआ है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! णो भवणवासिदेवाउयं पकरेति णो वाणमंतर देवाउयं पकरेति' हे गौतम ! क्रियावादी जीव न भवनवासी देवों की आयुका बन्ध करते हैं न वानव्यन्तरदेवों की आयुका बन्ध करते हैं 'णो जोइसिय देवाउयं पकरेति' न ज्योतिषिक देवों की आयुका बन्ध करते हैं । अपितु 'वेमाणियावाउयं पकरेति' वे वैमानिक देवोंकी आयुका बन्ध

उयं पकरेति' तिर्यञ्च आयुने अंध करता नहीं. परंतु 'मणुस्साउयं पकरेति देवाउयं पकरेति' मनुष्य आयुने अंध करे छे, अने देव आयुने अंध करे छे. 'जइ देवाउयं पकरेति किं भवणवासी देवाउयं पकरेति' ने तेओ देव आयुने अंध करे छे, तो शुं तेओ भवनवासी देवोना आयुधने अंध करे छे ? यावत् वैमानिक देवोना आयुधने अंध करे छे ? अडियां यावत् शब्दथी वानव्यन्तर अने ज्योतिष्क आ अन्ने अडिणु करया छे आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे हे—'गोयमा ! णो भवणवासिदेवाउयं पकरेति णो वाणमंतरदेवाउयं पकरेति' हे गौतम ! क्रियावादी एव भवनवासि देवोनी आयुधने अंध करता नहीं तथा वानव्यन्तर देवोनी आयुधने अंध करता नहीं. 'णो जोइसिय देवाउयं पकरेति' ज्योतिष्क देवोनी आयुधने अंध करता नहीं

जीवा इति । 'अक्रियावाद् ई णं भंते ! जीवा किं नेरइयाउयं पकरे'ति तिरिक्ख० पुच्छा' अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्ति इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नेरइयाउयं पि पकरे'ति जाव देवाउयं पि पकरे'ति' नैरयिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति यावद् देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति अत्र यावत्पदेन तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्तीत्यनयोः संग्रहो भवतीति । 'एवं अन्नाणियवाद् ई वि, वेणइयवाद् ई वि' एवम्—अक्रियावादिन इव अज्ञानिकवादिनोऽपि वैश्विकवादिनोऽपि नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति 'सल्लेस्साणं भंते ! जीवा किरियावाद् ई' सल्लेस्साः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः 'किं नेरइयाउयं

करते हैं । 'अक्रियावाद् ई णं भंते ! जीवा किं नेरइयाउयं पकरे'ति तिरिक्ख० पुच्छा' हे भदन्त ? अक्रियावादी जीव क्या नैरयिक आयुका बन्ध करते हैं ? या तिर्यग्योनिक की आयुका बन्ध करते हैं ? या मनुष्य आयुका बन्ध करते हैं ? या देवायुष्क का बन्ध करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! नेरइयाउयं पि पकरे'ति०' हे गौतम ! अक्रियावादी नैरयिक की आयुका भी बन्ध करते हैं यावत् देवायुका भी बन्ध करते हैं । यहां यावत्पद से तिर्यग्योनिक की आयुका भी वे बन्ध करते हैं और मनुष्य आयुका भी वे बन्ध करते हैं ऐसा पाठ गृहीत हुआ है । 'एवं अन्नाणियवाद् ई वि वेणइयवाद् ई वि' इसी प्रकार से अज्ञानवादी भी और वैश्विकवादी भी चारों गतियों के आयुष्क का बन्ध करते हैं । 'सल्लेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाद् ई' हे भदन्त !

परंतु 'वेमाणियदेवाउयं पकरे'ति' तेजो वैमानिकदेवाना आयुष्येना अंध करे छे. 'अक्रियावाद् ई णं भंते ! जीवा किं नेरइयाउयं पकरे'ति तिरिक्ख० पुच्छा' हे भगवन् अक्रियावादी एव शुं नैरयिक आयुष्येना अंध करे छे ? अथवा तिर्यग्योनिकना आयुष्येना अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुष्येना अंध करे छे ? अथवा देव आयुष्येना अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे—'गोयमा ! नेरइयाउयं वि पकरे'ति' हे गौतम अक्रियावादी नैरयिकना आयुष्येना पणु अंध करे छे, यावत् देव आयुष्येना पणु अंध करे छे. अक्रिया यावत्पदथी तेजो तिर्यग्योनिकना आयुष्येना पणु अंध करे छे. अने मनुष्य आयुष्येना पणु तेजो अंध करे छे अने प्रमाणेना पाठ अहणु कराये छे. 'एवं अन्नाणियवाद् ई वि. वेणइयवाद् ई वि' अने प्रमाणे अज्ञानवादी अने वैश्विकवादी पणु आरे गतियेना आयुष्येना अंध करे छे. 'सल्लेस्साणं भंते !

पकरेति पृच्छा' किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं एव जहेव जीवा तहेव सलेस्सा वि चउहि वि समोसरणेहिं भाणियव्वा' नो नैरयिकायुष्कं एव यथैव जीवा स्तथैव सलेइया अपि चतुमिः समवसरणै भणितव्याः, यथा क्रियावादिनो जीवाः नैरयिकायुष्कं न प्रकुर्वन्ति नो तिर्यगायुष्कं प्रकुर्वन्ति अपि तु मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति तथा देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति. यदि देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति तदा किं भवनपत्यादि वैमानिकान्तेषु आयुषो बन्धं कुर्वन्तीति प्रश्नः, नो भवनपत्यादिषु किन्तु वैमानिकेष्वेव आयुर्वन्धं कुर्वन्तीत्युत्तरम् एतदेव 'जहेव जीवा तहेव

लेइयावाले क्रियावादी जीव कया नैरयिक आयुका बन्ध करते है ? या तिर्यग्योनिक की आयुका बन्ध करते है ? या मनुष्यायु का बन्ध करते है ? या देवायुष्क का बन्ध करते है ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं एव जहेव जीवा तहेव सलेस्सा वि चउहि वि समोसरणेहिं भाणियव्वा' जिस प्रकार क्रियावादी जीव नैरयिकायुष्क का बन्ध नहीं करते है तिर्यग्योनिकायुष्क का बन्ध नहीं करते है, किन्तु मनुष्य आयुका बन्ध करते है देवायुष्क का बन्ध करते है—देवायुष्क में ही वे केवल वैमानिक देवों की ही आयुका बन्ध करते है भवनपत्यादिकों की आयुका बन्ध नहीं करते है उसी प्रकार से सलेइय जीव भी नैरयिकायुष्क का बन्ध नहीं करते है इत्यादि प्रकार से चारों समवसरणवाले सलेइय जीवों का सब कथन जीव के जैसा ही जानना चाहिये, यही बात 'जहेव जीवा तहेव सलेस्सा वि'

जीवा किरियावाइ' हे भगवन् देश्यावाणा क्रियावादी एवे शुं नैरयिक आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा तिर्यग्योनिकाना आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा मनुष्येना आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा देव आयुष्येनो अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं एव जहेव जीवा तहेव सलेस्सावि चउहि वि समोसरणेहिं भाणियव्वा' ने प्रभाणे क्रियावादी एवे नैरयिक आयुष्येनो अंध करता नथी, तिर्यग्योनिकाना आयुष्येनो अंध करता नथी. परतु मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे, तथा देव आयुष्येनो अंध करे छे, देव आयुष्येनो पण तेओ केवण वैमानिक देवाना आयुष्येनो अंध करे छे. भवनपति विगेरेना आयुष्येनो अंध करता नथी, ओण प्रभाणे देश्यावाणा एव पण नैरयिकायुष्येनो अंध करता नथी. विगेरे प्रकारनुं सधणुं कथन एवना प्रकरणमां कथा अनुसार अर्हियां समणुं ओण वात 'जहेव जीवा

स्रलेस्सा वि' इत्यनेन प्रकरणेन दर्शितमिति । 'कण्ठलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति यद्वा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा देवायुष्कं प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम । 'नो नेरइयाउयं पकरे'ति' नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति क्रियावादिनः कृष्णलेश्याः जीवाः तथा 'नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' नो न वा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अपि तु 'मणुस्साउयं पकरे'ति' मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु 'नो देवाउयं पकरे'ति' नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, कृष्णलेश्याः जीवाः क्रियावादिनो देवनारकापेक्षया

इस प्रकरण से स्पष्ट की गई है । 'कण्ठलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा?' हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्रियावादी जीव क्या नैरयिक आयुका बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायु का बन्ध करते हैं, या मनुष्य आयुका बन्ध करते हैं या देवायु का बन्ध करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा' हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं पकरे'ति,' कृष्णलेश्यावाले क्रियावादी जीव नैरयिक आयुका बन्ध नहीं करते हैं तथा—'नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' न वे तिर्यगायु का बन्ध करते हैं, अपितु—वे 'मणुस्साउयं पकरे'ति०' मनुष्यायुका ही बन्ध करते हैं । 'नो देवाउयं पकरे'ति' देवायु का बन्ध नहीं करते हैं । ऐसा जो यह कथन किया गया है कि कृष्णलेश्यावाले क्रियावादी जीव मनुष्य आयुका ही बन्ध करते हैं सो यह देव नारकों की

तद्देव स्रलेस्सा वि' आ सूत्रपाठ्या स्पष्ट करेण छे । 'कण्ठलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' डे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा क्रियावादी एवे शु' नैरयिक आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा तिर्य'य आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा देव आयुष्येनो अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—'गोयमा !' डे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं पकरे'ति' डे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा क्रियावादी एवे नैरयिकना आयुष्येनो अंध करता नथी । 'नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' तेओ तिर्य'य येनीवाणाओना आयुष्येनो पणु अंध करता नथी परंतु तेओ 'मणुस्साउयं पकरे'ति' मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे । नो देवाउयं पकरे'ति' देव आयुष्येनो तेओ अंध करता नथी आ प्रमाणे जे आ कथन कर्युं छे, डे 'कृष्णलेश्यावाणा क्रियावादी एवे मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे, तो ते

વિજ્ઞેયા इति मनुष्यतिरश्चोः कृष्णादि त्रितय लेश्याकाले आयुर्वन्धाभावादिति ।
 'अकिरियावाइ अन्नाणियवाइ वेणइयवाइ य, चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति'
 कृष्णलेश्या अक्रियावादिनः, अज्ञानिकवादिनः, वैनयिकवादिनश्च जीवाः चत्वारि
 अपि आयुष्काणि नारकतिर्यग्मनुष्यदेवसम्बन्धीनि प्रकुर्वन्ति, चतुष्प्रकारकर्मपि
 आयुष्कर्म वध्नन्तीति भावः । 'एवं नीललेस्सा वि काउलेस्सा वि' एवं कृष्ण-
 लेश्यवदेव नीललेश्यावन्तः कापोतलेश्यावन्तश्च अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो
 वैनयिकवादिनश्च जीवाः चतुष्प्रकारकर्मपि आयुष्कर्म वध्नन्तीति भावः । क्रिया-
 वादिनो जीवास्तु केवलं मनुष्यायुष एव वधं कुर्वन्तीति 'तेउलेस्सा णं भंते !
 जीवा किरियावाइ किं नेरइयाउयं पकरेंति पुच्छा' तेजोलेश्याः खलु भदन्त !

अपेक्षा से कहा गया है' क्यों की मनुष्य और तिर्यश्च कृष्णादि तीन
 लेश्या के सूक्ष्मभावकाल में आयुष्का बन्ध नहीं करते हैं' । 'अकिरियावाइ
 अन्नाणियवाइ वेणइयवाइय चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति अक्रियावादी,
 अज्ञानवादी, वैनयिकवादी ये सब चारों भी आयुषों का बन्ध करते हैं' ।
 कृष्णलेश्यावाले अक्रियावादी जीव 'अन्नाणियवाइ' अज्ञानवादी जीव
 और 'वेणइयवाइय' वैनयिकवादी जीव चारों आयुषों का बन्ध करते हैं' ।
 'एवं नीललेस्सा वि काउलेस्सा वि' इसी प्रकार नीललेश्यावाले और
 कापोतलेश्यावाले अक्रियावादी जीव, अज्ञानिकवादी जीव एवं वैनयिक-
 वादी जीव चारों प्रकार की आयु का बन्ध करते हैं । और क्रियावादी
 जीव मात्र मनुष्यायु का ही बन्ध करते हैं 'तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा
 किरियावाइ किं नेरइयाउयं पकरेंति पुच्छा' हे भदन्त ! तेजोलेश्यावाले

કચન આ દેવ નારકોની અપેક્ષાથી કહેલ છે. કેમ કે-મનુષ્ય અને તિર્યંચ કૃષ્ણ
 વિગેરે ત્રણ લેશ્યાના સૂક્ષ્મભાવકાળમાં આયુષો બંધ કરતા નથી. 'અકિરિયા-
 વાઈ અન્નાણિયવાઈ વેણઈયવાઈ ય ચત્તારિ વિ આઉયાઈં પકરેંતિ' અક્રિયાવાદી
 અજ્ઞાનવાદી, વૈનયિકવાદી એ બધા ચારે પ્રકારના આયુષ્યને બંધ કરે છે,
 કૃષ્ણલેશ્યાવાળા અક્રિયાવાદી એવ 'અન્નાણિયવાઈ' અજ્ઞાનવાદી એવ અને
 'વેણઈયવાઈય' વૈનયિકવાદી એવ ચારે પ્રકારના આયુષો બંધ કરે છે, 'એવં
 નીલલેસ્સા વિ કાઉલેસ્સા વિ' એજ પ્રમાણે નીલલેશ્યાવાળા અને કાપોતલેશ્યા
 વાળા એવા અક્રિયાવાદી એવ, અજ્ઞાનવાદી એવ અને વૈનયિકવાદી એવના
 કચન પ્રમાણે ચારે પ્રકારના આયુષ્યને બંધ કરે છે. અને ક્રિયાવાદી એવ
 કેવળ મનુષ્યાયુષો જ બંધ કરે છે. 'તેઉલેસ્સા ણં ભંતે ! જીવા કિરિયાવાઈ
 કિં નેરઈયાઉયં પકરેંતિ' પુચ્છા' હે ભગવન્ તેજોલેશ્યાવાળા એવા કે જેઓ

જીવાઃ ક્રિયાવાદિનઃ કિં નૈરયિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ અથવા તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ અથવા મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ યદ્વા દેવાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તીત્યેવં પ્રકારેણ પ્રવનઃ પૃચ્છયા સંગૃહ્યતે, મગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘નો નૈરહ્યાયુષ્યં પકરેતિ’ નો નૈરયિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ તેજોલેશ્યાઃ ક્રિયાવાદિનઃ ‘નો તિરિક્લજોણિયાયુષ્યં પકરેતિ’ નો તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ, કિન્તુ ‘મણુસ્સાયુષ્યં પકરેતિ’ મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ । ‘દેવાયુષ્યં પિ પકરેતિ’ દેવાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ । ‘જહ દેવાયુષ્યં પકરેતિ’ યદિ તેજોલેશ્યાઃ ક્રિયાવાદિનો જીવા દૈવસમ્બન્ધિ આયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ તદા કિં મગવનાસિ દેવાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ યાવત્ વૈમાનિકદેવાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તીતિ પ્રશ્નઃ, ઉત્તરમાહ—‘તહેવ’ તથૈવ યથૈવ ક્રિયાવાદિજીવાનાં દેવાદૌ આયુર્વન્થો નિરુપિત સ્તથૈવ તેજોલેશ્ય

જીવ જો કી ક્રિયાવાદી હૈ, વે કયા નૈરયિકાયુષ્ક કા બન્ધ કરતે હૈ ? અથવા તિર્યગ્યોનિક કી આયુકા બન્ધ કરતે હૈ ? અથવા મનુષ્ય આયુ કા બન્ધ કરતે હૈ ? અથવા દેવાયુ કા બન્ધ કરતે હૈ ? હસ પ્રશ્ન કેઉત્તર મેં પ્રસુશ્રી કહતે હૈ—‘ગોયમા ! નો નૈરહ્યાયુષ્યં પકરેતિ’ હે ગૌતમ ! વે નૈરયિક આયુકા બન્ધ નહીં કરતે હૈ ‘નો તિરિક્લજોણિયાયુષ્યં પકરેતિ’ તિર્યગ્યોનિક આયુકા બન્ધ નહીં કરતે હૈ કિન્તુ વે ‘મણુસ્સાયુષ્યં પકરેતિ, દેવાયુષ્યં પિ પકરેતિ’ મનુષ્ય આયુકા બન્ધ કરતે હૈ ઓર દેવાયુ કા મી બન્ધકરતે હૈ । ‘જહ દેવાયુષ્યં પકરેતિ’ યદિ વે તેજોલેશ્યાવાલે ક્રિયાવાદી જીવ દેવાયુકા બન્ધ કરતે હૈ તો કયા વે મગવનાસિ દેવાયુ કા બન્ધ કરતે હૈ ? યા યાવત્ વૈમાનિક દેવાયુ કા બન્ધ કરતે હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રસુ કહતે હૈ—‘તહેવ’ હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે ક્રિયાવાદી જીવો

ક્રિયાવાદી હોય છે. તેઓ શું નૈરયિક આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? અથવા તિર્યગ્યોનિક આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? અથવા મનુષ્ય આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? કે દેવ આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રસુશ્રી કહે છે કે—‘ગોયમા ! નો નૈરહ્યાયુષ્યં પકરેતિ’ હે ગૌતમ ! તેઓ નૈરયિક આયુષ્યનો બંધ કરતા નથી. ‘નો તિરિક્લજોણિયાયુષ્યં પકરેતિ’ તિર્યગ્યોનિક આયુષ્યનો બંધ કરતા નથી. પરંતુ તેઓ ‘મણુસ્સાયુષ્યં પકરેતિ, દેવાયુષ્યં પિ પકરેતિ’ મનુષ્ય આયુષ્યનો બંધ કરે છે. અને દેવ આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે. ‘જહ દેવાયુષ્યં પકરેતિ’ તેજોલેશ્યાવાળા હોયો તો દેવ આયુષ્યનો બંધ કરે છે, તો શું તેઓ મગવનાસી દેવ આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? અથવા યાવત્ વૈમાનિક દેવ આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રસુશ્રી કહે છે કે—‘તહેવ’ હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે ક્રિયાવાદી હોયો તે વૈમાનિક દેવ આયુષ્યનો બંધ થવાના સંબંધમાં

क्रियावादिनामपि वक्तव्यम्, भवनवासि वानव्यन्तरज्योतिष्कदेवायुष्कं न कुर्वन्ति किन्तु वैमानिकदेवायुष्कं कुर्वन्तीति भावः । 'तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' तेजोलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः अक्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति यद्वा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं पकरे'ति' नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तेजोलेश्या अक्रियावादिनो जीवाः किन्तु 'मणुस्साउयंपि पकरे'ति' मनुष्यभवसमन्धि आयुष्कमपि प्रकुर्वन्ति तथा—'तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरे'ति' तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति तथा—'देवाउयं पि पक-

को-वैमानिक देवायुष्का बन्ध-होना कहा गया है उसी प्रकार से तेजो-लेश्यावाले क्रियावादीयों को भी वैमानिक देवायुष्का ही बन्ध कहा गया है । भवनवासी वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवायुष्का बन्ध करना नहीं कहा गया है । 'तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' हे भदन्त । जो तेजोलेश्यावाले जीव अक्रियावादी होते हैं उसको क्या नैरयिक आयुष्का बन्ध होता है ? या तिर्यगायुष्का बन्ध होता है ? या मनुष्यायुष्का बन्ध होता है ? या देवायुष्का बन्ध होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरे'ति' हे गौतम ! उनके नैरयिक आयुष्का बन्ध नहीं होता है, किन्तु— 'मणुस्साउयं पि पकरे'ति' उनको मनुष्यायुष्का भी बन्ध होता है ? 'तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' तिर्यगायुष्का भी बन्ध होता है 'देवाउयं पि पकरे'ति' और

कथन करेला छे, - अथ प्रमाणे - तेजोलेश्यावाणा-क्रियावादीयाने पणु वैमानिक देव आयुष्का अंध करेला छे, भवनवासी, वानव्यन्तर, अने ज्योतिष्क देव आयुष्का अंध करवानुं करेला नथी. 'तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' हे भगवन् अ तेजोलेश्यावाणा अणुवे। अक्रियावादी होय छे, तेजोने शुं नैरयिक आयुष्का अंध होय छे ? अथवा तिर्यग्य आयुष्का अंध होय छे ? अथवा मनुष्य आयुष्का अंध होय छे ? अथवा देव आयुष्का अंध होय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमा प्रभुश्री करे छे - 'गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरे'ति' तेजोने नैरयिक आयुष्का अंध थतो नथी. परंतु 'मणुस्साउयं पि पकरे'ति' तेजोने मनुष्य आयुष्का पणु अंध होय छे. 'तिरिक्खजोणियाउयंपि पकरे'ति' तिर्यग्य आयुष्का पणु अंध होय छे. 'देवाउयं पि पकरे'ति' अने देवायुष्का पणु अंध होय छे.

रे'ति' देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्तीति भावः । 'एवं अन्नाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि' एवम् अक्रियावादि वदेव तेजोलेश्या अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि नैरयिकायुष्कं न प्रकुर्वन्ति किन्तु मनुष्यतिर्यग्योनिकदेवायुष्काणि प्रकुर्वन्तीति भावः । 'जहा तेउलेस्सा एवं पम्हलेस्सा वि सुक्कलेस्सा वि नायव्वा' यथा—येन प्रकारेण तेजोलेश्याः क्रियावादिनोऽक्रियावादिनश्चायुष्क कर्मबन्धनविषये निरूपिता सत्थैव—तेनैव प्रकारेण पद्मलेश्याः क्रियावादिनो जीवाः पद्मलेश्या अक्रियावादिनश्च जीवा ज्ञातव्याः तत्र क्रियावादिनः पद्मलेश्याः नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति न वा तिर्यगायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु मनुष्यायुष्कं देवायुष्कं च प्रकुर्वन्ति, अक्रियावादिनः पद्मलेश्याजीवास्तु नो नैरयिकायुष्कं कुर्वन्ति, किन्तु तिर्यग्मनुष्यदेवायुष्कं कुर्वन्तीति । एवं शुक्ललेश्याजीवाः क्रियाऽक्रियाविभाग

देवायुष्का भी बन्ध होता है' एवं अन्नाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि' अक्रियावादी के जैसे तेजोलेश्यावाले अज्ञानिकवादी भी और वैनयिकवादी भी नैरयिकायुष्का बन्ध नहीं करते हैं । किन्तु वे मनुष्यायुष्क, तिर्यगायुष्क और देवायुष्क का बन्ध करते हैं । 'जहा तेउलेस्सा एवं पम्हलेस्सा वि सुक्कलेस्सा वि नायव्वा' जिस प्रकार से तेजोलेश्यावाले क्रियावादी और अक्रियावादी आदि आयुष्कर्म के बन्ध के विषय में निरूपित किये गये हैं उसी प्रकार से पद्मलेश्यावाले क्रियावादि जीव और पद्मलेश्यावाले अक्रियावादी आदि जीव भी जानना चाहिये तथाच—पद्मलेश्यावाले क्रियावादी जीव नैरयिकायुष्क और देवायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं किन्तु मनुष्यायुष्क और देवायुष्क का बन्ध करते हैं । परन्तु पद्मलेश्यावाले अक्रियावादी आदि जीव नैरयिकायुष्क का बन्ध नहीं करते

'एवं अन्नाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि' अक्रियावादीनी जेम ज तेनेदेश्यावाणा अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी पणु नैरयिक आयुष्को अंध करता नथी परंतु तेजो मनुष्य आयुष्क, तिर्यग्य आयुष्क, अने देव आयुष्को अंध करे छे. 'जहा तेउलेस्सा एवं पम्हलेस्सा वि सुक्कलेस्सा वि नायव्वा' जे प्रमाणे तेने देश्यावाणा क्रियावादी अने अक्रियावादीने आयुष्कर्मना अंधना संअंधमां निरूपित कथां छे जेज प्रमाणे पद्मदेश्यावाणा क्रियावादी जिव अने पद्मदेश्यावाणा अक्रियावादी जिवना संअंधमां पणु समजहुं तथा पद्मदेश्यावाणा क्रियावादी जिव नैरयिक आयुष्क अने तिर्यग्य आयुष्को अंध करता नथी परंतु मनुष्य आयुष्क अने देव आयुष्को अंध करे छे. परंतु पद्मदेश्यावाणा अक्रियावादी जिवो नैरयिक आयुष्को अंध करता नथी, परंतु तिर्यग्य आयुष्को मनु

વિભિન્ના અપિ ક્રમશઃ પદ્મલેશ્યજીવવદેવ જ્ઞાતવ્યાઃ વિવેચનીયાશ્ચેતિ માવઃ ।
 'અલેસ્તા ણં મંતે । જીવા કિરિયાવાઈ કિં ણેરહયા પુચ્છા' અલેશ્યાઃ સ્વલુ મદન્ત ।
 જીવાઃ ક્રિયાવાદિનઃ કિં નૈરયિકાયાુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ અથવા તિર્યગ્યોનિકાયાુષ્કં પ્રકુ-
 વ્વન્તિ અથવા મનુષ્યાયાુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ દેવાયાુષ્કં વા પ્રકુર્વન્તિ, ઇતિ પ્રશ્નઃ પૃચ્છ્યા
 સંગૃહ્યતે, મગવાનાહ—'ગોયમા' ઇત્યાદિ, 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'નો નેરહયાઽયં
 પકરેતિ નો તિરિક્ષ્વા૦ નો મણુસ્સા૦ નો દેવાઽયં પકરેતિ' નો નૈરયિકાયાુષ્કં
 પ્રકુર્વન્તિ અલેશ્યાઃ ક્રિયાવાદિનો જીવાઃ નો તિર્યગ્યોનિકાયાુષ્કં કુર્વન્તિ ન વા
 મનુષ્યાયાુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ નો—ન વા દેવાયાુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ અલેશ્યાઃ સ્વલુ મિદ્ધા
 અયોગિનશ્ચ મ્વન્તિ, તેષાં ચૃવિધેષ્ય આયુષ્કેષ્યો મધ્યાદેકમપિ આયુર્વંધકત્વં

હૈં કિન્તુ તિર્યગાયુ કા મનુષ્યાયુ કા ઓર દેવાયુ કા હી બન્ધ કરતે હૈં ।
 હસી પ્રકાર સે શુક્લલેશ્યાવાલે ક્રિયાવાદિ ઓર અક્રિયાવાદી આદિ
 જીવ ક્રમશઃ પદ્મલેશ્યાવાલે જીવ કે જૈસે હી વિવેચનીય હૈં । 'અલે
 સ્તા ણં મંતે । જીવા કિરિયાવાઈ કિં ણેરહયા પુચ્છા' હે મદન્ત ! જો
 અલેશ્ય ક્રિયાવાદી હોતે હૈં—વે કયા નૈરયિક આયુકા બન્ધ કરતે હૈં ?
 યા તિર્યગાયુ કા બન્ધ કરતે હૈં ? યા મનુષ્યાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? યા
 દેવાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? હસકે ઉત્તર યેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં— ગોયમા ।
 નો નેરહયાઽયં પકરેતિ નો તિરિક્ષ્વા૦ નો મણુસ્સા નો દેવાઽયં પક-
 રેતિ' હે ગૌતમ વે ન નારકાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ન તિર્યગાયુકા બન્ધ
 કરતે હૈં, ન મનુષ્યાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ઓર ન દેવાયુકા બન્ધ કરતે
 હૈં । કયોં કિ અલેશ્ય અયોગી ઓર સિદ્ધ હોતે હૈં । અત્ત હનમેં ચારોં
 આયુઓં કે ધીચ મેં સે કિસી મી આયુકી બંધકતા નહીં હોતી હૈં ।

પ્ય આયુનો, અને દેવ આયુનોજ બંધ કરે છે. એજ રીતે શુક્લ લેશ્યાવાળા
 ક્રિયાવાદી અને અક્રિયાવાદી એવા ક્રમશઃ પદ્મલેશ્યાવાળા એવની જેમ
 સમજવા. 'અલેસ્તા ણં મંતે । જીવાં કિરિયાવાઈ કિં ને.હયા પુચ્છા' હે ભગવન્
 જે અલેશ્ય એવ ક્રિયાવાદી હોય છે, તેઓ શુ' નૈરયિક આયુનો બંધ કરે છે ?
 અથવા તિર્યંચ આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે ?
 અથવા દેવ આયુનો બંધ કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—
 'ગોયમા । નો નેરહયાઽયં પકરેતિ' હે ગૌતમ ! તેઓ નારકાયુનો બંધ કરતા
 નથી તથા તિર્યંચ આયુનો પણ તેઓ બંધ કરતા નથી મનુષ્ય આયુનો
 પણ તેઓ બંધ કરતા નથી. તથા દેવાયુનો પણ બંધ કરતા નથી કેમ કે—
 લેશ્યા રહિત અયોગી અને સિદ્ધજ હોય છે. તેથી તેઓને ચારે આયુ પૈકી
 કોઈપણ આયુનું બંધકપણું આવતું નથી કેમકે તેઓ તે ભવસિદ્ધિ

ન સમ્ભવતિ સિદ્ધિગમનયોગ્યત્વાત્ 'કળ્પપક્ષિલયા ણં મંતે ! જીવા અકિરિયાવાઈ કિં નેરહ્યાયયં પુચ્છા' કૃષ્ણપાક્ષિકાઃ સ્વલ્લ મદન્ત ! જીવા અક્રિયાવાદિનો નૈર-
યિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ અથવા તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ યદ્વા મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુ-
ર્વન્તિ દેવાયુર્વા પ્રકુર્વન્તીતિ પ્રશ્નઃ પૃચ્છયા સંગૃહ્યતે । મગવાનાહ—'ગોયમા'
ઇત્યાદિ, 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'નેરહ્યાયયં પિ પકરેતિ' નૈરયિકાયુષ્કમપિ
પ્રકુર્વન્તિ 'એવં ચઽવિહં પિ' એવં ચતુર્વિધમપિ આયુષ્પ્રકુર્વન્તિ નૈરયિકાયુષ્કં
પ્રકુર્વન્તિ તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ મનુષ્યાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ દેવાયુષ્ક-
મપિ પ્રકુર્વન્તિ કૃષ્ણપાક્ષિકતયા સિદ્ધિગમનસ્ય તદાનીમત્સંભવેન ચાતુર્ગતિક-
સંસારસ્યેવ સદ્ભાવાત્ । 'એવં અન્નાણિયવાઈ વિ વેણહ્યવાઈ વિ' એવમ્ અક્રિયા-

કર્ષો કિં યે તો સિદ્ધિ મેં જાને કે હી યોગ્ય હોતે હેં । 'કળ્પપક્ષિલયાણં
મંતે ! જીવા અકિરિયાવાઈ કિં નેરહ્યાયયં પુચ્છા' હે મદન્ત ! જો
કૃષ્ણપાક્ષિક જીવ અક્રિયાવાદી હોતે હેં વે કયા નૈરયિકાયુકા બન્ધ
કરતે હેં ? યા તિર્યગાયુ કા બન્ધ કરતે હેં ? યા મનુષ્યાયુકા બન્ધ કરતે
હેં ? યા દેવાયુકા બન્ધ કરતે હેં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્નશ્રી કરતે હેં—'ગોયમા !
નેરહ્યાયયં પિ પકરેતિ એવં ચઽવિહં પિ' હે ગૌતમ ! વે નૈરયિક
આયુકા બી બન્ધ કરતે હેં । તિર્યગાયુકા બી બન્ધ કરતે હેં । મનુષ્ય-
આયુકા બી બન્ધ કરતે હેં ઓર દેવાયુકા બી બન્ધ કરતે હેં । હસ પ્રકાર
યે ચારો આયુઓ કા બન્ધ કરતે હેં । કર્યોકી કૃષ્ણપાક્ષિક હોને સે હનમેં
સિદ્ધિગમન કી ઉસ સમય અસંભવતા રહતી હૈ અતઃહનમેં ચતુર્વિધ
સંસારકા હી સદ્ ભાવ પાયા જાતા હૈ । 'એવં અન્નાણિયવાઈ વિ વેણ-

ગતિમાં જ જવાને યોગ્ય હોય છે. 'કળ્પપક્ષિલયાણં મંતે ! જીવા અકિરિયાવાઈ
કિં નેરહ્યાયયં પુચ્છા' હે ભગવન્ જો કૃષ્ણપાક્ષિક જીવો અક્રિયાવાદી હોય
છે, તેઓશું નૈરયિક આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા તિર્યગ્ય આયુનો બંધ છે ?
અથવા મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા દેવ આયુનો બંધ કરે છે ? આ
પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રશ્નશ્રી કહે છે કે—'ગોયમા ! નેરહ્યાયયં પિ પકરેતિ એવં ચઽ-
વિહં પિ' હે ગૌતમ ! તેઓ નૈરયિક આયુનો પણ બંધ કરે છે, તિર્યગ્ય આયુનો
બંધ કરે છે. મનુષ્ય આયુનો પણ બંધ કરે છે. અને દેવ આયુનો પણ બંધ
કરે છે. આ રીતે તેઓ ચારે પ્રકારના આયુનો બંધ કરે છે. કેમ કે
કૃષ્ણપાક્ષિક હોવાથી તેઓમાં સિદ્ધિ ગમનની યોગ્યતાનો અભાવ રહે છે. તેથી
તેઓમાં ચારે પ્રકારના સંસારનો જ સદ્ભાવ રહે છે. 'એવં અન્નાણિયવાઈ વિ

वादि कृष्णपाक्षिकवदेव अज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च कृष्णपाक्षिका अपि जीवाः नारकायुस्तिर्यग्ग्योनिकायुर्मनुष्यायुर्देवायुरपि प्रकुर्वन्ति, तदानीं मोक्ष-गमनयोग्यताया अज्ञानेन चातुर्गतिकसंसारस्यैव जनकत्वात् । 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' शुक्लपाक्षिका जीवा यथा सलेइयाः सलेइयजीववदेव शुक्लपाक्षिकाः चतुर्वर्षि समवसरणेषु आयुर्वन्धं प्रकुर्वन्तीति भावः । 'सम्मदिट्ठीणं भंते ! जीवा किरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' सम्यग्दृष्टः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं कुर्वन्ति तिर्यग्ग्योनिकायुष्कं कुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं कुर्वन्ति देवायुष्कं वा कुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । मगवानाह- 'गोयसा' इत्यादि, 'गोयसा' हे गौतम ! 'नो नेरइयाउयं पकरंति' नो नैरकायु-

इयवाइ वि' इसी प्रकार से अज्ञानवादी कृष्णपाक्षिक जीव भी और वैनयिकवादी कृष्णपाक्षिक जीव भी अक्रियावादी कृष्णपाक्षिक के जैसे ही नारकायु, तिर्यगायु, मनुष्यायु और देवायु का बन्ध करते हैं । क्योंकि इस स्थिति में इनके मुक्ति में जाने की योग्यता नहीं होती है अतः इनमें चतुर्विध संसार में संसरण (परिभ्रमण) होने का ही सद्भाव पाया जाता है. 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' सलेइय जीव के जैसे ही चारों समवसरणों में शुक्लपाक्षिक जीव के आयु बन्ध कहना चाहिये । 'सम्मदिट्ठीणं भंते ! जीवा किरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' हे भदन्त ! क्रियावादी सम्यग्दृष्टि जीव नैरयिक आयु का बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुका बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायुका बन्ध करते हैं ? या देवायुका बन्ध करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री

वेणइयवाइ वि' ऐसे प्रमाणे अज्ञानवादी कृष्णपाक्षिक एवं वैनयिकवादी कृष्णपाक्षिक एवं पक्ष कृष्णपाक्षिकनी जेभज नारकायु, तिर्यगायु, मनुष्यायु, एवं देवायुनो अंध करे छे. केम के ते स्थितिमां तेज्जोने मुक्ति गमननी योग्यता छोटी नथी. तेथी तेज्जोमां यार प्रकारना संसारमां संसरण-परिभ्रमण छोवानो सद्भाव रहे छे. 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' देख्यावाणा एवना कथन प्रमाणे जे यारे समवसरणेषु मां शुक्लपाक्षिक एवने आयु अंध कडेयो जेधये.

'सम्मदिट्ठी ण भंते ! किं किरियावाइ किं नेरइयाउयं पुच्छा' हे भगवन् क्रियावादी सम्यग्दृष्टिवाणा एवो नैरयिक आयुनो अंध करे छे ? अथवा तिर्यग आयुनो अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुनो अंध करे छे ? अथवा देव आयुनो अंध करे छे ? या प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे हे गौतम !

ષ્કં પ્રકુર્વન્તિ 'નો તિરિક્ષલજોણિયાઉયં પકરેતિ' નો તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ કિન્તુ 'મણુસ્સાઉયં પકરેતિ દેવાઉયં પિ પકરેતિ' મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ દેવાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તીતિ માવઃ । 'મિચ્છાદિટ્ટી જહા ક્ષણપક્ષિવયા' મિથ્યાદષ્ટ-યોઽક્રિયાવાદિનો જીવાઃ ક્ષણપાક્ષિવદેવ-દેવનારકાયુરપિ કુર્વન્તિ તિર્યગ્યોનિ-કાયુરપિ કુર્વન્તિ મનુષ્યાયુરપિ કુર્વન્તિ, દેવાયુરપિ કુર્વન્તીતિ માવઃ । 'સમ્મા-મિચ્છાદિટ્ટોણં મંતે ! જીવા અજ્ઞાણિયવાઈ કિં નેરહ્યાઉયં૦' સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટયઃ, મિથ્રદષ્ટયો હિ અજ્ઞાનિકવાદિનો જીવાઃ કિં નારકાયુઃ પ્રકુર્વન્તિ યદ્વા તિર્યગ્યો-નિકાયુઃ પ્રકુર્વન્તિ દેવાયુ વા પ્રકુર્વન્તીતિ પક્કનઃ, ઉત્તરમાહ- 'જહા અલેસ્સા' યથા અલેશ્યાઃ અલેશ્યજીવવદેવ મિથ્રદષ્ટયોઽજ્ઞાનિકવાદિનો નો નારકાયુ ન

કહતે હૈં-હે ગૌતમ । વે નૈરથિક આયુકા બન્ધ નહીં કરતે હૈં, તિર્યગ્ચાયુ કા બન્ધ નહીં કરતે હૈં કિન્તુ મનુષ્યાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ઓર દેવાયુ-કા ઓ બન્ધ કરતે હૈં । 'મિચ્છાદિટ્ટી જહા ક્ષણપક્ષિવયા' અક્રિયાવાદી આદિ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ ક્ષણપાક્ષિક કે જૈસે નારકાયુકા ઓ બન્ધ કરતે હૈં, તિર્યગ્ચાયુકા ઓ બન્ધ કરતે હૈં, મનુષ્ય આયુકા ઓ બન્ધ કરતે હૈં ઓર દેવાયુકા ઓ બન્ધ કરતે હૈં । 'સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી ણં મંતે ! જીવા અજ્ઞાણિયવાઈ કિં નેરહ્યાઉયં૦' હે મદન્ત । અજ્ઞાનવાદી સમ્ય-ગ્મિથ્યાદષ્ટિ જીવ વ્ધા નરકાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? યા તિર્યગ્ચાયુષ્ક કા બન્ધ કરતે હૈં ? યા મનુષ્યાયુષ્ક કા બન્ધ કરતે હૈં ? યા દેવાયુકા વંધ કરતે હૈં ? હસકે ઉત્તર વૈં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં 'જહા અલેસ્સા' હે ગૌતમ ! અલેશ્ય જીવોં કે જૈસે અજ્ઞાનવાદી મિથ્રદષ્ટિ જીવ કિસી ઓ આયુકા

તેઓ નૈરથિક આયુનો બંધ કરતા નથી તિર્યગ્ચ આયુનો પણ બંધ કરતા નથી પરંતુ મનુષ્યના આયુનો બંધ કરે છે. અને દેવ આયુનો બંધ કરે છે. 'મિચ્છાદિટ્ટી જહા ક્ષણપક્ષિવયા' અક્રિયાવાદી મિથ્યાદષ્ટિ જીવો પણ ક્ષણપાક્ષિકના કથન પ્રમાણે નારક આયુનો પણ બંધ કરે છે તિર્યગ્ચ આયુનો પણ બંધ કરે છે. મનુષ્ય આયુનો પણ બંધ કરે છે. અને દેવ આયુનો પણ બંધ કરે છે. 'સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી ણં મંતે ! જીવા અજ્ઞાણિયવાઈ કિં નેરહ્યાઉયં૦' હે ભગવન્ અક્રિયાવાદી સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ જીવો શું નારકાયુનો બંધ કરે છે? અથવા તિર્યગ્ચ આયુનો બંધ કરે છે? અથવા મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે? અથવા દેવ આયુનો બંધ કરે છે? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે- 'જહા અલેસ્સા' હે ગૌતમ ! લેશ્યાવિનાના જીવોના કથન પ્રમાણે અજ્ઞાનવાદી મિથ્યાદષ્ટિ જીવો કોઈ પણ આયુનો બંધ કરતા

वा तिर्यग्योनिकायुर्न वा मनुष्यायुर्न वा देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्तीति मिश्रदृष्टि-
काळे सर्वायुषो बन्धाभाव एवेति । 'एवं वेणइयवाई वि' एवं मिश्रदृष्टिकाज्ञानिक-
वादिन इव मिश्रदृष्टिऋ वैनयिकवादिनोऽपि चतुर्विधान्यपि आयुषि न बध्नन्तीति ।
इतः परं क्रियावादि ज्ञानवादि सूत्राणि कथयति—ज्ञानिप्रभृतिषु क्रियावादातिरिक्त-
वादस्य विरुद्धत्वेनासंभवात् 'णाणी आभिणीवोहियनाणी य सुयनाणी य ओहि-
नाणी य जहा सम्मदिट्टी' ज्ञानिन आभिनिवोधिकज्ञानिनश्च श्रुतज्ञानिनश्च अवधि-
ज्ञानिनश्च यथा सम्भग्दृष्टयः सम्भग्दृष्टिवदेव इमे ज्ञानि प्रभृतयः न नारकायुः
प्रकुर्वन्ति न वा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति
देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति इति । 'मणपज्जवनाणी णं भंते । पुच्छा' मनःपर्यवज्ञानिनश्च

बंध नहीं करते हैं—न निरयायुका वे बंध करते हैं न तिर्यगायुका वे
बंध करते हैं, न मनुष्यायुका वे बंध करते हैं और न देवायुका वे बन्ध
करते हैं—क्यों कि इस अवस्था में किसी भी आयुका बंध नहीं होता
है । 'एवं वेणइयवाई वि' अज्ञानवादी मिश्रदृष्टि के जैसे मिश्रदृष्टिक
वैनयिकवादी भी चारों प्रकार की आयुका बंध नहीं करता है ।

अब यहां से आगे सूत्रकार क्रियावादी ज्ञानवादी के सूत्रों का
कथन करते हैं—क्यों की ज्ञानी आदिकों में क्रियावाद के अति-
रिक्तवाद की विरुद्ध होने से असंभवता है । 'णाणी आभिणि-
वोहियनाणी य सुयनाणी य ओहिनाणी य जहा सम्मदिट्टी'
सम्भग्दृष्टि जीव के जैसे ज्ञानी, आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुत-
ज्ञानी, अवधिज्ञानी ये सब मनुष्यायु और देवायुका बंध करते हैं
नरकायु और तिर्यगायुका बंध नहीं करते हैं । 'मणपज्जवनाणी णं
भंते ! पुच्छा' हे भदन्त ! मनःपर्यवज्ञानी क्या निरयिक आयुका बंध

नथी. तेज्जे नारक आयुने अंध करता नथी तिर्यग्य आयुने अंध करता
नथी. मनुष्य आयुने अंध करता नथी. अने देव आयुष्यने पण अंध
करता नथी. केम के—आ अवस्थाभां ओकपणु प्रकारनी आयुने अंध तेमने डोतो
नथी. 'एवं वेणइयवाई वि' अज्ञानवादी मिश्रदृष्टिवाणाना कथन प्रमाणे मिश्रदृष्टि
वैनयिकवादी पणु आदे प्रकारना आयुष्यने अंध करता नथी.

इसे सूत्रकार क्रियावादी, ज्ञानवादीयोंना संबंधमां कथन करे छे.—केमके
ज्ञानी विगोरेमां क्रियावाद शिवायना वादतुं विरुद्ध पणु डोवाधी असंभवपणु छे.
'णाणां आभिनिवोहियनाणी य सुयनाणी य ओहिनाणी य जहा सम्मदिट्टी'
सम्भग्दृष्टिवाणा एवना कथन प्रमाणे ज्ञानी. आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी,
अवधिज्ञानी आ अथा मनुष्य आयु अने देव आयुने अंध करे छे. नारक
आयु अने तिर्यग्य आयुने अंध करता नथी. 'मणपज्जवनाणी णं भंते ! पुच्छा'

खलु पृच्छा, मनःपर्यवज्ञानिनः खलु भदन्त ! जीवाः किं नारकायुष्कं कुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कं कुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं वा कुर्वन्ति देवायुष्कं वा कुर्वन्तीति पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो नैरह्याउयं पकरे’ति’ नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो तिरिक्ख०’ नो तिर्यग्यो-निकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो मणुस्स०’ नो मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु ‘देवा-उयं पकरे’ति’ देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति चतुर्विधायुष्मध्यात् मनःपर्यवज्ञानिनः केवलं देवायुरेव बध्नन्ति न तु नारकतिर्यग्योनिकमनुष्यायुषो बन्धका भवन्तीति भावः । ‘जइ देवाउयं पकरे’ति किं भवणवासि० पुच्छा’ यदि मनःपर्यवज्ञानिनो देवायुष्कं कुर्वन्ति तदा किं भवनवासि देवायुष्कं कुर्वन्ति वानव्यन्तरदेवायुष्कं वा कुर्वन्ति ज्योतिष्कदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति वैमानिकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘णो भवणवासि देवाउयं पकरे’ति’ नो भवनवासिदेवसम्बन्धि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘णो वाणमंतर०’

करते हैं ? या तिर्यगायुका बंध करते हैं ? या मनुष्यायुका बंध करते हैं ? या देवायुका बंध करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । नो नैरह्याउयं पकरे’ति नो तिरिक्ख०, नो मणुस्स०’ हे गौतम ! वे न नैरयिक आयुका बंध करते हैं, न तिर्यगायु का बंध करते हैं और न मनुष्यायुका बंध करते हैं । किन्तु ‘देवाउयं पकरे’ति’ देवायुका ही बंध करते हैं । ‘जइ देवाउयं पकरे’ति, किं भवनवासि० पुच्छा’ यदि मनःपर्यवज्ञानी देवायुका ही बंध करते हैं तो क्या वे भवनवासी देवायुका बंध करते हैं ? या वानव्यन्तर देवायुको बंध करते हैं ? या ज्योतिष्क देवायुका बंध करते हैं ? या वैमानिक देवायुका बंध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । हे गौतम ! ‘णो भव-

‘हे भगवन् मनःपर्यवज्ञानी शुं नैरयिक आयुनो अंध करे छे ? अथवा तिर्यग्य आयुनो अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुनो अंध करे छे ? अथवा देव आयुनो अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे—‘गोयमा । नो नैरह्याउयं पकरे’ति नो तिरिक्ख० नो मणुस्स०’ हे गौतम ! तेजो नैरयिक आयुनो अंध करता नथी, तथा तिर्यग्य आयुनो पणु अंध करता नथी मनुष्य आयुनो अंध करता नथी, परंतु ‘देवाउयं पकरे’ति’ देव आयुनो अंध करे छे, ‘जइ देवाउयं पकरे’ति, किं भवनवासि पुच्छा’ जे मनःपर्यवज्ञानी देव आयुनो अंध करे छे, तो शुं तेजो भवनवासी देव आयुनो अंध करे छे ? अथवा वानव्यन्तर देव आयुनो अंध करे छे ? अथवा ज्योतिष्क देव आयुनो अंध करे छे ? अथवा वैमानिक देव आयुनो अंध करे छे ? आ प्रश्नना

नो न वा वानव्यन्तरदेव संवन्धि आयुष्कं वध्नन्ति 'नो जोइसिय०' नो न वा ज्योतिष्कदेवायुर्वन्धान्त किन्तु 'वैमाणियदेवाउयं पकरे'ति' वैमानिकदेवसम्बन्धि आयुषो वन्धका मनःपर्यवज्ञानिनो भवन्तीति । 'केवलनाणी जहा अलेस्सा' केवलज्ञानिनो यथा अलेश्याः केवलज्ञानिनोऽलेश्यवद्द्व्यारुषेयाः, केवलज्ञानिनां न कस्यापि आयुषो वन्धो भवति, तेषामायुर्वन्धकारणीभूतस्य मोहनीयादेः कर्म बीजस्य केवलज्ञानाग्निना दग्धत्वात् दग्धबीजानां चाङ्कुरोत्पत्तेरभावादिति । रागादिवलेशसलिलसिक्तायां हि जीवभूमौ कर्मबीजानि अङ्कुराणि प्रसुवते, केवलज्ञाननिदाघतप्ताया मुषरमायायां जीवभूमौ तु कर्मबीजानि न संसाराङ्कुरं

णवासिदेवाउयं पकरे'ति' वे भवनवासी देवों की आयुका बंध नहीं करते हैं 'जो वाणमंतर' वानव्यन्तर देवों की आयुका बंध नहीं करते हैं 'नो जोइसिय०' न ज्योतिष्क देवों की आयुका बंध करते किन्तु—'वैमाणिय देवाउयं०' वे वैमानिक देवायुका बंध करते हैं । 'केवलनाणी जहा अलेस्सा' अलेश्य जीवों के जैसे केवलज्ञानी जीव किसी भी आयुका बंध नहीं करते हैं । क्योंकि उनका आयु कर्म बंध का कारण भूत जो मोहनीय आदि कर्म हैं वह केवलज्ञानरूप अग्नि के द्वारा दग्ध हो जाता है । जिस अंकुर का बीज दग्ध हो जाता है उससे फिर अंकुर उत्पन्न नहीं होता है । यह मोहनीयकर्म का बीज है । जब जीव रूप भूमि रागादिवलेश रूप जल से सिञ्चिन होती रहती है तब उसमें कर्म बीज रूप अंकुर उत्पन्न होते रहते हैं । और जब वही जीव रूपी भूमि केवलज्ञानरूपी निदाघ से तप्तायमान होती

उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा डे गौतम ! 'जो भवनवासि देवाउय पकरे'ति' तेज्ये भवनवासी देवेना आयुष्येनो अंध करता नथी. 'जो वाणमंतर' वानव्यन्तर देवेना आयुष्येनो अंध करता नथी. 'नो जोइसिय' ज्योतिष्क देवेना आयुष्येनो अंध करता नथी. परंतु 'वैमाणिय देवाउयं' तेज्ये वैमानिक देव आयुनेो अंध करे छे 'केवलनाणी जहा अलेस्सा' देश्या विनाना एवेना कथन प्रभाण्णु केवणज्ञानी एवेो कोइपण्णु आयुनेो अंध करता नथी केम के तेज्येनुं आयुष्य कर्मअंधना कारणभूत जे मोहनीय विगेरे कर्म छे, ते केवणज्ञानरूप अग्निद्वारा अणी ज्ञय छे. जे अंकुरना भी अणी ज्ञय छे, तेनाथी अंकुर उगता नथी. आ मोहनीय कर्मनुं भी छे. ज्यारे एव रूप भूमि राग विगेरे कलेश रूप पाणीथी सीयाती रडे छे, ल्यारे कर्म भीअ रूप अंकुर तेमां उत्पन्न थता रडे छे. अने ज्यारे ज्येअ एव रूपभूमि केवणज्ञानरूपी तापथी तपायमान थती उसर भूमिना जेवी अणी ज्ञय

जनयन्तीति भावः, 'अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया' अज्ञानिनो यावद् विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः अत्र यावत्पदेन मृत्युज्ञानि-श्रुताज्ञानिनोः सग्रहः तथा चाज्ञानिनो यावद् विभङ्गज्ञानिनश्च नारकायुरपि प्रकुर्वन्ति तिर्यग्यो-निकायुरपि प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुरपि प्रकुर्वन्ति देवायुरपि प्रकुर्वन्तीति भावः । 'सन्नासु चउसु वि जहा सल्लेस्सा' संज्ञासु चतसृष्वपि यथा सल्लेश्याः सल्लेश्यवदेव आहारादि चतुर्विधसंज्ञायुक्ता जीवा नारकायुष्कमपि कुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्क-मपि कुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि कुर्वन्ति देवायुष्कमपि कुर्वन्तीति भावः 'नो सन्नो-वउत्ता जहा मणपज्जवनाणी' नो संज्ञोपयुक्ता यथा मनःपर्यवज्ञानिनः मनःपर्यव-ज्ञानिवदेव नो संज्ञोपयुक्ता जीवा न नारकायुष्कं कुर्वन्ति नो वा तिर्यग्योनिकायुष्कं

હુઈ ઝબર ધૂમિકે જૈસી ઘન જાતી હૈ તવ ઉસમેં કર્મ રૂપી વીજ સંસાર રૂપ અંકુર કો ઉત્પન્ન નહીં કર પાતે હૈં । યહી હસ કથન કા ભાવ હૈ । 'અન્નાણી જાવ વિભંગનાણી જહા કણ્હપક્કિયા' યાવત્પદ ગૃહીત મત્ય-જ્ઞાની, શ્રુતાજ્ઞાની ઔર વિભંગજ્ઞાની કૃષ્ણપાક્ષિકા કે જૈસે નરકાયુ કાં ભી બંધ કરતે હૈ તિર્યગાયુ કાં ભી બંધ કરતે હૈં મનુષ્યાયુકાં ભી બંધ કરતે હૈં ઔર દેવાયુકાં ભી બંધ કરતે હૈં । 'સન્નાસુ ચઉસુ વિ જહા સલ્લેસ્સા' સલ્લેશ્ય જીવોં કે જૈસે ચારોં આહારાદિ સંજ્ઞાઓં સે યુક્ત હુએ જીવ નૈરયિક આયુકાં ભી બંધ કરતે હૈં તિર્યગાયુકાં ભી બંધ કરતે હૈં મનુષ્યાયુ કાં ભી બંધ કરતે હૈં ઔર દેવાયુ કાં ભી બંધ કરતે હૈં । 'નો સન્નોવઉત્તા જહા મણપજ્જવનાણી' નો સંજ્ઞોપયુક્ત જીવ મનઃપર્ય-વજ્ઞાનીકે જૈસે કેવલ એક વૈમાનિક દેવોં કી હી આયુકા બંધ કરતે

છે, ત્યારે તેમાં કર્મરૂપી બી સંસારરૂપ અંકુરની ઉત્પત્તિ કરી શકતા નથી. એજ આ કથનનો ભાવ છે 'અન્નાણી જાવ વિભંગનાણી જહા કણ્હપક્કિયા' યાવત્પદથી મતિ અજ્ઞાની, શ્રુતાઅજ્ઞાની, અને વિભંગજ્ઞાની, કૃષ્ણપાક્ષિકા કથન પ્રમાણે નરક આયુનો પણ બંધ કરે છે, તિર્યગ આયુનો પણ બંધ કરે છે. મનુષ્ય આયુનો પણ બંધ કરે છે, અને દેવ આયુનો પણ બંધ કરે છે. 'સન્નાસુ ચઉસુ વિ જહા સલ્લેસ્સા' લેશ્યાવાળા જીવોના કથન પ્રમાણે આહાર ભય મૈથુન અને પરિગ્રહ આદિ ચારે સંજ્ઞાથી યુક્ત થયેલા જીવો નૈરયિક આયુનો પણ બંધ કરે છે, તિર્યગ આયુનો પણ બંધ કરે છે, મનુષ્ય આયુનો પણ બંધ કરે છે, અને દેવ આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે. 'નો સન્નોવઉત્તા જહા મણપજ્જવનાણી' નો સંજ્ઞોપયોગવાળા જીવો, મનઃપર્યવ-જ્ઞાની, જીવના કથન પ્રમાણે કેવળ એક વૈમાનિક દેવોના આયુષ્યનો જ બંધ

कुर्वन्ति न वा मनुष्यायुष्कं कुर्वन्ति किन्तु वैमानिकदैवमात्रसम्बन्ध्यायुषो बन्धं कुर्वन्तीति भावः । 'सवेदगा जाव नपुंसगवेयगा जहा सलेस्सा' सवेदका यावत् नपुंसकवेदका यथा सलेश्याः सलेश्यजीवबदेव सवेदकाः पुरुषवेदकाः, स्त्रीवेदकाः नपुंसकवेदकाश्च नारकायुरपि कुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुरपि कुर्वन्ति मनुष्यायुरपि कुर्वन्ति देवायुरपि कुर्वन्तीति भावः । 'अवेदगा जहा अलेस्सा' अवेदकाः सामान्यतो वेदरहिता जीवाः अलेश्यजीवबदेव न नारकायुष्कं कुर्वन्ति न वा तिर्यग्योनिकायुष्कं कुर्वन्ति न वा मनुष्यायुष्कं कुर्वन्ति न वा देवायुष्कं वधन्तीति भावः । 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' सकषायिनो यावत् लोभकषायिनो यथा सलेश्याः यावत्पदेन क्रोधमानमायाकषायवतां ग्रहणं भवति तथा च सकषायिनो जीवाः क्रोधमानमायालोभकषायिणश्च चत्वार्यपि नारकतिर्यग्मनुष्यदेवायुषि कुर्वन्तीति भावः । 'अकसाई जहा अलेस्सा' अकषायिनो यथा अलेश्याः

हैं । न नैरयिकायु का वे बन्ध करते हैं, न तिर्यगायुका वे बन्ध करते हैं और मनुष्यायुका भी वे बन्ध नहीं करते हैं । 'सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा' सलेश्य जीवों के जैसे सवेदक जीव यावत् नपुंसकवेदक जीव नैरयिक आयुका भी बन्ध करते हैं, तिर्यगायुका भी बन्ध करते हैं, मनुष्यायुका भी बन्ध करते हैं और देवायुका भी बन्ध करते हैं । 'अवेदगा जहा अलेस्सा' अवेदक जीव अलेश्य जीवों के जैसे किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' सलेश्य जीवों के जैसे सकषायी जीव यावत् लोभकषायी जीव चारों आयुओं का बन्ध करता है । यहाँ यावत्पद से क्रोध कषायी, मानकषायी, और मायाकषायी' इन तीन पदों का ग्रहण हुआ है । 'अकसाई जहा अलेस्सा' अलेश्य जीवों के जैसे अकषायी

करे छे, तेओ नैरयिक आयुने अंध करता नथी, तिर्यग्य आयुने अंधकरता नथी, अने मनुष्य आयुने पण अंध करता नथी, 'सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा' जहा सलेस्सा' देश्यावाणा एवोना कथन प्रभाण्णे सवेदक एवो यावत् नपुंसक वेदवाणा एव नैरयिक आयुने पण अंध करे छे, तिर्यग्य आयुने पण अंध करे छे, मनुष्य आयुने पण अंध करे छे अने देव आयुने पण अंध करे छे, 'अवेदगा जहा अलेस्सा' अवेदक एव देश्या विनाना एवोना कथन प्रभाण्णे केअपण्ण आयुने अंध करता नथी, 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' देश्यावाणा एवोना कथन प्रभाण्णे कषायवाणा एवो यावत् क्रोध कषाय मानकषाय मायाकषाय अने दोलकषायवाणा एवो अरे प्रकारना आयुष्यने अंध करे छे, अहियां यावत्पदथी 'क्रोधकषायी, मानकषायी अने

अलेश्यजीवदेव कषायरहिता जीवाः न नारकायुष्कं कुर्वन्ति न वा तिर्यग्योनि-
 कायुष्कं कुर्वन्ति न वा मनुष्यायुष्कं कुर्वन्ति न वा देवायुष्कं कुर्वन्ति इति भावः।
 'सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा' सयोगिनो यावत् काययोगिनश्च यथा
 सलेश्याः, यावत्पदेन मनोयोगिनां वाग्योगिनां च संग्रहो भवति तथा च सामा-
 न्यतो योगवन्तो मनोयोगिनो वचोयोगिनः काययोगिनश्च सलेश्यजीववत्
 नारकायुष्कमपि कुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कमपि कुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि कुर्वन्ति
 देवायुष्कमपि कुर्वन्तीति भावः। 'अजोगी जहा अलेस्सा' अयोगिनः सामान्यतो
 योगरहिताः सिद्धाः केवलिन रते अलेश्यवदेव आयुषां बन्धना न भवन्तीति।
 'सागारोवउत्ता अनागारोवउत्ता य जहा सलेस्सा' साकारोपयोगयुक्ता अनाकारो-

जीव किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं। सजोगी जाव कायजोगी
 जहा सलेस्सा' सलेश्य जीवों के जैसे सयोगी यावत् काययोगी
 जीव चारों आयुषों का बन्ध करते हैं। यहां यावत्पद से
 मनोपयोगी और वाग्योगी इन दो का ग्रहण हुआ है। इस प्रकार
 सामान्य से योगवाले जीव और मनोयोगवाले जीव बचन योगवाले
 जीव और काययोगवाले जीव सलेश्य जीवों के जैसे नारक आयुका
 भी बन्ध करते हैं, तिर्यगायुष्क का भी मनुष्यायुष्क का भी और देवा-
 युष्क का भी बन्ध करते हैं। 'अजोगी जहा अलेस्सा' सामान्य से योग
 रहित सिद्ध जीव और केवली अलेश्य जीवों के जैसे किसी भी
 आयुका बन्ध नहीं करते हैं। 'सागारोवउत्ता अनागारोवउत्ता य जहा
 सलेस्सा' सलेश्य जीवों के जैसे साकारोपयोगयुक्त तथा अनाकारो-

भाया कषायवाणा आ त्रष्टु कषाये अडष्टु कराया छे 'अकसाई जहा
 अलेस्सा' देश्या विनाना लुवेना कथन प्रभाण्णे कषाय विनाना लुव केई
 पष्टु आयुने अंध करता नथी. 'सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा'
 देश्यावाणा लुवेना कथन प्रभाण्णे सयोगी यावत् काय योगवाणा लुवे
 यारे प्रकारना अ युने अंध करे छे. अडियां यावत्पदथी मनोयोगवाणा अने
 वचनयोगवाणाओ अडष्टु कराया छे. आ रीते सामान्यथी योगवाणा लुवे
 अने मनोयोगवाणा लुवे वचनयोगवाणा लुवे अने काययोगवाणा लुवे
 देश्यावाणा लुवेनी नेम नारक आयुष्यने पष्टु अंध करे छे. तिर्य्य आयु
 ष्यने पष्टु अंध करे छे. मनुष्य आयुष्यने पष्टु अंध करे छे, अने देव
 अ युष्यने पष्टु अंध करे छे 'अजोगी जहा अलेस्सा' सामान्यथी योगविनाना
 सिद्ध लुवे अने केवली अलेश्य लुवेना कथन प्रभाण्णे केईपष्टु आयुष्यने
 अंध करता नथी. 'सागारोवउत्ता अनागारोवउत्ता य जहा सलेस्सा' देश्यावाणा

पयोगयुक्ताश्च यथा सलेश्याः सलेश्वदेव साकारोपयोगयुक्ता स्तथा अनाकारो-
पयोगयुक्ताश्च नारकायुष्कमपि तिर्यग्योनिकायुष्कमपि मनुष्यायुष्कमपि देवा-
युष्कमपि कुर्वन्तीति भावः ॥सू० २॥

नारकदण्डके सूत्राण्याह—‘किरियावाई णं भंते’ इत्यादि,

मूलम्—किरियावाई णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पुच्छा,
गोयमा ! नो नेरइयाउयं नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति मणु-
स्साउयं पकरेंति नो देवाउयं पकरेंति अकिरियावाई णं भंते !
नेरइया पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं० तिरिक्खजोणियाउयं
पकरेंति मणुस्साउयं पि पकरेंति नो देवाउयं पकरेंति, । एवं अन्ना-
णियवाई वि, वेणइयवाई वि । सलेस्सा णं भंते ! नेरइया किरि-
यावाई किं नेरइयाउयं० एवं सव्वे वि नेरइया जे किरियावाई ते
मणुस्साउयं एगं पकरेंति, जे अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेण-
इयवाई ते सव्वट्ठाणैसु वि नो नेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्ख-
जोणियाउयं पि पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति नो देवाउयं
पकरेंति । नवरं सम्मामिच्छत्ते उवरिल्लेहिं दोहिं वि समोसरणेहिं
न किंषि वि पकरेंति जहेव जीवपए । एवं जाव थणियकुमारा
जहेव नेरइया । अकिरियावाई णं भंते ! पुढवीकाइया पुच्छा,
गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति । तिरिक्खजोणियाउयं० मणु-
स्साउयं पकरेंति, नो देवाउयं पकरेंति एवं अन्नाणियवाई वि ।
सलेस्सा णं भंते ! एवं जं जं पयं अरिथ पुढवीकाइया णं
तहिं तहिं मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु एवं च्चैव दुविहं आउयं

पयोगयुक्त जीव नारक आयुक्ता भी बन्ध करते हैं तिर्यगायुष्क का भी
बन्ध करते हैं, मनुष्यायुष्क का भी बन्ध करते हैं और देवायुष्क का भी
बन्ध करते हैं ॥२॥

शुभना कथन प्रमाणे साकारोपयोगवाणा अने अनाकारोपयोगवाणा एवे।
नारक आयुनेो पणु अंध करे छे, तिर्यग्य आयुष्यनेो पणु अंध करे छे,
मनुष्य आयुनेो पणु अंध करे छे अने देवायुनेो पणु अंध करे छे ॥सू०२॥

पकरेंति । नवरं तेउलेस्साए न किंपि पकरेंति । एवं आउक्काइयाण
 वि, एवं वणस्सइकाइयाण वि । तेउक्काइया वाउक्काइया
 सव्वट्टाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पक-
 रेंति तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति णो मणुस्साउयं णो देवाउयं
 पकरेंति । बेइंदियतेइंदियचउरिंदिया णं जहा पुढवीकाइया णं
 नवरं सम्मत्तनाणेसु न एकं पि आउयं पकरेंति । किरियावाई णं
 भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं नेरइयाउयं पकरेंति पुच्छा,
 गोयमा ! जहा मणपज्जवनाणी । अकिरियावाई अन्नाणियवाई
 वेणइयवाई य चउत्विहं पि पकरेंति । जहा ओहिया तथा
 सलेस्सा वि । कणहलेस्सा णं भंते ! किरियावाई पंचिंदियतिरि-
 क्खजोणिया किं नेरइयाउयं पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं
 पकरेंति नो तिरिक्खाउयं० नो मणुस्साउयं० नो देवाउयं पकरेंति,
 अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई चउत्विहं पि पकरेंति ।
 जहा कणहलेस्सा, एवं नीललेस्सा वि, काउलेस्सा वि । तेउ-
 लेस्सा जहा सलेस्सा । नवरं अकिरियावाई अन्नाणियवाई
 वेणइयवाई य नो नेरइयाउयं पकरेंति । देवाउयं पि पकरेंति ।
 तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेंति । मणुस्साउयं पि पकरेंति ।
 एवं पम्हलेस्सा वि एवं सुक्कलेस्सा वि भाणियव्वा । कण्हपक्खिया
 तिहिं समोसरणेहिं चउत्विहं पि आउं पकरेंति । सुक्कपक्खिया
 जहा सलेस्सा । सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवनाणी तहेव वेमाणि-
 याउयं पकरेंति । मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया । सम्मामिच्छा-
 दिट्ठी ण य एकमपि पकरेंति जहेव नेरइया । नाणी जाव
 ओहियनाणी जहा सम्मदिट्ठी । अन्नाणी जाव विभंगनाणी
 जहा कण्हपक्खिया । सेसा जाव अणागारोवउत्ता सव्वे जहा

सलेस्सा तहा चेव भाणियव्वा । जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणि-
याणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साण वि भाणियव्वा ।
नवरं मणपज्जवनाणी नो सन्नोवउत्ता य जहा सम्मदिट्ठी तिरि-
क्खजोणिया तहेव भाणियव्वा । अलेस्सा केवलनाणी अवेदगा
अकसाई अजोगिय, एए न एगं पि आउयं पकरेति, जहा
ओहिया जीवा, सेसं तहेव । वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया
जहा असुरकुमारा ॥सू० ३॥

छाया—क्रियावादिनः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छां
गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं
प्रकुर्वन्ति नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! नैरयिकाः पृच्छा,
गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं० तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि कुर्वन्ति
नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । एवमज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः
खलु भदन्त ! नैरयिकाः क्रियावादिनः किं नैरयिकायुष्कं० एवं सर्वेऽपि नैरयिका
ये क्रियावादिनस्ते मनुष्यायुष्कमेकं प्रकुर्वन्ति, ये अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवा-
दिनो वैनयिकवादिन स्ते सर्वस्थानेष्वपि नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति,
तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति, नो देवायुष्कं प्रकुर्व-
न्ति । नवरं सम्यग्मिथ्यात्विनः उपरितनाभ्यां द्वाभ्यामपि समवसरणाभ्यां न
किञ्चिदपि प्रकुर्वन्ति यथैव जीवषदे । एवं यावत् स्तनितकुमारा यथैव नैरयिकाः ।
अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! पृथिवीकायिकाः पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं
प्रकुर्वन्ति, तिर्यग्योनिकायुष्कं० मनुष्यायुष्कं० नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । एवम-
ज्ञानिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! एवं यत् यत् पदमस्ति पृथिवी-
कायिकानां तत्र तत्र मध्यमयो द्वयोः समवसरणयोरेवमेव द्विविधमायुष्कं प्रकु-
र्वन्ति । नवरं तेजोलेश्यायां न किमपि प्रकुर्वन्ति । एवमष्कायिकानामपि, वन-
स्पतिकायिकानामपि । तेजस्कायिकाः वायुकायिकाः सर्वस्थानेषु मध्यमयो द्वयोः
समवसरणयो न नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो मनु-
ष्यायुष्कं नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाणां यथा पृथिवी-
कायिकानाम् । नवरं सम्यक्त्वज्ञानेषु न एकमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति । क्रिया-
वादिनः खलु भदन्त ! पञ्चैन्द्रियतिर्यग्योनिकाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति,
पृच्छा, गौतम ! यथा मनःपर्यवज्ञानिनोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिक-

वादिनश्च चतुर्विधमपि प्रकुर्वन्ति । यथौघिका स्तथा सलेश्या अपि । कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! क्रियावादिनः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः किं नैरयिकायुष्कं पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो तिर्यगू० नो मनुष्यायुष्कं० नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्चतुर्विधमपि प्रकुर्वन्ति यथा कृष्णलेश्याः । एवं नीललेश्या अपि कापोतलेश्या अपि । तेजोलेश्या यथा सलेश्याः । नवरमक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति । एवं पद्मलेश्या अपि एवं शुकललेश्या अपि भणितव्याः । कृष्णपाक्षिका त्रिभिः समवसरणे श्रुतुर्विधमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति । शुक्लपाक्षिका यथा सलेश्याः । सम्यग्दृष्टयो यथा मनःपर्यवज्ञानिनः तथैव वैमानिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति । मिथ्यादृष्टयो यथा कृष्णपाक्षिकाः । सम्यग्मिथ्यादृष्टयो न चैकमपि प्रकुर्वन्ति यथैव नैरयिकाः । ज्ञानिनो यावदवधिज्ञानिनो यथा सम्यग्दृष्टयः । अज्ञानिनो यावद्विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः । शेषा यावदनाकारोपयुक्ताः सर्वे यथा सलेश्या स्तथैव भणितव्याः । यथा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां वक्तव्यता भणिता एवं मनुष्याणामपि भणितव्या । नवरं मनःपर्यवज्ञानिनो नो संज्ञोपयुक्ताश्च यथा सम्यग्दृष्टयः तिर्यग्योनिका स्तथैव भणितव्याः । अलेश्याः केवलज्ञानिनोऽवेदका अकपायिनोऽयोगिनश्चैते नैकमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति । यथा औघिका जीवाः, शेषं तथैव । वानव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका यथा असुरकुमाराः ॥सू० ३॥

टीका—‘किरियावाई णं भंते । नेरइया’ क्रियावादिनः खलु भदन्त ! नैरयिकाः ‘किं नेरइयाउयं पुच्छा’ किं नैरयिकायुष्कं नारकभवप्रयोजकमायुः प्रकुर्वन्ति अथवा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि,

नारकदण्डक खे लूत्र कथन

‘किरियावाई णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं’—इत्यादि

टीकार्थ—‘किरियावाई णं भंते ! नेरइया’ हे भदन्त ! क्रियावादी नैरयिक ‘किं नेरइयाउयं पुच्छा’ नारकभवके प्रयोजक आयुर्कर्म का बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुष्क का बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायुष्कका बन्ध

नारकदण्डक संभंधी सूत्रनुं कथन—

‘किरियावाई णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं’ इत्यादि

टीकार्थ—‘किरियावाई णं भंते ! नेरइया’ हे भगवन् क्रियावादी नैरयिक खे। ‘किं नेरइयाउयं पुच्छा’ नारक भव संभंधी आयुष्यनो षंध करे छे ? अथवा तिर्यग्य आयुष्यनो षंध करे छे ? अथवा मनुष्यनो आयुष्यनो षंध करे छे ?

‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो नेरइयाउयं०’ नो नैव नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो तिरिक्ख०’ नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘मणुस्साउयं पकरे’ति’ मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ नो-नैव देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति क्रियावादिनो नारका यद्देवायुर्नारकायु न प्रकुर्वन्ति तत् नारकभवस्वभावादेव यच्च तिर्यगायु न बध्नन्ति तत् क्रियावादस्वभावात्, केवलं मनुष्यायुरेव बध्नन्ति तथा स्वाभावादिति । ‘अकिरियावाई णं भंते ! नेरइया पुच्छा’ अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं नारकायुः प्रकुर्वन्ति यद्वा तिर्यगायुः प्रकुर्वन्ति अथवा मनुष्यायुः प्रकुर्वन्ति यद्वा देवायुः प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भग-

करते हैं ? या देवायुष्क का बन्ध करते हैं ? गौतमस्वामी के इस प्रश्न के उत्तरमें प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! नो नेरइयाउयं०, नो तिरिक्ख०’ क्रियावादी नैरयिक नैरयिक आयुष्क का बन्ध नहीं करते हैं, तिर्यगायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं किन्तु-‘मणुस्साउयं पकरे’ति’ मनुष्यायुष्क का बन्ध करते हैं । ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ देवायुष्क भी वे बन्ध नहीं करते हैं ! क्रियावादी नैरयिक जो नैरयिकायुष्क का और देवायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं उसमें कारण नारकभव का स्वभाव ही है । तथा जो तिर्यगायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं इसमें कारण उनकी क्रियावादिता का स्वभाव है । केवल वे मनुष्यायुष्क ही बन्ध करते हैं-क्यों कि इस स्थिति में इसी आयुष्क के बांधने का उनका स्वभाव हो जाता है । ‘अकिरियावाई णं भंते ! नेरइया पुच्छा’ हे भदन्त ! अक्रियावादी नैरयिक क्या नैरकायुष्क का बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुष्क का बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायुष्क का बन्ध करते हैं ?

अथवा देव आयुष्कने अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-‘गोयमा ! नो नेरइयाउयं० नो तिरिक्ख०’ क्रियावादी नैरयिके नैरयिक आयुष्कने अंध करतां नथी तथा तिर्यग्य आयुष्कने पणु अंध करता नथी परंतु ‘मणुस्साउयं पकरे’ति’ मनुष्य संअंधी आयुष्कने अंध करे छे ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ तेओ देव संअंधी आयुष्कने पणु अंध करता नथी तेनु कारण नारक लवने ते प्रकारने स्वभाव न छे, तथा ते तिर्यगायुष्कने तेओ अंध करता नथी तेनु कारण तेओना क्रियावादी पणुने स्वभाव न छे तेओ केवल मनुष्य आयुष्कने न अंध करे छे, केम के-आ स्थितिमां ओन आयुष्क अंधवाने तेमने स्वभाव थछणय छे, ‘अकिरियावाई णं भंते ! नेरइया पुच्छा’ हे लगवन् अक्रियावादी नैरयिके शु’ नैरयिक आयुष्कने अंध करे छे ? अथवा तिर्यग्य आयुष्कने अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुष्कने अंध करे छे ? अथवा देव आयुष्कने अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां

वानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो नेरइयाउयं०’ नो नैरयिकायुष्कम् अक्रियावादिनो नारकाः प्रकुर्वन्ति ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति’ तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘मणुस्साउयं पि पकरे’ति’ मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । ‘एवं अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि’ एवम्—अक्रियावादि नारकदेव अज्ञानिकवादिवैनयिकवादिनारका अपि न नारकदेवायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु तिर्यग्मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति इमे त्रयोऽ-क्रियावादिनः तिर्यग्मनुष्यायुषामेव कर्तारो भवन्ति न तु नारकदेवायुषां बन्धका भवन्तीति भावः । ‘सल्लेस्सा णं भंते ! नेरइया किरियावाई’ सल्लेश्याः खलु

या देवायुका बन्ध करते हैं? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—गोयमा ! नो नेरइयाउयं०, हे गौतम ! अक्रियावादी नैरयिक नैरयिकायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ देवायुष्क का बन्ध नहीं करते हैं, किन्तु ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति, मणुस्साउयं पि पकरे’ति’ तिर्यगायुष्क का बन्ध करते हैं और मनुष्यायुष्क का भी बन्ध करते हैं। ‘एवं अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि’ इसी प्रकार से अज्ञानिकवादी नैरयिक और वैनयिकवादी नैरयिक भी न नारकायु का बन्ध करते हैं और न देवायुका ही बन्ध करते हैं किन्तु ‘तिरिक्खाउयं पकरे’ति मणुस्साउयं पि पकरे’ति’ तिर्यगायु का बन्ध करते हैं और मनुष्यायु का भी बन्ध करते हैं। इस प्रकार ये अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी नारक तिर्यग्मनुष्य आयुका ही बन्ध करने वाले होते हैं, नारक देवायुका नहीं। ‘सल्लेस्सा णं भंते ! नेरइया

प्रभुश्री ठडे छे डे—‘गोयमा ! नो नेरइयाउयं’ डे गौतम ! अक्रियावादी नैरयिक नैरयिकना आयुष्येनो अंध करता नथी नो देवाउयं पकरे’ति’ देव संअंधी आयुष्येनो अंध करता नथी. परंतु ‘तिरिक्खजोणियाउयं पकरे’ति मणुस्साउयं पकरे’ति’ तिर्यंथ आयुष्येनो अंध करे छे, अने मनुष्य आयुने पणु अंध करे छे. ‘एव अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि’ अथ प्रमाणे अज्ञानवादी नैरयिक अने वैनयिकवादी नैरयिके पणु नारक आयुने अंध करता नथी अने देव आयुने पणु अंध करता नथी परंतु तेयो ‘तिरिक्खाउयं पकरे’ति मणुस्साउयं पि पकरे’ति’ तिर्यंथ आयुष्येनो अंध करे छे, अने मनुष्य आयुने पणु अंध करे छे. आ रीते आ अक्रियावादी, अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी नारके तिर्यंथ अने मनुष्येना आयुनेअ अंध करवावाणा डोय छे नारक अने देव आयुने अंध करवावाणा डोता नथी.

‘सल्लेस्साणं भंते ! नेरइया किरियावाई’ डे लगवन् ७ नैरयिके देश्या-

भदन्त ! नैरयिकाः क्रियावादिनः 'किं नेरइयाउयं०' किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्तीति पश्नः । उत्तरमाह—'एवं सव्वे वि' इत्यादिना, 'एवं सव्वे वि नेरइया जे किरियावाई ते मणुस्साउयं एगं पकरेति' एवं सर्वेऽपि नैरयिका ये क्रियावादिन स्ते एकमेव मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति क्रियावादिनां सर्वेषामेव नारकाणां क्रियावादस्वभावादेकस्यैव मनुष्यायुष्कस्य बन्धो भवति, नेतरायुषः । तत्र 'जे अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई ते सव्वट्टाणेसु वि नो नेरइयाउयं पकरेति' ये अक्रियावादिनो नारका अज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च ते इमे प्रयः सर्वस्थानेषु लेश्यादि सर्वद्वारेष्वपि नो—नैव कथमपि नारकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तथा स्वभावत्वात्, किन्तु 'तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेति मणुस्साउयं पि पकरेति' तिर्यग्योनिकायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति तथा मनुष्यायुष्कमपि प्रकुर्वन्ति 'नो

किरियावाई' हे भदन्त ! जो नैरयिक सलेश्य हैं और क्रियावादी हैं—वे 'किं नेरइयाउयं०' क्या नैरयिकायु का बन्ध करते हैं ? अथवा तिर्यगायुका बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायु का बन्ध करते हैं ? या देवायुका बन्ध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं सव्वे वि नेरइया जे किरियावाई ते मणुस्साउयं एगं पकरेति' इस प्रकार समस्त नैरयिक जो क्रियावादी हैं वे एक मनुष्यायु के ही बन्धक होते हैं, शेष तीन आयुओं के नहीं । क्यों कि क्रियावादिता में ऐसा ही स्वभाव होता है कि इसमें एक मनुष्यायु का ही बन्ध होता है । तथा—जो अक्रियावादी, अज्ञानवादी और वैनयिकवादी नारक हैं वे समस्त स्थानों में—लेश्यादिक समस्त द्वारों में—भी किसी प्रकार से नारकायुष्क का बन्ध

वाणा डोय छे. अने क्रियावादी डोय छे, तेओ 'किं नेरइयाउयं० शु' नैरयिक आयुने। अंध करे छे ? अथवा तिर्य'अ आयुने। अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुने। अंध करे छे ? अथवा देव आयुने। अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—'एवं सव्वे नेरइया जे किरियावाई ते मणुस्साउयं एगं पकरेति' आ रीते सधणा नैरयिके के जे क्रियावादी छे, तेओ अके मनुष्य आयुने। अंध करनारा डोय छे. आकीना त्रलु आयुने। अंध करता नथी. केम के क्रियावादी पणुमां ओ प्रभाणेने। स्वभाव डोय छे. के तेमां मनुष्य आयुने। अंध थाय छे. तथा जेओ अक्रियावादी. अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी नारके छे तेओ अथा जे स्थानोमां लेश्या विगेरे सधणा दोरोमां पणु केछि पणु रीते नारक आयुष्यने। अंध करता नथी. परंतु तिर्य'अ आयुने। अने मनुष्य आयुने। अंध करे छे. देवायुने। पणु अंध

‘देवायुं पकरे’ति’ नो नैव देवसम्बन्धि आयुर्वन्धं कुर्वन्तीति । ‘नवरं सम्मामिच्छते उवरिल्लेहिं दोहिं वि समोसरणेहिं’ नवरं सम्यग्मिथ्यात्विनो मिश्रदृष्टयः उपरितनाभ्यामज्ञानिक वैनयिकवादिखाभ्यां द्वाभ्यामपि समवसरणाभ्याम् ‘न किंचि वि पकरे’ति’ न किमपि आयुः प्रकुर्वन्ति ‘जहेव जीवपए’ यथैव जीवपदे सम्यग्मिथ्यादृष्टिनारकाणां द्वे एवान्तिथे समवसरणे अज्ञानिकवादिनश्च वैनयिकवादिनश्चेत्याकारके भवतः तेषां चायुर्वन्धो न भवत्येव गुणस्थानकस्वभावादत्स्ते न किमपि आयुः प्रकुर्वन्तीति भावः मिश्रदृष्टेः क्रियावादाक्रियावादयोरभावात् । ‘एवं जाव थणियकुमारा जहा नेरइया’ एवं यावत्स्तनितकुमारा यथा नैरयिकाः नैरयिकवदेव असुरकुमारादारभ्य स्तनितकुमारपर्यन्ता जीवा नारकवदेव समवसरणविषये ज्ञातव्या इति । ‘अकिरियावाइ णं भंते । पुढवीकाइया पुच्छा’

नहीं करते हैं—किन्तु तिर्यगायु का एवं मनुष्यायु का ही बन्ध करते हैं, देवायु का भी बन्ध नहीं करते हैं । ‘नवरं सम्मामिच्छते उवरिल्ले दोहिं वि समोसरणेहिं’ परन्तु जो सम्यग्मिथ्यात्वी नारक हैं और जो अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी हैं वे किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । ‘जहेव जीव पए’ जैसा कि जीव पद में सम्यग्मिथ्याके दो ही अन्तिम समवसरण अज्ञानवादी और वैनयिकवादी ये दो समवसरण होते हैं और उनमें आयुबन्ध नहीं होता है । क्यों की इस गुणस्थान का—तृतीय गुणस्थान का—ऐसा ही स्वभाव होता है— इस लिये किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । मिश्रदृष्टिमें न क्रियावादिता होती है और न अक्रियावादिता होती है । ‘एवं जाव थणियकुमारा जहेव नेरइया’ असुरकुमार से लेकर स्तनितकुमार तक के जीव नैरयिकों के जैसे ही समवसरण के विषय में ज्ञातव्य है ।

करता नहीं. ‘नवरं सम्मामिच्छते उवरिल्ले दोहिं वि समोसरणेहिं’ परंतु जेओ सम्यग्मिथ्यावाणा नारको छे, तेओ तथा अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी छे तेओ कोइ पणु आयुने अंध करता नहीं ‘जहेव जीवपए’ जे प्रभाणु शुव पदमां सम्यग्मिथ्यादृष्टिवाणा नारकोने छेला जेअ समवसरणु ओटवे के अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी आ जेअ समवसरणु डोय छे. तेओने आयु अंध होतो नहीं. जेओ जे तेमने स्वभाव डोय छे, तेथी कोइ पणु आयुने तेओ अंध करता नहीं. केअ के—आ त्रीण शुषु स्थानने जेओ जे स्वभाव डोय छे. तेथी तेओ कोइपणु आयुने अंध करता नहीं. मिश्रदृष्टिवाणाओमां क्रियावादीपणुं पणु डोतु नहीं. तथा अक्रियावादिपणुं पणु डोतुं नहीं. ‘एवं जाव थणियकुमारा जहा नेरइया’ जेअ धंन्द्रियवाणाथी लधं ने स्तनितकुमार सुधीना जेओ संधी नैरयिकेना कथन प्रभाणु जे तेओनुं समवसरणु कहेल छे.

अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! पृथिवीकायिका जीवाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं वा प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो नैरइयाउयं पकरे’ति नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अक्रियावादिनः पृथिवीकायिकाः किन्तु ‘तिरिक्त्वजोणियाउयं० मणुस्साउयं पकरे’ति तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति तथा मनुष्यायुष्कं च प्रकुर्वन्ति ‘नो देवाउयं पकरे’ति नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, अक्रियावादिनां पृथिवीकायिकजीवानां द्वे एव तिर्यग्मनुष्यायुषी भवतो न तु नारकदेवायुष्कौ भवत इति । ‘एवं अन्नाणियवाइ वि’ एवमक्रियावादिनः पृथिवीकायिकवदेव अज्ञानिकवादि पृथिवीकायिका अपि नो

‘अक्रियावाइ णं भंते ! पुढवीकाइया पुच्छा’ हे भदन्त ! अक्रियावादी पृथिवीकायिक जीव कथा नैरयिक आयुका बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुका बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायुका बन्ध करते हैं ? या देवायुका बन्ध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! नो नैरइयाउयं पकरे’ति हे गौतम ! अक्रियावादी पृथिवीकायिक जीव नैरयिक आयुका बन्ध नहीं करते हैं किन्तु—तिर्यगायु का बन्ध करते हैं, मनुष्यायु का बन्ध करते हैं, ‘नो देवाउयं पकरे’ति पर देवायुका भी वे बन्ध नहीं करते हैं । इस प्रकार अक्रियावादी पृथिवीकायिक जीवों के तिर्यगायु और मनुष्यायु इन दो आयुओं का ही बन्ध होता है नैरयिक और देवायुका बन्ध नहीं होता है । ‘एवं अन्नाणियवाइ वि’ अज्ञानिकवादी पृथिवीकायिक जीव अक्रियावादी पृथिवीकायिक जीव के जैसे ही

‘अक्रियावाइ णं भंते ! पुढवीकाइया पुच्छा’ डेभगवन् अक्रियावादी पृथिवीकायिक एव शुं नैरयिक आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा तिर्यग्य आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे ? अथवा देव आयुष्येनो अंध करे छे ? आप्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे—‘गोयमा ! नो नैरइयाउयं पकरे’ति डे गौतम ! अक्रियावादी पृथिवीकायिक एव नैरयिक आयुष्येनो अंध करता नथी. परंतु तिर्यग्य आयुष्येनो अंध करे छे, अने मनुष्य आयुष्येनो अंध करे छे. ‘नो देवाउयं पकरे’ति परंतु तेअो देव आयुष्येनो पणु अंध करता नथी. आ रीते अक्रियावादी पृथिवीकायिक एवोने तिर्यग्य आयु अने मनुष्य आयु आ अे आयुष्येनो अंध डोय छे तेअोने नैरयिक अने देव आयुष्येनो अंध डोतो नथी. ‘एवं अन्नाणियवाइ वि’ अज्ञानवादी पृथिवीकायिक एव, अक्रियावादी पृथिवीकायिक एवना कथन प्रभाअे अ नारक आयु अने देव आयुष्येनो अंध करता नथी. परंतु तिर्यग्य आयु अने

નારકાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ ન વા દેવાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ કિન્તુ તિર્યગ્યોનિકાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ તથા મનુષ્યાયુક્તમપિ પ્રકુર્વન્તીતિ ભાવઃ । ‘સલેસ્સા ણં મંતે ।૦’ સલેશ્યાઃ સ્વહ ભદન્ત ! પૃથિવીકાયિકાઃ કિં નૈરયિકાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ તિર્યગ્યોનિકાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ મનુષ્યાયુક્તં પ્રકુર્વન્તિ દેવાયુક્તં વા પ્રકુર્વન્તીતિ પ્રશ્નઃ, મગવાનાહ- ‘એવં જં જં પયં અત્થિ પુઠ્ઠવીકાઈયાણં’ એવં યત્ યત્ પદં-લેશ્યાદિરૂપદ્વારં પદ્-વિંશતિતમશતકગતપ્રથમોદેશકસ્થં પૃથિવીકાયિકજીવાનામ્ અસ્તિ ‘તર્હિ તર્હિ મજ્જિમેસુ દોસુ સમોસરણેસુ’ તત્ર તત્ર પદેષુ મધ્યમયો દ્વયોઃ અક્રિયાવાદજ્ઞાનિક-વાદિરૂપયોઃ સમવસરણયોઃ ‘એવં ચેવ દુવિહં આઁયં પકરે’તિ’ એવમેવ ઉપરિદર્શિત પ્રકારેણૈવ દ્વિવિધમ્-દ્વિપ્રકારમ્ આયુક્તમ્ તિર્યગ્યોનિકસમ્બન્ધિ મનુષ્યયોનિસમ્બન્ધિ ચેતિ આયુક્તદ્વયમેવ પ્રકુર્વન્તિ ન તુ નારકાયુક્તં દેવાયુક્તં વા પ્રકુર્વન્તીતિ । ‘નવરં તેડલેસ્સાએ ન કિંપિ પકરે’તિ’ નવરમ્-કેવલં વિશેષ એતાવાનેવ યત્ તેજો-

નારકાયુ ઓર દેવાયુ કા બન્ધ નહીં કરતે હૈં કિન્તુ તિર્યગાયુ ઓર મનુષ્યાયુ કા હી બન્ધ કરતે હૈં । અર્થાત્ હન આયુઓં મેં સે હી કિસી એક આયુકા બન્ધ કરતે હૈં । ‘સલેસ્સા ણં મંતે !’ હે ભદન્ત ! સલેશ્ય પૃથિવીકાયિક જીવ કયા નૈરયિક આયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? યા તિર્યગાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? યા મનુષ્યઆયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? યા દેવાયુકા બન્ધ કરતે હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં-‘એવં જં જં પયં અત્થિ પુઠ્ઠવીકાઈયાણં’ હે ગૌતમ ! પૃથિવીકાયિક જીવ મેં જો-જો લેશ્યાદિ રૂપ પદ સંભવિત હોં, ડલ-ડન પદોં મેં વર્તમાન પૃથિવીકાયિક જીવોં કે અક્રિયાવાદી ઓર અજ્ઞાનવાદી ચે દો હી સમવસરણ હોતે હૈં-સો હન દોનોં સમવસરણોં મેં પૂવોંક્ત અનુસાર મનુષ્યાયુ ઓર તિર્ય-શ્ચાયુકા બન્ધ હી ડન પૃથિવીકાયિક જીવોં કે હોતા હૈં નારકાયુક્ત

મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે. અર્થાત્ આ બે આયુ પૈકી કોઈ એક આયુનો બંધ કરે છે. ‘સલેસ્સા ણં મંતે !’ હે ભગવન્ લેશ્યાવાળા પૃથ્વીકાયિક ભવો શું નૈરયિક આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા તિર્યંચ આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે ? અથવા દેવ આયુનો બંધ કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘એવં જં જં પયં અત્થિ પુઠ્ઠવીકાઈયાણં’ હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાયિક ભવોમાં લેશ્યા વિગેરે પ્રકારથી જે જે પદો સંભવિત હોય તે તે પદોમાં રહેનારા પૃથ્વીકાયિક ભવોને અક્રિયાવાદી અને અજ્ઞાનવાદી આ બેજ સમવસરણ હોય છે. તે આ બંને સમવસરણોમાં પહેલાં કદા પ્રમાણે મનુષ્ય આયુ અને તિર્યંચ આયુનો બંધ જ તે પૃથ્વીકાયિક ભવોને હોય છે. તેઓ નારક આયુ અને દેવ આયુને બંધ કરતા નથી.

लेश्यायां न किमपि आयुर्वन्धं प्रकुर्वन्ति पृथिवीकायिकजीवेषु देवोत्पत्तित्वेन अपर्याप्तावस्थायामेव तेजोलेश्या भवति, तत्सत्तायां नैवायुषो बन्धः, तद्विगमे एव आयुषो बन्धसद्भावात् । 'एवं आउक्काइयाण वि वणस्सइकाइयाण वि' एवं पृथिवीकायिकवदेवाऽष्कायिकानां वनस्पतिकायिकानां च द्वयानाम् अक्रियावाध-ज्ञानिकवादि समवसरणयो र्मध्ये यत् यत् पदं भवति तस्मिन् तस्मिन् पदे एव द्विपकारकं तिर्यग्योनिकसम्बन्धि मनुष्यभवसम्बन्धि चायु भवति एष्वपि पृथि-वीकायिकवदेवोत्पत्तित्वेन अपर्याप्तावस्थायामेव तेजोलेश्या भवति, तेजोलेश्यायां च नायुषो बन्धो भवतीत्यादिकं सर्वं पृथिवीकायिकवदेव ज्ञातव्यमिति भावः ।

और देवायुष्क का बन्ध नहीं होता है । 'नवरं तेजलेस्साए न किं पि पकरेति' परंतु तेजोलेश्या पद में वर्तमान पृथिवीकायिक जीवों के किसी भी आयुका बन्ध नहीं होता है । पृथिवीकायिकों के अपर्याप्ता-वस्था में ही इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण होने के पहिले तेजोलेश्या होती है, क्यों कि पृथिवीकायिक जीवों में देवों की उत्पत्ति हो सकने से वहां अपर्याप्तावस्था में तेजोलेश्या कही गई है । तेजोलेश्या की सत्ता में आयुका बंध नहीं होता है । तेजोलेश्या के चले जाने पर ही आयुका बंध होता है । 'एवं आउक्काइयाण वि वणस्सइकाइयाण वि' पृथिवीकायिक जीव के जैसे ही अपृकायिकों के वनस्पतिकायिकों के अक्रियावादी और अज्ञानिकवादी इन दो समवसरणों में जो जो पद संभवित हो उन-उन पदों में तिर्यगायु और मनुष्यायु इन दो आयुओं का ही उनके बंध होता है, अन्य आयुओं का नहीं इनमें भी पृथिवीकायिकों

'नवरं तेजलेस्साए न किं पि पकरेति' परंतु तेजोलेश्यावाणा पदमां रडेनारा पृथ्वीकायिक लुवने केअपिणु आयुने अंध थतो नथी. पृथ्वीकायिकेने अपर्याप्त अवस्थामां न इन्द्रिय पर्याप्त पूरी थया पडेलां तेजोलेश्या डोय छे. केअडे पृथ्वी-कायिक लुवनां देवानी उत्पत्ती थती डोवाथी लां अपर्याप्त अवस्थामां तेजो-लेश्या कडी छे. तेजोलेश्यानी सत्तामां आयुने अंध डोतो नथी. तेजो-लेश्याना नवाथीन आयुने अंध थाय छे. 'एवं आउक्काइयाण वि वणस्सइ काइयाण वि' लेश्यावाणा पृथ्वीकायिक लुवना कथन प्रभाणु न लेश्यावाणा अपृकायिकेने, लेश्यावाणा वनस्पतिकायिकेने अक्रियावादी अने अज्ञानवादी आ षे समवसरणुमां न न पदो संभवित डोय ते ते पदोमां तिर्यग्य आयु अने मनुष्य आयु आ षे आयुष्यने न अंध डोय छे. थीन षे आयुने अंध डोतो नथी. तेनुं कारणु पणु अेन छे डे-आमां पणु देवानी

अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनश्च अप्कायिकवनस्पतिकायिका द्विप्रकारकमेव आयुष्कं बध्नन्तीति भावः । 'तेउकाइया वाउकाइया सव्वट्टाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पकरे'ति' तेजस्कायिका वायुकायिकाश्च सर्वस्थानेषु सर्वेष्वेव लेश्यादिद्वारेषु मध्यमयोर्द्वयोःसमवसरणयोः अक्रियावाद्यज्ञानिकवादि-रूपयोः नो नारकभवसम्बन्धि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति । किन्तु 'तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' तिर्यग्गोणिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, 'णो मणुस्साउयं०' नो मनुष्य सम्बन्धि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति 'नो देवाउयं पकरे'ति' नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति तेजस्कायिक

के जैसे देवों की उत्पत्ति हो सकते से अपर्याप्तवस्था में ही तेजो-लेश्या का सद्भाव रहता है । तेजोलेश्या, के सद्भाव में आयुका बंध नहीं होता है इत्यादि सब कथन पृथिवीकायिक के जैसे पहां समझना चाहिये । अक्रियावादी और अज्ञानिकवादी अप्कायिक एवं वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारकी ही आयुका बंध करते हैं यही कहने का तात्पर्य है, 'तेउकाइया वाउकाइया सव्वट्टाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पकरे'ति' तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव लेश्यावादि सब स्थानों में अक्रियावादी रूप और अज्ञानिकवादी रूप समवसरणवाले होते हुए नारक भव सम्बन्धि आयु कर्म का बंध नहीं करते हैं किन्तु वे 'तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' तिर्यग्गोणिका ही बंध करते हैं । 'णो मणुस्साउयं नो देवाउयं पकरे'ति' मनुष्यायु का बंध नहीं करते हैं और न देवायु का बंध करते हैं ।

उत्पत्ती होवाथी अपर्याप्त अवस्थामा तेजोलेश्यानो सद्भाव होय छे. तेजोलेश्याना सद्भावमां आयुनो बंध होतो नथी. विगेरे तमाम कथन पृथ्वीकायिकना कथन प्रमाणे अहियां समजनुं अक्रियावादी अने अज्ञानवादी अप्कायिक अने वनस्पतिकायिक एव जे प्रकारनां आयुष्यनो न बंध करे छे. ओन आ कथननुं तात्पर्य कल्लुं छे.

'तेउकाइया वाउकाइया सव्वट्टाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पकरे'ति' तेजस्कायिक अने वायुकायिक लेश्या विगेरे सधना स्थानोमां अक्रियावादीपणुं अने अज्ञानवादीपणुंनो समवसरणवाणा थधने नारक भव संणंधी आयुकर्मनो बंध करता नथी. तथा देव आयुनो पणु बंध करता नथी. परंतु 'तिरिक्खजोणियाउयं पकरे'ति' तिर्यग्गोणिका आयुनो न बंध करे छे. 'णो मणुस्साउयं नो देवाउयं पकरे'ति' मनुष्य आयुनो बंध करता नथी. तथा देव आयुनो पणु बंध करता नथी. कडेवानुं तात्पर्य ओ छे के

वायुकायिकजीवानां सर्वत्र पदेषु एकप्रकारकतिर्यग्वायुष एव बन्धनं भवति नान्या-
युष इति भावः । 'वेह्दियतेह्दियचउरिदियाणं जहा पुढविकाइयाणं' द्वीन्द्रिय-
त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियजीवानामायुर्वन्धो यथा पृथिवीकायिकानां प्रदर्शित स्तथैव
ज्ञातव्यः द्वीन्द्रिय यावत् चतुरिन्द्रियाणां पृथिवीकायिकवदेव तिर्यग्योनिकायुष्कस्य
मनुष्यभवसम्बन्ध्यायुष्कस्य च बन्धनं भवति न तु इमे नैरयिकायुष्कं कुर्वन्ति न वा
देवायुष्कमेव कुर्वन्तीति भावः । 'नवरं सम्प्रत्तनाणेषु न एकं पि आउयं पकरेति'
नवरं केवलमेतदेव वैलक्षण्यं यत् सम्यक्त्वज्ञानेषु सम्यक्त्वपदे ज्ञानपदे चेमे द्वीन्द्रिय
यावत् चतुरिन्द्रिया जीवा न एकमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति, द्वीन्द्रियादि चतुरिन्द्रि-
यान्तजीवानां सास्वादनभावेन अपर्याप्तावस्थायासेव सम्यक्त्वं तथा ज्ञानं च भवति
तत्कालस्थाल्पत्वान्न कस्यापि आयुषो बन्धो भवतीति । 'किरियावाई णं भंते !'

तात्पर्य कहने का यही है कि तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों के
सर्वत्र पदों में एक प्रकार के तिर्यग्वायु का ही बंध होता है, अन्य
आयुषों का नहीं । 'वेह्दियतेह्दिय चउरिदियाणं जहा पुढविकाइयाणं'
दो इन्द्रिय, तेह्दिय चौह्दिय जीवों के पृथिवीकायिक जीवों के
जैसे तिर्यग्योनिक आयुष्क का और मनुष्य भव सम्बन्ध्यायुष्क का बंध
होता है । नरकायु का और देवायु का इनके बंध नहीं होता है ।
'नवरं सम्प्रत्तनाणेषु न एकं पि आउयं पकरेति' परंतु यहाँ विशेषता
इतनी सी ही है कि सम्यक्त्व पद में और ज्ञान पद में ये द्वीन्द्रिय से
लेकर चौह्दिय तक के जीव एक भी आयुका बंध नहीं करते हैं, क्यों
कि इनके सम्यक्त्व और ज्ञान सास्वादन भाव से अपर्याप्तावस्था में ही
होता है । अतः अपर्याप्तावस्था का काल अत्यल्प होने से किसी भी
आयुका बंध इनके अक्रियावादी और अजानिकवादी रूप हालत में

तेजस्कायिक अने वायुकायिक ज्वेने सधणा पढोमा ज्येक प्रकारता तिर्यग्
आयुनेज्ज षध डोय छे, ते शिवायता भीज्ज आयुज्जोने षध थते
नथी. 'वेह्दिय तेह्दिय चउरिदियाणं जहा पुढविकाइयाणं' जे ह्दियवाणा
त्रषु ह्दियवाणा, यार ह्दियवाणा पृथ्वीकायिक ज्वेने पृथ्वीकायिक
ज्वेना कथन प्रमाणे तिर्यग्योनिक आयुष्यने अने मनुष्य संषधी आयुने
षध थाय छे. नारक आयुने अने देव आयुने षध तेज्जोने डोतो नथी.
'नवरं सम्प्रत्तनाणेषु न एकं पि आउयं पकरेति' परंतु आ कथनमां विशेषप्रल्लं
जे छे डे-सम्यक्त्व पदमां अने ज्ञानपदमां आ जे ह्दियवाणाधी लध ने
यारे ह्दियवाणा सुधीना ज्वे ज्येक पल्लु आयुने षध करता नथी. डेभडे
तेज्जोने सम्यक्त्व अने ज्ञान सास्वादन लावथी अपर्याप्त अवस्थामां ज

क्रियावादिनः खलु भदन्त ! 'पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया' पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका जीवाः 'किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वतीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'जहा मणपज्जवणाणी' यथा मनःपर्यवज्ञानिनः मनःपर्यवज्ञानिवदेव क्रियावादि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः न नारकतिर्यग्योनिकमनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति किन्तु केवलं देवायुष्कमेव प्रकुर्वन्तीति भावः । 'अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई य चउव्विहं पि पकरे'ति' अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका नारकायुष्कं तिर्यग्योनिकायुष्कं मनुष्यायुष्कं देवायुष्कं चतु-

नहीं होता है । 'किरियावाईणं भंते ! पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया' हे भदन्त ! क्रियावादी पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनि जीव 'किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' क्या नैरयिक आयुका बंध करते हैं ? अथवा—तिर्यगायुका बंध करते हैं ? अथवा—मनुष्यायुका बंध करते हैं ? अथवा—देवायुष्क का बंध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! जहा मणपज्जवणाणी' हे गौतम ! मनःपर्यवज्ञानी के जैसे क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनि न नारकायु का बंध करते हैं, न तिर्यगायु का बंध करते हैं, न मनुष्यायु का बंध करते हैं, किन्तु वे केवल एक देवायु का ही बंध करते हैं । 'अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई य चउव्विहं पि पकरे'ति' अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव चारों प्रकार की आयुओं का बंध करते हैं । नार-

डाय छे. तेथी अपर्याप्त अवस्थानोकाण अत्यंत थोडो डोवाथी तेओने अक्रियावादी अने अज्ञानवादी पणुमां केअपिणु आयुने अंध डोतो नथी.

'किरियावाई णं भंते ! पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया' हे भगवन् क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनि 'किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' शुं तेओ नैरयिक आयुने अंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुने अंध करे छे ? अथवा देव आयुने अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! जहा मणपज्जवणाणी' हे गौतम ! मनःपर्यवज्ञानीना कथन प्रमाणे क्रियावादी पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनि नारकनी आयुने अंध करता नथी. तिर्यग्योनि आयुने पणु अंध करता नथी. मनुष्य आयुने अंध करता नथी. परंतु तेओ केवल ओक देव आयुने अंध करे छे,

'अकिरियावाई, अन्नाणियवाई वेणइयवाई य चउव्विहं पि पकरे'ति' अक्रियावादी, अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिवाणा एवे आरे

विधमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्तीति भावः । 'जहा ओहिया तहा सलेस्सा वि' यथा औधिकाः सामान्यतिर्यग्योनिकजीवा आयुष्कं बध्नन्ति तथैव तेनैव प्रकारेण सलेश्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका अपि आयुष्कं बध्नन्ति, अयं भावः—क्रियावादि-पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः केवलं वैमानिकदेवायुष्कमेव बध्नन्ति, तथा शेषाः सम-वसरणत्रयवन्तस्तिर्यक्पञ्चेन्द्रिया श्रत्वार्यपि नरकाद्यायुषि बध्नन्ति । 'कणहलेस्सा णं भंते ! किरियावाई पंचेदियतिरिक्खजोणिया' कृष्णलेश्या खल्ल भदन्त ! क्रियावादिनः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः 'किं नेरइयाउयं पुच्छा' किं नैरयि-कायुष्कं कुर्वन्ति मनुष्यायुष्कं वा कुर्वन्ति देवायुष्कं वा कुर्वन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम !

कायु का भी वे बंध करते हैं, तिर्यगायु का भी वे बंध करते हैं, मनुष्यायु का भी वे बंध करते हैं और देवायु का भी वे बन्ध करते हैं 'जहा ओहिया तहा सलेस्सा वि' जैसे सामान्य तिर्यग्योनिक जीव आयुष्क कर्म का बन्ध करते हैं उसी प्रकार से सलेश्य पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव भी आयुष्क कर्म का बन्ध करते हैं, अर्थात् क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक मात्र वैमानिक देवायुका बन्ध करते हैं और शेष तीन समवसरणवाले तिर्यच पंचेन्द्रिय चारों गतिका आयु बंधते हैं । 'कणहलेस्सा णं भंते ! किरियावाई पंचेदिय-तिरिक्खजोणिया' हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्रियावादी जो पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव हैं—वे क्या 'नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' नैरयिकायु का बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुका बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायु का बन्ध करते हैं ? या देवायु का बन्ध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते

प्रकारना आयुष्येनो बंध करे छे. तेओ नारकेना आयुष्येनो पणु बंध करे छे, तिर्य'अआयुने पणु तेओ बंध करे छे मनुष्य आयुने पणु बंध करे छे. अने देव आयुने पणु बंध करे छे. 'जहा ओहिया तहा सलेस्सा वि' ने रीते सामान्य लोवे आयुष्य कर्मने बंध करे छे ओण प्रमाणे लेश्यावाणा पञ्चेन्द्रियतिर्य'अ-थेनि लोवे पणु नारकेना आयुने बंध करे छे. तेओ तिर्य'अ आयुने बंध करता नथी. परंतु तेओ मनुष्य आयुने बंध करे छे. अने देव लवना आयुष्येनो बंध करे छे. 'कणहलेस्सा णं भंते ! किरियावाई पंचेदियतिरिक्खजोणिया' हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा क्रियावादी ने पञ्चेन्द्रियतिर्य'अथेनिक लोवे छे. तेओ शुं 'किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' नैरयिक आयुने बंध करे छे ? अथवा तिर्य'अ आयुने बंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुने बंध करे छे ? अथवा देव आयुने बंध करे छे. ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतम

‘नो नेरहयाउयं पकरे’ति’ नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो तिरिक्खणं’
 नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘नो मणुस्साउयं’ नो मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति
 ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ‘अकिरियावाई अन्नाणियवाई
 वेणइयवाई चउव्विहं पि पकरे’ति’ अक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिक-
 वादिनश्च पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः कृष्णलेश्यावन्तश्चतुर्विधं चतुःप्रकारमपि नार-
 कतिर्यगमनुष्यदेवायुष्कं प्रकुर्वन्तीति भावः । ‘जहा कण्हलेस्सा एवं नीललेस्सा
 वि’ यथा कृष्णलेश्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका स्तथैव नीललेश्या अपि
 कापोतिक लेश्या अपि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका वक्तव्याः, तथा च क्रियावादि
 पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका न नारकायुष्कं न तिर्यग्योनिकायुष्कं न मनुष्यायुष्कं न

हैं—‘गोयमा ! नो नेरहयाउयं पकरे’ति, नो तिरिक्खणं उयं पकरे’ति ‘हे
 गौतम ! कृष्णलेश्यावाले क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक न नैरयिक
 आयुका बन्ध करते हैं, न तिर्यगायु का बन्ध करते हैं, ‘नो मणुस्साउयं
 पकरे’ति’ न मनुष्यायु का बन्ध करते हैं, ‘नो देवाउयं पकरे’ति’ और न
 देवायु का बंध करते हैं । ‘अकिरियावाई, अन्नाणियवाई, वेणइयवाई,
 चउव्विहं पि पकरे’ति’ अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी
 कृष्णलेश्यावाले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च चारों प्रकारकी आयु का बंध करते
 हैं । ‘जहा कण्हलेस्सा एवं नीललेस्सा वि काउलेस्सा वि’ जिस प्रकार
 से कृष्णलेश्यावाले पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च कहे गये हैं उसी प्रकार से नीललेश्या
 वाले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च एवं कापोतिकलेश्यावाले भी कहने चाहिये अर्थात्
 क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, न नारकायुष्क का बन्ध करते हैं, न तिर्य
 गायुष्क का बन्ध करते हैं, न मनुष्यायुष्क का बन्ध करते हैं और न

स्वामीने कडे छे डे—‘गोयमा ! नो नेरहयाउयं पकरे’ति नो तिरिक्खणं उयं पकरे’ति’
 डे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च च चतुर्विधं
 नारकाना आयुनो अंध करता नथी. तथा तिर्यञ्च आयुनो अंध करता नथी
 ‘नो मणुस्साउयं पकरे’ति’ मनुष्य आयुनो पणु अंध करता नथी. ‘नो देवाउयं
 पकरे’ति’ तथा देव आयुनो पणु तेओ अंध करता नथी. ‘अकिरियावाई, अन्नाणि-
 यवाई वेणइयवाई, चउव्विहं पि पकरे’ति’ अक्रियावादी अज्ञानवादी अने वैनयिक-
 वादी कृष्णलेश्यावाणा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च चारे प्रकारना आयुनो अंध करे छे.
 ‘जहा कण्हलेस्सा एवं नीललेस्सा वि काउलेस्सा वि’ जे प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा
 पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोतुं कथन करुं छे, ओज प्रमाणे नीललेश्यावाणा पञ्चेन्द्रिय
 तिर्यञ्च अने कापोतिकलेश्यावाणा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोतुं कथन पणु करतुं लेख्ये
 अर्थात् नारकायुनो अंध करता नथी, तिर्यञ्चायुनो पणु अंध करता नथी मनुष्य
 आयुनो पणु अंध करता नथी. तथा देव आयुनो पणु अंध करता नथी. डेम डे—

देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः यदा सम्यग्दृष्ट्याः कृष्णलेश्याद्य-
शुभपरिणामवन्तो भवन्ति तदा ते पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका न किमपि आयुष्कं
प्रकुर्वन्ति, यदा तु तेजोलेश्यादि शुभ परिणामवन्तो भवन्ति सम्यग्दृष्टिक पञ्चे-
न्द्रियतिर्यग्योनिकाः तदा तु देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, तत्रापि न भवनवासि देवाद्या-
युष्कं किन्तु केवलं वैमानिकायुष्कमेव प्रकुर्वन्तीति भावः । तथा शेषा समवसर-
णत्रयवन्तस्तिर्यक्पञ्चेन्द्रियाश्चत्वार्यपि नरकाद्यायुषि वधन्तीति । 'तेउलेस्सा जहा
सलेस्सा' तेजोलेश्या परिणामवन्तः सलेश्य जीववदेव ज्ञातव्याः क्रियावादि
तेजोलेश्यावन्तः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः केवलं देवायुष्कमेव प्रकुर्वन्ति, शेषा
स्रयोऽक्रियावादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनस्तु त्रिविधमायुष्कं वधन्ति

देवायुष्क का बन्ध करते हैं । क्यों कि सम्यग्दृष्टि तिर्यश्च जब कृष्ण-
आदि अशुभ लेश्या के परिणामवाले होते हैं तब वे किसी भी आयुष्क-
बन्ध नहीं करते हैं । और जब ये तेजोलेश्यादि शुभ परिणामवाले होते
हैं तब वे सिर्फ एक देवायुष्क का ही बंध करते हैं । देवायुष्क के बंध में
भी वे भवनवासी आदि देवों की आयुष्क का बन्ध नहीं करते हैं किन्तु
एक वैमानिक आयुष्क का ही बन्ध करते हैं । और शेष तीन समवसरण-
वाले तिर्यश्च पंचेन्द्रिय चारों गति की आयुष्क बांधते हैं । 'तेउलेस्सा
जहा सलेस्सा' तेजोलेश्यावाले क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यश्च सलेश्य
जीवों के कथन अनुसार केवल एक देवायुष्क का ही बन्ध करते
हैं । बाकी के तीन अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी
तेजोलेश्यावाले पंचेन्द्रियतिर्यश्च चारों प्रकार के आयुष्क का बन्ध
करते हैं । क्यों कि सलेश्य तिर्यक्पंचेन्द्रिय जीवों के इसी

सम्यग्दृष्टिवाणा तिर्यं चो न्यारे कृष्णलेश्या विगेरे अशुभ लेश्याना परिणामवाणा
होय छे, त्यारे तेजो केरि पणु आयुने अंध करता नथी अने न्यारे तेजो
तेजोलेश्या विगेरे शुभ परिणामवाणा होय छे, त्यारे तेजो केवण ओक देव आयु-
ष्यने न अंध करे छे. देवायुष्यना अंधमां पणु तेजो भवनवासी विगेरे देवोना
आयुने अंध करता नथी. परंतु ओक वैमानिक देवना आयुष्यने न अंध करे छे,
अने आक्षीना त्रय समवसरणवाणा तिर्यं च पंचेन्द्रिय यारे गतिनी आयुने अंध
करे छे. 'तेउलेस्सा जहा सलेस्सा' तेजोलेश्यावाणा क्रियावादी पंचेन्द्रियतिर्यं च सलेश्य
जोवोना कथन प्रमाणे केवण ओक देवआयुने न अंध करे छे, आक्षीना अक्रियावादी,
अज्ञानवादी, अने वैनयिकवादी तेजोलेश्य वाणा पंचेन्द्रिय तिर्यं च यारे प्रका-
रना आयुष्यने अंध करे छे. केम के-लेश्यावाणा जोवोने आन रीतनुं परिणाम-

સલ્લેશ્યાનાં તિર્યકપञ્ચેન્દ્રિયાણામેવં વિધસ્વરૂપતયોક્તત્વાદિતિ । 'નવરં અકિરિયા-
 વાઈ અન્નાણિયવાઈ વેણહ્યવાઈ ય ણો ણેરહ્યાઁયં પકરેતિ' નવરં કેવલમેતદેવ
 વૈલક્ષણ્યં યત્ અક્રિયાવાદિનોઽજ્ઞાનિક્વાદિનો વૈનયિકવાદિનશ્ચ ન નૈરયિકાયુષ્કં
 પ્રકુર્વન્તિ કિન્તુ 'દેવાઁયંપિ પકરેતિ' દેવાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ, 'તિરિક્લજોણિ-
 યાઁયં પિ પકરેતિ' તિર્યગ્યોનિકાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ । 'મણુસ્સાઁયંપિ પકરેતિ'
 મણુષ્યાયુષ્કમપિ પ્રકુર્વન્તિ 'एवं पम्हलेस्सा वि एवं सुकलेस्सा वि
 भाणियच्वा' एवमुपरोक्तक्रमेण पद्मल्लेश्यापरिणामवन्तः, एवं शुक्लल्लेश्या-
 परिणामवन्तोऽपि भणितव्याः—कथयितव्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका इति, एव-
 मिमे चापि यदा क्रियावादिनः तदा केवलं देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, यदा अक्रिया-
 वादिनोऽज्ञानिकवादिनो वैनयिकवादिनश्च भवन्ति तदा त्रिविधमपि आयुष्कं

પ્રકાર કે પરિણામ હોતે હેં એસા પરિણે કહા ગયા હૈ । 'નવરં અકિ-
 રિયાવાઈ, અન્નાણિયવાઈ, વેણહ્યવાઈ ય ણો ણેરહ્યાઁયં પકરેતિ'
 કિન્તુ અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનિકવાદી ઓર વૈનયિકવાદી પञ્ચેન્દ્રિય તિર્યશ્ચ
 નૈરયિક આયુ કા બન્ધ નહીં કરતે હેં । લે તો 'દેવાઁયં પિ પકરેતિ'
 દેવાયુ કા ઓ બન્ધ કરતે હેં । 'તિરિક્લજોણિયાઁયં પકરેતિ' તિર્યગાયુ
 કા ઓ બન્ધ કરતે હેં । 'મણુસ્સાઁયં પકરેતિ' મણુષ્ય આયુકા ઓ
 બંધ કરતે હેં । 'एवं पम्हलेस्सा वि एवं सुकलेस्सा वि भाणियच्वा' હસી
 પ્રકાર સે પદ્મલ્લેશ્યા પરિણામવાલે પञ્ચેન્દ્રિયતિર્યશ્ચ ઓર શુક્લલ્લેશ્યા કે
 પરિણામવાલે પञ્ચેન્દ્રિયતિર્યશ્ચ ઓ જાનના ચાહિયે, યે જિહ્ન સમય
 ક્રિયાવાદી હોતે હેં તય કેવલ દેવાયુ કા હી બન્ધ કરતે હેં ઓર જય યે
 અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનિકવાદી ઓર વૈનયિકવાદી હોતે હેં તય તીનો
 પ્રકાર કી આયુકા બન્ધ કરતે હેં । પર નારકાયુકા બન્ધ નહીં કરતે હેં

હોય છે, તે પ્રમાણે પહેલા કહેલ જ છે. 'નવરં અકિરિયાવાઈ, અન્નાણિયવાઈ વેણ-
 હ્યવાઈ ણો ણેરહ્યાઁયં પકરેતિ' પરંતુ અક્રિયાવાદી અજ્ઞાનવાદી અને વૈનયિકવાદી
 પञ્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્ય નૈરયિક આયુષ્યનો બંધ કરતા નથી તેઓ તો 'દેવાઁયં પિ
 પકરેતિ' દેવઆયુનો બંધ કરે છે, 'તિરિક્લજોણિયાઁયં પિ પકરેતિ' તિર્યગ્યઆયુનો
 પણ બંધ કરે છે. 'મણુસ્સાઁયં પિ પકરેતિ' મણુષ્ય આયુનો પણ બંધ કરે છે.

'एवं पम्हलेस्सा वि एवं सुकलेस्सा वि भाणियच्वा' એજ પ્રમાણે પણ
 લેશ્યાના પરિણામવાળા પञ્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્ય અને શુક્લ લેશ્યાના પરિણામવાળા
 પञ્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્યના સંબંધમાં પણ સમજવું. તેઓ ન્યારે ક્રિયાવાદી હોય છે,
 ત્યારે કેવળ દેવ આયુનો જ બંધ કરે છે. અને ન્યારે તેઓ અક્રિયાવાદી,
 અજ્ઞાનવાદી અને વૈનયિકવાદી હોય છે, ત્યારે તેઓ ત્રણે પ્રકારના આયુનો

नारकातिरिक्तं प्रकुर्वन्तीति । 'कृष्णपक्खिया तिहिं समोसरणेहिं' कृष्णपाक्षिका जीवाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः त्रिभिः समवसरणैः अक्रियावाद्यज्ञानिकवादि वैनयिकवादिभिः पक्षैः 'चउन्विहंपि आउयं पकरे'ति' चतुर्विधमपि नारकदेव तिर्यग्मनुष्यायुष्कं कुर्वन्तीति । 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' समवसरणत्रयवन्तः शुक्लपाक्षिका यथा सलेश्याः सलेश्यतिर्यक्पञ्चेन्द्रियजीववदेव शुक्लपाक्षिका अपि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका आयुश्चतुष्कं कुर्वन्ति तथा क्रियावादि शुक्लपाक्षिक तिर्यक् पञ्चेन्द्रियाः केवलं वैमानिकदेवायुष्कमेव बध्नन्ति 'सम्मदिट्ठी जहा मण-पज्जवनाणी तहेव वैमाणियाउयं पकरे'ति' सम्यग्दृष्टयः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका जीवाः मनःपर्यवज्ञानिवदेव केवलं वैमानिकायुष्कमेव प्रकुर्वन्तीति । 'मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टयो यथा कृष्णपाक्षिकाः कृष्णपाक्षिकजीववदेव मिथ्यादृष्टि जीवा अपि अक्रियावाद्यज्ञानिकवादि वैनयिकवादिभि स्त्रिभिः समव-

'कण्हपक्खिया तिहिं समोसरणेहिं' कृष्णपाक्षिक पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव अक्रियावादी, अज्ञानवादी और वैनयिकवादी ही होते हैं और उस समय 'चउन्विहं पि आउयं पकरे'ति' वे चारों प्रकार की आयुका बन्ध करते हैं । 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' तीन समवसरणवाले शुक्लपाक्षिक पञ्चेन्द्रियतिर्यक् सलेश्य तिर्यक्पञ्चेन्द्रिय जीवों के जैसे देव तिर्यक् मनुष्य और नारक चारों आयुओं का बन्ध करते हैं, और क्रियावादी शुक्लपाक्षिक तिर्यक् पञ्चेन्द्रिय जीव मात्र वैमानिक देवायु का बन्ध करते हैं । 'सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवनाणी तहेव वैमाणिया उयं पकरे'ति' सम्यग्दृष्टि पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव मनःपर्यवज्ञानी के जैसे केवल एक वैमानिक आयुका बन्ध करते हैं । 'मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टि जीव कृष्णपाक्षिक जीवों के जैसे

बंध करे छे, परंतु नारकना आयुनेो बंध करता नथी 'कण्हपक्खिया तिहिं समोसरणेहिं' कृष्णपाक्षिक पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक अथ नथारे अक्रियावादी, अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी होय छे, तयारे 'चउहिं पि आउयं पकरे'ति' तेओ तार प्रकारना आयुनेो बंध करे छे. 'सुकपक्खिया जहा सलेस्सा' शुक्लपाक्षिक पञ्चेन्द्रिय तिर्यक् देश्यावाणा अवेना कथन प्रभाणे देव, तिर्यक्, अने मनुष्य आ त्रणु प्रकारना आयुष्यनेो बंध करे छे 'वैनयिक आयुनेो बंध करता नथी 'सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवनाणी तहेव वैमाणियाउयं पकरे'ति' सम्यग्दृष्टि पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक अवे, मनःपर्यवज्ञानवाणा अवेना कथन प्रभाणे केवल ओक वैमानिक आयुनेो बंध करे छे, 'मिच्छा दिट्ठी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टिवाणा अवेना कथन प्रभाणे कृष्णपाक्षिक

સરળે દેવનારકતિર્યગ્મનુષ્યાયુષ્કં ચતુર્વિધમપિ પ્રકુર્વન્તીતિ । ‘સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી
 ણ ય એકં પિ પકરેતિ જહેવ નેરહયા’ સમ્પગ્મિથ્યાદટ્ટયો ન ચૈકમપિ આયુષ્કં
 પ્રકુર્વન્તિ યથૈવ નૈરયિકાઃ મિથ્યાદટ્ટિનારુવદેવ ણામપિ આયુષ્કવન્ધો ન
 અવત્તીત્યર્થઃ । ‘નાણી જાવ ઓહિનાણી સમ્માદિટ્ટી’ જ્ઞાનિનો યાવત્ અવધિજ્ઞાનિ
 નો યથા સમ્પગ્દટ્ટયઃ સમ્પગ્દટ્ટિવદેવ ઘાનિનો મત્યાદિજ્ઞાનિનોઽવધિજ્ઞાનિનશ્ચ
 કેવલં વૈમાનિકદેવાયુષ્કમેવ પ્રકુર્વન્તિ ન તુ નારકતિર્યગ્મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તીતિ ।
 ‘અન્નાણી જાવ વિભંગનાણી જહા કળ્હપક્વિલયા’ અજ્ઞાનિનો યાવદ્વિભજ્ઞાનિનો
 યથા કૃષ્ણપાક્ષિકાઃ યાવત્પદેન મત્યજ્ઞાનિ શ્રુતાજ્ઞાનિનોઃ સંગ્રહઃ તથા ચાજ્ઞાનિ-
 મત્યજ્ઞાનિ-શ્રુતાજ્ઞાનિ-વિભજ્ઞાનિનશ્ચ કૃષ્ણપાક્ષિરુવદેવ ત્રિમિઃ સમવસરણૈરક્રિ-
 યાવાલ્લજ્ઞાનિકવાદિ-વૈનયિકવાદિરૂપૈ શ્ચતુર્વિધમપિ આયુષ્કં પ્રકુર્વન્તીતિ । ‘સેસા

પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્ચ અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી ઓર વૈનયિકવાદી અવસ્થા
 મેં ચારોં પ્રકાર કી આયુષ્કા ઘન્ધ કરતે હેં । ‘સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી ણ ય
 એકંપિ પકરેતિ જહેવ નેરહયા’ સમ્પગ્ મિથ્યાદટ્ટિ મિથ્રદટ્ટિ-જીવ
 નારક કે જેસે એક મી આયુષ્ક કર્મ કા ઘન્ધ નહીં કરતા હેં । ‘નાણી-
 જાવ ઓહિનાણી જહા સમ્માદિટ્ટી’ જ્ઞાની યાવત્ અવધિજ્ઞાની સમ્પગ્દટ્ટિ
 કે જેસે કેવલ એક વૈમાનિક દેવાયુષ્ક કા હી ઘન્ધ કરતે હેં ।
 નારક તિર્યગ્ચ એવં મનુષ્ય આયુષોં કા ઘન્ધ નહીં કરતે હેં । ‘અન્નાણી
 જાવ વિભંગનાણી જહા કળ્હપક્વિલયા’ અજ્ઞાની યાવત્ વિભંગજ્ઞાની કૃષ્ણ
 પાક્ષિક કે જેસે અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી, ઓર વૈનયિકવાદી અવ-
 સ્થા મેં ચારોં પ્રકાર કી આયુષ્કા ઘન્ધ કરતે હેં । યહાં યાવત્ શબ્દ સે
 સત્યજ્ઞાની ઓર શ્રુતાજ્ઞાની હન દોક્કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘સેસા જાવ અણા-

પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્ચ અક્રિયાવાદી અજ્ઞાનવાદી અને વૈનયિકવાદી અવસ્થામાં ચારે
 પ્રકારની આયુષ્યને ઇન્ધ કરે છે, ‘સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી ણ ય એકં પિ પકરેતિ’
 જહેવ નેરહયા’ સમ્પગ્ મિથ્યાદટ્ટિવાળા નારકોના કથન પ્રમાણે મિથ્રદટ્ટિવાળા એક
 યુષ્ય આયુષ્ય કર્મને ઇન્ધ કરતા નથી. ‘નાણી જાવ ઓહિનાણી જહા સમ્માદિટ્ટી’
 જ્ઞાની યાવત્ અવધિજ્ઞાની સમ્પગ્દટ્ટિવાળા જીવના કથન પ્રમાણે કેવળ
 એક દેવ આયુષ્યને જ ઇન્ધ કરે છે. નારક, તિર્યગ્ચ અને મનુષ્ય સંબંધી
 આયુષ્યને ઇન્ધ કરતા નથી.

‘અન્નાણિ જાવ વિભંગનાણી જહા કળ્હપક્વિલયા’ અજ્ઞાની યાવત્
 વિભંગજ્ઞાનવાળા કૃષ્ણપાક્ષિકના કથન પ્રમાણે અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી, અને
 વૈનયિકવાદી અવસ્થામાં ચારે પ્રકારની આયુષ્યને ઇન્ધ કરે છે. અહિયાં યાવત્
 પદ્ધતી મતિઅજ્ઞાની અને શ્રુતાઅજ્ઞાની આ બે ગ્રહણ કરાયા છે.

जाव अणागारोवउत्ता सव्वे जहा सलेस्सा तहेव भाणियव्वा' शेषाः यावदनाकारो पयुक्ताः अनाकारोपयुक्तपदपर्यन्ताः सर्वेऽपि यथा सलेश्या स्तथैव भणितव्याः, तथाचेमे सर्वेऽपि आयुर्बन्धविषये सलेश्यवदेव तथाहि ये क्रियावादिनस्ते तु केवलं वैमानिकायुष्कं बध्नन्ति, शेषाः समवसरणत्रयवन्तो जीवाश्चतुर्विधमपि आयुष्कं कुर्वन्ति, 'जहा पंचिदियतिरिक्खजोगियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्सा वि भाणियव्वा' यथा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां वक्तव्यताऽनुपदमेव भणिता एवं मनुष्याणामपि वक्तव्यता भणितव्या, क्रियावादि प्रथमसमवसरणे केवलं देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति, अक्रियावादीत्यादि समवसरणत्रये तु चतुर्विधमपि आयुष्प्रकुर्वन्तीति । पञ्चेन्द्रियतिर्यगपेक्षया यद्वैवलक्षण्यं तददर्शयन्नाह—'णवरं' इत्यादि, 'णवरं मणपज्जवणाणी नो सन्नोवउत्ता य जहा सम्पदिट्ठीतिरिक्खजोगिया तहेव भाणि-

गारोवउत्ता सव्वे जहा सलेस्सा तहेव भाणियव्वा' बाकी के समस्त जीव अनाकारोपयुक्त पद तक के सलेश्य जीवों के जैसे चारों प्रकार की आयुक्ता बन्ध करते हैं । 'जहा पंचिदिया तिरिक्खजोगियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साणं वि भाणियव्वा' जिस प्रकार से पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों की यह वक्तव्यता कही गई है उसी प्रकार से मनुष्योंकी भी वक्तव्यता कहनी चाहिये, तथा च—क्रियावादी मनुष्य केवल वैमानिक देवायुका ही बन्ध करते हैं, तथा—अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी मनुष्य चारों प्रकार की आयुक्ता बन्ध करते हैं । परंतु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों की अपेक्षा जो इस मनुष्य सम्बन्धी प्रकरणमें विशेषता है—वह ऐसी है कि—'णवरं मणपज्जवणाणी

'सेसा जाव अणागारोवउत्ता सव्वे जहा सलेस्सा तहेव भाणियव्वा' भाकीना सधणा एवे अनाकारोपयोग पद सुधीना देश्यावाणा एवेना कथन प्रमाणे आरे प्रकारना आयुष्येना अंध करे छे, अडियां यावत्पदथी संशोपयोगवाणाथी दग्धने साकारोपयोग सुधीना एवे अडणु कराया छे.

'जहा पंचिदियतिरिक्खजोगियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्सा वि भाणियव्वा' के प्रमाणे पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकोना सअधमां आ कथन करेद छे. अण प्रमाणे मनुष्योना संअधमां पणु समज्जु अटले के—क्रियावादी मनुष्यकेवण हेव आयुने अ अंध करे छे, तथा अक्रियावादी, अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी, मनुष्य आरे प्रकारना आयुने अंध करे छे. परंतु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकोनी अपेक्षाथी आ मनुष्य प्रकरणमां के विशेषपणुं छे, ते अरीते छे के—'णवरं मणपज्जवणाणी नोसन्नोवउत्ता य जहा सम्पदिट्ठी, तिरिक्ख-

યવ્વા' નધરં કેવલં મનઃપર્યવજ્ઞાનિનઃ નો સંજ્ઞોપયુક્તાશ્ચ મનુષ્યા યથા સમ્યગ્દૃષ્ટિ તિર્યગ્ચોનિકા સ્તથૈવ મણિતવ્યાઃ એકં દેવાયુષ્કમેવ કુર્વન્તીત્યર્થઃ । 'અલેસ્સા કેવલનાણી અવેદગા અકસાઈ અજોગી ય' અલેશ્યાઃ સામાન્યતો લેશ્યારહિતાઃ કેવલજ્ઞાનિનઃ અવેદકા અકષાયિનોઽયોગિનશ્ચ 'એ ન એમં વિ આડયં પકરે'તિ' એતે અલેશ્યાદિકાઃ સર્વેઽપિ ન એકમપિ આયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ । 'જહા ઓહિયા જીવા સેસં તહેવ' યથા ઔધિકા જીવાઃ કથિતાઃ શેપમ્-કથિતવ્યતિરિક્તં તથૈવ સામાન્યતો જીવપ્રકરણમતિપાદિતમેવ જ્ઞાતવ્યમિતિ । 'વાળમંતરજોહસિયવેમાણિયા જહા અસુરકુમારા' વાનવ્યન્તરજ્યોતિષ્કવૈમાનિકા અસુરકુમારવદેવ ક્રિયાવાદિનઃ કેવલં મનુષ્યાયુષ્કં પ્રકુર્વન્તિ, અક્રિયાવાદિ વાનવ્યન્તરજ્યોતિષ્કવૈમાનિકા સ્ત્રય સ્તિર્યગાયુષ્કં મનુષ્યાયુષ્કં ચ પ્રકુર્વન્તીતિ ભાવઃ ॥૧૦ ૩॥

નો સન્નોબહત્તા ય જહા સમ્મદિટ્ટી, તિરિક્કલજોણિયા તહેવ મણિયવ્વા' મનઃપર્યવજ્ઞાની ઔર નો સંજ્ઞોપયુક્ત મનુષ્ય સમ્યગ્દૃષ્ટિ તિર્યગ્ચોનિકો કે જૈસે કેવલ વૈમાનિક દેવાયુક્તા હી બન્ધ કરતે હૈં । 'અલેસ્સા કેવલનાણી અવેદગા અકસાઈ અજોગીય' સામાન્યતઃ લેશ્યારહિત, કેવલજ્ઞાની, અવેદક ઔર અકષાયી એવં અયોગી 'એ ન એમં વિ આડયં પકરે'તિ' એ એક મી આયુકર્મકા બન્ધ નહીં કરતે હૈં । 'જહા ઓહિયા જીવા સેસં તહેવ' જિસ પ્રકાર સે ઔધિક જીવ હૈં ડસી પ્રકાર સે સામાન્યતઃ જીવ પ્રકરણ મેં પ્રતિપાદિત શેપ કથન જાનના ચાહિયે, 'વાળમંતરજોહસિય વેમાણિયા જહા અસુરકુમારા' વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષિક એવં વૈમાનિક ક્રિયાવાદી અવસ્થા મેં અસુરકુમારો' કે જૈસે કેવલ એક મનુષ્યાયુકા હી બન્ધ કરતે હૈં । તથા-અક્રિયાવાદી આદિ વાનવ્યન્તરજ્યોતિષિક એવં વૈમાનિક એ ત્રીન તિર્યગાયુ ઔર મનુષ્યાયુ કા બન્ધ કરતે હૈં । ૩॥

જોણિયા તહેવ મણિયવ્વા' મન.પર્યવજ્ઞાનવાળા અને નો સંજ્ઞોપયુક્ત મનુષ્ય સમ્યગ્દૃષ્ટિવાળા તિર્યગ્ ચોનિકોના કથન પ્રમાણે કેવળ એક દેવ આયુનો જ બંધ કરે છે. 'અલેસ્સા કેવલનાણી અવેદગા અકસાઈ અયોગીય' સામાન્ય લેશ્યાવિનાના, કેવળજ્ઞાની, અવેદક અને કષાય વિનાના અને અયોગી 'એ ન એમં વિ આડયં પકરે'તિ' આ બધા એક પણ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી. 'જહા ઓહિયા જીવા સેસં તહેવ' જે પ્રમાણે ઔધિક જીવના સ બંધમાં કથન કર્યું છે. એજ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે જીવ પ્રકરણમાં પ્રતિપાદન કરેલ બાકીનું કથન સમજવું. 'વાળમંતરજોહસિયવેમાણિયા જહા અસુરકુમારા' વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક ક્રિયાવાદી અવસ્થામાં અસુરકુમારોના કથન પ્રમાણે કેવળ એક મનુષ્ય આયુનો જ બંધ કરે છે. તથા અક્રિયાવાદી, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક આ ત્રણે તિર્યગ્ આયુ અને મનુષ્ય આયુનો બંધ કરે છે ॥સૂ.૩॥

मूलम्—किरियावाई णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया
 अभवसिद्धिया ? गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया ।
 अकिरियावाई णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया पुच्छा गोयमा !
 भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि । एव अन्नाणियवाई वि वेण-
 इयवाई वि । सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया
 पुच्छा, गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया । सलेस्सा णं
 भंते ! जीवा अकिरियावाई ? किं भवसिद्धिया पुच्छा गोयमा !
 भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि । एवं अन्नाणियवाई वि वेण-
 इयवाई वि जहा सलेस्सा । एवं जाव सुकलेस्सा । अलेस्सा णं
 भंते ! जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया पुच्छा गोयमा ! भव-
 सिद्धिया नो अभवसिद्धिया । एवं एणं अभिलावेणं कणह-
 पक्खिया तिसु वि समोसरणेसु भयणाए । सुक्कपक्खिया चउसु
 वि समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया । सम्मदिट्ठी
 जहा अलेस्सा । मिच्छादिट्ठी जहा कणहपक्खिया । सम्मा-
 मिच्छादिट्ठी दोसु वि समोसरणेसु जहा अलेस्सा । नाणी जाव
 केवलनाणी भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया । अन्नाणी जाव
 विभंगनाणी जहा कणहपक्खिया । सन्नासु चउसु वि जहा
 सलेस्सा, नो सन्नोवउत्ता जहा सम्मदिट्ठी, सवेयगा जाव नपुं-
 सगवेयगा जहा सलेस्सा । अवेदगा जहा सम्मदिट्ठी, सकसाई
 जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा अकसाई जहा सम्मदिट्ठी-
 सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा, अजोगी जहा सम्म-
 दिट्ठी, सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता जहा सलेस्सा । एवं नेर-
 इया वि भाणियव्वा । नवरं नायव्वं जं अत्थि । एवं असुर-
 कुमारा वि जाव थणियकुमारा पुढवीकाइया सव्वट्टाणेसु वि

मज्झिम्मेसु दोसु वि समोसरणेसु भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि । एवं जाव वणस्सइकाइया वेइंदियतेइंदियचउरिंदिया एवं चेव । नवरं सम्मत्ते ओहियनाणे आभिणिवोहियनाणे सुयनाणे एएसु चेव दोसु मज्झिम्मेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया । सेसं तं चेव पंञ्चिदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया नवरं नायट्ठं जं अत्थि । मणुस्सा जहा ओहिया जीवा, वाणसंतरजोइसिय वेसाणिया जहा असुरकुमारा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० ४॥

तीसइमे सए पढसो उद्देशो समत्तो ॥३०-१॥

छाया—क्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाः ? गौतम ! भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः किं भवसिद्धिकाः पृच्छा, गौतम ! भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि । एवमज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं भवसिद्धिका पृच्छा, गौतम ! भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । सलेश्याः खलु भदन्त ! जीवा अक्रियावादिनः किं भवसिद्धिका पृच्छा, गौतम ! भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि । एवमज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि यथा सलेश्याः । एवं यावत् शुक्ललेश्याः । अलेश्याः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं भवसिद्धिकाः पृच्छा, गौतम ! भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । एवमेतेनाभिलापेन कृष्णपाक्षिका त्रिष्वपि समवसरणेषु भजनया । शुक्लपाक्षिका चतुर्ष्वपि समवसरणेषु भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । सम्यग्दृष्टयो यथा अलेश्याः । मिथ्यादृष्टयो यथा कृष्णपाक्षिकाः । सम्यग्मिथ्यादृष्टयो द्वयोरपि समवसरणयो र्यथा अलेश्याः । ज्ञानिनो यावत् केवलज्ञानिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । अज्ञानिनो यावद्विमङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः । संज्ञासु चतसृष्वपि यथा सलेश्याः । नो संज्ञोपयुक्ता यथा सम्यग्दृष्टयः । सवेदका यावत् ऋषुपुंषुवेदका यथा सलेश्याः । अवेदका यथा सम्यग्दृष्टयः, सकषायिनो यावत् लोभकषायिनो यथा सलेश्याः । अरूपायिनो यथा सम्यग्दृष्टयः । सयोगिनो यावत् काययोगिनो यथा सलेश्याः । अयोगिनो यथा सम्यग्दृष्टयः । साकारोपयुक्ता अनाकारोपयुक्ताः यथा सलेश्याः । एवं नैरयिका अपि भणितव्याः, नवरं ज्ञातव्यं यदस्ति । एवमसुरकुमारा अपि यावत् स्तनितकुमाराः । पृथिवीकायिकाः

सर्वस्थानेष्वपि मध्यमयो द्वयोरपि समवसरणयो भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि । एवं यावद् वनस्पत्तिकायिकाः । द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रिया एवमेष नवरं सम्यक्त्वे औघिकज्ञाने आभिनिबोधिकज्ञाने श्रुतज्ञाने एतयोरेव द्वयोर्मध्यमयोः समवसरणयो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । शेषं तदेव । पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिका यथा नैरयिकाः, नवरं ज्ञातव्यं यदस्ति । मनुष्या यथा औघिका जीवाः । ज्ञानव्यन्तरज्योतिष्कवैभानिका यथा असुरकुमाराः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० ४॥

त्रिंशत्तमे शतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३०-१॥

टीका—‘किरियावाइ णं भंते ! जीवा’ क्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः ‘किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया’ किं भवसिद्धिकाः तस्मिन्नेव भवे सिद्धिगमन-योग्या अथवा अभवसिद्धिका भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ भवसिद्धिकाः क्रियावा-दिनो भवन्ति नो—न तु अभवसिद्धिका भवन्ति ये ते क्रियावादिनस्ते तस्मिन्नेव भवे मोक्षमासादयन्ति न तु अभवसिद्धिका भवन्तीति उत्तरम् । ‘अकिरियावाइ णं भंते ! जीवा’ अक्रियावादिनः खलु भदन्त ! जीवाः ‘किं भवसिद्धिया पुच्छा’

‘किरियावाइ णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया’—इ०

टीकार्थ—‘किरियावाइ णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया’ हे भदन्त ! क्रियावादी जीव कथां भवसिद्धिक होते हैं ? या अभव-सिद्धिक होते हैं ? जिन में उसी भव में सिद्धिगति में जाने की क्षमता है वे भवसिद्धिक और इन से विपरीत जो हैं वे अभवसिद्धिक हैं । उत्तर में प्रसुथी कहते हैं—‘गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ हे गौतम ! क्रियावादी जीव भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । ‘अकिरियावाइ णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया पुच्छा’ हे

‘किरियावाइ णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया’ इत्यादि

टीकार्थ—‘किरियावाइ णं भंते जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया’ हे भग-वन् क्रियावादी भवे शुं भवसिद्धिक डोय छे ? के अलवसिद्धिक डोय छे ? नेण्णे नेण्ण लवसा सिद्धि गतिमां ज्वाना डोय ते लवसिद्धिक कडेवाय छे ते शिवायना अलवसिद्धिक कडेवाय छे आ प्रश्नना उत्तरमां प्रसुथी कडे छे के—‘गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ हे गौतम ! क्रियावादी भव लवसिद्धिक डोय छे अलवसिद्धिक डोयता नथी.

‘अकिरियावाइ णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया पुच्छा’ हे भगवन् ने भवे अक्रियावादी छे, तेण्णे लवसिद्धिक डोय छे ? के अलवसिद्धिक

किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिका वा भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवान्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि’ अक्रियावादिनो ‘भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति । ‘एवं अन्नाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि’ एवम् अक्रियावादिनदेव अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि भवसिद्धिका अपि भवन्ति अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति भावः । ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाइ’ सलेइयाः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः, ‘किं भवसिद्धिया पुच्छा,’ किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिका वेति प्रश्नः, पृच्छया संगृह्यते ! भगवान्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका भवन्ति सलेइयाः क्रियावादिनो जीवा इति । ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा अक्रियावाइ किं भवसिद्धिया अभ-

भदन्त ! जो अक्रियावादी जीव है वे क्या भवसिद्धिक होते हैं या अभवसिद्धिक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं ‘गोयमा ! भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि’ हे गौतम ! अक्रियावादि जीव भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । ‘एवं अन्नाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि’ इसी प्रकार से अज्ञानिकवादी भी भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक दोनों प्रकारके होते हैं इसी प्रकार के वैनयिकवादी भी होते हैं । ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाइ’ हे भदन्त ! सलेइय क्रियावादी जीव क्या भवसिद्धिक होते हैं ? या अभवसिद्धिक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ हे गौतम ! भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा अक्रियावाइ किं भवसिद्धिया पुच्छा’ हे भदन्त ! अक्रियावादी सलेइय जीव क्या भवसिद्धिक

होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री उडे छे डे—‘गोयमा ! भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि’ हे गौतम अक्रियावादी एव भवसिद्धि पणु होय छे, अने अभवसिद्धिक पणु होय छे. ‘एवं अन्नाणियवाइ वि, वेणइयवाइ वि’ आण प्रभाणु अज्ञानवादी पणु भवसिद्धिक अने अभवसिद्धिक णन्ने प्रकारना होय छे. वैनयिकवादी पणु अणु प्रभाणु णन्ने प्रकारना होय छे. ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाइ’ हे भगवन् देश्यावाणा क्रियावादी एवेण शुं भवसिद्धिक होय छे ? हे अभवसिद्धिक होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री उडे छे डे—‘गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ हे गौतम ! देश्यावाणा क्रियावादी एवेण भवसिद्धिक होय छे, अभवसिद्धिक होता नथी. ‘सलेस्सा णं भंते ! जीवा अक्रियावाइ किं भवसिद्धिया पुच्छा’ हे भगवन् अक्रियावादी देश्यावाणा एवेण शुं भवसिद्धिक होय छे ? हे अभवसिद्धिक होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री उडे छे

वसिद्धिया' पुच्छा सलेश्याः खलु भदन्त ! अक्रियावादिनो जीवा किं भवसिद्धिका
अभवसिद्धिका भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि,
'गोयमा' हे गौतम ! 'भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि' सलेश्याः अक्रियावादिनो
जीवाः भवसिद्धिका अपि भवन्ति अभवसिद्धिका वा भवन्तीति । 'एवं अन्नाणियवाई
वि वेणइयवाई वि' एवं सलेश्याऽ क्रियावादि जीवदेव अज्ञानिकवादिनोऽपि
वैनयिकवादिनोऽपि भवसिद्धिका अपि भवन्ति अभवसिद्धिका अपि भवन्ति ।
'एवं जाव सुकलेश्या' यथा सलेश्याः क्रियावादिनोऽक्रियावादिनश्च कथिता
स्तथैव यावत् शुक्ललेश्याः, अत्र यावत्पदेन कृष्णलीलाकापोततेजः पद्मलेश्यानां
संग्रहो भवतीति तथाच कृष्णलेश्यात् आरभ्य शुक्ललेश्यापर्यन्ताः क्रियावादिनो
जीवा भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका भवन्ति तथा अक्रियावादिनः कृष्णलेश्यात्
आरभ्य शुक्ललेश्यान्ताः सर्वेऽपि जीवा भवसिद्धिकाश्च भवन्ति अभवसिद्धिकाश्चापि
भवन्तीति भावः । 'अलेस्सा णं मंते ! जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया पुच्छा'
अलेश्याः सामान्यतो लेश्यारहिताः खलु भदन्त ! जीवाः क्रियावादिनः किं भवसि-

होते हैं या अभवसिद्धिक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—
'गोयमा ! भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि' हे गौतम ! अक्रियावादी
सलेश्य जीव भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते
हैं । 'एवं अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि' इसी प्रकार से अज्ञानवादी
जीव भी और वैनयिकवादी जीव भी भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक
दोनों प्रकार के होते हैं । 'एवं जाव सुकलेश्या' कृष्णलेश्या से लेकर
शुक्ललेश्यावाले क्रियावादी जीव भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक
नहीं होते हैं । और कृष्णलेश्या से लेकर शुक्ललेश्या तक के अक्रि-
यावादी आदि जीव भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक दोनों प्रकार के

के—'गोयमा ! भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि' हे गौतम ! अक्रियावादी लेश्या-
वाणा एवो भवसिद्धिक पणु डोय छे अने अलवसिद्धिक पणु डोय छे. 'एवं
अन्नाणियवाई वि वेणइयवाई वि' आण प्रमाणे अज्ञानवादी एव अने वैन
यिकवादी एव पणु भवसिद्धिक अने अलवसिद्धिक अम अन्ने प्रकाशना डोय
छे. 'एवं जाव सुकलेश्या' कृष्णलेश्याथी लधने शुक्ल लेश्यावाणा डियावादी
एव भवसिद्धिक न डोय छे. अलवसिद्धिक डोता नथी. तथा कृष्णलेश्याथी
लधने शुक्ल लेश्या सुधीना अक्रियावादी एव भवसिद्धिक अने अलवसिद्धिक
अन्ने प्रकाशना डोय छे. 'अलेस्सा णं मंते ! जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया
पुच्छा' हे भगवन् डियावादी अलेश्य एवो शुं भवसिद्धिक डोय छे ? अथवा

દ્વિકા ભવન્તિ અભવસિદ્ધિકા વા ભવન્તીતિ પ્રશ્નઃ પૃચ્છયા સંગ્રહતે । મગધાનાહ
 ‘ગોયમા’ इत्यादि, गौतम ! ‘भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ अलेश्याः
 क्रियावादिनो जीवाः भवसिद्धिका एव भवन्ति न तु अभवसिद्धिका भवन्तीत्युत्तरम् ।
 ‘एवं एणं अभिलावेणं कण्हपक्खिया तिसु वि समोसरणेसु भयणाए’ एवमनेन
 अभिलापेन पूर्वोदितप्रकारेण कृष्णपाक्षिका जीवा स्त्रिष्वपि द्वितीयतृतीयचतुर्थेषु
 अक्रियावाद्यज्ञानिकवादी-वैनयिकवादी रूपेषु समवसरणेषु भजनया-विकल्पेने
 ति भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि ज्ञातव्या इति । ‘सुकपक्खिया चउसु
 वि समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया’ शुक्लपाक्षिका जीवाः चतुर्वपि
 प्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थेषु समवसरणेषु क्रियावाद्यक्रियावाद्यज्ञानिवादि वैनयिक-
 वादि रूपेषु भवसिद्धिका एव भवन्ति, नो-न तु कथमपि अभवसिद्धिका
 भवन्तीति । ‘सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा, सम्यग्दृष्टयो जीवा यथा अलेश्यजीवाः

होते हैं’ । ‘अलेस्सा णं भंते ! जीवा क्रियावादि किं भवसिद्धिया पृच्छा’ हे
 भदन्त ! क्रियावादि अलेश्य जीव कथा भवसिद्धिक होते हैं या अभव-
 सिद्धिक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! भवसिद्धिया,
 नो अभवसिद्धिया’ हे गौतम ! अलेश्य क्रियावादी जीव भवसिद्धिक ही
 होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । ‘एवं एणं अभिलावेणं कण्ह-
 पक्खिया तिसु वि समोसरणेसु भयणाए’ इस प्रकार अभिलापद्वारा
 कृष्णपाक्षिक जीव अक्रियावादी अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी
 रूप तीनों समवसरणों में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक
 भी होते हैं । ‘सुकपक्खिया चउसु वि समवसरणेसु भवसिद्धिया
 नो अभवसिद्धिया’ शुक्लपाक्षिक चारों समवसरणों में भवसिद्धिक
 ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं ‘सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा’

અભવસિદ્ધિક હોય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે-
 ‘ગોયમા ! ભવસિદ્ધિયા નો અભવસિદ્ધિયા’ હે ગૌતમ ! લેશ્યા વિનાના ક્રિયાવાદી
 જીવો ભવસિદ્ધિક જ હોય છે. અભવસિદ્ધિક હોતા નથી ‘એવં એણં અભિલા-
 વેણં કણ્હપક્કિયા તિસુ વિ સમોસરણેસુ ભયણાએ’ આ પ્રમાણે આ અભિલાપથી
 કૃષ્ણપાક્ષિક જીવો અક્રિયાવાદી અજ્ઞાનવાદી, અને વૈનયિકવાદી અવસ્થાઓમાં
 ભવસિદ્ધિક જ હોય છે. અભવસિદ્ધિક હોતા નથી. ‘સુક્કપક્કિયા ચઉસુ વિ
 સમોસરણેસુ ભવસિદ્ધિયા’ શુક્લપાક્ષિક જીવ ચારે સમવસરણોમાં ભવસિદ્ધિક
 હોય છે અભવસિદ્ધિક હોતા નથી ‘સમ્માદિટ્ઠી જહા અલેસ્સા’ અલેશ્ય જીવોના
 સંબંધમાં જે પ્રમાણે કથન કરવામાં આવેલ છે. એજ પ્રમાણે સમ્યગ્દષ્ટિવાળા

कथिता स्तथैव भवसिद्धिका एव न तु अभवसिद्धिका भवन्तीति । 'मिच्छादिद्वी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टयो यथा कृष्णपाक्षिकाः कृष्णपाक्षिकवदेव मिथ्या दृष्टयोऽ क्रियावादीत्यादि समवसरणत्रये विकल्पेन भवसिद्धिका अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति ज्ञातव्यम् । 'सम्मामिच्छादिद्वी दो सु वि समोसरणेसु जहा अलेस्सा' सम्पग्निष्ठादृष्टयो मिश्रदृष्टयः द्वयोरपि तृतीयचतुर्ययोरज्ञानिकवादि वैनयिकवादि समवसरणयोरलेश्यवदेव भवसिद्धिका भवन्तीति ज्ञातव्यम् । 'णाणी जाव केवलनाणी भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' ज्ञानिनो यावत्केवलज्ञानिनश्च भवसिद्धिकाः, अत्र यावत्पदेन मतिश्रुतावधिमतःपर्यवज्ञानिनां संग्रहो भवति तथा च ज्ञानित आरभ्य केवलज्ञानिपर्यन्ताः सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव भवन्ति न तु

जिस प्रकार से अलेश्य जीव कहे गये हैं उसी प्रकार से सम्पग्निष्ठा जीव भी भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'मिच्छादिद्वी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टि जीव भी कृष्णपाक्षिकों के जैसे अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी अवस्था में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । 'सम्मामिच्छादिद्वी दोसु वि समोसरणेसु जहा अलेस्सा' अलेश्य जीवों के जैसे मिश्रदृष्टि जीव दो समवसरण अवस्था में—अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी स्थिति में—भवसिद्धिक होते हैं ऐसा जानना चाहिये 'णाणी जाव केवलनाणी भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी जीव भवसिद्धिक ही होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । यहां यावत् पद से मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी अधिज्ञानी और मतःपर्यवज्ञानी—

७वे पञ्च भवसिद्धिक न् डोय छे. अभवसिद्धिक डोता नथी. 'मिच्छादिद्वी जहा कण्हपक्खिया' मिथ्यादृष्टिवाणा ७व कृष्णपाक्षिक ७वना कथन प्रभाण्णे अक्रियावादी, अज्ञानवादी, अने वैनयिकवादी अवस्थायां भवसिद्धिक पञ्च डोय छे. अने अभवसिद्धिक पञ्च डोय छे. 'सम्मामिच्छादिद्वी दोसु वि समोसरणेसु जहा अलेस्सा' देश्या विनाना ७वेना कथन प्रभाण्णे मिश्रदृष्टिवाणा ७वे णे समवसरणणी अवस्थायां—अदृष्टे के अज्ञानवादी अने वैनयिकवादीपञ्चानी अवस्थायां भवसिद्धिक डोय छे तेम समञ्जु'

'णाणी जाव केवलनाणी भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी ७वे भवसिद्धिक न् डोय छे. अभवसिद्धिक डोता नथी अद्वियां यावत्पदथी मतिज्ञानवाणा श्रुतज्ञानवाणा अधिज्ञानवाणा अने मतःपर्यवज्ञान

અભવસિદ્ધિકા इति भावः । ‘अन्नाणी जाव विभङ्गनाणी जहा कण्हपक्खिया’ अज्ञानिनो यावद्विभङ्गज्ञानिनो यथा कृष्णपाक्षिकाः, अत्र यावत्पदेन मृत्युज्ञानि श्रुताज्ञानिनः संग्रहो भवति तथाचाज्ञानित आरभ्य विभङ्गज्ञानिपर्यन्ताः सर्वेऽपि कृष्णपाक्षिकवदेव अक्रियावादित आरभ्य समवसरणत्रयेषु भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपीति । ‘सन्नासु चउसु वि जहा सलेस्सा’ संज्ञासु आहारादि परिग्रहान्तासु चतसृष्वपि यथा सलेश्याः सलेश्यवदेव चतुर्ष्वपि आहारादि संज्ञावत्सु क्रियावादिनः भवसिद्धिकाः न तु अभवसिद्धिका अक्रियावादिन स्त्रिषु समवसरणेषु भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपीति । ‘नो सन्नोवउत्ता जहा सम्मदिट्ठी’ नो संज्ञोपयुक्ता जीवा यथा सम्यग्दृष्टयः सम्यग्दृष्टिवदेव क्रियावादिनो

इनका ग्रहण हुआ है । तथाच-ज्ञानी से लेकर केवलज्ञानी तक सब जीव भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । ‘अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा कण्हपक्खिया’ यावत्पद ग्रहीत मृत्युज्ञानी, श्रुताज्ञानी तथा अज्ञानी एवं विभंगज्ञानी ये सब कृष्णपाक्षिक के जैसे अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी की हालत में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । ‘सन्नासु चउसु वि जहा सलेस्सा’ आहार संज्ञा से लेकर परिग्रह संज्ञा तक की चार संज्ञाओं में भी सलेश्य जीवों के जैसे जीव क्रियावादी अवस्था में भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते । तथा अक्रियावादी एवं अज्ञानवादी तथा वैनयिकवादी अवस्था में ये सब भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । ‘नो सन्नोवउत्ता जहा

વાળા જીવો ગ્રહણ કરાયા છે. તથા જ્ઞાનીથી લઈને કેવળજ્ઞાની સુધીના સઘળા જીવો ભવસિદ્ધિક જ હોય છે, અભવસિદ્ધિક હોતા નથી. ‘અન્નાણી જાવ વિભંગનાણી જાવ કણ્હપક્ખિયા’ અહિયાં સૂત્રમાં આવેલ અજ્ઞાની યાવત્પદથી મતિઅજ્ઞાનવાળા શ્રુતઅજ્ઞાનવાળા તથા વિભંગજ્ઞાની એ બધા કૃષ્ણ-પાક્ષિક જીવના કથન પ્રમાણે અક્રિયાવાદી, અજ્ઞાનવાદી અને વૈનયિકવાદી-પણામાં ભવસિદ્ધિક હોય છે, અભવસિદ્ધિક હોતા નથી.

‘સન્નાસુ ચउસુ વિ જહા સલેસ્સા’ આહાર સંજ્ઞાથી લઈને પરિગ્રહ સંજ્ઞા સુધીની ચારે સંજ્ઞાઓમાં લેશ્યાવાળા જીવોના કથન પ્રમાણે જીવ ક્રિયાવાદી પણામાં ભવસિદ્ધિક જ હોય છે, અભવસિદ્ધિક હોતા નથી. તથા અક્રિયાવાદી અને અજ્ઞાનવાદી તથા વૈનયિકવાદી અવસ્થામાં આ બધા ભવસિદ્ધિક પણ હોય છે. અને અભવસિદ્ધિક પણ હોય છે. ‘નો સન્નોવउत्ता जहा सम्मदिट्ठी’

नो संज्ञोपयुक्ता जीवा भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका भवन्तीति भावः । 'सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा' सवेदका यावत् नपुंसकवेदकाः यथा सलेश्याः यत्र यावत्पदेन स्त्रीपुरुषवेदकयोः संग्रहः तथा च सवेदकादारभ्य नपुंसकवेदकान्ताः सर्वेऽपि सलेश्यवदेव क्रियावादिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः, अक्रियावादि प्रभृतयस्तु भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति भावः । 'अवेयगा जहा सम्मदिष्टी' अवेदका यथा सम्यग्दृष्टयः सम्यग्दृष्टिवदेव सामान्यतो वेदरहिताः क्रियावादिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका भवन्तीति । 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' सकषायिनो यावत् लोभकषायिनो

सम्मदिष्टि' नो संज्ञोपयुक्त जीव सम्यग्दृष्टि के जैसे क्रियावादी अवस्था होने से भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा' सवेदक से लेकर नपुंसक वेद तक समस्त जीव सलेश्य जीवों के जैसे क्रियावादी अवस्था में भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । यहां यावत्पद से स्त्री वेदकों और पुरुषवेदकों का ग्रहण हुआ है । तथा अक्रियावादी अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी अवस्था में ये सब भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । 'अवेयगा जहा सम्मदिष्टी' अवेदक सम्यग्दृष्टि के जैसे ही क्रियावादी होने से भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' सकषायी यावत् लोभकषायी जीव सलेश्य जीवों के जैसे ही क्रियावादी अवस्था में भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । यहां

नो संज्ञोपयोगवाणा लोवे सम्यग्दृष्टिवाणा लोवना कथन प्रमाणे क्रियावादी अवस्थाभां भवसिद्धिक होय छे. अलवसिद्धिक होता नथी 'सवेदगा जाव नपुंसगवेदगा जहा सलेस्सा' वेदवाणा सवेदक लोवेथी लधने नपुंसकवेद सुधीना सधणा लोवे देश्यावाणा लोवना कथन प्रमाणे क्रियावादी अवस्थाभां भवसिद्धिक होय छे अलवसिद्धिक होता नथी. अदियां यावत्पदथी स्त्रीवेदवाणा अने पुरुषवेदवाणा ग्रहण कराया छे तथा अक्रियावादी, अज्ञानवादी, अने वैनयिकवादी अवस्थाभां आ गधा भवसिद्धिक पणु होय छे, अने अलवसिद्धिक पणु होय छे 'अवेयगा जाव सम्मदिष्टि' ओदक लव सम्यग्दृष्टिवाणा लोवना कथन प्रमाणे क्रियावादी अवस्थाभां भवसिद्धिक होय छे. अलवसिद्धिक होता नथी 'सकसाई जाव लोभकसाई जहा सलेस्सा' सकषायी यावत् लोभकषायवाणा लोवे देश्यावाणा लोवना कथन प्रमाणे क्रियावादी अवस्थाभां भवसिद्धिक होय छे.

यथा सलेश्याः यावत्पदेन क्रोधमानमायाकषायिनां संग्रहः तथाचैते सर्वेऽपि सलेश्यवदेव क्रियावादिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका अक्रियादि समवसरण-अयत्रन्तरत्तु भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति । 'अकसाई जहा सम्मदिह्नी' अरूपायिनो यथा सम्यग्दृष्टयः सम्यग्दृष्टिवदेव भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका भवन्तीति भावः । 'सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा' सयोगिनो यावत् काययोगिनश्च यथा सलेश्याः, यावत्पदेन मनोयोगिनो वचोयोगिनश्च संग्रहः तथा च सयोगित आरभ्य काययोगिपर्यन्ताः सर्वेऽपि सलेश्यवदेव क्रियावादिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका अक्रियावादि प्रमृतय स्रयेऽपि भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति भावः । 'अजोगी जहा सम्मदिह्नी' अयोगिनो यथा सम्यग्दृष्टयः सम्यग्दृष्टि वद् अयोगिनो भवसिद्धिका

यावत् शब्द से क्रोध, मान, माया कषायवालों का ग्रहण हुआ है । तथा-अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी अवस्था में ये सब भवसिद्धिक ही होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'अकसाई जहा सम्मदिह्नी' अरूपायवाले जीव सम्यग्दृष्टि जीवों के जैसे भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'मजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा' सयोगी यावत् काययोगी सलेश्य जीवों के जैसे क्रियावादी अवस्था में भवसिद्धिक ही होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । यहाँ यावत्पद से 'मनोयोगी और वचोयोगी' इनका ग्रहण हुआ है । तथा ये सयोगी से लेकर यावत् काययोगी तक के समस्त जीव अक्रियावादी अवस्था में अज्ञानिकवादी अवस्था में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । 'अजोगी जहा

अभवसिद्धिक होता नहीं । अहियां यावत्पदधी क्रोध, मान, माया, ये कषाये वाणाये अहियु करायो छे. तथा क्रिय वही, अज्ञानवही, अने वैनयिकवादी अवस्थाभां आ यथा भवसिद्धिक न् डोय छे. अभवसिद्धिक होता नहीं 'अकसाई जहा सम्मदिह्नी' अरूपायवाणा अवे सम्यग्दृष्टिवाणा अवेना कथन प्रमाणे भवसिद्धिक न् डोय छे. अभवसिद्धिक होता नहीं 'मजोगी कायजोगी जहा सलेस्सा' सयोगी यावत्काययोगवाणा सलेश्य अवेना कथन प्रमाणे क्रियावही अवस्थामा भवसिद्धिक न् डोय छे अभवसिद्धिक होता नहीं अहियां यावत्पदधी मनोयोगवाणा, अने वचन योगवाणा अहियु करायो छे. तथा आ सयोगीथी लघने काययोगवाणा सुधीना सधणा अवे अक्रियावादी अवस्थाभां अज्ञानवादी अवस्थाभां अने वैनयिकवादी अवस्थाभां भवसिद्धिक पणु डोय छे, अने अभवसिद्धिक पणु डोय छे.

एव न तु अभवसिद्धिका भवन्तीति भावः । 'सागारोवउत्ता अनागारोवउत्ता जहा सलेस्सा' साकारोपयुक्ता स्तथा अनाकारोपयुक्ता जीवाः सलेश्य जीववदेव क्रिया-
वादिनो भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः, अक्रियावादी प्रभृतयस्त्रयोऽपि भव-
सिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि भवन्तीति भावः । 'एवं नेरइया वि भाणियन्वा'
एवं सामान्यतो जीववदेव नैरयिका अपि जीवा लेश्यादिभि द्वारै भवसिद्धिकाऽ-
भवसिद्धिकादिरूपेण भणित्तव्याः । 'नवरं नायव्वं जं अत्थि' नवरं केवलं सामान्य
जीवप्रकरणापेक्षया इदं वैलक्षण्यं यत् यत् लेश्यादिकं द्वारजातं नारकस्य विद्यते
तदेव द्वारजातमाश्रित्य भवसिद्धिकत्वादि विचारणीयमिति । 'एवं असुरकुमारा
वि जाव थणियकुमारा' एवं नारकदण्डकवदेव असुरकुमारादारभ्य स्तनितकुमार-

सम्मदिट्ठी' सम्भक्खट्ठि जीवों के जैसे अयोगी जीव भवसिद्धिक होते
हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'सागारोवउत्ता अनागारोवउत्ता जहा
सलेस्सा 'साकारोपयुक्त तथा अनाकारोपयुक्त जीव सलेश्य जीवों के
जैसे क्रियावादी अवस्था में भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं
होते हैं । तथा ये ही अक्रियावादी, अज्ञानिकवादि और वैनयिकवादी
अवस्था में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं ।
'एवं नेरइया वि भाणियन्वा' सामान्य जीव के जैसे ही नैरयिक भी
लेश्यादि द्वारों को लेकर भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक रूप से कहना
चाहिये । 'नवरं नायव्वं जं अत्थि' परन्तु सामान्य जीव प्रकरण की
अपेक्षा से विशेषता केवल इतनी सी ही है कि जो लेश्यादिक द्वार नारक
के हो उसी द्वार को लेकर भवसिद्धिक आदिका विचार करना चाहिये
'एवं असुरकुमारा वि जाव थणियकुमारा' नारक दण्डक के जैसे ही

'अजोगी जहा सम्मदिट्ठी' सम्भक्खट्ठिवाणा एवना कथन प्रभाण्णे अयोगी एवो
भवसिद्धिक न् होय छे. अभवसिद्धिक होता नथी 'सागारोवउत्ता अनागारोव
उत्ता जहा सलेस्सा' साकारोपयोगवाणा अने अनाकारोपयोगवाणा एवो लेश्या-
वाणा एवोना कथन प्रभाण्णे क्रियावादी अवस्थाभां भवसिद्धिक न् होय छे,
अभवसिद्धिक होता नथी तथा आ क्रियावादी, अज्ञानवादी अने वैनयिकवादी
अवस्थाभां भवसिद्धिक पण्णु होय छे, अने अभवसिद्धिक पण्णु होय छे.
'एवं नेरइया वि भाणियन्वा' सामान्य एवना कथन प्रभाण्णे नैरयिको पण्णु
लेश्या विगेरे द्वारोने लथने भवसिद्धिक अने अभवसिद्धिक न् होय छे. तेम
समण्णु 'नवरं नायव्वं जं अत्थि' परन्तु सामान्य एव प्रकरणनी अपेक्षाथी
केवण्णु विशेषण्णु छे के-नारकता न् लेश्या विगेरे द्वारो होय अण्णु
द्वारोने लथने भवसिद्धिक विगेरेने विचार करवी लेथ्णु, 'एवं असुरकुमारा

પર્યન્તાઃ સર્વેઽપિ ક્રિયાવાદક્રિયાવાદિપ્રશ્નૃતિસમવસરણેષુ ભવસિદ્ધિકૃત્વાદિ
 રૂપેણ પ્રરૂપાનીયા ઇતિ । જીવનારકદેવદણ્ડકાન્ વિવિચ્ય એકેન્દ્રિયાદિ દણ્ડકાન્
 વિવેચયન્નાહ—‘પૃથ્વીકાઠ્યા સન્વદ્વાણેસુ વિ મજ્જિલ્લેસુ દોસુ વિ સમોસરણેસુ
 ‘ભવસિદ્ધિયા વિ અભવસિદ્ધિયા વિ’ પૃથ્વીકાયિકા જીવાઃ સર્વસ્થાનેષુ મધ્યમયો
 રક્રિયાવાદજ્ઞાનિકવાદિરૂપયોઃ સમવસરણયો ભવસિદ્ધિકા અપિ ભવન્તિ અમં-
 સિદ્ધિકા અપિ ભવન્તીતિ । ‘એવં જાવ વળસ્સહકાઠ્યા’ એવં પૃથ્વીકાયિકવદેવ
 યાવત્ વનસ્પતિકાયિકા અપિ માધ્યમિકસમવસરણદ્વયે ભવસિદ્ધિકા અપિ અમ-
 વસિદ્ધિકા અપિ ભવન્તિ, અત્ર યાવત્પદેનાપ્કાયિકતેજસ્કાયિકવાયુકાયિકાનાં
 સંગ્રહો ભવતીતિ । ‘વેદંદિયતેદંદિયચરિંદિયા એવંચેવ’ દ્વીન્દ્રિયત્રીન્દ્રિય-

અસુરકુમાર સ્થે લેકર સ્તનિતકુમાર તક સ્થ હી ક્રિયાવાદી, અક્રિયા-
 વાદી આદિ અવસ્થાઓ મેં ભવસિદ્ધિક આદિ રૂપ સે સમજના ચાહિયે— ।

હસ પ્રકાર જીવ નારક ઓર દેવ દણ્ડકોં કી વિવેચના કરકે અવ
 સૂત્રકાર એકેન્દ્રિય આદિક દણ્ડકોં કી વિવેચના કરતે હેં—‘પૃથ્વીકાઠ્યા
 સન્વદ્વાણેસુ વિ મજ્જિલ્લેસુ દોસુ વિ સમોસરણેસુ ભવસિદ્ધિયા વિ
 અભવસિદ્ધિયા વિ ‘પૃથ્વીકાયિક જીવ સમસ્ત સ્થાનોં મેં અક્રિયાવાદી
 ઓર અજ્ઞાનવાદી રૂપ દો સમવસરણોં મેં ભવસિદ્ધિક મી હોતે હેં
 ઓર અભવસિદ્ધિક મી હોતે હેં । ‘એવં જાવ વળસ્સહકાઠ્યા’ પૃથ્વી
 કાયિક કે જૈસે હી યાવત્ વનસ્પતિકાયિક મી માધ્યમિક દો સમ-
 વસરણોં મેં ભવસિદ્ધિક મી હોતે હેં ઓર અભવસિદ્ધિક મી હોતે હેં ।
 યહાં યાવત્ પદ સે ‘અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક ઓર વાયુકાયિક’ હનકા
 સંગ્રહ હઆ ટૈ । ‘વેદંદિય, તેદંદિય ચરિંદિયા એવં ચેવ’ દ્વીન્દ્રિય,

વિ જાવ યણિયકુમારા’ નારક દંડકના કથન પ્રમાણે જ અસુરકુમારોથી
 લગને સ્તનિતકુમાર સુત્રીના સમ્રણા ક્રિયાવદી, અક્રિયાવદી વિગેરે
 અવસ્થાઓમાં ભવસિદ્ધિક વિગેરે પણાથી સમજવા ।

આ પ્રમાણે જીવ, નારક, અને દેવ દંડકોતુ’ વિવેચન કરીને હવે
 સૂત્રકાર એક ઇન્દ્રિય વિગેરે દંડકોતુ’ વિવેચન કરે છે —‘પૃથ્વીકાઠ્યા સન્વ-
 દ્વાણેસુ વિ મજ્જિલ્લેસુ દોસુ વિ સમોસરણેસુ ભવસિદ્ધિયા વિ અભવસિદ્ધિયા વિ’
 પૃથ્વીકાયિક જીવો સમ્રણા સ્થાનોમાં અક્રિયાવદી અને અજ્ઞાનવાદી રૂપ એ
 સમવસરણોમાં ભવસિદ્ધિક પણ હોય છે, અને અભવસિદ્ધિક પણ હોય છે.
 અહિયાં યાવત્પદથી અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક અને વાયુકાયિક એ પદોનો સંગ્રહ
 થયો છે ‘વેદંદિય, તેદંદિય ચરિંદિયા એવં ચેવ’ એ ઇન્દ્રિયાણા, ત્રણ ઇન્દ્રિય-
 ણા અને ચાર ઇન્દ્રિયાણા જીવો પણ પૃથ્વીકાયિક વિગેરેના કથન પ્રમાણે

चतुरिन्द्रियजीवा अपि एवमेव-पृथिव्यादिकदेव ज्ञातव्याः। 'णवरं' सम्मत्ते ओहियनाणे आभिनिबोहियनाणे सुयनाणे' नवरं केवलं सम्यक्त्वे औधिकज्ञाने आभिनिबोधिकज्ञाने श्रुतज्ञाने च 'एएसु चेव' एतेषु एव सम्यक्त्वौधिक ज्ञानादि द्वारेषु 'दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' द्वयोर्मध्यमयो- रक्रियावाद्यज्ञानिकवादिनो भवसिद्धिका एव द्वीन्द्रियादारभ्य चतुरिन्द्रियान्ता भवन्ति न तु अभवसिद्धिका भवन्तीति। 'सेसं तं चेव' शेषं-मतिज्ञानादिषु यद्वै- लक्ष्यं कथितं तदतिरिक्तं सर्वं पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति। 'पंचिन्दियतिरिक्ख- जोणिया जहा नेरइया' पञ्चेन्द्रियतिरिग्योनिका यथा नैरयिकाः नैरयिके सामान्य

तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीव भी पृथिवीकायिक आदिकों के जैसे ही जानना चाहिये, अर्थात् ये सब अक्रियावादी और अज्ञानवादी अवस्थावाले होने के कारण भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं। 'नवरं' सम्मत्ते ओहियनाणे आभिनिबोहियनाणे सुयनाणे' केवल सम्यक्त्व में, औधिक ज्ञान में, आभिनिबोधिकज्ञान में और श्रुतज्ञान में 'एएसु चेव' अर्थात् इन्ही सम्यक्त्व, औधिकज्ञान आदि द्वारों में 'दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया, नो अभवसिद्धिया' अक्रियावादिता एवं अज्ञानिकवादिता को लेकर ये द्वीन्द्रियादिक भवसिद्धिक ही होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते हैं। ऐसा समझना चाहिये। 'सेसं तं चेव' इस प्रकार मतिज्ञान आदि में जो वैलक्षण्य कहा गया है सो उसके सिवाय और सब कथन पूर्व के जैसा ही है। 'पंचि- दियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया' नैरयिक प्रकरण में सामान्य

समञ्जा. अर्थात् ये यथा अक्रियावादी, अने अज्ञानवादी अवस्थावाणा होवाथी लवसिद्धिक पणु होय छे अने अलवसिद्धिक पणु होय छे. 'नवरं' सम्मत्ते ओहियनाणे आभिनिबोहियनाणे सुयनाणे' केवल सम्यक्त्वमां औधिक- ज्ञानमां अभिनिबोधिज्ञानमां अने श्रुतज्ञानमां 'एएसु चेव' अथवाया सम्यक्त्व अने औधिकज्ञान विगेरे द्वारेमां 'दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' अक्रियावादीपणु अने अज्ञानवादीपणुने लवने आ द्वीन्द्रिय विगेरे लवसिद्धिक न होय छे, अलवसिद्धिक होता नथी तेम समञ्जुं.

'सेसं तं चेव' आ रीते मतिज्ञान विगेरेमां ने लुहापणुं कलुं छे, ते कथन शिवाय भाकीनुं तमाभ कथन पडेला कहा प्रभाणुं न छे.

'पंचिन्दियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया' नास्केना प्रकरणमां सामान्य लवने अतिदेश-लदाभणुं करेन छे तेथी समन्य लवना कथन प्रभाणुं

जीवस्यातिदेशः कृतोऽतः सामान्यजीववदेव पञ्चेन्द्रियतिरथामपि व्यवस्था ज्ञातव्येति । 'नवरं नायवं जं अत्थि' नवरं ज्ञातव्यं यदस्ति पञ्चेन्द्रियतिर्यग्यो-
निकानां यद्यत् पदजातं विद्यते तत्र तत्रैव भवसिद्धिकत्वादिकमवगन्तव्यमिति ।
'मणुस्सा जहा ओहिया जीवा' मनुष्या यथा औघिका जीवाः सामान्यजीव-
प्रकरणवदेव मनुष्यप्रकरणमपि ज्ञातव्यमिति 'वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा
असुरकुमारा' वानव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका असुरकुमारवदेव ज्ञातव्याः ।
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त
समवसरणचतुष्टयविषये यद्देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव-सर्वथा सत्यमेवेति

जीव का अतिदेश क्रिया गया है-हसलिये सामान्य जीव के जैसी ही
व्यवस्था पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों की जाननी चाहिये 'नवरं नायवं जं अत्थि'
परन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों के जो-जो पद हों वही-वही पद भवसिद्धिक
आदिका कथन करना चाहिये, 'मणुस्सा जहा ओहिया जीवा' सामान्य
जीव के प्रकरण के जैसा ही मनुष्य का प्रकरण जानना चाहिये ।
'वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा' वानव्यन्तर ज्यो-
तिष्क और वैमानिकों को असुरकुमारों के जैसा जानना चाहिये
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! समवसरण चतुष्टय के विषय
में जो आप देवानुप्रियेने कहा है वह सर्वथा सत्य ही है रहस्य प्रकार

पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चानुं कथन समञ्जसुं, 'नवरं नायवं जं अत्थि' परंतु
पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चानां ने पदो क्खो डोय तेण पद भवसिद्धिक विगेरेना
कथनमां समञ्जसुं, 'मणुस्सा जहा ओहिया जीवा' सामान्य एवना प्रकरणमां
क्खो प्रमाणेण मनुष्यना संभंधमां समञ्जसुं, 'वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया
जहा असुरकुमारा' वानव्यन्तर ज्योतिष्क अने वैमानिकेना संभंधनुं कथन
असुरकुमारेना प्रकरणे प्रमाणे समञ्जसुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! समवसरण चतुष्टय के विषय
में जो आप देवानुप्रियेने कहा है वह सर्वथा सत्य ही है रहस्य प्रकार
संभंधमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं' छे, ते सर्वथा सत्य छे, हे भदन्त
आप देवानुप्रियेनुं कथन सर्वथा सत्य न छे, आ प्रमाणे क्खीने गौतमस्वामीने
प्रभुश्रीने वंदना करी नभस्कार कथा वंदना नभस्कार करीने ते पथी तेओ

कथित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा
आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ४ ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धमध्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमदक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजभद्र-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-वाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री
घासीलालत्रतिनिरचितायां श्री “भग
वतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां त्रिंशत्तमेशतके प्रथमो-
देशकः समाप्तः ॥३०१॥

कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना
नमस्कार कर फिर वे तप और संयम से आत्मा को भावित करते
हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥४॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तीसरे शतकका
॥ प्रथम उद्देशक स्यात् ॥ ३०-१॥

सथम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थान पर विराजमान थया ॥सू०४॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र”नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना त्रीसमा शतकने पडेले उद्देशे समाप्त ॥३०-१॥



॥ अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

प्रथमोद्देशकं निरूप्य क्रमप्राप्तं द्वितीयोद्देशकं निरूपयन्नाह 'अणंतरोवन्न-
गाणं' इत्यादि ।

मूलम्—अणंतरोवन्नगा णं भंते ! नेरइया किं किरियावाई
पुच्छा, गोयमा ! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि । सले-
स्सा णं भंते ! अणंतरोवन्नगा नेरइया किं किरियावाई०
एवं चेव एवं जहेव पढमुद्देसे नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि
भाणियव्वा । नवरं जं जस्स अत्थि अणंतरोवन्नगाणं नेरइ-
याणं तं तस्स भाणियव्वं । एवं सव्व जीवाणं जाव वेमाणियाणं ।
नवरं अणंतरोवन्नगाणं जं जहिं अत्थि तं तहिं भाणियव्वं ।
किरियावाई णं भंते ! अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं
पकरेंति, पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति, नो तिरिक्ख-
जोणियउयं नो मणुस्साउयं नो देवाउयं पकरेंति । एवं अकिरि-
यावाई वि वेणइयवाई वि अन्नाणियवाई वि । सलेस्सा णं भंते !
किरियावाई अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पुच्छा,
गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति ।
एवं जाव वेमाणिया । एवं सव्वट्टाणेषु वि अणंतरोवन्नगा
नेरइया न किञ्चि वि आउयं पकरेंति जाव अणागारोवउत्तत्ति ।
एवं जाव वेमाणिया । नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणि-
यव्वं । किरियावाई णं भंते ! अणंतरोवन्नगा नेरइया किं
भवसिद्धिया अभवसिद्धिया ? गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभ-
वसिद्धिया । अकिरियावाई णं पुच्छा, गोयमा ! भवसिद्धिया
वि अभवसिद्धिया वि, एवं अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि ।
सलेस्सा णं भंते ! किरियावाई अणंतरोवन्नगा नेरइया किं

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया ? गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया । एवं एणं अभिलावेणं जहेव ओहिण उद्देसण नेरइयाणं वत्तव्वया भणिया तहेव इहवि भाणियव्वा जाव अणागारोवउत्त त्ति । एवं जाव वेमाणियाणं, नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं । इमं से लक्खणं जे किरियावाइ सुक्कपक्खिया सम्मामिच्छादिट्ठी य एण सव्वे भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू.१॥

तीसइमे सए वीओ उद्देसो समत्तो ॥३०-२॥

छाया—अनन्तरोपपन्नकाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं क्रियावादिनः पृच्छा, गौतम ! क्रियावादिनोऽपि यावद्वैमानिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं क्रियावादिनः, एवमेव एवं यथैव प्रथमोद्देशके नैरयिकाणां वक्तव्यता तथैवेहापि भणितव्या, नवरं यद् यस्यास्ति अनन्तरोपपन्नकानां नैरयिकाणां तत्तस्य भणितव्यम् । एव सर्वजीवानां यावद्वैमानिकानाम् । नवरमनन्तरोपपन्नकानां यद् यत्रास्ति तत्तत्र भणितव्यम् । क्रियावादिनः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति ० ? पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, नो तिर्यगायुष्कं नो मनुष्यायुष्कं नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । एव मक्रियावादिनोऽपि अज्ञानिकवादिनोऽपि वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! क्रियावादिनः अनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं नैरयिकायुष्कं ? पृच्छा, गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति यावत् नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । एवं यावद्वैमानिकाः एवं सर्वस्थानेष्वपि अनन्तरोपपन्नका नैरयिका न किञ्चिदपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति यावदनाकारोपयुक्ता इति एवं यावद्वैमानिकाः, नवरं यद् यस्यास्ति तत् तस्य भणितव्यम् । क्रियावादिनः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाः ? गौतम ! भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिका । अक्रियावादिनः खलु पृच्छा, गौतम ! भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपि, एवमज्ञानिकवादिनोऽपि, वैनयिकवादिनोऽपि । सलेश्याः खलु भदन्त ! क्रियावादिनोऽनन्तरोपपन्नकाः नैरयिकाः किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाः ? गौतम ! भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः । एव मेतेन अभिलापेन यथैवोद्देशके उद्देशके नैरयिकाणां वक्तव्यता भणिता तथैवेहापि भणितव्या यावदनाकारोपयुक्ता इति । एवं यावद्वैमानिकानाम् नवरं यद् यस्यास्ति तत्तस्य

મણિતંત્ર્યમ્ । इदं तस्य लक्षणम्—ये क्रियावादिनः शुक्लपाक्षिकाः सम्पग्मिभ्या-
दृष्टिका एते सर्वे भवसिद्धिका नो अभवसिद्धिकाः, शेवा सर्वे भवसिद्धिका अपि
अभवसिद्धिका अपि । तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति ॥ सू० ?

त्रिंशत्तमे शतके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३०—२॥

ટીકા—‘અણંતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહયા’ અનન્તરોપપન્નકાઃ—પ્રથમસમયે
સમુત્પન્નાઃ યે તે અનન્તરોપપન્નકાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! નૈરયિકાઃ ‘કિં કિરિયાવાઈ
પુચ્છા’ કિં ક્રિયાવાદિનો ભવન્તિ ? અક્રિયાવાદિનો વા ભવન્તિ ? અજ્ઞાનિક-
વાદિનો વા ભવન્તિ ? વૈનયિકવાદિનો વા ભવન્તીતિ પ્રશ્નઃ પૃચ્છયા સંગૃહ્યતે ।
મગધવાનાહ—‘ગોયમા’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘કિરિયાવાઈ વિ
જાવ વેણહ્યવાઈ વિ’ ક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ અનન્તરોપપન્નકા નૈરયિકા
યાવત્ વૈનયિકવાદિનોઽપિ ભવન્તિ યાવત્પદેન અક્રિયાવાદિનામજ્ઞાનિક-
વાદિનાં ચ સંગ્રહો ભવતીતિ । ‘સલેસ્તા ણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા નેરહયા કિં

પ્રથમ ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરકે અથ સૂત્રકાર ક્રમ પ્રાપ્ત દ્વિતીય
ઉદ્દેશકા નિરૂપણ કરતે હૈં—‘અણંતરોવવન્નગા ણં મંતે ! નેરહયા’—इत्यादि

ટીકાર્થ—‘અણંતરોવવન્નગા ણં મંતે ! નેરહયા’ હે ભદન્ત ! અન-
ન્તરોપપન્ન નૈરયિક કયા ‘કિરિયાવાઈ પુચ્છા’ ક્રિયાવાદી હોતે હૈં ?
યા અક્રિયાવાદી હોતે હૈં ? યા અજ્ઞાનિકવાદી હોતે હૈં ? યા વૈનયિક-
વાદી હોતે હૈં ? ઉત્તર મૈં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં—‘ગોયમા ! કિરિ-
યાવાઈ વિ જાવ વેણહ્યવાઈ વિ’ હે ગૌતમ ! અનન્તરોપપન્નક—પ્રથમ
સમયોત્પન્ન—નૈરયિક ક્રિયાવાદી ણી હોતે હૈં, અક્રિયાવાદી ણી
હોતે હૈં અજ્ઞાનિકવાદી ણી હોતે હૈં ઓર વૈનયિકવાદી ણી હોતે હૈં ।
યહાં યાવત્પદ સે ઇન્હી અક્રિયાવાદી ઓર અજ્ઞાનિકવાદી પદોં કા

બીજા ઉદ્દેશાને પ્રારભ—

પહેલા ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર ક્રમથી આવેલ આ બીજા
ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે છે.—અણતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહયા’ इत्यादि

ટીકાર્થ—‘અણંતરોવવન્નગાણં મંતે ! નેરહયા’ હે ભગવન્ અનંતરોપપન્નક
નૈરયિક ‘કિરિયાવાઈ પુચ્છા’ શું ક્રિયાવાદી હોય છે ? અથવા અક્રિયાવાદી
હોય છે ? અથવા અજ્ઞાનવાદી હોય છે ? અથવા વૈનયિકવાદી હોય છે ? આ
પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—ગોયમા ! કિરિયાવાઈ વિ જાવ વેણહ્યવાઈ વિ’
હે ગૌતમ ! અનંતરોપપન્નક નૈરયિક અર્થાત્ પહેલા સમયમા ઉત્પન્ન થયેલ
નારક ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અને અક્રિયાવાદી પણ હોય છે, તથા અજ્ઞાન
વાદી પણ હોય છે. અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. અહિયાં યાવત્પદથી

किरियावाई०' सलेश्याः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं क्रियावादिनोऽक्रिया-
वादिनोऽज्ञानिकवादिनो वा वैनयिकवादिनो वा भवन्तीत्यादि क्रमेण प्रश्नः,
उत्तरमाह 'एवं चेव' पूर्वोक्तप्रकारेणैव हे गौतम ! सलेश्या अनन्तरोपपन्नारकाः
क्रियावादिनो भवन्ति यावद् वैनयिकवादिनोऽपि भवन्ति एतदेव दर्शयन्नाह 'एवं-
जहेव' इत्यादि, 'एवं जहेव पदमुद्देशेण नैरइयाणं वक्तव्यया तहेव इहवि भाणियव्वा'
एवं यथैव त्रिंशत्तमशतकीय प्रथमोद्देशके नैरयिकाणां वक्तव्यता कथिता तथैव
तेनैव प्रकारेण इहापि अनन्तरोपपन्नकनारकप्रकरणेऽपि सर्वापि वक्तव्यता भणि-
तव्या । 'नवरं जं जस्स अत्थि अनंतरोववन्नगाणं नैरइया णं तं तस्स भाणियव्व'
'नवरं केवलं प्रथमोद्देशकापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत् यस्य जीवस्य यत्
लेश्यादिकमनाकारोपयुक्तान्तं पदजातं विद्यते तस्य तदेव भणितव्यम् । 'एवं सव्व-
जीवाणं जाव वेमाणियाणं' एवमेव प्रथमोद्देशकवदेव सर्वजीवानाम् असुरकुमा-
ग्रहण हुआ है । 'सलेस्सा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा नैरइया किं
किरियावाई०' हे भदन्त ! सलेश्य अनन्तरोपपन्न नैरयिक क्या क्रि-
यावादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ?
या अज्ञानिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! एवं
चेव०' हैं गौतम ! सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिक की वक्तव्यता
जैसी ३० वे शतक के प्रथम उद्देशक में कही गई है उसी प्रकार से
यहां पर भी वही सब वक्तव्यता कहनी चाहिये, 'नवरं जं जस्स अत्थि
अणंतरोववन्नगाणं नैरइयाणं तं तस्स भाणियव्वं' परन्तु अनन्तरो-
पपन्नक नैरयिकों में जिनके जो लेश्यादिक पद अनाकारोपयुक्त
पद पर्यन्त संभवित है उनको वही पद कहने चाहिये यही इस कथनमें
प्रथम उद्देशक की अपेक्षा से यहां भिन्नता है ! 'एवं सव्वजीवाणं

अक्रियावादी અને અજ્ઞાનવાદી એ બે ગ્રહણ કરેલ છે. 'સલેસ્સા ણં ભંતે ! અણંત-
રોવવન્નગા નેરइया किं किरियावाई' હે ભગવન્ લેશ્યાવાળા અનંતરોપપન્નક
નૈરयिक શું ક્રિયાવાદી હોય છે ? અથવા અક્રિયાવાદી હોય છે ? અથવા અજ્ઞાનવાદી
હોય છે ? અથવા વૈનયિકવાદી હોય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે
કે—'गोयमा ! एवं चेव' હે ગૌતમ ! અનંતરોપપન્નક નૈરयिकના સંબંધમાં જે
પ્રમાણેનું કથન ૩૦ ત્રીસમા શતકના પહેલા ઉદ્દેશામાં કહેવામાં આવેલ છે,
એજ પ્રમાણેનું કથન અહીંયાં પણ કહેવું જોઈએ 'नवरं जं जस्स अत्थि अणंत-
रोववन्नगाणं नैरइयाणं तं तस्स भाणियव्वं' પરંતુ અનંતરોપપન્નક નૈરयिकેમાં
જેઓને જે લેશ્યા વિગેરે પદો અનાકારોપયોગ પદ સુધી થતા હોય તેઓના
સંબંધમાં એજ પદ કહેવા જોઈએ. આજ પહેલા ઉદ્દેશાના કથન કરતાં

रादारभ्य वैमानिकपर्यन्तानां वक्तव्यता पठनीया आलापप्रकाररतु स्वयमेव सर्व-
 प्रोहनीय इति। 'नवर' अणंतरोवन्नगाणं जं जहिं अत्थि तं तहिं भाणियच्चं'
 नवरपन्नन्तरोपपन्नकानां यद् यत्रास्ति लेश्यादिकं तत् लेश्यादिकं तत्र वक्तव्यम्।
 'किरियावाई णं भंते ! अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पकरे'ति ? पुच्छा'
 क्रियावादिनः खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति अथवा तिर्यग्यो-
 निकायुष्कं प्रकुर्वन्ति यद्वा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति देवायुष्कं वा प्रकुर्वन्तीति प्रश्नः
 पृच्छया संशुभ्यते। भगवानाह 'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो नेरइ-
 याउयं पकरे'ति' अनन्तरोपपन्नकाः नैरयिकाः नैरयिकसंबन्धि आयुष्कं न कुर्वन्ति

'जाव वेमाणियाणं' इसी प्रकार से प्रथम उद्देशक की वक्तव्यता जैसी-
 असुरकुमार से लेकर वैमानिक तक के सम्स्त जीवों की वक्तव्यता
 कहनी चाहिये, इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार अपने आप सर्वत्र
 कल्पित करना चाहिये, 'नवर' अणंतरोवन्नगाणं जं जहिं अत्थि तं
 तहिं भाणियच्चं' परन्तु अनन्तरोपपन्नकों के जहाँ पर जो लेश्यादिक
 पद हों वे वहाँ पर कहना चाहिये, 'किरियावाई णं भंते ! अणंतरो-
 वन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' हे भदन्त ! क्रिया-
 वादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक क्या नैरयिक आयुका बन्ध करते हैं ?
 या तिर्यगायु का बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायु का बन्ध करते हैं ? या
 देवायुका बन्ध करते हैं ? उत्तर में प्रभु कहते हैं—'गोयमा ! नो नेर-
 इयाउयं पकरे'ति, नो तिरिक्खाउयं पकरे'ति, णो मणुस्साउयं,
 णो देवाउयं' हे गौतम ! क्रियावादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक न नैरयिक
 आयुका बन्ध करते हैं न तिर्यगायु का बन्ध करते हैं न मनुष्यायुका बन्ध

अडियां लिन्न पणुं' छे 'एव खव्वजीजाणं जाव वेमाणियाणं' आञ्ज प्रमाणे
 पडेला उद्देशाभां उडेल नारक लुवेना कथन प्रमाणे पृथ्वीकयिकेथी लधने
 वैमानिक सुधीना सधणा लुवोना सणधमां उडेवु नेधये आ सणधमां
 आलाप प्रकार स्वयं णनावीने समलु देवा 'णवर' अणंतरोवन्नगाणं जं
 जहिं अत्थि तं तहिं भाणियच्चं' परतु अनन्तरोपपन्नक नैरयिकेना संणधमां
 न्यां ने लेश्या संणधी पद डोय ते पद त्या उडेवा नेधये 'किरियावाई णं भंते !
 अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पकरे'ति पुच्छा' छे भगवन् क्रियावादी
 अनन्तरोपपन्नक नैरयिक शुं नैरयिक आयुने णंध करे छे ? अथवा तिर्य-
 ग्य आयुने णंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुने णंध करे छे ? अथवा देव
 आयुने णंध करे छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रलुश्री उडे छे छे—गोयमा ! नो
 नेरइयाउयं पकरे'ति नो तिरिक्खजोणियच्चं पकरे'ति, णो मणुस्साउयं, णो देवाउयं

तथा 'नो तिरिक्खज्जोणिपाउयं पकरे ति' नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, 'णो मणुस्साउय पकरे ति' नो-नैव मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्ति 'णो देहाउयं पकरे ति' नो-न वा देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति अनन्तरोपत्तेरल्पकालत्वेन तत्समये कस्यापि आयुषो बन्धा-
भावात् । 'एवं अकिरियावाइ वि अण्णाणियवाइ वि वेणइयवाइ वि' एवं क्रियावध
नन्तरोपपन्नक नारकवदेव अक्रियावाद्यज्ञानिकवादि वैनयिकवादि नारका अपि न
नारकायुष्कं कुर्वन्ति न वा तिर्यग्योनिकायुष्कं कुर्वन्ति न वा मनुष्यायुष्कं, न वा
देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति इति भावः, हेतुरनन्तरोपपन्नत्वमेव एवमग्रेऽपि । 'सलेस्सा णं
भंते । किरियावाइ अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं पुच्छा' सलेश्याः खल्ल
भदन्त । क्रियावादिनोऽनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं नैरयिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति
अथवा तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति, मनुष्यायुष्कं वा प्रकुर्वन्ति, देवायुष्कं वा

करते हैं और न देवायु का बन्ध करते हैं । क्योंकि अनन्तरोत्प-
त्तिका काल अत्यल्प होता है इसलिये उस समय में किसी भी
आयु का बन्ध नहीं होता है । 'एवं अकिरियावाइ वि अण्णाणियवाइ वि
वेणइयवाइ वि' इसी प्रकार से अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैन-
यिकवादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक भी न नारकायुष्क का बन्ध करते हैं
न तिर्यगायुष्क का बन्ध करते हैं, न मनुष्यायुष्क का बन्ध करते
हैं और न देवायुष्क का बन्ध करते हैं । इसमें कारण अनन्तरोत्पत्ति
के काल की अत्यल्पता है । इसी प्रकार से आगे भी जानना चाहिये,
'सलेस्सा णं । भंते । किरियावाइ अणंतरोवन्नगा नेरइया किं
नेरइयाउयं पुच्छा' हे भदन्त । सलेश्य क्रियावादी अनन्तरोपपन्न
नैरयिक क्या नैरयिक आयुष्क का बन्ध करते हैं ? या तिर्यगायुष्क

पकरे ति' हे गौतम । क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक, नैरयिक आयुषो बंध करता
नथी, तिर्यग्य आयुषो बंध करता नथी मनुष्य आयुषो बंध करता नथी.
देव आयुषो पणु बंध करता नथी केम -के अनन्तर उत्पत्तिनो काण अत्यंत
अल्प होय छे तेथी ते समये केअपणु आयुषो बंध होतो नथी 'एवं
अकिरियावाइ वि वेणइयवाइ वि अण्णाणियवाइ वि' अण्ण प्रमाणे अक्रियावादी,
वैनयिकवादी, अज्ञानवादी, अनन्तरोपपन्नः नैरयिक पणु नारकनी आयुषो
बंध करता नथी. तिर्यग्य आयुषो बंध करता नथी मनुष्य आयुषो बंध
करता नथी तथा देव आयुषो बंध करता नथी कारणे के अनन्तरोत्पत्तिनो
काण अत्यंत अल्प होय छे. आण्ण प्रमाणे आगण पणु समभवु.

'सलेस्सा ण भंते ! किरियावाइ अणंतरोवन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं
पुच्छा' हे भगवन् देश्यावाणा क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक शुं नैरयिक
आयुष्यनो बंध करे छे ? अथवा मनुष्य आयुषो बंध करे छे ? अथवा

प्रकुर्वन्ति इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो नेरइयाउयं पकरे’ति जाव नो देवाउयं पकरे’ति’ नो नैरयिका-युष्कं प्रकुर्वन्ति यावत् नो देवायुष्कं प्रकुर्वन्ति यावत् पदेन नो तिर्यग्योनिकायुष्कं प्रकुर्वन्ति न वा मनुष्यायुष्कं प्रकुर्वन्तीत्यनयोः संग्रहो भवति, तथा च चतुर्ष्वपि आयुष्केषु एकविधमपि आयुष्कं न प्रकुर्वन्तीति भावः । ‘एवं जाव वेमाणिया’ एवमनन्तरोपपन्नक क्रियावादि नारकवदेव असुरकुमारादारभ्य वैमानिकान्ताः सर्वेऽपि जीवा नैकविधमपि आयुष्कं बन्धन्तीति भावः । फलत एतदेव दर्शयति—‘एवं सव्वट्ठाणे वि’ इत्यादि । ‘एवं सव्वट्ठाणेषु वि अणंतरोववन्नगा नेरइया न किंचिवि आउयं पकरे’ति जाव अणागारोवउत्त त्ति’ एवमनन्तरोपपन्नसलेश्यवदेव सर्वस्थानेष्वपि कृष्णादिलेश्याद्वारेष्वपि अनन्तरोपपन्नका नैरयिकान्ता न किमपि एकविधमपि आयुष्कं प्रकुर्वन्ति अनन्तरोपपन्नकानाम् एक प्रकारकस्यापि आयुषो बन्धनं न भवतीति । सर्वस्थानेषु एकमपि आयुर्न भवतीत्युक्तं तत् कियत्पर्यन्तं

का बन्ध करते हैं ? या मनुष्यायुष्क का बन्ध करते हैं ? या देवायुष्क का बन्ध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । नो नेरइया-उयं पकरे’ति, जाव नो देवाउयं पकरे’ति’ हे गौतम ! सलेश्य क्रियावादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक न नैरयिक आयुष्क का बन्ध करते हैं, न तिर्यगायुष्क का बन्ध करते हैं, न मनुष्यायुष्क का बन्ध करते हैं और न देवायुष्क का बन्ध करते हैं । ‘एवं जाव वेमाणिया’ इसी प्रकार से अनन्तरोपपन्न क्रियावादी नैरयिक के जैसे असुरकुमार से लेकर वैमानिक तक के सब ही जीव किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । यही बात—‘एवं सव्वट्ठाणेषु वि’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है । अर्थात्—अनन्तरोपपन्न सलेश्य नैरयिक के जैसे ही समस्त स्थानों में भी—कृष्णलेश्यादि द्वारों में भी—अनन्तरोपपन्न नैरयिक किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । ऐसा यह कथन ‘जाव अणा-

तिर्यग् आयुनेो षंध करे छे ? अथवा देव आयुष्यनेो षंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘गोयमा । नो नेरइयाउयं पकरे’ति जाव नो देवाउयं पकरे’ति’ हे गौतम ! लेश्यावाणा क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, नैरयिकेना आयुष्यनेो षंध करता नथी, तिर्यग् आयुनेो षंध करता नथी. मनुष्य आयुनेो षंध करता नथी. अने देव आयुष्यनेो पणु षंध करता नथी. ‘एवं जाव वेमाणिया’ अनन्तरोपपन्नक क्रियावादी नैरयिकेना कथन प्रमाणे ओक धं द्वियवाणाथी लधने वैमानिक सुधीना ओवेो केधपिणु आयुनेो षंध करता नथी- ओञ्ज वात ‘एवं सव्वट्ठाणे वि’ आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करेले छे. अर्थात् अनन्तरोपपन्नक लेश्यावाणा नैरयिक ओवेो केधपिणु आयुनेो षंध

स्थानं ग्राह्यं तत्राह—‘जाव अणागारोवउत्तत्ति’ यावत् अनाकारोपयुक्त इति कृष्णलेश्या दारम्य अनाकारोपयोगान्तद्वारेषु एकविधस्यापि आयुषो बन्धनं न भवतीति भावः । ‘एवं जाव वेमाणिया’ एव यावद्वैमानिकाः न केवल मनन्तरोपपन्नक्रियावादिनारकाणामेव आयुर्वन्धो न भवति किन्तु असुर कुमारादारम्य वैमानिकान्तानन्तरोपपन्नकानां सर्वेषामेव जीवानामेकस्यापि आयुषो बन्धो न भवति एतदेव दर्शितम्, ‘एवं जाव वेमाणिया’ इति प्रकरणेनेति । ‘नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं’ नवरम् असुरकुमारा दारम्य वैमानिकान्ताजीवेषु अनन्तरोपपन्नकेषु एतदेव वैलक्षण्यं यत् यस्य जीवस्य यत्स्थानं लेश्यादिकं विद्यते तस्य जीवस्य तस्मिन्नेव स्थाने आयुषो बन्धामावो

गारोवउत्तत्ति’ अनाकारोपयुक्त द्वार तक जानना चाहिये, अर्थात् कृष्णलेश्या से लेकर अनाकारोपयुक्त द्वार तक अनन्तरोपपन्न नैरयिक किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं । ‘एवं जाव वेमाणिया’ केवल अनन्तरोपपन्न क्रियावादी नैरयिक ही किसी भी आयुका बन्ध नहीं करते हैं ऐसी बात नहीं है किन्तु असुरकुमार से लेकर वैमानिक तक के जितने भी अनन्तरोपपन्न जीव हैं उन सब के भी किसी भी आयुका बन्ध नहीं होता है । यही बात सूत्रकारने ‘एवं जाव वेमाणिया’ इस प्रकरण द्वारा प्रकट की गई है । ‘नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं’ परन्तु इन अनन्तरोपपन्न असुरकुमार से लेकर अनन्तरोपपन्न वैमानिकान्त जीवों में यही विशेषता है कि जिस जीव के जो

करता नहीं था प्रमाणेत्तुं कथन ‘जाव अणागारोवउत्तत्ति’ अनाकारोपयोग द्वार सुधी समञ्जसुं. अर्थात् कृष्णलेश्याधी लक्षणे अनाकारोप योगद्वार सुधी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक कोष्ठपणु आयुषो अध करता नहीं.

‘एवं जाव वेमाणिया’ केवल अनन्तरोपपन्नक क्रियावादी नैरयिक कोष्ठपणु आयुषो अध करता नहीं. ऐसी बात नहीं, परन्तु एक ही द्विधवाणधी लक्षणे वैमानिक सुधीना जेटला अनन्तरोपपन्नक लोको छे, ते सधणा ने पणु कोष्ठपणु आयुषो अध थतो नहीं. ऐसी बात सूत्रकारने ‘एवं जाव वेमाणिया’ या सूत्र द्वारा प्रकट करेला छे. ‘नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं’ परन्तु या अनन्तरोपपन्नक एक ही द्विधवाणधी लक्षणे अनन्तरोपपन्नक वैमानिक सुधीना लोकोमां ऐसी विशेष पणु छे के-जे लोकोने जे लेश्या विगरे स्थाने थता होय ऐसी स्थानमां तेकोने आयुषो अधने अभाव कडेवे।

વક્તવ્ય ઇતિ । ‘કિરિયાવાઈ ણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા નેરહયા કિં મવ-
સિદ્ધિયા અમવસિદ્ધિયા’ ક્રિયાવાદિનઃ સ્વલ્લ મદન્ત ! અનન્તરોપપન્નકા
નૈરયિકાઃ કિં મવસિદ્ધિકા મવન્તિ અમવસિદ્ધિકા વા મવન્તીતિ
પ્રશ્નઃ, મગવાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘મવસિદ્ધિયા
નો અમવસિદ્ધિયા’ ક્રિયાવાદિનોऽનન્તરોપપન્નકા નૈરયિકા મવસિદ્ધિકા
એવ મવન્તિ ન તુ અમવસિદ્ધિકા મવન્તીતિ ભાવઃ । ‘અકિરિયાવાઈ ણં પુચ્છા’
અક્રિયાવાદિનઃ સ્વલ્લ પુચ્છા, હે મદન્ત ! અક્રિયાવાદિનોऽનન્તરોપપન્નકા નૈર-
યિકાઃ કિં મવસિદ્ધિકા અમવસિદ્ધિકા વા મવન્તીતિ પ્રશ્નઃ પુચ્છયા સંગૃહ્યતે ।
મગવાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘મવસિદ્ધિયા વિ અમવ-
સિદ્ધિયા વિ’ મવસિદ્ધિકા અપિ મવન્તિ અમવસિદ્ધિકા અપિ મવન્તિ અક્રિયા-
વાદિનોऽનન્તરોપપન્નકા નારકા ઇતિ । ‘એવં અન્નાણિયવાઈ વિ વેણહ્યવાઈ વિ’

લેહ્યાદિક સ્થાન સમ્બવિત્ત્વો ઈસી સ્થાન મેં ઈસકે આગુકે વન્નવ કા
અભાવ કહના ચાહિયે, ‘કિરિયાવાઈ ણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા નેરહયા
કિં મવસિદ્ધિયા અમવસિદ્ધિયા’ હે મદન્ત ! ક્રિયાવાદી અનન્તરોપપન્ન
નૈરયિક કયા મવસિદ્ધિકા હોતે હૈ યા અમવસિદ્ધિકા હોતે હૈં ? ઈત્તર મેં
પ્રમુશ્રી કહતે હૈ-‘ગોયમા ! મવસિદ્ધિયા નો અમવસિદ્ધિયા’ હે ગૌતમ !
ક્રિયાવાદી અનન્તરોપપન્નકા નૈરયિકા મવસિદ્ધિકા હોતે હૈં અમવસિ-
દ્ધિકા નહીં હોતે હૈં । ‘અકિરિયાવાઈ ણં પુચ્છા ।’ હે મદન્ત ! અક્રિયાવાદી
અનન્તરોપપન્ન નૈરયિકા કયા મવસિદ્ધિકા હોતે હૈ ? યા અમવસિદ્ધિકા
હોતે હૈં ? ઈત્તર મેં પ્રમુશ્રી કહતે હૈ-‘ગોયમા ! મવસિદ્ધિયા વિ અમવ-
સિદ્ધિયા વિ’ હે ગૌતમ અક્રિયાવાદી અનન્તરોપપન્ન નૈરયિકા મવસિદ્ધિકા
મી હોતે હૈ ઓર અમવસિદ્ધિકા મી હોતે હૈં । ‘એવં અન્નાણિયવાઈ

ભેઠ એ. ‘કિરિયાવાઈ ણં મંતે ! અણંતરોવવન્નગા નેરહયા કિં મવસિદ્ધિયા અમવ-
સિદ્ધિયા’ હે ભગવન્ ક્રિયાવાદી અનંતરોપપન્નકા નૈરયિકા શું ભવસિદ્ધિકા
હોય છે ? અથવા અભવસિદ્ધિકા હોય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી
કહે છે કે-‘ગોયમા ! મવસિદ્ધિયા નો અમવસિદ્ધિયા’ હે ગૌતમ ! ક્રિયાવાદી
અનંતરોપપન્નકા નૈરયિકા ભવસિદ્ધિકા હોય છે, અભવસિદ્ધિકા હોતા નથી

‘અકિરિયાવાઈ ણં પુચ્છા’ હે ભગવન્ અક્રિયાવાદી અનંતરોપપન્નકા
નૈરયિકા શું ભવસિદ્ધિકા હોય છે ? અથવા અભવસિદ્ધિકા હોય છે. આ પ્રશ્નના
ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે-‘ગોયમા ! મવસિદ્ધિયા વિ અમવસિદ્ધિયા વિ’ હે
ગૌતમ ! અક્રિયાવાદી અનંતરોપપન્નકા નૈરયિકા ભવસિદ્ધિકા પણ હોય છે, અને
અભવસિદ્ધિકા પણ હોય છે. ‘એવં અન્નાણિયવાઈ વિ, વેણહ્યવાઈ વિ’ અક્રિયા

एवमक्रियावाद्यनन्तरोपपन्नक नारकवदेव अज्ञानिवाद्यनन्तरोपपन्नका अपि ज्ञातव्याः तथा वैनयिकवादिनोऽपि ज्ञातव्या इति । भवसिद्धिका अपि अभवसिद्धिका अपीति । 'सलेस्सा णं भंते ! किरियावाई अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया' सलेइयाः खलु भदन्त ! क्रियावादिनोऽनन्तरोपपन्नका नैरयिकाः किं भवसिद्धिका भवन्ति अथवा अभवसिद्धिका भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' भवसिद्धिका भवन्ति सलेइयाः क्रियावादिनोऽनन्तरोपपन्नका नो अभवसिद्धिका भवन्ति इति । 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिए उहेसए नेरइयाणं वत्तव्वया भणिया तहेव इह वि भाणियव्वा' एवमेतेन अभिलापेन यथैवास्य शतकस्य औधिके प्रथमे उद्देशके नैरयिकजीवानां वक्तव्यता कृष्ण-

वि वेणइयवाई वि' अक्रियावादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक के जैसे। ही अज्ञानवादी अनन्तरोपपन्न नैरयिक और वैनयिकवादी नैरयिक भी जानना चाहिये, अर्थात् ये भवद्विक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । 'सलेस्सा णं भंते ! किरियावाई अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया' हे भदन्त ! सलेइय क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक क्या भवसिद्धिक होते हैं या अभवसिद्धिक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' हे गौतम ! सलेइय क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिय उहेसए नेरइयाणं वत्तव्वया भणिया, तहेव इहवि भाणियव्वा' इस प्रकार के अभिलाप से जैसी इस शतक के औधिक-प्रथम उद्देशक में नैरयिक जीवों की वक्तव्यता कृष्णलेइया-

वादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिकना कथन प्रमाणे न अज्ञानवादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक अने वैनयिकवादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिकनु कथन पणु ससज्जु अर्थात् आ णथा लवसिद्धिक पणु डोय छे, अने अलवसिद्धिक पणु डोय छे 'सलेस्सा ण भंते ! किरियाई अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया' हे लगवन् देश्यावाणा क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक शुं लवसिद्धिक डोय छे ? अथवा अलवसिद्धिक डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे क— 'गोयमा ! भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' हे गौतम ! देश्यावाणा क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक लवसिद्धिक डोय छे अलवसिद्धिक डोया नथी.

'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिए उहेसए नेरइयाणं वत्तव्वया भणिया तहेव इहवि भाणियव्वा' आ रीते आ अलिलापथी आ शतकना औधिक-

लेश्यादि द्वारेषु भणित्वा-कथिता, तथा-इहापि द्वितीयोद्देशके कृष्णलेश्या आदि द्वारेषु वक्तव्यता भणितव्या, कियत्पर्यन्त प्रथमोद्देशकवक्तव्यता भणितव्या तत्राह-‘जाव’ इत्यादि, ‘जाव अणागारोवउत्तत्ति’ यावदनाकारोपयुक्ता इति कृष्णलेश्यादित आरभ्य अनाकारोपयुक्ता नारकाः किं भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाः, एतत्पर्यन्तमिति तत्र ज्ञानाज्ञानदृष्टिवेदादिकं सर्वमेव द्वारजातं वक्तव्यमिति । ‘एवं जाव वेमाणियाणं’ एवं यावद्वैमानिकानाम् असुरकुमारादारभ्य वैमानिकान्तेषु सर्वत्रापि लेश्यादिद्वारेषु आलापको ज्ञातव्य इति । ‘णवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं’ नवरं यस्य जीवस्य यादृशं पदजातं विद्यते तस्य

वाले आदि द्वारों में कही गई है उसी प्रकार से यहां पर भी द्वितीय उद्देशक में भी-कृष्णलेश्यावाले आदि द्वारों में कहनी चाहिये ‘जाव अणागारोवउत्तत्ति’ और ऐसी यह वक्तव्यता अनाकारोपयुक्त पद तक कहनी चाहिये, तात्पर्य ऐसा है कि-कृष्णलेश्यावाले नैरयिक से लेकर अनाकारोपयुक्त पद तक के जितने भी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक हैं-वे क्या भवसिद्धिक होते हैं ? या अभवसिद्धिक होते हैं ? तो ऐसे प्रश्न के उत्तर में प्रथम उद्देशक गत वक्तव्यता यहां कहनी चाहिये, इसमें ज्ञानद्वार अज्ञानद्वार दृष्टिद्वार, वेदद्वार, आदि सब द्वार वक्तव्य है । ‘एवं जाव वेमाणियाणं’ इस प्रकार असुरकुमार से लेकर वैमानिक तक के जीवों में सर्वत्र लेश्यादिक द्वारोंमें आलापक जानना चाहिये ‘णवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं’ परन्तु जिस-जिस

पडेला उद्देशामां कृष्णलेश्यावाणानो अंतर्भाव करीने नैरयिक लोवोनु कथन करवामां आव्युं छे, ओज प्रभाणु अहियां पणु ओटले के-आ णीण उद्देशामां पणु कृष्णलेश्यावाणानो अंतर्भाव करीने कडेवुं लेधं ओ

‘जाव अणागारोवउत्तत्ति’ अने ओ प्रभाणुनुं आ कथन अनाकारोपयोगवाणाना पद सुधी कडेवुं लेधं ओ कडेवानुं तात्पर्यं ओ छे के-कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकथी लधने अनाकारोपयोग पद सुधी ओटला अनंतरोपपन्नक नैरयिके छे तेओ शुं भवसिद्धिक होय छे ? के अभवसिद्धिक होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे के-आ संबंधमां पडेला उद्देशामा कद्या प्रभाणुनुं कथन कडेवुं लेधं ओ तेमा ज्ञानद्वार, दृष्टिद्वार, वेदद्वार, विगेरे सधणा द्वारे कडेवा लेधं ओ. ‘एवं जाव वेमाणिया’ ओज प्रभाणु ओक ध्रियवाणा लोवोथी लधने वैमानिक सुधीना लोवोमां अधे ज लेश्या विगेरे द्वारेमां आलापके समजवा. ‘णवरं ज अत्थि तं

જીવસ્ય તાદૃશં તાદૃશમેવ પદજાતમન્તર્ભાવ્ય આલાપકં વિધાય વક્તવ્યતા મણિત વ્યેતિ इदमेव वैलक्षण्यं ज्ञातव्यमिति । 'इमं से लक्षणं' इदं तस्य भव्यत्वस्य लक्षणम् 'जे किरियावाई सुकपक्खिया सम्मामिच्छादिद्वी य एए सव्वे भवसिद्धिया' ये क्रियावादिनः शुक्लपाक्षिकाः सम्यग्मिथ्यादृष्टय एते सर्वेऽपि भवसिद्धिकाः 'नो अभवसिद्धिया' नो अभवसिद्धिकाः, 'सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि' शेषाः—क्रियावादि शुक्लपाक्षिका सम्यग्मिथ्यादृष्टि व्यतिरिक्ताः शेषाः सर्वे कृष्णपाक्षिकादयः भवसिद्धिका अपि भवन्ति अभवसिद्धिका अपि भवन्ति । भव्यत्वरयेदं लक्षणम् यत् क्रियावादिनः शुक्लपाक्षिकाः सम्यग्मिथ्यादृष्टयश्च भव्या एव भवन्ति नाभव्याः शेषाश्च भव्या अभव्या अपि भवन्ति सम्यग्दृष्टि ज्ञान्यवेदका कषायायोगिना भव्यत्वं

जीव के जैसा-२ पद है उस-२ जीव के वैल-२ ही पद का अन्तर्भाव करके आलापक बनाकर वक्तव्यता कहनी चाहिये यही यहां विशेषता है । 'इमं से लक्षणं' यह उस अव्यत्य का लक्षण है । 'जे किरियावाई सुकपक्खिया सम्मामिच्छादिद्वी एए सव्वे भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया' जो क्रियावादी शुक्लपाक्षिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं ये सब ही भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते हैं । 'सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि, अभवसिद्धिया वि' क्रियावादी शुक्लपाक्षिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि से भिन्न और जो सब कृष्णपाक्षिक आदि हैं वे अभवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । अव्यत्वका यह लक्षण है कि क्रियावादी शुक्लपाक्षिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि भव्य ही होते हैं अभव्य नहीं । इन से अतिरिक्त और सब जीव भव्य भी होते हैं और अभव्य

तस्य भाणियव्व' પરતુ જેને જે પ્રમ'ણે પદો કહ્યા હોય તે જીવને તે તે પ્રમા-
ણેના પદોને અંતર્ભાવ કરીને આલાપકો બનાવીને કથન કરી લેવું જોઈ એ
એજ અહિયાં વિશેષ પણું છે. 'इमं से लक्षणं' આ એ ભવ્યત્વનું લક્ષણ છે
'जे किरियावाई सुकपक्खिया सम्मामिच्छादिद्वी' જે ક્રિયાવાદી શુક્લપાક્ષિક
સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, એ સઘળા ભવસિદ્ધિક હોય છે 'नो अभवसिद्धिया' અભવ-
સિદ્ધિક હોતા નથી. 'सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि'
ક્રિયાવાદી શુક્લપાક્ષિક સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિથી જૂદા બીજા જે કૃષ્ણપાક્ષિક
વિગેરે છે, તે ભવસિદ્ધિક પણ હોય છે, અને અભવસિદ્ધિક
પણ હોય છે. ભવ્યત્વનું આ લક્ષણ કહેલ છે, કે-ક્રિયાવાદી શુક્લપાક્ષિક
સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ ભવ્ય જ હોય છે, અભવ્ય હોતાં નથી. તેના શિવાય બીજા

મસિદ્ધમેવ અતો નોક્તમિતિ । ‘સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ તદેવં મદન્ત ! તદેવં મદન્ત ! ઇતિ, હે મદન્ત ! અનન્તરોપપન્નકનારકાદીનાં ક્રિયાવાદ્યાદિવિષયે યત્ કથિતં દેવાનુપ્રિયેણ તત્ સર્વથૈવ સત્યમિતિ કથયિત્વા ગૌતમો ભગવન્તં વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા સંયમેન તપસા આત્માનં ભાવયન્ વિહરતીતિ ॥સૂ૦ ૨॥

ઇતિ શ્રી-વિશ્વવિખ્યાતજગદ્વલ્લભાદિપદભૂષિતવાલ્મજીચારિ - ‘જૈનાચાર્ય’ પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલવ્રતિવિરચિતાયાં “શ્રી ભગવતીસૂત્રસ્ય” પ્રમેયચન્દ્રિકાખ્યાયાં વ્યાખ્યાયાં ત્રિંશત્તમે શતકે દ્વિતીયોદ્દેશકઃ સમાપ્તઃ ॥૩૦-૨॥

મી હોતે હૈં । સમ્યગ્દષ્ટિજ્ઞાની, અવેદક અકષાય ઓર અયોગી યે તો મહ્ય રૂપ સે પ્રસિદ્ધ હી હૈં । અતઃ યે યહાં નહીં કહે ગયે હૈં ‘સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ હે મદન્ત અનન્તરોપપન્નક નારકાદિકોં કી ક્રિયાવાદી તાદિ કે વિષય મેં જો આપ દેવાનુપ્રિયને કહા હૈ વહ સર્વથા સત્ય હી હૈ ૨ હસ પ્રકાર કહકર ગૌતમસ્વામીને પ્રભુશ્રી કો વન્દના કી ઓર નમસ્કાર કિયા । વન્દના નમસ્કાર કરકે ફિર વે સંયમ ઓર તપસે આત્મા કો ભાવિત કરતે હુએ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો ગયે ॥સૂ૦ ૧॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત “ભગવતીસૂત્ર” કી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાકે ત્રીસવેં શતકકા દ્વિતીય ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૩૦-૨॥

જીવો ભવ્ય હોય છે, અને અભવ્ય પણ હોય છે સમ્યગ્દષ્ટિજ્ઞાની, અવેદક અકષાય અને અયોગી આ બધા તો ભવ્યપણાથી પ્રસિદ્ધ જ છે. તેથી અહિયાં કહ્યા નથી.

‘સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ હે ભગવન્ અનન્તરોપપન્નક નારક વિગેરેના ક્રિયાવાદી પણાના સંબંધમાં આપ દેવાનુપ્રિયે જે કથન કર્યું છે, તે સઘળું કથન સત્ય છે, હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયત્વં આ સંબંધનું કથન સર્વથા સત્ય જ છે. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને વંદના કરી નમસ્કાર કર્યા વંદના નમસ્કાર કરીને તે પછી તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા થકા પોતાના સ્થાન પર વિરાજમાન થયા ॥સૂ૦ ૧॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ‘ભગવતીસૂત્ર’ ની પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના ત્રીસમા શતકને બીજો ઉદ્દેશો સમાપ્ત ॥૩૦-૨॥



अथ तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते

द्वितीयोद्देशकं निरूप्य क्रमप्राप्तं तृतीयं निरूपयन्नाह—‘परंपरोववन्नगा’ इत्यादि ।

मूलम्—परंपरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया किरियावाई० एवं जहेव ओहिओ उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएसु वि नेरइयाइओ तहेव निरवसेसं भाणियठ्वं तहेव तियदंडगसंगहिओ । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥सू०१॥

तीसइमे सए तईओ उद्देसो समत्तो ॥३०—३॥

छाया—परम्परोपपन्नकाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः क्रियावादिनः० एवं यथैवौ-
धिक उद्देशकस्तथैव परम्परोपपन्नकेषु नैरयिकादिक स्तथैव निरवशेषं भणितव्यम्,
तथैव त्रिदण्डकसंगृहीतः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥सू० १॥

त्रिंशत्तमे शतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः

टीका—‘परंपरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया किं किरियावाई’ परम्परोपपन्नकाः
खलु भदन्त ! नैरयिकाः किं क्रियावादिनोऽक्रियावादिनो वा अज्ञानिकवादिनो
वैनयिकवादिनो वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—‘जहेव’ इत्यादि, ‘एवं जहेव
ओहिओ उद्देसओ’ एवं यथैवौधिक उद्देशकः ‘तहेव परंपरोववन्नएसु वि’ तथैव पर-

तीसरे उद्देशो का प्रारंभ

द्वितीय उद्देशक का निरूपण करके अब क्रमप्राप्त तृतीय उद्देशक
का निरूपण किया जाता है—‘परंपरोववन्नगाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—परंपरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया किरियावाई० ‘हे भदन्त
जो नैरयिक परम्परोपपन्नक हैं।—द्वितीयादि समयोपपन्नक हैं—वे क्या
क्रियावादी होते हैं ? या अक्रियावादी होते हैं ? या अज्ञानिकवादी होते
हैं ? या वैनयिकवादी होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘जहेव ओहिओ

त्रीण उद्देशानो प्रारंभ—

त्रीण उद्देशानुं निरूपणु करीने हुवे कमयी आवेल आ त्रीण उद्दे-
शानुं निरूपणु करवामा आवे छे.—‘परंपरोववन्नगाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—‘परंपरोववन्नगाणं भंते ! नेरइया किरियावाई’ हे भगवन् ७
नैरयिक परंपरोपपन्नक डोय छे, त्रीण विगरे समयमां उत्पन्न थवावाणा डोय छे.
तेओ शुं क्रियावादी डोय छे ? अथवा अक्रियावादी डोय छे ? अथवा अज्ञानवादी
डोय छे ? अथवा वैनयिकवादी डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे ३—
‘जहेव ओहिओ उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएसु वि’ हे गौतम ! औधिक उद्देशामां

પરોપપન્નકેષુ અપિ 'નેરહ્યાહો તહેવ નિરવસેસં ધાણિયવ્વં' નૈરયિકાદિકો વૈમાનિકાન્ત સ્તથૈવ નિરવશેપં ચથા સ્યાત્ તથા ધણિતવ્યઃ, હે ગૌતમ ! પરમ્પરોપપન્નકા નૈરયિકાઃ ક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ, અક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ અજ્ઞાનિકવાદિનોઽપિ ભવન્તિ વૈનયિકવાદિનોઽપિ ભવન્તીતિ । સલેશ્યાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! પરમ્પરોપપન્નનારકાઃ કિં ક્રિયાવાદિનો યાવત્ વૈનયિકવાદિનો ભવન્તીતિ પ્રશ્નઃ, હે ગૌતમ ! સલેશ્યાઃ પરમ્પરોપપન્નકા નૈરયિકાઃ ક્રિયાવાદિનોઽપિ ભવન્તિ યાવત્ વૈનયિકવાદિનોઽપિ ભદન્તીત્યુત્તરમ્ એવં યાવચ્છુલ્લલેશ્યાઃ પરમ્પરોપપન્નકાઃ ઇત્યાદિકં સર્વં પ્રથમોદેશકવદેવ ઇહાપિ પઠનીયમ્ એતદભિપ્રાયેણ કથિતં નિરવશેપં ધણિતવ્યમિતિ । 'તહેવ તિદંડગસંગહિઓ' તથૈવ પ્રથમોદેશકવદેવ

ઉદ્દેસઓ તહેવ પરંપરોપપન્નકેસુ વિ' હે ગૌતમ ! જેસા ઔધિક ઉદ્દેશક મેં કહાં ગયા હૈ ડસી પ્રકાર સે પરંપરોપપન્નકોં કે સમ્બન્ધ મેં ઓ 'નેરહ્યાહો તહેવ નિરવસેસં ધાણિયવ્વં' નૈરયિક સે લેકર વૈમાનિક તરુ કા સમસ્ત કથન યહાં પર કરના ઝાહિયે-તથા ચ-પરમ્પરોપપન્નક નૈરયિક ક્રિયાવાદી ઓ હોતે હૈં, અક્રિયાવાદી ઓ હોતે હૈં, અજ્ઞાનિકવાદી ઓ હોતે હૈં ઔર વૈનયિકવાદી ઓ હોતે હૈં । હસી પ્રકાર સે 'હે ભદન્ત ! ઝો સલેશ્ય પરમ્પરોપપન્નક નૈરયિક હૈં' વે કયા ક્રિયાવાદી યાવત્ વૈનયિકવાદી હોતે હૈં ? હલ્લ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં ઓ 'હે ગૌતમ ! સલેશ્ય પરમ્પરોપપન્નક નૈરયિક ક્રિયાવાદી ઓ હોતે હૈં' ઔર યાવત્ વૈનયિકવાદી ઓ હોતે હૈં' એસા ઉત્તર યહાં સમજના ઝાહિયે ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન પ્રથમ ઉદ્દેશક કે જેસે યહાં કહના ઝાહિયે હસી અભિપ્રાયસે 'નિરવસેસં ધાણિયવ્વં'

એ પ્રમાણેતુ કથન કર્યું છે, એજ પ્રમાણે પરંપરોપપન્નક નૈરયિકોના સંબંધમાં પણ 'નેરહ્યાહો તહેવ નિરવસેસં ધાણિયવ્વં' નૈરયિકથી લઈને વૈમાનિક સુધીતું સઘળું કથન અહિયાં સમજી લેવું તે આ પ્રમાણે છે.—પરંપરોપપન્નક નૈરયિક ક્રિયાવાદી પણ હોય છે. અક્રિયાવાદી પણ હોય છે અજ્ઞાનવાદી પણ હોય છે, અને વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. એજ પ્રમાણે હે લગવત્ જે લેશ્યાવાળા પરંપરોપપન્નક નૈરયિકો છે, તેઓ શું ક્રિયાવાદી હોય છે ? યાવત્ વૈનયિકવાદી હોય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પણ હે ગૌતમ લેશ્યાવાળા પરંપરોપપન્નક નૈરયિક ક્રિયાવાદી પણ હોય છે, અને યાવત્ વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. આ પ્રમાણે સમજવું. એજ પ્રમાણે યાવત્ શુકલ લેશ્યાવાળા પરંપરોપપન્નક નૈરયિકો પણ ક્રિયાવાદી હોય છે. અને યાવત્ વૈનયિકવાદી પણ હોય છે. આ પ્રમાણેતું સઘળું કથન પડેલા ઉદ્દેશમાં કહ્યા પ્રમાણે અહિયાં સમજવું. આજ અભિપ્રાયથી 'નિરવસેસં ધાણિયવ્વં' આ પ્રમાણેનો સૂત્રપાઠ કહેલ છે.

त्रिदण्डकसंगृहीतः दण्डकत्रयमित्थं भवति-नैरयिकादि पदेषु क्रियावाद्यादि-
प्ररूपणा दण्डकः प्रथमः, आयुर्वन्धदण्डको द्वितीयो भव्याभव्यदण्डकश्च तृतीय
इति। 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त !
इति यावद्विहरति, हे भदन्त ! परम्परोपपन्ननारकादीनां क्रियावाद्यादिविषये यद्
देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव-सर्वथा सत्यमेव इति कथयित्वा गौतमो
भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं
भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

इति श्री विश्वविख्यात जगद्वल्लभादिपदभूषित बालब्रह्मचारि 'जैनाचार्य' पदभूषित
पूज्यश्री 'घासीलाल' व्रत्तिचिरचितायां श्री "भगवती" सूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका
ख्यायां व्याख्यायां त्रिंशत्तमे शतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३०-३॥

ऐसा पाठ कहा गया है। 'तहेव ति दंडगसंगहिओ' प्रथम उद्देशक जिस
प्रकार से त्रिदण्डक सहित कहा गया है उसी प्रकार यह उद्देशक भी
त्रिदण्डक सहित है। वे त्रिदण्डक इस प्रकार से हैं-क्रियावादी आदिका
प्ररूपक प्रथम दण्डक, आयुबन्ध का प्ररूपक द्वितीयदण्डक और भव्या-
भव्यत्व प्ररूपक तृतीय दण्डक, 'सेवं ! भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव
विहरइ' हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक नैरयिक आदि की क्रियावादिता
आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियेने जो कहा है वह सब सत्य है २
इस प्रकार कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और उन्हे
नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे तप एवं संयम से आत्मा
को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

तृतीय उद्देशक समाप्त ॥ ३०-३ ॥

'तहेव त्रिदंडगसंगहिओ' पडेला उद्देशकां ने प्रमाणे त्रयु दंडके कडेवाभां
आव्या छे, अण प्रमाणेना-क्रियावाही विगेरेना निरूपणु स'अंधी पडेले।
दंडक, आयुअंधना निरूपणु स'अंधमा अीले दंडक अने अलव्य तथा
अलव्यात्मकेना निरूपणुना स'अंधमां त्रीले दंडक समजवे।

'सेव' भंते ! सेव भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे लगवन् परंपरोपपन्नक
नैरयिक विगेरेना क्रियावाही पणु आदिना स'अंधमां आप देवानुप्रिये ने
कथन कर्युं छे, ते सधणुं कथन सत्य छे हे लगवन् आप देवानुप्रियतुं कथन
सर्वथा सत्य छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी तेअेने
नमस्कर कर्या वंदना नमस्कार करीने तप अने संयमथी पोताना
आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

॥त्रीले उद्देशे समाप्त ॥ ३०-३॥

अथ चतुर्थाधिकादशान्ता उद्देशकाः प्रारभ्यन्ते

तृतीयोद्देशकं निरूप्य क्रममाप्तान् चतुर्थाधिकादशान्तान् उद्देशकान् निरूपय-
न्नाह—‘एवं एएणं कमेणं’ इत्यादि ।

मूत्रम्—एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाणं परिवाडी
सञ्चेव इहंपि जाव अचरिमो उद्देशो नवरं अणंतरा चत्तारि वि
एकगमगा, परंपरा चत्तारि वि एकं गमएणं, एवं चरिमा वि
अचरिमा वि एवं चेव । नवरं अलेस्सो केवली अजोगी न
भण्णइ । सेसं तहेव, सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

एएवि एक्कारस वि उद्देशगा ॥४—११॥

तीसइसं समवसरणसयं समत्तं

छाया—एवमेतेन क्रमेण यैव वन्धिशतके उद्देशकानां परिपाटी सैव इहापि
यावदचरम उद्देशकः । नवरमनन्तराश्चत्वारोऽपि एकगमकाः परम्पराश्चत्वारोऽपि
एकगमकेन, एवं चरमा अपि, अचरमा अपि एवमेव । नवरम् अलेश्यः केवली
अयोगी न भण्यते शेषं तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

एते एकादशापि उद्देशकाः । ४—११॥

त्रिंशत्तमं समवसरणशतं समाप्तम् ॥३०॥

टीका—‘एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाणं परिवाडी’ एवमेतेन
क्रमेण यैव वन्धिशतके पद्दविंशतितमे शतके उद्देशकानां प्रथमोद्देशकादारभ्यैका-
दशोद्देशकान्तानां परिपाटी प्रकाररूपा कथिता ‘सञ्चेव इहंपि जाव अचरिमो

चौथा उद्देशाका प्रारभ -

‘एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाणं’-इत्यादि

टीकार्थ--‘एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाणं परिवाडी
‘इस प्रकार इस क्रम से जो वन्धि शतक में छाहस २६ वे शतक में
उद्देशकों की-प्रथम उद्देशक से लेकर ग्यारह वे उद्देशक तक के उद्देशको

॥योथा उद्देशाने प्रारभ--

‘एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाणं’ इत्यादि

टीकार्थ--‘एवं एएणं कमेणं जञ्चेव वंधिसए उद्देशगाण परिवाडी’ आ
शीते कुमथी अधी शतकमां अटले के छ०वीसमा शतकमा उद्देशाओ-अटले
के पडेला उद्देशाथी दधने अगियारमां उद्देशा सुधीना उद्देशाओना कुन कडेल छे.

उद्देशो' सैव इहापि उद्देशकानां परिपाटी वक्तव्या यावद् अचरमोद्देश इति प्रथमो-
द्देशकादारभ्य अचरमनामकैकाद्देशकपर्यन्तं सर्वं वक्तव्यमित्यर्थः, उद्देशानां
परिपाटी यथा—औघिकोद्देशको जीवनारकादीनां प्रथमः१, ततः—अनन्तरोपप-
न्नकः२, परम्परोपपन्नकः३, अनन्तरावगाढः४, परम्परावगाढः५ अनन्तराहारक ६
परम्पराहारकः७, अनन्तरपर्याप्तकः८, परम्परपर्याप्तकः९, चरमः१० अचरमश्च
११, इति । बन्धिशतका दत्रविशेष एतावानेव—यत् तत्र बन्धपदविशिष्टा उद्देशकाः,
अत्र तु क्रियावाद्यादि पदविशिष्टा उद्देशका वक्तव्या इति । नवरं कैवल्यम् अन-
न्तराः—अनन्तरोपपन्नादिकाश्चत्वारोऽपि एकगमकाः—सदृशालापकाः अनन्तरोपप-

की परिपाटी कही गई है 'सच्चैव इहं पि जाव अचरिमो उद्देशो' वही
परिपाटी यहां पर भी उद्देशकों की 'जाव अचरिमो उद्देशो' यावत्
अचरम उद्देशक तक जाननी चाहिये, जीव नारक आदिकों का जो
प्रथम उद्देशक है वह औघिक उद्देशक है ? १ अनन्तरोपपन्नक नारका
दिकों का द्वितीय उद्देशक २ परम्परोपपन्नक नारकादिकों का तृतीय उद्दे-
शक है ६ अनन्तरावगाढ नामका चतुर्थ उद्देशक है, परम्परावगाढ
नामका पांचवां उद्देशक है, अनन्तराहारक नामका छठा उद्देशक है
परम्पराहारक नामका सातवां उद्देशक है, अनन्तरपर्याप्त नामका आठवां
उद्देशक है परम्परपर्याप्त नाम का नौवा उद्देशक है चरम नामका
दसवां उद्देशक है और अचरम नाम का ग्यारहवां उद्देशक है । बन्धि-
शतक से यहां पर इतनी ही विशेषना है कि यहां क्रियावादी आदि पद
विशिष्ट उद्देशक वक्तव्य हुए हैं और बन्धिशतकमें बन्धि पद विशिष्ट

'सच्चैव इहं पि जाव अचरिमो उद्देशो' उद्देशोऽनेनो अनेन कम् 'जाव अचरिमो उद्देशो'
यावत् अचरम उद्देशो सुधी समञ्जसुं एव नारक विगेरेना संभंधमां ने पडेसे।
उद्देशो छे, ते औघिक उद्देशो छे. १ अनन्तरोपपन्नक एव नारक विगेरे
संभंधी भान्ने उद्देशो छे. २ परंपरोपपन्नक एव नारक विगेरेना संभंधमां
त्रान्ने उद्देशो कह्यो छे. ३ अनन्तरावगाढ नामनेो योथो उद्देशो कह्यो छे. ४
परंपरावगाढ नामनेो पांचमेो उद्देशो कह्यो छे ५ अनन्तराहारक नामनेो
छठो उद्देशो कह्यो छे. ६ परंपराहारक नामनेो सातमेो उद्देशो कह्यो छे. ७
अनन्तरपर्याप्त नामनेो आठमेो उद्देशो कह्यो छे. ८ परंपरपर्याप्त नामनेो
नवमेो उद्देशो कह्यो छे. ९ चरम नामनेो दसमेो उद्देशो कहेल छे. अने
अचरम नामनेो अजियारमेो उद्देशो कहेथो छे

अधिशतक करतां अहियां अने विशेषपणुं छे के—अहियां क्रियावादी
विगेरे पद विशिष्ट—पदोथी युक्त उद्देशो कहेथो नेछमे अने अधिशतकमां

નકા જીવનારકાદયઃ, इति द्वितीयः२, अनन्तरावगाढाः जीवनागकादय इति चतुर्थः४ । अनन्तराहारका जीव नारकादयः, इति षष्ठः६, अनन्तरपर्याप्ता जीव नारकादयः इत्यष्टमः८ । एवं क्रमेण चत्वारोऽनन्तरोद्देशका वक्तव्याः । 'परंपरा चत्वारि वि एकगमणं' परम्पराः परम्परोपपन्नकादयश्चत्वारोऽपि उद्देशकाः एक गमकेन-सदृशात्पक्षेण वक्तव्याः परम्परोपपन्नका जीवनारकादय इति तृतीयो-द्देशकः । परम्परानगाढा जीवनारकादय इति पञ्चमोद्देशकः । परम्पराहारका जीव नारकादय इति सप्तमः, परम्परपर्याप्तका जीवनारकादय इति नवमः, इत्येवं क्रमेण चत्वारः परम्परका उद्देशकाः सर्वेऽपि एकरूपेण नेयाः । 'एवं चरिमा वि' एवं चरमोद्देशकः चरमाः खलु भदन्त ! नैरयिकाः क्रियावादिन एवं क्रमेण दशमोद्देशको ज्ञातव्यः । 'अचरिमा वि एवं चेन्न' अचरमा नारकादयः क्रियावा-दिनः किमित्यादिरूपेण एकादशोद्देशको नेयः । तदिन्ध गेकादशाऽपि उद्देशकाः

उद्देशक वक्तव्य हुए हैं । अनन्तर शब्द घटित चारों उद्देशक एक गमक हैं-सदृश आलापत्राले हैं । अनन्तर शब्द घटित चार उद्देशक द्वितीय उद्देशक, चतुर्थ उद्देशक, छद्दा उद्देशक और आठवां उद्देशक-हैं । परम्पर शब्द घटित चारों उद्देशक एक गमक हैं-परम्पर शब्द घटित तृतीय उद्देशक, पंचम उद्देशक, सप्तम उद्देशक और नौवां उद्देशक ये चार उद्देशक हैं । इसी प्रकार ले चरम और अचरम पद-विशिष्ट उद्देशकों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये । यहाँ समस्त उद्देशकों में क्रियावादी अक्रियावादी आदि पदों को जोड़कर आलापक प्रथम उद्देशक से लेकर ग्यारहवें उद्देशक तक के ११ ग्यारा उद्देशकों में कहना चाहिये । हम

અંધ પદવાળા ઉદ્દેશાઓ કહેવા નોંધવું. અનંતરશબ્દથી યુક્ત ચારે ઉદ્દેશાઓ એક ગમકવાળા છે. અર્થાત્ સમાન આલાપકોવાળા છે. અનંતર શબ્દથી યુક્ત ચાર ઉદ્દેશાઓ-બીને ઉદ્દેશો, ત્રીને ઉદ્દેશો છઠો ઉદ્દેશો અને આઠમે ઉદ્દેશો, આ ચાર ઉદ્દેશાઓ છે. પરંપર શબ્દથી યુક્ત ચારે ઉદ્દેશાઓના એક ગમ છે. તે આ પ્રમાણે છે.-ત્રીને ઉદ્દેશો, પાંચમે ઉદ્દેશો, સાતમે ઉદ્દેશો અને નવમે ઉદ્દેશો છે આજ પ્રમાણે ચરમ અને અચરમ પદથી યુક્ત ઉદ્દેશાઓના સંબંધમાં પણ સમજવું. અહિયાં સઘળા ઉદ્દેશાઓમાં ક્રિયાવાદી અક્રિયાવાદી, વિગેરે પદોને નોંધીને આલાપકો આ પ્રમાણે કહેવા નોંધવું-નેમકે-હે ભગવન્ ચરમ અથવા અચરમ નૈરયિકો વિગેરે શુ' ક્રિયાવાદી હોય છે? અથવા અક્રિયાવાદી હોય છે? અથવા અજ્ઞાનવદી હોય છે? અથવા વૈનયિકવાદી હોય છે? આ પ્રકારથી અહિયાં પહેલા ઉદ્દેશાથી લઈને અગિયારમા ઉદ્દેશા સુધીના અગિયાર ઉદ્દેશાઓ કહેવા નોંધવું આ રીતે

संक्षेपविस्ताराभ्याम्हि पूर्वप्रकारेण षड्विंशतितमबन्धिशतकोक्तेन वक्तव्याः ।
 'णवरं अलेस्सो केवली अजोगी न भन्नइ' नवरं केवलम् अलेश्यो जीवः केवली
 अयोगी चैते कुत्रापि उद्देशके नो मणितव्या इतेषामचरमत्वाभावेन प्रश्नानर्ह
 त्वात् तत्प्रश्नोत्तरयोरप्रयोजनत्वाच्चेति । 'सेसं तं चेव' शेषम्—कथितजीवा-
 तिरिक्तं सर्वमपि वस्तु बन्धिशतकवदेव ज्ञातव्यम् । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'
 तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! जीवादीनां क्रियात्राद्यादिविषये
 यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, इति कथयित्वा गौतमो

प्रकार छाईस २६ वे' बन्धि शतक के जिस प्रकार उद्देशकों के कहने का
 कहा जा चुका है उसी प्रकार यहां भी संक्षेप और विस्तार से कहना
 चाहिये, यहां पर भी बन्धिशतक के जैसे अचरम उद्देशक में अलेश्यों
 के सम्बन्ध में केवलियों के सम्बन्ध में, अयोगियों के सम्बन्ध में
 कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं करना चाहिये क्योंकि वे अचरम नहीं
 होते हैं अतः ये सब प्रश्न यहां नहीं उठते हैं। 'सेसं तं चेव'
 बाकी का और सब कथन बन्धिशतक के ही जैसा है। 'सेवं भंते ! सेवं
 भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जीवादिकों की क्रियायादिता आदिके विषयमें
 जो आप देवानुप्रियेने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ इस
 प्रकार कह कर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया,

२६ छ०वीसमां षड्विंशतकमां उद्देशकानां उद्देशकानां संबंधमां के प्रकार उद्देश
 छे, अथ प्रमाणेना प्रकार अद्वियां पणु संक्षेपथी अने विस्तारथी उद्देशो
 लोछये. अद्वियां लेश्याना संबंधमां उद्देशकानां संबंधमां, अयोगीना
 संबंधमां कांछपणु प्रश्न करवो न लोछये. उभ उ-कृतकृत्य डोवाथी आ
 षथा प्रश्नो तेजोना संबंधमां उपस्थित थता नथी. 'सेसं तं चेव' भाडीनुं
 भीणु तमाम कथन षड्विंशतकना कथन प्रमाणे न छे तेम समणवुं.

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् एव विगेरेना क्रियावादि पणु।
 विगेरेना संबंधमां आप देवानुप्रिये के कथन कथुं छे, ते सर्वथा सत्य छे.
 हे भगवन् ! आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे, आ प्रमाणे कडीने
 गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेजोने नमस्कार कर्या. वंदना नमस्कार
 करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता

भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति । 'ए एकारस वि उद्देशगा' एते एकादशापि उद्देशकाः सन्तीति । सू० १।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-

कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,

वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-

'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-बाल-

ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री

घासीलालव्रतिविरचितायां श्री " भग

वतीसूत्रस्य " प्रमेयचन्द्रिकारूपायां-

व्याख्यायां त्रिंशत्तमे शतके चतुर्थी-

देशकः समाप्तः ॥३०-४॥

इति त्रिंशत्तमं समवसरणशतं समाप्तम् ॥३०॥

वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थानपर विराजमान हो गये 'ए एकारस उद्देशगा' इस प्रकार से ११ उद्देशक पर्यन्त के उद्देशकों समजलेने चाहिए ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत

"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तीसरे शतकका

॥ चौथा उद्देशक समाप्त ॥ ३०-१॥

॥३० वां शतक समाप्त ॥

थका पोताना स्थानपर विराजमान था. 'ए एकारस उद्देशगा' आ रीते अजियार उद्देशाज्यो कहा छे. ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलाल महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी

प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तीसरा शतकने चौथो उद्देशो समाप्त ॥३०-४॥

॥ तीसरा शतक समाप्त ॥३०-४॥



अथ एकत्रिंशत्तमशतकम्

अथ प्रथमोद्देशकः प्रारभ्यते

त्रिंशत्तमशतकान्ते चत्वारि समवसरणानि कथितानीति चतुष्टयसाधर्म्यात् चतुर्युग्मवक्तव्यतानुगतमष्टाविंशत्युद्देशकयुक्तमेकत्रिंशत्तमं शतमारभते, तदनेन सम्बन्धेनायातस्यैकत्रिंशत्तमशतकस्य प्रथमोद्देशकगतमिदमादिमं सूत्रम्—'रायगिहे जाव' इ.

मूलम्—रायगिहे जाव एवं वयासी—कइ णं भंते ! खुड्ढा जुम्मा पन्नत्ता ? गोयमा ! चत्तारि खुड्ढा जुम्मा पन्नत्ता तं जहा कडजुम्मे१, तेओए२, दावरजुम्मे३, कलिओगे४ । से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्तारि खुड्ढा जुम्मा पन्नत्ता तं जहा कडजुम्मे जाव कलिओगे ? गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए से तं खुड्ढाग कडजुम्मे१, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे त्ति पज्जवसिए से तं खुड्ढागतेओगे२, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए से तं खुड्ढागदावरजुम्मे३, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए से तं खुड्ढाग कलिओगे४, से तेणट्टेणं जाव कलिओगे । खुड्ढाग कडजुम्मेनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइएहिंतो उववज्जंति । एवं नेरइयाणं उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणियव्वो । तेणं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ? गोयमा ! चत्तारि वा, अट्ट वा, बारस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति । तेणं भंते ! जीवा कहां उववज्जंति ? गोयमा ! से जहानामए पवए पवमाणे अज्झवसाण० एवं जहा पंचवीसइमे सए अट्टम उद्देसए नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि भाणियव्वो जाव आयप्पयोगेणं उववज्जंति, नो परप्पयोगेणं उववज्जंति । रयणप्पभापुढवी खुड्ढाग कडजुम्म नेरइया णं भंते ! कओ उवव-

ટીકા—‘રાયગિહે જાવ એવં વયાસી’ રાજગૃહે યાવદેવમવાદીત્ યાવત્પદેન ભગવતઃ સમાગમનમભૂત્ પરિષન્નિર્ગતા, ભગવતા ધર્મોપદેશઃ કૃતઃ પરિષત્પતિગતા, તતો ગૌતમો ભગવન્તં વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા પર્યુપાસીનઃ પ્રાજ્ઞલિપુટો ગૌતમઃ, એતદન્તપ્રકરણસ્ય સંગ્રહો ભવતિ । કિમવાદીત્ ? તત્રાહ—‘કહ ણં’ ઇત્યાદિ, ‘કહ ણં મંતે ! સુહા જુમ્મા પન્નત્તા’ કતિ સ્વલ્લ મદન્ત । ક્ષુદ્રા યુગ્માઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? તે ચ મહાન્તોઽપિ ભવન્ત્યતઃ ક્ષુલ્લકશબ્દેન વિશેષિતાઃ તત્ર ચત્વારોઽષ્ટૌ દ્વાદશેત્યાદિ સંખ્યાવાન્ રાશિઃ ક્ષુલ્લકઃ કૃતયુગ્મોઽભિધીયતે ।

પ્રથમ ઉદ્દેશક કા ચહ આદિ સૂત્ર હૈ— ‘રાયગિહે જાવ એવં વયાસી’— ઇત્યાદિ સૂત્ર ॥૧॥

ટીકાર્થ—‘રાયગિહે જાવ એવં વયાસી’ રાજગૃહ નગર મેં યાવત્ ઇસ પ્રકાર સે પૂછા યહાં યાવત્પદ સે એસા પ્રકરણ ગૃહીત હુઆ હૈ—ભગવાન્ મહાવૌરસ્વામી યહાં પર પધારે, પરિષદા ધર્મોપદેશ સુનને કે લિયે અપને—અપને સ્થાન સે અનેકે પાસ આઈ, ભગવાન્ ને ધર્મોપદેશ દિયા, ધર્મોપદેશ સુનકર સમા વિસર્જિત હો ગઈ, તવ ગૌતમ ને ભગવાન્ કો વન્દના કી નમસ્કાર કિયા, વન્દના નમસ્કાર કરકે ફિર ગૌતમસ્વામીને પ્રભુશ્રી કી પર્યુપાસના કરતે હુએ દોનોં હાથ જોડકર એસા પૂછા—કયા પૂછા ? સો પ્રકટ કિયા જાતા હૈ—‘કહ ણં મંતે ! સુહા જુમ્મા પન્નત્તા’ હે મદન્ત ! ક્ષુદ્રયુગ્મ કિતને કહે ગયે હૈ ? યે વડે મી હોતે હૈં । ઇસલિયે યહાં ક્ષુલ્લક શબ્દ સે ઇન્હે વિશેષિત કિયા ગયા હૈ । ઇસ પ્રકાર જો લઘુ સંખ્યાવાલી રાશિ વિશેષ હૈ વહ ક્ષુદ્રકૃતયુગ્મ હૈ । ચાર, આઠ, વારહ

શકતનેા સૂત્રકાર પ્રારભ કરે છે.—‘રાયગિહે જાવ એવં વયાસી’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—‘રાયગિહે જાવ એવં વયાસી’ રાજગૃહ નગરમા ભગવાન્ મહાવીરસ્વામીનું સમવસરણ થયું પરિષદ ભગવાનને વદના કરવા નગરની બહાર નીકળી ભગવાનની સમીપે આવી, ભગવાને તેઓને ધર્મોપદેશના સાંભળાવી ધર્મોપદેશના સાંભળીને પરિષદાએ પ્રભુશ્રીને વદના કરી નમસ્કાર કર્યા. વદના નમસ્કાર કરીને પરિષદા પોતપોતાના સ્થાને પાછી ગઈ તે પછી ગૌતમસ્વામીએ ભગવાનને વદના કરી નમસ્કાર કર્યા વદના નમસ્કાર કરીને પ્રભુશ્રીની પર્યુપાસના કરતાં થકા ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને આ પ્રમાણે પૂછયું—‘કહ ણં મંતે ! સુહા જુમ્મા પન્નત્તા’ હે ભગવાન્ ક્ષુદ્રયુગ્મ કેટલા કહેલ છે ? સમરાશીને યુગ્મ કહેવામાં આવે છે, અને તે મોટા પણ હોય છે. તેથી અહિયા ક્ષુલ્લક શબ્દથી નેને કહેલ છે. આ રીતે જે લઘુ સંખ્યાવાળી રાશી વિશેષ હોય તે ક્ષુદ્રયુગ્મ છે ચાર, આઠ, બાર, વિગેરે સંખ્યાવાળી રાશી ક્ષુલ્લકકૃતયુગ્મ છે.

भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘चत्वारि खुड्डा जुम्मा पन्नत्ता’ चत्वारः क्षुद्रा युग्माः प्रज्ञप्ताः ‘तं जहा’ तद्यथा ‘कडजुम्मे’ कृतयुग्म नामको राशिविशेषः । ‘तेयोए’ ऽयोजः ‘दावरजुम्मे’ द्वापरयुग्मः ‘कलियोए’ कलयोजः । ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ’ तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते ‘चत्वारि खुड्डा जुम्मा पन्नत्ता’ चत्वारः क्षुद्रा युग्माः प्रज्ञप्ताः ‘तं जहा’ तद्यथा ‘कडजुम्मे जाव कलिओगे’ कृतयुग्मो यावत् कलयोजः, अत्र यावत्पदेन ऽयोज द्वापरयुग्मयोः संग्रहः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए’ यः खलु राशिः समुदायः चतुष्केणापहारेण चतुःसंख्यया विभज्यमानः चतुःपर्यवसितः चतुरव-शिष्टो भवेत् ‘से तं खुड्डागकडजुम्मे’ स एषः क्षुद्रकृतयुग्मः ‘जे णं रासी चउक्केण अवहारेणं अवहीरमाणे ति पज्जवसिए सेतं खुड्डाग

आदि संख्यावाली राशि क्षुद्रलक कृतयुग्म है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! चत्वारि खुड्डा जुम्मा पन्नत्ता’ हे गौतम ! क्षुद्रयुग्म-राशि चार प्रकार की कही गई है—‘तं जहा’ जैसे—‘कडजुम्मे’ ‘कृत-युग्म’ ‘तेयोए’ ऽयोज ‘दावरजुम्मे’ द्वापरयुग्म, ‘कलियोए’ और कलयोज, ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्वारि खुड्डा जुम्मा पणत्ता’ हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि क्षुद्रयुग्म चार प्रकार के कहे गये हैं ? और वे ऐसे अपने बतलाये हैं—कृतयुग्म यावत् कलयोज । यहां यावत् पद से ऽयोज और द्वापरयुग्म का ग्रहण हुआ है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अव-हारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए’ हे गौतम ! जिसराशि में से चार चार का अपहार करते-करते अन्त में चार बचे रहे ऐसी वह संख्या क्षुद्र कृतयुग्म कही गई है ।

आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्रीं कडे छे के—‘गोयमा ! चत्वारि खुड्डा जुम्मा पन्नत्ता’ छे गौतम ! क्षुद्रयुग्मराशी चार प्रकारनी करेला छे, ‘तं जहा’ ते आ प्रभाणे छे—‘कडजुम्मे’ कृतयुग्म ‘तेयोए’ ऽयोज ‘दावरजुम्मे’ द्वापरयुग्म ‘कलियोए’ अने कलियोए ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्वारि खुड्डा जुम्मा पणत्ता’ हे भगवन् आप ओबुं शा कारणुथी कडेला छे के—क्षुद्रयुग्म चार प्रकारना कहेला छे ? अने ते कृतयुग्म ऽयोज द्वापर अने यावत् कलियोए सुधी आपे कहेला प्रभाणे ना कडेला छे. आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्रीं कडे छे के—‘गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए’ छे गौतम ! जे राशीमां चार चारने अप हार करतां करता छेवटे चार भये ओवी संख्याने क्षुद्रकृतयुग्म कडेवामां आवेला छे.

तेओए' यः खलु राशिः चतुष्केण अपहारेण अपह्रियमाणस्त्रिपर्यवसितो भवेत् स एष क्षुल्लक त्रयोजः । 'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए' यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेणापह्रियमाणो द्विपर्यवसितो भवेत् 'सेत्तं खुड्ढागदावरजुम्मे' स एष क्षुल्लकद्वापरयुग्मः 'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढाग कलिओगे' यः खलु राशिः चतुष्केणापहारेण अपह्रियमाण एक पर्यवसितो भवेत् स एष क्षुल्लक कलयोजः 'से तेणट्टेणं जाव कलिओगे' तत्तेनार्थेन गौतम ! एदमुच्यते चत्वारः क्षुल्लक युग्माः, तद्यथा—कृतयुग्मत्रयोजो द्वापरयुग्मः कलयोज इति । 'खुड्ढाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते' क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! 'कओ उववज्जंति'

'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे त्रिपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढागतेओए' जिस संख्या में से चार-चार का अपहार करते-२ अंत में तीन बचे ऐसी वह संख्या क्षुल्लक त्रयोज कही गई है । 'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढाग दावरजुम्मे' जिस संख्या में से चार-चार का अपहार करते-करते अन्त में दो बचे रहे ऐसी वह संख्या क्षुल्लक द्वापरयुग्म है । 'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढागकलिओगे' तथा जिस संख्या में से चार-२ का अपहार करते २ अन्त में एक बचारहे ऐसा वह संख्या क्षुद्र कलयोज है । 'से तेणट्टेणं जाव कलिओगे' इस कारण है गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि क्षुल्लक युग्म कृतयुग्म से लेकर कलयोज तक के भेद से चार प्रकारका होता है ।

'जेणं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे त्रिपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढागतेओए' के संख्यामां थार थारने अपहार करतां (अहार करतां करतां) छेवटे त्रयु भये ओवी स भ्याने क्षुल्लक त्रयोज कडेल छे 'जेणं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढागदावरजुम्मे' के संख्यामांथी थार-थार ओछा करतां करतां अन्तमां भे भये तीरी स भ्याने क्षुल्लकद्वापर युग्म कडे छे. 'जे णं रासी चउक्केणं अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए सेत्तं खुड्ढागकलिओगे' तथा के संख्यामांथी थार थारने अपहार करतां करतां अन्तमां ओक भये ओवी ते स भ्याने क्षुद्रकलयोज कडेवाय छे. 'से तेणट्टेणं जाव कलिओगे' ते कारणथी छे गौतम ! मे' ओपुं कहुं छे के-क्षुल्लकयुग्म, कृतयुग्मथी दाउने कल्योज सुधीना लेइथी थार प्रकारने डाय छे.

कृतः—कस्मात्स्थानविशेषादागत्य नरकावासे उत्पद्यन्ते 'किं नेरइएहिंतो उवव-
ज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतो पुच्छा' किं नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते किं वा तिर्य
ग्योनिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते मनुष्येभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते देवेभ्यो वा आग-
त्योत्पद्यन्ते इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा'
हे गौतम ! 'नो नेरइएहिंतो उववज्जंति' नो नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते क्षुद्रक-
कृतयुग्यनैरयिकाः 'एवं नेरइयाणं उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणियव्वो'
एवं नैरयिकाणामुपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः षष्ठे पदे कथित स्तथैव
इहापि भणितव्यः प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे अर्थात् एवं प्रतिषादितम्—नारका न
नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते न वा देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते किन्तु पञ्चेन्द्रिय-

'खुड्डाग कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त !
क्षुद्र कृतयुगमराशि प्रमाण नैरयिक कहां से—किस स्थान विशेष से—
आकर के उत्पन्न होते हैं—नरकावासमें से जन्म लेते हैं—'किं नेरइएहिंतो
उववज्जंति, तिरिक्खजोणिएहिंतो पुच्छा' क्या नैरयिकों में से आकर
के जन्म लेते हैं ? या तिर्यग्योनिकों में से आकर के जन्म लेते हैं ? या
मनुष्यों में से आकर के जन्म लेते हैं ? या देवों में से आकर के जन्म
लेते हैं ? उत्तरमें प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! नो नेरइएहिंतो उववज्जंति'
क्षुद्र कृतयुगमराशि प्रमाण नैरयिक नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न
नहीं होते हैं 'एवं नेरइयाणं उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणिय-
व्वो' इस प्रकार से नैरयिकों के उत्पाद जैसा प्रज्ञापना के छठे पद रूप
व्युत्क्रान्ति पदमें कहा गया है वैसा ही यहां पर कहना चाहिये—तथाच-
नारक न नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं, न देवों में से

'खुड्डागकडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! क्षुद्रकृत
युगमराशिवाणा नैरयिको कथांथी अट्ठे के कथा स्थान विशेषथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? 'किं नेरइएहिंतो उववज्जंति, तिरिक्खजोणि पुच्छा' शुं
नैरयिकोमांथी आवीने जन्म ले छे ? अथवा तिर्यग्योनिकोमांथी आवीने
जन्म ले छे ? अथवा मनुष्योमांथी आवीने जन्म ले छे ? अथवा देवोमांथी
आवीने जन्म ले छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री प्रडे छे डे—'गोयमा ! नो
नेरइएहिंतो ! उववज्जंति' क्षुद्रकृतयुगमराशी प्रमाणे नैरयिको, नैरयिकोमांथी
आवीने उत्पन्न थता नथी 'एवं नेरइयाणं उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणि-
यव्वो' आ प्रमाणे नैरयिकोना उत्पाद जे प्रमाणे प्रज्ञापना सूत्रना छुं
व्युत्क्रान्तिपदमां छुं छे, अज प्रमाणे अडियां कडेवा जेअर्थे अर्थात् नारक
नैरयिकोमांथी आवीने उत्पन्न थता नथी. तथा देवोमांथी आवीने पण

तिर्यग्योनिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते नारकाः, तथा गर्भजमनुष्येभ्य आगत्योत्पद्यन्ते नारका इति । 'तेषां भन्ते ! जीवा एगसमएण केवइया उववज्जंति' ते खलु भदन्त ! क्षुल्लककृतयुगमनारक जीवा एकसमयेन-एकस्मिन् समये इत्यर्थः कियन्तः-कियत्संख्यका उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः परिमाणविषयकः, भगवानाह- 'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'चत्तारि वा, अट्ट वा, वारस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति' चत्वार स्तादृशा नारका एकसमयेन उत्पद्यन्ते, अष्टौ वा, द्वादश वा, पौडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा तादृशा नारकाः एकसमयेन समुत्पद्यन्ते इति । 'तेषां भन्ते ! जीवा कहां उववज्जंति' ते खलु क्षुल्लककृतयुगमनारकजीवा नारकावासे कथं केन प्रकारेण उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह- 'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'से जहा नामए पवए पवमाणे' स यथा नामकः प्लवकः-कूर्दकः उच्छळन्नशीलः कोऽपि

आकर के उत्पन्न होते हैं, किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं तथा-गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं 'ते णं भन्ते ! जीवा एग समएणं केवइया उववज्जंति' हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नारक एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'गोयमा ! चत्तारि वा, अट्ट वा, वारस वा सोलस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति' हे गौतम ! क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नारक एक समय में चार या आठ या बारह या सोलह या संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । 'तेषां भन्ते ! जीवा कहां उववज्जंति' हे भदन्त ! वे क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नैरयिक जीव नारकावास में किस प्रकार से उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'गोयमा ! से जहा नामए पवए पवमाणे' जैसे कोई कूदनेवाला व्यक्ति कूदता

उत्पन्न होता नहीं. परंतु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न थाय छे. तथा गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न थाय छे. 'ते णं भन्ते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति' हे भगवन् क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नारक एक समय में कितने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे हे- 'चत्तारि वा अट्ट वा वारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति' हे गौतम ! क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नारक एक समय में चार अथवा आठ अथवा बार अथवा सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न थाय छे. 'ते णं भन्ते जीवा कहां उववज्जंति' हे भगवन् ते क्षुल्लक कृतयुगम प्रमाण नैरयिक जीव नारका-वासमां कथं रीते उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे हे- 'गोयमा ! से जहा नामए पवए पवमाणे' जैसे कोई कूदनेवाला व्यक्ति कूदता

प्लवमानः—उत्प्लवमानः कूर्दन् सः 'अज्झवसाण०' इत्यादि, 'एवं जहा पंचवीसइमे सए अट्टम उद्देशए' इत्यादि, एवं यथा पञ्चविंशतितमे शतेऽष्टमोद्देशके, इत्यादि, तथाहि—अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन करणोपायेन प्लवमानाः प्लवकाइव भविष्यत्काले तं भवं परित्यज्य पुरतोऽग्रेतनं भवद्गुपसंपद्य विहरन्ति । तेषां खलु भदन्त ! जीवानां कथं शीघ्रा गतिः ? कथं च शीघ्रो गति विषयः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! तद्यथा नामकः कश्चित्पुरुषः तरुणो बलवान् यावत् त्रिसमयेन वा विग्रहेणोत्पद्यन्ते तेषां जीवानां नारकाणां तथा शीघ्रा गतिः प्रवर्तते तथा शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञप्तः ।

हुआ अपने पूर्वके स्थान को छोड़कर आगे के स्थान को प्राप्त करता है—इसी प्रकार से नारक भी पूर्वके भव को छोड़कर अध्यवसाय रूप कारण के वशसे आगामी नारक के भयको प्राप्त करते हैं 'एवं जहा पंचवीसइमे सए अट्टम उद्देशए०' इत्यादि रूप से पञ्चीसवे शतक के आठवे उद्देशक में 'नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेणं उववज्जंति नो परप्पओगेणं उववज्जंति' नैरधिको' के सम्बन्ध में जो वक्तव्यता कही गई है वही वक्तव्यता यहां पर भी कहनी चाहिये यावत् वे आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं परप्रयोगसे उत्पन्न नहीं होते हैं । 'हे भदन्त ! उन जीवों की शीघ्र गति कैसी है ? और उस शीघ्र गतिका विषय कैसा होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गौतम ! जैसे कोई तरुण बलवान् पुरुष चौदहवे शतक में प्रथम उद्देशक में कहे अनुसार हो यावत् तीन समयवाले विग्रह से वे नारक उत्पन्न होते हैं, इस प्रकार की शीघ्र गति उन नारक जीवों की होती है । और ऐसा ही उनकी

कृतो याताना पडेलाना स्थानने छोडीने आगणना स्थानने प्राप्त करे छे, अण प्रभाणु नारक पणु पूर्वलवने छोडीने अध्यवसाय रूप कारणने वश थयने आपनारा नारक लवने प्राप्त करे छे. 'एवं जहा पंचवीसइमे सए अट्टमउद्देशए' विगरे प्रकारथी पञ्चीसमा शतकना आठमा उद्देशामां 'नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इहवि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेण उववज्जंति नो परप्पओगेणं उववज्जंति' नैरधिकेना संबन्धमां ने कथन करवामां आवेल छे, अण कथन अडिमां पणु कडेवुं नेधअ. यावत् तेआ आत्म प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे. पर प्रयोगथी उत्पन्न थता नथी. हे लवणु ते अवेणु' शीघ्रगमन केवुं डोय छे ? अने ते शीघ्रगमनने विषय डेटले ने केवे डोय छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे हे गौतम ! चौदमा शतकना पडेला उद्देशामां कथा प्रभाणु अटले के—अण कोध युवान अलशाली पुरुष डोय यावत् त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी ते नारके उत्पन्न थाय छे. आ दीतनी शीघ्रगति ते नारक अवेणी डोय छे, अने

ते खलु भदन्त ! नारका जीवाः कथं परभवायुष्कं प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन करणोपायेन, एवं खलु ते नारकाः परभवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । तेषां नारकाणां खलु भदन्त ! कथं गतिः प्रवर्तते ? गौतम ! आयुःक्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेण एवं खलु तेषां नारकाणां गतिः प्रवर्तते । ते खलु नारकजीवाः किमात्मद्वर्चा समुत्पद्यन्ते परद्वर्चा वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मद्वर्चा समुत्पद्यन्ते नो परद्वर्चा समुत्पद्यन्ते । ते खलु भदन्त ! नारकाः किमात्मकर्मणा समुत्पद्यन्ते परकर्मणा वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मकर्मणा समुत्पद्यन्ते नो परकर्मणा समुत्पद्यन्ते । ते खलु भदन्त ! नारकाः किमात्मप्रयोगेण उत्पद्यन्ते ? परप्रयोगेण उत्प-

शीघ्र गतिका विषय होता है । हे भदन्त ! नारक जीव परभवीय आयुष्क का बन्ध कैसे करते हैं ? गौतम ! अध्यवसाय योग से निवर्तित करणोपाय से वे नारक परभव की आयुष्य का बन्ध काते हैं । अर्थात् हिंसादि अशुभ परिणाम से नारक आयुष्य का बन्ध करते हैं । हे भदन्त ! उन नारकों की गति किस कारण से होती है ? हे गौतम ! उन नारक जीवों की गति आयु के क्षयसे, भव के क्षय से और स्थिति के क्षय से होती है । वे नारक जीव क्या आत्मद्वि से उत्पन्न होते हैं ? या परद्वि से उत्पन्न होते हैं । हे गौतम ! वे नारक जीव आत्मद्वि (आत्म शक्ति) से उत्पन्न होते हैं परद्वि से उत्पन्न नहीं होते हैं । हे भदन्त ! वे नारक क्या आत्मकर्म से उत्पन्न होते हैं ? या परकर्म से उत्पन्न होते हैं ? गौतम वे नारक आत्मकर्म से उत्पन्न होते हैं, परकर्म से उत्पन्न नहीं होते हैं । हे भदन्त ! वे नारक क्या आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? या परप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? हे

तेषां शीघ्रगतिना विषय एवो न डाय छे डे भगवन् नारक एव परभवना आयुष्येना बन्ध केवी रीते करे छे ? डे गौतम ! अध्यवसाय योगथी निवर्तित करवाना उपायथी ते नारके परभव आयुष्येना बन्ध करे छे, अर्थात् हिंसा विगेरे अर्थात् प्राणतिपात विगेरे अशुभ परिणामथी नारक आयुने बन्ध करे छे, डे भगवन् ते नारकेनी गति क्या कारणथी थाय छे ? डे गौतम ! ते नारक एवोनी गति आयुने क्षयथवाथी लवने क्षय थवाथी अने स्थितिने क्षय थवाथी थाय छे, ते नारक एवो आत्मद्विथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा अन्यनी द्विथी उत्पन्न थाय छे ? डे गौतम ! ते नारक एवो आत्मद्वि (आत्म शक्ति)थी उत्पन्न थाय छे, अन्यनी शक्तिथी उत्पन्न थता नथी डे भगवन् ते नारके शुं आत्मकर्मथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा परकर्मथी उत्पन्न थाय छे ? डे गौतम ! ते नारके आत्मकर्मथी उत्पन्न थाय छे, पर कर्मथी उत्पन्न थता नथी, डे भगवन् ते नारके शुं आत्मप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ?

घन्ते ? गौतम ! आत्मप्रयोगेणोत्पद्यन्ते नो परप्रयोगेण उत्पद्यन्ते । इत्यादिकं सर्वं पञ्चविंशति शतकीयाष्टमोदेशके नैरयिकाणां यथा वक्तव्यता तथैव इहऽपि नारकाणां वक्तव्यता ज्ञातव्या एतदाशयेनाह—‘एवं जहा’ इत्यादि, ‘एवं जहा पंचवीसइमे सए नेरइयाणं वक्तव्यता तथैव इह वि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेण उववज्जंति णो परप्पओगेण उववज्जंति’ एवं यथा पञ्चविंशतितये शते अष्टमोदेशके नैरयिकाणां वक्तव्यता तथैवेहापि भणितव्या क्रियत्पर्यन्तं पञ्चविंशतिशतकीयाष्टमोदेशकस्य नारकवक्तव्यता इहाभ्येतव्या तत्राह—‘जाव’ इत्यादि । यावदात्मप्रयोगेणोत्पद्यन्ते नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते, एतत्पर्यन्तं पूर्वं वक्तव्यता वक्तव्येति । सामान्यतः क्षुल्लककृतयुगप्रमाणकनारकाणामुत्पात्तादिकं प्रदर्श्य विशेषतः भुद्रकृतयुग्मादि नारकाणां वक्तव्यतां दर्शयन् प्राह—‘रयणप्पभाए’ इत्यादि, ‘रयणप्पभा पुढवी खुड्ढाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ रत्नप्रभापृथिवी क्षुल्लककृतयुग-

गौतम ! वे नारक आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं । इत्यादि सर्व कथन २५ वें शतक के आठवें उद्देशक में नैरयिकों के सम्बन्ध में जिस प्रकार कहा गया है सो वही भव यहां पर भी कहना चाहिये । इसीलिये सूत्रकार ने ‘एवं जहा पंचवीसइमे सए नेरइयाणं वक्तव्यता तथैव इह वि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेण उववज्जंति णो परप्पओगेण उववज्जंति’ ऐसा सूत्रपाठ कहा है । इस प्रकार सामान्यतः क्षुल्लक कृतयुग प्रमाणवाले नारकों का उत्पाद आदि प्रकार कह कर अब विशेषतः भुद्र कृतयुग्मादि प्रमाणवाले नारकों की वक्तव्यता को दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—इसमें गौतम ने प्रभुश्री से ऐसा पूछा है—‘रयणप्पभा पुढवी खुड्ढाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे अदन्त ! भुद्र कृतयुग्मराशि प्रमाणवाले रत्नप्रभा

के पर प्रयोगથી उत्पन्न थाय છે ? હે ગૌતમ ! તે નારકો આત્મ પ્રયોગથી ઉત્પન્ન થાય છે, પરપ્રયોગથી ઉત્પન્ન થતા નથી વિગેરે તમામ કથન પરચીસમા શતકના આઠમા ઉદ્દેશમાં નૈરયિકોના સબધમાં કહેવામાં આવેલ છે તે તે સબળ કથન અહિયા પણ સમજી લેવુ . તેથી સૂત્રકારે ‘एवं जहा पंचवीसइमे सए नेरइयाणं वक्तव्यता तथैव इह वि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेण उववज्जंति णो परप्पओगेण उववज्जंति’ એ પ્રમાણે સૂત્રપાઠ કહેલ છે. આ રીતે સામાન્યતઃ ક્ષુલ્લકકૃતયુગ પ્રમાણવાળા નારકોના ઉત્પાદ વિગેરે પ્રગટ કરીને હવે વિશેષરૂપે ભુદ્રયુગ વિગેરે પ્રમાણવાળા નારકોનું કથન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે.—આમાં ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને એવું પૂછ્યું છે કે—‘રયણપ્પભા પુઢવી કુડ્ઢાગકડજુમ્મનેરइया णं भंते ! कओं उववज्जंति’

નારકાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કુતઃ—કસ્માત્સ્થાનવિશેષાદાગત્ય રત્નપ્રભાપૃથિવ્યાં સમુ-
ત્પદ્યન્તે ? इति प्रश्नः, भगवानाह—‘एवं जहा’ इत्यादि, ‘एवं जहा ओहिय नेर-
इयाणं वत्तव्वया सच्चेव रयणप्पभाए वि भाणियव्वा’ एवं यथा औघिकनारकाणां
वक्तव्यता कथिता सैव सर्वापि वक्तव्यता इहापि रत्नप्रभा पृथिवीनारकाणामपि
भणितव्या, कियत्पर्यन्तमौघिकनारकीया वक्तव्यता भणितव्या तत्राह—‘जाव’
इत्यादि, ‘जाव नो परप्पओगेण उव्वज्जंति’ यावत् नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते एत-
त्पर्यन्तम् तथाहि—रत्नप्रभा क्षुल्लक कृतयुग्मनारकाः स्वलु मदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते

पृथिवी के नैरयिक कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अर्थात् रत्नप्रभा
पृथिवी में किस स्थान से आकरके जीव नारकनी पर्याय से उत्पन्न
होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं जहा ओहिय नेरइयाणं
वत्तव्वया सच्चेव रयणप्पभाए पुढवीए वि भाणियव्वा’ हे गौतम !
जैसी सामान्य नैरयिकों के सम्बन्ध में वक्तव्यता कही गई है वही
वक्तव्यता रत्नप्रभा पृथिवी के नैरयिकों के सम्बन्ध में भी कहनी
चाहिये । और यही वक्तव्यता ‘जाव नो परप्पओगेण उव्वज्जंति’
यावत् वे परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं ‘यहां तक के प्रकरण तक
कहनी चाहिये । अर्थात्—‘रत्नप्रभा पृथिवी के क्षुल्लक कृतयुग्मराशि
प्रमाण नारक हे मदन्त ! किस स्थान से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या
नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? या तिर्यग्योनिकों में से
आकर के उत्पन्न होते हैं ? या मनुष्यों में से या देवों में से आकर उत्पन्न

હે ભગવન્ ક્ષુદ્ર કૃતયુગ્મ રાશી પ્રમાણવાળી આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના નારકો
ક્યાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અર્થાત્ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં જ્યાં કયા સ્થાનથી
આવીને નારકની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી
કહે છે કે—‘एवं जहा ओहिय नेरइयाणं वत्तव्वया सच्चेव रयणप्पभाए पुढवीए
वि भाणियव्वा’ हे गौतम ! सामान्य नैरयिकોના સંબંધમાં જે પ્રમાણે કથન કર-
વામાં આવ્યું છે, એજ પ્રમાણેનું કથન રત્નપ્રભા પૃથ્વીના નારકોના સંબંધમાં
પણ કહેવું જોઈએ અને એજ કથન ‘जाव नो परप्पओगेण उव्वज्जंति’ यावत्
तेओ परप्रयोगથી ઉત્પન્ન થતા નથી. આ કથન સુધીનું તે પ્રકરણ કહેવું
જોઈએ. અર્થાત્ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના ક્ષુલ્લક કૃતયુગ્મરાશિ પ્રમાણ નારક હે
ભગવન્ કયા સ્થાનથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? શું તેઓ નૈરયિકોમાંથી
આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા તિર્યગ્ય યોનિકોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન
થાય છે ? અથવા મનુષ્યોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા દેવોમાંથી

किं नैरयिकेभ्य इत्यादि प्रश्नः, गौतम ! नो नैरयिकेभ्य उत्पद्यन्ते किन्तु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेभ्य आगत्य समुत्पद्यन्ते तथा गर्भज मनुष्येभ्य आगत्योत्पद्यन्ते । ते खलु रत्नप्रभानारकाः कथमुत्पद्यन्ते, गौतम ! स यथानामकः कश्चिःपुरुषः प्लवकः प्लवमानः अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन करणोपायेन पूर्वभवं परित्यज्य अग्रिमभवे उत्पद्यन्ते । तेषां नारकाणां कथं शीघ्रा गतिः कथं शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! स यथानामकः कश्चित्पुरुषः तरुणो बलवान् यावत् त्रिममयेन वा विग्रहेणोत्पद्यन्ते तेषां खलु जीवानां तथा शीघ्रा गति भवति तथा शीघ्रोगति

होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम ! वे न नैरयिकों से आकर के उत्पन्न होते हैं और न देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं, किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं और गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं । हे भदन्त ! वे रत्नप्रभा नारक किस प्रकार से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जिस प्रकार कोई प्लवक पुरुष कूदता—२ अपने पूर्व के स्थान को छोड़कर आगे के स्थान पर पहुँच जाता है, इसी प्रकार से नारक भी अपने पूर्व भवको छोड़कर अपने अध्यवसाय रूप कारण के बश से आगामी नारक भवको प्राप्त करते हैं । हे भदन्त ! उन नारक जीवोंकी शीघ्र गति कैसी होती है ? और कैसा उस शीघ्रगति का विषय—होता है ? हे गौतम ! जैसे कोई तरुण बलवान पुरुष जैसे किं चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक में

आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कहे छे—हे गौतम ! ते नारके नैरयिकेभांथी आवीने उत्पन्न थता नथी, किंतु देवेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, अने पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकेभांथी आवीने पशु उत्पन्न थाय छे तथा गर्भज मनुष्येभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, हे भगवन् ते रत्नप्रभा पृथ्वीना नारके कथं रीते उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! जे प्रभाछे कथं कूदनारे पुंशु कूदतो कूदतो पोताना पडेलाना स्थानने छोडीने आगणना स्थान पर पडोय्ती जय छे, जे प्रभाछे नारके पशु पोताना पूर्व भवने छोडीने पोताना अध्यवसाय रुप कारण वशत् आगामी नारक भवने प्राप्त करे छे, हे भगवन् ते नारक जेवानी शीघ्रगति केवी डोय छे ? अने ते शीघ्र गतिने विषय—समय डोय छे ? हे गौतम ! जेभ कथं तश्चु भगवान पुंशु जेभ के चौदमा शतकना पडेलो उद्देशाभां कडेवामा आवेल छे, ते प्रभाछे जे नारक त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी त्यां उत्पन्न थथ जय छे, आ रीतनी तेजोनी शीघ्रगति डोय छे, अने ते

વિષયશ્ચ કથિતઃ । તે સ્વલુ મદન્ત ! નારકાઃ કથં પરમવાયુષ્કં કુર્વન્તિ ? ગૌતમ !
 અધ્યવસાયયોગનિર્વર્તિતેન કરણોપાયેન એવં સ્વલુ રત્નપ્રમાપૃથિવી નારકાઃ
 પરમવાયુષ્કં કુર્વન્તિ । તેપાં ક્ષુલ્લકૃતયુગ્મરત્નપ્રમાનારકજીવાનાં કથં ગતિઃ
 પ્રવર્ત્તે ? ગૌતમ ! આયુક્ષયેણ મવક્ષયેણ સ્થિતિક્ષયેણ એવં સ્વલુ તેપાં ગતિઃ
 પ્રવર્ત્તે । તે રત્નપ્રમાનારકાઃ આત્મદ્વર્ચા ઉત્પદ્યન્તે પરદ્વર્ચા વ્રોત્પદ્યન્તે ?
 ગૌતમ ! આત્મદ્વર્ચા ઉત્પદ્યન્તે નો પરદ્વર્ચા સમુત્પદ્યન્તે । તે સ્વલુ રત્નપ્રમા
 નારકાઃ કિમાત્મકર્મણા સમુત્પદ્યન્તે પરકર્મણા વા સમુત્પદ્યન્તે ? ગૌતમ ! આત્મ
 કર્મણૈવ સમુત્પદ્યન્તે નો પરકર્મણા । તે સ્વલુ મદન્ત ! રત્નપ્રમાનારકાઃ કિમા

કહા મયા હૈ ઉસ્કે અનુમાર વે નારક તીન સ્વમથ્વાલી ત્રિગ્રહ ગતિ સે
 વહાં ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । હસ પ્રહાર કી ઉન્કી શીઘ્રગતિ હોતી હૈં ઓર
 ઉસ શીઘ્રગતિ કા એસા વિષય દોતા હૈં । હે મદન્ત ! વે નારક પરમવ
 આયુકા વન્ધ કૈસે કરતે હૈં ? હે ગૌતમ ! અધ્યવસાય યોગ સે નિર્વર્તિત
 કરણોપાય સે પરમવ કી આયુ કા વન્ધ કરતે હૈં અર્થાત્ પ્રાણાતિપાત
 રૂપ અશુભ કર્મ સે નારક આયુકા વન્ધ કરતે હૈં । હે મદન્ત ! ક્ષુલ્લક
 કૃતયુગ્મરાશિ પ્રમાણરૂપ રત્નપ્રમા નારક જીવોં કી ગતિ કિસ કારણ
 સે હોતી હૈં ? ગૌતમ ! આયુ કે ક્ષય સે મવ કે ક્ષય સે ઓર સ્થિતિ કે
 ક્ષય સે ઉન્કી ગતિ હોતી હૈં, હે મદન્ત ! વે રત્નપ્રમા કે નૈરયિક આત્મદ્વિ
 સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? યા પરદ્વિ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? હે ગૌતમ ! વે
 આત્મદ્વિ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં, પરદ્વિ સે નહીં । હે મદન્ત ! વે રત્નપ્રમા
 કે નૈરયિક કર્મ આત્મકર્મ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં યા પરકર્મ સે ઉત્પન્ન હોતે
 હૈં ? હે ગૌતમ ! વે રત્નપ્રમા કે નૈરયિક આત્મકર્મ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં,

શીઘ્રગતિનો એવો વિષય હોય છે. હે ભગવન્ તે નારકો પરભવના આયુષ્યનો
 બંધ કેવી રીતે કરે છે ? હે ગૌતમ ! અધ્યવસાયયોગથી નિર્વર્તિત કારણના ઉપાયથી
 પરભવના આયુષ્યનો બંધ કરે છે. અર્થાત્ પ્રાણાતિપાત વિગેરે અશુભ
 કર્મથી નારક આયુનો બંધ કરે છે. હે ભગવન્ ક્ષુલ્લક કૃતયુગ્મરાશી પ્રમાણ
 રૂપ રત્નપ્રમા પૃથ્વીના નારક જીવોની ગતિ કયા કારણથી થાય છે ? હે ગૌતમ !
 આયુના ક્ષયથી ભવનાક્ષયથી અને સ્થિતિના ક્ષયથી તેઓની ગતિ થાય છે.
 હે ભગવન્ તે રત્નપ્રમા પૃથ્વીના નૈરયિકો આત્મદ્વિથી ઉત્પન્ન થાય છે ?
 અથવા પરનીદ્વિથી ઉત્પન્ન થાય છે, હે ગૌતમ ! તેઓ આત્મદ્વિથી ઉત્પન્ન
 થાય છે પરદ્વિથી ઉત્પન્ન થાતા નથી. હે ભગવન્ તે રત્નપ્રમા પૃથ્વીના
 નૈરયિકો શું આત્મ કર્મથી ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા પરના કર્મથી ઉત્પન્ન
 થાય છે ? હે ગૌતમ ! તેઓ આત્મકર્મથી ઉત્પન્ન થાય છે, પરકર્મથી નહીં.

त्मप्रयोगेण उत्पद्यन्ते परप्रयोगेण वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मप्रयोगेणैवोत्पद्यन्ते, एतत्पर्यन्तमौघिकनारकप्रकरणं रत्नप्रभा पृथिवीनारकप्रकरणे भणितव्यमिति । 'एवं सक्करप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए' एव' रत्नप्रभावदेव शर्कराप्रभायामपि यावत् अधःसप्तम्यां नारकपृथिव्याम् 'एवं उव्वाओ जहा वक्कंतीए' एव मुपपातो वर्णनीयो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे उपपातो नारकाणां मुपपादित इति । 'असन्नी खलु पढमं दोच्चं व सरीसवा तइय पक्खी गाहाए उव्वाएयव्वा' असंज्ञी खलु प्रथमां द्वितीयां च सरीसृपाः तृतीयां पक्षिणः (यान्ति) इत्यादि गाथाभ्याम् उपपातयितव्याः असंज्ञिनां प्रथमनरके उपपातो भवति

पर कमे से नहीं । हे गौतम ! वे रत्नप्रभा के नैरयिक क्या आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? या पर प्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे रत्नप्रभा के नैरयिक आत्मप्रयोग से ही उत्पन्न होते हैं परप्रयोग से नहीं । 'यहां तक का यह सब प्रकरण जो कि औघिक नारक के प्रकरण में कहा गया है यहाँ रत्नप्रभा पृथिवी के नारक के प्रकरण में कहना चाहिये । 'एवं सक्करप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए' इसी प्रकार की वक्तव्यता द्वितीय शर्करा पृथिवी से लेकर अधःसप्तमी पृथिवी के नारकों के उत्पाद के सम्बन्ध में भी कहनी चाहिये, अर्थात् प्रज्ञापना के व्युत्क्रान्ति नामक छठे पद में जैसा नारकों के उत्पाद का वर्णन किया गया है वैसा ही वर्णन यहां पर भी करना चाहिये, 'असन्नी खलु पढमं दोच्चं व सरीसवा तइय पक्खी' गाहाए उव्वाएयव्वा' इत्यादि गाथा द्वारा यह वहां पर प्रकट किया है कि असंज्ञी जीवों का प्रथम नरक तक उपपात

हे भगवन ते रत्नप्रभापृथ्वी ना नारके शुं आत्म प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? के परप्रयोगथी न उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वीना नारके आत्मप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे. परप्रयोगथी उत्पन्न थता नंथी. आटला सुधीनुं आ तमाभ प्रकरणु के न् औघिक नारकना प्रकरणुमां कडेवामां आवेद छे, ते आ रत्नप्रभा पृथ्वीना नारकना प्रकरणुमां कडेवुं लेधये. 'एवं सक्करप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए' आ न् प्रभाणेतुं कथन थी न् शर्करा पृथ्वीथी लधने अधःसप्तमी पृथ्वीना नारकेना उत्पादना संभंधमां पणु कडेवुं लेधये. अर्थात् प्रज्ञापना सूत्रना व्युत्क्रान्ति पदमां अटले के छट्टा पदमां नारकेना संभंधमां न् प्रभाणेतुं वणुं न करवामां आवेद छे, अन् प्रभाणेतुं वणुं न अडियां पणु करवुं लेधये 'असन्नी खलु पढमं दोच्चं व सरीसवा तइय-पक्खीगाहाए उव्वाएयव्वा' विगेरे गाथाद्वारा त्यां आ कथन प्रगट करवामां आवेद छे. -के-असंज्ञी जीवोना पडेलां नरकमां उत्पात डोय

સર્પાદીના મુપપાતો દ્વિતીયનરકે ભવતિ પક્ષિણામુપપાત સ્ત્રીય નરકે ભવતીત્યાદિ
ગાથાદ્વયવર્ણિત ક્રમેણ સપ્તનારકપર્યન્તં તત્તજ્જીવાનામુપપાતો દર્શનીયઃ તથાહિ-

‘અસંજી સ્વલુ પદમં દોઢ્વં વ સરીસવા તદ્વ્ય પક્ષી,
સીદ્ધા જંતિ ચતુર્થિ, ઉરગા પુણ પંચમિ પુઢવિ ॥૧॥
છટ્ઠિ ચ હ્થિયાઓ, મચ્છા મણુયા ય સત્તમિ પુઢવિ ।

એસો પરમોવાઓ, ઘોઢ્વઓ નરગ પુઢવીણં ॥૨॥ ઇતિ
છાયા—અસંજી સ્વલુ પ્રથમાં, દ્વિતીયાં ચ સરીસુપા તૃતીયાં પક્ષિણઃ ।

સિદ્ધા યાન્તિ ચતુર્થી, ઉરગાઃ પુનઃ પશ્ચમીં પૃથિવીમ્ ॥૧॥
પૃઠ્ઠીં ચ સ્ત્રિયઃ, મત્સ્યા મનુજાશ્ચ સપ્તમીં પૃથિવીમ્ ।

એષ પરમોપપાતો ઘોઢ્વઓ નરકપૃથિવીનામ્ ॥૨॥ ઇતિ ।

‘સેસં તં ચેવ’ શેષમ્—ઉપપાતાદિ વ્યતિરિક્તં સર્વં તદેવ ઔઢિકનારકમકરણો

હોતા હૈ । સરીસૃપોં કા અર્થાત્ ભુજપરિસર્પોંકા ઉપપાત દ્વિતીય નરક તક
હોતા હૈ ઔર પક્ષિયોં કા ઉપપાત તૃતીય નરક તક હોના હૈ, સો યહી
ઉત્પાદ કા વર્ણન સપ્તમ નરક પર્યન્ત કૈ જીવોં કા યહાં પર ઢી દિસાના
ચાહિયૈ, જૈસૈ—અસંજી જીવ પ્રથમ પૃથિવી તક હી જાતૈ હૈં સરીસૃપ
અર્થાત્ ભુજપરિસર્પ ઢૂસરી પૃથિવી તક જાતૈ હૈં, પક્ષી તીસરી પૃથિવી
તક જાતૈ હૈં, સિંહ ચૌથી તક જાતૈ હૈં ઉરગ—સર્પ પાંચઢી પૃથિવી તક
જાતૈ હૈ, સ્ત્રિયાં છઠી પૃથિવી તક જાતી હૈ, ઔર મત્સ્ય તથા મનુષ્ય
સાતઢીં તક જાતૈ હૈ યહ ઉત્કૃષ્ટ ઉપપાત કહા ગયા હૈ જઘન્યસૈ
તો અપની મર્યાદિત પૃથિવી સૈ નીચૈ ઢી પૃથિવીમૈં ઢી જા સકતૈ હૈં ॥૨॥
યહ પ્રજ્ઞાપના કૈ વ્યુત્ક્રાન્તિ પદ કી ઢો ગાથાઓં કા ઢાવ હૈ । ‘સૈસં

છે. સર્પ વિગેરેનો ઉત્પાત ઢીજી નરકમાં થાય છે. અને પક્ષિઓનો ઉત્પાત
ત્રીજા નરકમાં થાય છે. તે આ પ્રમાણેના ઉત્પાતનું વર્ણન સાતમાનારક સુધીના
જીવોના સંબંધમાં કહેવામાં આવેલ છે, તે અહિયાં પણ સમજી લેવું.
જેમકે—અસંજી જીવ પહેલી પૃથ્વી પર્યન્ત જ નાચ છે. સરિસૃપ અર્થાત્
ભુજપરિસર્પ ઢીજી પૃથ્વી પર્યન્ત નાચ છે. પક્ષિયો ત્રીજી પૃથ્વી પર્યન્ત
નાચ છે. સિંહ ચૌથી પૃથ્વી સુધી નાચ છે. ઉરગ—સર્પ પાંચઢી પૃથ્વી
પર્યન્ત નાચ છે, સ્ત્રિયો છઠ્ઠી પૃથ્વી પર્યન્ત નાચ છે અને માછલા અને
મનુષ્યો સાતઢી પૃથ્વી સુધી નાચ છે. આ ઉત્કૃષ્ટ ઉપપાત કહેલ છે. જઘ
ન્યથી તે પોતાની મર્યાદિત પૃથ્વીથી નીચેની પૃથ્વીમાં પણ જઈ શકે છે.
આ પ્રજ્ઞાપનાની જે ગાથાનો અર્થ છે ‘સૈસં તદેવ’ આ ઉપપાત વિગેરે વર્ણન

यत् कथितं तदेव सर्वं शर्कराप्रभात आरभ्य सप्तमी पृथिवी नारकेषु वक्तव्यमिति रत्नप्रभादिगत क्षुल्लक कृतयुग्मनारकाणामुत्पादादिकं दर्शयन् प्राह—‘खुड्डाग तेओग नेरइया’ इत्यादि ।

‘खुड्डाग तेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ क्षुल्लक त्र्योज नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः—कस्मान्स्थानविशेषादागत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, भगवानाह—‘उववाओ’ इत्यादि, ‘उववाओ जहा वक्कंतीए’ उपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः षष्ठे पदे यथा नारकाणामुपपातः कथित स्तेनैव रूपेणात्रापि उपपातो न नैरयिकादिभ्य उत्पद्यन्ते किन्तु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेभ्यो गर्भजमनुष्येभ्यश्चागत्य समुत्पद्यन्ते एव वर्णनीयः । ‘ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति’ ते खलु भदन्त ! क्षुल्लकत्र्योज नारकजीवा एकसमयेन एकस्मिन् सवये कियत्संख्यकाः समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह

तहेव’ इति उपपातादि वर्णन के अतिरिक्त और सब वर्णन औघिक नारक प्रकरण में जैसा कहा गया है वही सब वर्णन शर्कराप्रभा से लेकर सप्तमी पृथिवी के नारकों तक में कहना चाहिये ।

‘खुड्डाग तेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भदन्त ! क्षुल्लक त्र्योजराशि प्रमाण नैरयिक नरकावासमें कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘उववाओ जहा वक्कंतीए’ हे गौतम ! प्रज्ञापना के छठे व्युत्क्रान्ति पद में जैसा नारकों का उपपात कहा गया है वैसा ही वह यहां पर भी कहना चाहिये, अर्थात् वे नैरयिक आदिकों में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकों में से और गर्भज अनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ऐसा वर्णन यहां पर करना चाहिये । ‘ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उवव-

शिवायतुं भीजु सधणु वणुंन औघिक नारकना प्रकरणमां ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे. ते तमाम वणुंन शर्कराप्रभा पृथ्वीयी लधने सातमी तमतमा पृथ्वीना नारकोना सअधमां कडेपुं नेधं ओ.

खुड्डागतेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भगवन् क्षुल्लक त्र्योज राशिप्रमाणवाणा नैरयिको नरकावासमां कयांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘उववाओ जहा वक्कंतीए’ हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्रमां छट्टा व्युत्क्रान्ति पदमां नारकोना उत्पाद ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे. ओज प्रमाणे अडियां पणु कडेवेा नेधं ओ. अर्थात् ते नैरयिको विगेशे मांथी आवीने उत्पन्न थता नथी. परंतु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकोमांथी अने शकंज मनुष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, ओ प्रमाणेतुं वणुंन अडियां

‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘तिन्नि वा, सत्त वा, एक्कारस वा’ त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, ‘पन्नरस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति’ पञ्चदश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, क्षुल्लकत्रयोजनारका एकदा समुत्पद्यन्ते इति । ‘सेसं जहा कडजुम्मस्स’ शेषं—परिणामातिरिक्तं सर्वं कुत आगत्योत्पद्यन्ते कथमुत्पद्यन्ते कथं शीघ्रा गतिः आत्मप्रयोगेण वा परप्रयोगेण वा उत्पद्यन्ते, इत्यादिकं सर्वं यथा कृतयुग्मनारकस्य कथितं तथैवेहापि ज्ञातव्यम्, आलापप्रकारश्च सर्वत्र स्वयमेवोहनीयः । ‘एवं जाव अहे सत्तमाए’ एवं यावद्धः सप्तम्या भवगन्तव्यम् । येन रूपेण औघिकक्षुल्लकत्रयोजनारकस्य कथितं तेनैव

ज्जंति’ हे भदन्त ! क्षुल्लकत्रयोजराशि प्रमाणवाले वे नारक एक समय में वहां कितने उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! तिन्नि वा सत्त वा एक्कारस वा उववज्जंति’ हे गौतम ! वे नारक वहां एक समय में तीन या सान या ११ ग्यारह ‘पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति’ या पन्द्रह या संख्यात या असंख्यात तक उत्पन्न होते हैं ? ‘सेसं जहा कडजुम्मस्स’ इस परिमाण कथन से अतिरिक्त और सब—कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? कैसे उत्पन्न होते हैं ? उनकी शीघ्र गति कैसी होती है ? कैसी उनकी शीघ्रगति का विषय होता है ? वे वहां आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं या पर प्रयोग से उत्पन्न होते हैं इत्यादि सब जैसा कृतयुग्मराशि प्रमाण नारकों के विषय में कहा गया है वैसा ही वह सब कथन यहां पर भी करना

करनुं जेधं अये ‘तेणं भंते ! जीवा ! एगसमएणं केवइया उववज्जंति’ हे भगवन् क्षुल्लकत्रयोजराशि प्रमाणवाणा ते नारके अके समयमां त्यां केटवा उत्पन्न थाय छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—‘गोयमा ! तिन्नि वा सत्तवा एक्कारस वा उववज्जंति’ हे गौतम ! ते नारके त्यां अके समयमां त्रणु अथवा सात अथवा अगियार ‘पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति’ अथवा पंदर अथवा संख्यात अथवा असंख्यात सुधीना उत्पन्न थाय छे, ‘सेसं जहा कडजुम्मस्स’ आ परिणाम कथन शिवायनुं जीवु तमाम कथन—अेटले—के “क्यांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? केवी रीते उत्पन्न थाय छे ? तेओनुं शीघ्र गमन केवुं होय छे ? तेओना शीघ्र गमननो विषय केवो होय छे ? तेओ त्यां आत्म प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा परप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? विगेरे सधणुं कथन जे प्रमाणे कृतयुग्मराशि प्रमाण नारकेना संण धमां कडेवामां आवेद छे, ओज प्रमाणेनुं तमाम कथन अहीयां पणु कडेवुं जेधं अये आ संणधमां आलापनो प्रकार स्वयं भनावीने कडेवो जेधं अये, ‘एवं जाव अहे सत्तमाए’ जे प्रमाणे औघिक क्षुल्लकत्रयोजराशि प्रमाण नैरधिकेना संणधमां कडेवामां

रूपेण रत्नप्रभा क्षुल्लकऋषोजनारकादारभ्य सप्तमीपृथिवी क्षुल्लकऋषोजनारक
विषयेऽपि सर्वमवगन्तव्यमिति । आलापादिकश्च सर्वत्र स्वयमेवोहनीय इति ।
'खुड्डाग दावरजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जति' क्षुल्लकद्रापरयुग्म नैर-
यिकाः खलु भदन्त ! कुतः-कस्मात् स्थानविशेषादागत्य नारकावासे समुत्प-
द्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह- 'एवं जहेव' इत्यादि, 'एवं जहेव खुड्डागकड-
जुम्मे' एवं यथैव क्षुल्लककृतयुग्मः क्षुल्लककृतयुग्मनारकाणामुत्पादादिकं येन
प्रकारेण पूर्वं प्रतिपादितं तेनैव प्रकारेण संक्षेपविस्तराभ्यामिहापि सर्वमवगन्त-
व्यम् । 'नवरं परिमाणं दो वा, छ वा, दस वा, चौदस वा, संखेज्जा वा, असं-
खेज्जा वा, नवरं परिमाणं द्वी वा षड् वा, दश वा, चतुर्दश वा संख्येया वा,

चाहिए, आलापप्रकार इस सम्बन्ध में अपने आप उद्भावित करना
चाहिये, 'एवं जाव अहे सत्तमाए' जिस रूपसे औधिक क्षुल्लक
ऋषोजराशि प्रमाण नैरयिकों के सम्बन्ध में कहा गया है उसी रूप से
रत्नप्रभा क्षुल्लक ऋषोजराशी प्रमाण नैरयिकों से लेकर सप्तमी पृथिवी
के क्षुल्लक ऋषोजराशि प्रमाणवाले नैरयिकों के विषय में भी सब
कथन करना चाहिये । तथा इस सम्बन्ध में आलापादिक सर्वत्र अपने
आप उद्भावित करना चाहिये ।

खुड्डाग दावरजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जति' हे भदन्त !
जो नैरयिक क्षुल्लकद्रापर युग्मराशि प्रमाण हैं वे नरकावास में कहां
से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'एवं
जहेव खुड्डाग कडजुम्मे' हे गौतम ! जैसा कथन क्षुल्लक कृतयुग्म
राशि प्रमाणवाले नैरयिकों के उत्पात्तादि के सम्बन्ध में कहा गया है
वैसा ही वह समस्त कथन संक्षेप और विस्तार से यहां पर भी

आवेद छे ओण प्रमाणे रत्नप्रभाना क्षुल्लक ऋषोजराशि प्रमाणवाणा नैरयिकेथी
लघने सातमी पृथ्वीना क्षुल्लक ऋषोजराशि प्रमाणवाणा नैरयिकेना स'अ'धमां
पणु सधणुं कथन कडेणु ढेधये. तथा आ विषयमा आलाप विगेरे अघे ण
स्वयं अनावीने समणु देवे ढेधये.

'खुड्डाग दावरजुम्मनेरइया णं भते ! कओ उववज्जति' हे भगवन् ढे
नैरयिके क्षुल्लकद्रापरयुग्मप्रमाणवाणा छे, तेओ नरकावासमां कयांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के- 'एवं जहेव खुड्डाग
कडजुम्मे' हे गौतम ! क्षुल्लक कृतयुग्मराशी प्रमाणवाणा नैरयिकेना उत्पाद
विगेरेना स'अ'धमा ढे प्रमाणेणु कथन करवामा आण्यु छे. ओण प्रमाणेणुं
ते कथन संक्षेप अने विस्तारथी अडिया पणु कडेणु ढेधये. 'नवरं परिमाणं
दो वा छ वा चौदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा' ते कथन करतां आ कथनमां

असंख्येया वा' क्षुल्लक कृतयुग्मप्रकरणात् वैलक्षण्यं केवल परिमाणविषये तत्प्रदर्शितमेव, अन्यत्सर्वम् उत्पादादिकं कृतयुग्मप्रकरणादेवावसेयमिति । 'सेसं तं चेव जाव अहे सत्तमाए' शेषम्-परिमाणातिरिक्तं तदेव यदेवोत्पादादिकं क्षुल्लककृतयुग्मप्रकरणे कथितं तदेव इहापि क्षुल्लकद्रापरयुग्मप्रकरणेऽपि । कृतयुग्मप्रकरणं कियत्पर्यन्तदिह ज्ञातव्यं तत्राह- 'जाव' इत्यादि, 'जाव अहे सत्तमाए' यावदधःसप्तम्यां रत्नप्रभा क्षुल्लकद्रापरयुग्मादारभ्य अधःसप्तमी पृथिवी पर्यन्तं क्षुल्लक द्वापरयुग्मनारकविषये सर्वं ज्ञातव्यमिति । 'खुड्डाग कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' क्षुल्लककलयोजनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः-

कहना चाहिये । 'नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा चौदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा' उस कथन से इस कथन में यदि कोई विशेषता है तो वह परिमाण को लेकर ही है अतः यहाँ पर नैरयिकों का उत्पाद परिमाण दो या छ या दश या चौदह या संख्यात या असंख्यात है । बाकी का और अब क्षुल्लकद्रापर युग्मराशि प्रमाणवाले नैरयिकों का कथन क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमाणवाले नैरयिकों के जैसा ही है । अतः वह उनके प्रकरण से ही जानना चाहिये । इसलिये सूत्रकार ने इस सम्बन्धमें 'सेसं तं चेव जाव अहे सत्तमाए' ऐसा सूत्र पाठ कहा है । इसलिये कृतयुग्म प्रकरण रत्नप्रभा के क्षुल्लक द्वापरयुग्म राशि प्रमाणवाले नैरयिकों से लेकर अधःसप्तमी पृथिवी तक के क्षुल्लक द्वापरयुग्मराशि प्रमाणवाले नैरयिकों में कहना चाहिये ।

'खुड्डाग कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! जो नैरयिक क्षुल्लक कलयोजराशि प्रमाणवाले हैं वे कहां से आकर के

ले कुछ विशेषपणु होय तो ते परिणामना संघंधमां न विशेषपणु छे, तेथी अहियां नैरयिकेना उत्पाद, परिणाम पे अथवा छ अथवा दस अथवा चौद अथवा संख्यात अथवा असंख्यात छे. आकीनुं पीणु तमाम कथन क्षुल्लक द्वापरयुग्मराशि प्रमाणवाणा नैरयिकेनी न्मे न छे तेथी ते सधणुं कथन तेना अत्रले-क्षुल्लकद्रापर युग्मराशि प्रमाणवाणा नैरयिकेना प्रकरणमांथी न्णणी देवुं. तेथी सूत्रकारे आ विषयमां 'सेस तं चेव जाव अहेसत्तमाए' आ प्रमाणु सूत्रपाठ कहेल छे. तेथी कृतयुग्म प्रकरणु रत्नप्रभा पृथ्वीना क्षुल्लक द्वापरयुग्म राशि प्रमाणवाणा नैरयिकथी लधने अधःसप्तमी पृथ्वी सुधीना क्षुल्लकद्रापर युग्मराशि प्रमाणवाणा नैरयिकेना संघंधमां कहेवुं न्नेऽग्नि

'खुड्डाग कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भगवन् न्ने नैरयिके क्षुल्लक कल्योऽराशी प्रमाणवाणा छे, तेन्ना कयांथी आवीने नरक्षावासमां

कस्मात् स्थानविशेषादागत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह—
 'एवं जहेव' इत्यादि, 'एवं जहेव खुड्डागकडजुम्मे' एवं यथैव क्षुल्लककृत-
 युग्मप्रकरणे नारकाणामुत्पत्तिं दर्शिता तथैव इहापि क्षुल्लककलयोज नारकाणां न
 नैरयिकेभ्य उत्पत्तिः किन्तु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्घोनिकेभ्यः तथा गर्भजमनुष्येभ्यश्चा-
 गत्येह समुत्पत्तिं भवतीति । 'नवरं परिमाणं एको वा, पंच वा, नव वा, तेरस
 वा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति' नवरम् केवलं परिमाणं कृतयुग्म
 नारकाद्विलक्षणं तदिदम् एको वा, पञ्च वा, नव वा, त्रयोदश वा, संख्याता वा,

नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं जहेव
 खुड्डाग कडजुम्मे' हे गौतम ! जैसा कथन क्षुल्लक कृतयुग्म प्रकरण
 में नारको के उत्पाद के विषय में किया गया है उसी प्रकार
 से वह प्रकरण इस क्षुल्लक कलयोज नारको के प्रकरण से
 उत्पाद के विषय में भी कहना चाहिये । इस प्रकार क्षुल्लक
 कलयोज नारक नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं और न
 देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं किन्तु वे पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्घोनिकों
 में से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं, और गर्भज मनुष्यों में
 से आकर के वहाँ उत्पन्न होते हैं । 'नवरं परिमाणं एको वा पंच वा
 नव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति' यहां
 पर कृतयुग्म नारकों के प्रकरण से यदि कोई विशेषना है तो वह परि-
 माण की अपेक्षा से ही है, अतः यहां पर क्षुल्लक कलयोज नारकों का
 प्रमाण एक सप्तम्य में उत्पत्ति का एक अथवा पांच अथवा नौ अथवा

उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'एवं जहेव खुड्डाग-
 कडजुम्मे' हे गौतम ! क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमाणवाणा नारकेना संभंधमां ने
 प्रमाणेतुं कथन करवामां आण्युं छे, अथ प्रमाणे ते प्ररथु आ क्षुल्लक
 कल्योज नारक संभंधी प्रकरणे तेमना उत्पादना संभंधमां पणु कडेवुं नेधये.
 आ रीते क्षुल्लक कल्योज नारक नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थता नथी तेम
 देवोमांथी आवीने पणु उत्पन्न थता नथी. परतु तेओ पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्घो-
 योनिकेमांथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे, अने गर्भज मनुष्योमांथी
 आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे

'नवरं परिमाणं एको वा पंचवा नव वा तेरसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा
 उववज्जंति' अडियां आ कृतयुग्म नारकेना प्रकरणमां ने केध विशेषपणुं
 छे, तो ते परिष्ठाभना संभंधमां न छे, तेथी अडियां क्षुल्लक कल्योज
 नारकेनी उत्पत्तिनुं प्रमाणे अथ सप्तम्यमां अथ पांच अथवा नव अथवा

असंख्याता वा, समुत्पद्यन्ते । 'सेसं तं चैव' शेषम्-परिमाणातिरिक्तमुत्पादादिकं सर्वं तदेव क्षुल्लककृतयुग्मनारकप्रकरणकथितमेवेति । 'एवं जाव अहे सत्तमाए' एवं यावद् रत्नप्रभा क्षुल्लककलयोजनारकादारभ्य अधःसप्तम्यां क्षुल्लककलयोज पर्यन्तनारकाणाम् इयमेव व्यवस्था ज्ञातव्या । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति, हे भदन्त ! क्षुल्लककृतयुग्मादि नारकादीनामुत्पादादिविषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वम् एवमेव सर्वथा सत्यमेव इति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

एकत्रिंशत्तमे श्लोके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३१-१॥

तेरह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात तक होता है । 'सेसं तं चैव' इस परिमाण के अतिरिक्त और सब उत्पाद आदि का कथन जैसा क्षुल्लक कृतयुग्म नारकों के प्रकरण में किया गया है-वैसा ही यहां पर भी करना चाहिये । 'एवं जाव अहे सत्तमाए' इस प्रकार रत्नप्रभा के क्षुल्लक कलयोज नारकों से लेकर अधःसप्तमी पृथिवी के क्षुल्लक कलयोज नारकों के सम्बन्ध में भी यही व्यवस्था जाननी चाहिये, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुग्म नारकों के उत्पाद आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और उन्हें नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थानपर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

प्रथम उद्देशक समाप्त-३१-१

इस अथवा संख्यात अथवा असंख्यात सुधी डीय छे. 'सेसं तं चैव' आ परिष्णामना कथन शिवाय आकीतुं उत्पाद विगेरे सधणुं कथन क्षुल्लककृतयुग्म नारकेना प्रकरणमां ने प्रभाणे कलुं छे ते प्रभाणे अहिया पणु समञ्जुं.

'एवं जाव अहे सत्तमाए' आ रीते रत्नप्रभा पृथ्वीना क्षुल्लक कल्येण नारकेथी लछ ने अधःसप्तमी पृथ्वीना क्षुल्लक कल्येण नारकेना संअधमां पणु आण कथन समञ्जुं

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' छे भगवन् क्षुल्लक कृतयुग्म विगेरे नारकेना उत्पाद विगेरे विषयमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सर्वथा सत्य छे. आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणे कहीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥पडोडो उद्देशो समाप्त ॥३१-१॥

अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते

प्रथमे उद्देशके सामान्यतः क्षुल्लक कृतयुग्मादिनारकाणामुत्पातादिः कथितः, द्वितीयेतु कृष्णलेश्याश्रय उत्पादादि र्वक्तव्यः, तदनेन सम्बन्धेनायातस्य द्वितीयोद्देशकरयेदं सूत्रम्—'कण्ठलेस्स०' इत्यादि ।

मूलम्—कण्ठलेस्स खुड्ढाग कडजुम्म नेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति, एवं चेव जहा ओहिण गमो जाव नो परप्पयोगेणं उववज्जंति । नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभा पुढवी नेरइयाणं सेसं तं चेव । धूमप्पभा पुढवी कण्ठलेस्स खुड्ढाग-कडजुम्म नेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति एवं चेव निरवसेसं । एवं तमाए वि, अहे सत्तमाए वि । नवरं उववाओ सव्वत्थ जहा वक्कंतीए । कण्ठलेस्स खुड्ढाग तेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं चेव नवरं तिन्नि वा, सत्त वा, एक्कारस वा, पन्नरस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव । एवं जाव अहे सत्तमाए । कण्ठलेस्स खुड्ढाग दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति एवं चेव । नवरं दो वा, छ वा, दस वा, चोदस वा सेसं तं चेव । धूमप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए । कण्ठलेस्स खुड्ढाग कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति । एवं चेव नवरं एक्को वा, पंच वा, नव वा, तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा सेसं तं चेव । एवं धूमप्पभाए वि तमाए वि अहे सत्तमाए वि, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ॥सू. १॥

छाया—कृष्णलेश्य क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एवमेव यथा औघिको गमो यावत् नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते । नवरमुत्पातो यथा व्युत्क्रान्तौ धूमप्रभा पृथिवी नैरयिकाणाम् । शेषं तदेव । धूमप्रभा पृथिवी कृष्णलेश्य क्षुल्लक कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते एवमेव निरवशेषम् । एवं तमायामपि अधःसप्तम्यामपि । नवरमुपपातः सर्वत्र यथा व्युत्क्रान्तौ । कृष्णलेश्य क्षुल्लक त्र्योज नैरयिकाः खलु भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते ? एवमेव नवरं त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, पञ्चदश वा, संख्येया वा, असंख्येया वा, शेषं

તદેવ । एवं यावदधः सप्तम्यामपि । कृष्णलेश्यक्षुल्लकद्रापरयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते, एवमेव नवरं द्वौ वा, पञ्च वा, दश वा, चतुर्दश वा, शेषं तदेव धूमप्रमायामपि यावदधःसप्तम्याम् । कृष्णलेश्य क्षुल्लककल्पोज नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एवमेव । नवरम् एको वा, पञ्च वा, नव वा, त्रयोदश वा, संख्येया वा, असंख्येया वा । शेषं तदेव । एवं 'धूमप्रमा-यामपि तयायामपि अधःसप्तम्यामपि । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू०१॥

एकत्रिंशत्तमे श्लोके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३१-२॥

टीका—द्वितीयस्तु उद्देशकः कृष्णलेश्याश्रयः सा च कृष्णलेश्या पञ्चमी पष्ठी सप्तमीष्वेव पृथिवीषु भवतीति कृत्वा सामान्यदण्डकः तथा पञ्चमीपष्ठी सप्तमी पृथि-व्याश्रितं दण्डकत्रयं चान्न भवतीति, अतः कृष्णलेश्याश्रय एवात्र विचारोऽवधीयते ।

दूसरे उद्देशोका प्रारंभ

प्रथम उद्देशक में सामान्यतः क्षुल्लक कृतयुग्मराशिवाले नारकी का उत्पाद आदि कहा गया है । अब इस द्वितीय उद्देशक में कृष्ण लेश्या के आश्रय से उनका उत्पादादि कहना है सो इसी अभिप्राय से इस द्वितीय उद्देशक को प्रारंभ सूत्रकार करते हैं—

‘कणहलेस्स खुड्डागकडजुम्मनेरइयाणं भंते !’ इत्यादि ।

टीकार्थ—यह द्वितीय उद्देशक कृष्णलेश्यावाले क्षुद्र कृतयुग्मराशि प्रमाण नैरयिकों से सम्बन्धित है । कृष्णलेश्या पांचवी छट्टी और सातवीं पृथिवीयों में ही होती है । इसलिये एक सामान्य दण्डक है तथा पांचवी छट्टी और सातवी पृथिवीयों के आश्रित तीन दण्डक यहाँ हैं । अतः कृष्णलेश्या के आश्रयवाला ही विचार यहाँ प्रदर्शित किया जाता है—

એકત્રીસમા શતકના બીજા ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ—

પહેલા ઉદ્દેશામાં સામાન્યતઃક્ષુલ્લક કૃતયુગ્મ વિગેરે રાશિવાળા નારકોના ઉત્પાદ વિગેરેના સંબંધમાં કથન કરેલ છે. હવે આ બીજા ઉદ્દેશામાં કૃષ્ણ લેશ્યાના આશ્રયથી તેઓના ઉત્પાદ વિગેરેના સંબંધમાં કથન કરવામાં આવશે એજ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ બીજા ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ કરે છે.—

‘કણહલેસ્સ કુદ્ડાગકડજુમ્મનેરઇયા ણં મતે !’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—આ બીજા ઉદ્દેશો કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ક્ષુદ્ર કૃતયુગ્મ રાશિ પ્રમાણ વાળા નૈરયિકોના સંબંધમાં કહેલ છે. કૃષ્ણલેશ્યાના આશ્રયવાળી પાંચમી છટ્ટી અને સાતમી પૃથ્વીઓના ત્રણ દંડકો અહિયાં કહ્યા છે. જેથી કૃષ્ણલેશ્યાના આશ્રયવાળા જ વિચાર અહિયાં પ્રગટ કરવામાં આવે છે.—

'कणहलेस्स खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति' कृष्ण-
लेश्य क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः कस्मात् स्थानविशेषादागत्य
नारकावासे उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—'एवं चेव' इत्यादि, 'एवं चेव
जहा ओहिओ गमो' एवमेव यथा औघिको गमः औघिकगमवत् एतच्छतकीय
प्रथमोद्देशकक्षुल्लककृतयुग्मनारकसूत्रवदेव कृष्णलेश्यक्षुल्लक नारकस्यापि उत्पा-
दादिकं वक्तव्यम्, तथाहि—न नारकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते कृष्णलेश्यक्षुल्लक
कृतयुग्मनारकाः किन्तु तिर्यग्योनिकेभ्य आगत्य गर्भज मनुष्येभ्यश्चागत्योत्पद्यन्ते
इति । तेषां खलु भदन्त ! जीवानां कथं शीघ्रा गतिः कथं शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञ-

'कणहलेस्स खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति'
हे भदन्त ! क्षुद्र कृतयुग्मराशि प्रमाण कृष्णलेश्यावाले नैरयिक कहां
से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—
'एवं चेव जहा ओहिओ गमो' हे गौतम ! जैसा विचार इस शतक के
प्रथम उद्देशक में क्षुल्लक कृतयुग्म नारक के सूत्र में किया गया है वैसे
ही विचार कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्म नारक के उत्पाद आदि
का भी करना चाहिये । जैसे—कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्म नारक
नैरयिकों में से आकर के नरकावास में उत्पन्न नहीं होते हैं । और न
'देवों' में से आकर के उत्पन्न होते हैं किन्तु वे पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकों में
से आकर के उत्पन्न होते हैं और गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न
होते हैं । हे भदन्त ! उन नारक जीवों की गति कैसी तीव्र होती है ?
और कैसा उस तीव्र गति का विषय होता है ? हे गौतम ! जैसे कोई

'कणहलेस्स खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति' हे
लगवन् क्षुद्र कृतयुग्म राशि प्रमाण कृष्णलेश्यावाणा नैरयिके कथांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—
'एवं चेव जहा ओहिओ गमो' हे गौतम ! आ शतकना पडेवा उद्देशामां ने
प्रमाणेने विचार क्षुल्लक कृतयुग्म नारकेना सूत्रमां करवामां आव्ये छे, जे
प्रमाणेने विचार कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म नारकेना उत्पाद विगेरेना
संभधपां पणु कडेवा जेधजे, जेम के—कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म नारक
नैरयिकेमांथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थता नथी, तथा देवोमांथी आवीने
पणु तेज्जे उत्पन्न थता नथी, परंतु तेज्जे पञ्चेन्द्रियतिर्यग्य योनिकेमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे, तथा गर्भज मनुष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे,
हे लगवन् ते नारक जिवोनी गति केवी तीव्र डेय छे ? अने ते तीव्र गतिने

प्तः? गौतम ! यथा कश्चित् तरुणो बलवान् पुरुषो यावत् त्रिसप्तमयुकेन विग्रहेण समुत्पद्यन्ते तेषां खलु जीवानां तथा शीघ्रा गतिः तथा शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञप्तः ते जीवाः कथं परमवायुष्कं कुर्वन्ति गौतम ! अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन करणोपायेन एवं खलु परमवायुष्कं कुर्वन्ति, इति । तेषां जीवानां कथं गतिः प्रवर्तते गौतम ! आयुःक्षयेण भ्रक्षयेण स्थितिक्षयेण गतिः प्रवर्तते इति । ते जीवाः किमात्मद्वर्षा समुत्पद्यन्ते परद्वर्षा वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मद्वर्षव समुत्पद्यन्ते न परद्वर्षा समुत्पद्यन्ते । हे भदन्त ! ते जीवा आत्मकर्मणा समुत्पद्यन्ते परकर्मणा वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मकर्मणैव समुत्पद्यन्ते न परकर्मणा समुत्प-

षलवान् पुरुष जैसा कि चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक में कहा गया है उसके अनुसार वे नारक तीन समयवाली विग्रहगति से वहां नरकावास में उत्पन्न हो जाते हैं ऐसी उनकी तीव्र गति होती है और उस तीव्र गति का ऐसा विषय होता है। हे भदन्त ! वे नारक परभव की आयु का बन्ध कैसे करते हैं ? हे गौतम अध्यवसाययोग से निर्वर्तित करणोपाय से वे नारक परभव की आयु का बन्ध करते हैं। हे भदन्त ! उन नारक जीवों की गति किस कारण से होती है ? हे गौतम ! उनकी गति आयु के क्षय से अथ के क्षय से और स्थिति के क्षय से होती है। हे भदन्त ! वे जीव क्या आत्मद्विसे उत्पन्न होते हैं ? या परद्विसे उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे आत्मद्वि से उत्पन्न होते हैं परद्वि से नहीं हे भदन्त ! वे जीव क्या आत्म कर्म से उत्पन्न होते हैं या परकर्म से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे नारक जीव आत्मकर्म से ही उत्पन्न होते हैं पर-

विषय केवो डोय छे ? हे गौतम जेम कोर्ध भसवान् पुरुष जेम के-थौदमा शतकना पडेला उदेशामां कथन करवामां आवेल छे ते अनुसार तेवा नारको त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी त्यां नरकावासमां उत्पन्न थध् जय छे जेवी तीव्र गति तेमनी डोय छे अने जे तीव्रगतिने जेवो विषय डोय छे. हे भगवन् ते नारको परभवना आयुष्यने अंध केवी रीते करे छे ? हे गौतम ! अध्यवसाय योगथी निवर्तित करखुना उपायथी नारको परभवना अ युष्यने अंध करे छे हे भगवन् ते नारक जेवोनी गति क्या कारणथी डोय छे ? हे गौतम ! तेजोनी गति आयुना क्षयथी लवना क्षयथी अने स्थितिना क्षयथी थाय छे. हे भगवन् ते जेवो शुं आत्मद्विथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा परद्विथी उत्पन्न थय छे ? हे गौतम ! तेजो आत्मद्विथी उत्पन्न थाय छे. परद्विथी उत्पन्न थता नथी. हे भगवन् ते जेवो आत्मकर्मथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा परकर्मथी उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ते नारक जेवो पोताना कर्मथी जे उत्पन्न थाय छे. पर

घन्ते । हे भदन्त । ते जीवा आत्मप्रयोगेण समुत्पद्यन्ते परप्रयोगेण वा समुत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मप्रयोगेण समुत्पद्यन्ते न परप्रयोगेण समुत्पद्यन्ते । एतदाशयेनैवाह—‘जात्र नो परप्पओगेणं उव्वज्जंति’ इति । ‘नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभा पुढवी नेरइयाणं’ नवरम्—केवलमुत्पातो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः षष्ठ्यदे येन रूपेणोपपातः कथित स्तेनैरूपेणोपपातो धूमप्रभा पृथिवी नैरयिकोणां ज्ञातव्यः, एतदेवौघिकगमापेक्षया वैलक्षण्यम् अन्यत्सर्वमौघिकगमवदेवेति भावः । अत्र कृष्णलेश्यायाः प्रकरणम्, सा च धूमप्रभायां भवतीति, तत्र संज्ञि-

कर्म से नहीं ! हे भदन्त ! वे नारक जीव क्या आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं या परप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे जीव आत्मप्रयोग से ही उत्पन्न होते हैं परप्रयोग से नहीं । यहां तक का यह सब प्रकरण जो कि औधिक नारक के प्रकरण में कहा गया है यहां पर भी वही प्रकरण कहना चाहिए, इसी आशय को लेकर सूत्रकार ने ‘जात्र नो परप्पओगेणं उव्वज्जंति’ ऐसा सूत्रपाठ कहा है । परन्तु औधिक नारक प्रकरण की अपेक्षा इस प्रकरण में जो विशेषता है वह एक उत्पाद परिमाण में है—यही बात—‘नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभा पुढवी नेरइयाणं’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है । अर्थात् प्रज्ञापना सूत्र के दृष्टे व्युत्क्रान्ति पद में जिस रूप से धूमप्रभा पृथिवी नैरयिकों का उत्पात कहा गया है उसी रूप से वह उत्पाद यहाँ पर भी कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों का कहना चाहिए, बाकी का और सब कथन औधिक गम के जैसा ही है । यहां कृष्णलेश्या का प्रकरण है । यह कृष्णलेश्या

कर्मथी नहीं है । अथवा परप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! ते एवे आत्मप्रयोगथी न उत्पन्न थाय छे, परप्रयोगथी उत्पन्न थता नथी आ कथन सुधीनुं आ सधणुं प्रकरणुं के ने औधिक नारकना प्रकरणुमां कडेल छे, तेज प्रकरणु अडियां पणु समननुं. आअ असिप्रायथी सूत्रकार ‘जात्र नो परप्पओगेण उव्वज्जंति’ आ प्रमाणेनो सूत्रपाठ कही छे. परंतु औधिक नारक प्रकरणुना कथन करतां आ प्रकरणुमां ने विशेषणु छे, ते अेक उत्पाद अने परिणाममा न छे. अेअ बात ‘नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभा पुढवी नेरइयाणं’ आअ सूत्रपाठद्वारा प्रकट करेल छे. अर्थात् प्रज्ञापना सूत्रना छ्का व्युत्क्रान्ति पदमां ने प्रमाणे उत्पादना संभंधमां कथन करेल छे. तेज प्रमाणेनो ते उत्पाद अडियां पणु धूमप्रभा पृथिवीन. नैरयिकेना संभंधमां कडेलो लेअे. णाकीनुं भीणु सधणु कथन औधिक गमना कथन प्रमाणे छे अडियां कृष्णलेश्यानुं प्रकरणु

सरीसृपपक्षिसिंहान् विहाय तदितरे एव समु-पच-ते, अत्र स्वत्र ये जीवा उत्प-
द्यन्ते तेषामेवोत्पादः पठनीय इति । 'सेसं तं चेव' शेषम्-उपपातव्यतिरिक्तं सर्वं
तदेव औघिकगमवदेवेति भावः । 'धूमप्रभा पुढवी कणहलेस्स खुड्डाग कडजुम्म
नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' धूमप्रभा पृथिवीकृष्णलेश्यक्षुल्लक कृत्-
युग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः कस्मात् स्थानविशेषादागत्य समुत्पद्यन्ते ? इति
प्रश्नः । उत्तरमाह- 'एवं चेव' इत्यादि, 'एवं चेव निरवसेसं' एवमेव-औघिकगम-
वदेव निरवशेषं ज्ञातव्यम् इति । 'एवं तमाए वि अहे सत्तमाए वि' एवं धूमप्रभा
पृथिवी सम्बन्धि कृष्णलेश्य क्षुल्लकनारकविषये यथा कथितं तथैव तमारूप-
पठ नारकपृथिवीसम्बन्धि नारकविषयेऽपि, एवं पूर्ववदेव अधः सप्तम्यामिति,

धूमप्रभा आदि में होती है, यहाँ असंज्ञी, सरीसृप, पक्षी एवं सिंह
इनका उत्पाद होता नहीं है अतः इन्हें छोड़कर बाकी के जीव यहाँ
उत्पन्न होते हैं । इसलिये जो जीव यहाँ उत्पन्न होते हैं उनका ही
यहाँ उत्पाद कहना चाहिये, 'सेसं तं चेव' इस प्रकार उत्पाद के सिवाय
और सब कथन औघिक गम के जैसा ही यहाँ पर जानना चाहिये,
इसीलिये धूमप्रभा पुढवी कणहलेस्स खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति 'इस प्रश्न का उत्तर प्रभुश्री ने 'एवं चेव निरवसेसं'
इस सूत्रपाठ द्वारा दिया है । 'एवं तमाए वि अहे सत्तमाए वि' इसी
प्रकार का कथन तमःप्रभा में भी और अधःसप्तमी पृथिवी के नारकों
के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये, परन्तु प्रज्ञापना के दृष्टे
व्युत्क्रान्ति पद में जैसा यहाँ नारकों का उत्पाद कहा है वहाँ वैसा ही

छे. आ कृष्णलेस्या धूमप्रभाभां डोय छे. अडियां असंज्ञी, सरीसृप,
(सप) पक्षी अने सिंह आटडाने। उत्पाद थतो नथी. तेथी
आटडाने छोडीने भाडीना लुवे अडियां उत्पन्न थाय छे. तेथी ने लुवे
अडियां उत्पन्न थय छे तेओने। उत्पादअ अडियां कडेवे। लेधये 'सेसं तं
चेव' आ रीते उत्पादना कथन शिवाय भाडीनु सधणुं कथन औघिक गमना
कथन प्रम.ले अडियां समजबुं तेथी. 'धूमप्रभा पुढवी कणहलेस्स खुड्डाग-
कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' आ प्रमाणे प्रश्न करेद छे. आ
प्रश्नना उत्तरमां 'एवं चेव निरवसेसं' आ प्रमाणे प्रभुश्रीये कडेद छे. 'एवं तमाए
वि अहे सत्तमाए वि' आअ प्रमाणेतुं कथन तमःप्रभाथी लधने अधःसप्तमी
पृथ्वी सुधीना नारकेना संबंधमां पणु समजबुं. परंतु प्रज्ञापना सूत्रमां छडा
व्युत्क्रान्ति पदमां ने प्रमाणे न्यां नारकेने। उत्पात कथो छे, त्यां अण
प्रमाणेने। उत्पात कडेवे। लेधये.

सप्तमनारक पृथिवी सम्बन्धि नारकेऽपि सर्वं पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति । 'नवरं' उव-
 बाधो सव्वत्थ जहा वक्कंतीए' नवरं वैलक्षण्यं केवलमुपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ
 प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे कथित स्तथैव ज्ञातव्य इति । 'कण्हलेस्स खुड्डाग तेओग
 नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृष्णलेश्य क्षुद्रकञ्चोनैरयिकाः खलु भदन्त !
 कुतः कस्मात् स्थानविशेषादागत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः । उत्तर-
 माह—'एवं चेव' एवमेव एवं—यथा पूर्वप्रकरणे उत्पातादिः कथित स्तथैव इहापि
 ज्ञातव्यः । केवलं परिमाणविषये वैलक्षण्यं विद्यते तद्वर्शयति—'णवरं' इत्यादि,
 'णवरं तिन्नि वा, सत्त वा, एकारस वा, पन्नरस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा'
 नवरं त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, पञ्चदश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा
 ते जीवा एरुसमयेन समुत्पद्यन्ते नरकावासे 'सेसं तं चेव' शेषं परिमाणातिरिक्तं
 सर्वं तदेव औघिकप्रकरणकथितमेव । 'एवं जाव अहे सत्तमाए वि' एवं यावद्
 उत्पाद कहना चाहीये, 'कण्हलेस्स खुड्डाग तेओग नेरइयाणं भंते !'
 हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्षुद्र ञ्चोनैराशि प्रमाण नैरयिक कहां से
 आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रमुश्री
 कहते हैं—'एवं चेव' हे गौतम ! पूर्व प्रकरण में जैसा कथन उत्पात
 आदि के सम्बन्ध में किया गया है उसी प्रकार का कथन यहां पर भी
 जानना चाहीये । परन्तु 'णवरं तिन्नि वा सत्त वा एकारस वा पन्न-
 रसवा संखेज्जा वा असंखेज्जावा' यहां तीन अथवा सात या ११ या
 १५ या संख्यात या असंख्यात नैरयिक उत्पन्न होते हैं 'सेसं तं चेव'
 इस प्रकार परिमाण से अतिरिक्त और सब कथन औघिक प्रकरण में
 जैसा कहा गया है वैसा ही जानना चाहीये । 'एवं जाव अहे सत्तमाए'
 वि' और ऐसा ही सब कथन यावत् सातवी पृथिवी तक जानना चाहीये,

'कण्हलेस्स खुड्डाग तेओग नेरइया णं भंते ! डि लगवन् कृष्णलेश्यावाणा
 क्षुद्रञ्चोनैराशि प्रमाणे नैरयिके कथांती आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ?
 आ प्रश्नना उत्तरमां प्रमुश्री कडे छे के—'एवं चेव' हे गौतम ! आगला
 प्रकरणमां उत्पाद विगेरेना संबंधमां ने प्रमाणेतुं कथन करवामां आण्यु छे,
 अेज्ज रीतनुं कथन अडियां पणु समणुपुं, परंतु 'णवरं तिन्नि वा सत्त वा एका-
 रस वा पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा' अडियां तणु अथवा सात अथवा
 अगियार अथवा पंदर अथवा संख्यात अथवा असंख्यात नैरयिके उत्पन्न
 थाय छे. 'सेसं तं चेव' आ परिणाम द्वार शिवाय आकीतुं सधणुं कथन
 औघिक प्रकरणमां ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, अेज्ज प्रमाणे समणुपुं, 'एवं
 जाव अहे सत्तमाए' वि' अने आण प्रमाणेतुं सधणुं कथन यावत् सातमी

अथः सप्तम्यामपि सामान्यतः कृष्णलेश्यक्षुल्लकत्रयोजनारकाणामुपपातः परि-
माणश्च सामान्यतो दर्शित रतथैव धूमप्रभा पृथिवीतमापृथिव्यधःसप्तमी पृथि-
वीषु विद्यमानानां कृष्णलेश्यक्षुल्लकत्रयोजनारकाणामपि उपपातपरिमाणादिकं
सर्वमपि ज्ञातव्यमिति भावः । 'कणहलेस्स खुड्डागदावरजुम्मनेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति' कृष्णलेश्यक्षुल्लकहापरयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः—
कस्मात् स्थानविशेषादागत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते ? इति उत्पादादिविषयकः
प्रश्नः, भगवानाह—'एवं चेव' एवं कृतयुग्मनारकादीनामुपपातादिविषये औघिक
प्रकरणे यत् कथितं तदेव सर्वम् इहापि अनुमन्धेयमिति । 'नवरं दो वा, छ वा,
दस वा, चोहस वा सेसं तं चेव' नवरं केवलम् परिमाणे वैलक्षण्यं पूर्वप्रकरणा-

अर्थात् कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक त्रयोज नारको का उत्पाद और परिमाण
जैसा सामान्य से प्रकट किया गया है उसी प्रकार से धूमप्रभा पृथिवी
तमःप्रभापृथिवी और सातवी अधःसप्तमी इनमें विद्यमान कृष्णलेश्यावाले
क्षुल्लकत्रयोजनारको का भी उपपात परिमाण आदि सब जानना चाहिये ।

'कणहलेस्स खुड्डाग दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति'
हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्षुद्रहापरयुग्म प्रमाण नैरयिक किम् स्थान
से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? ऐसा यह प्रश्न उत्पाद वि-
विषयक है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं चेव' हे गौतम ! जैसा कृत
युग्म नारकादिकों के उत्पाद आदि के विषय में औघिक प्रकरण में
कहा गया है वही सब यहां पर भी कहना चाहिये । 'नवरं दो वा, छ
वा, दसवा चोहसवा सेसं तं चेव' परन्तु पूर्व प्रकरण की अपेक्षा परि-

पृथ्वी सुधी समञ्जसुः अर्थात् कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक त्रयो नारकोना उत्पाद अने
परिष्णाम नेम सामान्य रीते कहेल छे अने प्रभाषे धूमप्रभा पृथ्वी, तमःप्रभा
पृथ्वी, अने सातमी तमःतमा पृथ्वीमां रहेंन.रा कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लकत्रयो
नारकोना संघंधमां पणु उपपात, परिष्णाम विगेरे संघंधी कथन समञ्जसुः ।

'कणहलेस्स खुड्डागदावरजुम्मनेरइया ण भंते ! कओ उववज्जंति' हे
भगवन् कृष्णलेश्यावाणा क्षुद्रहापर युग्म प्रभाषु नैरयिके कया स्थानमांथी
आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रभाषेना उत्पाद विगेरेना
संघंधमां गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने प्रश्न कयो छे आ प्रश्नना उत्तरमां
प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—'एवं चेव' हे गौतम ! कृतयुग्म नारक
विगेरेना उत्पाद विगेरे विषयमा औघिक प्रकरणमां ने प्रभाषे कहेवामां
आवेल छे, अे सधणुं कथन अहियां पणु कहेपुं लेधंअे. 'नवरं दो वा छ वा
चोहसवा सेसं तं चेव' परंतु पडेलाना प्रकरणनी अपेक्षाथी परिष्णाममां अे

पक्षया इदम्, यत् एकसमये ते नारकाः द्वौ वा, षट् वा, दश वा, चतुर्दश वा संख्याता वा, असंख्याता वा समुत्पद्यन्ते। एतदन्यत्सर्वं पूर्ववदेव ज्ञातव्यम्। 'धूमप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए' यथा सामान्यतो नरकावासे समुत्पद्यमानानां परिमाणानि कथितः कृष्णलेश्यक्षुल्लकद्रापरयुग्मनारकाणां तेनैव रूपेण धूमप्रभायां पञ्चमी पृथिव्यां तमायां षष्ठपृथिव्यामधःसप्तमी पृथिव्यामुत्पद्यमानानामपि कृष्णलेश्यद्रापरयुग्मप्रमाणकानां नारकाणामुत्पातपरिमाणानि सर्वमपि ज्ञातव्यमिति भावः। 'कणहलेस्स खुड्डागकलिओगनेरइयाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' कृष्णलेश्यक्षुल्लककलयोजनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः कस्मात् स्थानविशेषादागत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह— 'एवं चेव' इति 'एवं चेव' एवमेव—यथा कृष्णलेश्यक्षुल्लककलयुग्मनारकाणा-

माण में भिन्नता ऐसी है कि यहाँ पर एक समय में वे नारक दो अथवा छह, या दश, वा चौदह या संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं। इसके सिवाय और सब कथन पूर्वोक्त जैसा ही है। 'धूमप्पभाए वि जाव अहेसत्तमाए' जैसा सामान्य से नरकावास में उत्पद्यमान कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लकद्रापरयुग्म नैरयिकों का परिमाण आदि कहा गया है उसी प्रकार से वह सब उत्पात परिमाण आदि कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लकद्रापरयुग्म नैरयिकों का धूमप्रभा से लेकर यावत् अधःसप्तमी पृथिवी में भी कहना चाहिये।

'कणहलेस्स खुड्डाग कलियोग नेरइयाणं भंते ! 'कओहिंतो उववज्जंति' हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक कलयोज प्रमाण युक्त नैरयिक कहां से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं चेव' हे गौतम ! जैसा कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक

प्रमाणेन बुद्धा पणुं छे के—अडिया ओक समयमा ते नारके जे अथवा छ अथवा दस अथवा चौद अथवा सभ्यत अथवा असंभ्यत उत्पन्न थाय छे आ शिवाय भाकीनुं भीणुं सधणुं कथन पडैला कइया प्रमाणे न छे. 'धूमप्पभाए वि जाव अहे सत्तमाए' सामान्य पणुं नरकावासमां उत्पन्न थावाणा कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लकद्रापर युग्म नैरयिकेना परिणाम विगेरेना संभंधमां न प्रमाणेनुं कथन करवाभा आण्यु छे, ओज प्रमाणे ते उत्पाद परिणाम विगेरे सधणुं कथन कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लकद्रापर युग्म नैरयिकेनुं धूमप्रभा पृथ्वीथी लधने यावत् अधःसप्तमी पृथ्वी सुधी कही देवुं.

'कणहलेस्स खुड्डागकलिओगनेरइयाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लकयोज प्रमाणवाणा नैरयिके कथांथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वाभीने

उपपातादिः कथित रतेनैव रूपेण कृष्णलेश्यक्षुल्लककलयोज प्रमाणयुक्तनारका-
णाद्यपि उपपातादिको ज्ञातव्यः । किन्तु क्षुल्लककृतयुग्मनारकापेक्षया यद्वैलक्षण्यं
तादृश कलयोजप्रमाणकनारकस्य विद्यते तददर्शयति—‘णवरं’ इत्यादिना, ‘णवरं
एको वा, पंच वा, नव वा, तेरस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा’ नवरं केवल
मेको वा पञ्च वा, नव वा, त्रयोदश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा नारका
एकसमये नरकावासे सद्युपपद्यन्ते ‘सेसं तं चैव’ शेषं परिमाणातिरिक्तं सर्वमपि
रदेव-कृतयुग्मनारकवदेव ज्ञातव्यमिति । ‘एवं धूमप्रभाए वि तमाए वि अहे
सत्तमाए वि’ एवं सामान्यतः कृष्णलेश्य क्षुल्लककलयोजनारकाणां यथा उप-
पातादिः कथित रतेनैव रूपेण धूमप्रभायां पञ्चमनारकपृथिव्यामपि कृष्णलेश्य

कृतयुग्म नारकों का उत्पात आदि कहा गया है वैसा ही कृष्णलेश्या
वाले क्षुल्लक कलयोज प्रमाण युक्त नारकों का भी उपपात आदि जानना
चाहिये । किन्तु क्षुल्लक कृतयुग्म नारकों की अपेक्षा जो क्षुल्लक कलयोज
प्रमाण युक्त नारकों में अन्तर है वह ‘नवरं एकोवा पंच वा नव वा
तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट किया
गया है, तथाच वहाँ वे नारक एक समय में एक अथवा पांच, या नौ
या तेरह या संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । ‘सेसं तं चैव’
परिमाण से अतिरिक्त और सब कथन कृतयुग्म नारकों के जैसा ही
जानना चाहिये । ‘एवं धूमप्रभाए वि तमाए वि अहे सत्तमाए वि’
सामान्य से कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक कलयोज प्रमाणयुक्त नारकों के जैसा
उपपात आदि कहा गया है उसी रूप से पंचमनारक पृथिवी जो धूमप्रभा

कहे छे के—‘एवं चैव’ छे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म नारकोंना
संभंधमां जे प्रमाणे उत्पाद विगेरेतु कथन करवाभां आयुं छे, अहे प्रमाणेतुं
कथन कृष्णलेश्यावाणा कलयोज प्रमाणवाणा नारकोंना संभंधमां पणु
उपपात विगेरे संभंधी कथन समञ्जुं.

‘परतु क्षुल्लक कृतयुग्म नारकों करतां क्षुल्लक कलयोज प्रमाणवाणा नारकोंना
कथनमां जे ईरक्षार छे, ते ‘नवरं एको वा पंच वा नव वा तेरसवा संखेज्जा
वा असंखेज्जा वा’ आ सूत्रपाठथी प्रगट करेद छे. तथा त्यां ते नारकों अके
समयमां अके अथवा पांच अथवा नव अथवा तेर अथवा संख्यात अथवा
असंख्यात उत्पन्न थाय छे. ‘सेसं तं चैव’ परिणाम द्वारथी अन्य भाकीतुं
सधणुं कथन कृतयुग्म नारकोंना कथन प्रमाणे समञ्जुं. ‘एवं धूमप्रभाए वि
तमाए वि अहे सत्तमाए वि’ सामान्य कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कलयोज प्रमाणवाणा
नारकोंना उत्पाद विगेरेना संभंधमां जे प्रमाणेतुं कथन तेमना उपपात विगेरे

क्षुल्लककलयोजप्रमाणकनारकाणामपि उपपादपरिमाणादिः ज्ञातव्यः । एवमेव क्रमेण तमायां षष्ठनारकपृथिव्यामपि नारकाणाष्टुपपातादि ज्ञातव्यः तत्रैव अधःसप्तम्यां सप्तमनारकपृथिव्यामपि उपपातादिर्वर्णनीयो नारकाणामिति । यद्यपि परिमाणे संख्याता असंख्याता इति कथितं तथापि कृतयुगमप्रकरणे संख्याता अपि चतुरवशिष्टा एव, त्र्योजे त्र्यवशिष्टा एव द्वयवशिष्टा एका वशिष्टा एव संख्याताः असंख्याताश्चेति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त ! कृष्णलेश्य क्षुल्लककृतयुग्मादि नारकाणामुपपातादिविषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तदखिलमपि एवमेव सर्वथा सत्य-

है उसमें भी कृष्णलेश्याचाले क्षुल्लक कलयोज प्रमाणयुक्त नारकों का भी उपपात एवं परिमाण आदि कहना चाहिये । इसी क्रम से दृष्टवी तमा नाम की पृथिवी में भी नारकों का उपपात आदि जानना चाहिये । और इसी प्रकार सातवी अधःसप्तमी तमस्तमा नारक पृथिवी में भी नारकों का उपपात आदि जानना चाहिए । यद्यपि परिमाण में संख्यात और असंख्यात ऐसा कहा गया है तो भी कृतयुगम प्रकरण में संख्यात असंख्यात भी चतुर विशिष्ट ही होते हैं और त्र्योज में वे तीन अवशिष्टवाले ही द्वापरयुगम में वे दो अवशिष्टवाले ही और कलयोज में वे एक अवशिष्टवाले ही संख्यात एवं असंख्यात होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! कृष्णलेश्या युक्त क्षुल्लक कृतयुगम राशिवाले नारकों के उत्पात आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियेने

संभंधी कहेल छे, जेज प्रमाणुनुं कथन पांचमी नारक पृथ्वी के जे धूमप्रला छे, तेमां पणु कृतयुदेश्यावाणा क्षुल्लक कलयोज प्रमाणुवाणा नारकेना उपपात परिष्णाम विगेरे संभंधी करपुं जेधजे. आज कभथी छडी तमा नामनी नारक पृथ्वीमां पणु नारकेना उपपात विगेरे समजये. अने आज प्रमाणु सातमी अधःसप्तमी तमस्तमा नारक पृथ्वीमां पणु नारकेना उपपात विगेरेना संभंधमां कथन समजपुं. जे के परिष्णाममां संख्यात अने असंख्यात जे प्रमाणु कहेवामां आवेल छे, ते पणु कृतयुगम प्रकरणमां संख्यात अने असंख्यात पणु आर विशिष्टज डोय छे. अने त्र्येणराशिमां त्रणु शेषवाणा, द्वापरयुगममां जे शेषवाणा, अने कश्येजमां जेक शेषवाणा ज संख्यात अने असंख्यात डोय छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् कृतयुदेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुगम विगेरे राशिवाणा नारकेना उत्पाद विगेरे विषयना संभंधमां आप देवानुप्रिये

येवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-बाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मद्विवाकर-पूज्य श्री
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भग
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां एकत्रिंशत्तमे शतके
द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३१-२॥

कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतम ने भगवान को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकतीसरे शतकका
॥ द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

जे कथन करेले छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य जे छे. आप देवानुप्रियतुं ते कथन सर्वथा सत्य जे छे. आ प्रभाणुे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करी ते पछी तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर णिनज मान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना ओकतीसमा शतकने णीजे उद्देशो समाप्त ॥३१-२॥



अथ तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते

कृष्णलेश्याश्रितं द्वितीयोद्देशकं व्याख्याय क्रमप्राप्तं नीललेश्याश्रयं तृतीय-
मुद्देशकमारभते, तदनेन सम्बन्धेनायातस्य तृतीयोद्देशकस्येदं सूत्रम्—'नीललेस्स
खुड्डागकडजुम्म' इत्यादि ।

मूलम्—नीललेस्स खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ
उववज्जंति एवं जहेव कणहलेस्सखुड्डागकडजुम्मा । नवरं
उववाओ जो वालुयप्पभाए, सेसं तं चेव । वालुयप्पभा पुढवी
नीललेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया एवं चेव । एवं पंकप्पभाए
वि । एवं धूमप्पभाए वि । एवं चउसु वि जुम्मेसु । नवरं परि-
माणं जाणियठवं । परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए, सेसं तहेव ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ॥सू० १॥

एकत्तीसइमे सए तइओ उद्देसो समत्तो ॥३१-३॥

छाया--नीललेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते ? एवं यथैव कृष्णलेश्यक्षुल्लककृतयुग्माः । नवरमुपपातो यो वालुका-
प्रभायाम्, शेषं तदेव । वालुकाप्रभापृथिवीनीललेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिका
एवमेव । एवं पङ्कपभायामपि, एवं धूमपभायामपि, एवं चतुर्ष्वपि युग्मेषु, नवरं
परिमाणं ज्ञातव्यम्, परिमाणं यथा कृष्णलेश्योद्देशके, शेषं तदेव । तदेवं
भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

इति एकत्रिंशत्तमे शतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३१-३॥

टीका--तृतीयोद्देशकस्तु नीललेश्याश्रयकः नीललेश्या च तृतीयचतुर्थपञ्च-

शतक ३१ उद्देशक ३--

कृष्णलेश्याश्रित द्वितीय उद्देशक की व्याख्या करके अथ क्रम प्राप्त
नीललेश्याश्रित तृतीय उद्देशक प्रारम्भ किया जाता है, इसका यह
प्रथम सूत्र है 'नीललेस्स खुड्डाग कडजुम्म' इत्यादि

टीकार्थ--यह तृतीय उद्देशक नीललेश्याश्रयवाला है । नीललेश्या

अेकत्रीसमा शतकना त्रीण उद्देशानो प्रारभ--

कृष्णलेश्यावाणा षीण उद्देशानुं कथन करीने हवे कमथी आवेल आ नील-
लेश्या युक्त त्रीण उद्देशानो प्रारंभ करवामां आवे छे. 'नीलखुड्डाग
कडजुम्म' इत्यादि

टीकार्थ--आ त्रीणे उद्देशो नीललेश्या युक्त छे. नीललेश्या त्रीण चोथी

मीष्वेव नारकपृथिवीषु भवतीत्यतोऽत्र सामान्यदण्डकः तथा तृतीयचतुर्थपञ्चमी पृथिवीदण्डको भवतीति 'नीललेस्सखुड्ढागकडजुम्मनेरइयाणं भंते !' नीललेस्सखुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! 'कओ उववज्जंति' कुतः— कस्मात् स्थानविशेषादागत्योत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह—'एवं जहेव' इत्यादि, 'एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्ढागकडजुम्मा' एवं यथैव कृष्णलेस्सखुल्लककृतयुग्माः यथा द्वितीयोद्देशके कृष्णलेस्सखुल्लक कृतयुग्मप्रमाणकजीवानामुत्पादः कथित स्तेनैव रूपेण नीललेस्सखुल्लककृतयुग्मप्रमाणकजीवानामुत्पादादि वक्तव्य इति । 'नवरं उववाओ जहा वालुयप्पभाए' नवरं केवलमुत्पातो यथा वालुकाप्रभायाम्, अत्र खलु नीललेस्या प्रक्रान्ता सा च नीललेस्या वालु-

तृतीय चतुर्थ और पंचमी नारक पृथिवी में ही होती है । इसलिये यहां एक सामान्य दण्डक है । तथा तृतीय चतुर्थ और पंचमी पृथिवी के आश्रित तीन दण्डक हैं ।

'नीललेस्स खुड्ढाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! नीललेस्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्मराशि संपन्न नैरयिक किस स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं जहेव कण्हलेस्स खुड्ढाग कडजुम्म' हे गौतम ! जिस प्रकार से द्वितीय उद्देशक में कृष्णलेस्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमाण संपन्न जीवों का उत्पात आदि वक्तव्य हुआ है उसी प्रकार से यहां नीललेस्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमाण युक्त जीवों का उत्पात आदि भी वक्तव्य हुआ है । 'नवर उववाओ जहा वालुयप्पभाए' परन्तु विशेष यह है कि वालुकाप्रभा में जैसा उत्पात कहा गया है वैसा ही उत्पात यहां पर कहना चाहिये, यहां नीललेस्या प्रक्रान्त है । यह

अने पांचमी नारक पृथ्वीमां डोय छे. तेथी अडियां ओक सामान्य दंडक कडेल छे. तथा त्रैलु, येथी अने पांचमी पृथ्वी संभंधी त्रषु दंडको कहे छे.

'नीललेस्सखुड्ढागकडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भगवन् नीललेस्या क्षुल्लक कृतयुग्म राशीवाणा नैरयिके कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमा उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छेके— 'एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्ढागकडजुम्म' हे गौतम ! ने प्रमाणे थीण उद्देशमां कृष्णलेस्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमाणवाणा लोवोना उत्पादना संभंधमां कथन करवामां आण्युं छे, ओण प्रमाणे अडियां नीललेस्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमाणवाणा लोवोना उत्पाद विगेरे संभंधमां कही देवुं. 'नवरं उववाओ जहा वालुयप्पभाए' परंतु अडियां विशेषपणुं ओ छे के—वालुकाप्रभा पृथ्वीमां ने प्रमाणेना उत्पात कही छे, ओण प्रमाणेना उत्पात अडियां पणु सभणवो.

काप्रभायां नारकपृथिव्यां भवतीति तत्र बालुकाप्रभायां ये जीवा उत्पद्यन्ते तेषां
 प्रेषात्र उत्पादो वक्तव्य इति जीवा असंज्ञि सरीसृपवर्जिता भवन्तीति । कृष्ण-
 लेश्य क्षुल्लककृतयुग्मजीवानां व्युत्क्रान्त्या व्युत्क्रान्तिपदं प्रज्ञापनायाः पठं
 पदम्, तस्यानुसारेणोपपातः कथित इह तु बालुकाप्रभायामिषोपपातः कथित
 एतदेवोभयो वैलक्षण्यं भवतीति । 'सेसं तं चेव' शेषमुपपातातिरिक्तं सर्वं परि-
 माणादिकं तदेव कृष्णलेश्यक्षुल्लककृतयुग्मजीववदेव ज्ञातव्यमिति । 'बालुय-
 प्पभापुढवी नीललेस्स खुड्ढाग कडजुम्मनेरइया एवं चेव' बालुकाप्रभापृथिवी
 नीललेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिका एवमेव बालुकाप्रभाश्रित नीललेश्य कृतयुग्म-
 नारकाणामपि वक्तव्यता औधिकनीललेश्यकृतयुग्मनारकवदेव ज्ञातव्याः ।
 'एवं पंक्कप्पभाए वि धूमप्पभाए वि' एवमेव यथा बालुकाप्रभाश्रित नीललेश्य

नीललेश्या तृतीय नारकपृथिवी बालुका आदि में होती है इसलिये
 बालुकाप्रभा में जो जीव उत्पन्न होते हैं । उनका ही यहां उत्पाद
 कहना चाहिये यहां असंज्ञी और सरीसृप ये जीव उत्पन्न नहीं
 होते हैं इनके सिवाय बाकी के जीव उत्पन्न होते हैं । कृष्ण-
 लेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्मराशि संपन्न जीवों का प्रज्ञापना के
 छटा व्युत्क्रान्ति पद में धूमप्रभा पृथिवी के कथन अनुसार उत्पान
 कहा गया है । परन्तु यहाँ बालुकाप्रभा के अनुसार उपपात कहा
 गया है । यही दोनों में विलक्षणता है । 'सेसं तं चेव' उपपात से
 अतिरिक्त और सब परिमाण आदि का कथन कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लक
 कृतयुग्म जीवों के जैसा ही है । 'बालुयप्पभापुढवी नीललेस्स खुड्ढागकड-
 जुम्म नेरइया एवं चेव' बालुका प्रभाश्रित नीललेश्यावाले कृतयुग्म राशि

अद्वियां नीललेश्यापद युक्त ते कथन कडेवानु छे. आ नीललेश्या त्रीण नारक
 पृथ्वीबालुका प्रभायां डोय छे. तेथी बालुकाप्रभायां जे एवे उत्पन्न थाय छे,
 तेआने जे उत्पात अद्वियां कडेवे जेधये. अद्वियां असंज्ञी, सरीसृप
 (सर्प) अने सिद्ध आ एवे उत्पन्न थता नथी. आभना शिनाय भाडीना
 एवे उत्पन्न थाय छे कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्मवाणा एवेने उत्पन्न
 प्रजापना सत्रना छ्छा व्युत्क्रान्ति पदमां इहो छे परंतु अद्वियां बालुकाप्रभायां
 इहो प्रभाए उत्पन्न कडेव छे आ जे ते कथन करतां आ कथनमां विशेष
 पणु छे. 'सेसं तं चेव' उपपातना कथन शिवाय भाडीना परिष्णाम विगेरे
 संभधी कथन कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म एवेना कथन प्रभाए जे छे,
 'बालुयप्पभा पुढवी नीललेस्स खुड्ढागकडजुम्मनेरइया एवं चेव' बालुकाप्रभा
 युक्त नीललेश्यावाणा कृतयुग्मराशी प्रभाए युक्त नारकेनु कथन पणु कृष्ण
 लेश्यावाणा कृतयुग्म राशीप्रभाएवाणा नारकेना कथन प्रभाए जे छे. 'एवं पंक्क

શુલ્લકકૃતયુગ્મનારકસ્ય વક્તવ્યતા તથૈવ પદ્મપ્રમા નારકપૃથિવ્યા ધૂમપ્રમા પૃથિ-
વ્યાશ્રિતનારકાણામપિ વક્તવ્યતા જ્ઞાતવ્યા । ‘एवं चउसु वि जुम्मेसु’ एवम्
શુલ્લકકૃતયુગ્મવદેવ ચતુર્ષ્વપિ યુગ્મેષુ કૃતયુગ્મયોજદ્વાપરયુગ્મકલ્પયોજરૂપેષ્વપિ
નીલલેશ્યનારકાણાં વાલુકાપ્રમા પદ્મપ્રમા ધૂમપ્રમા તૃતીયચતુર્થપચ્ચમી પૃથિવ્યા-
શ્રિતાનાં વક્તવ્યતા જ્ઞાતવ્યા । ‘नवरं परिमाणं जाणियच्चं’ नवरं केवलं परिमाणं
ચિન્નચિન્નરૂપેણ તત્તત્ યુગ્મે જ્ઞાતવ્યં ચતુરષ્ટદ્વાદશ પ્રભૃતિ શુલ્લક કૃતયુગ્માદિ
રૂપરૂપં જ્ઞાતવ્યમિત્યર્થઃ । परिमाणं तत्तद्युगमं ज्ञातव्यमिति तत्र केन रूपेण ज्ञात-
व्यम्, तत्राह-‘परिमाणं’ इति, ‘परिमाणं जहा कणहलेसस उद्देशए’ परिमाण यथा

પ્રમાણ યુક્ત નારકોં કીં બી વક્તવ્યતા ઔષિક નીલલેશ્યાવાલે કૃતયુગ્મ
રાશ્ચિ પ્રમાણયુક્ત નારકોં કે જૈસી હી હૈ । ‘एवं पंकपभाए वि धूमपभाए
वि’ जैसी बालुकाप्रभाश्रित नीललेश्य शुल्लक कृतयुगमवाले नारक की
વક્તવ્યતા હૈ વૈસી હી વક્તવ્યતા પદ્મપ્રમા નારક પૃથિવી કે ઔર
ધૂમપ્રમા પૃથિવી કે નારકોં કીં બી હૈ । ‘एवं चउसु वि जुम्मेसु’ शुल्लक
કૃતયુગ્મ કે જૈસા હી ચારોં યુગ્મોં મેં-કૃતયુગ્મ, યોજ, દ્વાપર ઔર
કલ્પયોજ-હન યુગ્મોં મેં બી વાલુકાપ્રમા, પદ્મપ્રમા, ધૂમપ્રમા હન તીન
પૃથિવિયોં કે આશ્રિત હુए नीललेश्यावाले नारक जीवों की वक्तव्यता
જાનની ચાહિએ । ‘नवरं परिमाणं जाणियच्चं’ परन्तु उस-उस युगम
મેં પરિમાણ ચિન્ન-ચિન્ન રૂપ સે જાનના ચાહિયે । ઔર वह परिमाण
ચાર, આઠ, વારહ આદિ શુલ્લક કૃતયુગ્માદિ રૂપ હોતા હૈ એસા સમ-
જના ચાહિયે, હસી વાત કો ‘परिमाणं जहा कणहलेसस उद्देशए’ इस
સૂત્રપાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ ક્રિયા ગયા હૈ અર્થાત્-કૃષ્ણલેશ્યોદ્દેશક મેં જૈસા

‘एवम् वि धूमपभाए वि’ बालुकाप्रभा युक्त नीललेश्यावाणा शुल्लक कृतयुगम
નારકોતુ’ કથન જે પ્રમાણે કહેલ છે, એજ પ્રમાણેતુ’ કથન પંકપ્રમા નારક
પૃથ્વીના અને ધૂમપ્રમા નારક પૃથ્વીના નારકોના સંબંધમાં પણ કહેલ છે.
‘एवं चउसु वि जुम्मेसु’ शुल्लक कृतयुगमना कथन प्रमाणे न य रे युगमोमां पणु
એટલે કે-કૃતયુગ્મ, યોજદ્વાપર અને કલ્પયોજ આ યુગ્મોમાં પણ વાલુકાપ્રમા
પંકપ્રમા, ધૂમપ્રમા, આ ત્રણ પૃથ્વીયોના આશ્રયવાળા નીલલેશ્યાવાળા નારક
ઓતુ’ કથન સમજવું.

‘नवरं परिमाणं जाणियच्चं’ परन्तु ते ते युगमोमां परिणाम अलग-
અલગ હોવાતું સમજવું અને તે પરિણામ ચાર, આઠ, બાર વિગેરે શુલ્લક
કૃતયુગ્મ વિગેરે પણાવાળું હોય છે. તેમ સમજવું આ વાન ‘परिमाणं जहा
कणहलेसस उद्देशए’ આ સૂત્રદ્વારા સમજવેલ છે. અર્થાત્ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ઉદે-

कृष्णलेश्योद्देशके कथितं तथैव ज्ञातव्यम्, तथाहि-क्षुल्लक कृतयुग्मनारकाणां परि-
माणं चत्वारो वा, अष्टौ वा, द्वादश वा, षोडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा,
समुत्पद्यन्ते । त्र्योजनीललेश्यनारकास्त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, पञ्चदश वा,
संख्याता वा असंख्याता वा जायन्ते एक समये । द्वापरयुग्म नीललेश्यनारकाः
द्वौ वा, षड् वा, दश वा, चतुर्दश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा एकसमयेन जाय-
न्ते । कल्योज नीललेश्यनारका एको वा, पञ्च वा, त्रयो वा, दश वा, संख्याता
वा, असंख्याता वा जायन्ते एकसमये । एवं क्रमेण कृष्णलेश्योद्देशके प्रोक्तप्रकारेण
परिमाणं ज्ञातं भवतीति । 'सेसं तहेव' शेषं परिमाणातिरिक्तं सर्वमुपपातादिकं

परिमाण कहा गया है वैसे ही जानना चाहिये-जैसे-क्षुल्लक कृतयुग्म
नारकों का परिमाण चार अथवा आठ अथवा बारह अथवा सोलह
अथवा संख्यात अथवा असंख्यात है-एक समय में ये नारक इतनी
संख्या में वहां उत्पन्न होते हैं । त्र्योज नीललेश्य नारक तीन अथवा सात
अथवा ग्यारह अथवा पन्द्रह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात एक
समय में उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्म नीललेश्यावाले नारक दो अथवा
छह अथवा दश अथवा चौदह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात एक
समय में उत्पन्न होते हैं । कल्योज नीललेश्य नारक एक अथवा पांच
अथवा नौ अथवा तेरह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात एक समय
में उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार से कृष्णलेश्योद्देशक में कहे गये अनुसार
परिमाण जाना जाता है । 'सेसं तहेव' परिमाण से अतिरिक्त और

श मां जे, प्रमाणे परिणाम कहेल छे, जेज प्रमाणेनु परिणाम अडियां
समजवुं. जेम ई-क्षुल्लक कृतयुग्म नारकेनुं परिणाम आर अथवा आठ
अथवा बार अथवा सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात छे.-जेक
समयमां आ नारके आटती संख्यामां त्यां उत्पन्न थाय छे. त्र्योज नीललेश्या
नारके त्रिणु अथवा सात अथवा अगियार अथवा पंदर अथवा संख्यात
अथवा असंख्यात जेक समयमां उत्पन्न थाय छे. द्वापरयुग्म नीललेश्यावाणा
नारके जे अथवा छ अथवा दस अथवा चौद अथवा संख्यात अथवा अ
संख्यात जेक समयमां उत्पन्न थाय छे. कल्योज नीललेश्यावाणा नारके जेक
अथवा पांच अथवा नव अथवा तेर अथवा संख्यात अथवा असंख्यात
जेक समयमां उत्पन्न थाय छे. जे रीते कृष्णलेश्या उद्देशामां कहे प्रमाणे
परिणाम समजवुं जेधजे. 'सेसं तहेव' परिणाम शिवाय जाकीनुं उत्पाद
संभंधी कथन पहेलां कहे प्रमाणे ज छे. तेम समजवुं.

पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भद-
न्त ! इति हे भदन्त ! नीललेइय क्षुल्लक कृतयुग्मादि नारकविषये यद् देवानु-
प्रियेण कथितं तत्सर्वं सर्वथैव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नम-
स्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥सू० १॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बलभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालब्रह्मचरिचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां एकत्रिंशत्तमे शतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३१-३॥

सब उत्पाद आदि पूर्वोक्त जैसे ही जानना चाहिये 'सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति' हे भदन्त ! नीललेइय क्षुल्लक कृतयुग्मादि नारकों के विषय
में जो आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । ऐसा कह
कर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना
नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते
हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तीसरे शतकका
तृतीय उद्देशक समाप्त ॥३१-३॥

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् नीललेइयावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म
विगेरे नारकेना संभंधमां आप देवानुप्रिये ने कथनं कथुं छे, ते सधणुं कथनं
सर्वथा सत्य छे, हे भगवन् आपनु कथनं सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु
कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वदना करी अने नमस्कार कर्या वदना नमस्कार
करीने ते पछी तेज्जे संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता
थका पोताना स्थान पर विरजमान थया. सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अकत्रीसमा शतकेना त्रीने उद्देशे समाप्त ॥३०-२॥



अथ चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते

तृतीयाद्देशकं निरूप्य क्रमप्राप्तं चतुर्थमुद्देशकं कापोतलेश्याश्रयं निरूपयति तस्येदं सूत्रम्—'काउलेस्स खुड्डाग कडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति एवं जहेव कणहलेस्सखुड्डागकडजुम्म० नवरं उववाओ जो रयणप्पभाए, सेसं तं चेव । रयणप्पभा पुढवी काउयलेस्स खुड्डाग कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति एवं चेव एवं सक्करप्पभाए वि एवं वालुयप्पभाए त्ति, एवं चउसु वि जुम्मेसु । नवरं परिमाणं जाणियठवं परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

एकतीसइमे सए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥३१-४॥

छाया—कापोतलेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खल्ल भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते एवं यथैव कृष्णलेश्यक्षुल्लककृतयुग्म० नवरमुपपातो यो रत्नप्रभायाम्, शेषं तदेव । रत्नप्रभापृथिवी कापोतलेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खल्ल भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एवमेव । एवं शर्कराप्रभायामपि एवं वालुकाप्रभायामपि एवं चतुर्ष्वपि युग्मेषु । नवरं परिमाणं ज्ञातव्यम्, परिमाणं यथा कृष्णलेश्योद्देशके शेषं तदेव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

एकत्रिंशत्तमे शतके चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥३१-४॥ -

टीका—अयं चतुर्थोद्देशकः कापोतलेश्याश्रयः सा च कापोतलेश्या प्रथम-द्वितीयतृतीयरत्नप्रभाशर्कराप्रभा वालुकाप्रभापृथिवीष्वेव भवतीति कृत्वाऽत्र सामान्यदण्डको रत्नप्रभादिदण्डकत्रयं च भवतीति । सम्प्रति अक्षरार्थं विवृणोमि 'काउलेस्स खुड्डाग कडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओर्हितो उववज्जंति' कापोत-

शतक ३१ उद्देशक ४--

तृतीय उद्देशक का निरूपण करके अथ क्रम प्राप्त चतुर्थ उद्देशक का जो कि कापोतलेश्या के आश्रित है निरूपण किया जाता है ।

'काउलेस्स खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते !' इत्यादि

योथा उद्देशानो प्रारंभ--

त्रीणा उद्देशानुं निरूपणु करीने हुवे कभथी आवेल आ योथा उद्देशानु के ने कपोतलेश्या युक्त छे. तेनुं निरूपणु करवामां आवे छे.-काउलेस्सखुड्डाग-कडजुम्मनेरइया णं भंते !' इत्यादि

लेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुतः—करमात् स्थानविशेषादागत्य उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह—‘एवं जहेव’ इत्यादि, ‘एवं जहेव कण्ठलेस्स खुड्ढाग कडजुम्म०’ एवं यथैव कृष्णलेश्यक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकवदेव इहापि परिणामादि ज्ञातव्यः तथाहि—कापोतलेश्यक्षुल्लकनैरयिकाः कुत उत्पद्यन्ते ?

टीकार्थ—यह चतुर्थ उद्देशक कापोतलेश्या के आश्रित है। यह कापोतलेश्या प्रथम, द्वितीय तृतीय नारको में होती है। प्रथम नरक का नाम रत्नप्रभा है। द्वितीय नरक का नाम शर्करा प्रभा है। तृतीय नरक का नाम बालुकाप्रभा है। इस प्रकार यहाँ एक सामान्य दण्डक है और रत्नप्रभादि सम्बन्धी तीन दण्डक हैं ‘काउलेस्स खुड्ढाग कडजुम्म नैरइयाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जति’ हे भदन्त ! कापोतलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमित नैरयिक किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं ‘एवं जहेव कण्ठलेस्स खुड्ढाग कडजुम्म०’ हे गौतम ! जैसा कृष्णलेश्यावाले क्षुद्र कृतयुग्म नैरयिकों के सम्बन्ध में कहा गया है वैसे ही यहाँ पर कहना चाहिये। अर्थात् जब गौतमस्वामी ने प्रभुश्री से ऐसा पूछा—हे भदन्त ! कापोतलेश्यावाले क्षुल्लक नैरयिक कहां से उत्पन्न होते हैं ? तो उत्तर में प्रभुश्री ने उनसे ऐसा कहा—कि हे गौतम ! कापोत लेश्यावाले क्षुल्लकनैरयिक नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं। देवों में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं किन्तु पञ्चेन्द्रिय-

टीकार्थ—आ शोथो उद्देशो कापोत लेश्या युक्त कडेल छे. आ कापोत-लेश्या पडेल्ला, णीज्ज, अने त्रीज्ज नारकोमां न् डोय छे. पडेल्ला नरकनुं नाम रत्नप्रभा छे. णीज्ज नरकनुं नाम शर्करा प्रभा छे त्रीज्ज नरकनुं नाम बालुकाप्रभा छे. आ रीते अड्डियां अेक सामान्य दंडक कडेल छे, अने रत्न प्रभा विगेरे संघधमां त्रयु दंडका कइया छे. ‘काउलेस्सखुड्ढागकडजुम्म-नैरइया ण भंते ! कओहिंतो उववज्जति’ डे लगवन् कापोत लेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्मराशि युक्त नैरयिक कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे—‘एवं जहेव कण्ठलेस्सखुड्ढागकड-जुम्म०’ डे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म नैरयिकेना संघधमां न् प्रभाणेतुं कथन करेव छे, अेव प्रभाणेतुं सधणु कथन अड्डियां समन्वुं. अर्थात् गौतमस्वामीअे न्यदे अेवुं पूछयुं डे—डे लगवन् कापोतलेश्यावाणा क्षुल्लक नैरयिके कयांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री तेअेने कडे छे डे—डे गौतम ! कापोत लेश्यावाणा क्षुल्लक नैरयिक नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न यता नथी. देवोमांथी आवीने पणु उत्पन्न यता नथी. परंतु

हे गौतम ! यथानामकः कश्चित् प्लवकः प्लवमानोऽध्यवसायनिर्वर्तितेन करणो-
पायेन स्वस्थानं परित्यज्य आगामिस्थानान्तरं प्रतिपद्यते एवमेव जीवोऽध्यवसाय-
योगनिर्वर्तितेन करणोपायेन पूर्वकालिकभवं परित्यज्य भवान्तरमासादयति ।
हे भदन्त ! तेषां जीवानां कथं शीघ्रा गति भवति कथं शीघ्रश्च गतिविषयः प्रज्ञप्तः
हे गौतम ! यथानामकः कश्चित् दरुणो बलवान् यावत् त्रिसप्तत्यकेन विग्रहेणोत्प-
द्यन्ते तथा शीघ्रा गति भवति तथा शीघ्रश्च गतिविषयः प्रज्ञप्तः । ते जीवा भद-
न्त ! कथं परभवत्रायुष्कं प्रकुर्वन्ति गौतम ! अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन करणो-

तिर्यग्घोणिकों से आकर के उत्पन्न होते हैं और गर्भत्र मनुष्यों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं । हे भदन्त ! वे वहां किस प्रकार
से आकर के उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जिस प्रकार कोई कूदनेवाला
व्यक्ति कूदता कूदता पूर्व के स्थान को छोड़कर आगे के स्थान पर
पहुंच जाता है उसी प्रकार से नैरयिक भी पूर्ववर्ती भव को छोड़कर
अध्यवसाय रूप कारण के बश से आगे के भव को प्राप्त करलेते हैं । हे
भदन्त ! उन जीवों की शीघ्र गति कैसी होती है ? और उस शीघ्रगति
का विषय कैसा होता है ? जैसे कोई तरुण वचन पुत्र वौरुवे
शतक में प्रथम उद्देशक में कहे गये अनुसार ही, तो जैसा वहां कहा
गया है उसके अनुसार वे नैरयिक तीन समयवाली विग्रहगति से वहां
नरकावास में उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार की उनकी शीघ्र गति होती है
और ऐसा ही उनकी शीघ्र गति का विषय होता है । हे भदन्त ! वे
नारक परभव की आयु का बन्ध कैसे करते हैं ? हे गौतम ! अध्यवसाय

पचेन्द्रिय तिर्यग्येनिकोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे तथा गर्भं न
मनुष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे. छे लगवन् तेयो त्यां कथं रीते आवीने
उत्पन्न थाय छे ? आना उत्तरमां छे गौतम ! न प्रमाणे कौं कृद्वावाणो
पुंष कृद्तो कृद्तो पडेवाना स्थानने छोडीने आगणना स्थान पर पडेयी न्य
छे, अे प्रमाणे नैरयिके पण पडेवाना लवने छोडीने अध्यवसायरूप कारणने
वश थधने आगणना स्थानपर पडेयी न्य छे. छे कश्चु निधान लगवन् ते
लवोनुं शीघ्रगमन केवा प्रकारुं डोय छे ? अने ते शीघ्र गमनने विषय केवे
डोय छे ? उत्तरमा प्रलुश्री कडे छे के-छे गौतम ! नैम कौं तश्चु अणवान
पुंष यौदमा शतकना पडेवा उद्देशमां कद्या प्रमाणे ते नैरयिके त्रणु समय-
वाणी विग्रह गतिथी त्यां नरकावासमां उत्पन्न थाय छे. आ रीतनी तेओनी
शीघ्रगति डोय छे. अने तेओना शीघ्र गमनने विषय पणु अे प्रमाणेने
डोय छे. छे लगवन् ते नारके परलवना आयुष्यने अंध केवी रीते कदे छे ?

पायेन एवं खलु ते जीवाः परमवायुष्कं प्रकुर्वन्ति । हे भदन्त ! तेषां जीवानां कापोतलेश्याश्रयाणां कथं गति भवति गौतम ! आयुःक्षयेण भवक्षयेण स्थिति-क्षयेण एवं गति भवति । हे भदन्त ! ते जीवाः कापोतलेश्याश्रया किम् आत्म-ऋद्धयोत्पद्यन्ते परऋद्ध्या वा उत्पद्यन्ते ? हे गौतम ! आत्मऋद्ध्या समुत्पद्यन्ते नो परऋद्ध्या, हे भदन्त ! ते कापोतलेश्या जीवाः किमात्मकर्मणा उत्पद्यन्ते परकर्मणा वा ? हे गौतम ! आत्मकर्मणा जायन्ते नो परकर्मणा । हे भदन्त ! कापोतलेश्या जीवाः किमात्मप्रयोगेणोत्पद्यन्ते परप्रयोगेण वा हे गौतम ! आत्म-

योग से निर्वर्तित करणोपाय से वे नारक परभव की आयुका बन्ध करते हैं । हे भदन्त ! कापोतलेश्यावाले उन जीवों की गति कैसी होती है ? गौतम ! आयु के क्षय से, भव के क्षय से और स्थिति के क्षय से होती है । हे भदन्त ! कापोतलेश्याश्रयवाले वे जीव क्या आत्मऋद्धि से उत्पन्न होते हैं ? या परऋद्धि से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे जीव वहाँ से आत्मऋद्धि से उत्पन्न होते हैं, परऋद्धि से उत्पन्न नहीं होते हैं । हे भदन्त ! वे कापोतलेश्यावाले जीव क्या आत्मकर्म से उत्पन्न होते हैं ? या परकर्म से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे जीव आत्मकर्म से ही उत्पन्न होते हैं परकर्म से उत्पन्न नहीं होते हैं । हे भदन्त ! वे कापोतलेश्यावाले जीव क्या आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? या परप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे जीव आत्मप्रयोग से ही उत्पन्न होते हैं परप्रयोग

हे गौतम ! अध्वसाय योऽथी निर्वर्तित करवाना उपायथी ते नारका पर-
 लवना आयुष्येना अध करे छे हे भगवन् कापोतलेश्यावाणा ते लवानी
 गति केवी छेय छे ? हे गौतम ! आयुष्येना क्षयथी लवना क्षयथी अने
 स्थितिना क्षयथी तेऽथानी गति थाय छे. हे भगवन् कापोतलेश्याना आश्रय
 वाणा ते लवो शुं आत्मऋद्धिथी उत्पन्न थाय छे ? हे परऋद्धिथी उत्पन्न
 थाय छे. हे गौतम ! ते लवो त्यां आत्मऋद्धिथी उत्पन्न थाय छे. परऋद्धिथी
 उत्पन्न थता नथी. हे भगवन् ते कापोतलेश्यावाणा लवो आत्मकर्मथी त्यां
 उत्पन्न थाय छे ? अथवा परकर्मथी त्यां उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! ते
 लवो आत्मकर्मथी त्यां उत्पन्न थाय छे. परकर्मथी उत्पन्न थता नथी. हे
 भगवन् ते कापोतलेश्यावाणा लवो शुं आत्म प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ?
 अथवा पर प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! ते लवो आत्मप्रयोगथी
 उत्पन्न थाय छे, परप्रयोगथी उत्पन्न थता नथी. विगेरे प्रकारथी कृष्ण
 लेश्याना संबंधमां कडेन सधणुं कथन अडियां कडेवुं जेछे.

प्रयोगेणोत्पद्यन्ते नो परप्रयोगेणेत्यादिकं सर्वं कृष्णलेश्यप्रकरणोदितमिह ज्ञात-
व्यम् इति । 'नवरं उववाओ रयणप्पभाए' नवरं केवलं पूर्वापेक्षया वैलक्षण्यमिदं
यत् कापोतलेश्य जीवानामुपपातो यथा रत्नप्रभायां कथितः तथैव सामान्यदण्डके
उपपातो वर्णनीय इति । 'सेसं तं चेव' शेषमुपपातातिरिक्तं सर्वं परिमाणादिकं
तदेव कृष्णलेश्यनारकीय द्वितीयोद्देशकवदेव ज्ञातव्यमिति । सामान्यदण्डकः
कापोतलेश्यजीवानामिति । 'रयणप्पभापुढवीकाउलेस्स खुड्ढागकडजुम्म नेरइया णं
भंते ! कओ उववज्जति' रत्नप्रभापृथिवी कापोतलेश्यक्षुल्लक कृतयुग्मनैरयिकाः
खल्ल भदन्त ! कुतः—कस्मात् स्थानविशेषादागत्य रत्नप्रभायामुत्पद्यन्ते ? इति
प्रश्नः, भगवानाह—'एवं' इत्यादि, 'एवं चेव' एवमेव यथैव सामान्यदण्डके
कापोतलेश्यनारकजीवानामुत्पत्तिः कथित्वा तथैव रत्नप्रभाप्रथमनारकाश्रित कापो-

से नहीं । इत्यादि सब यह कृष्णलेश्योदित प्रकरण यहां कहना
चाहिये 'नवरं उववाओ रयणप्पभाए' परन्तु पूर्व की अपेक्षा से यही
वैलक्षण्य है कि कापोतलेश्यावालों का उपपात जैसा रत्नप्रभा में कहा
गया है वैसा ही सामान्य दण्डक में उपपात कहना चाहिये । 'सेसं तं
चेव' उपपात से अतिरिक्त और सब परिमाण आदिक कृष्णलेश्य
नारक के द्वितीय उद्देशक के जैसे ही जानना चाहिये । ऐसा यह
सामान्य दण्डक कापोतलेश्यावाले जीवों का है । 'रत्नप्रभा पुढवीकाउ-
लेस्स खुड्ढाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते कओ उववज्जति' हे
भदन्त ! कापोतलेश्यावाले क्षुद्रकृतयुग्मराशि प्रमित रत्नप्रभा
के नैरयिक किस स्थान विशेष से आकर के रयणप्पभा रूप नरकावास
में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं चेव' हे गौतम !
सामान्यदण्डक में कापोतलेश्यावाले नारक जीवों का जैसा उपपात कहा

'नवरं उववाओ रयणप्पभाए' परंतु पहिलाना करतां अहिं अणं विल-
क्षण्यपणुं छे के—कापोतलेश्यावाणाणोणो उपपातं न प्रभाणुं रत्नप्रभायां कडे-
वायां आवेदं छे, अणं प्रभाणुं उपपातं सामान्यं दंडकं कडेवो जेणं अणं
'सेसं तं चेव' उपपातना कथं शिवाय आकीनुं परिणाम विगेरे कथं
कृष्णलेश्यावाणा नारकना णीण उद्देशायां कथा प्रभाणुं समण्वुं अणं प्रभाणुं आ
सामान्यं दंडकं कापोतलेश्यानां सम्बंधमां कडेलं छे.

'रयणप्पभा पुढवी काउलेस्स खुड्ढागकडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ
उववज्जति' छे भगवन् कापोतलेश्यावाणा, क्षुद्र कृतयुग्म राशिथी युक्त रत्न
प्रभाना नैरयिके कथा स्थान विशेषमांथी आवीने रत्नप्रभा इय नरकावासमां
उत्पन्नं थायं छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'एवं चेव' छे

હલેશ્યજીવાનામપિ ઉપાતો જ્ઞાતવ્યઃ, ન નૈરયિકાદારગત્ય ઉત્પદ્યન્તે કિન્તુ પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકૈશ્ય આગત્ય સમુત્પદ્યન્તે રત્નપ્રમાયાં કાપોતલેશ્યાશ્રયા નારકાઃ, તથા ગર્ભજમનુષ્યેશ્યશ્રાગત્યોત્પદ્યન્તે નો દેવેશ્ય આગત્ય કાપોતલેશ્યાઃ રત્નપ્રમાયાસુત્પદ્યન્તે इत्यादिकं सर्वं सामान्यदंडकवदेव रत्नप्रभा दंडकेऽपि ज्ञातव्यमिति 'एवं सक्करप्पभाए वि' एवं रत्नप्रभावदेव शर्कराप्रभायामपि द्वितीयनारकपृथिव्यां कपोतलेश्य नारकजीवानामुपपातादि ज्ञातव्यः 'एवं बालुप्रप्पभाए वि' एवं रत्नप्रभादंडकवदेव बालुकाप्रभायामपि तृतीयनारकपृथिव्यां कपोतलेश्याश्रयजीवानामुपपातादि ज्ञातव्यः । 'एवं चउसु वि जुम्मेसु' एवं चतुर्ष्वपि कृतयुग्मत्रयोज-

ગયા હૈ उसी प्रकार से वह प्रथम नारकाश्रित कपोतलेश्य जीवों का भी जानना चाहिये, तथा च-वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं और न देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं और गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार का यह कथन जैसा कि सामान्य दण्डक में कपोतलेश्याश्रित नारक जीवों के उद्भवः में कहा गया है वैसा ही सब कथन इनका रत्नप्रभा दण्डक में भी कहना चाहिये, 'एवं सक्करप्पभाए वि एवं बालुप्रप्पभाए वि' रत्नप्रभा दण्डक के कथन जैसा कथन शर्कराप्रभा दण्डक में और बालुकाप्रभा दंडक में भी उन कपोतलेश्य नारक जीवों के उत्पाद आदि का जानना चाहिये ।

'एवं चउसु वि जुम्मेसु' इसी प्रकार से कृतयुग्म, त्रयोज द्वापरयुग्म और कलयोज रूप चारों युग्मों में भी उत्पात आदि समझना चाहिये

ગીતમ । સામાન્ય દંડકમાં કાપોતલેશ્યાવાળા નારક જીવોના ઉપપાત જે રીતે કહેલ છે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ નરકોવાળા કાપોતલેશ્યાવાળા જીવોના ઉપપાત પણ સમજવો. તથા તેઓ નૈરયિકેમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થતા નથી. તથા દેવોમાંથી આવીને પણ ઉત્પન્ન થતા નથી પરંતુ પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ય યોનિકોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે અને ગર્ભજ મનુષ્યોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રમાણેનું આ કથન જે રીતે સામાન્ય દંડકમાં કાપોતલેશ્યાવાળા નારક જીવોના સંબંધમાં કહેલ છે. એજ પ્રમાણે તે સઘળું કથન આ રત્નપ્રભા દંડકમાં પણ કહેવું જોઈએ. 'एवं सक्करप्पभाए वि' રત્નપ્રભા દંડકના કથન પ્રમાણેનું કથન શર્કરા પ્રભા દંડકમાં પણ તે લેશ્યાવાળા નારક જીવોના ઉપપાત વિગેરેના સંબંધમાં સમજવું.

'एवं चउसु वि जुम्मेसु' આજ પ્રમાણે કૃતયુગ્મ ત્રયોજદ્વાપર યુગ્મ, અને કલયોજ રૂપ ચારે યુગ્મોમાં પણ ઉત્પાત વિગેરે સમજવા. 'नवर'

द्वापरयुग्मकलयोजरूपेषु युग्मेष्वपि उपपातादि ज्ञातव्यः । 'नवरं परिमाणं जाणियव्वं' नवरं केवलं तत्तत् युग्मेषु त्रिंशष्टपरिमाणं चतुरष्ट द्वादशमभृति क्षुल्लककृतयुग्मादि स्वरूपं ज्ञातव्यम् ! केन रूपेण चतुरष्टादिकं परिमाणं ज्ञातव्यं तत्राह- 'परिमाणं' इत्यादि, 'परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए, परिमाणं यथा कृष्णलेशयोद्देशके कथितं तथैव इहापि त्रिंशच्च ज्ञातव्यमिति, तथाहि कृतयुग्मकापोतलेश्यस्य चत्वारोऽष्टौ वा, द्वादश वा, पौडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा. त्र्योजकापोतलेश्यस्य त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, पञ्चदश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, द्वापरयुग्मकापोतलेश्यस्य द्वौ वा, षड् वा, दश वा, चतुर्दश वा, कृतयुग्मकापोतलेश्यस्य तु एको वा, पञ्च वा, नव वा, त्रयोदश वा, संख्याता

'नवरं परिमाणं जाणियव्वं' परन्तु उन-उन युग्मों में चार, आठ, द्वादश, आदि क्षुल्लककृतयुग्मादिरूप त्रिंशष्ट परिमाणपूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये, यही बान-'परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए' इस सूत्र द्वारा पुष्ट की गई है । किस रूप से यह चार आठ आदि रूप परिमाण जानना चाहिये ? तो इसके लिये 'परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए' ऐहा कहा गया है कि कृष्णलेश्या उद्देशक में जो परिमाण कहा गया है वह यहां पर भी भिन्न-भिन्न रूप से जानना चाहिये । जैसे-कृतयुग्म राशिप्रमित कापोतलेश्यावाले नारक जीव एक समय में चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं त्र्योजराशि प्रमित कापोतलेश्यावाले नारक जीव तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात एक साथ उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्म राशि प्रमित कापोतलेश्यावाले नारक जीव एक साथ दो, छह, दश

परिमाण जाणियव्वं' परन्तु ते ते युग्माभां चार, आठ, अर, विगेरे क्षुल्लककृतयुग्म विगेरे रूप विशेष परिणाम पडेलां क्हा प्रमाणेण समञ्जसुं ओण वात-'परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए' आ सूत्रपाठ द्वारा पुष्ट करवाभां आवेल छे इध रीते आ चार, आठ, विगेरे प्रकारनुं परिणाम समञ्जसुं, ? तो आ सञ्जना 'परिमाणं जहा कणहलेस्स उद्देसए' आ सूत्रपाठ कडेले छे. आ सूत्रपाठथी ओ क्हु छे के-कृष्णलेश्याना उद्देशाभां ने परिमाणु कडेवभां आवेल छे, ते अडिया पणु जुदा जुदा प्रकारथी समञ्जसुं नेम के-कृतयुग्म राशियुक्त कापोतलेश्यावाणा नारक ओवे ओक समयभां चार, आठ, अर, सोण संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न थाय छे त्र्योजराशि प्रमित कापोतलेश्यावाणा नारक ओवे त्रणु, सात, अगीयार, पंदर संख्यात अथवा असंख्यात ओक साथे उत्पन्न थाय छे. द्वापर युग्मराशि प्रमाणु कापोतलेश्या

एषा, असंख्याता वेति। 'सेसं तं चेव, सेषं परिमाणातिरिक्तं सर्वं तदेव सामान्य-
दंडकपरिपठितमेव ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त !
तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! कापोतलेश्याजीवानां चतुर्ष्वपि दंडकेषु येन
रूपेण उपपातादिकं देवानुप्रियेण कथितं तत् सर्वम् एवमेव-सर्वथा सत्यमेव इति
कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दत्ये नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा
आत्मानं भावयन् चिह्नरतीति ॥सू० १॥

इति एकत्रिंशत्तमे शतके चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥ ३१-४ ॥

बौद्ध, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । कलयोज राशिप्रमित
कापोतलेश्यावाले नारक जीव एक, पांच, नौ, तेरह, संख्यात अथवा
असंख्यात एक साथ उत्पन्न होते हैं । 'सेसं तं चेव' परिमाण से
अतिरिक्त और सब कथन सामान्य दण्डक के जैसा ही कहा गया
जानना चाहिये, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! कापोत-
लेश्यावाले जीवों के चारो दण्डकों में जिसरूप से उपपात आदि क आप-
देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही हैं । इस प्रकार कहकर
गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना, नम-
स्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए
अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

॥ चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥ -३१-४ ॥

वाणा नारक लोको ओकी साथे जे, छ, दस अने चौद संध्यात अथवा अ
संध्यात उत्पन्न थाय छे उद्योग २ शि प्रमाणे कापोतलेश्यावाणा नरक
लोको ओक, पांच, नव, तेर संध्यात अथवा असंध्यात ओक साथे उत्पन्न
थाय छे. 'सेसं तं चेव' परिणाम शिवायतुं आकीतुं सधुं कथन सामान्य
दंडकमां क्छा प्रमाणे जे कहुं छे, तेम समजवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् कापोतलेश्यावाणा लोकोना थारे
दंडकमां जे प्रमाणे उपपात विगेरे आप देवानुप्रिये कहेल छे, ते सधुं कथन
सर्वथा सत्य जे छे हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य जे छे.
आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार
कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथी चेताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू० १॥

॥ चोथो उद्देशो समाप्त ॥ ३१-४ ॥

अथ पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

मूलम्—भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? किं नेरइय० ? एवं जहेव ओहिओ गमओ तहेव निरवसेसं जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति । रयणप्पभापुढवी भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्मनेरइया णं भंते !० एवं चेव निरवसेसं एवं जाव अहे सत्तमाए । एवं भवसिद्धिय खुड्डाग तेओग नेरइया वि, एवं जाव कलिओग त्ति नवरं परिमाणं जाणियच्चं, परिमाणं पुव्वभणियं जहा पढमुद्देसए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । १।

छाया—भवसिद्धिक क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यः, एवं यथैवौधिको गमक स्तथैव निरवशेषं यावन्नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते । रत्नप्रभा पृथिवीभवसिद्धिकक्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! एवमेव निरवशेषम् एवं यावदधः सप्तम्याम् । एवं भवसिद्धिकक्षुल्लकत्रयोजनैरयिका अपि, एवं यावत्कलयोज इति, नवरं परिमाणं ज्ञातव्यं परिमाणं पूर्वभणितं यथा प्रथमोद्देशके । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । सू० १॥

टीका—‘भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्मनेरइयाणं भंते’ भवसिद्धिक क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! ‘कओ उववज्जंति किं नेरइय०’ कुतः—कस्मात् स्थानविशेषादागत्योत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य उत्पद्यन्ते तिर्यग्योनिकेभ्यो वा आगत्य नरकावासे समुत्पद्यन्ते मनुष्येभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते देवेभ्यो वा

शतक ३१ उद्देशक-५

‘भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्म नेरइयाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—‘भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्म नेरइयाणं भंते !’ हे भदन्त ! भवसिद्धिक क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिक ‘कओहिओ उववज्जंति’ किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अर्थात् जो भवसिद्धिक नैरयिक क्षुद्र कृतयुग्मराशि प्रमित हैं वे कहाँ से आकर के नरकावास में उत्पन्न

॥पांचमा उद्देशाने प्रारंभ—

‘भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्मनेरइयाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—‘भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्मनेरइयाणं भंते !’ हे भगवन् भवसिद्धिक क्षुद्र कृतयुग्मनैरयिक ‘कओहिओ उववज्जंति’ क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अर्थात् जे भवसिद्धिक नैरयिक क्षुद्र कृतयुग्मराशि प्रमाण छे, तेओ कयाथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां

आगत्योत्पद्यन्ते ! इति प्रश्नः, भगवानाह—‘एवं जहेव’ इत्यादि, ‘एवं जहेव ओहिओ गमओ तहेव निरवसेस जाव नो परप्पयोगेण उववज्जंति’ एवं यथैव औधिक्यो यमकस्तथैव निरवशेषं यावन्नो परमयोगेणोत्पद्यन्ते औधिकप्रकरणे यथोत्पादादिकं कथितं तथैव इहापि ज्ञातव्यम्, तथाहि-कुत्र उत्पद्यन्ते इति प्रश्नस्य न नैरयिकेभ्य आगत्य उत्पद्यन्ते न वा देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते किन्तु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते तथा गर्भजमनुष्येभ्य आगत्य समुत्पद्यन्ते, इत्युत्तरम् । ते खलु भवसिद्धिकाः क्षुल्लककृतयुग्मनारकाः भदन्त ! एकसमये कियन्त उत्पद्यन्ते ! गौतम ! चत्वारो वा, अष्ट वा, द्वादश वा, षोडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा एकसमये जायन्ते । ते खलु भदन्त ! भवसिद्धिकक्षुल्लककृत-

होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं जहेव निरवसेसं जाव नो परप्पयोगेण उववज्जंति’ हे गौतम ! औधिक प्रकरण में जैसा-जिस रीति से उत्पाद आदि का कथन किया है उसी रीति से वह सब यहां पर भी जानना चाहिये, जैसे-यह प्रश्न किया गया है कि भव सिद्धिक कृतयुग्म नैरयिक कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? तो वहां ऐसा उत्तर में कहना चाहिये कि वे न नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं और न देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? किन्तु पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं और गर्भज मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं । हे भदन्त ! ये क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमित भवसिद्धिक नैरयिक एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं—? हे गौतम ! एक समय में वे चार, या आठ, या बारह, या सोलह या

प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘एवं जहेव ओहिओ गमओ तहेव निरवसेस जाव परप्पयोगेण उववज्जंति’ हे गौतम ! औधिकना प्रकरणमां ने प्रमाणे उत्पद्य विगेरे संख्यां कथन करवासां आवेल छे, अथ प्रमाणे ते सधणुं कथन अडियां पणु ससणुं नेम के-न्यारे अवे। प्रश्न पूछवासां आण्ये के-भवसिद्धिक कृतयुग्म नैरयिक कथांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? तो तेने उत्तर अवे। छे के-तेओ नैरयिकेमाथी आवीने उत्पन्न थता नथी तथा देवोमांथी आवीने पणु उत्पन्न थता नथी. परंतु पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे. तथा गर्भज मनुष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे. हे भगवन् आ क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमाणवाणा भवसिद्धिक नैरयिके अेक समयमां केटवा उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! अेक समयमां तेओ चार, अथवा आठ अथवा बार अथवा सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न थाय छे. हे भगवन् आ क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमाणवाणा भवसिद्धिक नैरयिके केवी रीते

युग्मनारकाः कथमुत्पद्यन्ते ? हे गौतम ! स यथानामकः कश्चिन् प्लवमानोऽय-
वसायनिर्वर्तितेन करणोपायेन एष्यति काले पूर्वस्थानं परित्यज्येतेन स्थानमुप-
सपद्य विहरति, एवमेव इमे नारकाः प्लवका इवाध्यवसायनिर्वर्तितेन करणो-
पायेन पूर्वभवं परित्यज्य भवान्तर मासादयन्ति तेषां खलु भवसिद्धिक क्षुल्लक-
कृतयुग्मनारकजीवानां कथं शीघ्रा गतिः कथं शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञप्तः हे गौतम !
स यथानामकः कश्चित्पुरुषः तरुगो बलवान् यावत् त्रिसमयेन वा विग्रहेणोत्पद्यन्ते
तेषां खलु जीवानां तथा शीघ्रा गतिः तथा शीघ्रो गतिविषयः प्रज्ञप्तः । ते खलु
भवसिद्धिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकजीवाः कथं परमवायुष्कं कुर्वन्तीति । हे

संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । हे भदन्त ! ये क्षुल्लक कृतयुग्म-
राशिप्रमिन भवसिद्धिक नैरयिक कैसे उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम !
जैसे कोई प्लवक कूदता-कूदता अध्यवसाय विशेष से निर्वर्तित
करणोपाय से आगामी काल से पूर्व स्थान को छोड़कर आगे
के स्थान को प्राप्त करता है, इसी प्रकार से ये नारक प्लवक के जैसे
ही अध्यवसाय से निर्वर्तित करणोपाय द्वारा पूर्व भव को छोड़कर पर
भव को-भवान्तर को प्राप्त कर लेते हैं । हे गौतम ! भवसिद्धिक
क्षुल्लककृतयुग्म नारक जीवों की कैसी शीघ्र गति होती है ? और इस
शीघ्र गति का विषय कैसा होता है ? हे गौतम ! जैसे कोई तरुग बलवान्
पुरुष चौदहवें शतक में प्रथम उद्देशक में कहे गये अनुसार हो तो जैसा
वहाँ कहा गया है उसके साफिक वे नैरयिक तीन समय वाली विग्रह
गति से वहाँ नरकावासमां में उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार की उनकी
शीघ्र गति होती है और ऐसा ही उनकी शीघ्र गति का विषय होना

उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! जेम को- कूदवावाणे - कूदतो कूदतो अध्यवसाय
विशेषथी निवर्तित करणुना उपायथी आगामी कालमां पूर्व स्थानने छोडीने
आगणना स्थानने प्राप्त करे छे अज रीते आ नारक कूदवावाणानी जेमज
अध्यवसाय विशेषथी निवर्तित करणुपायद्वारा पूर्व लवने छोडीने परलवने
लवान्तर अर्थात् धीज लवने प्राप्त करी ले छे हे लवन् लवसिद्धिक
क्षुल्लक कृतयुग्म नारक जीवानी शीघ्र गति डेवी होय छे ? अने ते शीघ्र गतिने
विषय डेवा होय छे ? हे गौतम ! जेम को- तइषु अलवान पुइष यीदमा
शतकना पडेला उद्देशामां कथा प्रमाणे होय तो त्यां जे प्रमाणे कडेवामां
आन्थुं छे, ते प्रमाणे ते नारके तइषु समयवणी विग्रह गतिथी त्यां नारका-
वासमां उत्पन्न थाय छे आ रीतनी शीघ्रगति होय छे अने अज प्रमाणे
तेआना शीघ्र गमनेना विषय होय छे.

गौतम ! अध्यवसाययोगनिर्वर्तितेन कारणोपायेन एवं खलु ते जीवाः परमवा-
युष्कं कुर्वन्तीति । तेषां खलु भदन्त । जीवानां कथं गतिः प्रवर्तते गौतम ! आयुः
क्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेण एवं खलु गतिः प्रवर्तते इति । ते खलु भवसिद्धिक
क्षुल्लककृतयुग्मनारक जीवाः किम् आत्मऋद्ध्या उत्पद्यन्ते परऋद्ध्या नोत्पद्यन्ते
इति, हे गौतम ! आत्मऋद्ध्या समुत्पद्यन्ते न परऋद्ध्या समुत्पद्यन्ते । ते खलु
भवसिद्धिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकजीवाः किमात्मकर्मणा उत्पद्यन्ते पर कर्मणा वा
उत्पद्यन्ते हे गौतम ! आत्मकर्मणैव उत्पद्यन्ते न परकर्मणोत्पद्यन्ते । ते खलु भव-
सिद्धिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकजीवाः भदन्त ! आत्मप्रयोगेण उत्पद्यन्ते परप्रयोगेण

है । हे भदन्त ! वे भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्म नारक जीव परभव
की आयु का बन्ध कैसे करते हैं ? हे गौतम ! अध्यवसाय योग
से निर्वर्तित कारणोपाय से वे परभव की आयु का बन्ध करते हैं । हे
भदन्त ! उन जीवों की गति कैसी होती ? हे गौतम ! आयु के क्षय से
भव के क्षय से और स्थिति के क्षय से होती है । हे भदन्त ! वे भव-
सिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्म नारक जीव क्या आत्मर्द्धि से उत्पन्न होते
हैं या परर्द्धि से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे आत्मर्द्धि से ही
उत्पन्न होते हैं परर्द्धि से उत्पन्न नहीं होते हैं हे भदन्त ! भवसिद्धिक
क्षुल्लक कृतयुग्म नारक जीव क्या आत्म कर्म से उत्पन्न होते हैं या
परकर्म से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे आत्म कर्म से ही उत्पन्न
होते हैं परकर्म से उत्पन्न नहीं होते हैं । हे भदन्त ! वे भवसिद्धिक
क्षुल्लक कृतयुग्म नारक जीव क्या आत्म प्रयोग से उत्पन्न होते हैं या

हे भगवन् ते भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्म नारक एव परभवनी
आयुष्येणो बन्ध क्वेरी रीते करे छे ? हे गौतम ! अध्यवसाय योग्थी निवर्तित
करणोपाय्थी तेभ्यो परभवना आयुष्येणो बन्ध करे छे. हे भगवन् ते एवोनी
गति क्वेरी रीते डोय छे ? हे गौतम ! आयुना क्षय्थी भवना क्षय्थी अने
स्थितिना क्षय्थी तेभ्योनी गति थाय छे हे भगवन् ते भवसिद्धिक क्षुल्लक
कृतयुग्म नारक एवो शु' आत्मऋद्धिथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा परऋद्धिथी
उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! तेभ्यो आत्मऋद्धिथी न उत्पन्न थाय छे परऋद्धिथी
उत्पन्न थता नथी. हे भगवन् ते भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्म नारक एवो
आत्मकर्मथी उत्पन्न थाय छे ? के पर कर्मथी उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम !
तेभ्यो आत्म कर्मथी न उत्पन्न थाय छे. परकर्मथी उत्पन्न थता नथी. हे
भगवन् ते भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्म नारक एवो शु' आत्म प्रयोगी उत्पन्न

वा, उत्पद्यन्ते ? गौतम ! आत्मप्रयोगेणोत्पद्यन्ते, एतदन्ते सर्वं यावत्पदेन संगृहीतं भवतीति । 'रयणप्पभापुढवी भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्मनेरइयाणं भंते' रत्नप्रभा पृथिवी भवसिद्धिकक्षुद्रकृतयुग्मनैरिकाः खल्ल भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य स्तिर्यग्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्योचेति प्रश्नः, उत्तर माह—'एवं चेव' इत्यादि, 'एवं 'चेव निरवसेसं' एवमेव—औघिकगमवदेव निरवशेषम् औघियगवदेव सर्वं' यावत् नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते ज्ञातव्यमिति । 'एवं जाव अहे सत्तमाए' एवं यावदधः सप्तम्याम्, यावत्पदेन शर्कराप्रभात् आरभ्य तमान्तपृथिव्याः संग्रहः, तथा च

पर प्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? गौतम वे आत्म प्रयोग से ही उत्पन्न होते हैं पर प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं । यहां तक यह सय यहां यावत् पद से गृहीत हुआ है । 'रयणप्पभा पुढवी भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते !' हे भदन्त ! रत्नप्रभा पृथिवी के क्षुद्रकृत-युग्म राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिक कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिको से आकर के उत्पन्न होते हैं ? या तिर्यग्योनिकां में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? या मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? या देवों में आकर उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं चेव निरवसेसं' हे गौतम ! जैसा सामान्य गम कहा गया है वैसा ही यहां वह सम्पूर्ण रूप से यावत् वे परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं यहां तक कहना चाहिये । 'एवं जाव अहे सत्तमाए' इसी प्रकार का कथन अधः सप्तमी पृथिवी तक समझना चाहिये, यहां यावत् पद से शर्कराप्रभा

थाय छे ? के परप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे ? हे गौतम ! तेओ आत्म प्रयोगथी उत्पन्न थाय छे. परप्रयोगथी उत्पन्न थता नथी आ अडिं सुधीतुं सधणुं कथन अडियां यावत् पदथी थडणु इदेल छे,

'रयणप्पभा पुढवी भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! हे भगवन् रत्नप्रभा पृथ्वीना क्षुद्र कृतयुग्मराशि प्रमाणवाणा लवसिद्धिक नैरयिके कथांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु तेओ नैरयिकेमांथी आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्य योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री उडे छे के—'एवं चेव निरवसेसं' हे गौतम ! सामान्यगम ने प्रमाणे उडेल छे, ओज प्रमाणे ते अडियां संपूर्ण पणु यावत् तेओ परप्रयोगथी उत्पन्न थता नथी आत्मप्रयोगथी उत्पन्न थाय छे. आ कथन सुधीतुं सधणु कथन कहेपु जेधओ.

'एव जाव अहे सत्तमाए' आण प्रमाणेतुं कथन अधःसप्तमी पृथ्वी सुधी सम्भणुं. अडियां यावत्पदथी शर्कराप्रभाथी दधते तमःप्रभापृथ्वी नामनी

अथ रत्नप्रभा पृथिव्याश्रित नारकाणामुत्पादादिः कथितः तथैव शर्कराप्रभास्रभाः सप्तमीपृथिवी पर्यन्ताश्रित भवसिद्धिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकाणामपि उत्पादादिर्ज्ञातव्य इति । 'एवं भवसिद्धिक खुड्डागतेयोगनेरइयावि' एवं भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुग्मनारकवदेव भवसिद्धिक क्षुल्लकयोजनारकाणामपि उत्पादादिर्ज्ञातव्य इति । 'एवं जाव कलिओगत्ति' एवं यावत् कल्योज इति भवसिद्धिक क्षुल्लकयोजनारकवदेव भवसिद्धिकक्षुल्लक द्वापरयुग्मनारक भवसिद्धिकक्षुल्लक-प्रलयोजनारकयोरपि उत्पादादिर्ज्ञातव्य इति । 'नवरं परिमाणं जाणियव्वं' नवरं

से लेकर तमा पृथिवी नाम की ६ठी तक की पृथिवियों को ग्रहण हुआ है । तथा च-जैसा कथन रत्न प्रभा पृथिवी के आश्रित नारकों के उत्पादादि के सम्बन्ध में किया गया है वैसा ही कथन शर्कराप्रभा से लेकर अधःसप्तमी पृथिवियों के आश्रित क्षुल्लक कृतयुग्म राशि प्रमाण भवसिद्धिक नैरयिकों के उत्पाद आदि के सम्बन्ध में भी कहना चाहिये । 'एवं भवसिद्धिक खुड्डाग तेयोग नेरइया वि' क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिकों के जैसा ही क्षुद्र योज राशिप्रमित भवसिद्धिक भी जानना चाहिये, अर्थात् उनके उत्पादादि जैसा ही इनका भी उत्पादादि कहना चाहिये । 'एवं जाव कलिओगत्ति' और ऐसा ही उत्पादादि का कथन यावत् क्षुद्रकल्योज राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिकों में भी करना चाहिये, यहां यावत् शब्द से क्षुद्र द्वापरयुग्म राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिकों का ग्रहण हुआ है । 'नवरं परि-

छ्ठी पृथ्वी सुधीनी पृथ्वीया अडणु कराथ छे. तथा—जे प्रमाणे रत्नप्रभा पृथ्वीना आश्रय करीने नारकेना उत्पाद विगेरेना संभंधमां कथन करवामां आवेल छे, अण प्रमाणेनुं कथन शर्कराप्रभाथी लरने अधःसप्तमी पृथ्वी सुधीनी पृथ्वीयांमां रडेला अडणु कृतयुग्म राशिप्रमाणे लवसिद्धिक नैरयिकेना उत्पाद विगेरेना विषयमा पणु कडेवुं जेथ अ. 'एवं भवसिद्धिक खुड्डाग तेयोग नेरइया वि' अडणु कृतयुग्म राशिप्रमाणे नैरयिकेना कथन प्रमाणे जे क्षुद्रयोज राशिप्रमाणे लवसिद्धिक नैरयिकेनुं कथन पणु समजवुं अर्थात् तेजोना उत्पाद विगेरे प्रमाणे जे आमना उत्पाद विगेरे पणु समजवा 'एवं जाव कलिओगत्ति' अने आ प्रमाणेनुं जे उत्पाद विगेरे संभंधी कथन यावत् क्षुद्र कल्योज राशिप्रमाणे लवसिद्धिक नैरयिके । संभंधमां पणु कडेवुं जेथअ. अडियां यावत् शब्दथी क्षुद्र द्वापर युग्मराशिप्रमाणे लवसिद्धिक नैरयिके अडणु थयेल छे. 'नवरं परिमाणं जाणियव्वं' परंतु अथे जे बिल्ल-बिल्ल

केवलं सर्वत्र परिमाणं भिन्न भिन्न रूपेण ज्ञातव्यम् । 'परिमाणं युक्त्वं भणिर्यं जहा-
पठमुद्देसए' परिमाणं पूर्वभणितमेव ज्ञातव्यम् यथा एतच्छतकीय 'प्रथमोद्देशके'
कथितम् चत्वारो वा, अष्टौ वा, इत्यादि कृतयुगमस्य । त्रयो वा, सप्त वा, इत्यादि
त्रयोजस्य । द्वौ वा, षड् वा इत्यादि द्वापरयुगमस्य । एको वा, पञ्च वा इत्यादि
कलयोजस्येति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति हे भदन्त ! भवसिद्धिक क्षुल्लक कृतयुगमादि नारकाणां सामान्यानां रत्नप्रभा
याश्रितानां च उत्पादपरिमाणादिकं यथा देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सर्वथैव

माणं जाणियव्वं' परन्तु सर्वत्र परिमाण भिन्न-भिन्न रूप से जानना
चाहिये, जैसा कि इस शतक के प्रथम उद्देशक में कहा गया है—कि
कृतयुग राशिप्रमित नैरयिकों का परिमाण एक समय के उत्पाद का
चार भाग आदि रूप हैं, त्रयोज राशिप्रमित नैरयिकों का परिमाण एक
समय के उत्पाद का तीन अथवा सात आदि रूप है । द्वापरयुगराशि
प्रमित नैरयिकों का परिमाण दो, छह आदि कलयोज राशिप्रमित
नैरयिकों का परिमाण एक पांच आदि रूप है । 'सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति' हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुगमादि राशिप्रमित भवसिद्धिक
नैरयिकों के उत्पादादि के सम्बन्ध में जो सामान्य रूप से तथा रत्न
प्रभादि आश्रित इन्हीं नैरयिकों के उत्पादादि के सम्बन्ध में जो विशेष

पण्णाथी समञ्जुं. तेम के-आ शतकना पडेलो उद्देशामां कर्हुं छे के-कृतयुगम्
राशिप्रमाणु नैरयिकेणुं परिणाम (अेक समयना उत्पादनुं) चार, आठ, विगेरे
इप छे. त्रयोज राशिप्रमाणुवाणा नैरयिकेणुं परिमाणु अेक समयना उत्पादनुं-
त्रयु अथवा सात विगेरे इपे छे. द्वापर युग राशि प्रमाणु नैरयिकेणुं
परिमाणु-अे-आठ विगेरे इपे छे. तेम समञ्जु देवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुग राशिप्रमाणु
वाणा भवसिद्धिक नैरयिकेणा उत्पाद विगेरेना संभंधमां सामान्य इपथी अने
विशेष इपथी आपदेवानुप्रिये अे कथन कर्हुं छे. ते सधणुं कथन सर्वथा

सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० १ ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजमदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-वाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री “भग
वतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां एकत्रिंशत्तमे शतके
पञ्चमोद्देशकः समाप्तः ॥३१-५॥

रूप से आप देवानुप्रियने कथन किया है वह सब सर्वथा सत्य ही है, ऐसा कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकतीसरे शतकका
पंचम उद्देशक समाप्त ॥३१-५॥

सत्यं च छे. २ आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नम
स्कार कर्या वंदनं नमस्कार करीने तेजे संयम अने तपथी चोताना आत्माने
भावित करता थका चोताना स्थान पर भिराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र”नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना ओकत्रीसमा शतकने पांचमे उद्देशे समाप्त ॥३१-५॥



अथ षष्ठोद्देशकादारभ्य अष्टाविंशतिरुद्देशकाः प्रारभ्यन्ते ॥

मूलम्—कणहलेस्स भवसिद्धि य खुड्ढागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति एवं तहेव ओहिओ कणहलेस्स उद्देसओ तहेव निरवसेसं, चउसु वि जुम्मेसु भाणियव्वो जाव अहे सत्तम पुढवी कणहलेस्स खुड्ढागकलिओगनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३१-६॥

‘नीललेस्स भवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा, जहा ओहिण् नीललेस्स उद्देसए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥३१-७॥

‘काउलेस्स भवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव उववाण्-यव्वा, जहेव ओहिण् काउलेस्स उद्देसए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ ॥३१-८॥

‘जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि उद्देसया भाणिया, एवं अभव-सिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा । जाव काउलेस्स उद्देसओ त्ति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ ॥३१-९-१२॥

एवं सम्महिट्ठीहिं वि लेस्सा संजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगां कायव्वा, नवरं सम्महिट्ठी पढमवितिण्णसु वि दोसु वि उद्देसए सु अहे सत्तमा पुढवीण् न उववाण्णयव्वा, सेसं तं चव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३१-१३-१६॥

मिच्छादिट्ठीहिं वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा, जहा भव-सिद्धियाणं सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३१-१७-२०॥

एवं कणहपक्खिएहिं वि लेस्सा संजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहेव भवसिद्धिएहिं सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ॥३१-२१-२४॥

सुकूपखिखएहि एवं चैव चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा जाव
वालुयप्पभापुढवि काउलेस्स सुकूपखिखयखुड्डागकलिओग नेर-
इयाणं कओ उववज्जंति, तद्देव जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति सव्वे वि एए अट्टावीसं उद्देशगा ॥३१-२८॥

एकतीसइमं उववायसयं समत्तं ॥३१॥

छाया-कृष्णलेश्यभवसिद्धिक क्षुल्लककृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते ? एवम् यथैव, औधिकः कृष्णलेश्योद्देशकस्तथैव-निरवशेषं चतुर्ष्वपि
युग्मेषु भणितव्यः यावद्धः सप्तमपृथिवी कृष्णलेश्यक्षुल्लक कलयोजनैरयिकाः
खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते तथैव, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३१॥६॥

नीललेश्यभवसिद्धिकाश्चतुर्ष्वपि युग्मेषु तथैव भणितव्याः यथा-औधिक
नीललेश्योद्देशके । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥३१॥७॥
कापोतलेश्य भवसिद्धिकाश्चतुर्ष्वपि युग्मेषु तथैव उपपातयितव्याः यथैवौधिके
कापोतलेश्योद्देशके । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति यावद्विहरति ॥३१॥८॥

यथा भवसिद्धिकैश्चत्वार उद्देशका भणिताः एवम् अभवसिद्धिकैरपि चत्वार
उद्देशका भणितव्याः यावत्कापोतलेश्योद्देशक इति । तदेवं भवन्त ! तदेवं
भदन्त ! इति ॥३१॥९-१२॥

एवं सम्यग्दृष्टिभिरपि लेश्यासंयुक्तैश्चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः नवरं
सम्यग्दृष्टिः प्रथम द्वितीययोरपि द्वयोरपि उद्देशकयोरधः सप्तमपृथिव्यां न उप-
पातयितव्यः शेषं तदेवं, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३१॥१३-१६॥

मिथ्यादृष्टिभिरपि चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः यथा भवसिद्धिकानाम् ।
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३१॥१७-२०॥

एवं कृष्णपाक्षिकैरपि लेश्यासंयुक्तैश्चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः यथैव-
भवसिद्धिकैः । तदेवं भवन्त ! तदेवं भवन्त ! इति ॥३१॥२१-२४॥

शुक्लपाक्षिकैः-एवमेव चत्वार उद्देशका भणितव्याः यावद् बालुकाप्रभा
पृथिवीकापोतलेश्य पाक्षिक क्षुल्लक-कलयोजनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते, तथैव-यावद् नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति । सर्वेऽपि एतेऽष्टाविंशतिरुद्देशकाः ॥३१-२५ २८॥

एकत्रिंशत्तममुपपातशतं समाप्तम् ॥३१॥

टीका-‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिक खुड्डाग कडजुम्मनेइयाणं भंते’ कृष्ण-
लेश्यभवसिद्धिकक्षुल्लक कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! ‘कओ उववज्जंति’ कुत

उत्पद्यन्ते, किं नैरयिकेभ्य स्तिर्यग्योनिकेभ्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्यो वा आगत्योत्प-
द्यन्ते इति प्रश्नः, भगवानाह—‘एवंजहा’ इत्यादि । ‘एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्स
उद्देसओ तहेव निरसेसं चउसु वि जुम्मेसु भाणियव्वो, एवं यथैव औधिकः कृष्ण
लेश्योदेशकः तथैव निरवशेषं चतुर्व्वपि युग्मेषु कृतयुग्म ऽयोज द्वापर कलयोज-
युग्मेषु भणितव्वयः । कियत्पर्यन्त मौधिकगमवक्तव्यता ? तत्राह—‘जाव’ इत्यादि ।
‘जाव अहे सत्तम पुढवी कण्हलेस्स खुड्डागकलिओगनेरइयाणं भन्ते ! कओ
उत्तवज्जंति’ यावदधःसप्तमपृथिवी कृष्णलेश्य क्षुल्लक कलयोजनैरयिकाः खलु

शतक ३१ उद्देशक ६-२८ तक

‘कण्हलेस्स भवसिद्धिय खुड्डागकडजुम्म नेरइयाणं भन्ते !’ इत्यादि
टीकार्थः—हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक क्षुद्र कृतयुग्म
प्रमाण प्रमित नैरयिक ‘कओ उववज्जंति’ किस स्थान विशेष से आक-
रके नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिकों में से आकरके वे
वहां उत्पन्न होते हैं ? या तिर्यग्योनिकों में से आकरके वे वहां
उत्पन्न होते हैं ? या मनुष्यों में से आकर वहां उत्पन्न होते हैं ?
या देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—
‘एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्स उद्देसओ तहेव निरवसेसं चउसु वि
जुम्मेसु भाणियव्वो’ हे गौतम ! औधिक कृष्णलेश्या के उद्देशक में
जिस प्रकार से कहा गया है उसी प्रकार से चारों युगों में भी कहना
चाहिये, वे चार युग्म—कृतयुग्म, ऽयोज, द्वापर और कलयोज—ये हैं । यह
औधिक गम वक्तव्यता यावत्, अधःसप्तमी नारकपृथिवी के कृष्णलेश्य

छंटा उद्देशानो प्रारंभ—

‘कण्हलेस्स भवसिद्धिय खुड्डाग कडजुम्म नेरइयाणं भन्ते !’ इत्यादि

टीकार्थः—हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक क्षुद्रकृतयुग्म प्रमित नैरयिक
‘कओ उववज्जंति’ क्या स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ?
शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यगेमाथी आवीने
त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
देवेमांथी आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतम
स्वामीने कडे छे के—‘एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्स उद्देसओ तहेव निरवसेसं
चउसु वि जुम्मेसु भाणियव्वो’ हे गौतम ! औधिक कृष्णलेश्याना उद्देशमां ने
प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, ओण प्रमाणे आरे युग्मेमां कडेवुं. ओणओ. ते
आर युग्मे ते कृतयुग्म ऽयोज द्वापर अने कल्योज ओ प्रमाणे छे. औधिक
गम संभंधी कथन यावत् अधःसप्तमी नारक पृथ्वीना कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक

भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते, किं नैरयिकेभ्यस्तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्यो वा, इत्यादि प्रश्नः ? यावत्पदेन धूमप्रभातमः पृथिव्याश्रितनारकाणां संग्रहो भवतीति प्रश्नः ? तद्देव' तथैव-औधिकप्रकरणवदेव सर्वगुत्तरं ज्ञातव्यम् । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त ! यद् देवानुप्रियेण कथितम्, सत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं नमस्कृत्य यावद्विहरतीति ।

षष्ठोद्देशकः समाप्तः ॥३१॥६॥

क्षुल्लक कल्पोज प्रमित नैरयिक वहां कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिकों में से आकर के वहां उत्पन्न होते हैं ? या तिर्यग्घोनि-कों में से आकर के वे वहां उत्पन्न होते हैं ? या मनुष्यों में से आकर के वहां उत्पन्न होते हैं ? या देवों में से आकर के वहां उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि कहना चाहिये । 'तद्देव' हे गौतम ! वे वहां पञ्चेन्द्रिय तिर्य-ग्घोनिकों में से आकर के भी उत्पन्न होते हैं और गर्भज मनुष्यों में से आकर के भी उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार औधिक प्रकरण के जैसा ही यहां सब उत्तर जानना चाहिये, यहां यावत्पद से धूमप्रभा और तमः प्रभाः पृथिवी में रहे हुए नैरयिकों का संग्रह हुआ है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जो आप देवानुप्रियेने यह कहा है वह सब सत्य ही है । ऐसा कहकर गौतम ने भगवान को वन्दना की और नम-स्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ षष्ठ उद्देशक समाप्त ॥ ३१-६॥

कथ्येण प्रमित नैरयिक त्यां कथांती आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु' नैरयिके-मांती आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य'योमांती आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांती आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवे-मांती आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ कथन सुधी कडेवुं जेधये. 'तद्देव' हे गौतम ! तेज्जे त्यां पञ्चेन्द्रिय तिर्य'य येनिकेमांती आवीने उत्पन्न थाय छे. अने गर्भज मनुष्येमांती पण आवीने उत्पन्न थाय छे. आ रीते औधिक प्रकरणमां कहेला प्रभाणे अहियां तमाभ उत्तरे समजवा अहियां यावत्पदथी रत्नप्रभा पृथ्वी विगेरेमां रडेला नैरयिके अहणु कराया छे. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये जे कथन करेल छे, ते सधणुं कथन सत्य ज छे. आ प्रभाणे कडीने गौतमस्वामीजे लगवानने वंदना करी नमस्कार कथा वंदना नमस्कार करीने तेज्जे तप अने संयमथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥छठे उद्देशे समाप्त ॥३१-६॥

‘नीललेस्सभवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा, जहेव ओहिण् नीललेसोद्देशए’ नीललेश्यभवसिद्धिका नारकाः चतुर्ष्वपि-कृतयुग्म ञ्योज द्वापर-युग्म कलयोजात्मकयुग्मेषु तथैव भणितव्या, यथा औधिकनीललेश्योद्देशके भणिताः । एतस्मिन्नेव शतके तृतीयोद्देशके नीललेश्यामधिकृत्य युग्म चतुष्टयेषु नारकाणामुत्पातादिर्यथा प्रतिपादित स्तेनैव रूपेण नीललेश्य भवसिद्धिक नार-काणां चतुर्ष्वपि युग्मेषु तथैव वक्तव्यता विज्ञेया, सेवं भंते । सेवं भंते । त्ति जाव विहरइ’ तदेव’ भदन्त ! तदेव’ भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥सू० १॥

इति सप्तमोद्देशकः समाप्तः ॥३१-७॥

‘नीललेस्स भवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु-तहेव भाणियव्वा’-इ. टीकार्थ-नीललेश्यावाले भवसिद्धिक नैरयिक चारों युग्मों में औधिक नीललेश्योद्देशक में कहे अनुसार कहना चाहिये । तात्पर्य कहने का यह है कि इसी शतक में तृतीय उद्देशक में नीललेश्या को अधिकृत करके कृतयुग्म, ञ्योज, द्वापरयुग्म और कलयोज इन चार युग्मों में नारक जीवों का उत्पात आदि जैसा कहा गया है उसी रूप से नील लेश्यावाले भवसिद्धिक नैरयिकों की वक्तव्यता भी चारों ही युग्मों में कहनी चाहिये । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ हे भदन्त ! आपका यह कथन सर्वथा सत्य ही हैं २ । यह कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर वे संयम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ सप्तम उद्देशक समाप्त ॥ ३१-७ ॥

सातमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘नीललेस्स भवसिद्धिय चउसु वि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा’ धृत्यादि

टीकार्थ—नीललेश्यावाणा भवसिद्धिक नैरयिको चारे युग्मोमां औधिक नीललेश्याना उद्देशाभां कथा प्रमाणे कडेवुं लेधये

आ कथननुं तात्पर्यं ये छे के-आ ऐकत्रीसमा शतकना त्रील उद्देशाभां नीललेश्याना अधिकारथी कृतयुग्म, ञ्योज, द्वापरयुग्म अने कट्योञ् युग्मोमां नारक लोवोना उत्पाद विगेरे संभंधी जे प्रमाणे कथन करवामां आवेल छे. जे प्रमाणे नीललेश्यावाणा भवसिद्धिक नैरयिकोना संभंधमां चारे युग्मोमां कथन करवुं लेधये.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ हे लगवन् आपनुं आ विषय संभंधनुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. हे लगवन् आपनुं कथन सत्य ज छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेजोने नमस्कार कुर्या वंदना नमस्कार करीने तप अने संयमथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥सातमो उद्देशो समाप्त ॥३१-७

‘काउलेस्स भवसिद्धिया चउसु जुम्मेसु’ कापोतलेश्या भवसिद्धिका नारका-
 शतुर्ष्वपि कृतयुग्म-उयोज-द्वापरयुग्मेषु । ‘तहेव उववाएयव्वा जहेव ओहिए
 काउलेस्सोद्देसए’ तथैव तेनैव रूपेण उपपातयितव्याः यथैव-औधिके कापोतलेश्यो
 देशके उपपातिताः । एतच्छतकीय चतुर्थोद्देशके कापोतलेश्याश्रित नारकाणां
 युग्म चतुष्टयमधिकृत्य यथा-यथा उत्पादपरिमाणादिकः कथितः तत्सर्वं मिहापि
 अनुसन्धेय इति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ तदेवं भदन्त !
 तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति । इत्यष्टम उद्देशकः समाप्तः ॥८॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - ‘जैनाचार्य’
 पूज्यश्री-घासीलालब्रतिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
 व्याख्यायां एकत्रिंशत्तमे शतके अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥३१-८॥

आठवे उद्देशका प्रारंभ

‘काउलेस्स भवसिद्धिया चउसु जुम्मेसु’ कापोतलेश्यावाले भव-
 सिद्धिक नैरयिकों का चारों युग्मों में ‘तहेव उववाएयव्वा जहेव
 ओहिए काउलेस्सोद्देसए’ औधिक कापोतलेश्या उद्देशक में कहे गये
 अनुसार उपपात आदि का कथन करना चाहिये । तात्पर्य कहने का
 यह है कि इस शतक के चतुर्थ उद्देशक में कापोतलेश्या को आश्रित
 करके नारकों का कृतयुग्मादि चारों युग्मों में जिस-जिस प्रकार से
 उत्पाद परिमाण आदि का कथन किया गया है वही सब कथन यहाँ
 पर भी लगाना चाहिये सेवं भंते ! ‘सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’

आठमा उद्देशाने। प्रारंभ—

‘काउलेस्स भवसिद्धिया चउसु जुम्मेसु’ कापोतलेश्यावाणा भवसिद्धिक
 नैरयिके।नु’ आरे युग्मे।मां ‘तहेव उववाएयव्वा जहेव ओहिए काउलेस्सो-
 देसए’ औधिक कापोतलेश्यावाणा उद्देशां।मां कथा प्रभाण्णे उपपात विगेरे-
 संभंधी कथन कडेपुं नेधण्णे कडेवानुं तात्पर्यं अे छे के—आ अेकत्रीसमा
 शतकना येथा उद्देशां।मां कापोतलेश्याने। आश्रय करीने नारके।नुं कृतयुग्म
 विगेरे आरे युग्मे।मां वे-वे रीते उत्पाद, परिमाण विगेरेना संभंधमां
 कथन करवां।मां आण्युं छे, अेण सधणुं कथन अर्हियां पणु कडेपुं नेधण्णे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ छे भगवन् आपदेवानुप्रिये कडेव

हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के द्वारा कहा गया यह सब विषय सर्वथा सत्य ही है। इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके तप एवं संयम से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकत्रिसर्वे शतकका
॥ अष्टम उद्देशक समाप्त ॥ ३१-८॥

आ तमाम विषय सत्य ए छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीणे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराज मान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना एकत्रिसर्वे शतकने आठमे उद्देशे समाप्त ॥३१-८॥



અથ નવમોદ્દેશકાદારમ્ય દ્વાદશાન્તા ઉદ્દેશકાઃ

‘જહા મવસિદ્ધિર્દિહિં ચત્તારિઉદ્દેસયા મણિયા’ યથા મવસિદ્ધિકૈર્મવસિદ્ધિકાન્ નારકાનાશ્રિત્ય યથા ચત્તવાર ઉદ્દેશકાઃ કથિતાઃ । ‘એવં અમવસિદ્ધિર્દિહિં વિ ચત્તારિ ઉદ્દેસા માણિયવ્વા’ એવમ્ અમવસિદ્ધિકૈરવિ-અમવસિદ્ધિકા નાશ્રિત્યાપિ ચત્તવાર ઉદ્દેશકા મણિતવ્યાઃ’ ક્રિયત્પર્યન્તં તન્નાહ—‘જાવ’ ઇત્યાદિ । ‘જાવ-કાઉલેશ્સા ઉદ્દેસોત્તિ’ યાવત્કાપોતલેશ્યોદ્દેશક ઇતિ, યાવત્પદેન પ્રથમસ્ય સામાન્યનૈરયિકાણાં કૃષ્ણલેશ્યનીલલેશ્યનૈરયિકાણાં સંગ્રહો મવતીતિ । ‘સેવં મંતે ! સેવં

નવ વેં ઉદ્દેશક સે ચારહ પર્યન્ત કે ઉદ્દેશોકા કથન

‘જહા મવસિદ્ધિર્દિહિં ચત્તારિ ઉદ્દેસયા મણિયા’ જિસ પ્રકાર મવસિદ્ધિક નારકોં કો આશ્રિત કરકે ચાર ઉદ્દેશક કહે ગયેં હૈં ‘એવં અમવસિદ્ધિર્દિહિં વિ ચત્તારિ ઉદ્દેસગા માણિયવ્વા’ હસી પ્રકાર અમવસિદ્ધિક નૈરયિકોં કો આશ્રિત કરકે મી ચાર ઉદ્દેશક કહના ચ્હાહિયે—યાવત્કાપોતલેશ્યા ઉદ્દેશક તક । યહાં યાવત્પદ સે સામાન્ય નૈરયિકોં કા કૃષ્ણલેશ્યાવાલે નૈરયિકોં કા એવં નીલલેશ્યાવાલે નૈરયિકોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ હે મદન્ત ! જૈસા આપ દેવાનુપ્રિયને યહ વિષય કહા હૈ વહ સર્વથા સત્ય હી હૈ ૨ । એસા

।।નવમા ઉદ્દેશાથી ધારમા સુધીના ઉદ્દેશાઓનો પ્રારંભ—

‘જહા મવસિદ્ધિર્દિહિં ચત્તારિ ઉદ્દેસયા મણિયા’ જે પ્રમાણે મવસિદ્ધિક નારકોને ઉદ્દેશીને ચાર ઉદ્દેશાઓ કહેવામાં આવેલા છે, ‘એવં અમવસિદ્ધિર્દિહિં વિ ચત્તારિ ઉદ્દેસગા માણિયવ્વા’ એજ પ્રમાણે અમવસિદ્ધિક નૈરયિકોને ઉદ્દેશીને પણ ચાર ઉદ્દેશાઓ કહેવા ભેદ્ય છે. યાવત્કાપોતલેશ્યા ઉદ્દેશક પર્યન્ત કહેવું ભેદ્ય છે. અહિયાં યાવત્પદથી આ એકત્રીસમા શતકના સામાન્ય ઉદ્દેશાના કૃષ્ણલેશ્યાવાળા નૈરયિકો અને નીલલેશ્યાવાળા નૈરયિકો ગ્રહણ કરાયા છે.

‘સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ હે ભગવન્ આપદેવાનુપ્રિયે આ વિષયમાં જે કહ્યું છે, તે સર્વથા સત્ય જ છે. હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયનું કથન સર્વથા સત્ય જ છે, આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને વંદના કરી તેઓ

भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ नवम दशमैकादश द्वादशो
देशकाः समाप्ताः ॥९-१०-११-१२॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री
"भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् एकत्रिंशत्तमशतकस्य
नवमोद्देशका दारभ्य द्वादशान्ता
उद्देशकाः समाप्ताः ॥९-१२॥

कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना
नमस्कार कर फिर वे संघम और तप से आत्मा को भावित करते हुए
अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके इकतीसवें शतक का
नववें उद्देशक ९-से लेकर १२ तक समाप्त ॥९-१२॥

ने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने तेज्जे संघम अने तपथी पोताना
आरमाने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराज मान थया. ॥सू०१॥
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अेकत्रीसमा शतकना नवमा उद्देशाथी आर उद्देशा
सुधीना उद्देशाज्जे समाप्त ॥३१-६-१२॥



त्रयोदशादारभ्य षोडशान्ता उद्देशकाः

‘एवं सम्मदिद्वि वि लेस्सासंजुत्तेहि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ एवं भवसिद्धिकनारकवदेव सम्यग्दृष्टिभिरपि नारकैः कृष्ण-नील कापोतलेश्या-संयुक्तैः चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः । सम्यग्दृष्टिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? कृष्णलेश्य सम्यग्दृष्टि क्षुल्लककृतयुग्मनारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते २, नीललेश्य सम्यग्दृष्टि नारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ३, कापोतलेश्य सम्यग्दृष्टिनारकाः कुत उत्पद्यन्ते ४,

तेरह्वे उद्देशक से सोलहवे पर्यन्त के उद्देशक का कथन

‘एवं सम्मदिद्वि वि लेस्सा संजुत्तेहि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’

भवसिद्धिक, एवं अभवसिद्धिक नारक के जैसे कृष्ण, नील कापोतलेश्या संयुक्त सम्यग्दृष्टि नारकों को लेकर भी चार उद्देशक कहना चाहिये—जैसे हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमित सम्यग्दृष्टिक नारक किस स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले क्षुल्लककृतयुग्म राशिप्रमित सम्यग्दृष्टि नारक किस स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? २ । इत्यादि नीललेश्यावाले क्षुल्लककृतयुग्म राशिप्रमित सम्यग्दृष्टिक नारक हे भदन्त । किस स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि ३ कापोतलेश्यावाले क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमित सम्यग्दृष्टि नारक हे भदन्त । किस स्थान विशेष से आकर नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि ४ इस क्रम से ये चार उद्देशक जानना चाहिये । ‘नवरं सम्मदिद्वि पढमवितिएसु वि दोसु वि उद्देशेसु

तेरमा उद्देशाथी सोणमा सुधीना उद्देशानो प्रारंभ—

‘एवं सम्मदिद्विहि वि लेस्सासंजुत्तेहि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ इत्यादि

टीका—भवसिद्धिक नारकाना कथन प्रमाणे कृष्ण नील, कापोतलेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नारकाने उद्देशाने चार उद्देशाओ कडेवा जेध अये, जेम डे-डे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्मराशि प्रमित सम्यग्दृष्टिवाणा नारके कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? २ नीललेश्यावाणा क्षुल्लककृतयुग्म राशिप्रमित सम्यग्दृष्टिवाणा नारके कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? ३ कापोतलेश्यावाणा क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमितसम्यग्दृष्टिवाणा नारके कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? ४ आ कथथी चार उद्देशाओ समथ देवा. ‘नवरं सम्मदिद्वि पढमवितिएसु दोसु

एवं क्रमेण चत्वार उद्देशकाः ज्ञातव्याः । 'नवरं सम्मदिद्वीपदमत्रितिएसु वि दोसु वि उद्देशसु' नवरं केवलं सम्यग्दृष्टिनारकः, प्रथमद्वितीययोरपि द्वयो- रपि उद्देशकयोः । 'अहे सत्तमा पुढवीए न उववाएयव्वा' अधः सप्तमी पृथिव्यां सप्तमनरकभूमौ न उपपातयितव्यः, प्रथमद्वितीयोद्देशके सम्यग्दृष्टिनारकः सप्तम- नारकभूमौ न उपपातयितव्यः । कापोतलेश्याश्रयः प्रथम-द्वितीय तृतीयनरकेषु गच्छति नान्यत्र, नीललेश्यः तृतीय चतुर्थ-पञ्चमनरके गच्छति नान्यत्र, कृष्ण लेश्यः-पञ्चम-षष्ठ सप्तमनरकेषु गच्छति नान्यत्र, किन्तु कृष्णलेश्यः-सम्यग्दृष्टिः सप्तमे न गच्छति पञ्चम षष्ठ नरकेषु गच्छत्येवेति भगवता कथितम् । कृष्णलेश्य- स्य सप्तम्यां गमनसंभवेन सम्यग्दृष्टिप्रभावात् तन्निषेधो युक्त एव नील कापो

अहे सत्तमा पुढवीए न उववाएयव्वा' परन्तु प्रथम और द्वितीय उद्देशक में सम्यग्दृष्टि नारक का अधःसप्तमी पृथिवी में उत्पाद नहीं होने के कारण उसका वहाँ उत्पाद नहीं कहना चाहिये तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि कापोतलेश्यावाला सम्यग्दृष्टि नारक प्रथम तृतीय, चतुर्थ और पंचम इन नरकों में जाता है अन्य नरकों में नहीं जाता है नीललेश्यावाला सम्यग्दृष्टि नारक तृतीय चतुर्थ और पंचम इन नरकों में जाता है । अन्यत्र नहीं जाता है कृष्णलेश्यावाला नारक यद्यपि पञ्चम, षष्ठ और सप्तम इन नरकों में जाता है अन्यत्र नहीं जाता है किन्तु कृष्णलेश्यावाला सम्यग्दृष्टि नारक सप्तम नरक में नहीं जाता पंचम और षष्ठ नरक में तो जाता ही है ऐसा भगवान ने कहा है । कृष्णलेश्यावाले का सप्तम नरक में गमन संभव है परन्तु सम्यग्दर्शन के प्रभाव से वहाँ जाने का निषेध किया गया है सो यह कथन

उद्देशसु अहे सत्तमा पुढवीए न उववाएयव्वा' परंतु પહેલા અને બીજા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિવાળા નારકનો અધઃસપ્તમી પૃથ્વીમાં ઉત્પાત ન થવાના કારણે ત્યાં તેનો ઉત્પાત કહેવો ન લેખ્યો. કહેવાતું તાત્પર્ય એ છે કે-કાપોતિક લેશ્યાવાળા સમ્યગ્દૃષ્ટિ નારક પહેલા બીજા અને ત્રીજા નરકોમાં જાય છે. તે શિવાય ના બીજા નરકોમાં જતા નથી. નીલલેશ્યાવાળા સમ્યગ્દૃષ્ટિ નારક ત્રીજા, ચોથા, અને પાંચમા નરકોમાં જાય છે. તે શિવાય અન્યત્ર જતા નથી કૃષ્ણ-લેશ્યાવાળા નારકો ને કે-પાંચમા, છઠ્ઠા અને સાતમા નરકોમાં જાય છે, અન્યત્રજતા નથી. પરંતુ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા સમ્યગ્દૃષ્ટિ નારક સાતમા નરકમાં જતા નથી. પહેલા અને છઠ્ઠા નરકમાં તો જાય જ છે. તે પ્રમાણે ભગવાને કહ્યું છે. કૃષ્ણલેશ્યાવાળાનું સાતમા નરકમાં ગમન સંભવિત છે. પરંતુ સમ્યગ્દર્શનના પ્રભાવથી ત્યાં જવાનો નિષેધ કરેલ છે, તે આ કથન યોગ્ય જ છે.

तयोस्तु तत्र सप्तम्यां प्राप्तिरेव नास्ति, अतो न तन्निषेधः कृत इति एतदेव वैकल्प-
ण्यम् 'सेसं तं चेव' शेषम्-कथितव्यतिरिक्तम् अन्यत्सर्वं पूर्वतदेव ज्ञातव्यमिति ।
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ।

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां एकत्रिंशत्तमे शतके त्रयोदशोद्देशकादारभ्य षोडशोद्देशकान्ता
उद्देशकाः समाप्ताः ॥३१।१३।१६॥

युक्त ही है । नील और कापोतलेश्यावालों की तो वहाँ प्राप्ति ही नहीं
है । इसलिये वहाँ इसका निषेध नहीं किया गया है । 'सेसं तं चेव'
इस भिन्नता के अतिरिक्त और सब कथन पूर्वोक्त जैसा ही है । 'सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्न ! जैसा आप देवानुप्रियने कहा है वह
सब कथन सत्य ही है २ ऐसा कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना
की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप
से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ शतक ३१ उद्देशक १३ से १६ तक समाप्त ॥ ३१-१३-१६ ॥

नील अने कापोतिक लेश्यावाणायोनी ते अहियां प्राप्ति न थती नथी.
तेथी तेभने निषेध नथी. 'सेसं तं चेव' आ उपर उडेल लिन्न पणु शिवाय
याडीनुं तमाभ कथन पडेल। कया प्रभाणु न छे. तेभ समज्जुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आपहेवानुप्रिये ने प्रभाणु
आ विषयमां कथन कथुं छे. ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे, हे लगवन्
आपहेवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीने
प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कया वंदना नमस्कार करीने ते पछी
तेओ संयम अने तपथी आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
भिराज मान थया. ॥सू०१॥

ओकत्रीसभा शतकमा तेरभा उद्देशाथी सोणमा उद्देशा
सुधीना आर उद्देशाओ समाप्त ॥१३-१६॥

‘मिच्छादिद्विहिं वि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा, जहा, भवसिद्धियाणं, मिथ्या-
दृष्टिभिरपि लेश्यासंयुक्तैश्चत्वार उद्देशकाः सामान्योद्देशकाः कृष्ण-नील कापोत-
लेश्याश्रयाः त एते चत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्याः यथा भवसिद्धिकानां चत्वारः
कथिता इति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति
सप्तदशा-ऽष्टादशै-कोनविंशति विंशत्युद्देशकाः समाप्ताः ३१।१७।२०

‘मिच्छादिद्विहिं वि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा जहा भवसिद्धियाणं’
लेश्या संयुक्त मिथ्यादृष्टि नारकों के भी चार उद्देशक भवसिद्धिक
नारकों के जैसे कहना चाहिये, एक सामान्य उद्देशक कृष्णलेश्याश्रय
द्वितीय उद्देशक २ नीललेश्याश्रय तृतीय उद्देशक ३ और कापोतलेश्या
श्रय चतुर्थ उद्देशक ४ ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त आप
देवानुप्रिय के द्वारा कहा गया यह सब कथन सर्वथा सत्य ही है २ इस
प्रकार कह कर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार
किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को
भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

॥ शतक ३१ उद्देशक १७ से २० तक समाप्त ॥ ३१-१७-२० ॥

सत्तरमा उद्देशाथी वीसमा सुधीना उद्देशाभ्यो नो प्रारंभ—

‘मिच्छादिद्विहिं वि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा जहा भवसिद्धियाणं’ इत्यदि
टीकार्थ—लेश्यावाणा मिथ्यादृष्टिवाणा नारकोमां षण् भवसिद्धिक नारकोना
कथन प्रमाणे आरे उद्देशाभ्यो कडेवा लेश्याभ्ये एक सामान्य उद्देशक १ कृष्ण
लेश्यावाणा संभंधी भिन्ने उद्देशो २ नीललेश्या संभंधी त्रीन्ने उद्देशो ३ अने
कापोतलेश्या संभंधी चोथो उद्देशो. ४ आ आर उद्देशाभ्यो समञ्च लेवा.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे लगवन् आपदेवानुप्रिये ने कडेल आ
तमाभ आ कथन सर्वथा सत्य न्छे. हे लगवन् आपदेवानुप्रिये कडेल आ
विषयनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न्छे आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये
प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेभ्यो सयम
अने तपथी चोताना आत्माने भावित करता थका चोताना स्थान पर
भिराजमान थया, ॥सू०१॥

सत्तरमा उद्देशाथी वीसमा उद्देशा सुधीना आर उद्देशाभ्यो समाप्त ॥३१-१७-२०॥

अथ एकोनविंशतिदारभ्य चउविंशतित्युद्देशकाः प्रारभ्यन्ते ॥

‘एवं कण्ठपक्वित्पहि वि लेस्मासंजुत्तेहि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा’ एवं भवसिद्धिकादिवदेव कृष्णपाक्षिकनारकैरपि लेख्यायुक्तः कृष्ण-नील-कापोतयुक्तश्चत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्याः परिपठनीयाः, सामान्योद्देशकः प्रथमः कृष्णलेख्याश्रितो द्वितीयः नीललेख्याश्रयश्चतुर्थ, एते चत्वार उद्देशकाः पठनीयाः ? इत्याह-‘जदेव भवसिद्धिर्हि यथैव भवसिद्धिकं भवद्विकनारकाश्रितलेख्याश्रिताश्चत्वार उद्देशकाः इहापि-तथैव चत्वारो ज्ञातव्या इति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥२१-२२-२३-२४ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

एकवीसवे उद्देशक से चौबीसवे पर्यन्त के उद्देशक का कथन

‘एवं कण्ठपक्वित्पहि वि लेस्मासंजुत्तेहि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा’ टीकार्थ-भवसिद्धिक आदि नारकों के जैसे कृष्ण, नील, कापोत लेख्यायुक्त कृष्णपाक्षिक नारकों के भी चार उद्देशक कहना चाहिये । इनमें एक पहला सामान्य उद्देशक है कृष्णलेख्याश्रित द्वितीय उद्देशक है । नीललेख्याश्रित तृतीय उद्देशक है । और कापोतलेख्याश्रित चतुर्थ उद्देशक है । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमस्वामी ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

॥ ज्ञानक ३१ उद्देशक २१ से २४ तक समाप्त ॥

ओकवीसभा उद्देशाथी चोवीसभा सुधीना चार उद्देशाने प्रारंभ-

‘एवं कण्ठपक्वित्पहि वि लेस्मा सजुत्तेहि चत्वारि उद्देशगा कायव्वा’ धियादि टीकार्थ-भवसिद्धिक विगेरे नारकेना कथन प्रमाणे कृष्ण, नील, कापोत, लेख्यावाणा कृष्णपाक्षिक नारकेना संबंधमां यथु चार उद्देशाओ समष्ट देवा. तेमां ओक सामान्य पडेलो उद्देशो १ कृष्णलेख्या संबंधी भीजे उद्देशो कही छे. नीललेख्या संबंधी योथो उद्देशो कही छे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रमाणेतुं कथन कथुं छे, ते सर्वथा सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियतुं कथन सर्वथा सत्य न छे आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कथा वंदना नमस्कार करीने तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराज मान थया. ॥सू०१॥

ओकवीसभा उद्देशाथी २४ चोवीसभा उद्देशा सुधीना चार उद्देशाओ समाप्त

॥३१-२१ थी २४॥

‘सुकपक्खिण्हिं एवं चैव चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा’ शुक्लपाक्षिकैः एव-
मेव चत्वार उद्देशका भणितव्याः, शुक्लपाक्षिकक्षुल्लककृतयुग्मनारकाः खलु
भदन्त ? कुत उत्पद्यन्ते, एवं क्रमेण-प्रथम उद्देशकः शुक्लपाक्षिककृष्णलेश्य
क्षुल्लककृतयुग्मादि नारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? इति द्वितीयोद्देशकः २
नीललेश्य शुक्लपाक्षिक क्षुल्लककृतयुग्मादिनारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते ? इति तृतीयोद्देशकः ३ कापोतलेश्य शुक्लपाक्षिकक्षुल्लककृतयुग्मादि
नारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? इति चतुर्थोद्देशकः ४ एवं क्रमेण चत्वार
उद्देशका संपद्यन्ते । कियत्पर्यन्तं वक्तव्या उद्देशकास्तत्राह-‘जाव’ इत्यादि ।

‘सुकपक्खिण्हिं एवं चैव चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा’ इसी प्रकार
से शुक्लपाक्षिक नारकों के भी चार उद्देशक कहना चाहिये,—जैसे—
क्षुल्लककृतयुग्मादि राशिप्रमित शुक्लपाक्षिक नारक हे भदन्त ! किस
स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? ऐसा यह
प्रथम उद्देशक है क्षुल्लक कृतयुग्मादि राशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले
शुक्लपाक्षिक नैरयिक हे भदन्त ! किस स्थान से आकर के नरकावास
में उत्पन्न होते हैं ? ऐसा यह द्वितीय उद्देशक है । क्षुल्लककृतयुग्मादि
राशि प्रमित नीललेश्यावाले शुक्लपाक्षिक नैरयिक हे भदन्त ! किस
स्थान विशेष से आकर के नरकावास में उत्पन्न होते हैं ? ऐसा यह
तृतीय उद्देशक है । क्षुल्लक कृतयुग्मादि राशिप्रमित कापोतलेश्यावाले
शुक्लपाक्षिक नैरयिक हे भदन्त ! किस स्थान विशेष से आकर के नरका-

पर्याप्तमाथी अठ्यावीस सुधीना उद्देशाञ्चोना प्रारल—

‘सुकपक्खिण्हिं एवं चैव चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा’ इत्यादि

टीकार्थ—अथ प्रमाणे शुक्लपाक्षिक नारकेना सभंधमां पथु चार
उद्देशाञ्चो कडेव. जे. उ. जे. म. के-क्षुल्लक कृतयुग्म आदि राशिप्रमित शुक्ल-
पाक्षिक नारक डे लगवन् कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न
थाय छे ? आ प्रमाणेनो आ पहिलो उद्देशो छे १

क्षुल्लक कृतयुग्म आदि राशिप्रमित कृष्णलेश्यावाणा शुक्ल पाक्षिक नैरयिको
डे लगवन् कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? अ
प्रमाणेनो आ नीले उद्देशो छे २

क्षुल्लककृतयुग्म आदिराशि प्रमित लेश्यावाणा शुक्लपाक्षिक डे लगवन्
कया स्थान विशेषथी आवीने नरकावासमां उत्पन्न थाय छे ? अ प्रमाणेनो
नीले उद्देशो कही छे ३

क्षुल्लक कृतयुग्म निगेरे राशिप्रमित कापोतलेश्यावाणा शुक्लपाक्षिक नैरयिको

‘જાવ વાલુયપ્પમા પુઢવિકાઉલેસ્સ સુક્કપક્કિલ્લયલ્લુહાગ કલ્લિઓગનેરહયાણં મંતે ! કઓ ઉવવજ્જંતિ’ યાવદ્ વાલુકાપ્રમા પૃથિવી કાપોતલેશ્ય શુક્લપાક્ષિક ક્ષુલ્લક કલ્લયોજનારકાઃ ક્ષુત ઉત્પદ્યન્તે યાવત્પદેન રત્નપ્રમા-શર્કરાપમાપૃથિવી સમ્બન્ધિકાપોતલેશ્યનારકાણાં તથા કાપોતલેશ્યાનાં કૃતયુગ્મ ંયોજ-દ્વાપરયુગ્મ-ઘટ્ટિતાનાં શુક્લપક્ષિયનારકાણાં ગ્રહણં ભવતિ । પૂર્વોદેશક કથિતોત્પાદપકારાઃ સંપ્રહીતવ્યાઃ યાવત્-નો પરપ્પઓગેણ ઉત્પદ્યન્તે એતત્પર્યન્તમ્, એતદાશયેનૈવ કથિતમ્ ।

‘તદેવ જાવ નો પરપ્પઓગેણ ઉવવજ્જંતિ’ તથૈવ યાવત્ નો પરપ્પઓગેણોત્પદ્યન્તે, પૂર્વોક્તં સર્વમિહાડનુસન્ધેયમ્ । સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ’ તદેવં મદન્ત । મદન્ત । ઇતિ યાવદ્દિહરતિ ॥

વાસ મેં ઉત્પન્ન હોતે હેં ૪ એસા યહ ચતુર્થ ઉદેશક હૈ । યે ચારોં ઉદેશક ‘જાવ વાલુયપ્પમા પુઢવી કાઉલેસ્સ સુક્કપક્કિલ્લયલ્લુહાગ કલ્લિઓગ નેરહયાણં મંતે ! કઓ ઉવવજ્જંતિ’ હસ સૂત્રપાઠ તક કહના ચાહિયે । હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં-હે મદન્ત ! યાવત્ વાલુકાપ્રમાગત ક્ષુલ્લક કલ્લયોજ રાશિપ્રમિત કાપોતલેશ્યાવાલે શુક્લપાક્ષિક નારક કહાં સે આકર કે નરકાવાસ મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈ ? યહાં યાવત્પદ સે રત્નપ્રમા એવં શર્કરા પ્રમાપૃથિવી સમ્બન્ધી કાપોતલેશ્યાવાલે નારકોં કા તથા કૃતયુગ્મ ંયોજ, એવં દ્વાપરયુગ્મ રાશિપ્રમિત કાપોતલેશ્યાવાલે શુક્લપાક્ષિક નારકોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુશ્રી કહતે હેં-હે ગૌતમ । ‘તદેવ જાવ નો પરપ્પઓગેણ ઉવવજ્જંતિ’ પૂર્વ કે જૈણા ઉત્તર જાનના ચાહિયે । યાવત્

હે ભગવન કયા સ્થાન વિશેષથી આવીને નરકવાસમાં ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રમાણેના આ ચોથા ઉદેશો કહ્યો છે. ૪

આ ચારે ઉદેશોએ ‘જાવ વાલુયપ્પમા પુઢવી કાઉલેસ્સ સુક્કપક્કિલ્લયલ્લુહાગ કલ્લિઓગ નેરહયાણં મંતે ! કઓ ઉવવજ્જંતિ’ આ સૂત્રપાઠ સુધી કહેવું જોઈએ.

આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે-હે ભગવન યાવત્ વાલુકાપ્રમા પર્યંતના ક્ષુલ્લક કલ્લયોજ રાશિપ્રમિત કાપોતલેશ્યાવાળા શુક્લપાક્ષિક નારકો કયાંથી આવીને નરકાવાસમાં ઉત્પન્ન થાય છે ? અહિયાં યાવત્પદથી રત્નપ્રમા અને અને શર્કરાપ્રમા પૃથ્વીના નારકો તથા કૃતયુગ્મ ંયોજ અને દ્વાપરયુગ્મ રાશિ પ્રમિત કૃષ્ણ નીલલેશ્યાવાળા શુક્લપાક્ષિક નારકો ગ્રહણ કરાયા છે.

આ ઉપર પૂછેલ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે હે ગૌતમ ! ‘તદેવ જાવ નો પરપ્પઓગેણ ઉવવજ્જંતિ’ પહેલાં કહ્યાં પ્રમાણે અહિયાં ઉત્તર અંતર્યામી યાવત્ તેઓ પરપ્રયોગથી ઉત્પન્ન થતા નથી.

‘सव्वे वि एए अट्टावीसं उद्देशगा’ सर्वेऽपि एते उपर्युक्ता अष्टाविंशति-
रुद्देशका भवन्तीति इत्येकत्रिंशत्तमे शतके-२८ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलित कलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजपदत्त-
‘जैनाचार्य’ पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
-पूज्यश्री घासिलालव्रतिविरचितायां श्री “भग-
वतीसूत्रस्य ” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् अष्टाविंशत्युद्देशात्मक-
मेकत्रिंशत्तममुपपातशतं समाप्तम् ॥

वे पर प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं । ‘सेव’ भंते । सेव’ भंते । त्ति’ हे
भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह सब कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस
प्रकार कहकर गौतम स्वामी ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार
किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को
भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । ‘सव्वे वि एए
अट्टावीसं उद्देशगा’ इस प्रकार से ये सब २८ उद्देशक समाप्त हो जाते हैं ।
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके अठाईस उद्देशक सहित
॥ ३१ वां शतक समाप्त ॥

‘सेव’ भंते । सेव’ भंते । त्ति’ हे लगवन आपदेवानुप्रिये ने कथन कथुं
छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे हे लगवन आपदेवानुप्रियनुं कथन सर्वथा
सत्य छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नम-
स्कार कर्या. वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथी पोताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. सू०१॥
‘सव्वे वि एए अट्टावीसं उद्देशगा’ आ रीते अथा भणीने अठ्यावीस
उद्देशाओ थाय छे.

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत ‘भगवतीसूत्रनी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना ओकत्रीसभा शतकना पन्थीसभा उद्देशाधी
अठ्यावीसभा उद्देशाओतुं कथन समाप्त ॥३१-२५ थी २८॥

॥ओकत्रीसभुं शतक समाप्त ॥३१॥

॥ अथ द्वात्रिंशत्तमं शतकम् ॥

(१ २८ उद्देशकाः)

एकत्रिंशत्तमे शतके नारकादि जीवानामुत्पादादिः कथितः, द्वात्रिंशत्तमे तु शतके नारकादि जीवानामेव उद्वृत्तना कथ्यते इत्येवं सम्बन्धेन आयातस्याऽऽष्टा-
विंशत्युद्देशकं प्रमाणस्येदमादिमं सूत्रम्—

‘खुड्ढागकडजुम्मनेरइयाणं भंते’ इत्यादि ।

मूलम्—खुड्ढागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! अणंतरं उव्वट्ठित्ता
कहिं गच्छंति, कहिं उव्वज्जंति किं नेरइएसु उव्वज्जंति तिरि-
क्खजोणिएसु उव्वज्जंति उव्वट्ठणा जहा वक्कंतीए ।

ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उव्वट्ठंति ? गोयमा !
षत्तारि वा, अट्ट वा, बारस वा, सोलस वा, संखेज्जा—असं-
खेज्जा वा उव्वट्ठंति । ते णं भंते ! जीवा कहां उव्वट्ठंति, गोयमा !
से जहानामए पवए एवं तहेव ।

एवं सो चैव गमओ जाव आयप्पयोगेणं उव्वट्ठंति नो
परप्पयोगेणं उव्वट्ठंति । रयणप्पभापुढवि खुड्ढागकडजुम्म०
एवं-रयणप्पभाए वि एवं जाव अहे सत्तमाए । एवं खुड्ढाग-
तेओग खुड्ढागदावरजुम्म खुड्ढागकलिओगा ।

नवरं परिमाणं जाणियव्वं सेसं तं चैव । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति ॥

कण्हलेस्स कडजुम्म नेरइया एवं एएणं कमेणं जहेव
उव्ववाथसए अट्टावीसं उद्देसगा भणिया तहेव उव्वट्ठणा सए
वि अट्टावीसं उद्देसगा भाणियव्वा निरव्वसेसा ।

नवरं उव्वट्ठंति त्ति अभिलावो भाणियव्वो सेसं तं चैव ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥३—१—२८॥

वत्तीसइमं उव्वट्ठणा सयं समत्तं ॥३२॥

छाया-क्षुल्लककृतयुग्नैरयिकाः खलु भदन्त ! अनन्तरम् उद्धर्त्य कुत्र गच्छन्ति कुत्रोत्पद्यन्ते, किं नैरयिकेषु उत्पद्यन्ते तिर्यग्योनिकेषु, उत्पद्यन्ते, उद्धर्तना यथा व्युत्क्रान्तौ। ते खलु भदन्त ! जीवा एक समयेन कियन्त उद्धर्तन्ते ? गौतम ! चत्वारो वा, अष्टौ वा, द्वादश वा, षोडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, उद्धर्तन्ते। ते खलु भदन्त ! जीवाः कथमुद्धर्तन्ते, गौतम ! स यथानामकः प्लवकः, एवं तथैव, एवं स एव गमको यावद्-आत्मप्रयोगेण-उद्धर्तन्ते, नो परप्रयोगेण उद्धर्तन्ते। एवं रत्नप्रभापृथिवीक्षुल्लककृतयुग्न, एवं रत्नप्रभायामपि एवं यावदधः सप्तम्याम्। एवं क्षुल्लक-त्रयोज-क्षुल्लकद्रापरयुग्न-क्षुल्लककलयोजः। नवरं परिमाणं ज्ञातव्यम्, शेषं तदेव। तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

द्वात्रिंशत्तमशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३२॥

कृष्णलेश्य-कृतयुग्न-नैरयिकाः, एवमेतेन क्रमेण यथैव उपपातशतेऽष्टाविंशतिरुद्देशका भणिता स्तथैव-उद्धर्तनाशतेऽपि अष्टाविंशति रुद्देशका भणितव्या निरवशेषाः। नवरम् उद्धर्तन्ते इत्यभिलाषो भणितव्यः, शेषं तदेव। तदेवं भदन्त। तदेवं भदन्त। इति यावद्विहरति ॥ 'द्वात्रिंशत्तममुद्धर्तनाशतं समाप्तम् ॥३२॥

टीका-‘खुड्डागकडजुम्म नैरइयाणं भंते ! क्षुल्लककृतयुग्न राशिरूपनैरयिकाः खलु भदन्त। ‘अणंतरं उव्वट्ठित्ता कर्हि गच्छन्ति’ अनन्तरम्-नारकभवसमाप्ती

--शतक ३२ उद्देशक १-२८-

३१ वें शतक में नारक जीवों का उखाह आदि कहा अब इस ३२ वें शतक में उन्ही कृतयुगमादि राशिप्रमित नैरयिकों की उद्धर्तना कहनी है, सो इसी सम्बन्ध को लेकर इस शतक का प्रारम्भ हुआ है। इसमें २८ उद्देशक हैं। ‘खुड्डाग कडजुम्म नैरइयाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ-‘खुड्डागकडजुम्म नैरइयाणं भंते !’ हे भदन्त ! क्षुल्लककृतयुग्नराशिप्रमित नैरयिक नारक अबकी समाप्ति होते ही नरकभव में से

अत्रिसमा शतकनो प्ररंल-उद्देशो पडेवो-

अत्रिसमा शतकमां नारक विगेरे लवोना उत्पाद विगेरेनुं कथन कश्वामां आ०युं छे. डवे आ अत्रिसमा शतकमां अेन कृतयुग्न विगेरे राशि वाणा नैरयिकोनी उद्धर्तना उडेवामां आवशे. अे सं०धने लधने आ शतक नो प्रारंल कश्वामां आ०ये छे. आ शतकमां अठ्यावीस उद्देशाअे छे.

‘खुड्डाग कडजुम्म नैरइयाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ-‘खुड्डाग कडजुम्मनैरइयाणं भंते !’ हे भगवन क्षुल्लक कृत युग्न राशिप्रमित नैरयिक, नारक लवनी समाप्ती यतां न नारक लवधी

सत्याम् अन्तररहितम् उद्वर्त्य-निःमृत्य 'कहिं गच्छन्ति' कुत्र गच्छन्ति 'कहिं उव्वज्जन्ति' कुत्रोत्पद्यन्ते ? हे भदन्त ! इमे नारकभवसमाप्तौ अनन्तरम्-अन्तररहितं कस्मिन् भवे गच्छन्ति, कुत्र चोत्पद्यन्ते-किं नेरइएसु उव्वज्जन्ति तिरिक्खजोणिएसु उव्वज्जन्ति' किं नैरयिकेषु उत्पद्यन्ते ? अथवा-तिर्यग्गोनिकेषुत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह-'उव्वट्टणा' इत्यादि' 'उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए' उद्वर्तना यथा व्युत्क्रान्तौ, प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे यथा-उद्वर्तना कथिता, तथैव इहापि नारकाणामुद्वर्तना ज्ञातव्या । अर्थतः सा चैवम्—

नरगाओ उव्वट्टा, गव्भे पज्जत्तऽसंखजीवीसु' इति ।

नरकात् उद्वृत्ता गर्भे पर्याप्ता संख्याजीविषु, इतिच्छाया ।

अयं भावः-ते नारका नरकान्निर्गत्य पर्याप्तसंख्यातवर्षायुष्क मनुष्येषु त्पद्यन्ते, तथा-तिर्यग्गोनिकेषुत्पद्यन्ते इति । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं

निकल करके कहां पर जाते हैं ? कहां उत्पन्न होते हैं ? तात्पर्य यह है कि नारक नरक पर्याय से निकलते ही उसी समय किस भव में जाते हैं और कहां उत्पन्न होते हैं ? 'किं नेरइएसु उव्वज्जन्ति' क्या नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं ? या 'तिरिक्खजोणिएसु उव्वज्जन्ति' तिर्यग्गोनिकों में उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-'उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए' हे गौतम ! प्रज्ञापना के षष्ठे पद में जिस प्रकार से उद्वर्तना कही गई है, उसी प्रकार से यहां पर भी नारकों की उद्वर्तना कहनी चाहिये, वह इस प्रकार से है--

'नरगाओ उव्वट्टा गव्भे पज्जत्तऽसंखजीवीसु' तात्पर्य ऐसा है-वे नारक नरक से निकल करके पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले मनुष्यों में और तिर्यग्गोनिकों में उत्पन्न होते हैं । 'ते णं भंते ! जीवा एग-

नीकणीने कयां नय छे ? अर्थात् कयां उत्पन्न थाय छे ? आ कथननु' तात्पर्य अये छे के-नारक, नारक पर्यायथी नीकणीने अये वणते कया लवमां नय छे ? अने कयां उत्पन्न थाय छे ? 'किं नेरइएसु उव्वज्जन्ति' शु' तेअो नैरयिकेमां उत्पन्न थाय छे ? अथवा 'तिरिक्खजोणिएसु उव्वज्जन्ति' तिर्यग्गोनिकेमां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमीने कडे छे के-'उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए' हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्रना छठ व्युत्क्रान्ति पदमां अे प्रभाण्णे उद्वर्तना संबन्धी कथन कडेवामां आवेल छे, अेअ प्रभाण्णे अहियां नारकेनी पणु उद्वर्तना कडेवी जेअेअे. ते कथन आ प्रभाण्णे छे -

'नरगाओ उव्वट्टा गव्भे पज्जत्तऽसंखजीवीसु' आ कथननु तात्पर्य अये छे के-ते नारको नरकथी नीकणीने पर्याप्त संख्यात वर्षानी आयुधवाणा मनुष्येमां अने तिर्यग्गोनिकेमां उत्पन्न थाय छे. 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं

केवइया उव्वट्टंति' ते खलु नारका भदन्त । एकसमयेन एकस्मिन् समये इत्यर्था कियत्संख्यका उद्धर्तन्ते इति प्रश्नः । भगवानाह 'गोयमा, इत्यादि । गोयमा' हे गौतम ! 'चत्तारि वा, अट्ट वा, बारस वा, सोलस वा, संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, उव्वट्टंति' क्षुल्लक-कृतयुग्म-नारका अथवारो वा, अष्टौ वा, द्वादश वा, षोडश वा, संख्याता वा असंख्याता वा, एकसमये उद्धर्तन्ते इति । 'ते ण भंते ! जीवा कहं उव्वट्टंति' ते खलु भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुग्म-नारका जीवाः कथं केन प्रकारेण उद्धर्तन्ते इति प्रश्नः । भगवानाह- 'गोयमा' हे गौतम ! 'से जहानामए पवए एवं तहेव' स यथानामकः प्लवङ्गः, एवं तथैव-पूर्वोक्तवदेव 'एवं सो चैव गमओ जाव-आयप्पओगेण उव्वट्टंति' एवं स एव गमको यावद् आत्मप्रयोगेण उद्धर्तन्ते नो परप्रयोगेणोत्पद्यन्ते । अयं भावः क्षुल्लक-कृतयुग्म-नारकाः कथमुद्धर्तन्ते इति

समएणं केवइया उव्वज्जंति' हे भदन्त । वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं अर्थात् वे जीव नरक से एक समय में कितने निकलते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'गोयमा ! चत्तारि वा अट्ट वा, बारस वा, सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उव्वट्टंति' हे गौतम ! चार अथवा आठ अथवा बारह अथवा सोलह अथवा संख्यात या असंख्यात नारक जीव एक समय में वहां से निकलते हैं ।

'तेणं भंते ! जीवा कहं उव्वट्टंति' हे भदन्त ! क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमित नारक जीव किस प्रकार से उद्धर्तना करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'गोयमा ! से जहानामए पवए एवं तहेव' हे गौतम ! जैसे कोई कूदनेवाला मनुष्य जैसा कि पञ्चीस वें शतक के आठवें उद्देशक में कहा गया है उसी के अनुसार यहां गमक कहना चाहिये, अर्थात् क्षुल्लक कृतयुग्म नारक किस प्रकार से उद्धर्तना करते हैं ? तो

केवइया उव्वज्जंति' हे भगवन् ते एवो ओक समयमां डेट्वा उत्पन्न थाय छे ? अर्थात् ओक समयमां नरकवासमांथी डेट्वा नीकणे छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे डे- 'गोयमा ! चत्तारि वा, अट्ट वा, बारस वा, सोलस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उव्वट्टंति' हे गौतम ! चार अथवा आठ अथवा बार अथवा सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात नारक एव ओक समयमां त्यांथी नीकणे छे ।

'तेणं भंते जीवा कहं उव्वट्टंति' हे भगवन् ते क्षुल्लक कृतयुग्म राशि प्रमित नारक एवो कथं रीते उद्धर्तना करे छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे डे- 'गोयमा ! से जहा नामए पवए एवं तहेव' हे गौतम ! जेम केधं कूदवावाणे। पुइध जेम डे पञ्चीसमा शतकना आठमा उद्देशमां कहेवामां आवेल छे- ओज प्रभाणेना गमके अडियां कहेवा जेम ओ अर्थात् क्षुल्लक कृतयुग्म

प्रश्नस्य प्रतिबचनावसरे पञ्चविंशतिशतकस्याऽऽष्टमोद्देशकस्य भाव इहानुकरणीयः
अर्थद्वारेण स एव उद्देशक इह पठनीयः । 'रयणप्पभापुढवि खुड्डागकड०' रत्नप्रभा
पृथिवी क्षुल्लक-कृतयुग्म प्रमाणका नारकास्तत उद्वर्ष्य कुत्र गच्छन्ति कुत्रोत्पद्यन्ते
किं नैरयिकेषु उत्पद्यन्ते तिर्यग्योनिकेषु चोत्पद्यन्ते इत्यादि क्रमेण प्रश्नः ।

उत्तरमाह—'एवं' इत्यादि । 'एवं रयणप्पभाएवि' एवं सामान्यतः क्षुल्लक-
कृतयुग्मनारकाणाम् यथोद्धर्तना कथिता, तथैव—रत्नप्रभा पृथिवी नारकजीवाना-
मपि उद्धर्तना वक्तव्या । 'एवं जाव अहे सत्तमाए' एवं यावदधः सप्तम्याम्,
यथा—रत्नप्रभा प्रथमनारकपृथिवी सम्बन्धिनारकाणामुद्धर्तना कथिता

इस प्रश्न के उत्तर में पच्चीस वें शतक के आठवें उद्देशकका भाव
यहां व्यक्तव्य है वही उद्देशक यहां पठनीय है । 'रयणप्पभा पुढवी
खुड्डाग कड०' हे अदन्त ! रत्नप्रभा पृथिवी के क्षुल्लक कृतयुग्म प्रमा-
णक नारक वहां से उद्धर्तना करके कहाँ जाते हैं और कहाँ उत्पन्न
होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं या तिर्यग्यो-
निकों में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम !
'एवं रयणप्पभाए वि' जिस प्रकार की उद्धर्तना सामान्य क्षुल्लक कृत
युग्म नारकों की कही गई है उसी प्रकार की उद्धर्तना रत्नप्रभा पृथिवी
के नारक जीवों की भी कहनी चाहिये । 'एवं जाव अहे सत्तमाए'
जैसी उद्धर्तना रत्नप्रभा नामकी प्रथम पृथिवी के नारकों की कही गई
है वैसी ही उद्धर्तना शर्कराप्रभा नाम की द्वितीय पृथिवी क्षुल्लक कृत
युग्म राशिप्रमाणक नारकों से लेकर अधःसप्तमी पृथिवी के क्षुल्लक

नारक कौ सीते उद्धर्तना करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां पच्चीसमां शतकना
आठमा उद्देशानुं कथन अहियां कडेपुं जेधजे. तेम समञ्जुं

'रयणप्पभा पुढवी खुड्डाग कड०' छे लगवन् रत्नप्रभा पृथ्वीना क्षुल्लक
कृतयुग्म प्रमाणवाणा नारके त्यांथी उद्धर्तना करीने क्यां जय छे ?
अने क्यां उत्पन्न थाय छे ? शुं ? तेज्जे नैरयिकेमांथी नीकणीने
नैरयिकेमां उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्य योनिकेमां उत्पन्न थाय छे ?
आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—हे गौतम ! 'एवं रयणप्पभाए वि' जे
प्रमाणेनी उद्धर्तना सामान्य क्षुल्लक कृतयुग्म नारके विषे कडेवामां आवेल
छे, जेज्ज प्रमाणेनी उद्धर्तना रत्नप्रभा पृथ्वीना नारक जेवानी पण कडेवी
जेधजे एवं जाव अहे सत्तमाए' रत्नप्रभा पृथ्वीना नारकेनी उद्धर्तना जे
प्रमाणे कडी छे, जेज्ज प्रमाणेनी उद्धर्तना शर्करा प्रभा नामनी थील पृथ्वीना
क्षुल्लक कृतयुग्म राशि प्रमाण नारक जेवानी लज्जे अधःसप्तमी पृथ्वीना

तेनैव रूपेण शंकराप्रभा द्वितीय नारकपृथिवी सम्बन्धि क्षुल्लक-कृतयुग्म-राशि-
प्रमाणनारकादारभ्याधःसप्तमी नारक पृथिवी सम्बन्धि क्षुल्लक-कृतयुग्म-
राशिप्रमाणक नारकजीवपर्यन्तजीवानामपि-उद्धर्तना वक्तव्या प्रकारश्च पूर्वप्रद-
शित एव ग्राह्यः । 'एवं खुड्डागतेओग खुड्डागदावरजुम्म खुड्डाग कलिओगा'
एवं क्षुल्लकत्र्योज क्षुल्लक द्वापरयुग्म, क्षुल्लक कल्योजराशि प्रमाणा अपि जीवा
ज्ञातव्याः । 'नवरं परिमाणं जाणियव्वं' नवरं केवलं परिमाणं भिन्न भिन्न रूपेण
क्षुल्लक कृतयुग्मादिनारकाणां ज्ञातव्यम् ।

तथाहि-क्षुल्लक-कृतयुग्मनारकाणां परिमाणम्-चत्वारो वा, अष्टौ वा, द्वा-
दशवा-षोडश वा, संख्याता वा, असंख्याता वेति कथितम्, तथा क्षुल्लक-
त्र्योजनारकाणां त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, एत्रदश वा, संख्याता वा,
असंख्याता वा, इत्येवं क्रमेण वक्तव्यम् । एवं-क्षुल्लक-द्वापरयुग्मनारकाणाम्,

कृतयुग्म राशिप्रमाण नारक जीवों तक की भी कहनी चाहिये । इस
सम्बन्ध में प्रकार पूर्व पद में दिखा ही दिया गया है । 'एवं खुड्डाग
तेओग खुड्डाग दावरजुम्म खुड्डाग कलिओगा' इसी प्रकार से
क्षुल्लक त्र्योज, क्षुल्लक द्वापरयुग्म और क्षुल्लक कृतयुग्म राशिप्रमित
जीवों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये, 'नवरं परिमाणं जाणियव्वं'
परन्तु क्षुल्लक कृतयुग्मादि नारकों का परिमाण भिन्न-२ रूप से जानना
चाहिये । जैसे-क्षुल्लक कृतयुग्म नारकों का परिमाण चार, आठ, बारह
सोलह, संख्यात या असंख्यात कहा गया है । क्षुल्लक त्र्योज नारकों
का परिमाण तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह संख्यात या असंख्यात कहा
गया है । क्षुल्लक द्वापरयुग्म नारकों का परिमाण दो, छह, दश, चौदह,

क्षुल्लक कृतयुग्म राशि प्रमाण नारक एवे सुधीनी कडेवी जेधये आ संभं-
धमां पडेला अतावेला प्रकार प्रमाणेना प्रकार समजवे।

'एवं खुड्डाग तेओग खुड्डागदावरजुम्मखुड्डाग कलिओगा' आण
प्रमाणे क्षुल्लक त्र्योज, क्षुल्लकद्वापरयुग्म अने क्षुल्लक कल्योजराशिप्रमित
एवेना संभंधमां यणु समजवु. 'नवरं परिमाण जाणियव्वं' परंतु क्षुल्लक
कृतयुग्म विगेदे नारकेतु परिणाम जूदा जुदा प्रकारतु समजवु जेम् के-
क्षुल्लक कृतयुग्म नारकेतु' परिमाणे चार, आठ, बार, सोल, संख्यात
अथवा असंख्यात कडेल छे. क्षुल्लक त्र्योज नारकेतुं परिमाणे त्रणु, साते,
अगियार पंदर, संख्यात अथवा असंख्यात कडेल छे. क्षुल्लकद्वापरयुग्म

द्वौ वा, षड् वा, दश वा, चतुर्दश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, क्षुल्लक-
कल्योजनारकाणाम् एको वा, पञ्च वा नव वा, त्रयोदश वा, संख्याता वा, असं-
ख्याता वा, इत्येवं क्रमेण वक्तव्यम् । 'नवरं परिमाणं जाणियच्चं' इत्यस्यायमेवं
भावो मूलसूत्रे इति । 'सेसं तं चेव' शेषं परिमाणातिरिक्तं सर्वं कृतयुग्मनारक
वदेव ज्ञातव्यम् ।

रत्नप्रभा पृथिवी सम्बन्धि त्र्योज-द्वापरयुग्म कल्योज नारकवदेव शर्करा-
प्रभात आरभ्याऽधः सप्तमी पृथिवी सम्बन्धि त्र्योज-द्वापरयुग्म-कल्योजनार-
काणा मपि एवमेव परिमाणे वैलक्षण्यम्, तदन्यत्सर्वं रत्नप्रभा प्रथमनारक पृथिवी

संख्यात अथवा असंख्यात कहा गया है । क्षुल्लक कल्योज नारकों का
परिमाण एक, पांच, नौ, तेरह संख्यात अथवा असंख्यात कहा गया
है । सो इस क्रम से इनका परिणाम कहना चाहिए, इस प्रकार से
'नवरं परिमाणं जाणियच्चं' इस सूत्र का यही भाव मूलसूत्र में प्रद-
र्शित किया है । 'सेसं तं चेव' परिमाण से अतिरिक्त और सब कथन
कृतयुग्म नारक के जैसा ही जानना चाहिये । रत्नप्रभा पृथिवी सम्ब-
न्धी त्र्योज, द्वापर युग्म और कल्योज राशिप्रमित नारकों के जैसा ही
शर्कराप्रभा से लेकर अधःसप्तमी पृथिवी सम्बन्धी नारकों के भी
परिमाण में इसी प्रकार से वैलक्षण्य जानना चाहिये । इसके सिवाय
और सब कथन रत्नप्रभा प्रथम नारक पृथिवी के जैसा ही जानना
चाहिये, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भद्रन्त ! जैसा यह विषय

नारकोनुं परिमाणुं जे, छ, दस, चौदह संख्यात अथवा असंख्यात कहेल छे.
क्षुल्लक कल्योज नारकोनुं परिमाणुं जेक, पांच नव, तेर संख्यात अथवा
असंख्यात कहेल छे. तो आ कुमथी आभनुं. परिमाणुं कहेलुं जेधजे.
'नवरं परिमाणं जाणियच्चं' आ सूत्रने। आणलाव मूलसूत्रमां भतावेद छे.

'सेसं तं चेव' परिमाणुं शिवायनुं पीनुं सधणुं कथन कृतयुग्म नारकना
कथन प्रमाणे ज समणुं. रत्नप्रभा पृथिवी संभंधी त्र्योज, द्वारपयुग्म, अने
कल्योज राशिप्रमित नारकना परिमाणुंमां पणुं आण प्रमाणुंनुं वैलक्षण्य
समणुं. आ शिवाय भाकीनुं सधणुं कथन रत्नप्रभा पृथ्वीनी पडेली नारक
पृथ्वी संभंधी त्र्योज विगेरेना कथन प्रमाणे कहेल छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् आ विषयना संभंधमां आप
देवानुप्रिये जे प्रमाणे कहुं छे, ते सधणुं कथन जेण प्रमाणे छे, छे लगवन्

वदेव सर्वभगन्तव्यमिति । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! तदेव' भदन्त ! तदेव' भदन्त ! इति पूर्ववत् ॥ सू० १ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री
"भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् द्वात्रिंशत्तमशतकस्य
प्रथमोद्देशक समाप्ताः ॥ ३२-१ ॥

भाप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है ऐसा कहकर
गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नम-
स्कार कर के फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते
हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
: "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके बतीसवें शतक का
प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ ३२-१ ॥

आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न्छे. आ प्रभाषे कहीने गौतस्वामान्छे
प्रभुश्रीने वंदना करी तेन्नेने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
तेन्ने संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
विराजमान थया. ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' की
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अत्रिसभा शतकने पडेले। उद्देशी समाप्त ॥ ३२-१ ॥



અથ દ્વિતીયોદ્દેશકઃ પ્રારભ્યતે

‘કળહલેસ્સ કલ્કુમ્મ નેરહયા’ કૃષ્ણલેષ્ય કૃતયુગ્મનૈરયિકાઃ સ્વલ્લ મદન્ત ! અનન્તરેશુદ્વર્ત્ય કુત્ર ગચ્છન્તિ, કુત્રોત્પચન્તે, કિં નૈરયિકેપૂસ્પચન્તે તિર્યગ્યોનિકેષુ વોત્પચન્તે ? ઇત્યાદિ રૂપેણ પ્રશ્નઃ ? ઉત્તરમાહ—‘એવં’ ઇત્યાદિના, ‘એવં એણં કમેણં જહેવ ઉવવાયસણ અટ્ટાવીસં ઉદ્દેસગા મણિયા, તદ્દેવ—ઉવ્વટ્ટણાસણ વિ અટ્ટાવીસં ઉદ્દેસગા માણિયવ્વા નિરસસેસા’ એવમેતેન ક્રમેણ યથૈવ ઉપપાતશતકે અટ્ટાવિંશતિરુદ્દેશકા મણિતા સ્તથૈવોદ્દર્તના શતકેડપિ-અટ્ટાવિંશતિરુદ્દેશકા મણિતવ્વા નિરવશેપાઃ ।

તત્ર કૃતયુગ્મનારકસ્ય પ્રથમઉદ્દર્તનોદ્દેશકઃ ૧, કૃષ્ણલેષ્યકૃતયુગ્મસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશકઃ ૨, નીલલેષ્યકૃતયુગ્મસ્ય તૃતીયોદ્દેશકઃ ૩, કાપોતલેષ્યકૃતયુગ્મસ્ય

શતક ૩૨ ઉદ્દેશક ૨-૨૮

ટીકાર્થ—‘કળહલેસ્સ કલ્કુમ્મ નેરહયા’ હે મદન્ત ! કૃષ્ણલેષ્યાવાલે કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમિત નૈરયિક નારક ભવ કી સમાપ્તિ હોતે હી નરક ભવ સે નિકલ કર કહાં જાતે હૈં ? ઓર કહાં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? કયા નૈરયિકોં મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? યા તિર્યગ્યોનિકોં મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઇત્યાદિ ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈ—‘એવં એણં કમેણં જહેવ ઉવવાયસણ અટ્ટાવીસં ઉદ્દેસગા મણિયા તદ્દેવ ઉવ્વટ્ટણાસણ વિ અટ્ટાવીસં ઉદ્દેસગા માણિયવ્વા નિરસસેસા’ હસ પ્રકાર હસ ક્રમ સે જૈસે ઉપપાત શતક મેં ૨૮ ઉદ્દેશક કહે ગયે હૈં ડહી પ્રકાર સે ઉદ્દર્તના શતક મેં મી ૨૮ ઉદ્દેશક કહના ચ્હિયે, હનમેં—કૃતયુગ્માદિ નારક કા પ્રથમ ઉદ્દર્તનોદ્દેશક હૈ ? કૃષ્ણલેષ્યાવાલે કૃતયુગ્માદિ નારક કા દ્વિતીયોદ્દેશક હૈ, નીલ

ખીલ્લ ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ—

‘કળહલેસ્સકલ્કુમ્મ નેરહયા’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—હે ભગવન્ કૃષ્ણલેષ્યાવાળા કૃતયુગ્મરાશિ પ્રમિત નૈરયિક, નારક ભવની સમાપ્તિ થતા નરકભવથી નીકળીને કયાં જાય છે ? અને કયાં ઉત્પન્ન થાય છે ? શુ’ નૈરયિકોમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા તિર્યગ્યોનિકોમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—‘એવં એણ જહેવ ઉવવાયસણ અટ્ટાવીસ ઉદ્દેસગા મણિયા તદ્દેવ ઉવ્વટ્ટણાસણ વિ અટ્ટાવીસં ઉદ્દેસગા માણિયવ્વા નિરસસેસા’ આ રીતે આ ક્રમથી ઉપપાત શતકમાં જે પ્રમાણે અઠ્યાવીસ ઉદ્દેશાઓ કહેવામાં આંચા છે એજ પ્રમાણે આ ઉદ્દર્તના શતકમાં પણ અઠ્યાવીસ ઉદ્દેશાઓ કહેવા જોઈએ. આમાં કૃતયુગ્મ નારકનો પહેલો ઉદ્દર્તના ઉદ્દેશો કહ્યો છે. કૃષ્ણલેષ્યાવાળા કૃતયુગ્મ નારક સંબંધી ખીલ્લ ઉદ્દેશો કહ્યો છે, નીલલેષ્યાવાળા કૃતયુગ્મ નારક સંબંધી ત્રીજો

चतुर्थोद्देशकः ४, तदेवं लेश्याश्रिताश्चत्वार उद्देशकाः ४, एवं भवसिद्धिकनारकस्य चत्वार उद्देशकाः निर्विशेषणस्य लेश्यात्रयविशेषणमहितस्य च ८, एवमेव-चत्वार उद्देशका अभवसिद्धिकस्य १२, सम्यग्दृष्टेलेश्यासंयुक्तस्य चत्वार उद्देशकाः १६, एवमेव-मिथ्यादृष्टेलेश्यायुतस्य चत्वार उद्देशकाः २४, एवं शुक्लपाक्षिकस्यापि चत्वार उद्देशका भवन्ति २८, तदेवं सर्वसङ्कलनया-एकत्रिंशत्तमोपपातशतकवत् द्वात्रिंशत्तमोद्धर्तनाशतकेऽपि अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्तीति, 'नवरं उच्छ्रुति अमिलावो भाणियन्त्रो' नवरं-केवलं विशेष एतावानेव, यत् उपपातकशतके

लेश्यावाले कृतयुग्मादि नारकका तृतीय उद्देशक है। कापोतलेश्यावाले कृतयुग्मादि नारक का चतुर्थोद्देशक है। इस प्रकार से ये लेश्याश्रित चार उद्देशक हैं। इसी प्रकार से भवसिद्धिक नारक के चार उद्देशक हैं इनमें पहिला उद्देशक सामान्य भवसिद्धिक नारक का है और तीन उद्देशक कृष्णनील, कापोतलेश्यात्रय विशेषण विशिष्ट भवसिद्धिक नारक के हैं। इसी प्रकार से चार उद्देशक अभवसिद्धिक नारक के हैं १२ लेश्या संयुक्त सम्यग्दृष्टि नारक के चार उद्देशक हैं। १६ लेश्यावाले मिथ्यादृष्टि नारक के चार उद्देशक हैं कृष्णपाक्षिक नारक के चार उद्देशक हैं और शुक्लपाक्षिक नारक के भी चार उद्देशक हैं सब मिलकर इस प्रकार से ये २८ उद्देशक हैं। जिस प्रकार से ३१ वें उपपात शतक में २८ उद्देशक हैं उसी प्रकार से इस ३२ वें उद्धर्तना शतक में भी २८ उद्देशक हैं। अन्तर केवल दोनों में इतना साही है कि उपपात शतक में जैसे उपपात पद जोड़कर अभिलाष कहा जाता है उसी प्रकार यहाँ उप-

उद्देशो कथ्यो छे. कापोतलेश्यवाणा कृतयुग्मनारक सभंधी यथो उद्देशो कथ्येत् आ रीते लेश्यासंभंधी चार उद्देशो कथ्यो छे. येन प्रमाणे भवसिद्धिक नारक संभंधी चार उद्देशो कथ्यो छे. तेमां पछेत्ते उद्देशो सामान्य भवसिद्धिक नारक संभंधी छे. अने त्रय उद्देशो कृष्ण, नील, कापोत, ये त्रय लेश्यावाणा भवसिद्धिक नारकेना छे. येन प्रमाणे चार उद्देशो अभवसिद्धिक नारक संभंधी कथ्यो छे. १२ तथा लेश्या युक्त सम्यग् दृष्टिवाणा नारक संभंधी चार उद्देशो कथ्यो छे. १६ लेश्यावाणा मिथ्या दृष्टिवाणा नारक संभंधी चार उद्देशो कथ्यो छे. कृष्णपाक्षिक नारक संभंधी चार उद्देशो कथ्यो छे, अने शुक्लपाक्षिक संभंधी पण्यु चार उद्देशो कथ्यो छे. ये प्रमाणे ३१ ऐकत्रीसमा उपपात शतकमा अड्यावीस उद्देशो छे, येन प्रमाणे अ, भत्रीसमा उद्धर्तना शतकमा पण्यु अड्यावीस उद्देशो छे आ अनेमां अ १२केवज ऐग्लुं न छे के-उपपात शतकमा नेम उपपात पद लेडीने अलिनापो कथ्येमां आवे छे, येन प्रमाणे अडियां

उत्पद्यन्ते इति यत्र कथ्यते, तत्र-तत्र सर्वत्रैव उद्धर्तन्ते इत्येवमभिलापः करणीयः एतावदेव द्वयोः शतकयो वैलक्षण्यम्, 'सेसं तं चैव' शेषम्-उद्धर्तन्ते इति विशेषणादतिरिक्तं सर्वं तदेव उपपातशतकवदेव ज्ञातव्यम् ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव-विहरइ' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति इति पूर्ववत् ॥२८॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुभादिपद्भूषितवाल्मह्यचारि - 'जैनाचार्य' पूज्यश्री-घासीलालत्रिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वात्रिंशत्तमे-उद्धर्तनाशतके द्वितीयोद्देशकादारभ्याऽष्टाविंशति पर्यन्ता उद्देशकाः समाप्ताः ॥२-२८॥

द्वात्रिंशत्तममुद्धर्तना शतकं समाप्तम् ॥३२॥

पात के स्थान में उद्धर्तना शब्द जोड़कर अभिलाप कहना चाहिये, 'सेसं तं चैव' बाकी और सब कथन उपपात शतक के जैसा ही हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भदन्त ! जैसा आप देवानु प्रिय ने यह विषय कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संघस्य और तप सै आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ २ से लेकर २८ उद्देशक समाप्त ॥

॥ ३२ वां शतक समाप्त ॥

उपपातना स्थाने उद्धर्तना पद भूषिने अभिलापो कडेवा नैर्धये. 'सेसं तं चैव' बाकीतुं भीतुं तन्नाम कथन उपपात शतकमां कडया प्रमाणेतुं न छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे लगवन् आपदेवानुप्रिये आ विषयमां नै प्रमाणे कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आपदेवानुप्रियनु कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वदना करी तेओने नमस्कार कर्था. वदना नमस्कार करीने ते यणी तेओ सयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अत्रीसमा शतकना भील उद्देशार्थी अडयावीसमा

उद्देशा सुधीना उद्देशाओ समाप्त ॥३२-२थी २८॥

॥अत्रीसमु' शतक समाप्त॥

अथ त्रयस्त्रिंशत्तमं शतकमारभते-

द्वात्रिंशत्तमे-उद्धर्तनाशतके नारकाणामुद्धर्तना कथिता, उद्धृत्ताश्च नारकाः एकेन्द्रियादिषु नोत्पद्यन्ते, केच ते, एकेन्द्रिया यत्र नारका नोत्पद्यन्ते ? इत्यस्यां श्रुत्यामेकेन्द्रियाः प्ररूपयितव्याः भवन्ति, तेषु च तावद् एकेन्द्रियाः प्रथमतः प्ररूपणीयाः, इत्येकेन्द्रियप्ररूपणापरकं त्रयस्त्रिंशत्तमं शतकं द्वादशाऽनन्तरशतोपेतं व्याख्यातुमारभते, तस्य चेदं सूत्रम्-कइविहाणं भंते !' इत्यादि ।

मूलम्-कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा !
 पंचविहा एगिंदिया पन्नत्ता तं जहा-पुढविक्काइया जाव वण-
 स्सइकाइया । पुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा !
 दुविहा पन्नत्ता तं जहा-सुहुमपुढविक्काइया य बायरपुढवि-
 क्काइया य । सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? ।
 गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता तं जहा-पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया य
 अपज्जत्त सुहुमपुढविक्काइया य । बायरपुढविक्काइया णं भंते !
 कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! एवं चेव । एवं आउकाइया वि
 चउक्कएणं भेएणं भाणियत्वा एवं जाव वणस्सइकाइया । अप-
 ज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ?
 गोयमा ! अट्टकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ तं जहा-नाणावरणिज्जं
 जाव अंतराइयं । पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्म०
 पगडीओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ
 तं जहा-नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं । अपज्जत्त बायर-
 पुढविक्काइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ? गोयमा !
 एवं चेव ८ । पज्जत्तबायरपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपग-
 डीओ एवं चेव ८ । एवं एएणं कमेणं जाव-बायरवणस्सइ-
 काइयाणं पज्जत्तगाणं त्ति । अपज्जत्तसुहुमपुढविक्काइयाणं भंते !
 कइकम्मपगडीओ बंधंति ? गोयमा ! सत्तविहबंधगा वि अट्ट-

विह बंधगा वि । सत्त बंधमाणा आउयवज्जाओ सत्त कम्म-
पगडीओ बंधंति । अह्ठ बंधमाणा पडिपुन्नाओ अट्ट कम्मपग-
डीओ बंधंति । पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्म-
एवं चैव सव्वे जात्र पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्म-
पगडीओ बंधंति एवं चैव । अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते !
कइकम्मपगडीओ वेदेति ? गोयमा ! चोदस कम्मपगडीओ
वेदेति ? तं जहा-नाणावरणिज्जं जात्र अंतराइयं सोइंदिय-
वज्जं चकिंखदियवज्जं घाणिंदियवज्जं जिब्भदियवज्जं इत्थिय-
वेदवज्जं पुरिसवेदवज्जं, एवं चउक्कएणं भेएणं जाव-पज्जत्त-
वायरवणस्सइकाइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ वेदेति ? गोयमा !
एवं चैव चोदस कम्मपगडीओ वेदेति । सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति ॥सू.१॥

छाया-कतिविधाः खलु भदन्त । एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधा
एकेन्द्रियाः तद्यथा-पृथिवीकायिका यावद्वनस्पतिकायिकाः । पृथिवीकायिकाः
खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-सूक्ष्म-
पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः
प्रज्ञप्ताः तद्यथा पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च, अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च,
वादरपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! एवमेव,
एवम् अप्कायिका अपि चतुष्केण भेदेन भणितव्याः, एवं यावद्वनस्पतिकायिकाः
अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ?
गौतम ! सप्त त्रिधवन्धका अपि अष्टविधवन्धका अपि । सप्तवधनन्त-आयुर्वर्जाः
सप्त कर्मप्रकृतीर्वधन्ति, अष्टवधनन्तः परिपूर्णा अष्ट प्रकृतीर्वधन्ति !

पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्म० एवमेव, एवं सर्वे-
यावत्, पर्याप्तवादरवनस्पतिकायिकाः खलु भदन्त । कति कर्म प्रकृतीर्वधन्ति ?
एवमेव । अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त । कति प्रकृतिर्वेदयन्ति
गौतम । चतुर्दशकर्म प्रकृतीर्वेदयन्ति, तद्यथा-ज्ञानावरणीयं यावदन्तरायिकं श्रोत्रे-
न्द्रियवध्यम् चक्षुरिन्द्रियवध्यम्-घ्राणेन्द्रियवध्यम्, जिह्वेन्द्रियवध्यम्, स्त्रीवेदवध्यम्,
पुरुषवेदवध्यम् । एवं चतुष्केण भेदेन यावत्पर्याप्तवादर-वनस्पतिकायिकाः

खलु भदन्त । कति कर्मप्रकृतीवेदयन्ति । गौतम ! एवमेव चतुर्दश कर्मप्रकृतीवेद-
यन्ति-तदेव भदन्त । तदेव भदन्त । इति ॥३३॥१

टीका-‘कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः खलु भदन्त ।
एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? हे भदन्त एकेन्द्रियजीवानां कियन्तो भेदा भवन्तीति
प्रश्नः ? भगवानाह-‘गोयमा !’ इत्यादि, गोयमा ! हे गौतम ! ‘पंचविहा एगि-
दिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः-पञ्चप्रकारा एकेन्द्रियजीवाः प्रज्ञप्ताः-कथिताः । तत्र
प्रकारभेदमेव दर्शयति-‘तं जहा’ इत्यादि, ‘तं जहा’ तद्यथा-‘पुढविककाइया जाव

॥ शतक ३३ उद्देशक १—

३२ वे शतक में नारकों की उद्घर्तना के सम्बन्ध में कथन किया
गया है । नारक से उद्घृत हुए नारक एकेन्द्रियादिकों में उत्पन्न नहीं
होते हैं । अतः वे एकेन्द्रियादिक कौन हैं कि जिन में नारकों की
उत्पत्ति नहीं होती है इस शंका की उपस्थिति में एकेन्द्रियादिक
प्ररूपण के विषय भूत बन जाते हैं । सो सबसे पहिले एकेन्द्रिय जीवों
की प्ररूपणा करनेवाला यह ३३ वां शतक कि जो ११ उद्देशकों
वाला है व्याख्या युक्त किया जाते है ।

‘कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता’-इत्यादि सूत्र-१-

टीकार्थ-‘कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पणत्ता’ हे भदन्त !
एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये है ? ‘गोयमा ! पंचविहा
एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये
हैं । ‘तं जहा’ जैसा-‘पुढविककाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिक

तेत्रीसमा शतकने प्रारंभ-पडेले उद्देशे।

अत्रीसमा उद्घर्तना शतकमां नारकेनी उद्घर्तना संभंधमां कथन करवामां
आवेले छे, नरकथी नीकणेला नारक एकेन्द्रिय विगेरेमां उत्पन्न थता नथी.
तेथी ते एक एन्द्रियवाणाओ कया छे ? के नेमां नारकेनी उत्पत्ति थती.
नथी. आ शंकांना समाधान माटे एक एन्द्रिय विगेरेनी प्ररूपणा करवानी
जरूरत लागे छे, तेथी सौथी पडेलां एन्द्रियवाणा लुवेनी प्ररूपणा करवावाणा आ
तेत्रीसमा शतकने के ने अगियार उद्देशाओवाणुं छे तेनु कथन करवामा आवे छे.-

‘कइविहाणं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता’ इत्यादि

टीकार्थ-‘कइविहाणं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता’ छे लगवन् एक एन्द्रियवाणा
लुवे। डेटला प्रकारना कडेवामां आओया छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री
कडे छे के-‘गोयमा ! पंचविहा एगिंदिया पन्नत्ता’ छे गौतम ! एक एन्द्रियवाणा
लुवे। पांच प्रकारना कडेवामां आओया छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रभाणे छे.-

वणस्सइकाइया, पृथिवीकायिका यावद् वनस्पतिकायिकाः । अत्र यावत्पदेन अप्कायिक, तेजस्कायिक वायुकायिकानां संग्रहो भवति ।

तथा च—पृथिव्यादिवनस्पत्यन्त भेदेन पञ्च प्रकारा एकेन्द्रियजीवा भवन्ति, एतेषां स्पर्शनेन्द्रियमात्रं भवति, रसनादीन्द्रियाणामभावात् । यद्यपि—मन इन्द्रियकायानां सर्वजीवसाधारण्यात् सर्वाण्यपि इन्द्रियाणि सामान्यजीवानां सन्ति, तथापि—एकेन्द्रियजीवेषु स्पर्शनेन्द्रियातिरिक्तेन्द्रियाणामनुक्रमत्वाद् एकेन्द्रिय संज्ञा भवतीति ।

‘पुढविकाइया णं भंते । कइविहा पन्नत्ता’ पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त । कतिविधाः—कतिप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः—कथिता इति प्रश्नः भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा !’ हे गौतम ! ‘दुविहा पन्नत्ता’ पृथिवीकायिका द्विविधाः—द्विप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः—कथिता इत्युत्तरम् । तत्र प्रकारभेदेमेव दर्शयति—‘तं जहा’

से लेकर वनस्पतिकायिक तक अर्थात्—पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, और वनस्पतिकायिक इन पांच प्रकार के एकेन्द्रिय जीवों को केवल एक स्पर्शन इन्द्रिय ही होती है, शेष कर्ण, चक्षु, रसना, घ्राण, ये इन्द्रियां नहीं होती हैं । यद्यपि मन, इन्द्रिय और काय ये सब, जीवों के होते हैं क्यों कि ये सर्व जीव साधारण हैं अतः सब इन्द्रिया सामान्य जीव में हैं फिर भी एकेन्द्रिय जीवों में स्पर्शन इन्द्रिय के अतिरिक्त और सब इन्द्रियां होती नहीं हैं इस कारण उनकी एकेन्द्रिय संज्ञा होती है ।

‘पुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता’ हे भदन्त ! पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! हे गौतम ! ‘दुविहा पन्नत्ता’ पृथिवीकायिक जीव दो प्रकार के कहे गये हैं ! ‘तं जहा’

‘पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथ्वी कायिकथी- लघने वनस्पतिकायिक सुधी अर्थात् पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक. अने वनस्पति कायिक, आ पांचे प्रकारना अेक धन्द्रियवाणा लुवोने डेवण अेक स्पर्शन धन्द्रिय न् होय छे आकीनी डान, नाक, आंण रसना (अल) आ धंद्रियो डोती नथी. जे के मन धन्द्रिय अने शरीर सधणा लुवोने होय छे. केम के ते सर्व लव साधारण् होय छे. तेथी आ धन्द्रियो अधाने होय छे तो पण् अेक धंद्रियवाणा लुवोमां स्पर्शन धन्द्रिय शिवाय भीलु केधपण् धंद्रियो डोती नथी. तेथी तेओनी ‘अेक धंद्रिय ओवी संज्ञा छे

‘पुढविकाइयाणं भंते ! कइविहा पन्नत्ता’ हे भगवन् पृथ्वीकायिक लुवो केडवा प्रकारना कडेया छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे के—‘गोयमा ! हे गौतम ! ‘दुविहा पन्नत्ता’ पृथ्वीकायिक लुवो जे प्रकारना कडेवा छे. ‘तं जहा’

इत्यादि । 'तं जहा' तद्यथा—'सुहुमपुढवीकाइया य वायरपुढवीकाइया य' सूक्ष्म-
पृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवीकायिकाश्च । तत्र—'सुहुमपुढवीकाइया णं भंते !
कइविहा पणत्ता' सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त । कतिविधाः—कतिप्रकारका
भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'दुविहा
पन्नत्ता' सूक्ष्मपृथिवीकायिका द्विविधाः—द्विप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः प्रकार-
मेव दर्शयति—'तं जहा' इत्यादि । तं जहा' तद्यथा—'पज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया—
अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया य' पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकाश्च तथा—अपर्याप्त सूक्ष्म-
पृथिवीकायिकाश्च तथा—पर्याप्ताऽपर्याप्तभेदेन सूक्ष्मपृथिवीकायिका जीवा द्विविधा
भवन्तीत्युत्तरम् 'वायरपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता' वादर पृथिवी-
कायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ता ? इति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा'
इत्यादि 'गोयमा !' हे गौतम ! 'एवंचेव' एवमेव सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवस्य
यथा—पर्याप्ताऽपर्याप्तभेदेन द्वैविध्यं कथितम्, तथैव—वादरपृथिवीकायिक

जैसे—'सुहुम पुढवीकाइया य वायर पुढवीकाइया य' सूक्ष्म पृथिवी-
कायिक और वादरपृथिवीकायिक 'सुहुमपुढवीकायिया णं भंते !
कइविहा पन्नत्ता' इनमें से सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव हे भदन्त !
कितने प्रकार के कहे गये हैं ? 'गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता' हे
गौतम ! सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव दो प्रकार के कहे गये हैं । 'तं जहा'
जैसे—'पज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया य अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया य'
पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक और अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक । 'वायर
पुढवीकाइयाणं भंते ! कइविहा पणत्ता' हे भदन्त ! वादरपृथिवी-
कायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—
'गोयमा ? एवंचेव' सूक्ष्म पृथिवीकायिक के जैसे वादर पृथिवीकायिक

ते आ प्रभाणे छे.—'सुहुमपुढवीकाइया य वायरपुढवीकाइया य' सूक्ष्म पृथ्वी
कायिक अने आदर पृथ्वी कायिक 'सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइविहा पन्नत्ता'
तेमां सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव डे लगवन् डेटला प्रकारना डडेवामां आव्या
छे ? उत्तरमां प्रभुश्री डडे छे डे—'गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता' डे गौतम ! सूक्ष्म
पृथ्वीकायिक एवे जे प्रकारना डडेवामां आव्या छे, 'तं जहा' ते आ प्रभाणे
छे, 'पज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया य अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया य' पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वी
कायिक अने अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक 'वायर पुढवीकाइयाणं भंते ! कइविहा
पणत्ता' डे लगवन् आदर पृथ्वीकायिक एवे डेटला प्रकारना डडेवामां आव्या
छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने डडे छे डे—'गोयमा ! एवंचेव'
डे गौतम ! सूक्ष्मपृथ्वीकायिक कथन प्रभाणे आदर पृथ्वीकायिक एव पण पर्याप्त अने

जीवानामपि पर्याप्ताऽपर्याप्तभेदेन द्वैविध्यं ज्ञातव्यमिति । 'एवं आउक्काइया वि चउक्कणं भेणं भाणियव्वा' एवं-पृथिवीकायिकवदेव, अप्कायिका अपि चतुष्केण भेदेन भणितव्या । सूक्ष्मवादरपर्याप्ताऽपर्याप्तभेदात् 'एवं जाव-वणस्सइकाइया' एवं यावद् वनस्पतिकायिकाः, अत्र यावत्पदेन तेजस्कायिक-वायुकायिकयोः संग्रहो भवति । तथा च-पृथिव्य-क्कायिकयोर्यथा चत्वारो भेदाः कथिताः तथैव-तेजस्कायिकादारभ्य वनस्पतिकायिकान्तैकेन्द्रियजीवानामपि सूक्ष्मवादरपर्याप्तापर्याप्तात्मकाश्चत्वारो भेदा ज्ञातव्या इति । अथ कर्मप्रकृतिविषयकं सूत्रमाह—'अपज्जत्त' इत्यादि, 'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते' अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! 'कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि ।

भी पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार का कहा गया है । 'एवं आउक्काइया वि चउक्कणं भेणं भाणियव्वा' पृथिवीकायिक के जैसे अप्कायिक भी सूक्ष्म, वादर, पर्याप्तक और अपर्याप्तक के भेद से चार प्रकार के कहे गये जानना चाहिये । 'एवं जाव वणस्सइकाइया' इसी प्रकार से यावत् वनस्पतिकायिक भी सूक्ष्म, वादर, पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से चार प्रकार के कहे गये जानना चाहिये यावत्पद से तेजस्कायिक और वायुकायिक इन दो का ग्रहण हुआ है । तथा च पृथिवीकायिक के जिस प्रकार से चार भेद कहे हैं उसी प्रकार से तेजस्कायिक से लेकर वनस्पतिकायिकान्त एकेन्द्रिय के भी चार चार भेद हैं ऐसा जानना चाहिये ।

'अपज्जत्त सुहुमपुढवी काइयाणं भंते ! कइ कम्म पगडीओ पन्नत्ताओ' हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवों के कितनी

अपर्याप्तना लेदथी जे प्रकारना कइया छे. 'एवं आउक्काइया वि चउक्कणं भेणं भाणियव्वा' पृथ्वीकायिकना कथन प्रभाण्णु अप्कायिक पणु सूक्ष्म, वादर, पर्याप्त अने अपर्याप्तना लेदथी यार प्रकारना कइवामां आवेल छे. तेम समण्वु'. 'एवं जाव वणस्सइकाइया' आज्ज प्रभाण्णु यावत् वनस्पतिकायिक पणु सूक्ष्म वादर पर्याप्त अने अपर्याप्तना लेदथी यार प्रकारना कइया छे. तेम समण्वु'. अइधियां यावत्पदथी तेजस्कायिक अने वायुकायिक जे जे अइणु करायो छे, ते आ प्रभाण्णु—पृथ्वीकायिकना यार लेदो जे रीते गताव्या छे. जेज्ज प्रभाण्णु तेजस्कायिकथी लधने वनस्पतिकायिक सुधीना जेक धन्द्रियवाणा जवना पणु यार लेद समण्ववा.

'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भगवन् अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जेवने केटली कर्म प्रकृतियो कइवामां

‘गोयमा’ हे गौतम । ‘अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ अष्टकर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः-
कथिताः । प्रकारभेदमेव दर्शयति-‘तं जहा’ इत्यादि । ‘तं जहा’ तद्यथा-‘नाणा-
वरणिज्जं जाव-अंतराइयं’ ज्ञानावरणीयं यावत् आन्तरायिकम् । अत्र यावत्पदेन
दर्शनावरणीयवेदनीय-पोहनीयायु-नाम-गोत्राणां सग्रहो भवति । तथा च-
ज्ञानावरणीयादारभ्यान्तरायिकपर्यन्ता अष्टौ कर्मप्रकृतयोऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी-
कायिकानां भवन्तीत्युत्तरमिति । ‘पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपग-
डीओ पन्नत्ताओ’ पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां खलु भदन्त ! कति संख्यकाः
कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः-कथिता इति प्रश्नः, भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि,
‘गोयमा’ हे गौतम । ‘अट्ट कम्मपगडीओ’ अष्ट कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः एतेषामष्टौ
कर्मप्रकृतयो भवन्तीत्युत्तरम् । प्रकारभेदमेव दर्शयति-‘तं जहा’ इत्यादि । ‘तं जहा’
तद्यथा-‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीयं यावत्पदेन दर्शनावरणीय

कर्मप्रकृतियां कही गई हैं ? ‘गोयमा । अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’
हे गौतम ! उनके आठ कर्मप्रकृतियां कही गई हैं । ‘तं जहा’ जो इस
प्रकार से हैं ‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीय यावत् अन्त-
रायिक यहां यावत्पद से दर्शनावरणीय वेदनीय मोहनीय आयु नाम
और गोत्र इन कर्मप्रकृतियों का ग्रहण हुआ है । ‘पज्जत्त सुहुमपुढवी-
काइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे भदन्त ! पर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियें कही गई हैं ?
उत्तर में भगवान कहते हैं ‘गोयमा ! हे गौतम ! ‘अट्ट कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ’ आठ कर्मप्रकृतियां कही गई हैं । ‘तं जहा’ वे इस प्रकार हैं-
‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीयसे लेकर अन्तराय
कर्म की आठों कर्मप्रकृतियां कही गई हैं । जैसे-ज्ञानावरणीय,

आवेद छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के-‘अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे
गौतम ! तेओने अठ्ठमं प्रकृतियो कडी छे ‘तं जहा’ ते आ प्रभाए छे.
‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीय यावत् अंतराय अडियां
यावत्पदथी दर्शनावरणीय, मोहनीय, वेदनीय, नाम, गोत्र, अने आयु आ
अठ्ठमं प्रकृतियो अहए करवामां आवी छे,

‘पज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पणत्ताओ’ हे
लगवन् पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवेने केटली कर्मप्रकृतियो कडेवामां
आवेद छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के-‘गोयमा ! हे गौतम ! ‘अट्ट कम्म-
पगडीओ पणत्ताओ’ आठ कर्मप्रकृतियो कडेवामां आवेद छे. ते आ प्रभाए
छे.-‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीयथी लधने अन्तराअठ्ठमं सुधीनी

वेदनीय, मोहनीयायुर्नामगोत्राणां ग्रहणं भवति । 'अपज्जत्त वायरपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' अपर्याप्तवादरपृथिवीकायिकजीवानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः कथिता इति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'एवं चेव' एवम्—यथा अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवानामष्टौ ज्ञानावरणीयादारभ्यान्तरायपर्यन्ताः कर्मप्रकृतयः कथिता स्तथैव अपर्याप्तवादरपृथिवीकायिकजीवानामपि ज्ञानावरणीयादिकाः अष्टौ कर्म प्रकृतयो ज्ञातव्या इति । 'पज्जत्तवायरपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्म पगडीओ' पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकजीवानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ता इति प्रश्नः, भगवानाह—'एवं चेव' एवमेव, एवम्—यथा—अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकानाम्, ज्ञानावरणीयादिका अष्टौ कर्मप्रकृतयो भवन्ति, तथैव—पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकजीवानामपि ज्ञानावरणीयादिका अष्टौ कर्मप्रकृतयो

दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम गोत्र और अन्तराय 'अपज्जत्त वादर पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भदन्त ! अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं ? 'गोयमा ! एवं चेव' हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवों के जैसे अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवों के भी ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं । 'पज्जत्त वायर पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ' हे भदन्त ! पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं ? 'गोयमा ! एवं चेव' अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिक जीवों के भी ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं । 'एवं एएणं कमेणं

आठे कर्मप्रकृतियो कडेवामां आवेत्त छे, जेभ के—ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु नाम, गोत्र अने अन्तराय.

'अपज्जत्त वायरपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भगवन् अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवोंने केटली कर्म प्रकृतियो कडेवामां आवेत्त छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! एवं चेव' हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोना कथन प्रमाणे अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवोंने पण ज्ञानावरणीय विगेरे आठ कर्म प्रकृतियो कडेवामां आवेत्त छे.

'पज्जत्त वायर पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पणत्ताओ' हे भगवन् पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवोंने केटली कर्मप्रकृतियो कडेवामां आवेत्त छे. 'गोयमा ! एवं चेव' पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक जीवोंने पण ज्ञानावरणीय विगेरे आठ कर्मप्रकृतियो कडेवामां आवेत्त छे.

भवन्तीति ज्ञातव्यम् । 'एवं एणं क्रमेण जाव-वायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ति' एवम्-एतेन क्रमेण पृथिवीकायिकप्रकरणकथितप्रकारेण यावद् वादरवनस्पतिकायिकानां पर्याप्तकानामिति । अत्र यावत्पक्षेन अपर्याप्त पर्याप्त भेद युक्त सूक्ष्मवादराऽप्यायिकानाम् अपर्याप्तपर्याप्तभेदयुक्तसूक्ष्मवादरतेजस्कायिकानाम् अपर्याप्तपर्याप्त भेदमिन्न सूक्ष्मवादरवायुकायिकानाम् अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकानां च संग्रहो भवति । पर्याप्तवादरवनस्पतिकायिकाः सूत्रे एव गृहीताः ।

अथ कर्मप्रकृतिबन्धविषये सूत्रमाह-'अपज्जत्त' इत्यादि । 'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !' अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवाः खलु भदन्त ! 'कइ कम्मपगडीओ वंधंति' कति प्रकारकाः कर्म प्रकृती बंधन्ति । क्रियत्सख्यकानां कर्मप्रकृतिनां बन्धका इमे भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सत्तविहबंधगावि अट्टविहबंधगावि' सत्तविह-सप्तप्रकारक कर्मप्रकृतीनां बन्धका अपि-अपर्याप्त-सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवा भवन्ति । तथाऽष्टप्रकारक कर्मप्रकृतीनां बन्धका अपीमे भवन्तीति ।

जाव वायर वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ति' इत्थी क्रम से यावत् पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक तक जानना चाहिये । यहां यावत् शब्द से अपर्याप्त पर्याप्त भेद युक्त सूक्ष्म वादर अप्यायिकों का, अपर्याप्त पर्याप्त भेद युक्त सूक्ष्म वादर तेजस्कायिकों का अपर्याप्त पर्याप्तभेद युक्त सूक्ष्म वादर वायुकायिकों का और अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों का संग्रह हुआ है । पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिकों सूत्र में ही आ गया है ।

अब आठ कर्मप्रकृतियों के बन्ध के विषय में सूत्र कहते हैं-'अपज्जत्त' इत्यादि 'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति' हैं भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं ? 'गोयमा ! सत्तविह बंधगा वि अट्टविहबंधगा वि'

'एवं एणं क्रमेण जाव वायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ति' आठ कर्मप्रकृति यावत् शब्दधी पर्याप्तक वादर वनस्पतिकायिकना कथन सुधी समन्वुं. अडियां यावत् शब्दधी पर्याप्त, अपर्याप्त, लेद युक्त सूक्ष्म वादर अप्यायिकने अपर्याप्तपर्याप्तक लेद युक्त सूक्ष्म वादर तेजस्कायिकने अपर्याप्तपर्याप्त लेदवाणा सूक्ष्म वादर वायुकायिकने अने अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकने संग्रह थयो छे. पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिकानुं कथन तो सूत्रमांज कथुं छे

'अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति' हे भगवन् अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवं केटली कर्म प्रकृतियोना अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे हे-'गोयमा ! सत्तविहबंधगा वि

तत्र-‘सत्त्वबंधमाणा आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ बंधंति’ सप्तप्रकारक कर्म प्रकृती बंधन्त आयुष्कर्मातिरिक्ताः सप्त ज्ञानावरणीयादिकाः कर्मप्रकृति-
बंधन्ति ! ‘अट्ट बंधमाणा पडिपुन्नाओ अट्ट कम्मपगडीओ बंधंति’ अष्टकर्मप्रकृती
बंधन्तः परिपूर्णाः समस्ता अपि अष्टापि कर्मप्रकृती बंधन्ति । सर्वाणामपि कर्म
प्रकृतीनां बंधनं कुर्वन्तीति भावः । ‘पज्जत्त सुहुम पुढविककाइयाणं भंते !’ पर्याप्त
सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवाः खलु भदन्त ! ‘कति कर्मप्रकृती बंधन्तीति प्रश्नः,

हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव सात कर्म प्रकृतियों
का भी बन्ध करते हैं और आठ कर्मप्रकृतियों का भी बन्ध करते हैं
‘सत्त्व बंधमाणा आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ बंधंति’ जब वे सात
कर्म प्रकृतियों का बन्ध करते हैं तब आयुर्कर्म के सिवाय वे सात कर्म
प्रकृतियों का-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम,
गोत्र, और अन्तराय इनका-बन्ध करते हैं ‘अट्ट बंधमाणा पडिपुन्नाओ
अट्ट कम्मपगडीओ बंधंति’ और जब वे आठ कर्मप्रकृतियों का बन्ध
करते हैं तो पूरी की पूरी आठों कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं ।

‘पज्जत्त सुहुम पुढविककाइयाणं भंते ! कइ कम्म०’ हे भदन्त ! पर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं ?
‘गोयमा ! एवं चेव’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक भी सात
प्रकार की कर्म प्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं और आठ प्रकार की

अट्टविह बंधगावि’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक ७ व सातकर्म प्रकृति-
थेनो पणु णंध करे छे, अने आठ कर्म प्रकृतियेनो पणु णंध करे छे.

‘सत्त्वबंधमाणा आउवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ बंधंति’ न्यारे तेओ
सात कर्म प्रकृतियेनो णंध करे छे, त्यारे तेओ आयुर्कर्मने छोडीने अट्टके
के-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम, गोत्र, अने अन्तराय
आ सातकर्म प्रकृतियेनो णंध करे छे. ‘अट्टबंधमाणा पडिपुन्नाओ अट्ट कम्म
पगडीओ बंधंति’ अने न्यारे तेओ आठ कर्म प्रकृतियेनो णंध करे छे, त्यारे
पूरेपूरी आठे कर्म प्रकृतियेनो णंध करे छे.

‘पज्जत्त सुहुम पुढविककाइयाणं भंते ! कइ कम्म०’ हे भगवन् पर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिक ७ व डेटली कर्म प्रकृतियेनो णंध करे छे ? उत्तरमां प्रबुश्री
कहे छे के-‘गोयमा ! एवं चेव’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक ७ वनी
कर्म ७ पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक पणु सात प्रकारनी कर्म प्रकृतियेनो
णंध करे छे, अने आठ कर्म प्रकृतियेनो पणु णंध करे छे. न्यारे ते सात

भगवानाह—‘एवंचेव’ एवमेव—अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव पर्याप्तसूक्ष्म-
पृथिवीकायिका अपि सप्तविधबन्धका अपि, अष्टविधबन्धका अपि । तत्र सप्त-
बन्धन्तः आयुर्वर्जा ज्ञानावरणीयादिकाः सप्त कर्मप्रकृतीर्वधन्ति, अष्ट
बन्धन्तः परिपूर्णा अष्ट कर्मप्रकृतीर्वधन्तीति । ‘एवं सव्वे जाव-पज्जत्त
वायर वणस्सह काइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति एवंचेव’ एवं
सर्वे यावत् पर्याप्तबादर वनस्पतिकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृतीर्वधन्ति
एवमेव—पूर्वोक्तवदेव प्रश्नोत्तराणि ज्ञातव्यानि अत्र यावत्पदेनापर्याप्त सूक्ष्माप्का-
यिक, पर्याप्त सूक्ष्माऽप्कायिकाऽपर्याप्तबादराप्कायिक, पर्याप्तबादराप्कायि-
काऽपर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक पर्याप्त बादर तेजस्कायिकाऽपर्याप्तसूक्ष्मवायु-
कायिक पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक अपर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकानां

कर्मप्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं । सात कर्मप्रकृतियों के बन्धक होने
पर वे आयु कर्म को छोड़कर शेष ज्ञानावरणीयादि सात कर्मप्रकृतियों
का बन्ध करते हैं । और आठ कर्मप्रकृतियों के बन्धक होने पर वे
परिपूर्ण आठ कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं । ‘एवं सव्वे जाव पज्जत्त
वायरवणस्सहकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति, एवं चेव’
इसी प्रकार समस्त यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक हे
भदन्त ! कितनी कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं ? हे गौतम !
इस सम्बन्ध में पूर्वोक्त जैसा ही उत्तर जानना चाहिये, यहां यावत्पद
से ‘अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक, पर्याप्तक सूक्ष्म अप्कायिक, अपर्याप्त
बादर अप्कायिक, पर्याप्त बादर अप्कायिक, अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक,
पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक, अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक, पर्याप्तक
बादर तेजस्कायिक अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक, पर्याप्त सूक्ष्म वायु-

कर्म प्रकृतियोना अंध करे छे, त्यारे ते आयु कर्मने छोडीने पाडीनी ज्ञाना
वरणीय जिगेरे सात कर्म प्रकृतियोना अंध करे छे, अने ज्यारे आठ कर्म
प्रकृतियोना अंध करे छे, त्यारे तेओ पूरेपूरी अठे आठ कर्म प्रकृतियोना
अंध करे छे. ‘एवं सव्वे जाव पज्जत्तवायरवणस्सहकाइयाणं भंते ! कइ
कम्मपगडीओ वंधंति एवं चेव’ आज प्रमाणे सधणा यावत् पर्याप्त बादर
वनस्पतिकायिक छे लगवन् डेटवी कर्म प्रकृतियोना अंध करे छे ? छे गौतम !
आ सअंधमां पडेलां कइया प्रमाणे ज प्रश्न अने उत्तर समजवा.
अहियां यावत्पदथी अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक, पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक
अपर्याप्त बादर अप्कायिक, पर्याप्त बादर अप्कायिक, अपर्याप्त, सूक्ष्म
तेजस्कायिक, पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक
पर्याप्त बादर तेजस्कायिक, अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त सूक्ष्म वायु

संग्रहो भवति । तथा च-अपर्याप्त सूक्ष्माऽऽकायिकादारभ्याऽपर्याप्तबादर वनस्पतिजीवपर्याप्तानां कर्मबन्धविषये पृथिवीकायिकवदेव व्यवस्था ज्ञातव्या आलापप्रकारस्तु स्वयमूहनीयः, एतदग्रतः पर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकसूत्रं सूत्रकारः स्वयमेवाह-‘पञ्जत्त वायरवणस्सइकाइया णं’ इत्यादि, ‘पञ्जत्तवायरवणस्सइकाइया णं भंते ! कइ कम्मपगडीओ बंधंति’ पर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृती बंधन्ति ? उत्तरमाह-‘एवं चेव’ एवमेव पर्याप्तबादरपृथिवीकायिकवदेव कर्मप्रकृतिबन्धनविषये व्यवस्था ज्ञातव्येति ।

अथ कर्मप्रकृतिवेदनविषये माह-‘अपञ्जत्त०’ इत्यादि । ‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवि-

कायिक, अपर्याप्त बादर वायुकायिक, पर्याप्त बादर वायुकायिक, अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक और अपर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक ‘इन सब के प्रश्नोत्तरोका ग्रहण हुआ है । जैसे अपर्याप्त सूक्ष्म अकायिक से लेकर अपर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक तक के जीवों के कर्मबन्ध के विषय में पृथिवीकायिक के जैसी ही व्यवस्था जाननी चाहिये । इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार स्वयं ही उद्भावित करना चाहिये ।

पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक के विषय में सूत्रकार स्वयं सूत्र कहते हैं ‘पञ्जत्त’ इत्यादि ‘पञ्जत्त वायरवणस्सइकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ बंधंति’ हे भदन्त ! पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं ? ‘एवं चेव’ हे गौतम ! इस सम्बन्ध में पर्याप्त बादर पृथिवीकायिक के जैसे ही कर्मप्रकृति के बन्ध के विषय में व्यवस्था जाननी चाहिये ।

‘अपञ्जत्त सुहुम पुढविककाइयाणं भंते !’ हे भदन्त ! अपर्याप्त

कायिक, अपर्याप्त, बादर, वायुकायिक, पर्याप्त बादर वायुकायिक, अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, अने अपर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक आ सधणा अडणु कराया छे. तथा अपर्याप्त सूक्ष्म अप्रकायिकथी लछिने अपर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक सुधीना एवेना कर्म बंधना संबंधमां पृथिवीकायिकना कथन प्रमाणे आलापनेा प्रकार स्वयं अनावीने समए देवेा. पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिकना संबंधमां सूत्रकार नीचेना सूत्रपाठ कडे छे. ‘पञ्जत्तवायरवणस्सइकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ बंधंति’ हे भगवन पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक एव केटली कर्म प्रकृतियोना बंध करे छे ? उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे के-‘एवं चेव’ हे गौतम ! आ संबंधमां अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकना कथन प्रमाणे न कर्म प्रकृतिना संबंधमां कथन समजवुं.

‘अपञ्जत्त सुहुम पुढविकाइयाणं भंते’ हे भगवन अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवी

वहाइयाणं भंते' अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवाः खलु भदन्त । 'कइ कम्म पगडीओ वेदेति' कति कर्मप्रकृती वेदयन्तीति वेदनविषयः प्रश्नः । भगवानाह— 'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा !' हे गौतम । 'चोइस कम्मपगडीओ वेदेति' चतुर्दश कर्मप्रकृती वेदयन्ति, अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवा इति । प्रकारभेदमेव दर्शयति—'तं जहा' इत्यादि । 'तं जहा' तद्यथा—'णाणावरणिज्जं जाव—अंतराइयं' ज्ञानावरणीयं यावद् आन्तरायिकम् । यावत्पदेन=दर्शनावरणीय वेदनीय, मोहनीय आयु=नाम=गोत्राणां संग्रहो भवति ८ । तथाचेमा ज्ञानावरणीयादिका अष्टकर्म-प्रकृतयः ८ । तथा—'सोइंदियवज्झ' श्रोत्रेन्द्रिय वध्यम्, श्रोत्रेन्द्रियं वध्यं हननीयं—

सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीव 'कइ कम्मपगडीओ वेदेति' कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं ? 'गोयमा ! चोइसकम्म पगडीओ वेदेति' हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव १४ कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं । 'तं जहा' जो इस प्रकार से हैं—'णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं' ज्ञानावरणीय से लेकर अन्तराय तक यहां यावत् पद से दर्शनावरणीय वेदनीय मोहनीय, आयु, नाम, और गोत्र इनका ग्रहण हुआ है ।

इस प्रकार इन ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं तथा 'सोइंदियवज्झ' श्रोत्रेन्द्रिय वध्य श्रोत्रेन्द्रिय, वध्य हनन करने योग्य जिस कर्म के हो वह श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म कहलाता है जिस के उदय से जीव को श्रोत्रेन्द्रियकी प्राप्ति न हो सके उस कर्म का नाम श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म है उस श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म का वेदन करते हैं, इसी प्रकार आगे भी समझ लेना

कायिक ७वे। 'कइ कम्मपगडीओ वेदेति' केटली कर्म प्रकृतियोतुं वेदन करे छे ? 'गोयमा ! चोइसकम्मपगडीओ वेदेति' हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी कायिक ७व चौद १४ कर्म प्रकृतियोतुं वेदन करे छे

'तं जहा' ते आ प्रमाण्णे छे—'णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं' ज्ञानावरणीयथी लधने अन्तराय सुधी अडियां यावत् पदथी दर्शनावरणीय, मोहनीय, वेदनीय, नाम, गोत्र, अने आयु आ कर्म प्रकृतियो अहण्णु थर्ध छे. आ रीते आ ज्ञानावरणीय विगेरे आठ कर्म प्रकृतियोतुं तेआ वेदन करे छे. तथा 'सोइंदियवज्झ' श्रोत्रेन्द्रिय वध्य—श्रोत्रेन्द्रियतुं हनन करवा योग्य ने कर्म डाय छे ते श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म कडेवाय छे. ने कर्मना उदयथी श्रोत्रेन्द्रियनी प्राप्ति न थर्ध शकै ते कर्मतुं नाम श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म छे. जे श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्मतुं वेदन करे छे तेभ समज्जवुं आ श्रोत्रेन्द्रिय वध्य कर्म भति ज्ञानावरणु विशेष इप डाय छे. 'चक्खि दियवज्झ' तथा यक्षु धं द्रियवध्य

हननयोग्यं यस्य कर्मण स्तत् । यदुदयात् जीवस्य श्रोत्रेन्द्रियं न लभ्यते तत्कर्म श्रोत्रेन्द्रियवध्यं कथ्यते—एवं सर्वत्र बोध्यम्, एतन्मतिज्ञानावरणविशेष इत्यर्थः, एवम्—‘चक्खिदियवज्झं’ चक्षुरिन्द्रियवध्यम्, चक्षुरिन्द्रिय हननीयं तत्—दर्शनावरणा विशेषः १० । ‘घाणिदियवज्झं’ घ्राणेन्द्रिय वध्यम्, घ्राणेन्द्रिय हननीयम् ११ । ‘जिर्विभदियवज्झं’ जिह्वेन्द्रिय वध्यम् जिह्वेन्द्रिय हननीयं १२ । स्पर्शनेन्द्रिय वध्यन्तु तेषामपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां नास्ति, यतः स्पर्शनेन्द्रियवध्यत्वस्वीकारे—एकेन्द्रियत्वहानिपसङ्गस्यादिति । ‘इत्थिवेदवज्झं’ स्त्रीवेदवध्यम्, यदुदयात् स्त्रीवेदो न लभ्यते तत् स्त्रीवेदहननीयं कर्म १३ । ‘पुरिसवेदवज्झं’ पुरुषवेदवध्यम्, यदुदयात् पुरुषवेदो न लभ्यते, तत्कर्मपुरुषवेदहननीयम् १४ । नपुंसकवध्यन्तु एकेन्द्रियाणां नास्ति—नपुंसकवेदवृत्तित्वादिति । एवमेताश्चतुर्दशकर्मपकृतयो भवन्ति ।

चाहिये यह श्रोत्रेन्द्रिय कर्म मतिज्ञानावरण विशेष रूप होता है । ‘चक्खिदियवज्झं’ तथा चक्षु इन्द्रिय वध्यकर्मका वे वेदन करते हैं । यह चक्षुरिन्द्रिय वध्यकर्म दर्शनावरणीयकर्म विशेष रूप होता है । ‘घाणिदियवज्झं’ तथा घ्राणेन्द्रिय वध्यकर्म का वे वेदन करते हैं । ‘जिर्विभदियवज्झं’ जिह्वेन्द्रिय वध्यकर्म का वेदन करते हैं । स्पर्शनेन्द्रिय वध्यकर्म का वेदन उन अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकों के नहीं है, क्यों कि इनके यदि स्पर्शनेन्द्रिय वध्यकर्म का वेदन स्वीकार किया जाय तो इनमें एकेन्द्रियता की हानि का प्रसंग प्राप्त होगा । ‘इत्थिवेदवज्झं’ इसी प्रकार से ये अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव स्त्रीवेद वध्यकर्म का भी वेदन करते हैं । जिस के उदय से स्त्री वेद प्राप्त न हो वह स्त्री वेद वध्यकर्म है । ‘पुरिसवेदवज्झं’ पुरुष वेद वध्य कर्म का वेदन करते हैं—जिस के उदय से पुरुष वेद प्राप्त न हो सके वह पुरुष वेद वध्यकर्म है,

कर्मन्तु वेदन करे छे. आ अक्षु ष्ट्रियावरणु कर्म दर्शनावरणु विशेष रूप होय छे. ‘घाणिदियवज्झं’ तथा घ्राणेन्द्रियावध्य कर्मन्तु वेदन करे छे. जिर्विभदियवज्झं जिह्वेन्द्रियवध्य कर्मन्तु वेदन करे छे. ते अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिकेने स्पर्शनेन्द्रियवध्य कर्मन्तु वेदन होतुं नथी. केम के तेष्माने ले स्पर्शनेन्द्रियवध्य कर्मन्तु वेदन स्वीकारवाभां आवे तो तेष्मानां अकेन्द्रिय पणानी हानीने। प्रसंग उपस्थित थसे ‘इत्थिवेदवज्झं’ आण प्रमाणे आ अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अवे। स्त्रीवेदवध्य कर्मन्तु पणु वेदन करे छे. जेना उदयथी स्त्रीवेद प्राप्त न थाय ते स्त्रीवेदवध्य कर्म कडेवाय छे. ‘पुरिसवेदवज्झं’ पुरुष वेदवध्य कर्मन्तु वेदन करे छे. जेना उदयथी पुरुषवेद प्राप्त न

किं चतुर्दश कर्मप्रकृतीनां वेदनं केवलपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानामेव
भवती त्याशङ्कायामाह—‘एवं चउक्केणं’ इत्यादि । ‘एवं चउक्केणं भेदेणं जाव-
पज्जत्त वायरवणस्सइकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वेदेति’ गोयमा । एवं
चेव, चोइसकम्मपगडीओ वेदेति’ एवं चतुक्केण भेदेन पर्याप्तापर्याप्तभेद
भिन्नसूक्ष्मवादरभेदेन यावत् पर्याप्तवाइरवनस्पतिकायिकाः खल्ल भदन्त-
कति कर्म प्रकृतीवेदयन्ति ? गौतम ! एवमेव—अपर्याप्त पृथिवीकायिकवदेव—

इनके नपुंसक वध्यकर्म नहीं है, क्यों कि एकेन्द्रियों में नपुंसक वेद
वृत्तिता होती है । इस प्रकार से ये चौदह १४ कर्म प्रकृतियां है जिन्हे
ये अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव वेदन करते हैं । इन चौदह कर्म
प्रकृतियों का वेदन इन्ही अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकों के होता हो
सो बात नहीं है किन्तु इन चौदह कर्म प्रकृतियों का वेदन ‘एवं चउ-
क्केणं भेदेणं जाव पज्जत्त वायर वणस्सइकाइयाणं भंते ! कइकम्म
पगडीओ वेदेति’ सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त इन भेद वाले
समस्त एकेन्द्रिय जीव होते हैं, इसलिये सूत्रकारने यहाँ ऐसा कहा है
यह चौदह प्रकृतियों का वेदन पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक तक जानना
चाहिये । गौतमस्वामी ने इसी बात को प्रभुश्री से इस रूप में यावत् पूछा
है कि हे भदन्त ! पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृ-
तियों का वेदन करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! एवं
चेव चोइस कम्मपगडीओ वेदेति’ हे गौतम ! अपर्याप्त पृथिवीकायिक

थरुं शके ते पुइष वेदवध्य कर्मं कडेवाय छे. तेओने नपुंसकवेदवध्य
कर्मं होतुं नथी केम के—एकेन्द्रियोमां नपुंसकवेदपणु होय छे. आ रीते
आ चौद १४ कर्म प्रकृतियो कही छे जेनुं आ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक
एव वेदन करे छे. आ चौद कर्म प्रकृतियोनुं वेदन आ अपर्याप्त सूक्ष्म
पृथ्वीकायिकोने न होय छे, ओ बात नथी परंतु आ १४ चौदकर्म प्रकृति
योनुं वेदन ‘एवं चउक्केणं भेदेणं जाव पज्जत्त वायरवणस्सइकाइयाणं भंते !
कइ कम्म पगडीओ वेदेति’ सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त अने अपर्याप्त आ लेहे
सधण। एकेन्द्रियोने होय छे. तेथी सूत्रकारे अहियां ओवुं कहु छे के—आ
चौद प्रकृतियोनुं वेदन पर्याप्त बादर वनस्पतिकाय सुधी समजवुं. गौतम
स्वामीओ ओन बात प्रभुश्रीने ओ रीते पूछेल छे के—हे लगवन् पर्याप्त
बादर वनस्पति कायिक एव केटवी कर्म प्रकृतियोनुं वेदन करे छे ? आ प्रश्नना
उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा ! एवं चेव चोइसकम्मपगडीओ वेदेति’
हे गौतम ! अपर्याप्त पृथ्वीकायिक ओवोना कथन प्रमाणे न तेओ यावत्

चतुर्दश कर्मप्रकृतीर्वेदयन्ति । यावत्पदेन, पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकादारभ्य अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्मवादरभेदभिन्नापकायिक, तेजस्कायिक-वायुकायिक पर्याप्तापर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः अपर्याप्तापर्याप्तवादरवनस्पतिकायिकान्त जीवानां संग्रहो ज्ञातव्याः । पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिक सूत्रं तु पूर्वमुक्तमेव, एते सर्वे एकेन्द्रियाश्चतुर्दश कर्मप्रकृतीनां वेदका भवन्तीति भावः । आलाप-प्रकाराश्च स्वयमेवोहनीया इति ।

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हेभदन्त !

जीवों के जैसे ही वे यावत् वनस्पतिकायिक जीव १४ कर्मप्रकृतियों का ही वेदन करते हैं । यहाँ यावत्पद से पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक से लेकर अपर्याप्त पर्याप्त, सूक्ष्म, वादर, भेद वाले अपकायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक और अपर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक तेजस्कायिक इन सब जीवों का ग्रहण हुआ है । पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक सूत्र तो पहिले कह ही दिया है । इस प्रकार ये सब एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म पर्याप्त सूक्ष्म अपर्याप्त, वादर अपर्याप्त अपकायिक जीव, इसी प्रकार से सूक्ष्म पर्याप्त आदि भेद वाले तेजस्कायिक जीव वायुकायिक जीव और वनस्पतिकायिक जीव-पूर्वोक्त १४ कर्मप्रकृतियों के वेदक होते हैं । इस सम्यग्ध में आलाप प्रकार स्वयं ही उद्भावित करना चाहिये ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आप देवानुप्रियने एकेन्द्रिय जीवों के कर्मप्रकृतियों के

आदर वनस्पति कायिक एव यौह १४ कर्मप्रकृतियानुं वेदन करे छे. अर्धियां यावत्पदथी पर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लक्ष्ने अपर्याप्त सूक्ष्म आदर लेदराणा अपूकायिक तेजस्कायिक वायुकायिक तथा अपर्याप्तक आदर वनस्पतिकायिक आ सधणा एवो अडष्ट कराया छे पर्याप्त आदर वनस्पति कायिक सूत्रतो पडेलां कडेवामां आवी गयुं छे. आ रीते आ सधणा अेक धन्द्रियराणा एवो सूक्ष्म पर्याप्त. सूक्ष्म अपर्याप्त, आदर पर्याप्त आदर अपर्याप्त, अपकायिक एव आण रीते सूक्ष्म पर्याप्तक विगेरे लेदवाणा तेजस्कायिक एवो, वायुकायिक एवो अने वनस्पतिकायिक एवो उपर कडेल १४ यौहकर्म प्रकृतियानुं वेदन करे छे. आ संभंधमां आलापके स्वयं भनावीने समलु लेवा.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये अेक धन्द्रिय एवोने कर्म प्रकृतियाना अंध संभंधमां अने तेना वेदनना संभंधमां

एकेन्द्रियाणां कर्मप्रकृति बन्धनवेदनविषये यत्कथितम्—तत्सर्वं सत्यमितिकथयित्वा
गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं
भावयन् विहरतीति ॥सू० ॥३३।१।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-वाल-
ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री
घासीलालत्रतिविरचितायां श्री “भग
वतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां-
व्याख्यायां त्रयस्त्रिंशत्तमं शतके
प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३३-१॥

बन्धन एवं उनके वेदन के विषय में जो कहा है वह सब सत्य ही है ।
इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और उन्हें
नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से
आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तैतीसवें शतकका
प्रथम उद्देशक समाप्त ॥३३-१॥

वे कथन कथुं छे. ते सधणुं कथन सत्य न छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियतुं
कथन सर्वाथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वंदना
करी नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार करीने ते यही संयम अने तपथी पोताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥सू०१॥
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र”नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तैत्रीसभा शतकेने पडेवे उद्देशे समाप्त ॥३३-१॥

अथ द्वितीयोद्देशक प्रारभ्यते

मूलम्—कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया
 पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया
 पन्नत्ता । तं जहा—पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया । अणं-
 तरोववन्नगा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पन्नत्ता गोयमा !
 दुविहा पन्नत्ता तं जहा—सुहुमपुढवीकाइया य वायरपुढविकाइया
 य । एवं दुपएणं भेएणं जाव वणस्सइकाइया । अणंतरोववन्नग
 सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ,
 गोयमा ? अट्टु कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ तं जहा—नाणावरणिज्जं
 जाव—अंतराइयं । अणंतरोववन्नग वायरपुढवीकाइया णं भंते !
 कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ । गोयमा ? अट्टु कम्मपगडीओ
 पन्नत्ताओ तं जहा—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं । एवं जाव
 अणंतरोववन्नग वायरवणस्सइकाइयाणं ति । अणंतरोववन्नग
 सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्म पगडीओ बंधंति ? गोयमा !
 आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ बंधंति । एवं जाव अणंतरो-
 ववन्नग वायरवणस्सइकाइय ति । अणंतरोववन्नग सुहुम-
 पुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्म पगडीओ वेदेति ? गोयमा !
 षउदस कम्मपगडीओ वेदेति तं जहा—नाणावरणिज्जं तहेव
 जाव पुंसवेदवज्जं । एवं जाव अणंतरोववन्नग वायरवणस्सइ-
 काइयं ति । सेवं भंते सेवं भंते ! ति ॥सू० २॥

छायाः—कृतिविधाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः मज्ञप्ताः ?
 गौतम ! पञ्चविधा अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः मज्ञप्ताः । तद्यथा पृथिवीका-
 यिका यावद्वनस्पतिकायिकाः । अनन्तरोपपन्नकाः खलु भदन्त ! पृथिवीकायिका
 कृतिविधाः मज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः मज्ञप्ताः तद्यथा—सूक्ष्मपृथिवीकायि-
 काश्च, वादरपृथिवीकायिकाश्च । एवं द्विपदेन भेदेन यावद्वनस्पतिकायिकाः अन-
 तरोपपन्नसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कृति कर्मप्रकृतयः मज्ञप्ताः ? गौतम
 अष्ट कर्मप्रकृतः मज्ञप्ताः । तद्यथा—ज्ञानावरणीयं यावदन्तरायिकम् । अनन्तरोप-

अकवादरपृथिवीकायिकानां भदन्त । कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? गौतम !
 अष्ट कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—ज्ञानावरणीयं यावदान्तरायिकम् । एवं याव-
 दनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृतीर्वध्नन्ति ?
 गौतम । आयुर्वर्जाः सप्तकर्म प्रकृतीर्वध्नन्ति, एवं यावदनन्तरोपपन्नकवादरवनस्प-
 तिकायिका इति । अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति-
 कर्मप्रकृतीर्वेदयन्ति ? गौतम । चतुर्दश कर्मप्रकृतीर्वेदयन्ति । तद्यथा—ज्ञानावर-
 णीयम् तथैव—यावत् पुरुषवेदवध्यम् ! एवं—यावदनन्तरोपपन्नक वादरवनस्पतिका-
 यिका इति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० २॥

टीका—‘कइविहा णं भंते ! अनन्तरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः
 कतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! ‘अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ अनन्तरो-
 पपन्नकाः, अनन्तरम् ये उत्पत्तेः प्रथमसमये एव वर्तन्ते ते अनन्तरोप-
 पन्नकाः, एकसमयोपपन्नका इत्यर्थः एतादृशा एकेन्द्रियाः कतिविधाः
 प्रज्ञप्ताः—कथिताः ? इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे
 गौतम ! ‘पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः—पञ्चप्रकारका
 अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः कथिताः । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया-

॥ शतक ३३ उद्देशक द्वितीय ॥

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता ?

टीकार्थ—‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे
 भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ?
 जो उत्पत्ति के प्रथम समय में रहते हैं वे अनन्तरोपपन्नक कहे गये हैं ।
 अर्थात् जिन्हे उत्पन्न हुए एक समय ही हुआ है वे ही अनन्तरोपपन्नक
 हैं । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा पंचविहा अणंतरोववन्नगा
 एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव पांच

॥ भीष्म उद्देशाने आरंभ—

‘कइविहाणं भंते ! अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता’ धृत्यादि.

टीकार्थ—‘कइविहाणं भंते ! अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता’ हे
 भगवन् अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय एव केटला प्रकारना कडेवामां आव्या छे ?
 जेभनी उत्पत्ती प्रथम समयमां जे छे, तेज्जेने अनन्तरोपपन्नक कडेवामां आवे
 छे. अर्थात् जेक समयमां जे जे एवे उत्पन्न थाय छे,—जेकी साथे जेज्जे
 उत्पन्न थाय छे, जे जे, अनन्तरोपपन्नक छे. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री
 कहे छे जे—‘गोयमा । पंचविहा अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता’ हे गौतम !
 अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय एवे पांच प्रकारना कडेवामां आवेत्त छे, ‘तं जहा’

जाव-वणस्सइकाइया' पृथिवीकायिका यावद्द्वनस्पतिकायिकाः । यावत्पदेन अप्कायिक-तेजस्कायिक-वायुकायिकानां संग्रहो भवति । 'अणंतरोववन्नगा णं भंते ! पुढविककाइया कइविहा पन्नत्ता' अनन्तरोपपन्नकाः खलु भदन्त । पृथिवी-कायिका एकेन्द्रियाः कतिविधाः-कति प्रकारकाः मज्ञप्ता ? इति मन्नः । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम । 'दुविहा पन्नत्ता' द्विविधा मज्ञप्ताः, अनन्तरोपपन्नक पृथिवीकायिकाः एकेन्द्रियाः । 'तं जहा' तद्यथा-'सुहुमपुढवीकाइया य-वायरपुढवीकाइया य' सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवी-कायिकाश्च 'एवं दुप्पणं भेएणं जाव-वणस्सइकाइया' एव द्विपदेन भेदेन यावत्, यावत्पदेन अप्कायिकाः, तेजस्कायिकाः, वायुकायिकाः, वनस्पतिकायिका अपि

प्रकार के कहे गये हैं । 'तं जहा' जो इस प्रकार से हैं-'पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया' पृथिवीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । यहाँ यावत् पद से 'अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक' इन जीवों का ग्रहण किया गया है । 'अणंतरोववन्नगा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पन्नत्ता' हे भदन्त ! अणंतरोपपन्नक पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? 'गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता' हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक पृथिवीकायिक जीव दो प्रकार के कहे गये हैं । 'तं जहा' जैसा-'सुहुम पुढविककाइया य०' सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव और वादरपृथिवीकायिक जीव 'एवं दुप्पणं भेएणं जाव वणस्सइकाइया' इसी प्रकार से यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक के दो दो भेद कहना चाहिये-अर्थात् अनन्तरोपपन्नक, अप्कायिक तेजस्कायिक, वायुकायिक

ते आ प्रभाषे छे-'पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया' पृथ्वीकायिक यावत् अप्कायिक तेजस्कायिक, वायुकायिक, अने वनस्पतिकायिक 'अणंतरोववन्नगाण भंते ! पुढविककाइया कइविहा पन्नत्ता' हे भगवन् अनंतरोपपन्नक पृथ्वीकायिक एवे केटवा प्रकारना कडेवाभां आया छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री कडे छे छे-'गोयमा ! दुविहा पणत्ता' हे गौतम ! अनंतरोपपन्नक पृथ्वीकायिक एवे भे प्रकारना कडेवाभां आया छे. 'तं जहा' तेआ प्रभाषे छे.-'सुहुम पुढवी काइया य वायरपुढवीकाइया य' सूक्ष्म पृथ्वी कायिक एव अने वादर पृथ्वी कायिक एव 'एवं दुप्पण भेएणं जाव वणस्सइकाइया' अण प्रभाषे यावत् वनस्पतिकायिक एवे सुधीना भे लेहो कडेवा लेछिये. अर्थात् अनंतरोपपन्नक अप्कायिक तेजस्कायिक वायुकायिक, अने वनस्पतिकायिकना सूक्ष्म अने वादर अने भेए लेहो होय छे. केम के ने अनंतरोपपन्नक अकेन्द्रिय

मरूपणीयाः, अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाणाम् पर्याप्तकाऽपर्याप्तकभेदयोरभावेन चतुर्विधभेदाऽसम्भवात् द्विपदेन सूक्ष्मवाद्भेदेनेति कथितम् । सामान्यत एकेन्द्रियाः प्रत्येकं चतुष्प्रकारका भवन्ति, सूक्ष्माश्च—वादराश्च, सूक्ष्मा अपि द्विविधाः—पर्याप्तकाश्चाऽपर्याप्तकाश्च तथा—पर्याप्तकवादराः—अपर्याप्तकवादराश्च । परन्तु—अनन्तरोपपन्नकानां पर्याप्तत्वाऽपर्याप्तत्वभेदो नास्ति । अतोऽत्र द्विपदेन—द्विप्रकारकेण भेदेनेति कथितम् । ‘अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइया णं भंते !’ अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! ‘कइकम्म पगडीओ पन्नत्ताओ’ कति प्रकारकाः कर्मप्रकृतयः मज्ञप्ताः कथिता ? इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि ।

और वनस्पतिकायिक के सूक्ष्म वादर ये दो दो भेद होते हैं, क्यों कि जो अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव होते हैं उनमें पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे दो भेद नहीं होते हैं । इसलिये इनके प्रत्येक के जैसे चार भेद पहिले बताये गये हैं वैसा ये चार भेद इनमें नहीं होते हैं । सामान्य एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म और वादर के भेद से दो प्रकार के कहे गये हैं, इनमें सूक्ष्म जीव भी पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार के और वादर जीव भी पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार के बतलाये गये हैं । परन्तु अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों के पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे दो भेद नहीं होते हैं । इसी अभिप्राय को प्रकट करने के लिये ‘एवं दुपएणं भेएणं’ ऐसा सूत्रपाठ सूत्रकारने कहा है । ‘अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवों के ‘कइ कम्म पगडीओ पन्नत्ताओ’ कितनी कर्म प्रकृतियां कही गई हैं ? उत्तर में

‘एवो डोय छे तेओमां पर्याप्त अने अपर्याप्त ओ जे लेहो डोता नथी. तेथी प्रत्येकना चार लेहो पडेला अताओया छे, ओ प्रभाणेना चार लेहो आमनामां डोता नथी. सामान्य ओकेन्द्रिय ओव सूक्ष्म अने आदरना लेहथी जे प्रकारना कडेवामां आवेल छे. आमां सूक्ष्म ओव पणु पर्याप्त अने अपर्याप्तना लेहथी जे प्रकारना कडेला छे परंतु अनन्तरोपपन्नक ओक एकेन्द्रिय वाणा ओवोना पर्याप्त अने अपर्याप्त ओवा जे लेहो डोता नथी. आओ अबिप्राय अताववा भाटे ‘एवं दुपएणं भेएणं’ आ प्रभाणेना सूत्रपाठ सूत्रकारे कइयो छे. ‘अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !’ हे लगवन् अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक ओवोने ‘कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ डेटली कर्म प्रकृतियो कडेवामां आवी छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां गौतमस्वामीने प्रबुश्री कडे छे के

‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અદ્દ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ અદ્દેતિ-અદ્દપ્રકારકાઃ કર્મપ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ કથિતાઃ । ‘તં જહા’ તથથા-‘નાણાવરણિજ્જં જાવ-અંતરાહયં’ જ્ઞાનાવરણીયં યાવદાન્તરાયિકમ્, યાવત્પદેન દર્શનાવરણીય-વેદનીય-મોહનીય-નામ-ગોત્રાણાં ષણ્ણાં કર્મપ્રકૃતીનાં ગ્રહણં ભવતિ । ‘અણંતરોવવન્નગવાયર પુઠ્ઠવીકા-હયાણં ભંતે !’ અનન્તરોપપન્નક વાદરપૃથિવીકાયિકજીવાનાં ભદન્ત ! ‘કહ્ કમ્મ પગહીઓ પન્નત્તાઓ’ કતિ કર્મપ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? इति प्रश्नः ? । મગવાનાહ-‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અદ્દ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ અદ્દ કર્મ પ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ‘તં જહા’ તથથા-‘નાણાવરણિજ્જં જાવ-અંતરાહયં’ જ્ઞાનાવરણીયં યાવદાન્તરાયિકમ્ । યાવત્પદેન દર્શનાવરણીય-વેદનીય-મોહનીય-આયુ-નામ-ગોત્રાણાં-સંગ્રહો ભવતીતિ । ‘एवं जाव-अणंतरोववन्नगवायरवणस्सइकाइयाणंति’

પ્રભુશ્રી કહતે હૈં-‘ગોયમા ! અદ્દ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ હે ગૌતમ ! ઉનકે આઠ કર્મ પ્રકૃતિયાં કહી ગઈ હૈં ? ‘તં જહા’ જો હસ પ્રકાર સે હૈં-‘નાણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાહય’ જ્ઞાનાવરણીય યાવત્ અન્તરાયિક યહાં યાવત્ પદ સે ૨ ‘દર્શનાવરણીય વેદનીય ૩ મોહનીય ૪ આયુ ૫ નામ ૬ ઓર ગોત્ર ૭ હન છ કર્મ પ્રકૃતિયો કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘અણંત-રોવવન્નગવાયર પુઠ્ઠવીકાહયાણં ભંતે । હે ભદન્ત ! અનન્તરોપપન્નક વાદર પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ‘કહ્ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ કિતની કર્મ પ્રકૃતિયાં કહી ગઈ હૈં ? ‘ગોયમા ! હે ગૌતમ ! ‘અદ્દ કમ્મપગહીઓ’ આઠ કર્મ પ્રકૃતિયાં કહી ગઈ હૈં । ‘તં જહા’ જૈસે ‘નાણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાહય’ જ્ઞાનાવરણીય યાવત્ અન્તરાયિક યહાં પર ભી યાવત્ પદ સે ‘દર્શનાવરણીય ૨ વેદનીય ૩ મોહનીય ૪ આયુ ૫ નામ, ૬ ઓર ગોત્ર ૭ ‘હન છહ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘एवं जाव अणं-

‘ગોયમા ! અદ્દ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ હે ગૌતમ તેઓને આઠ કર્મ પ્રકૃતિયો કહેવામાં આવેલ છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે.-

‘નાણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાહયં’ જ્ઞાનાવરણીય યાવત્ અંતરાય યાવત્ પદથી દર્શના વરણીય, મોહનીય, વેદનીય, નામ, ગોત્ર, અને આયુષ્ય આ છ કર્મ પ્રકૃતિયો ગ્રહણ કરાઈ છે. ‘અણંતરોવવન્નગા વાયર પુઠ્ઠવીકાહયાણં ભંતે ! હે ભુગવન અનંતરોપપન્નક વાદર પૃથ્વીકાયિક જીવોને ‘કહ્ કમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ કેટલી કર્મ પ્રકૃતિયો કહેવામાં આવી છે ! ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે-‘ગોયમા ! હે ગૌતમ ! ‘અદ્દકમ્મપગહીઓ પન્નત્તાઓ’ આઠ કર્મ પ્રકૃતિયો કહેવામાં આવેલ છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે ‘નાણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાહય’ જ્ઞાનાવરણીય યાવત્ દર્શનાવરણીય, મોહનીય, વેદનીય, નામ, ગોત્ર અને આયુ

एवं यावत्—अनन्तरोपपन्नक वादरवनस्पति कायिकानामिति । अत्र यावत्पदेन अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादराऽपकायिकानाम् अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादरतेजस्कायिकानाम् अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादरवायुकायिकानां संग्रहो भवति, 'अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति' अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवी कायिकैकेन्द्रियजीवाः खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृतिर्वधन्ति ? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ वंधंति आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतिः ज्ञानावरणीय—दर्शनावरणीय—वेदनीय—मोहनीयनाम—गोत्राऽन्तरायरूपा वधन्ति उत्पत्तेः प्रथमसमये आयुष्कर्मणो बन्धाभावात्

तरोववन्नगा वायरवणस्सइकाइयाणं ति' इसी प्रकार का कथन यावत् अनन्तरोपपन्नक वादर वनस्पतिकायिकों तक के जीवों के जानना चाहिये, यहां यावत्पद से 'अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्म वादर अपकायिक, अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादरतेजस्कायिक, अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्म वादर वायुकायिक और सूक्ष्म वादरवनस्पतिकायिक इन सब का ग्रहण हुआ है । 'अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति' हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकों को कितनी कर्म प्रकृतियों का बन्ध होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ वंधंति' हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीव आयुष्कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं । अर्थात् ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम गोत्र और अन्तराय इन सात कर्म

या आठ कर्म प्रकृतियो डोय छे. 'एव जाव अणंतरोववन्नगा वायरवणस्सइकाइयाण ति' आळ प्रमाणेनु' कथन यावत् अनन्तरोपपन्नक वादर वनस्पतिकायिक सुधीना एवेना संबंधमां पणसमज्जुं. अहियां यावत्पदथी अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादर अपकायिक अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्म वादरतेजस्कायिक, अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्म वादरवायुकायिक, अने सूक्ष्मवादरवनस्पतिकायिक आ अथा ग्रहण कराया छे. 'अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति' हे भगवन् अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथ्वीकायिके डेटली कर्म प्रकृतियोना अंध करे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—'गोयमा ! आउवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ वंधंति' हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय एवे आयुष्कर्मने छोडीने आडीनी सात कर्मप्रकृतियोना अंध करे छे, अर्थात् ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम गोत्र अने अन्तराय आ सात कर्मप्रकृतियोना तेओ

તત્કાલે તદ્ વન્ધનં ન ભવતિ । અપિતુ-અવશિષ્ટાનાં સપ્તાનામેવ પ્રકૃતીનાં વન્ધનં
 ભવતિ । एवं जाव अणंतरोववन्नगवायरवणस्सइकाइयत्ति' एवम् अनन्तरोपप-
 न्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव यावद्-अनन्तरोपपन्नक वादरवनस्पतिकायिका
 अपि आयुष्कवर्जाः सप्तैव कर्मप्रकृतीर्वन्धन्तीति । अत्र यावत्पदेन, अनन्त-
 रोपपन्नकवादरपृथिवीकायिकाऽनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादराऽपिकायिकाऽनन्तरोपपन्नक-
 सूक्ष्मवादरतेजस्कायिकाऽनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादरवायुकायिकाऽनन्तरोपपन्नकसूक्ष्म-
 वनस्पतिकायिकाः संवृहन्ते । 'अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइया णं भंते । 'अन-
 न्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त । 'कइ कम्मपण्डीओ वेदेति, कति

प्रकृतिर्यो का वे बन्ध करते हैं । आयुर्कर्म का ये बन्ध इसलिये नहीं
 करते हैं कि इनके उत्पत्ति के प्रथम समय में आयुर्कर्म का बन्ध
 नहीं होता है इसलिये उस काल में उनके आयुका बन्ध नहीं
 होता है । अतः अवशिष्ट स्नान कर्मप्रकृतियों का ही उनको बन्ध होना
 कहा गया है । 'एवं जाव अणंतरोववन्नग वायरवणस्सइकाइयत्ति'
 अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथिवीकायिक के जैसे ही यावत् अनन्तरोपपन्नक
 वादर वनस्पतिकायिक जीवों के भी आयुर्कर्म को छोड़कर शेष सात
 कर्म प्रकृतियों का ही बन्ध होता है ऐसा जानना चाहिये । यहाँ यावत्
 पद से 'अनन्तरोपपन्नक वादर पृथिवीकायिक, अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म
 एवं वादर तेजस्कायिक, अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म वादरवायुकायिक और
 अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म वनस्पतिकायिक' इन सब का ग्रहण हुआ है ।
 'अणंतरोववन्नग सुहुम पुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपण्डीओ
 वेदेति' हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कितनी

બંધ કરે છે. તેઓ આયુકર્મને બંધ એટલા માટે કરતા નથી કે-તેઓને
 આયુકર્મને બંધ પહેલેથી જ થઈ ગય છે તેથી તે અવસ્થામાં તેઓને આયુ-
 કર્મને બંધ હોતો નથી, તેથી બાકીની સાતકર્મ પ્રકૃતિઓને જ બંધ આમને
 હોય છે 'एवं जाव अणंतरोववन्नगवायरवणस्सइकाइयत्ति' अनंतरोपपन्नक
 सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जवनी जेमज यावत् अनंतरोपपन्नक वादर वनस्पति
 कायिक जवने पण् आयुर्कर्मने छोडीने बाकीनी सातकर्म प्रकृतियोने ज
 बंध होय છે, તેમ સમજવું. અહિયાં યાવત્પદથી "અનંતરોપપન્નક વાદર
 પૃથ્વીકાયિક અનંતરોપપન્નક સૂક્ષ્મ અને વાદર પૃથ્વીકાયિક, અનંતરોપપન્નક
 સૂક્ષ્મ વાદર વાયુકાયિક અને અનંતરોપપન્નક સૂક્ષ્મ વનસ્પતિકાયિક આ
 બધા ગ્રહણ કરાયા છે. 'अणंतरोववन्नग सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ
 कम्मपण्डीओ वेदेति' હે ભગવન અનંતરોપપન્નક સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જવ

कर्मप्रकृती वेदयन्ति ? इति प्रकृतीनां वेदनविषयकः प्रश्नः । अगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा’ हे गौतम ! चउदस कम्मपगडीओ वेदे’ति’ चतुर्दश प्रकारिकाः कर्मप्रकृती वेदयन्ति । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘नाणावरणिज्जं’ ज्ञानावरणीयम्, ‘तहेव जाव’ पुरिसवेयवज्जं’ तथैव यावत्पुरुषवेदबन्धम् । ज्ञानावरणीयादारभ्याऽन्तराय पर्यन्तमष्ट ८, तथा श्रोत्रेन्द्रियबन्धं—चक्षुरिन्द्रियबन्धं—घ्राणेन्द्रियबन्धं—जिह्वेन्द्रिय बन्धं—स्त्रीवेदबन्धं—पुरुषवेदबन्धम् । (६) १४ एतेषा अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मपृथिवी कायिकानां चतुर्दश कर्मप्रकृतीनां वेदनं भवति । येन कर्मणा स्पर्शनेन्द्रियस्य लासो न भवति तादृशं स्पर्शनेन्द्रियबन्धं कर्म—एकेन्द्रियाणां न भवति । तथात्वे च— एकेन्द्रियत्वस्यैव व्याघातप्रसङ्गात् । तथा—नपुंसकबन्धकर्मणाऽपि नास्ति नपुंसकवेद- मात्रस्यैव—एकेन्द्रिये सत्त्वात् । ‘एवं जाव अगंतरोववन्नग वायर—वणस्सइकाइयत्ति’

कर्म प्रकृतियोंका वेदन करते हैं ? ‘गोयमा ! चउदस कम्मपगडीओ वेदे’ति’ हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव चौदह कर्म प्रकृतियों का वेदन करते हैं । ‘तं जहा’ वे चौदह कर्मप्रकृतियों ये हैं—‘नाणावरणिज्जं’ ज्ञानावरणीय १, ‘तहेव जाव पुरिसवेयवज्जं’ तथैव यावत् पुरुष वेद बन्ध यहाँ यावत् शब्द से यह सबझाया गया है कि ज्ञानावरणीय कर्म से लेकर अन्तराय पर्यन्त आठ प्रकृतियां तथा श्रोत्रेन्द्रिय बन्ध ९ चक्षुरिन्द्रिय बन्ध १० घ्राणेन्द्रिय बन्ध ११ जिह्वेन्द्रिय बन्ध १२, स्त्रीवेद बन्ध १३, और पुरुषवेद बन्ध १४, एकेन्द्रिय जीव के स्पर्शनेन्द्रिय बन्ध कर्म नहीं होता है, यदि इस बन्ध कर्मका उनके उदय जाना जावे तो उनमें एकेन्द्रियत्वका खद्दाव नहीं बन सकता तथा नपुंसकवेद बन्ध कर्म भी इनके नहीं होता है । ‘एवं जाव अगंत-

केटली कर्म प्रकृतियोंका वेदन करे छे ? ‘गोयमा ! चउदस कम्मपगडीओ वेदे’ति’ छे गौतम ! अनंतरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव यौद कर्म प्रकृतियोंका वेदन करे छे. ‘तं जहा’ ते यौदकर्म प्रकृतियों आ प्रमाणे छे—‘नाणावरणिज्जं’ ज्ञानावरणीय ‘तहेव जाव पुरिसवेयवज्जं’ तथैव यावत् पुरुष वेदने छोडीने अडियां यावत्पदथी ओ समलब्धुं छे के—ज्ञानावरणीय कर्मथी लडने अंत- राय सुधीनीआठ कर्म प्रकृतियों तथा श्रोत्रेन्द्रियावरणु अक्षु धं द्रियावरणु १० घ्राणेन्द्रियावरणु ११ जिह्वेन्द्रियावरणु १२ स्त्रीवेदावरणु १३ अने पुरुष वेदा वरणु १४ एकेन्द्रिय एवने स्पर्शनेन्द्रियावरणु कर्म छोटुं नथी केम के- जे आ आवरणु तेओमां मानवामां आवे तो तेओमा ओकेन्द्रिय पणाने सहभाव न् गनी शके नहीं तथा नपुंसक वेदावरणु पणु तेओमां छोटुं नथी. केम के—ओकेन्द्रियोंमां नपुंसकवेद मात्रने न सहभाव रहे छे.

एवं यावद्-अनन्तरोपपन्नक वनस्पतिकायिका अपीति । अत्र यावत्पदेन अनन्तरो-
पपन्नकवादरपृथिवीकायिकाऽनन्तरोपपन्नकसूक्ष्माण्डिकायिकैकेन्द्रियादारभ्याऽनन्तरो-
पपन्नकसूक्ष्मवनस्पतिकायिकैकेन्द्रियान्तजीवानां ग्रहणं भवति । एते सर्वेऽपि एके-
न्द्रिया ज्ञानावरणीयादि पूर्व प्रदर्शित चतुर्दशकर्मप्रकृतीनां वेदका भवन्तीति भावः ।

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त

रोववन्नगा वायरवणस्सहकाइयत्ति’ इसी प्रकार से यावत् अनन्तरो-
पपन्नक वादर वनस्पतिकायिक जीव भी इन्हीं १४ कर्म प्रकृतियों का
वेदन करते हैं ऐसा जानना चाहिये, यहां यावत् पदसे अनन्तरोपपन्नक
वादर पृथिवीकायिक ‘अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म अण्डिकायिकैकेन्द्रिय से लेकर
अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मवनस्पतिकायिकैकेन्द्रिय पर्यन्त के जीवों’ का ग्रहण
हुआ है ये सब भी एकेन्द्रिय जीव ज्ञानावरणीयादि पूर्व प्रदर्शित
‘चौदह कर्मप्रकृतियों’ के वेदक होते हैं । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते !’ हे
भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक विशेषण विशिष्ट ऐसे सूक्ष्म वादर भेदवाले
पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय जीवों के कर्मप्रकृतियों
के सत्व, वन्ध एवं वेदन के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह

‘एवं’ नाव अणंतरोवन्नग वायरवणस्सहकाइयत्ति’ ओञ् प्रभाणु
यावत् अनंतरोपपन्नक वादर वनस्पतिकायिक एव पणु आञ् चौदकर्म
प्रकृतियानुं वेदन करे छे. तेम समञ् देवुं लेधञ्. अडियां यावत्पदथी अनंतरो-
पपन्नक सूक्ष्म अण्डिकायिक अकेन्द्रियथी लध ने अनंतरोपपन्नक वादरवायुकायिक
अकेन्द्रियसुधीना एवे। अडणु कराया छे. अे अथा अेकधंद्रियवाणा एवे। ज्ञाना-
वरणीय विगेरे पडेला कडेल १४ चौदकर्म प्रकृतिये।ना वेदक डाय छे.
तेम समञ्नुं.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक विशेषणवाणा
अेवा सूक्ष्म अने वादर लेदवाणा पृथ्वीकायिके.थी लधने वनस्पतिकायिक अेक
धन्द्रिय एवे।ना कर्म प्रकृतिना सत्व, अंधन अने वेदनना संअंधमां आप
देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. हे भगवन्

अनन्तरोपपन्नकसूक्ष्मवादरभेदभिन्नानां पृथिव्यादि वनस्पतिकायिकान्तानामेकेन्द्रियजीवानां कर्मप्रकृतिसत्त्वबन्धनवेदनविषये यद् देवानुप्रियेण कथितम्, तत्सर्वम् एवमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरतीति ॥३३-१॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री
“भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् त्रयस्त्रिंशत्तमशतकस्य
द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३३-२॥

सब सर्वथा सत्य ही है २। ऐसा कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर वे संयम और तप से आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तैत्तिरीयसर्वे शतक का दूसरा उद्देशक समाप्त ॥३३-२॥

आप देवानुप्रियनु कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्री ने वंदना करी तेन्नेने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेन्ने संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल महाराजकृत ‘भगवतीसूत्र’ नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तैत्तिरीयसर्वे शतकने भीजे उद्देशे समाप्त ॥३३-२॥



मूलम्—कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता ?
 गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता तं जहा—
 पुढवीकाइया एवं चउक्कओ भेओ जहा ओहि उद्देसए । परंपरो-
 ववन्नग अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपग-
 डीओ पन्नत्ताओ एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहि उद्देसए
 तहेव निरवसेसं भाणियद्वं जाव चउहस वेदोति । सेवं भंते !
 सेवं भंते ! त्ति ॥३३-३॥

अणंतरोवगाढा जहा अणंतरोववन्नगा ॥३४-४॥

परंपरोवगाढा जहा परंपरोववन्नगा ॥३३-५॥

परंपराहारगा जहा अणंतरोववन्नगा ॥३३-६॥

परंपराहारगा जहा परंपरोववन्नगा ॥३३-७॥

अणंतरपज्जत्तगा जहा—अणंतरोववन्नगा ॥३३-८॥

परंपरपज्जत्तगा जहा परंपरोववन्नगा ॥३३-९॥

चरिमा वि जहा—परंपरोववन्नगा तहेव ॥३३-१०॥

एवं अचरिमा वि ॥३३-११॥

एवं एए एमारस उद्देसगा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति-
 जाव विहरइ ॥३३-१२॥

पढमं एगिंदियत्तयं समत्तं ॥

छाया—कतिविधाः खलु भदन्त ! परम्परोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
 गौतम ! पञ्चविधाः परम्परोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—पृथिवीका-
 यिकाः, एवं चतुष्को भेदो यथा—औधिकोद्देशकः । परम्परोपपन्नकोऽपर्याप्तं सूक्ष्म-
 पृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः । एवमेतेनाऽभिलापेन
 यथा—औधिकोद्देशके तथैव—निरवशेषं भणितव्यम्, यावच्चतुर्दश वेदयन्ति । तदेवं
 भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३३३॥

अनन्तरावगाढाः यथा परम्परोपपन्नकाः ॥३३४॥ परम्परावगाढाः यथा—
 परम्परोपपन्नकाः ॥३३५॥ अनन्तराहारका यथा—अनन्तरोपपन्नकाः ॥३३६॥

परम्पराहारका यथा परम्परोपपन्नकाः ॥३३:७ अनन्तरपर्याप्तकाः यथा अनन्त-
रोपपन्नकाः ॥३३:८॥ परम्परपर्याप्तकाः यथा-परम्परोपपन्नकाः ॥३३:९॥
चरमा अपि यथा-परम्परोपपन्नकाः तथैव ॥३३:१०॥ एवम्-अचरमा अपि
॥३३:११॥ एवमेते-एकादशोद्देशकाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति
यावद् विहरति ॥३३:११॥

त्रयस्त्रिंशत् शतकस्य प्रथमश्लोकेन्द्रियशतकं समाप्तम् ॥

टीका-‘कइविहा णं भंते !’ कतिविधाः-कियन्तः खलु भदन्त ! ‘परंपरो-
ववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ परम्परोपपन्नका एकेन्द्रिया जीवाः प्रज्ञप्ताः
कथिता इति प्रश्नः । भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंच-
विहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः-पञ्चप्रकारकाः परंपरोपप-
न्नकाः एकेन्द्रियजीवाः प्रज्ञप्ताः-कथिताः के ते पञ्च तत्राह-‘तं जहा’ इत्यादि
‘तं जहा’ तद्यथा-‘पृथ्वीकाइया एवं चउक्कओ भेओ जहा ओहिउद्देसए’ पृथिवी-
कायिका एवं चतुष्को भेदः यथा-औधिके सामान्ये एतस्यैव शतकस्य प्रथमोद्देशके ।

--शतक ३३ उद्देशकश तृतीय

टीकार्थ-‘कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भदन्त !
परम्परोपपन्नक एकेन्द्रियजीव कितने कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! पंचविहा परं-
परोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव
पांच प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’ वे इस प्रकार से हैं-‘पृथ्वी काइया
एवं चउक्कओ भेओ जहा ओहिउद्देसए’ पृथिवीकायिक, अप्कायिक,
तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक इन सब के चार-चार
भेद होते हैं । जैसा कि औधिक उद्देशक में कहा गया है । अर्थात्
पृथिवीकायिक सूक्ष्म और बादर के भेद से मूल में दो प्रकार के कहे हैं,

॥त्रीण उद्देशाने आरंभ--

‘कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ इत्यादि

टीकार्थ-हे भगवन् परंपरोपपन्नक एक एन्द्रियवाणा एवे इटला
कडेवामां आव्या छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री कडे छे के-‘गोयमा ! पंचविहा
परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! परंपरोपपन्नक एक एन्द्रिय-
वाणा एवे पांचप्रकारना कडेवामां आव्या छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रभाण्णे
छे.-‘पृथ्वीकाइया एवं चउक्कओ भेओ जहा ओहि उद्देसए’ पृथ्वीकायिक,
अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक आ अधाना चार
चार लेहे होय छे. ते ले प्रभाण्णे औधिक उद्देशमां कथा छे, ते प्रभाण्णे समज्वा.
अेटवे के-पृथ्वीकायिक सूक्ष्म अने बादरना लेदथी जे प्रकारना छे. सूक्ष्ममां

पृथिवीकायिका यावद् वनस्पतिकायिकाः । पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिकायिक-
भेदाद् एकेन्द्रिया पञ्च प्रकारका भवन्ति । चतुष्को भेद इति पृथिवीकायादारभ्य
वनस्पतिकायपयज्जानां पञ्चानां चत्वारो भेदा यथा—सूक्ष्मा, वादराः, अप-
र्याप्तकाः पर्याप्तकाश्चेति, चतुर्भेदमिन्ना पञ्चविधा अप्येकेन्द्रिया औधिकोद्देशवत्
पठनीयाः ‘परंपरोवन्नग अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयाणं भंते !’ परम्परोपपन्न-
काऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवानां भदन्त ! ‘कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’
कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ता इति प्रश्नः । भगवानाह—‘एवं एएणं’ इत्यादि । ‘एवं एए-
णं अभिलावेणं जहा ओहिए उद्देसए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं’ एवमेतेन
उपरि प्रदर्शिताभिलापेन, यथा—औधिके, एतत् शतकीय प्रथमोद्देशके कथितम्,
तथैव निरवशेषं सर्वमपि भणितव्यम् ।

क्रियत्यन्तमौधिकोद्देशक इह पठनीयस्तत्राह—‘जाव चउद्दसवेदे’ति’ यावत्—

सूक्ष्म के भी पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे दो भेद हैं तथा वादर के भी
पर्याप्त और अपर्याप्त दो भेद हैं । इस प्रकार से पांचो प्रकार के एके-
न्द्रिय जीव चार-चार भेद वाले होते हैं ।

‘परंपरोवन्नग अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपग-
डीओ पन्नत्ताओ’ हे भदन्त । परम्परोपपन्नक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीका-
यिक के कितनी कर्म प्रकृतियां कही गई हैं ? ‘एवं एएणं अभिलावेणं
जहा ओहिए उद्देसए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं’ हे गौतम ! इस अभि-
लाप द्वारा जैसा औधिक उद्देशक में—इसी शतक के प्रथम उद्देशक में
कहा गया है वैसा ही कथन यहां पर करना चाहिये और वह कथन
‘जाव चउद्दस वेदे’ति’ यावत् वे १४ कर्म प्रकृतियों का वेदन करते हैं

पणु पर्याप्त अने अपर्याप्त एवा लेहो डोय छे. तथा वादरमां पणु पर्याप्त
अने अपर्याप्त एवा के लेहो थाय छे. आ रीते पांचे प्रकारना एक छ’न्द्रिय
वाणा एवे आर-आर प्रकारना लेहवाणा डोय छे.

‘परंपरोवन्नग अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ’ हे लगवन् परंपरोपपन्नक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकाने क्कटली
कर्म प्रकृतियो कही छे ? ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिए उद्देसए तहेव
निरवसेसं भाणियव्वं’ हे गौतम ! आ अभिलाप द्वारा औधिक उद्देशाभां-
अद्दे के आ शतकना पडेला उद्देशाभां कडेल छे, एण प्रमाणेणुं
सधणुं कथन अडियां कही देवुं. अने ते कथन यावत् ‘जाव चउद्दस
वेदे’ति’ तेओ औद्धकर्म प्रकृतियोनुं वेदन करे छे. आ कथन सुधी कडेवुं लेधअ.

चतुर्दश कर्मपकृती वेदयन्ति, एतत्पर्यन्त सौधिकोद्देशकइह पठनीयः । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! परम्परोपपन्नके केन्द्रियविषये यद्देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सर्वथैव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥

त्रयस्त्रिंशत्तमे शते प्रथमे—एकेन्द्रियशते एकादशोद्देशकयुते
तृतीयोद्देशकः समाप्तः ३३।३।

'अणंतरोवगाढा जहा—अणंतरोववन्नगा' अनन्तरावगाढा एकेन्द्रियजीवाः

यहां तक कहना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आप देवानुप्रियने परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय के विषय में यहां कहा है वह सब सर्वथा सत्य है । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू०१॥

तेतीसवे शतक्रका तृतीय उद्देशक समाप्त ॥३३-३॥

'अणंतरोवगाढा जहा अणंतरोववन्नगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—अनन्तरावगाढा एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में कथन जैसा अन्तरोपपन्नक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में किया गया है वैसा ही है । प्रथम समय वे अवगाढ हुए जीव ही अनन्तरावगाढ कहे गये हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा यह कथन आप देवानुप्रियने

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रिये परम्परोपपन्नक एक एकेन्द्रियवाणा श्रवणा संभ्रमं ने कथन कहेला छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कथा वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थानपर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥त्रीजे उद्देशे समाप्त ॥३३-३॥

योथा उद्देशाने प्रारंभ—

'अणंतरोवगाढा जहा अणंतरोववन्नगा' इत्यादि

टीकार्थ—अनंतरावगाढ एक एकेन्द्रिय श्रवणा संभ्रमं कथन अनंतरोपपन्नक एकेन्द्रिय श्रवणा संभ्रमं कहेवां आवेला कथन प्रमाणे न छे, पहेला समयमां अवगाढ थयेला श्रव न अनंतरावगाढ कहेवाय छे.

यथा—अनन्तरोपपन्नकाः कथितास्तथैव—ज्ञेया अनन्तरावगाढा एकेन्द्रियाः । प्रथम-
समयावगाढा अनन्तरावगाढाः कथ्यते । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३३-४॥
‘परंपरोवगाढा जहा—परंपरोववन्नगा’ परम्परावगाढाः यथा—परम्परोपप-
न्नकाः । परम्परोपपन्नकवदेव—परम्परावगाढैकेन्द्रियाणामपि वक्तव्यता ज्ञातव्या ।
अत्र सर्वापि वक्तव्यता परम्परोपपन्नकैकेन्द्रियप्रकरणवदेव ज्ञातव्येति संक्षेपः ॥
इति पञ्चमोद्देशकः ॥३३५॥

‘अणंतराहारगा जहा—अणंतरोववन्नगा’ अनन्तराहारकाः एकेन्द्रियजीवाः
अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियवदेव ज्ञातव्याः ॥३३६॥ इतिषष्ठोद्देशकः ॥

क्रिया है वह सब सर्वथा सत्य ही है ऐसा कहकर गौतमने प्रभुश्री
को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे
संयम और तप से आत्मा को आवृत्त करते हुए अपने स्थान पर
विराजमान हो गये ।

तैत्तिरीय वेद शतक का चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥३३-४॥

‘परंपरोवगाढा जहा परंपरोववन्नगा’ परंपरावगाढ एकेन्द्रियों की
वक्तव्यता परम्परोपपन्नक एकेन्द्रियों के जैसी ही है ।

॥ ३३ वे शतक का पंचम उद्देशक समाप्त ॥

तथा ‘अणंतराहारगा जहा अणंतरोववन्नगा’ अनन्तरोपपन्नक एके-

‘सेव’ अते । सेव’ अते ति’ है लगवन आपदेवानुप्रिये आ अनंतराव-
गाढ एवना सणधमां वे प्रभाणुं कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा
सत्य न छे. है लगवन आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ
प्रभाणु कहीने गौतमस्वामीछे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कथा वंदना
नमस्कार करीने ते पश्री तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने आवृत्त
करता थका पोताना स्थानपर विराज मान थया. ॥सू०१॥

॥योथो उद्देशो समाप्त ॥३३-४॥

पांचम उद्देशानो प्रारंभ—

‘परंपरोगाढा जहा परंपरोववन्नगा’ धत्यादि

टीकाथ—परंपरावगाढ ऐकेन्द्रिय एवोनुं कथन परंपरोपपन्नक ऐक
धन्द्रियवाणा एवोना कथनप्रभाणुं समणुं.

॥पांचमो उद्देशो समाप्त ॥३३-५॥

छट्ठा उद्देशानो प्रारंभ—

‘अणंतराहारगा जहा अणंतरोववन्नगा’ धत्यादि

टीकाथ—अनंतरोपपन्नक ऐक धन्द्रियवाणा एवना कथन प्रभाणुं अनंतरा-

‘परंपराहारगा जहा-परंपरोववन्नगा’ परम्पराहारका यथा-परम्परोपपन्नका एकेन्द्रिया स्तथैव ज्ञातव्याः । परम्परोपपन्नकैकेन्द्रियमकरणवदेव, ज्ञातव्यमिति भावः । ३३।७॥ इतिसप्तमोद्देशकः ॥

‘अणंतरपञ्जत्तगा जहा-अणंतरोववन्नगा’ अनन्तरपर्याप्तकैकेन्द्रियजीवां अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियवदेव पृथिव्यादि यावद् वनस्पतिपर्यन्तपञ्चभेदभिन्ना तथा-सूक्ष्मवादरभेदभिन्ना ज्ञातव्याः ॥३३८ अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥

‘परंपरपञ्जत्तगा जहा-परंपरोववन्नगा’ परंपर पर्याप्तका एकेन्द्रिया परम्परोपपन्नकैकेन्द्रियवदेव पृथिव्यादि वनस्पत्यन्त पञ्चभेदभिन्नाः, तथा सूक्ष्मवादरन्द्रियों के जैसी वक्तव्यता अन्नराहारक एकेन्द्रिय जीवों की है ऐसा जानना चाहिये ॥ ३३ वें शतक का षष्ठ उद्देशक समाप्त ॥

‘परंपराहारगा जहा परंपरोववन्नगा’ परंपरोपपन्नक एकेन्द्रियों के जैसी वक्तव्यता परम्पराहारक एकेन्द्रिय जीवों की है ।

३३ वें शतक का सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

‘अणंतरपञ्जत्तगा जहा अणंतरोववन्नगा’ अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रियों के जैसी वक्तव्यता अन्तरपर्याप्तक एकेन्द्रिय जीवों की है ।

॥ ३३ वें शतक का अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

‘परंपरपञ्जत्तगा जहा परंपरोववन्नगा’ परंपरपर्याप्तक पृथिवी

हारक ऐक्येन्द्रियवाणा लुवेनुं कथन समञ्जसुं. ॥सू०१॥

॥छठे उद्देशे समाप्त ॥३३-६॥

सातमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘परंपराहारगा जहा परंपरोववन्नगा’ इत्यादि

टीकार्थ—परंपरोपपन्नक ऐक्येन्द्रियवाणा लुवेना कथन प्रमाणे परंपराहारक ऐक्येन्द्रियवाणा लुवेनुं कथन समञ्जसुं. ॥सू०१॥

॥सातमे उद्देशे समाप्त ३३-७॥

आठमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘अणंतरपञ्जत्तगा जहा अणंतरोववन्नगा’ इत्यादि

टीकार्थ—अनंतरोपपन्नक ऐक्येन्द्रियवाणा लुवेना कथन प्रमाणे अनंतपर्याप्तक ऐक्येन्द्रिय लुवेनुं कथन समञ्जसुं ॥सू०१॥

॥आठमे उद्देशे समाप्त ॥३३-८॥

नवमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘परंपरपञ्जत्तगा जहा परंपरोववन्नगा’ इत्यादि

टीकार्थ—परंपरपर्याप्तक पृथ्वीकायिक ऐक्येन्द्रियवाणा लुवेना कथनथी

‘एवं अचरिमापि’ एवं परम्परोपपन्नक पृथिव्याद्येकेन्द्रियवद्देव अचरमपृथिव्याद्येकेन्द्रियजीवा अपि ज्ञातव्या इति ॥३३॥११॥

‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ एवमुपर्युक्त प्रदर्शितक्रमेण—एकेन्द्रियजीवानामेकादश सामान्य एकेन्द्रियजीवानां प्रथम औधिकोद्देशकः १, अनन्तरोपपन्नकानां मेकेन्द्रियाणां द्वितीयोद्देशकः २॥ परम्परोपपन्नकानां तृतीयोद्देशकः ३॥, अनन्तरावगाढानां चतुर्थः ४, परम्परावगाढानां पञ्चमोद्देशकः ५, अनन्तराहारकाणां

शतक ३३ उद्देशक ११—

‘एवं अचरिमा वि’ परम्परोपपन्नक पृथिव्यादि एकेन्द्रिय जीवों के जैसा ही अचरम पृथिवी आदि एकेन्द्रिय जीवों का कथन जानना चाहिये ।

॥ ३३ वें शतक का ११ वां उद्देशक समाप्त ॥

‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ इस प्रकार उपर्युक्त प्रदर्शित क्रम के अनुसार एकेन्द्रिय जीवों के ११ उद्देशक हैं—इनमें प्रथम उद्देशक सामान्य रूप से एकेन्द्रिय जीवों का है । अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों का द्वितीय उद्देशक है । परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों का तृतीय उद्देशक है । अनन्तरावगाढ एकेन्द्रिय जीवों का चतुर्थ उद्देशक है । परम्परावगाढ

॥अगियारमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘एवं अचरिमा वि’ धत्यादि

टीकार्थ—परंपरोपपन्नक पृथ्वीकायिक एक धन्द्रियवाणा भवोना कथन प्रमाणे न अचरम पृथ्वीकायिक विगेरे एक धन्द्रियवाणा भवोनु कथन समञ्जसु ॥सू०१॥

॥अगियारमे उद्देशो समाप्त ॥३३ ११

गारमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ धत्यादि

टीकार्थ—आ रीते उपर अतावेत कम प्रमाणे एक धन्द्रियाणा भवोना संभंधमां अगियार ११ उद्देशाओ कल्या छे. तेमां पडेते उद्देशो सामान्य पञ्चाथी एक धन्द्रिय भवोना संभंधमां कलेल छे. १ अनंतरोपपन्नक एक धन्द्रियवाणा भवोना संभंधमां भीले उद्देशो कल्यो छे. २ परंपरोपपन्नक एक धन्द्रियवाणा भवोना संभंधमां त्रीजे उद्देशो कलेल छे. ३ अनंतरावगाढ एक धन्द्रियवाणा भवोना संभंधमां चोथो उद्देशो कलेल छे ४ परंपरावगाढ एक धन्द्रियवाणा भवोना संभंधमां पायमे उद्देशो कलेल छे. ५

केन्द्रियाणां षष्ठोद्देशकः ६। परम्पराहारकाणां सप्तमोद्देशकः ७। अनन्तरपर्याप्त-
काना मष्टमोद्देशकः । परम्परपर्याप्तकानामेकेन्द्रियाणां नवमोद्देशकः ९। चरमै-
केन्द्रियाणां दशमोद्देशकः १० अचरमैकेन्द्रियाणामेकादशोद्देशकः ॥११॥ तदेवमेते
सङ्कलनया—एकादशोद्देशका भवन्तीति ॥

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति
यावद् विहरति । हे भदन्त ! अनन्तरावगाढैकेन्द्रियादारभ्याऽचरमैकेन्द्रियपर्यन्त-
जीवानां विषये यद् देवानुप्रियेण कथितम्, तत्सर्वं सर्वथैव सत्यम्, इति कथयित्वा
गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं
भावयन् विहरतीति । इति त्रयस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ।

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि — ‘जैनाचार्य’
पूज्यश्री-घासीलालब्रतिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां त्रयस्त्रिंशत्तमे शतके एकादशोद्देशकः समाप्तः ॥३३-११॥

एकेन्द्रिय जीवों का पाँचवा उद्देशक है, अनन्तराहारक एकेन्द्रिय जीवों
का षठा उद्देशक है । परम्पराहारक एकेन्द्रिय जीवों का सातवा उद्दे-
शक है । अनन्तर पर्याप्तक एकेन्द्रिय जीवों का आठवां उद्देशक है ।
परम्पर पर्याप्तक एकेन्द्रिय जीवों का नौवां उद्देशक है । चरम एकेन्द्रिय
जीवों का १० वां उद्देशक है । तथा—अचरम एकेन्द्रिय जीवों का ११
वां उद्देशक है । इस प्रकार से ये ११ उद्देशक एकेन्द्रिय जीवों के सम्ब-
न्ध में इस प्रथम एकेन्द्रिय शतक में हैं । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’
हैं भदन्त ! अनन्तरावगाढ एकेन्द्रिय से लेकर अचरम एकेन्द्रिय पर्यन्त

अनन्तराहारक एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां छठो उद्देशो कडेल छे. ६
परंपराहारक एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां सातमो उद्देशो कडेल छे. ७
अनन्तर पर्याप्त एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां आठमो उद्देशो कडेल छे. ८
परंपरपर्याप्तक एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां नवमो उद्देशो कडेल छे. ९
चरम एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां १० दसमो उद्देशो कडेल छे. १०
तथा अचरम एक एकेन्द्रिय जीवोना संभंधमां अगियारमो उद्देशो कडेल छे.
११ आ रीते आ अगियार उद्देशोआ एक एकेन्द्रियवाणा जीवोना संभंधमां
आ पहिले एक एकेन्द्रिय शतकमां कडेल छे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ छे लगवन् अनन्तरावगाढ एक एकेन्द्रियवाणा
जीवोनी तथेने अचरम एक एकेन्द्रिय सुधीना जीवोना संभंधमां आप देवानु-

के जीवों के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है। इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को बन्दना और नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भाविन करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तेतीसवे शतक का अग्यारहवां उद्देशक समाप्त ॥३३—११॥

॥ प्रथम एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

प्रिये जे कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. हे लगवन् आ विषयमां आप देवानुप्रिये कहेल सधणुं सत्य ज छे. आ प्रमाणे कहीने गौतम-स्वाभीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्था. वंदना नमस्कार करीने ते यही तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तेतीसवा शतकने अग्यारहवा उद्देशो समाप्त ॥३३—११॥

॥पहेलुं ओकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥



अथ द्वितीयमेकेन्द्रियशतम्

अथ त्रयस्त्रिंशत्तमे शते प्रथमशतं व्याख्याय क्रमप्राप्तं द्वितीय अतमारभते, तस्येदं सूत्रम् 'कइविहा णं भंते' इत्यादि ।

मूलम्—कइविहा णं भंते ! कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता । तं जहा—पुढवीकाइया जाव—वणस्सइकाइया । कणहलेस्सा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता । तं जहा—सुहुमपुढवीकाइया य वायरपुढवीकाइया य । कणहलेस्सा णं भंते ! सुहुमपुढवीकाइया कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं चउक्क भेओ जहेव ओहि उद्देसए जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

कणहलेस्सा अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं चेव एएणं अभिलावेणं जहेव—ओहि उद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव वेदेति सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति

कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नग कणहलेस्स एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा कणहलेस्सा एगिंदिया । एवं एएणं अभिलावेणं तहेव दुपयो भेओ जाव वणस्सइकाइय त्ति । अणंतरोववन्नग कणहलेस्स सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं एएणं अभिलावेणं जहा—ओहिओ अणंतरोववन्नगाणं उद्देसओ तहेव जाव वेदेति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता । तं जहा—पुढवीकाइया० एवं एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ जाव वणस्सइकाइयत्ति ।

परंपरोववणग कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुठवीकाइयाणं
भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ एवं एएणं अभिला-
वेणं जहेव ओहिओ परंपरोववणग उहेसओ तहेव जाव वेदेति ।
एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहि एगिंदियसए एकारस
उहेसगा भणिया तहेव कणहलेस्ससए वि भाणियव्वा जाव
अचरिमकणहलेस्सा एगिंदिया ॥सू० १॥

विइयं एगिंदियसयं समत्तं

छाया--कतिविधाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
गौतम ? पञ्चविधाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा-पृथिवीकायिकाः
यावद् वनस्पतिकायिका, कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! पृथिवीकायिकाः कतिविधाः
प्रज्ञप्ताः ? द्विविधाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा-सूक्ष्म पृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवी
कायिकाश्च ।

कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ?
गौतम ! एवमेतेनाऽभिलापेन चतुष्क भेदो यथैव-औघिकोद्देशके यावद् वनस्पति-
कायिका इति ।

कृष्णलेश्यापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः
प्रज्ञप्ताः ? एवमेव एतेनाभिलापेन यथैव-औघिकोद्देशके तथैव प्रज्ञप्ताः । तथैव-
बंधनन्ति, तथैव, वेदयन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

कतिविधाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यैकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
गौतम ! पञ्चविधा अनन्तरोपपन्नका कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः, एवमेतेन अभिलापेन
तथैव-द्विपदो भेदः, यावद् वनस्पतिकायिका इति । अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य
सूक्ष्म पृथिवीकायिकानां भदन्त । कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? एवमेतेनाऽभिला-
पेन यथा औघिकोऽनन्तरोपपन्नकानाम्, उद्देशकस्तथैव यावद्वेदयन्ति । तदेवं
भदन्त । तदेवं भदन्त । इति ।

कतिविधाः खलु भदन्त ! परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः
प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधाः परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः
तद्यथा-पृथिवीकायिकाः, एवमेतेनाऽभिलापेन, तथैव-चतुष्कभेदो यावद् वन-
स्पतिकायिका इति ।

परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त । कति
कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? एवमेतेनाऽभिलापेन यथैव औघिकः परम्परोपपन्नको-

દેશક સ્તથૈવ-યાવદ્ વેદયન્તિ । એવથેતેનાઽપિલાપેન યથૈવ-ઔધિકૈકેન્દ્રિયશતે
 એકાદશ ઉદેશકા મણિતા સ્તથૈવ-કૃષ્ણલેશ્યશતેઽપિ મણિતવ્યાઃ જાવ અચરમ
 કૃષ્ણલેશ્યા એકેન્દ્રિયાઃ ॥મૂ० ૧॥

इति द्वितीयमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥

ટીકા-‘કહ્વિહા ણં મંતે । કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પન્નત્તા’ કતિવિધાઃ કતિ
 પ્રકારકાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કૃષ્ણલેશ્યા એકેન્દ્રિયજીવાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ-કથિતાઃ इति
 પ્રશ્નઃ । મગધનાહ-‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘પંચવિહા કળહ-
 લેસ્સા ઇગિંદિયા પન્નત્તા’ પશ્ચવિધાઃ પશ્ચપ્રકારકાઃ કૃષ્ણલેશ્યા એકેન્દ્રિયજીવાઃ
 પ્રજ્ઞપ્તા-કથિતાઃ । ‘તં જહા’ તથથા-‘પુઠ્ઠવીકાહ્યા જાવ-વળસ્સહકાહ્યા’
 પૃથિવીકાયિકાઃ કૃષ્ણલેશ્યા એકેન્દ્રિયજીવા યાવદ્ વનરપતિકાયિકાઃ કૃષ્ણલેશ્યા
 એકેન્દ્રિયજીવાઃ । અત્ર યાવત્પદેનાપ્કાયિક-તેજસ્કાયિક-વાયુકાયિકાનાં સંગ્રહો
 મર્વતિ । તથા ચ-પૃથિવ્યપ્તેજો વાયુવનસ્પતિભેદેન કૃષ્ણલેશ્યૈકેન્દ્રિયજીવા,
 પશ્ચપ્રકારકા મર્વન્તિ इति ।

૨૩ વે શતક મેં પ્રથમ એકેન્દ્રિય શતક વ્યાખ્યાત કરકે અબ ક્રમ
 પ્રાપ્ત દ્વિતીય શતક પ્રારંભ કિયા જાતા હૈ-

‘કહ્વિહાણં મંતે ! કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ-‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે મદન્ત !
 કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિય જીવ કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈ ? ઉત્તર
 મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈ-‘પંચવિહા કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ગૌતમ !
 કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિય જીવ પાંચ પ્રકાર કે કહે ગયે હૈ । ‘તં જહા’
 જો હસ પ્રકાર સે હૈ-‘પુઠ્ઠવીકાહ્યા જાવ વળસ્સહકાહ્યા’ પૃથિવીકાયિક
 યાવત્ વનસ્પતિકાયિક, થઈ યાવત્ ગ્રહ સે ‘અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક
 ઓર વાયુકાયિક’ હન જીવો’ કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । હસ પ્રકાર પૃથિવી-

બીજા એકેન્દ્રિય શતકનો પ્રારંભ--

તેત્રીસમા શતકમાં પહેલા એકેન્દ્રિય શતકનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર
 ક્રમથી આવેલા આ બીજા એકેન્દ્રિય શતકનો પ્રારંભ કરે છે-‘કહ્વિહાણં
 મંતે ! કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ इत्यादि

ટીકાર્થ-‘કહ્વિહાણં મંતે ! કળહલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ભગવન્
 કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય જીવો કેટલા પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે. આ
 પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘ગોયમા ! પંચવિહા કળહ-
 લેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય જીવો પાંચ
 પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે ‘પુઠ્ઠવીકાહ્યા જાવ
 વળસ્સહકાહ્યા’ પૃથ્વીકાયિક, વાયુકાયિક, યાવત્ અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક,

‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ कृष्णलेश्याः खलु भदन्त ! पृथिवीकायिकाः कतिविधाः—कतिप्रकारका भवन्तीति प्रश्नः ? भगवानाह— ‘गोयमा !’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘दुविहा पणत्ता’ कृष्णलेश्या, पृथिवीकायिका एकेन्द्रियजीवाः द्विविधाः—द्विप्रकारका भवन्ति । प्रकारभेदमेव दर्शयति— ‘तं जहा’ इत्यादि । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘सुहुमपुढवीकाइया य—बायरपुढवीकाइया य’ सूक्ष्म पृथिवीकायिकाश्च कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः वादरपृथिवीकायिकाश्च ।

‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! सुहुमपुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ कृष्णलेश्या! खलु भदन्त ! सूक्ष्मपृथिवीकायिका एकेन्द्रियजीवाः कतिविधाः—कतिप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः ? इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘एवं एएणं अभिलावेणं चउक्कओ भेओ जहेव—ओहिए जाव वणस्सइकाइयत्ति’ एवमुपरि-
कायिक, अपकायिक और वनस्पतिकायिक के भेद से कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय पांच प्रकार के होते हैं ।

‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! कृष्णलेश्यावाले पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीव दो प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’ जैसे ‘सुहुमपुढवीकाइया वादरपुढवीकाइया’ सूक्ष्म पृथिवीकायिक और वादर पृथिवीकायिक ‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! सुहुमपुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं चउक्कओ भेओ जहेव ओहियसए जाव वणस्सइ काइयत्ति’ हे गौतम ! इस उपर में प्रदर्शित प्रकारवाले अभिलाप

वायुकायिक अने वनस्पतिकायिकना लेदथी कृष्णलेश्यावाणा अकेन्द्रिय एवे पांच प्रकारना होय छे.

‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! पुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ हे भगवन कृष्णलेश्यावाणा पृथ्वीकायिक एवे केटला प्रकारना कडेला छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा पृथ्वीकायिक अकेन्द्रिय एवे ये प्रकारना कडेवामां आंव्या छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रभाए छे. ‘सुहुमपुढवीकाइया वादरपुढवीकाइया’ सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अने वादरपृथ्वीकायिक ‘कण्ठलेस्सा णं भंते ! सुहुम पुढवीकाइया कइविहा पणत्ता’ हे भगवन कृष्णलेश्यावाणा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एवे केटला प्रकारना कडेवामां आंव्या छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं चउक्कओ भेओ जहेव ओहियसए जाव वणस्सइकाइयत्ति’

दर्शितप्रकारेण अभिलाषेण चतुष्को भेदः यथैव-औधिकोद्देशके कथित स्तथैवाऽ-
त्रापि वक्तव्यः । यावद्वनस्पतिकायिका इति । कृष्णलेइय पृथिवीकायिकैकेन्द्रिया-
दारभ्य कृष्णलेइय वनस्पतिकायिकैकेन्द्रियान्ताः सूक्ष्म-वादराऽपर्याप्तक-पर्या-
प्तकरूप चतुष्टयभेदवन्तो विज्ञेया इति ।

‘कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ’ कृष्णलेइयापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति संख्यकाः
कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह-‘एवंचेव-एएणं
अभिलाषेणं जहेव-ओहिउद्देसए तहेव पन्नत्ताओ’ एवमेव एतेनाऽभिलाषप्रकारेण
यथैव औधिकोद्देशके प्रथमोद्देशके कथिताः-अष्टौ कर्मप्रकृतय स्तर्यवेदापि अष्टौ

से औधिक उद्देश में कहे गये अनुस्वार सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव यावत्
सूक्ष्म वनस्पतिकाय तक सब एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म वादर अपर्याप्तक
और पर्याप्तक के भेद से चार-चार प्रकार के जानना चाहिये, अर्थात्
कृष्णलेइयावाले पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय से लेकर कृष्णलेइयावाले वन-
स्पतिकायिक एकेन्द्रिय जीव तक पूर्वोक्त सूक्ष्म वादर अपर्याप्तक
पर्याप्तक रूप से चार-चार प्रकार के कहे गये हैं ।

‘कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्म-
पगडीओ पन्नत्ताओ’-हे भदन्त ! कृष्णलेइयावाले अपर्याप्तक सूक्ष्म
पृथिवीकायिक जीवों के किनकी कर्मप्रकृतियां कही गई हैं ? उत्तर में
प्रभुश्री कहते हैं-‘एवं एएणं अभिलाषेणं जहेव ओहि उद्देसए तहेव
पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! इस अभिलाष से जिस प्रकार औधिक उद्देशक
में प्रथम उद्देशक में आठ कर्म प्रकृतियों का सत्त्व कहा गया है उसी

हे गौतम ! आ उपर बतावेला प्रकारवाणा अबिलाषेथी औधिक उद्देशमां
कहा प्रमाणे सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एवे यावत् सूक्ष्म वनस्पति काय सुधिना
सधणा ऐकधन्द्रियवाणा एवे सूक्ष्म वादर अपर्याप्तक अने पर्याप्तकनालेइथी
चार-चार प्रकारना समज्जा. अर्थात् कृष्णलेइयावाणा पृथ्वीकायिक ऐकधन्द्रियथी
लधने अप्कायिक, वायुकायिक, अने वनस्पतिकायिक ऐकधन्द्रियवाणा एवे
पूर्वोक्त प्रकारथी चार-चार प्रकारना कडेवामां आण्वा छे.

‘कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ’ हे लगवन कृष्णलेइयावाणा अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एबोने
केटली कर्म प्रकृतियो कडेवामां आवी छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे
छे के-‘एवं-एएणं अभिलाषेणं जहेव ओहि उद्देसए तहेव पन्नत्ताओ’ हे गौतम !

ज्ञानावरणीयादिकाः कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः, 'तद्देव बंधंति, तद्देव-वेदे'ति' तथैव-
औधिकप्रथमोद्देशकवदेव, कर्मप्रकृती बंधन्ति, तथैव-वेदयन्ति। बन्धनसूत्रे सप्तविध
बन्धका वा, अष्टविधबन्धका वा, सप्तविध बन्धकाः आयुर्वर्जसप्तकर्मप्रकृति बन्धका
अष्टविधबन्धकाः परिपूर्णाष्टविधकर्मप्रकृति बन्धका भवन्ति। वेदनसूत्रे ज्ञानावरणी-
याद्यष्टकर्मप्रकृतयः, तथा श्रोत्रेन्द्रियवध्यादिकाः स्पर्शेन्द्रियवधप्रवर्जाश्चतस्रः, तथा-
नपुंसक वेदवध्यवर्ज वेदद्वयंब, एवं चतुर्दशकर्मप्रकृतीनां वेदका भवन्ति इति भावः।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति' तदेवं भदन्त । तदेवं भदन्त । इति । हे भदन्त !

प्रकार से यहां पर भी आठ कर्म प्रकृतियों का सत्त्व जानना चाहिये,
'तद्देव बंधंति, तद्देव वेदे'ति' तथा बन्धन सूत्र में जैसा कहा गया है कि
ये जीव जब सात कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं तब आयुर्कर्म को
छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को बांधते हैं और जब आठ कर्मप्रकृ-
तियों के बन्धक होते हैं-तब ये पूरे के पूरे आठ कर्मों को बांधते हैं
तथा २ इसी प्रकार से ये उनका वेदन भी करते हैं। इस वेदन में ये
ज्ञानावरणादिक आठ कर्मप्रकृतियों का, श्रोत्रेन्द्रि वध्य चक्षुरिन्द्रिय
वध्य घ्राणेन्द्रिय वध्य जिह्वेन्द्रिय वध्य स्त्रीवेद वध्य पुरुषवेद वध्य इन
चौदह कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं। स्पर्शनेन्द्रिय वध्य का वेदन
इनको नहीं होता है, क्योंकि इनको तो स्पर्शनेन्द्रिय का उदय होता है।
तथा नपुंसक वेदवाले होने से इनके उसके वध्य का भी अभाव रहता

आ अलिहापथी औधिक उद्देशाभां ने प्रमाणे पडेला उद्देशाभां आठ कर्म
प्रकृतियो होवाना सं'अंधमां कथन कथुं' छे. ओज प्रमाणे अडियां पणु आठ
कर्म प्रकृतियोनुं विद्यमान पणु'समञ्जु'.

'तद्देव बंधंति' तद्देव वेदे'ति' तथा बन्ध सूत्रमां ने प्रमाणे कथन कर
वामां आ०यु छे के-आ लुवा न्यारे सातकर्म प्रकृतियोने अंध करे छे,
त्यारे ते आयुर्कर्मने छोडीने आडीनी सातकर्म प्रकृतियोने अंध करे छे. अने
न्यारे आठकर्म प्रकृतियोने अंध करे छे, त्यारे तेओ पुरेपूरी आठकर्म प्रकृतियोने
अंध करे छे. ओज प्रमाणे तेओनुं वेदन पणु करे छे. आ वेदनमां तेओ
ज्ञानावरणीय विगेरे आठ कर्म प्रकृतियोनुं श्रोत्रेन्द्रियावरणुनुं चक्षु धन्द्रियावरणुनुं,
घ्राणेन्द्रियावरणुनुं, लुड्वा धन्द्रियावरणुनुं स्त्रीवेदावरणुनुं, पुरुषवेद वरणुनुं
आ रीते आ चौदकर्म प्रकृतियोनुं वेदन करे छे. तेओने स्पर्शनेन्द्रियावरणुनुं
वेदन होतुं नथी केम के-तेओने तो स्पर्शनेन्द्रियोने उदय होय छे. तथा
नपुंसक वेदवाणा होवाथी तेओना आवरणुने अभाव रहे छे.

कृष्णलेश्यैकेन्द्रियजीवविषये भवता यद्यत् कथितम्, तत्सर्वं सर्वथैव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते—नमस्यति, वन्दित्वा—नमस्यित्वा च संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति ॥सू० १॥

अथस्त्रिंशत्तम शतकीय द्वितीयशतके प्रथम औघिकोदेशकः समाप्तः ॥३३२॥१॥

त्रयस्त्रिंशत्तमशतकस्य द्वितीयऽवान्तरशतकस्य द्वितीयरुदेशको व्याख्यायते—
टीका—‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्स एगिंदिया पन्नत्ता’ कति-
विधाः कति प्रकारकाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः येषां मुत्पत्ती प्रथमसमयो जातस्ते कृष्णलेश्या एकेन्द्रियजीवाः प्रज्ञप्ताः—कथिता ? इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंचविहा अणंतरोववन्नगा कण्ह-

हे । ‘सेव’ भंते ! सेव’ भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव के विषय में आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतमस्वामी ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । ॥ ३३ वे शतक के द्वितीय अन्तर शतकका प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ अब द्वितीय अवान्तर शतक का द्वितीय उद्देशक की व्याख्या की जाती है ‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा’—इत्यादि ।

टीकार्थ—‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्स एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? जिन्हे उत्पन्न हुए प्रथम समय हुआ है वे

‘सेव’ भंते ! सेव’ भंते ! त्ति’ हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा ऐक्येन्द्रियवाणा लवना संयममां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सर्वथा सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ सयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

शील ऐकेन्द्रिय शतकेने पडेला उद्देशो समाप्त

शील अवान्तर शतकेने प्रारंभ—

‘कइविहाणं भंते ! अणंतरोववन्नगा’ इत्यादि

टीकार्थ—कइविहाणं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्स एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा ऐकेन्द्रियलवे। केटला प्रकारना कडेवाभां आव्या छे ? पडेला समयमां नेओनी उत्पत्ती थाय छे. ओवा लवे।

लेस्सा एगिदिया पन्नता' पञ्चविधाः—पञ्चप्रकारकाः पृथिवीकायिकादिवनस्पति
कायिकान्ता अनन्तरोपपन्नकाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः । 'एवं
एएणं अभिलावेणं तहेव—दुपओ भेओ जाव—वणस्सइ काइयत्ति' एवमेतेनाऽभिला-
पेन—उक्तप्रकारेण—तथैव—प्रथमोद्देशकत्वेन द्विपदो भेदः, सूक्ष्मबादररूपो भेदो
वर्णनीयो यावद्—वनस्पतिकायिका इति ।

अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यपृथिवीकायिकत आरभ्याऽनन्तरोपपन्नककृष्ण-
लेश्य वनस्पतिकायिकान्तैकेन्द्रियजीवेषु सूक्ष्म—बादरभेदेन द्विपदो भेदो ज्ञात-
व्यः । अत्र चतुर्भेदो न दर्शितः, अनन्तरोपपन्नकानाम्—एकसमयमात्रवृत्तित्वेन
पर्याप्तापर्याप्तकभेदाऽभावेन चतुष्प्रकारकत्वस्याऽसम्भवात् इति ।

'अणंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यसुहृमपुढवीकाइयाणं भंते । कह कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ' अनन्तरोपपन्नककृष्णलेश्यसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति

अनन्तरोपपन्नक हैं । 'गोयसा । पंचविहा पन्नत्ता' हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक
कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं । ये पृथिवी-
कायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक होते हैं । 'एवं एएणं अभिला-
वेणं तहेव दुपओ भेओ, जाव वणस्सइकाइयत्ति' इस अभिलाप द्वारा
प्रथमोद्देशक के जैसे अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव
पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के एकेन्द्रिय जीव—सूक्ष्म
और बादर के भेद से दो पदवाले—दो भेदवाले कहना चाहिये, यहां
अपर्याप्त और पर्याप्त भेद नहीं होता है । क्यों कि यहां अनन्तरोप-
पन्नकका काल एक समय मात्र का है, इसलिये इन में चतुष्प्रकारता संभ-
वित नहीं है । 'अणंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यसुहृमपुढवीकाइयाणं भंते ।
कह कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या

अनंतरोपपन्नक कहेवाय छे. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री गौतमस्वामीने
कहे छे के—'गोयसा ! पंचविहा पणत्ता' हे गौतम ! अनंतरोपपन्नक कृष्ण-
लेश्यावाणा ऐकेन्द्रिय जेवा पांच प्रकारना कहेवामां आव्या छे. ते पृथ्वी
कायिकथी लधने वनस्पतिकायिक सुधीना पांच प्रकार समजवा. 'एवं एएणं
अभिलावेणं तहेव दुपओ भेओ जाव वणस्सइकाइयत्ति' आ अभिलाप प्रमाणे
पडेला उद्देशमां कहे प्रमाणे अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा ऐकेन्द्रिय जेवा
पृथ्वीकायिकथी लधने वनस्पतिकायिक सुधीना ऐकेन्द्रिय जेवा सूक्ष्म अने
बादरना लेहथी जे प्रकारना ऐठले के जे लेहवाणा समजवा. आमां अपर्याप्त
अने पर्याप्त जे जे लेहो डोता नथी. केम के आडियां अनंतरोपपन्नक पणानो
क्षण ऐक समयमात्रनो कहे छे. तेथी तेजोमां आर प्रकारपणुं संभवतुं नथी.

कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ता इति प्रश्नः । भगवानाह—‘एवं एएणं’ इत्यादि । ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा—ओहिओ अणंतरोववन्नगाणं उद्देसओ तद्देव जाव—वेदेति’ एवमेतेन अभिलापेन यथा—औघिओऽनन्तरोपपन्नकानामुद्देशकः तथैव—तेनैव रूपेण इहापि सर्वं ज्ञातव्यम् यावद्देवदयन्ति । एतच्छतकीयप्रथमशतवदेवात्र द्वितीयशतेऽपि—अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य सूक्ष्मपृथिवीकायिकेन्द्रियाणां कर्मप्रकृति विषये ज्ञातव्यम् । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नककृष्णलेश्यैकेन्द्रियपृथिवीकायिकादिविषये यद् देवानु-

वाले सूक्ष्म पृथिवीकायिकों के कितनी कर्मप्रकृतियों का सत्त्व कहा गया है ? ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिओ अणंतरोववन्नगाणं उद्देसओ तद्देव जाव वेदेति’ हे गौतम ! इस प्रकार से इस अभिलाप द्वारा ये अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले सूक्ष्म पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जैसा कि प्रथम शतक में कहा गया है उस के अनुसार आठ कर्म प्रकृतियों के सत्त्व वाले होते हैं उसके अनुसार आठ कर्मप्रकृतियों के ये बन्धक होते हैं । सात कर्मप्रकृतियों की बंधकता में आयुर्कर्म का बन्ध वे नहीं करते हैं क्यों कि उत्पत्ति के प्रथम समय में आयुर्कर्म का बन्ध नहीं होता है अतः ये आठ कर्मप्रकृतियों के बंधक नहीं होते हैं । वेदन ये १४ कर्मप्रकृतियों का करते हैं । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय पृथिवीकायिकादि

‘अणंतरोववण्णग कण्हलेश्च सुहुम पुढवीकाइयाणं भते । कह कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एवमेतेन केटली कर्म प्रकृतियो होवानुं कलुं छे ? उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे कडे ‘एवं एएणं अभिलावेण जहा ओहिओ अणंतरोववन्नगाणं उद्देसओ तद्देव जाव वेदेति’ हे गौतम ! आ प्रमाणे आ अभिलाप द्वारा आ अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एकेन्द्रियना संबन्धमां ने प्रमाणे पडेला शतकमां कडेवामां आवेल छे, ते प्रमाणे आठ कर्म प्रकृतियोना सत्त्ववाणा होय छे तथा ते सात कर्मप्रकृतियोना षड्ध करवावाणा होय छे, सात कर्म प्रकृतियोना षड्धक पणामां तेओ आयुर्कर्मना षड्ध करता नथी, केम के तेओने आयुर्कर्मना षड्ध पडेलेथी न थड्ध णय छे, तेथी तेओ आठ कर्मप्रकृतियोना षड्ध करता नथी अने तेओ चौदहकर्म प्रकृतियोनुं वेदन करे छे, तेम समण्वुं.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय पृथ्वीकायिक विगेरेना संबन्धमां आप देवानुप्रिये ने कथन

प्रियेण कथितम् तत्सर्वं तथैव सत्यमिति कथयित्वा भगवान् गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा—नमस्यित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति॥सू०१॥
इति द्वितीयेऽवान्तरशतके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३३।२।२॥

‘कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता’ कति-
विधाः—कति प्रकारकाः खलु भदन्त ! परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रिय
जीवाः प्रज्ञप्ताः—कथिता इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । गोयमा !
हे गौतम ! ‘पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः—
पञ्चप्रकारकाः परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः । प्रक-
के विषय में जाँ आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही
है २ । ऐसा कहकर भगवान् गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और
नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा
को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू०१॥
॥३३ वे शतक के द्वितीय अवान्तर शतक का द्वितीय उद्देशक समाप्त॥

—द्वितीय एकेन्द्रिय शतक का तृतीयादि उद्देशक—

‘कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता’
हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार
के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! पंचविहा परंप-
रोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! परंपरोपपन्नक
कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’

क्युं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे डे लगवन् आप देवानुप्रियनुं आ
विषय संबंधनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणुं कहीने गौतम-
स्वाभीणुं प्रभुश्रीने वंदना करी तेणुंने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने
तेणुं संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थानपर विराजमान थया. ॥सू०१॥

थील अवान्तर शतकने थीले उद्देशो समाप्त ॥३३-२-२॥

थील ऐकेन्द्रिय शतकने थील विगेरे उद्देशाणुं

‘कइविहां णं भंते ! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पणत्ता’ इत्यादि
टीकार्थ—डे लगवन् परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा ऐकधन्द्रिय अवे
कटला प्रकारना कडेवाभां आण्या छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कडे छे
डे—‘गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता’ डे गौतम !
परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा ऐकेन्द्रिय अवे। पांच प्रकारना कडेवाभां

રણમેદમેવ વર્ણયતિ—‘તં જહા’ इत्यादि । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया, एवं एणं
अभिलावेणं तहेव—चउक्कओ भेओ जाव वणस्सइकाइयत्ति’ पृथिवीकायिक
एवमेतेनाऽभिलापेन तथैव एतच्छक्रीय प्रथमशतकवदेव चतुष्कः—चतुष्प्रकारकः
सूक्ष्मवादराऽपर्याप्तार्थरूपो भेदो वक्तव्यः यावद् वनस्पतिकायिका इति ।

‘परंपरोवन्नग कण्ठलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते !’ परम्परो-
पपन्नक कण्ठलेश्याऽपर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! ‘कइ कम्मपगडीओ
पन्नत्ताओ’ कति—कति प्रकारकाः कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? इति प्रश्नः । मगवा-
नाह—‘एवं एणं’ इत्यादि । ‘एवं एणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ परंपरोव-
न्नग उद्देसओ तहेव जाव वेदेति’ एवम् एतेनाऽभिलापेन यथैवौघिकः सामान्य-

जैसे—‘पुढवीकाइया—एवं एणं आभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ जाव
वणस्सइकाइयत्ति’ पृथिवीकायिक इस प्रकार से इस अभिलाप द्वारा
इसी शतक के प्रथम शतक में कहे गये अनुसार इन परंपरोपपन्नक
कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक
के जीवों के ४-४भेद सूक्ष्म, बादर अपर्याप्तक और पर्याप्तक रूप से
कहना चाहिये ।

‘परंपरोवन्नग कण्ठलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !
कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या-
वाले अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकों के कितनी कर्मप्रकृतियों का सत्व
कहा गया है ? ‘एवं एणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ परंपरोव-
न्नग उद्देसओ तहेव जाव वेदेति’ हे गौतम । इस अभिलाप द्वारा जैसा

आया છે. ‘ત જહા’ તે આ પ્રમાણે છે—‘પુઢવીકાઈયા—એવં એણં અભિલાવેણં
તહેવ ચઉક્કઓ ભેઓ જાવ વણસ્સઈકાઈયત્તિ’ પૃથ્વીકાયિક આ પ્રમાણે આ
અભિપ્રાય દ્વારા એકેન્દ્રિય શતકના પહેલા શતકમાં જે પ્રમાણે કહેવામાં
આવેલ છે તે પ્રમાણે આ પરંપરોપપન્નક કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય પૃથ્વી
કાયિકોથી લઈને વનસ્પતિકાયિક સુધીના જીવોના ૪-૪ ચાર-ચાર ભેદો
સૂક્ષ્મ, બાદર, અપર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત એ રીતે થાય તે તેમ સમજવું.

‘પરંપરોવન્નગ કણ્ઠલેસ્સ અપજ્જત્ત સુહુમ પુઢવીકાઈયા ણં ભંતે ! કઈ
કમ્મપગડીઓ પન્નત્તાઓ’ હે ભગવન્ પરંપરોપપન્નક કૃષ્ણલેશ્યાવાળા અપર્યાપ્તક
સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિકોને કેટલી કર્મ પ્રકૃતિયો હોવાનું કહેલ છે ? ‘એવં એણં
અભિલાવેણ જહેવ ઓહિઓ પરંપરોવન્નગ ઉદ્દેસઓ તહેવ જાવ વેદેતિ’ હે
ગૌતમ ! આ અભિલાપ દ્વારા સામાન્ય રૂપથી પહેલો ઉદ્દેશો જે પ્રમાણે કહેવામાં

रूपः प्रथमोद्देशकः कथित स्तथैव-तेनैव प्रकारेण इहापि ज्ञातव्यो यावद् वेदय
यन्ति इति । अत्र यावत्पदेन-तेषां जीवाना मष्टकर्मप्रकृतयो भवन्ति, ते च सप्त
अष्टौ वा बध्नन्ति, चतुर्दश च वेदयन्तीति संग्रहो वाच्यः । 'एवं एएणं अभि-
लावेणं जहेव ओहिए एगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कणहलेस्स
सए वि भाणियव्वा जाव अचरिस्स कणहलेस्सा एगिंदिया' एवम्-एतेन अभिला-
पेन यथैव औघिके एकेन्द्रियशते एकादशोद्देशका भणित्वा स्तथैव कृष्णलेश्यशतेऽपि
एकादशोद्देशका भणितव्या यावद् अचरम कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः ।

औघिककृष्णलेश्यैकेन्द्रियानन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यैकेन्द्रियरूपोद्देशद्वयवदेव

सामान्य रूप प्रथम उद्देशक कहा गया हैं उसी प्रकार से यहाँ यावत्
वेदन सूत्र तक जानना चाहिये, यहाँ यावत् पद से इस कथन का
संग्रह हुआ है कि-‘उन जीवों में आठ कर्मप्रकृतियां होती हैं,
वे सात या आठ कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं । १४ चौदह
कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं । ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहेव
ओहिए एगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कणहलेस्स सए
वि भाणियव्वा जाव अचरिस्स कणहलेस्सा एगिंदिया’ इस प्रकार इस
अभिलाप द्वारा जैसे सामान्य रूप एकेन्द्रिय शतक में ११ उद्देशक कहे
गये हैं उसी प्रकार से कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय शतक में ११ उद्देशक
कहना चाहिये, जैसे सामान्य रूप कृष्णलेश्यावालों का एक सामान्य
उद्देशक, अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावालों का द्वितीय उद्देशक है, इसी
प्रकार से परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का तृतीय उद्देशक

आव्ये छे, ओए प्रभावे अहियां पणु यावत् वेदन सूत्र सुधीनुं कथन समञ्ज
देवुं. अहियां यावत्पदथी नीये प्रभावेना कथनेना संग्रह थये छे, जेमके-ते
एवोने आठ कर्मप्रकृतियो डोय छे तेयो सात अथवा आठ कर्म प्रकृतियोने
बंध करे छे तथा औद कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करे छे. ‘एवं एएण अभिलावेणं
जहेव ओहिए एगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कणहलेस्ससए वि
भाणियव्वा जाव अचरिस्स कणहलेस्स एगिंदिया’ या अभिलाप द्वारा सामान्य
इय एकेन्द्रिय शतकमां जे प्रभावे अगियार ११ उद्देशाओ कडेवामां आव्ये
छे. ओए प्रभावेना अगियार उद्देशाओ या कृष्णलेश्यावाणा शतकमां पणु
अचरम कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रियना कथन सुधीना ११ उद्देशाओ कडेवा
नेछे. जेम के-सामान्य कृष्णलेश्यावाणाने ओक सामान्य उद्देशो. १ अने
अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणाने भीजे उद्देशो छे ओए प्रभावे परंपरोप-
पन्नक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रियोना संग्रहमां त्रीजे उद्देशो कह्यो छे.

परम्परोपपन्नकः३, अनन्तरावगाढः४, परम्परावगाढः५, अनन्तराहारकः६, परम्पराहारकः७, अनन्तरपर्याप्तकः८, परम्परपर्याप्तकः९, चरमः१०, अचरमः११, इत्येते एकादशोद्देशकाः खेदितव्या इति भावः ॥सू० १॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुल्लभादिपद्भूषितवालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालत्रिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्ररय" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां त्रयस्त्रिंशत्तमे एकादशोद्देशक समाप्तः ॥३३-११॥

इति द्वितीयमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३-२॥

है । अनन्तरावगाढ कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का चतुर्थ उद्देशक है । परम्परावगाढ कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय का पांचवा उद्देशक है । अनन्तराहारक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का छठा उद्देशक है परम्पराहारक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का ७ वां उद्देशक है । अन्तर पर्याप्तक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का ८ वां उद्देशक है । परम्परपर्याप्तक कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का ९ वां उद्देशक है । चरम कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का १० वां उद्देशक है और अचरम कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रियों का ११ उद्देशक है । इस प्रकार से ये ११ उद्देशक यहाँ जानना चाहिये ।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तेतीसवें शतक का
ग्यारहवां उद्देशक समाप्त ॥३३-॥

॥ ३३ वे शतक का द्वितीय एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

अनन्तरावगाढ कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रियो संभंधी चोथो उद्देशो कही छे. ४
परंपरावगाढ कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रियो संभंधी पांचमो उद्देशो
कही छे ५ अनंतराहारक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय संभंधी छठो उद्देशो
कही छे ६ परंपराहारक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय संभंधी सातमो उद्देशो
कही छे. ७ अन्तर पर्याप्तक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रियोना संभंधमा आठमो
उद्देशो कही छे. ८ परंपरपर्याप्तक कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय संभंधी नवमो
उद्देशो कही छे ९ चरम कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय संभंधी दसमो उद्देशो कही छे.
अने अचरम कृष्णलेश्यावाणा एकेन्द्रिय लोवोना संभंधमा अगियारमो उद्देशो
कही छे. आ रीते आ ११ अगियार उद्देशोआ अर्हीयां समज्वा. ॥सू०१॥
जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तेतीसमा शतकमे अगियारमो उद्देशो समाप्त ॥३३ ११॥

॥ श्रीगु एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

तृतीयचतुर्थशते आरभ्यते-

मूलम्—जहा कणहलेस्सेहिं भणियं एवं नीललेस्सेहिं वि समं
भाणियव्वं सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३३-३॥

एवं काउलेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं । नवरं काउलेस्से
त्ति अभिलावो भाणियव्वो ॥३३-४॥

छाया—यथा कृष्णलेश्यै भणितम् एवं नीललेश्यैरपि शतं भणितव्यम्,
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३३-३॥

एवं कापोतलेश्यैरपि शतं भणितव्यम् । नवरं कापोतलेश्य इत्यभिलापो
भणितव्य इति ॥३३-४॥

टीका—‘जहा कणहलेस्सेहिं भणियं’ यथा—येन प्रकारेण कृष्णलेश्यै भणितं
शतम्, ‘एवं नीललेस्सेहिं वि सयं भाणियव्वं’ एवम्—अनेनैव प्रकारेण नील-
लेश्यैरपि शतं भणितव्यं विवेचनीयम् ॥३३-३॥

-तृतीय चतुर्थ शतक का आरम्भ-

‘जहा कणहलेस्सेहिं भणियं एवं नीललेस्सेहिं समं वि भाणियव्वं’
जैसा कृष्णलेस्यावालो के सम्बन्ध में शतक कहा गया है उसी प्रकार से
नीललेस्यावालो के सम्बन्ध में भी शतक कहना चाहिये ‘सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जैसा यह कहा है वह
सब सर्वथा सत्य ही है २ ऐसा कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना
की और नमस्कार क्रिया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप
से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ ३३ वे शतक का तृतीय अवान्तर शतक समाप्त ॥

त्रीज—येथा ऐकेन्द्रिय शतकना आरंभ—

‘जहा कणहलेस्सेहिं भणियं एवं नीललेस्सेहिं वि समं भाणियव्वं’
कृष्णलेस्यावाणा एवेना संबधमां ने प्रमाणे अणियार उद्देशात्मक शतक
कहेल छे. ऐअ प्रमाणे नीललेस्यावाणा एवेना संबधमा पणु ११ अणियार
उद्देशावाणु शतक कहेवुं नेध्जे.

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रमाणेतुं
कथन आ विषयमां कहुं छे, ते सधणुं कथन सत्य छे. हे भगवन् आप
देवानुप्रियतुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे
प्रभुश्रीने वंदना करी तेज्जोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार कर्या पछी तेज्जो
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थानपर
विराजमान थया. ॥सू०१॥

त्रीजु अवांतर शतक समाप्त

‘एवं काउलेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं’ एवम्-कृष्णलेश्यशतकवदेव कापोत-
लेश्यैरपि शतं भणितव्यम् । ‘नवरं काउलेस्से त्ति भाणियव्वो’ नवरं (कापोत-
लेश्यः) इत्यभिलापो भणितव्यः । पूर्वशते यत्र कृष्णनीलपदे निवेश्याऽऽलापकः
कृतं स्तत्र स्थाने (कापोतः) इतिपदं निवेश्य आलापका भणितव्याः । अन्यत्सर्वं
पूर्वं वदेव ज्ञातव्यमिति ॥३३-४॥

अयत्त्रिंशच्छतके एकेन्द्रियाणां तृतीयमेकेन्द्रियशतं चतुर्थमेकेन्द्रियशतं च
समाप्तम् ॥३३-३-४॥

पञ्चमशतकः प्रारभ्यते

मूळम्-कडविहा णं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा !
पंचविहा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता तं जहा-पुढवीकाइया
जाव वणस्सइकाइया भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।
भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कड कम्म-
पगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमि-
ल्लगं एगिंदियसयं तहेव भवसिद्धियसयं पि भाणियव्वं ।

‘एवं काउलेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं-नवरं ‘काउलेस्से’ त्ति
अभिलावो भाणियव्वो’ कृष्णलेश्यावालों के शतक के जैसा ही शतक
कापोतलेश्यावालों के सम्बन्ध में भी कहना चाहिये, परन्तु पूर्व शतक
में जहां ‘कृष्ण’ और ‘नील’ पद को विशेषित करके आलापक किया
गया है-वहां ‘कापोत’ ऐसा पद रखकर आलापक कहना चाहिये, बाकी
का और सब कथन पहिले के जैसा ही जानना चाहिये,

॥ ३३ वे शतक का चतुर्थ अवान्तर शतक समाप्त ॥

‘एवं काउलेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं नवरं ‘कण्डलेस्से वि अभिलावो
भाणियव्वो’ कृष्णलेश्यावाणा एवोना शतकना कथन प्रमाणे न कापोतलेश्यावाणा
एवोना संबन्धमां पणु कडेवुं नेधये परंतु पडेदाना शतकमां न्यां न्यां
‘कृष्ण’ अने ‘नील’ पदथी कथन करवामां आण्युं छे, त्यां त्यां ‘कापोत’ अने
प्रमाणेतुं पद राभीने आलापके कडेवा नेधये ते शिवायतुं वीणुं सधणुं
कथन पडेदाना कथन प्रमाणे न समण्वुं.

अथुं अवान्तर शतक समाप्त

उद्देशगपरिवादी तहेव जाव तहेव अचरिमो त्ति । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति ॥सू०१॥

पंचमं एगिंदियसयं समत्तं ॥३३-५॥

छाया—कतिविधाः खलु भदन्त । भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ।
गौतम ! पञ्चविधा भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पृथिवीकायिका
यावद् वनस्पतिकायिकाः, भेदश्चतुष्को यावद् वनस्पतिकायिका इति । भवसिद्धि-
काऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्मभक्तयः प्रज्ञप्ताः ? एवमेते-
नाऽभिलापेन यथैव प्रथममेकेन्द्रियशतं तथैव भवसिद्धिकशतमपि भणितव्यम् ।
उद्देशकपरिपाटी तथैव यावद् अचरम इति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ।-इति ।

पञ्चममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३-५॥

टीका—‘कइविहा णं भंते ! भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ कतिविधाः—
कतिप्रकाराः खलु भदन्त ! भवसिद्धिकाः—सिद्धिगमनयोग्याः भवक्रमेण ये ते
भवसिद्धिका एतादृशा एकेन्द्रियजीवाः कति प्रकारका भवन्तीति प्रश्नः । भग-
वानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंचविहा’ पञ्चप्रकारकाः
‘भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ भवसिद्धिका एकेन्द्रिय जीवाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः,
‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिका यावद्

‘कइविहा णं भंते ! भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ हे भदन्त !
भवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे गये हैं ? जो एकेन्द्रिय भव
क्रम से सिद्धि गमन योग्य होते हैं—वे एकेन्द्रिय भवसिद्धिक कहे गये
हैं । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! पंचविहा भवसिद्धिया एगिं-
दिया पणत्ता’ हे गौतम ! भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के
कहे गये हैं । ‘तं जहा’ जो इस प्रकार से हैं ‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइ

पांथमां अवा-न्तर शतकने। प्रारंल--

‘कइविहा णं भंते ! भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ डे लगवन् लवसिद्धिक
अकेन्द्रिय लवे। डेटला प्रक्षरना डडेवामां आ०या छे ? अकेन्द्रिय लवे।
लवडभथी सिद्धि गमनने योग्य डे।य छे, ते अकेन्द्रिये। लवसिद्धिक डह्या छे,
आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने डडे छे डे—‘गोयमा ! पंचविहा
भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ डे गौतम ! लवसिद्धिक अकेन्द्रिय लवे। पांथ
प्रक्षरना डडेवामां आ०या छे, ‘तं जहा’ अे आ प्रभावे छे, ‘पुढवीकाइया

वनस्पतिक्रायिकाः, यावत्पदेन अप्क्रायिकाः, तेजस्क्रायिकाः, वायुक्रायिकाः, एतेषां संग्रहो भवति । तथा च पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिभेदेन भवसिद्धिका एकेन्द्रियजीवाः पञ्चप्रकारका भवन्तीति । 'भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति' भेदश्चतुष्को यावद्वनस्पतिक्रायिक इति । यथा—औधिके प्रथमशते एतेषां मंत्रान्तरश्चतुः प्रकारको भेदः सूक्ष्मवादराऽपर्याप्तपर्याप्तरूपः कथित स्तथैव भवसिद्धिक पञ्चमशतेऽपि वक्तव्यः, 'भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते । कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' भवसिद्धिकाऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीक्रायिकजीवानां खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयो भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—'एवं एएणं' इत्यादि, 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमिल्लगं एगिंदियसयं तहेव भवसिद्धिय

काइया' पृथिवीक्रायिक यावत् वनस्पतिक्रायिक, यहाँ यावत् पद से 'अप्क्रायिक, तेजस्क्रायिक, वायुक्रायिक' इनका ग्रहण हुआ है । तथा च—पृथिवीक्रायिक, अप्क्रायिक, तेजस्क्रायिक वायुक्रायिक, और वनस्पतिक्रायिक के भेद से भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के होते हैं । 'भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति' जिस प्रकार से औधिक प्रथम शतक में इनके चार भेद—सूक्ष्म, वादर, अपर्याप्त, पर्याप्त रूप से कहा है भेद भवसिद्धिक पञ्चम शतक में भी कहना चाहिये ।

'भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते । कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भदन्त ! भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीक्रायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियों का सत्त्व कहा गया है ? 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमिल्लगं एगिंदियसयं तहेव

जाव वणस्सइ काइया' पृथ्वीक्रायिक यावत् वनस्पतिक्रायिक अहियां यावत्पद्वथी अप्क्रायिक, तेजस्क्रायिक, वायुक्रायिक, अने वनस्पतिक्रायिक अहणु कराया छे. तथा पृथ्वीक्रायिक, अप्क्रायिक, तेजस्क्रायिक वायुक्रायिक अने वनस्पतिक्रायिकना लेद्वथी भवसिद्धिक ऐकेन्द्रिय जीवो पांच प्रकारना होय छे.

'भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति' जे प्रमाणे औधिक—पडेवा शतकभां तेओना चार लेदो अेटले के—सूक्ष्म, वादर, अपर्याप्तक अने पर्याप्तक जे प्रमाणेना चार लेदो कहा छे, तेज प्रमाणे जे चार लेदो आ भवसिद्धिक पांचमा शतकभां पणु उडेवा जेधजे. 'भवसिद्धिय अपज्जत्त पुढवीकाइयाण भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' जे भगवन भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीक्रायिक जीवोने केटली कर्मप्रकृतियो होय छे ? 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमिल्लगं एगिंदियसयं तहेव भवसिद्धियसयं पि भाणियव्व'

સયં પિ ભાણિયવ્વં' એવમ્—અનેન પ્રકારેણ એતેનાઽભિલાપેત યથૈવ પ્રથમમેકેન્દ્રિય-
શતં તથૈવ ભવસિદ્ધિકશતમપિ સર્વં મણિતવ્યમ્ । પ્રથમમેવ ઔઘિકં શતમિ-
હાઽપિ અનુસન્ધેયમ્ ।

'ઉદ્દેસગ પરિવાડી તહેવ જાવ અચરિમોત્તિ' ઉદ્દેશકાનાં પરિવાટી વ્યવસ્થા-
ઽપિ તથૈવ યથા પ્રથમશતે કથિતા યાવત્ અચરમ ઇતિ, સા ચ ઔઘિકાનન્તરો-
પપન્નક પરમ્પરોપપન્નકાનન્તરાવગાઠ—પરમ્પ(ાવગાઠા—નન્તરાહારક પરમ્પરાહારકા
નન્તરપર્યાપ્તક—પરમ્પરપર્યાપ્તક—ચરમાઽચરમેત્યેકાદશસંખ્યારૂપા વિજ્ઞેયેતિ

'સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ' તદેવં મદન્ત ! તદેવં મદન્ત ! ઇતિ । હે
મદન્ત ! ભવસિદ્ધિકેકેન્દ્રિયાણાં વિષયે યદ્ દેવાનુપ્રિયેણ કથિતં તત્સર્વમ્ સર્વથૈવ

ભવસિદ્ધિમસયં પિ ભાણિયવ્વં' હસ પ્રકાર સે હસ અભિલાપ દ્વારા
જૈસા પ્રથમ એકેન્દ્રિય શતક કહા ગયા હૈ વૈસા હી ભવસિદ્ધિક શતક
મી પૂરા કહના ચાહિયે । તથા 'ઉદ્દેસક પરિવાડી તહેવ જાવ અચરિ-
મોત્તિ' ઉદ્દેશકો કી વ્યવસ્થા મી યહાં પ્રથમ શતક કે જૈસી અચરમ
ઉદ્દેશક તક કહની ચાહિયે, હસ વ્યવસ્થા મેં પહિલા ઔઘિક ઉદ્દેશક
હૈ, દ્વિતીય અનન્તરોપપન્નન ઉદ્દેશક હૈ, તૃતીય પરમ્પરોપપન્નક ઉદ્દેશક
હૈ, ચતુર્થ અનન્તરાવગાઠ ઉદ્દેશક હૈ પાંચવાં પરંપરાવગાઠ ઉદ્દેશક હૈ,
છઠા અનન્તરાહારક ઉદ્દેશક હૈ । સાતવાં પરંપરાહારક ઉદ્દેશક હૈ
૮ વાં અનન્તરપર્યાપ્તક ઉદ્દેશક હૈ, ૯ વાં પરંપરપર્યાપ્તક ઉદ્દેશક હૈ ।
૧૦ વાં ચરમ ઉદ્દેશક હૈ । ૧૧ વાં અચરમ ઉદ્દેશક હૈ । એસા જાનના

આ રીતે આ અભિલાપ દ્વારા જે રીતે પહેલું એકેન્દ્રિય શતક કહેવામાં
આવ્યું છે, એજ પ્રમાણે આ ભવસિદ્ધિકશ-ક પણ પૂરેપૂરું કહેવું જોઈએ.
'ઉદ્દેસકારિવાડી તહેવ જાવ અચરિમોત્તિ' ઉદ્દેશાઓની વ્યવસ્થા—ક્રમ પણ
અહિયાં પહેલા શતકમાં કહ્યા પ્રમાણે અચરમ ઉદ્દેશા સુધી સમજી લેવી.
આ ક્રમથી પહેલા ઔઘિક ઉદ્દેશો કહેલ છે. ૧ થીજે અનંતરોપપન્નક નામનો
ઉદ્દેશો છે ૨ ત્રીજે પરંપરોપપન્નક ઉદ્દેશો છે. ચોથો અનંતરાવગાઠ નામનો
ઉદ્દેશો કહ્યો છે. પાચમે પરંપરાવગાઠ નામનો ઉદ્દેશો કહેલ છે. છઠો અનંત-
રાહારક નામનો ઉદ્દેશો કહ્યો છે. સાતમે પરંપરાહારક નામનો ઉદ્દેશો
કહ્યો છે આઠમે અનંતરપર્યાપ્તક નામનો ઉદ્દેશો કહ્યો છે. નવમે પરંપર
પર્યાપ્તક નામનો ઉદ્દેશો કહ્યો છે. દસમે ચરમ નામનો ઉદ્દેશો કહ્યો છે.
અને અગિયારમે અચરમ નામનો ઉદ્દેશો કહેલ છે તેમ સમજવું.

'સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ' હે ભગવન્ ભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયોના
સંબંધમાં આપ દેવાનુપ્રિયે જે પ્રમાણેનુ કથન કર્યું છે, તે સઘણું કથન સર્વથા

सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

इति त्रयस्त्रिंशत्तमे शतके पञ्चममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३-५॥

मूलम्—कइविहा णं भंते ! कणहलेस्सा भवसिद्धिया एग्गि-
दिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा कणहलेस्सा भवसिद्धिया
एग्गिदिया पन्नत्ता । तं जहा—पुढवीकाइया जाव वणस्सइ-
काइया । कणहलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइया णं भंते ! कइ-
विहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता तं जहा—सुहुम-
पुढवीकाइया य वायरपुढवीकाइया य । कणहलेस्स भवसिद्धिय
सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा
पन्नत्ता तं जहा—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य एवं वायरा वि ।
एवं एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ भाणियव्वो ।
कणहलेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्तग सुहुमपुढवीकाइया णं भंते !
कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ । एवं एएणं अभिलावेणं जहेव
ओहिउद्देषए तहेव जाव वेदंति । कइविहा णं भंते ! अणंत-
रोववन्नगा कणहलेस्सा भवसिद्धिया एग्गिदिया पन्नत्ता ? गोयमा !
पंचविहा अणंतरोववन्नगा जाव वणस्सइकाइया । अणंतरोव-

चाहिणे 'सेव' भंते ! सेव' भंते । त्ति हे भदन्त ! भवसिद्धिक एके-
न्द्रियो के विषय में जो आप देवानुप्रिय ने कहा हैं वह सब सर्वथा
सत्य ही है । ऐसा कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और
नमस्कार किया । वन्दना जलस्कार कर फिर वे संयम और तप से
आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ ३३वे शतक के पांचवा अवान्तर शतक समाप्त ॥

सत्य न छे । डे भगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे । आ
प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी तेन्नेने नमस्कार कथा
वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित
करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

॥पांचम अवान्तर शतक समाप्त ॥ ३३-५

वन्नगा कणहलेस्त भवसिद्धिय पुढविक्काइयाणं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता तं जहा—सुहुमपुढवीकाइयाय वायरपुढवीकाइयाय । एवं दुपओ भेओ । अणंतरोववन्नग कणहलेस्त भवसिद्धिय सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ अणंतरोववन्नग उहेसओ तहेव जाव वेदेति । एवं एएणं अभिलावेणं एक्कारस त्रि उहेसगा तहेव भाणियत्वा जहा ओहियसए जाव अचरिसो त्ति सू० १॥

छट्ठं एगिंदियसयं समत्तं ॥३३-६॥

छाया-कतिविधाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रिया प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा पृथिवीकायिका यावद्द्वन्द्वरूपतिकायिकाः । कृष्णलेश्यभवसिद्धिकपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवीकायिकाश्च । कृष्णलेश्य भवसिद्धिकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—पर्याप्तकाश्चापर्याप्तकाश्च । एवं वादरा अपि । एवम्—एतेनाऽभिलापेन तथैव चतुष्को भेदो भणितव्यः ।

कृष्णलेश्यभवसिद्धिकाऽपर्याप्तसूक्ष्म पृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्म-प्रकृतयः प्रज्ञप्ताः । एवमेतेन अभिलापेन यथैवौघिकोद्देशके तथैव यावद् वेदयन्ति । कतिविधाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधा अनन्तरोपपन्नकाः यावद्द्वन्द्वरूपतिकायिकाः । अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिकपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवीकायिकाश्च एवं द्विपदो भेदः अनन्तरोपपन्नककृष्णलेश्यभवसिद्धिकसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कतिकर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः । एवमेतेनाऽभिलापेन यथैव औघिकोऽनन्तरोपपन्नकोद्देशः तथैव यावद्वेदयन्ति । एवमेतेनाऽभिलापेन एकादशाऽपि-उद्देशकास्तथैव भणितव्याः, यथा—औघिकशते यावदचरम इति ॥३३६॥

॥ पठमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥

ટીકા-‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા મવસિદ્ધિયા ઇગિંદિયા પન્નત્તા’ કતિવિધા?—કતિપ્રકારકાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કૃષ્ણલેશ્યા મવસિદ્ધિકા એકેન્દ્રિય જીવાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ—કથિતાઃ ? इति प्रश्नः । मगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंचविहा कण्हलेहसा मवसिद्विया एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः—पञ्चप्रकारकाः कृष्णलेश्यावन्तो मवसिद्विका एकेन्द्रियजीवाः प्रज्ञप्ताः—कथिता इत्युत्तरम् । प्रकारभेदमेव दर्शयति । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिका यावद् वनस्पतिकायिकाः । तथाच कृष्णलेश्य मवसिद्विक पृथिवीकायिक-कृष्णलेश्यमवसिद्विकाष्कायिक कृष्णलेश्यमवसिद्विक तेजस्कायिक-कृष्णलेश्यमवसिद्विक वायुकायिक-कृष्णलेश्यमवसिद्विकवनस्पतिकायिकभेदात् एकेन्द्रियाः पञ्चप्रकारका भवन्तीति ।

—છઠ્ઠા અવાન્તર શતક—

‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા મવસિદ્ધિયા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા ?’ હે મદન્ત ! કૃષ્ણલેશ્યાવાલે મવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય જીવ કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં ? ઉત્તર સેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં—‘ગોયમા ! પંચવિહા કળ્હલેસ્સા મવસિદ્ધિયા ઇગિંદિયા પન્નત્તા’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યાવાલે મવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય જીવ પાંચ પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં । ‘તં જહા’ જૈસે—પુઢવીકાહ્યા જાવ વણસ્સહકાહ્યા’ પૃથિવીકાયિક યાવત્ વનસ્પતિ કાયિક, તથા ચ—કૃષ્ણલેશ્ય મવસિદ્ધિક પૃથિવીકાયિક ૧, કૃષ્ણલેશ્ય મવસિદ્ધિક અષ્કાયિક ૨, કૃષ્ણલેશ્ય મવસિદ્ધિક તેજસ્કાયિક ૩, કૃષ્ણલેશ્ય મવસિદ્ધિક વાયુકાયિક ઓર કૃષ્ણલેશ્ય મવસિદ્ધિક વનસ્પતિકાયિક કે ભેદ સે એકેન્દ્રિય પાંચ પ્રકાર કે હોતે હૈં ।

‘છઠ્ઠા અવાન્તર શતકનો પ્રારંભ—

‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા મવસિદ્ધિયા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ભગવન્ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા મવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય એવ કેટલા પ્રકારના કહેવામાં આવેલ છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—‘ગોયમા ! પંચવિહા કળ્હલેસ્સા મવસિદ્ધિયા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય એવો પાંચ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે. ‘તજહા’ તે આ પ્રમાણે છે. ‘પુઢવીકાહ્યા જાવ વણસ્સહકાહ્યા’ પૃથ્વીકાયિકથી લઈને યાવત્ વનસ્પતિ કાયિક સુધિના સમજવા. એટલે કે કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક પૃથ્વીકાયિક ૧ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક અષ્કાયિક ૨ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક તેજસ્કાયિક, ૩ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક વાયુકાયિક ૪ અને કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક વનસ્પતિકાયિક ૫ આ પ્રમાણેના લેહથી એકેન્દ્રિયો પાંચ પ્રકારના

‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिकपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः-कतिप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः ? भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा !’ हे गौतम ! ‘दुविहा पणत्ता’ द्विविधाः-द्विप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः ‘तं जहा’ तद्यथा-‘सुहुमपुढवीकाइया सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवीकायिकाश्च ।

‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिक सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः-कतिप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः-कथिता इति प्रश्नः । भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘दुविहा पणत्ता’ द्विविधाः-द्विप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः । प्रकारभेदमेव दर्शयति-‘तं जहा’ इत्यादि ‘तं जहा’ तद्यथा-‘पज्जत्त गाय अपज्जत्त गाय’ पर्याप्तकाश्चाऽपर्याप्तकाश्च ।

‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा दुविहा पणत्ता, -तं जहा-सुहुमपुढवीकाइया य वायर पुढवीकाइया य’ हे गौतम ! दो प्रकार के कहे गये हैं । जैसे सूक्ष्मपृथिवीकायिक और वादरपृथिवीकायिक ! ‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्य भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक पृथिवीकायिक दो प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’-जैसे ‘पज्जत्त गाय, अपज्जत्त गाय’ पर्याप्तक और अपर्याप्तक ‘एवं वायरा वि’ कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक के जैसे ही कृष्णलेश्यावाले भव-

डोय छे. ‘कण्ठलेस्स पुढवीकाइयाणं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक एव डेटला प्रकारना कडेवामां आण्था छे ? ‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक एवो भे प्रकारना कडेवामां आण्था छे ‘तं जहा’ ते आ प्रभाण्णे छे. ‘सुहुमपुढवीकाइया वायरपुढवीकाइया य’ सूक्ष्मपृथ्वीकायिक अने वादर पृथिवीकायिक ‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक डेटला प्रकारना कडेला छे ? ‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक भे प्रकारना कडेवामां आण्था छे. ‘तं जहा’ ते भे प्रकार आ प्रभाण्णे छे. ‘पज्जत्त गाय अपज्जत्त गाय’ पर्याप्तक अने अपर्याप्तक ‘एवं वायरा वि’ कृष्ण-

‘एवं वायरा वि’ एवं कृष्णलेश्य भवसिद्धिक सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिक वादरपृथिवीकायिका अपि पर्याप्तकापर्याप्तकभेदेन द्विविधा भवन्ति। ‘एणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेदो भाणियव्वो’ एतेन उपरि दर्शितेन अभिलापेन प्रकारेण तथैव यथैव औघिकैकेन्द्रियप्रकरणे चतुष्को भेदो वर्णितः पृथिव्यादि वस्पर्तिकायिकान्तानां तथैव-तेनैव प्रकारेण कृष्णलेश्यभवसिद्धिकप्रकरणे पृथिव्याद्येकेन्द्रियाणां चतुष्प्रकारको भेदो भणितव्यो वर्णयितव्यः सूक्ष्मवादरपर्याप्ताऽपर्याप्तरूपः ।

‘कणह्लेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्तगसुहुमपुठवीकाइयाणं भंते ! कइक्कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ कृष्णलेश्यभवसिद्धिकाऽपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकानां भदन्त । कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ता ? भगवानाह-‘एवं एणं’ इत्यादि । ‘एवं एणं अभिला-

सिद्धिक वादर पृथिवीकायिक भी पर्याप्तक और अपर्याप्तक के भेद से दो प्रकार के होते हैं । ‘एवं एणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ भाणियव्वो’ जिस प्रकार से पृथिव्यादि से लेकर वनस्पतिकायिकान्त जीवों के चार भेद कहे गये हैं उसी प्रकार से कृष्णलेश्य भवसिद्धिक के इस प्रकरण में पृथिव्यादि एकेन्द्रियों के चार-चार भेद वर्णित करना चाहिये । तात्पर्य यह है कि सूक्ष्म, वादर, पर्याप्तक और अपर्याप्त रूप से समस्त कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव चार-चार प्रकार के होते हैं । ‘कणह्लेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुठवी काइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पणत्ताओ’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियां कही गई हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘एवं एणं

लेश्यावाणा भवसिद्धिक सूक्ष्मपृथिवीकायिक एवेना कथन प्रमाणे न कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक वादर पृथिवीकायिक संभंधी कथन पणु पर्याप्तक अने अपर्याप्तक ना लेहथी ओ प्रकारनुं समञ्जुं. ‘एवं एणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ भाणियव्वो’ ने प्रमाणे पृथिवीकायिक विगेरेथी लधने वनस्पतिकायिक सुधीना एवेना संभंधमां यार लेदो कडेवामां आन्वा छे. ओण प्रमाणेना यार लेदो कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिकना आ प्रकारणमां पृथिवीकायिक विगेरे ओकेन्द्रियानुं पणु वणुन करी लेवुं. कडेवानुं तात्पर्य ओ छे के-सूक्ष्म, वादर, पर्याप्त अने अपर्याप्तकना लेहथी सधणा कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक ओकेन्द्रिय एवे। यार-यार प्रकारना डोय छे.

‘कणह्लेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्तग सुहुमपुठवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्म पगडीओ पन्नत्ताओ’ हे भगवन कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्म

वेणं जहेव ओहिउद्देसए तहेव जाव वेदे'ति' एवमेतेन-उपरि प्रदर्शितेन अभिला-
पेन प्रकारेण तथैव औधिके प्रथमे एकेन्द्रियादेशके कथितं तथैव-तेनैव प्रकारेण
इहापि भवसिद्धिकप्रकरणेऽपि सर्वं वक्तव्यम् । कियत्पर्यन्तमौधिकप्रकरणं वक्त-
व्यम् ? तत्राह-'जाव' इत्यादि । 'जाव वेदे'ति' यावद् वेदयन्ति, कति कर्मप्रक-
तयो भवन्तीति प्रश्नादारभ्य चतुर्दशकर्मप्रकृती वेदयन्ति, एतत्पर्यन्तं वक्तव्यम् ।
तथाहि-कृष्णलेश्य भवसिद्धिकापर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीकायिकादारभ्य कृष्णलेश्य
भवसिद्धिकपर्याप्तकवाटरवनस्पतिकायिकान्ता अपि एकेन्द्रियजीवाश्चतुर्दश कर्म-
प्रकृतीनां वेदकाभवन्तीति यावत्पदग्रह्यम् औधिक प्रकरणमिति ।

अभिलावेणं जहेव ओहियउद्देसए तहेव जाव वेदे'ति' हे गौतम ।
जिस प्रकार से इस अभिलाप द्वारा जैसा कथन औधिक उद्देशक में-
प्रथम एकेन्द्रिय उद्देशक में-कहा गया है, उसी प्रकार से यहां इस
भवसिद्धिक प्रकरण में भी वही सब कथन कहना चाहिये, और वह
सब प्रकरण गत कथन वेदन सूत्र तक का यहां कहना चाहिये, तात्पर्य
इस कथन का ऐसा है कि कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्म
पृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियां होती हैं ? इस प्रश्न
से लेकर चौदह कर्म प्रकृतियोंका वे वेदन करते हैं यहां तक का सब
कथन यहाँ पर वहाँ का उपो का त्यो करना चाहिये, तथा इसी प्रकार
का कथन कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक पर्याप्तक वाटर वनस्पतिकायिक
तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव १४ कर्म प्रकृतियों का वेदन करते हैं ।

पृथ्वीकायिक जिवोने केटली कर्मप्रकृतियो डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री
कडे छे के-एव' एणं अभिलावेणं जहेव ओहिय उद्देसए तहेव जाव वेदे'ति'
हे गौतम ! जे प्रमाणे आ अभिलाप द्वारा औधिक उद्देशमां ओटले के पडेला
एकेन्द्रिय उद्देशमां कडेवामां आवेल छे, ओज प्रमाणे अडियां आ भवसिद्धिक
प्रकरणमा पण ते सधणुं कथन समज लेवुं. अने ते प्रकरणमां कडेवामां आवेल
सधणुं कथन वेदनसूत्र सुधीनुं अडियां उडेवुं जेधजे. आ कथननु तात्पर्य' जे
छे के कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जिवोने केटली
कर्मप्रकृतियो डोय छे ? आ प्रश्नथी लधने १४ औद कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करे
छे. आ कथन सुधीनुं ते प्रकरणनु कथन जेमनुं तेम अडियां समज लेवुं.
जेधजे तथा आज प्रमाणेनुं कथन कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पर्याप्तक
वाटर वनस्पतिकायिक सुधीना सधणा एकेन्द्रिय जिवो औदकर्म प्रकृतियोनुं
वेदन करे छे आ प्रमाणेनु आ सधणुं कथन औधिक प्रकरण अडियां यावत्
शुद्धथी अडणु करवामां आव्युं छे. तेम समजवुं.

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः—कतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः मज्ञप्ताः—कथिताः ? इति प्रश्नः । भगवान्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंचविहा अणंतरोववन्नगा’ पञ्चविधाः—पंचप्रकारकाः अनन्तरोपपन्नकाः कृष्णलेश्य भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः मज्ञप्ताः ‘जाव’ यावत्, यावत्पदेन पृथिवीकायिका अष्कायिका स्तेजस्कायिका वायुकायिका वनस्पतिकायिका इति पञ्चभेदवन्तो भवन्तीति । ‘अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ?’ अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः मज्ञप्ताः ? ‘गोयमा !’ हे गौतम ! ‘दुविहा पन्नत्ता’ द्विविधाः मज्ञप्ताः । ‘तंजहा’ तद्यथा—‘सुहुमपुढवीकाइया वादरपुढवीका-

इस प्रकार समस्त यह औघिक प्रकरण यहां यावत् शब्द से गृहीत हुआ है ।

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा० जाव वणस्सइकाइया’ हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव यावत् वनस्पतिकायिक तक पांच प्रकार के कहे गये हैं । तथा च—ये एकेन्द्रिय जीव पृथिवीकायिक अष्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक के भेद से पांच प्रकार के होते हैं । ‘अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइया णं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता’ हे गौतम ! ये दो प्रकार के कहे

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवे। डेटला प्रकारना कडेवाभां आण्या छे ? ‘गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा जाव वणस्सइकाइया’ हे गौतम ! अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवे। यावत् वनस्पतिकायिक सुधी पांच प्रकारना कडेला छे. ते आ प्रभावे समञ्जा. पृथ्वीकायिक, अष्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिकना लेदथी पांच प्रकारना समञ्जा. ‘अणंतराववणगा कण्हलेस्स भवसिद्धिय पुढवीकाइयाणं भंते ! कइविहा पणत्ता’ हे भगवन् अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक एवे। डेटला प्रकारना कहेला छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां भुश्री गौतमस्वाभीन कडे छे ई—‘गोयमा ! दुविहा पणत्ता’ हे गौतम ! आ

इया य' 'सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च वादरपृथिवीकायिकाश्च । एवम् अनन्तरोपपन्नकाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिका अप्कायिकाः सूक्ष्माश्च भवन्ति, वादराश्च भवन्ति । एवं तेजस्कायिका अपि सूक्ष्माश्च वादराश्च, एवं वायुकायिका अपि सूक्ष्माश्च वादराश्च एवमेव वनस्पतिकायिका अपि सूक्ष्मा भवन्ति वादराश्च भवन्ति 'एवं दुपओ भेदो' एवं द्विपदो भेदो भवति । पर्याप्तत्वाऽपर्याप्तत्वभेदेन चातुर्विध्यं न भवति, अनन्तरोपपन्नकत्वा देवेति । अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक पृथिवीकायिकादारभ्य अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक वनस्पतिकायिकान्तेषु सर्वेषु द्विपदो भेदोऽवगन्तव्य इति ।

'अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिय सुहृमपुढवीकाइया णं भंते । कइ गये हैं । 'तं जहा' जैसे-सूक्ष्म पृथिवीकायिक और वादर पृथिवीकायिक इसी प्रकार से अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक अप्कायिक जीव भी सूक्ष्म और वादर के भेद से दो प्रकार के होते हैं । तेजस्कायिक वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीव भी इसी प्रकार से सूक्ष्म और वादर के भेद से दो-दो प्रकार के होते हैं । ये सब पर्याप्त और अपर्याप्तक भेद वाले नहीं होते हैं-अतः ये सब ४-४ भेद वाले नहीं कहे गये हैं । क्योंकि अनन्तरोपपन्नक जीवों में ये भेद नहीं होते हैं । इस प्रकार अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक वनस्पतिकायिक से लेकर अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक वनस्पतिकायिकान्त-सब एकेन्द्रिय जीवों में दो ही भेद होते हैं ।

'अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिय सुहृमपुढवीकाइया णं
अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एवे। ये प्रकारना कडेवासां आख्या छे. 'तं जहा' ते आ प्रभाणु छे-सूक्ष्म पृथिवीकायिक अने वादर पृथिवीकायिक आ रीते अनन्तरोपपन्नक, कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक अप्कायिक एव पणु सूक्ष्म अने वादरना लेइथी ये प्रकारना डोय छे तेजस्कायिक वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक एवे। पणु आअ प्रभाणु सूक्ष्म अने वादरना लेइथी अण्णे प्रकारना डोय छे. आ अथा पर्याप्त अने अपर्याप्तना लेइवाणा डोता नथी. तेथी आ अथा ४-४ आर-आर लेइवाणा कइया नथी. कारणु के-अनन्तरोप पपन्नक एवे मां आ लेइते डोता नथी आ रीते अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पृथिवीकायिकी लघने अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक वनस्पतिकायिक सुधीना अथा एकेन्द्रिय एवे।मां अण्ण लेइते डोय छे.

'अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिय सुहृम पुढवीकाइया णं भंते । कइ

कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेइयभवसिद्धिकसूक्ष्म पृथिवीकायिकानां भदन्त कवि कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ? इति प्रश्नः । भगवानाह- 'एवं एएणं' इत्यादि, 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहियो अनन्तरोववन्नग- उद्देशओ तहेव जाव वेदे'ति' एवमेतेन अभिलापेन यथैवीधकोऽनन्तरोपपन्नको- देशकः कथित स्तथैवाऽत्रापि वर्णयितव्यो यावद्देदयन्ति । कर्मप्रकृतीनां सत्ता, बन्धनं वेदनं च औघिकाऽनन्तरोपपन्नकोद्देशक कथितमेव वेदितव्यम् इति भावः

'एवं एएणं अभिलावेणं एकारसवि उद्देशगा तहेव भाणियव्वा, जहा ओहिय सए जाव अचरमेत्ति' एवमेतेन अभिलापेन एकादशाऽपि उद्देशका स्तथैव भणित- व्या यथा औघिकशते यावत् अचरम इति । एवम् उपरिदर्शितप्रकारेण परंपरोप-

भंते ! कहकम्म पगडीओ पन्नत्ताओ' हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्ण- लेइय भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीवों के कितनी कर्म प्रकृतियां कही गई है ? 'गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ अणंतरोववन्नग उद्देशओ तहेव जाव वेदे'ति' हे गौतम ! इस सम्बन्ध में जैसा इस अभिलाप द्वारा औघिक उद्देशक-सामान्य रूप से अनन्तरोपपन्नक उद्देशक कहा गया है-उसी प्रकार से यहां पर भी यावत् वेदन सूत्र तक सब कथन करना चाहिये । अर्थात् कर्मप्रकृ- तियों की सत्ता, उनका बन्धन और वेदन जैसा औघिक अनन्तरोपपन्नक उद्देशक में कहा गया है वही सब यहां पर भी समझना चाहिये ।

'एवं एएणं अभिलावेणं एकारस वि उद्देशगा तहेव भाणियव्वा' जहा ओहिय सए जाव अचरिमोत्ति' इस प्रकार अभिलाप द्वारा ११ उद्देशक उसी प्रकार से कहना चाहिये जैसे कि वे औघिक शतक में

कम्मपगडीओ पणत्ताओ' डे लगवत अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अकेन्द्रि एवोने डेटली कर्मप्रकृतियो डडेवामां आवेत्त छे ? 'गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ अणंतरोववण्णग उद्देशओ तहेव जाव वेदे'ति' डे गौतम ! आ सअंधमां डे प्रभाणु आ अलिल प द्वारा औघिक उद्देशामां अटले डे सामान्य इपथी अनंतरोपपन्नक उद्देशो डडेत्त छे. ओण प्रभाणु अडियां पणु थावत् "वेदन सूत्र सुधी सधणुं कथन डडेपुं ओधं अ. अर्थात् कर्म प्रकृतियोनी सत्ता, तेमनुं अंधन अने तेमनुं वेदन डे रीते औघिक उद्देशामां डडेवामां आवेत्त छे, ओ सधणु कथन अडियां पणु समणु देपुं.

'एवं एएणं अभिलावेणं एकारसवि उद्देशगा तहेव भाणियव्वा' जहा ओहियसए जाव अचरिमोत्ति' आ प्रभाणु आ अलिलाप द्वारा अगियार उद्देशामां पडेत्ता डह्या प्रभाणु न समणु देवा. अटले डे प्रभाणु औघिक

पन्नक कृष्णलेश्य भवसिद्धिक सूक्ष्मपृथिवीकायिकादिका अचरम भवसिद्धिक सूक्ष्म-
पृथिवीकायिकान्ता एकादशोद्देशका औघिकोद्देशकवदेव भणितव्याः ॥

इति षष्ठमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥ ३३६॥

अथ सप्तममष्टमं च शतम् ॥

मूलम्—जहा कणहलेस्स भवसिद्धिएहिं सयं भणियं एवं
नीललेस्स भवसिद्धिएहिं वि सयं भाणियव्वं ॥सू० १॥

सत्तमं एगिंदियसयं समत्तं ॥३३-७॥

छाया—यथा कृष्णलेश्यभवसिद्धिकैः शतं भणितम्, नीललेश्य भवसिद्धि
कैरपि शतं भणितव्यम् ॥ सप्तममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३७॥

एवं कापोतलेश्य भवसिद्धिकैरपि शतम् ॥ अष्टममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥

टीका—‘जहा कणहलेस्सभवसिद्धिएहिं सयं भणियं’ यथा—येन प्रकारेण कृष्ण-
लेश्यभवसिद्धिकैः शतं भणितम् । कृष्णलेश्यभवसिद्धिकस्य शतं कथितम् ‘एवं
नीललेस्सभवसिद्धिएहिं वि सयं भाणियव्वं’ एवमेव नीललेश्यभवसिद्धिकैरपि

यावत् अचरम उद्देशक तक कहे गये हैं । उसी प्रकार से परम्परोपपन्नक
कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक आदि से लेकर
अचरम भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक तक के ११ उद्देशक औघिक
उद्देशक के जैसे कहना चाहिये ।

॥ ६ठा एकेन्द्रिक शतक समाप्त ॥

— ७ वां ८ वां शतक —

‘जहा कणहलेस्स भवसिद्धिएहिं सयं भणियं’

जिस प्रकार से कृष्णलेश्य भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के सम्ब-
न्ध में शतक कहा गया है ‘एवं नीललेस्सभवसिद्धिएहिं वि सयं
भाणियव्वं’ इसी प्रकार से नीललेश्य भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्ब-

शतकमां यावत् अचरम उद्देशा सुधी क्ख्या छे, ओण प्रभाणु परंपरीपपन्नक
कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक सुधीना अणियार ११ उद्देशाओ
औघिक उद्देशांमां क्ख्या प्रभाणुना समणवा ॥सू०१॥

॥ छठुं ऐकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

॥सातमा ऐकेन्द्रिय शतक नो प्रारंभ—

‘जहा कणहलेस्स भवसिद्धिएहिं सयं भणियं’

ने प्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक ऐकेन्द्रिय लुवेना स’अ’धमां
शतक क्खेवामां आवेल छे. ‘एवं नीललेस्स भवसिद्धिएहिं वि सयं भाणियव्वं’

शतं भणितव्यम् । यथा कृष्णलेश्यभवसिद्धिकस्य एकादशोद्देशकात्मकशतमधीतं तथैव नीललेश्यभवसिद्धिकस्यापि एकादशोद्देशकयुक्तं शतमध्येतव्यम् । आलाप-
प्रकारस्तु पूर्ववदेवोहनीयः नवरं कृष्णलेश्यभवसिद्धिकस्थाने 'नीललेश्य भवसि-
द्धिक इति पदं निवेश्य शतं भणितव्यम् ॥

॥ इति सप्तमश्लोकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥ ३३७ ॥

एवं काउलेस्स भवसिद्धिर्हि वि सयं ॥ सू० १ ॥

अट्टमं एर्गिदियसयं समत्तं ॥ ३३-८ ॥

न्ध में भी शतक कहना चाहिये, तात्पर्य यही है कि जैसा कृष्णलेश्य, भवसिद्धिक का ११ उद्देशात्मक शतक कहा गया है वैसा ही नीललेश्य भवसिद्धिक का भी ११ उद्देशकों से युक्त शतक कहना चाहिये । इस सम्बन्ध में आलापक प्रकार पूर्व के जैसा ही उद्धावित करना चाहिये, परन्तु आलापक प्रकार में केवल कृष्णलेश्य भवसिद्धिक के स्थान में नीललेश्य भवसिद्धिक ऐसा पद निवेशित करके शतक कहना चाहिये ।

॥ ७ वां एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

'एवं काउलेस्स भवसिद्धिर्हि वि सयं'

'इसी प्रकार कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों का भी आठवां शतक बनाना चाहिये ।

अथ प्रमाणे नीललेश्यावाणा लवसिद्धिक एकेन्द्रियोना संभंधमां पणु शतकं समञ्जसु । कडेवानुं तात्पर्यं अे छे के-अे प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिक एवोना संभंधमां अगियार उद्देशात्मक शतक कडेवामां आवेल छे, अथ प्रमाणेनुं नीललेश्यावाणा लवसिद्धिकना संभंधमां पणु अगियार उद्देशा युक्त शतक कडेपुं जेअे. आ संभंधमां आलापकनेा प्रकार पडेलां कद्या प्रमाणे अ अनावीने कही लेवे। आलापना प्रकारमां कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिकना स्थाने नीललेश्यावाणा लवसिद्धिक अे प्रमाणेनुं पद भूकीने शतक समञ्जसुं. अथ तेमां अने आ कथनमां लिन्नपणु समञ्जसुं. ॥ सू० १ ॥

॥ सातसुं एकेन्द्रिय शतक समाप्तम् ॥

॥ आठमा एकेन्द्रिय शतकनेा प्रारंभ—

'एवं काउलेस्स भवसिद्धिर्हि वि सयं' धृत्यादि

अथ प्रमाणे कापोतलेश्यावाणा लवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवोना संभंधमां

पणु आठसुं शतक समञ्जसुं.

‘एवं काउलेक्ष्य भवसिद्धिर्हि वि सयं’ एवमेव कापोतलेक्ष्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियजीवाना मपि शतमष्टमं निर्मातव्यम् । नीललेक्ष्यभवसिद्धिकप्रकरणमपि एकादशोद्देशात्मकं ज्ञातव्यम्, आलापप्रकाराः स्वयमेवोहनीया इति ॥सू०

अष्टममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥ ३३-८॥

॥ अथ नवमं शतम् ॥

मूलम्—कङ्कविहाणं भन्ते ! अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता, तं जहा—पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया । एवं जहेव भवसिद्धिय सयं भीणयं तहेव अभवसिद्धियसयं वि भाणियव्वं । नवरं नव उद्देशगा चरमअचरमोद्देशगवज्जा सेसं तहेव ॥सू० १॥

नवमं एगिंदिय सयं समत्तं ॥३३-९॥

छाया—कतिविधाः खलु भदन्त ! अभवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधा अभवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—पृथिवीकायिका याचद्वनस्पतिकायिकाः । एवं यथैव भवसिद्धिकशतं भणितं तथैवाभवसिद्धिकशतमपि भणितव्यम् । नवरं नवोद्देशकाश्चरमाचरमोद्देशकवर्जाः, शेषं तथैव’ ॥सू० नवममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३१॥

जैसा नीललेक्ष्य भवसिद्धिक प्रकरण ११ उद्देशात्मक है वैसा ही कापोतलेक्ष्य भवसिद्धिक प्रकरण भी ११ उद्देशात्मक है इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार अपने आप उद्भावित करना चाहिये ।

॥ ३३ वे शतक का आठवां एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

---नौवां शतक---

‘कङ्कविहा णं भन्ते ! अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ इत्यादि

अर्थात्—जे प्रम णे नीललेक्ष्यावाणा भवसिद्धिके ण्वेनुं अगियार उद्देशात्मक प्रकरणे कल्लुं छे. जे प्रमाणे अगियार उद्देशावाणां कापोतलेक्ष्यावाणा भवसिद्धिके ण्वेनुं पणुं प्रकरणे समञ्जसुं. आ स’अ’धमां आलापकेनो प्रकार स्वयं अनावीने समञ्ज देवे ॥सू०१॥

॥आठमं एकेन्द्रिय शतक समाप्तम् ॥

॥नवमा एकेन्द्रिय शतकेनो प्रारंभ—

‘कङ्कविहा णं भन्ते ! अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ इत्यादि

टीका—‘कश्चिहा णं भवे ! अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः खलु भदन्त ! अभवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः ? ‘गोयमा’ पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! अभवसिद्धिका एकेन्द्रियाः पंचविधाः प्रज्ञप्ता’, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिका यावत्तनस्पतिकायिकाः अत्र यावत्पदेन अप्कायिका स्तेजस्कायिका वायुकायिका एतेषां संग्रहो भवति । तथा च पृथिवीकायिकाऽप्कायिकतेजस्कायिकवायुकायिकवनस्पतिकायिकभेदात् पञ्चप्रकारका अभवसिद्धिकैकेन्द्रिया भवन्ति । ‘एवं जहेव भवसिद्धियसयं भणियं एवं अभवसिद्धियसयं वि भाणियव्वं’ एवं यथैव भवसिद्धिकशतं भणितं तथैव अभवसिद्धिकशतमपि भणितव्यम् । किन्तु भवसिद्धिकशतापेक्षया यद् वैलक्षण्यं तदिह दर्शयन्नाह—‘नवरं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—हे भदन्त ! एकेन्द्रिय अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’ वे ये हैं—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक, यहां यावत् पद से ‘अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक इनका ग्रहण किया गया है तथा—च पृथिवीकायिक अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, और वनस्पतिकायिक के भेद से अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के होते हैं । ‘एवं जहेव’ भवसिद्धिय सयं भणियं एवं अभवसिद्धियसयं वि भाणियव्वं’ जैसा भवसिद्धिक शतक कहा गया है उसी प्रकार से अभवसिद्धिक शतक भी कहना चाहिये किन्तु उसकी अपेक्षा जो इस शतक में भिन्नता

टीकार्थ—हे भगवन् अलवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवो डेटला प्रकारना डडेवामां आण्या छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री डडे छे डे—‘गोयमा ! पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ हे गौतम ! अलवसिद्धिक एकेन्द्रिय एव पांच प्रकारना डडेवामां आण्या छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रमाणे छे. ‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक यावत्पदथी अर्थयिक तेजस्कायिक वायुकायिक अने वनस्पतिकायिकनुं ग्रहणुं थयेल छे. एटदे डे—पृथिवीकायिक अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिकना लेदथी अलवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवो पांच प्रकारना डेय छे ‘एवं जहेव भवसिद्धिय सयं भणियं अभवसिद्धियसयं वि भाणियव्वं’ अलवसिद्धिक शतकमां वे प्रमाणे डडेवामां आवेल छे, हे प्रमाणे अलवसिद्धिक शतक पणुं समलु लेवुं. परंतु ते

‘नवरं नव उद्देशगा चरम अचरम उद्देशगवज्जा’ नवरं नवउद्देशकाश्चरमाचरमो-
द्देशकवर्जाः चरमाचरमदशमैकादशोद्देशकरहिताः औघिका अभावसिद्धिकोऽनन्त-
रोपपन्नक परम्परोपपन्नकाऽनन्तरावगाढ परम्परावगाढानन्तराहारक परम्पराहार-
काऽनन्तरपर्याप्त परम्परपर्याप्तहानवैवोद्देशकाः अभावसिद्धिकशते पठनीयाः ।
चरमाचरमोद्देशकौ तु इह न संभवतः । अभावसिद्धिकस्वभावत्वाद्देवेति ॥

॥नवममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३३९॥

अथ दशममेकादशं द्वादशं च शतम् ।

मूलम्—एवं कण्ठलेख्यस्य अभावसिद्धियस्यं पि

दसमं एगिन्दियस्यं समत्तं ॥३३—१०॥

नीललेख्यस्य अभावसिद्धिय एगिन्दिएहि वि स्यं ॥३३—११॥

है वह ‘नवरं नव उद्देशगा चरम अचरम उद्देशगवज्जा’ इस सूत्रपाठ
द्वारा प्रकट की गई है । यहां चरम उद्देशक और अचरम उद्देशक ये दो
उद्देशकों को छोड़कर बाकी के नौ उद्देशक होते हैं । इनमें एक औघिक
अभावसिद्धिक उद्देशक १ अनन्तरोपपन्नक द्वितीय उद्देशक २ परम्परोप-
पन्नक तृतीय उद्देशक ३ अनन्तरावगाढ चतुर्थ उद्देशक ४ परम्पराव
गाढ पांचवां उद्देशक ५ अनन्तराहारक षठा उद्देशक परम्पराहारक
सातवां उद्देशक ७, अनन्तर पर्याप्तक ८ वां उद्देशक और परम्परपर्याप्तक
९ वां उद्देशक हैं, ये नौ ही उद्देशक इस अभावसिद्धिक शतक में पठनीय
हैं । अभावसिद्धिक स्वभाव होने के कारण यहां चरम और अचरम
ये दो उद्देशक संभवित नहीं हैं । ९ वां एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

कथन कर्ता आ शतकमां शुद्धापणुं छे, ते ‘नवरं नव उद्देशगा चरम अचरम
उद्देशगवज्जा’ आ सूत्र पाठद्वारा प्रकट करेण छे अडियां चरम उद्देशो अने
अचरम उद्देशो आ ये उद्देशाने छोडीने आधीना नव उद्देशाओ थाय छे. आमां
ओक औघिक अभावसिद्धिक उद्देशो १ अनन्तरोपपन्नक संभंधी भोजे उद्देशो
२ परंपरोपपन्नक संभंधी त्रीजे उद्देशो ४ अनंतरावगाढ संभंधी चोथो
उद्देशो ४ परंपरावगाढ संभंधी पांचमो उद्देशो ५ अनंतराहारक संभंधी छठो
उद्देशो ६ परंपराहारक संभंधी सातमो उद्देशो ७ अनंतरपर्याप्तक संभंधी
आठमो उद्देशो ८ अने पर पर पर्याप्तक संभंधी नवमो उद्देशो ९ आ नव न
उद्देशाओ आ अभावसिद्धिक शतकमां कडेण नेछिये अभावसिद्धिक स्वभाव
डोवाथी अडियां चरम अने अचरम ओ ये उद्देशाओ संभवता नथी ॥सू०१॥

॥नवमुं ओकेन्द्रिय शतक समाप्ता॥

काउलेस्स अभवसिद्धियसयं ॥३३-१२॥

एवं चत्तारि त्रि अभवसिद्धिय सयाणि णव णव उद्देस-
गाणि भवंति । एयाणि वारस एगिंदियसयाणि भवंति ॥३१-१२॥

तेत्तीमइमं सयं समत्तं ॥३३॥

छाया-एवं कृष्णलेश्याभवसिद्धिकैकेन्द्रियशतमपि ॥३३।१०॥

नीललेश्याऽभवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि शतम् ॥३३।११॥

कापोतलेश्याऽभवसिद्धिकशतम् ॥३३।१२॥

एवं चत्वार्यपि अभवसिद्धिकशतानि नवनवांदेशकानि भवन्ति ।

एवम् एतानि द्वादश एकेन्द्रियशतानि भवन्ति ॥३३।१०-११-२॥

॥ त्रयस्त्रिंशत्तमं शतं समाप्तम् ॥ ३३ ॥

टीका-‘एवं कणहलेस्स अभवसिद्धियसयं’ एवम्-औघिकाऽभवसिद्धिक-
शतमिव कृष्णलेश्याऽभवसिद्धिकैकेन्द्रियशतमपि ज्ञातव्यम् ॥३३।३०॥

दशममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् । १०॥

‘नीललेस्स अभवसिद्धिय एगिंदिएहिं वि सयं’ एवं कृष्णलेश्याभवसिद्धिकैके-
न्द्रियशतमिव नीललेश्याभवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि शतं ज्ञातव्यम् ॥३३।११॥

- ॥ १० वां १२ वां एकेन्द्रिय शतक - ॥

‘एवं कणहलेस्स अभवसिद्धिय एगिंदियसयं’ पि -३३-१०

औघिक अभवसिद्धिक शतक के जैसा ही कृष्णलेश्य अभवसिद्धिक-
एकेन्द्रिय शतक भी है, ऐसा जानना चाहिये, ‘नीललेस्स अभवसिद्धिय
एगिंदिएहिं वि सयं’ कृष्णलेश्य अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय शतक के
जैसा ही नीललेश्य अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय शतक है । ३३-११॥

अगियारमा अकेन्द्रिय शतकनो प्रारंभ—

‘एवं कणहलेस्स अभवसिद्धिय सयं पि’ ध्यादि

टीकार्थ—औघिक अवसिद्धिक शतकमां क्ख्या प्रमाणे न कृष्णलेश्यावाणा
अवसिद्धिक अकेन्द्रियेतुं शतक पणु अणु प्रमाणे छे तेम समणुं,

‘नीललेस्स अभवसिद्धियएगिंदिएहिं वि सयं’ कृष्णलेश्य अवसिद्धिक
अकेन्द्रिय शतकना क्थन प्रमाणे न नीललेश्यावाणा अवसिद्धिक अकेन्द्रियेतुं
शतक समणुं. ॥सू०१॥

अगियारमुं अकेन्द्रिय शतक समाप्त

‘કાઉલેસ્સ અભવસિદ્ધિયસયં’ એવમેવ નીલલેશ્યાભવસિદ્ધિકશતમિવ કાપોત-
લેશ્યાભવસિદ્ધિકશતમપિ જ્ઞાતવ્યમ્ ॥૧૨॥

‘એવં ચત્તારિ વિ અભવસિદ્ધિયસયાણિ’ એમ્-ઉપરિદર્શિત-ક્રમેણ ચત્વા-
ર્યપિ ઔધિકાભવસિદ્ધિક-કૃષ્ણ-નીલ-કાપોતલેશ્યાકાભવસિદ્ધિકરૂપાણિ અભ-
વસિદ્ધિકાનાં શતાનિ ‘ળવળવઉદેસગા ભવંતિ’ નવનવંદેશકાનિ-નવનવોદેશકા-
ત્મકાનિ ઔધિકાભવસિદ્ધિકોદેશમાશ્રિત્ય અનન્તરોપપન્નકપરમ્પરોપપન્નકાનન્ત-
રાવગાઠ પરમ્પરાવગાઠાનન્તરાહારક પરમ્પરાહારકાનન્તરપર્યાપ્તક પરમ્પરપર્યાપ્તક
રૂપાણિ ભવન્તિ । અભવસિદ્ધિસ્વભાવાત્, ચરમાચરમરૂપૌ દશમૈકાદશંદેશૌ ન ભવત

‘કાઉલેસ્સ અભવસિદ્ધિય સયં’-નીલલેશ્ય અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય
શતક કે જેણા કાપોતલેશ્ય અભવસિદ્ધિક શતક હૈ ॥ ૩૩-૧૨॥-

‘એવં ચત્તારિ વિ અભવસિદ્ધિય સયાણિ’ હસ પ્રકાર ચાર શતક
અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય શતક હૈ ? દૂસરા કૃષ્ણલેશ્ય અભવસિદ્ધિક
એકેન્દ્રિય શતક હૈ ૨ તીસરા નીલલેશ્ય અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય શતક
હૈ ૩ ચૌથા કાપોતલેશ્ય અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય શતક હૈ ૪ ઇન શતકો
મૈ ‘ળવ ળવ ઉદેસગા ભવંતિ’ પ્રત્યેક શતક મૈ ૧-૧ ઉદેશક હૈ । ઔધિક
કો આશ્રિત કરકે અર્થાત્ હસ કો લેકર અનન્તરોપપન્નક, પરમ્પરોપપન્નક
અનન્તરાવગાઠ, પરમ્પરાવગાઠ અનન્તરાહારક પરમ્પરાહારક, અનન્તર-
પર્યાપ્તક ઔર પરમ્પર પર્યાપ્તક ચે ઔર નૌ ઉદેશક હોતે હૈ । અભવ-

‘કાઉલેસ્સ અભવસિદ્ધિયસયં’

નીલલેશ્યાવાળા અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય શતકના કૃ ન પ્રમાણે કાપોતલેશ્યાવાળા
અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયેતુ શતક પચ્ચ સમજવું. ॥૩૩-૧૨॥

‘એવં ચત્તારિ વિ અભવસિદ્ધિયા સયાણિ’ આ પ્રમાણે ચાર શતકે
અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય જીવેના સંબંધમાં કહેવામાં આવ્યા છે. તેમાં
એક સામાન્ય પચ્ચાથી અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય શતક કહેલ છે. કૃષ્ણ-
લેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય અભવસિદ્ધિક જીવ સબધી ધીજુ શતક કહ્યું છે. ૨
નીલલેશ્યાવાળા અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય સંબધી ત્રીજુ શતક કહેલ છે ૩
કાપોતલેશ્યાવાળા અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય સંબધી ચેથું શતક કહેલ છે. ૪
આ દરેક શતકેમાં ‘ળવ ળવ ઉદેસગા ભવંતિ’ નવ નવ ઉદેશાઓ કહેવામાં
આવ્યા છે ઔધિક ભવસિદ્ધિક ઉદેશાને અશ્રય કરીને અનન્તરોપપન્નક
પરંપરોપપન્નક. અનન્તરાવગાઠ પરંપરાવગાઠ, અનન્તરહારક, પરંપરહારક
અનન્તર પર્યાપ્તક, અને પરંપર પર્યાપ્તક, આ પ્રમાણેના તે ઉદેશાઓ કહ્યા છે.
અભવસિદ્ધિક સ્વભાવવાળા હોવાથી આ એકેન્દ્રિયોને ચરમ અને અચરમ

इति । 'एवं एयाणि बारस एगिंदियसयाणि भवंति' एवमुपरिपरिदर्शितक्रमेण एतानि पूर्वोक्तानि द्वादशैकेन्द्रियशतानि भवन्ति ।

सामान्यत एकेन्द्रियाणां प्रथमं शतम् ? । कृष्णलेश्य नीललेश्य कापोतलेश्यानां त्रय इति मिलित्वा चत्वारि ४, तथा औधिकभवसिद्धिकेकेन्द्रियः कृष्णलेश्य नीललेश्य कापोतलेश्यै स्त्रीणि शतानि ८ । तथा अभवसिद्धिकानामपि चत्वारि औधिक कृष्णनील कापोतरूपाणि इति सर्वं सङ्कलनया द्वादशशतानि भवन्ति । अष्टसु शतेषु प्रत्येकस्मिन् एकादश एकादशोद्देशकाः, अभवसिद्धिकानां चतुर्णां तु

सिद्धि स्वभाववाले होने से इन एकेन्द्रियों के चरम और अचरम रूप १० वां और ११ वां ऐसे ये दो उद्देशक नहीं कहे गये हैं । 'एवं एयाणि बारस एगिंदियसयाणि भवंति' इस प्रकार से एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में १२ एकेन्द्रिय शतक होते हैं—

सामान्य रूप से एकेन्द्रियों का प्रथम शतक एवं कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले एकेन्द्रियों के तीन शतक-मिलकर चार शतक होते हैं—तथा—च—औधिक भवसिद्धिक एकेन्द्रियों को लेकर कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले और कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के ३ शतक-मिलकर आठ शतक होते हैं । तथा अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के भी चार शतक हैं—एक औधिक और तीन कृष्ण, नील, कापोतलेश्याओ को लेकर सब मिलकर १२ शतक होते हैं । इनमें

૩૫ ૧૦ હસમે અને ૧૧ અગિયારમે એ બે ઉદ્દેશાઓ કહેવામાં આવેલ નથી.

'एवं एयाणि बारस एगिंदिया सयाणि भवंति' આ પ્રમાણે એકઠન્દ્રિય વાળા જીવોના સંબંધમાં ૧૨ બાર એકેન્દ્રિય શતકો કહ્યા છે.

સામાન્ય પશુથી એકેન્દ્રિયોતુ' પહેલું' શતક અને કૃષ્ણલેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા, કાપોતલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિયોના ત્રણ શતકો મળીને ચાર શતકો થાય છે. તથા ઔધિક ભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયોને લઈને કૃષ્ણલેશ્યાવાળા નીલ-લેશ્યાવાળા અને કાપોતિક લેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિકના ત્રણ શતકો મળીને આઠ શતકો થાય છે. તથા અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયોના સંબંધમાં પણ ચાર શતકો કહેવામાં આવેલા છે. તે આ રીતે સમજવા—એક ઔધિક સંબંધી અને કૃષ્ણલેશ્યાયુક્ત, નીલલેશ્યા યુક્ત અને કાપોતલેશ્યા યુક્ત એમ ત્રણ શતકો થાય છે, બધા મળીને બાર શતકો થાય છે આમાં આઠ શતકોમાં દરેક શતકોમાં ૧૧-૧૧ અગિયાર અગિયાર ઉદ્દેશાઓ થાય છે. ચાર અભવ

नवनवैवोद्देशकाश्चरमाचरमत्रजिता इति । तदेवोद्देशकानां सर्वसंकलनया चतुर्विंशत्यधिकशतमुद्देशकानां भवतीति ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री
"भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् त्रयस्त्रिंशत्तमशतकस्य
दशममेकादश द्वादशशतानि
समाप्तानि ॥१०-११-१२॥
समाप्तं च त्रयस्त्रिंशत्तमं शतकम् ।

आठ शतकों में प्रत्येक शतक में ११-११ उद्देशक हैं । चार अभव-
सिद्धि कों के नौ-नौ उद्देशक हैं । यहाँ अचरम उद्देशक छूट जाते हैं ।
इस समस्त उद्देशकों की संख्या १२४ होती है । ११ वां १२ वां एके-
न्द्रिय शतक समाप्त ॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके तेतीसवें शतक का
दसवां ग्यारहवां और बारहवां अवान्तरशतक समाप्त । ३३-१०-१२।
॥ प्रथम एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥

॥ ३३ वां शतक समाप्त ॥

सिद्धिकोना नव-नव उद्देशाञ्चो थाय छे. तेभां अचरम उद्देशक अने अचरम
उद्देशक अचे छे उद्देशाञ्चो छोडी देवाभां आवेत्त छे. आ रीते आ अथा उद्देशा-
ञ्चोनी कुव संख्या १२४ अःसोने बोनीअनी थाय छे. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना तेतीसवां शतकना दस अगीयार अने बारसुं

अवान्तर शतक समाप्त ॥३३-१०-१२॥

॥अकेन्द्रिय शतक समाप्त॥

॥तेतीससुं शतक समाप्त॥

अथ चतुस्त्रिंशत्तमं शतकम् ।

अथस्त्रिंशत्तमे शतके एकेन्द्रियजीवानां निरूपणं कृतम्, चतुस्त्रिंशत्तमेऽपि शतके एकेन्द्रियजीवा एव विग्रहगत्थादि प्रकारान्तरेण निरूप्यन्ते । तदनेन सम्बन्धेनायातस्य चतुस्त्रिंशच्छतकस्य द्वादश शतोपेतस्य इदमादिमं सूत्रम्—'कइविहाणं भंते !' इत्यादि ।

मूलम्—कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा !
 पंचविहा एगिंदिया पन्नत्ता । तं जहा—पुढवीकाइया जाव
 वणस्सइकाइया । एवं एएणं चेव चउक्कएणं भेएणं भाणियव्वं
 जाव वणस्सइकाइया । अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे
 रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोह-
 णित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले
 चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते !
 कइसमएण विग्गहेणं उववज्जेज्जा ? गोयमा ! एगसमइएण वा
 दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केण-
 ट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, एगसमइएण वा दुसमइएण वा जाव
 उववज्जेज्जा, एवं खल्लु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ,
 तं जहा उज्जुयायया सेढी १, एगओ वंका २, दुहओ वंका ३,
 एगयओ खहा ४, दुहओ खहा ५, चक्कवाला ६, अद्धचक्कवाला ७,
 उज्जुयायताए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उवव-
 ज्जेज्जा । एगयओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं
 उववज्जेज्जा । दुहओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं
 विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव उववज्जेज्जा ।
 अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए
 पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे
 रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते पज्जत्तसुहुमपुढवी-

काइत्ताए उववजित्तए से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववजेजा ? गौयमा ! एगसमइएण वा सेसं तं चेव, जाव से तेणहेणं जाव विग्गहेणं उववजेजा । एवं अपजत्तसुहुमपुढवीकाइओ पुरत्थिमिल्ले चरिमंते, समोहणावेत्ता पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते बादरपुढवीकाइएसु अपजत्तएसु उववाएयव्वो ताहे तेसु चेव पजत्तएसु ४ । एवं आउक्काइएसु चत्तारि आलावगा सुहुमोहिं अप्पजत्तएहिं१, ताहे पजत्तएहिं बायरेहिं२, अपजत्तएहिं३, ताहे पजत्तएहिं उववायव्वो ४ । एवं चेव सुहुमतेउकाइएहिं वि अपजत्तएहिं१, ताहे पजत्तएहिं उववायव्वो२ । अपजत्तसुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपजत्तवायरतेउकाइयत्ताए उववजित्तए से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववजेज्जा ? सेसं तं चेव । पज्जत्तवायरतेउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो ४ वाउक्काइएसु सुहुमवायरेसु जहा आउक्काइएसु उववाइओ तहा उववाएयव्वो ४ । एवं वणस्सइकाइएसु वि ॥२०॥सू० १॥

छाया-कतिविधाः खलु भदन्त ! एकेन्द्रियाः प्राप्ताः ? गौतम ! पञ्चविधा एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पृथिवीकायिका यावद्वनस्पतिकायिकाः । एवमेतेनैव चतुष्केण भेदेन भणित्तव्याः, यावद्वनस्पतिकायिकाः । अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! एतस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, समवहत्य यो ऋष एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पश्चिमे चरमान्ते अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उपपत्तुम्, स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत ? गौतम ! एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा यावत् उत्पद्येत ? एवं खलु गौतम ! मया सप्त श्रेणयः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा-ऋज्वायता श्रेणिः, १ एकतो वक्रा, २ द्विधातो वक्रा, ३ एकतः खा, ४ द्विधातः खा, ५

बक्रवालाऽर्द्धबक्रवाला ७ ऋज्वायतया श्रेण्या उत्पद्यमानः एक सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । एकतो बक्रया श्रेण्योत्पद्यमानः द्विसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । द्विधातो बक्रया श्रेण्योत्पद्यमानः त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, तत्तेनार्थेन गौतम । यावद् उत्पद्येत । अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! एतस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, समवहत्य यो भव्यः एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पाश्चात्ये चरमान्ते पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत ? गौतम ! एकसामयिकेन वा शेषं तदेव, यावत्तत्तेनार्थेन यावद् विग्रहेणोत्पद्येत । एवम् पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः पौरस्त्ये चरमान्ते समवधात्य पाश्चात्ये चरमान्ते वादरपृथिवीकायिकेषु अपर्याप्त केषु उपपातयितव्यः, तदा तेष्वेव पर्याप्तकेषु ४, एवम् अप्कायिकेषु चत्वार आलापकाः सूक्ष्मैरपर्याप्तकैः, तदा पर्याप्तकै वादरै अपर्याप्तकैः तदा पर्याप्तकैः उपपातयितव्यः । एवमेव सूक्ष्मतेजस्कायिकैरपि अपर्याप्तकः तदा पर्याप्तकैरुपपातयितव्यः अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, समवहत्य यो भव्यो मनुष्यक्षेत्रे अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकतया उत्पत्तुं, स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, शेषं तदेव । एवं पर्याप्तवादर तेजस्कायिकतया उपपातयितव्यः वायुकायिकेषु सूक्ष्मवादरेषु यथा अप्कायिकेषु उपपातित स्तथा उपपातयितव्यः, एवं वनस्पतिकायिकेष्वपि ॥२०॥सू०-१

टीका—‘कश्चिद्वा णं भन्ते ! एगिंदिया पण्णत्ता’ कतिविधाः—कतिप्रकारका

३४ वां शतक

३३ वें शतक में एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण किया अब इस ३४ वें शतक में भी उन्ही एकेन्द्रिय जीवों का निरूपण विग्रह गति आदि रूप प्रकारान्तर से किया जावेगा । इसी कारण इस ३४ वें शतक का कथन जो कि १२ शतकों वाला है सूत्रकार करते हैं—‘कश्चिद्वा णं भन्ते ! एगिंदिया पण्णत्ता’ इत्यादि ।

॥योत्रीसमा शतक नो प्रारब्ध—पडेयो उद्देशो

तेत्रीसमा शतकमां एकेन्द्रियेणुं निरूपणुं करवामां आव्युं छे, हुवे आ उ४ योत्रीसमा शतकमां पणुं ए एकेन्द्रिय एवेणुं न विग्रह गति विगरे प्रकारान्तरथी निरूपणुं करवामां आवशे, ए कारणथी आ उ४ योत्रीसमा शतकनुं कथन सूत्रकार करे छे.—आ शतक आर शतकेवाणुं छे—‘कश्चिद्वा णं भन्ते ! एगिंदिया पण्णत्ता’ इत्यादि.

खलु भदन्त ! एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः कथिताः ? । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ? ‘पंचविहा एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः—पञ्चप्रकारका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइ काइया’ पृथिवीकायिका यावद्वनस्पतिकायिकाः, अत्र यावत्पदेन अप्कायिकतेजस्कायिक वायुकायिक वनस्पतिकायिक भेदात्पञ्चप्रकारका एकेन्द्रिया भवन्तीति । ‘एवं एणं चेव चउक्कणं भेणं भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइया’ एवम् एतेनैव चतुष्केण भेदेन भणितव्या यावद्वनस्पतिकायिकाः अत्रापि यावत्पदेन पृथिवीकायिकाप्कायिकतेजस्कायिकवायुकायिकानां सग्रहः सूक्ष्माः पृथिवीकायिकाश्च वादराः पृथिवीकायिकाश्चेत्येवं द्वौ भेदौ । ततः अपर्याप्तकाः सूक्ष्माः पृथिवीकायिकाश्च, पर्याप्तकाः सूक्ष्माः पृथिवीकायिकाश्च, अपर्याप्तका वादरपृथिवी-

टीकार्थ—‘कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पणत्ता’ हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? ‘गोयमा ! पंचविहा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं ‘तं जहा’ जैसे—‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथिवीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक यहां यावत् शब्द से अप्कायिक तेजस्कायिक और वायुकायिक इन एकेन्द्रिय जीवों का ग्रहण हुआ है ‘एवं एणं चेव चउक्कणं भेणं भाणियव्वा जाव वणस्सइ काइया’ इस प्रकार पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के एकेन्द्रिय जीवों के चार-चार भेद कह लेना चाहिये जैसे—सूक्ष्मपृथिवीकायिक १ वादरपृथिवीकायिक २ सूक्ष्मपृथिवी के दो भेद अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक और पर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक वादर पृथिवीकायिक के भी दो भेद—वादर

टीकार्थ—‘कइविहाणं भंते ! एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भगवन् एकेन्द्रिय एवे। डेटला प्रकारना कडेवामां आव्या छे ? ‘कइविहा’ धियादि प्रकरणु त्रसनाडीने लक्ष्य करीने समञ्जुं जेधये. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुथी कडे छे के—‘गोयमा पंचविहा एगिंदिया पणत्ता’ हे गौतम ! एकेन्द्रिय एवे। पांच प्रकारना कडेवामां आव्या छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रमाणे छे. ‘पुढवीकाइया जाव वणस्सइकाइया’ पृथ्वीकायिक अने वनस्पति कायिक ‘एवं एणं चेव चउक्कणं भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइया’ आ रीते पृथ्वीकायिकथी लधने वनस्पतिकाय सुधीना एकेन्द्रिय एवे। आर-आर लेहो समञ्जवा जेम के-सूक्ष्म पृथ्वीकायिक १ आदर पृथ्वीकायिक २ सूक्ष्म पृथ्वीकायिकना अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अने पर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अे प्रमाणे जे लेहो तथा आदर पृथ्वीकायिकना पञ्ज-आदर अपर्याप्तक पृथिवीकायिक अने आदर पर्याप्तक

कायिकाः, पर्याप्ता वादरपृथिवीकायिका इत्येवमेकस्य पृथिवीकायिकस्य चत्वारो भेदा भवन्ति । एवमेव अप्कायिकादारभ्य वनस्पतिकायिकान्तानामपि चतुष्को भेदः करणीय इति । 'अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या, 'पुरत्थिमिल्ले चरिमंते' पौरस्त्ये चरमान्ते, पूर्वदिशाया अन्तिमे भागे, 'समवहए' समवहतः, मारणान्तिकसमुद्घातं प्राप्तः । 'समोहणित्ता' समवहत्य, -मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा मृत्वेत्यर्थः, 'जे भविए' यो भव्यः-योग्यः, 'इमीसे रयणप्पभाए, पुढवीए' एतस्या, रत्नप्रभायाः पृथिव्याः, 'पंचत्थिमिल्ले चरिमंते' पाश्चात्ये-चरमांते, पश्चिमदिशाया अन्तिमे भागे इत्यर्थः 'अपञ्जत्तसुहुम पुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकतया उत्पत्तुम् अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकजीवरूपेण उत्पत्तुम्, योग्य इति पूर्वेण सम्बंधः,

अपर्याप्तक पृथिवीकायिक और वादर पर्याप्तक पृथिवीकायिक इस प्रकार से पृथिवीकायिक जीवों के चार भेद होते हैं । इसी तरह से अप्कायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के जीवों के भी चार २ भेद कर लेना चाहिये ।

'अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !' हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' इस रत्नप्रभा-पृथिवी के 'पुरत्थिमिल्ले चरिमंते' जो कि पूर्वदिशा के अन्तिम भाग में 'समवहए' मारणान्तिक समुद्घात को प्राप्त हुआ है और 'समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' मारणान्तिक समुद्घात करके वह इस रत्नप्रभा पृथिवी के 'पंचत्थिमिल्ले चरिमंते' पश्चिमदिशा के अन्तिम भाग में 'अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए' अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य है 'से णं भंते ! कइ

पृथ्वीकायिक आ रीते पृथ्वीकायिक ज्ञेयाना ४ चार लेदो थाय छे. जेण प्रमाणे अप्कायिकथी लछने वनस्पतिकायिक सुधीना ज्ञेयाना पञ्च चार-चार लेदो समञ्जवा जेधजे.

'अपञ्जत्त सुहुमपुढविकाइएणं भंते !' हे भगवन् कइ अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ज्ञेया 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' आ रत्नप्रभा पृथ्वीना 'पुरत्थिमिल्ले चरिमंते !' के जे पूर्वदिशाना अन्तिम भागमां 'समवहए' मारणान्तिक समुद्घात प्राप्त करे छे अने 'समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' मारणान्तिक समुद्घात करीने ते आ रत्नप्रभा पृथ्वीना 'पंचत्थिमिल्ले' पश्चिम दिशाना अन्तिम भागमां 'अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जेजा' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपञ्चथी उत्पन्न थवाने योग्य छे. 'से णं भंते !

‘से णं भंते !’ स खलु भदन्त ! योऽपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिको जीवः रत्नप्रभायाः पूर्वान्ते भागे मारणांतिकसमुद्रातेन मृत्वा तस्या एव पश्चिमदिग्विभागे उत्पत्ति योग्यो विद्यते स जीवः, ‘कइसमइएणं विगगहेणं उववज्जेज्जा’ कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । मरणोत्पत्तयोर्मध्ये क्रियान् समया भवन्तीत्यर्थः । ‘मगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम । ‘एगसमइएण वा, दुसमइएण वा, तिसमइएण वा विगगहेणं उववज्जेज्जा’ एरुसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येत । विग्रहे वक्रगतो च तस्य सद्भावात् गतिरेव विग्रहः विशिष्टो वा ग्रहः—विशिष्टस्थानप्राप्ति रूपा गतिः विग्रह स्तेन, अथवा विग्रहो विलम्बस्तेन विग्रहेण, विग्रहमेव विशिनष्टि—एकसामयिकेन एकः एक एव समयो विद्यते यत्रासौ एकसामयिक स्तेन एकसामयिकेन विग्रहेणेत्यर्थः एवं द्वौ समयौ विद्येते यत्रासौ द्विसामयिक स्तेन त्रयः समया विद्यन्ते यत्रा स्तौ तिसामयिक स्तेनेत्यर्थः । पुनः प्रश्नयन्नाह—‘से केणहेणं’ इत्यादि । ‘से केणहेणं

समइएणं विगगहेणं उववज्जेज्जा’ वह जीव कितने समय की विग्रह गति से उत्पन्न होता है ? इस प्रश्न का तात्पर्य ऐसा है कि कोई सूक्ष्म अपर्याप्तक पृथिवीकायिक जीव जो कि रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्वदिशा के अन्तिम भाग में स्थित है । अब वह वहां से मारणांतिक समुद्रात करके यदि पश्चिम दिशा के अन्तिम भाग में उसी पृथिवी के उत्पन्न होने के योग्य है तो वह कितने समय वाले विग्रह से वहां उत्पन्न होगा ? अर्थात् मरण और उत्पत्ति के बीच में उसे कितना समय लगेगा ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । एगसमइएण वा दुसमइएण वा’ तिसमइएण वा विगगहेणं उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! वह एक समयवाले विग्रह से भी वहां उत्पन्न हो सकता है, दो समय वाले विग्रह से भी वहां उत्पन्न हो सकता है और तीन समय वाले विग्रह से भी वह वहां

कइसमइएण विगगहेणं उववज्जेज्जा’ ते एव कटला समयनी विग्रह गतिथी त्या उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नतु तात्पर्य एतु छे के—कैथं सूक्ष्म अपर्याप्तक पृथिवीकायिक एव के ने रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्वदिशाना छेला लगमा रडेण छे हुवे ते त्यांथी मारणांतिक समुद्रात करीने ने पश्चिमदिशाना छेला लगमां एव पृथिवीमां उत्पन्न थवाने योग्य छाय छे तो ते कटला समयवाणा विग्रहथी त्यां उत्पन्न थशे ? अर्थात् मरण अने उत्पत्तिमां तेने कटला समय दाणशे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे कडे छे के—‘गोयमा । एगसमइएण वा, दुसमइएण वा, तिसमइएण वा विगगहेणं उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! ते एक समयवाणा विग्रहथी पणु त्यां उत्पन्न

भंते ! एवं वुच्चइ' तत्केनार्थेन हे भदन्त ! एवमुच्यते, 'एगसमइएणवा, दुमस-
इएण वा जाव उववज्जेज्जा' एकसामयिकेन द्विसामयिकेन त्रिसामयिकेनवा विग्र-
हेणोत्पद्येत । अत्र यावत्पदेन 'त्रिसामइएणवा विग्गहेणं' इत्यस्य संग्रहः, इत्यवा-
न्तर प्रश्नः । भगवान्नाह—'एवं' इत्यादि । 'एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ
पन्नत्ताओ' एवं खलु हे गौतम ! मया सप्त श्रेणयः पज्ञप्ताः । एत्तत्पकरणं लो-
कनाडी प्रस्तीर्यभावनीयम् । श्रेणीना मति सूक्ष्मतया दुर्विज्ञेयत्वात् असर्वज्ञेन जन्म-
मरणयोश्च ज्ञानुमतिदुष्करत्वात् एतादृश्य श्रेणी जन्म मरणं च प्रतिपादता भगवता
स्वस्मिन् केवलित्वं सूचयां बभूव 'मए' इति वदता । सप्त श्रेणीरेव विभागशोदर्श-

उत्पन्न हो सकता है । "से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ एगसमइएण वा
दुसमइएणवा जाव उववज्जेज्जा' हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण
से कहते हैं कि वह एक समय वाले विग्रह से अथवा दो समय वाले
विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न हो सकता है ?
ऐसा यह अवान्तर प्रश्न है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं खलु गोयमा
मए सत्तसेढीओ पन्नत्ताओ' हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही हैं ।
यह प्रकरण लोकनाडी को प्रस्तुत करके अर्थात् लोकनाडी का आकार
(नकशा) बना करके समझना चाहिये । श्रेणियां अति सूक्ष्म हैं इससे
उनको जानना बहुत ही कठीन है । वे दुर्विज्ञेय हैं असर्वज्ञ जीव जन्म
और मरण को जान नहीं सकता है । अतः ऐसी श्रेणियों को एवं
जन्म मरण को प्रतिपादन करने वाले भगवान् ने अपने में केवलित्व का
सर्वज्ञत्वका सूचन 'मया' इस पद द्वारा किया है वे सात श्रेणियां इस

थर् शके छे जे समयवाणा विग्रहथी पणु त्यां उत्पन्न थर् शके छे.
अने त्रणु समयवाणा विग्रहथी पणु त्यां उत्पन्न थय छे. 'से केणट्टेणं
भंते ! एव वुच्चइ एगसमइएणण वा' जात्र उववज्जेज्जा' छे भगवन्
आप जेबुं शा कारणथी कडे छे ? के ते जेक समयवाणा विग्रहथी त्या
उ पन्न थर् शके छे. अथवा जे समयवाणा विग्रहथी अथवा त्रणु समयवाणा
विग्रहथी पणु त्यां उत्पन्न थर् शके छे ? आ रीतना आ अवान्तर प्रश्नना
उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—'गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ'
छे गौतम ! मे सात श्रेणियो कडी छे. श्रेणियो अत्यंत सूक्ष्म छे. तेथी तेने
समजवुं घणुं कठणु छे कारणु के ते दुर्विज्ञेय छे. असर्वज्ञ जेव जन्म अने
मरणु ने ज्ञानी शकता नथी. तेथी जेवी श्रेणियोने अने जन्ममरणुं प्रति-
पादन करवावाणा भगवाने पोतानामां केवलित्वाणुं—सर्वज्ञपणुं सूचन 'मये'
जे पद द्वारा कथुं छे. ते सात श्रेणियो आ प्रमाणु छे.—'उज्जुयायया सेढी'

યન્નાહ-‘તં જહા’ इत्यादि, ‘तं जहा’ तद्यथा-‘उज्जुयायया सेढी’ ऋज्वायता श्रेणिः सरला लम्बायमाना या श्रेणिः सा ऋज्वायता श्रेणिः ‘सेढी’ ति शब्दः सर्वत्रापि अन्वेष्यः ‘एगयओ वंका’ एकतो वक्रा एकतः कुट्टिष्ठेत्यर्थः ‘दुहओ वंका’ द्विधात उभयतो वक्रंति तृतीया श्रेणि रिति३ । ‘एगयओ खहा’ एकतः खा-एकस्मिन् भागे व्रस नामकनाडी रहिताकाशवती श्रेणिः४ दुहओ खा’ द्विधात उभयतः खा-उभय पार्श्वयो व्रसनाडी रहिताकाशवती श्रेणिः ५, ‘चक्रवाला’ चक्रवाला, मण्डलाकारसमाना ६, ‘अर्द्ध चक्रवाला’ अर्द्धचक्रवाला-अर्द्धमण्डलाकारेत्यर्थः ७ । ता एताः सप्तश्रेणयो भवन्तीति । अथ यदर्धमियं श्रेणिर्दशिता तत्कार्यं दर्शयति-

प्रकार से हैं-‘उज्जुयाययासेढी’ ऋज्वायता श्रेणि-जो सीधी लम्बी श्रेणि है वह ऋज्वायता श्रेणी है । श्रेणि यह शब्द सर्वत्र लगा लेना चाहिए-‘एगयओ वंका’ एक तरफ जो श्रेणि वक्र होती है वह एकतो वक्रा श्रेणी है । ‘दुहओ वंका’ द्विधावक्र श्रेणी जो-श्रेणी दोनों तरफ वक्र होती है वह द्विधा वक्र श्रेणी है । ‘एगयओ खहा’ एक तरफ जो श्रेणि व्रस नाडी से रहित होती है और केवल आकाशवाली होती है ऐसी वह एकतः खा श्रेणी हैं । ‘दुहओ खा’ दोनों तरफ जो श्रेणि व्रस नाडी से रहित होती है और केवल आकाशवाली होती है वह द्विधा खा श्रेणि है । ‘चक्रवाला’ जो श्रेणि मण्डलाकारवाली होती है वह चक्रवाला श्रेणि है । जो श्रेणि अर्द्धमण्डलाकारवाली होती है वह श्रेणि अर्द्ध मण्डलाकार वाली होती है, वह श्रेणी अर्द्ध चक्रवाला हैं । इस प्रकार से श्रेणियां सात होती हैं । ‘उज्जु आययाए सेढीए उववज्जमाणे एगसमएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जो पृथिवी-कायिक जीव ऋज्वायत श्रेणि से उत्पन्न होता हैं वह एक समय वाले

ऋज्वायता श्रेणी કે જે સીધી લાંબી શ્રેણી છે શ્રેણીઆ શબ્દ બધે જ લગાડી લેવો જોઈએ ‘एगयओ वंका’ એક તરફ જે શ્રેણી વાંકી થાય છે. ‘दुहओ वंका’ द्विधावक्र श्रेणी કે જે શ્રેણી બને તરફથી વાંકી હોય છે, તે द्विधावक्र श्रेणी કહેવાય છે. ‘एगयओ खहा’ એક તરફ જે શ્રેણી વ્રસનાડી વિનાની હોય છે, અને કેવળ આકાશવાળી હોય છે, એની તે એકતः ખા શ્રેણી છે. ‘दुहओखा’ બંને તરફથી જે શ્રેણી વ્રસનાડી રહિત હોય છે અને કેવળ આકાશવાળી હોય છે. તે द्विधा ખા શ્રેણી કહેવાય છે ‘चक्रवाला’ જે શ્રેણી મંડલાકાર વાળી હોય છે, તે ચક્રવાલા શ્રેણી કહેવાય છે જે શ્રેણી અર્ધ મંડલાકારવાળી હોય છે, તે અર્ધ ચક્રવાલા શ્રેણી કહેવાય છે. આ રીતે સાત શ્રેણીઓ થાય છે. ‘उज्जु आययाए सेढीए उववज्जमाणे एगसमएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’

‘ઉજ્જુ ખાયયા’ इत्यादि, ‘उज्जु आयया सेठीए उववज्जमाणे एगसमएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ ऋज्वायतया श्रेण्या उत्पद्यमानो जीव एक सामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । यदा मरण स्थानापेक्षया उत्पत्तिस्थानं समश्रेण्यां भवति, तदा ऋज्वायता श्रेणि भवति । तथा ऋज्वायत श्रेण्या गच्छतो जीवस्य एक सामयिकी गति भवतीति भावः । ‘एगओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ एकतो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो जीवो द्विसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । यदा तु मरणस्थानापेक्षया समुत्पत्ति स्थानमेकप्रतरे विश्रेण्यां वर्तते तदा एकतो वक्रा गतिः स्यात्, तत्र च समयद्वयेन गति भवति इति भावः । ‘दुहओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे ति समइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा, द्विधातो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो जीव स्त्रिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । यदा तु मरण

विग्रह से उत्पन्न होता हैं-तात्पर्य इसका ऐसा है कि जब मरण स्थान की अपेक्षा उत्पत्ति स्थान समश्रेणि में होता है तब ऋज्वायत श्रेणि होती है । इस ऋज्वायत श्रेणि से गमन करता हुआ जीव एक समय की गति वाला होता हैं । ‘एगओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ और जब जीव एक तो वक्र श्रेणि से उत्पन्न होता है तब वह दो समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है । तात्पर्य यह है कि जब मरणस्थान से समुत्पत्ति स्थान एक प्रतर में विश्रेणी में होती है तब एकतो वक्रागति होती है । इस श्रेणि में समय द्वय से गति होती है । ‘दुहओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ जीव जब द्विधावक्र श्रेणि से उत्पन्न होता है तब

ને પૃથ્વીક ચિક્ક ઇવ ઋજ્વાયત શ્રેણીથી ઉત્પન્ન થાય છે તે એક સમયવાળા વિગ્રહથી ઉત્પન્ન થાય છે.

કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-ન્યારે મરણ સ્થાનની અપેક્ષાથી ઉત્પત્તિ સ્થાન સમ શ્રેણીમાં હોય છે, ત્યારે ઋજ્વાયત શ્રેણી કહેવાય છે. આ ઋજ્વાયત શ્રેણીથી જતો એવો ઇવ એક સમયની ગતિવાળો હોય છે. ‘एगओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ અને ન્યારે ઇવ એકતો વક્રશ્રેણીથી ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યારે તે બે સમયવાળા વિગ્રહથી ઉત્પન્ન થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-ન્યારે મરણ સ્થાનમાં ઉત્પન્ન થતી એક પ્રતરમાં વિશ્રેણીમાં હોય છે ત્યારે એકતો વક્રા ગતિ થાય છે. આ શ્રેણીમાં બે સમયથી ગતિ થાય છે. ‘दुहओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विगहेणं उववज्जेज्जा’ ઇવ ન્યારે દ્વિધાવક્રશ્રેણીથી ઉત્પન્ન થાય છે,

स्थानात्समुत्पत्ति स्थानम् अधस्तने उपरितने वा प्रतरे विश्रेण्यां भवेत् तदा द्वि-
बक्राश्रेणिः स्यात्, तत्र च समयत्रयेन समुत्पत्तिस्थानस्य प्राप्तिर्भवेदिति भावः ।

‘से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव उववज्जेज्जा’ तत्तेनार्येन हे गौतम ! यावद् उत्प-
द्येत । अत्र याद्यत्पद्देन एवमुच्यते, एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा,
त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पन्नस्य प्रकरणस्य संग्रहो भवति । ‘अपज्जत्त सुहुम
पुढवीकाइया णं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! ‘इमीसे
रयणप्पभाए पुढवीए’ एतस्था : रत्नप्रभायाः पृथिव्याः, ‘पुरत्थिमिल्ले चरिमंते
समोहए’ पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः मरणान्तिकसमुद्घातेन समवहननं कृतवान्
मृत इत्यर्थः । ‘समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ समवहत्य

वह तीन समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है । तात्पर्य यह है
कि जब मरण स्थान से समुत्पत्ति स्थान नीचे के अथवा ऊपर के प्रतर
में बिश्रेणी में होता है तब द्विबक्रा श्रेणी होती है । वहां तीन समय में
समुत्पत्ति स्थान की प्राप्ति होती है । ‘से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव उवव-
ज्जेज्जा’ इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह एक समय
वाले दो समय वाले अथवा तीन समय वाले विग्रह से वह उत्पन्न
हो सकता है ।

‘अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइया णं भंते !’ हे भदन्त ! कोई अप-
र्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ इस
रत्नप्रभा पृथिवी के ‘पुरत्थिमिल्ले चरिमंते’ पूर्वदिशा के अन्तिम भागमें
‘समोहए’ मरा ‘समोहणित्ता’ और मरकर वह ‘जे भविए इमीसे रय-

त्यारे ते त्रणु समयवाणा विग्रह (शरीर)थी उत्पन्न थाय छे. ऊडेवानु
तात्पर्यं अे छे के-न्यारे मरणु स्थानथी उत्पत्तिस्थान नीचेना अथवा
उपरना प्रतरमा विश्रेणीमां डोय छे. त्यारे ‘द्विधातोवका’ श्रेणी थाय छे त्यां
त्रणु समयमां उत्पत्ति स्थाननी प्राप्ति थाय छे. ‘से तेणट्टेणं गोयमा !
जाव उववज्जेज्जा’ ते कारणुथी छे गौतम । मेंं अेवुं डहु छे के-ते अेक समयवाणा
जे समयवाणा अथवा त्रणु समयवाणा विग्रह-शरीरथी उत्पन्न थयं शके छे.

‘अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयाणं भंते । छे लगवन् ऊां अपर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिक एव ‘इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ आ रत्नप्रभा पृथ्वीना
‘पुरत्थिमिल्ले चरिमंते’ पूर्व दिशाना अन्तिम भागमां ‘समोहए’ मरणु पाये
‘समोहणित्ता’ अने मरणु पाभीने ‘जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्च-

मारणान्तिक सद्युद्धातं कृत्वा यो भव्यः—योग्यः एतस्या रत्नप्रमाणाः, पृथिव्याः
 'पञ्चस्थिमिल्ले चरिमंते' पाश्चात्ये चरमान्ते, 'पञ्जत्त सुहुम पुढ्वीकाइयत्ताए
 उववज्जत्तए' पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुम्, 'से णं भंते ! कइसमइ-
 एणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' स खलु भदन्त ! जीवः—कति सामयिकेन विग्रहेणो-
 त्पद्येतेति प्रश्नः । अगवान्नाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'एगसम
 इएण वा, सेसं तं चैव' एकसामयिकेन वा शेषं तदेव प्रतिवचनावसरे पूर्वप्रकरण-
 म्मेव अत्राभ्येतव्यम् । हे गौतम ! एकसामयिकेन वा विग्रहेण, द्विसामयिकेन वा
 विग्रहेण, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येत । कियत्पर्यन्तं पूर्वप्रकरणम् इह
 ज्ञातव्यं तत्राह—'जाव' इत्यादि । जाव से तेणट्टेणं' यावत्तत्तेनार्थेन, अयमाशयः
 द्विसामयिकेन वेत्पारभ्य 'से केणट्टेणं' इत्यादि प्रश्न स्तदुत्तरं चात्र पूर्ववद्वाच्यम् ।
 'से तेणट्टेणं जाव विग्गहेणं उववज्जेज्जा' यावत् हे गौतम ! तत्तेनार्थेन एवमुच्यते—
 एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येत इति २ ।

णप्पश्चाए पुढ्वीए पञ्चस्थिमिल्ले चरिमंते पञ्जत्तसुहुम पुढ्वीकाइय-
 ताए उववज्जत्तए' इसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिमदिशा के अन्तिम
 भाग में पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य
 हुआ तो 'से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' हे भदन्त !
 वह कितने समय वाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है ? उत्तर में
 प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! एगसमइएण वा सेसं तं चैव' हे गौतम !
 वह वही एक समयवाले विग्रह से अथवा दो समय वाले विग्रह से
 अथवा तीन समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है । 'जाव से तेणट्टेणं
 जाव विग्गहेणं उववज्जेज्जा' ऐसा यह सब कथन वहां तक कर लेना
 चाहिये कि जहाँ गौतमस्वामी के पूछने पर प्रभुश्री ने गौतमस्वामी से
 ऐसा कहा है कि हे गौतम ! मैंने इस कारण से ऐसा कहा है कि वह

स्थिमिल्ले चरिमंते पञ्जत्त सुहुमपुढ्वीकाइयत्ताए उववज्जत्तए' आ रत्नप्रभा
 पृथ्वीना पश्चिम दिशाना छेवला भागमां पर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक पण्णाथी
 उत्पन्न थाने ये अ्य डोय तो—'से णं भंते ! कइसमइएण विग्गहेणं उववज्जेज्जा'
 हे भगवन् ते केटला समयवाणा विग्रह (शरीर)थी त्यां उत्पन्न थय छे ?
 आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—गोयमा । एगसमएण वा सेसं तं चैव'
 हे गौतम ! ते त्यां अेक समयवाणा विग्रह (शरीर)थी अथवा अे समयवाणा
 विग्रहथी उत्पन्न थाय छे 'जाव से तेणट्टेणं जाव विग्गहेणं उववज्जेज्जा'आ
 प्रमाणेणुं ते सधणुं कथन त्यां सुधी कडेणुं अेधअे न्यां सुधी गौतमस्वामीना
 प्रधवाथी प्रभुश्री अे गौतमस्वामीने अेणुं कडुं छे के—हे गौतम ! भे

‘एवं अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइओ पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते वायरपुढवीकाइसु अपञ्जत्तएसु उववाएयव्वो’ एवं यथा-अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्य रत्नप्रभापृथिव्याः पूर्वभागात् समवहननानन्तरं रत्नप्रभापृथिव्याः पश्चिमभागे पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी कायिकेषु उपपातो दर्शित इत्येव अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः तं पौरस्त्ये चरमान्ते समवघात्य-तस्य समुद्घातं करियित्वा पाश्चात्ये चरमान्ते वादरपृथिवीकायिकेषु अपर्याप्तकेषु उपपातयितव्यः । अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पूर्व-चरम भागे समवहतः समवहत्य यः खलु रत्नप्रभायाः पश्चिमे भागे अपर्याप्त वादर

एक समयवाले दो समयवाले अथवा तीन समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है ।२

‘एवं अपञ्जत्त सुहुमपुढविकाइओ पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहणा-वेत्ता पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते वायरपुढवीकाइएसु अपञ्जत्तएसु उववा-एयव्वो’ जैसा अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक का रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व भाग से समुद्घात होने के अनन्तर रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम भाग में पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकों में उपपात दिखाया है उसी प्रकार से-वैसा ही-अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकका पूर्वदिशा के चर-मान्त में समुद्घात करवा कर पश्चिमदिशा के चरमान्त में अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकों में उत्पाद दिखलाना चाहिये । इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार ऐसा है-हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरम भाग में मरा और भरकर वह रत्न-प्रभापृथिवी के पश्चिम भाग में अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकों में उत्पन्न

ते कारण्णथी ज्ञेपुं कल्लुं छे क्के-ते ज्ञेक समयवाणा, जे समयवाणा अथवा त्रयु समयवाणा विग्रह (शरीर)थी उत्पन्न थाय छे.

‘एवं अपञ्जत्त सुहुम पुढविकाइओ पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते ! वायरपुढविकाइएसु अपञ्जत्तएसु उववाएयव्वो’ अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकेना रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्व लग्गी समुद्घात थया पछी रत्नप्रभा पृथिवीना पश्चिम लग्गीमा पर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीकायिकेमा उपपात जे प्रभाजे भताव्वे छे, ज्ञेज्ज प्रभाजे अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिके ना पूर्व दिशाना चरमान्तमा समुद्घात करवीने पश्चिम दिशाना चरमान्तमा अपर्याप्तक वादर पृथिवीकायिकेमा उत्पाद भताव्वे जेधज्जे, आ स भधमा आलापनेा प्रकार आ प्रभाजे ना छे-हे लग्गवन् कोध अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवी कायिक ज्व रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्व चरम लग्गीमा भरण्ण पाजे ज्ञेने गरण्ण

पृथिवीकायिकेषु समुत्पत्तु योग्यः स खलु भदन्त ! कियत्सामयिकेन विग्रहे-
णोत्पद्यते ? हे गौतम ! यदि ऋज्वायतया श्रेण्या उत्पद्यते, तदा एकसामयिक-
विग्रहेण, एकतो वक्रया जायमानो द्विसामयिकेन विग्रहेण, द्विधातो वक्रया जाय-
मानस्त्रिसामयिकेन विग्रहेण जायते इत्यादिकं पूर्ववदेव सर्वज्ञातव्यमिति ३ ।
ताहे तेसु चेव पञ्जत्तएसु १ तदा तेण्वेव पर्याप्तकेषु उपपातो वक्तव्यः ।

तथाहि—हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः रत्नप्रभायाः पश्चिमे-
चरमान्ते पर्याप्तवाद्दर पृथिवीकायिकतया उत्पत्तियोग्यो भवेत् । स खलु किय-
त्सामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत ? हे गौतम ! एकसामयिकेन वा द्विसामयिकेन वा,
त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येत इत्यादिकं सर्व पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति ४ ।

होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहां कितने समय वाले विग्रह
से उत्पन्न होता है ? गौतम ! यदि वह ऋज्वायत श्रेणि से वहां उत्पन्न
होता है तो एक समय वाले विग्रह से, एकतो वक्रा श्रेणि से यदि
उत्पन्न होता है तो दो समयवाले विग्रह से और यदि वह वहां द्विधा
तो वक्रा श्रेणि से उत्पन्न हुआ है तो वह तीन समय वाले विग्रह से
उत्पन्न होता है इत्यादि सब कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये ३ ।

‘ताहे तेसु चेव पञ्जत्तएसु’ हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्म
पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभापृथिवी के पूर्वचरम भाग में मरा और मर
कर वह रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमभाग में पर्याप्त वाद्दर पृथिवी-
कायिकों में उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह कितने
समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! वह वहां एक

पामीने ते रत्नप्रभा पृथ्वीना छेददा लागमां अपर्याप्त आदर पृथिविकायि-
केमां उत्पन्न थवाने योग्य थये डोय तो छे लगवन् ते त्यां डेटला समय
वाणा विग्रह (शरीर) थी उत्पन्न थाय छे आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री डडे
छे के छे गौतमां ने ते ऋज्वायत श्रेणीथी त्या उत्पन्न थाय छे, तो अक
समयवाणा विग्रहथी (शरीर)थी, अकतोवका श्रेणीथी उत्पन्न थाय छे, तो
ते त्रणु समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे, विगेरे प्रकार्तुं सधणुं कथन
डिदां कथां प्रभाणे न समलु देवुं ३

‘ताहे तेसु चेव पञ्जत्तएसु’ छे लगवन् अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिविकायिक
एव रत्नप्रभापृथ्वीना पूर्वचरम लागमां मरणु पाये अने मरीने ते रत्नप्रभा
पृथ्वीना पश्चिम चरमलागमां पर्याप्त आदर पृथिविकायिकेमां उत्पन्न थवाने
थयोग थहा डोय तो छे लगवन् ते डेटला समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय

‘एवं आउक्काइएसु चत्तारि आलावगा-सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं १, ताहे पज्जत्तएहिं २, वायरेहिं अपज्जत्तएहिं ३, ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो ४, एवं पृथिवी कायवदेव अप्कायिकेषु चत्वार आलापकाः, सूक्ष्मैरपर्याप्तकैः १, तदा पर्याप्तकैः २, वादरैः अपर्याप्तकै ३, तदा पर्याप्तकैः ४, उपपातयित्तव्यः । हे भदन्त ! अपर्याप्तसूक्ष्म पृथिवीकायिकः अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पूर्वचरमान्ते समवहतः समवहत्य रत्नप्रभायाः पश्चिमे चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्माप्कायिकतया समुत्पत्तियोग्यः स कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत ? इति प्रश्नं कृत्वा हे गौतम ! एक सामयिकेन यावत् त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । इत्याद्युत्तरं पूर्ववदेवेति प्रथम

समय वाले विग्रह से अथवा दो समय वाले विग्रह से अथवा तीन समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है । इत्यादि सब कथन पूर्व के जैसा ही जानना चाहिये । ४॥

‘एवं आउक्काइएसु चत्तारि आलावगा सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं १ ताहे पज्जत्तएहिं वायरेहिं अपज्जत्तएहिं ३ ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो ४’ इसी प्रकार से अप्कायिकों के चार आलापक कहलेना चाहिये । जैसे-हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा और मरकर वह रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिकरूप से उत्पत्ति के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है, दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और

छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे-डे गौतम ! ते त्यां ओक समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे, अथवा जे समयवाणा विग्रहथी अथवा त्रयु समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थय छे विगेरे सधणुं कथन पडैलां कद्या प्रमाणे ज्ञ समञ्जुं ॥४॥

एवं आउक्काइएसु चत्तारि आलावगा सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं उववाएयव्वो ४’ आ ज्ञ प्रमाणे अप्कायिकाना सणधमा आर आलापकां कडेवा जेधं जेभं डे-डे लगवन् कोधं अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिकं अत्र आ रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्व चरमान्त लागमां मरणु पाभे अने मरणु पाभीने ते रत्नप्रभा पृथिवीना पश्चिम चरमान्त लागमां अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिकं पणुथी उत्पन्न थवाने योग्य थवेा होय तो हे लगवन् ते त्यां डेटला समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे-डे गौतम ! ते त्यां ओक समयवाणा विग्रहथी पणु उत्पन्न थाय छे. जे समयवाणा विग्रहथी

आलापकः १, हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः रत्नप्रभा पूर्वचरमान्ते समवहत्य रत्नप्रभा पश्चिमचरमान्ते पर्याप्त सूक्ष्मापकायिकतया उत्पत्ति योग्यः स कियत्सामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत १, गौतम ! एकसामयिकेन वा यादत् त्रिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत इत्यादिकं पूर्ववदेवेति द्वितीय आलापकः २, हे भदन्त अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिको रत्नप्रभा पूर्वचरमान्ते समवहत्य रत्नप्रभा पश्चिमचरमान्ते अपर्याप्तबादरापकायिकतया उत्पत्तियोग्यः स कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत ? उत्तरम् एवमेवेति तृतीय आलापकः ३, हे भदन्त ! अपर्याप्त

तीन समय वाले विग्रह से भी होता है इत्यादि रूप से प्रश्न और उत्तर पूर्वोक्त अनुसार जानना चाहिये ऐसा यह प्रथम आलापक है । हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा के पूर्व चरमान्त में मरा और रत्नप्रभा के ही पश्चिम चरमान्त में पर्याप्त सूक्ष्म अपकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहां कितने समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! वह वहां एक समय वाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है दो समय वाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है । तीन समय वाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और चार समय वाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है ऐसा यह द्वितीय आलापक है २ । हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में बादर अपर्याप्त रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहां कितने समय के विग्रह से उत्पन्न होगा ? गौतम इस विषय में उत्तर जैसा ऊपर कहा गया है

पणु उत्पन्न थाय छे, अने त्रणु समयवाणा विग्रहथी पणु उत्पन्न थाय छे, इत्यादि प्रकारथी प्रश्न अने उत्तर पडेलां कहां प्रमाणे समयवा. अे प्रमाणेने। आ पडेले। आलापक कही छे.

हे भगवन् केई अपर्याप्तक अपकायिक एव रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्व चरमान्तमां भरणु पासे अने रत्नप्रभा पृथिवीना न पश्चिम चरमान्तमां पर्याप्त सूक्ष्म अपकायिकपणुथी उत्पन्न थवाने योग्य अन्थे होय तो हे भगवन् ते त्यां अेक समयवाणा विग्रहथी पणु उत्पन्न थाय छे, अे समयवाणा विग्रहथी पणु उत्पन्न थाय छे, अे प्रमाणेने। आ थिले आलापक कडेल छे. २.

हे भगवन् केई अपर्याप्त सूक्ष्म अपकायिक एव रत्नप्रभापृथिवीना पूर्व चरमान्तमां भरणु पासे अने भरणु पासीने ते रत्नप्रभापृथिवीना पश्चिम चरमान्तमां बादर अपर्याप्तक रूपथी उत्पन्न थवाने योग्य थये होय तो हे भगवन् ते त्यां केटला समयना विग्रहथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां

सूक्ष्म पृथिवीकायिकः रत्नप्रभा पूर्वचरमान्ते समवहत्य रत्नप्रभा चरमान्ते पर्याप्त बादराफ्कायिकतया उत्पत्ति योग्यो विद्यते स क्रियत्सामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत इति प्रश्नस्योत्तरं पूर्ववदेवेति चतुर्थ आलापकः ४, तदेवं चत्वार आलापका अप्कायिकेषु समुत्पद्यमानस्य भवन्तीति । 'एवं चेव सुहुमतेउकाइएहि वि अपज्जत्तएहि ताहे पज्जत्तएहि उववाएयव्वो' एवमेव सूक्ष्मतेजस्कायिकैरपि अपर्यप्तकैश्चैव पर्याप्तकै रूपपातयितव्यः ।

तथाहि—अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! रत्नप्रभापूर्वचरमान्ते समवहत्य रत्नप्रभायाः पश्चिमचरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक-

वैसा ही है। ऐसा यह तृतीय आलापक है। हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा और वह रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में पर्याप्त बादर अप्कायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो वहां पर वह कितने समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है? हे गौतम ! इस सम्बन्ध में भी उत्तर ऊपर में कहे गये अनुसार ही जानना चाहिये। इस प्रकार से यह चतुर्थ आलापक है। यही बात 'सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं' आदि सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है। 'एवचेव सुहुमतेउकाइएहिं वि अपज्जत्तएहिं ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो' इसी प्रकार से सूक्ष्मतेजस्कायिक अपर्याप्त और पर्याप्त में उपयोग कहना चाहिये। जैसे—हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक

प्रलुश्री कहे छे के—गौतम ! आ संभध ने। उत्तर उपर कइयो छे तेज प्रभाणे छे तेम समज्जु' अे रीते आ त्रीणे आलापक कहेल छे. ३

हे लगवन् कइ अपर्याप्तक अप्कायिक एव रत्नप्रभापृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां भरखुपामे अने मरीने ते रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां पर्याप्तभादर अप्कायिक पणुश्री उत्पन्न थवाने योग्य अन्यो होय तो ते त्यां केटला समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरनां प्रलुश्री कहे छे के—हे गौतम ! आ संभधमां पणु उत्तर उपर कइया प्रभाणे ज समज्जो. आ रीते आ थोथो आलापक कहेल छे ४ अेव वात 'सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं' विगेरे सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करेल छे

'एवं चेव सुहुम तेउ काइएहि वि अपज्जत्तएहिं ताहे पज्जत्तएहि उववाएयव्वो' अेव प्रभाणे सूक्ष्म तेजस्कायिक अपर्याप्त अने पर्याप्तमां कहेवा लेधअे. अेटले के—अपर्याप्त अने पर्याप्तना लेदने लधने सूक्ष्म तेजस्कायिकनु कथन करवु लेधअे अप्कायिकना कथन प्रभाणे ज आ तेजस्कायिकना कथनमां पणु चार आलापको थाय छे. जेम के—हे लगवन् कइ अपर्याप्तक सूक्ष्म तेजस्कायिक

तया समुत्पत्तियोग्यो विद्यते स कियत् सामयिकविग्रहेण उत्पद्यते त्यादि क्रमेण पूर्वोदित प्रश्नोत्तराभ्यां प्रथम आलापकः १, स एव पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकेषु समुत्पत्तियोग्यः इत्यादि क्रमेण द्वितीय आलापकः ज्ञ तव्यः । अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइएणं भंते !' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' एतस्या रत्नप्रभायाः

सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा के पूर्व चरमान्त में मरा और मर कर वह रत्नप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में सूक्ष्म तेजस्कायिक के अपर्याप्त रूप से उत्पत्ति के योग्य हुआ तो वह हे भदन्त ! कितने समय वाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है ? इत्यादि क्रम से पूर्व में कहे गये प्रश्न और उत्तरों को लेकर यहां प्रथम आलापक कह लेना चाहिये । हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव रत्नप्रभा के पूर्व चरमान्त में मरा और मरकर वह रत्नप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकों में उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो वह वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है इत्यादि क्रम से द्वितीय आलापक होता है यहां जो बादर अपर्याप्त और बादर पर्याप्त में उत्पन्न होने के सम्बन्ध में इसके जो दो भंग नहीं कहे गये हैं उसका कारण वहां बादर तेजस्कायिकों का अभाव है । 'अपज्जत्त सुहुम पुढवी काइएणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इस

एव रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वं चरमान्तमां भरे अने मरीने ते रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां अण्ण इपथी उत्पत्तिने योग्य थयेत्त होय तो ते हे लगवन् केट्ठा समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे ? विगेरे कुमथी पडेत्ता कडेत्ता प्रश्ना अने उत्तरे लधने अडियां पडेत्ता आलापक कडेत्ता जेधअे.

हे लगवन् केट्ठा अपर्याप्तक सूक्ष्म तेजस्कायिक एवे रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमां भरणुपामे अने मरीने ते रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिमचरमान्तमां पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकमां उत्पन्न थवाने योग्य अन्ये होय तो ते हे लगवन् केट्ठा समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? विगेरे कुमथी णीजे आलापक। समज्जवे. अडियां जे आदर अपर्याप्त अने आदर पर्याप्तमां उत्पन्न थवाना सम्बन्धमां तेना जे लंगो कह्या नथी. तेनुं कारण अे छे के-त्यां आदर तेजस्कायिकेने. अलाव छे 'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' हे लगवन् केट्ठा अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक एव

पृथिव्याः पौरुषे चरमान्ते समवहतो मारणान्तिकसमुद्वातेन मृत इत्यर्थः । 'समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते' समवहत्य-मृत्वा, यो मव्यो योग्यः मनुष्य क्षेत्रे, 'अपज्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक तथा उत्पत्तुं योग्य इति पूर्वेण सम्बन्धः 'से णं भंते ! कइसामइएणं विग्गहेणं उववजेज्जा' स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्यतेति प्रश्नः । उत्तरमाह- 'सेसं तं चेष' शेषं तदेव पृथिवीकायिकायिकेषु उत्पत्तिविषये बहुत्तरितं तदेव, एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत इत्यादिकं सर्वं पूर्ववदेवेति । एवं 'पज्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो' एवम्

रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा 'समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्त वायर तेउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए' और सरकर पइ मनुष्य क्षेत्र में अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ 'से णं भंते ! कइसामइएणं विग्गहेणं उववजेज्जा' तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! 'सेसं तं चेष' पृथिवीकायिकों में उत्पत्ति होने के विषय में जो उत्तर दिया गया है वही उत्तर यहाँ पर भी समझना चाहिये अर्थात् वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है । 'एवं पज्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो' इसी प्रकार से यहाँ ऐसा भी कह लेना चाहिये कि हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा

आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमा भरणुपामे अने 'समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए' अने मरीने ते मनुष्य-क्षेत्रमा अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकपणुाथी उत्पन्न थवाने योग्य थयेस डेय ते । 'से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववजेज्जा' तो हे भगवन् ते त्यां डेटवा समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे-हे गौतम ! 'सेसं तं चेष' पृथ्वीकायिकेमां उत्पन्न थवाना संबन्धमा ले प्रमाणेने उत्तर दइये छे, तेज प्रमाणेने उत्तर अडियां पणु समव्वो. अर्थात् ते त्यां ओक समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थय छे, जे समय वाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, अने त्रणु समयवाणीविग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, 'एवं पज्जत्तवायरतेउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो' ओज प्रमाणे अडियां ओपुं पणु कडेपुं जेधं जे डे-हे भगवन् डेधं अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमा भरणु पामेते डेय

पूर्वदर्शितक्रमेण पर्याप्त वादरतेजस्कायिकतया उपपातयितव्यः, यथा-अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकजीवस्य, अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकेषु उपपातो दर्शित-स्तथैव पर्याप्त वादरतेजस्कायिकेऽपि उपपातो वर्णनीयः, इति ४ 'वाउकाइए सुहुमवायरेसु जहा आउक्काइएसु उववाइओ तथा उववाएयव्वो' पृथिवीकायिकः सूक्ष्म वादरपर्याप्तापर्याप्तकेषु यथा अणुकायिकेषु उपपातितः तथा उपपातयितव्यः ४ अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिकेषु १, पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकेषु २. अपर्याप्त

और मरकर वह मनुष्यक्षेत्रमें पर्याप्त वादर तेजस्कायिकरूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हैं भदन्त ! वह वहा कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! जैसा कथन ऊपर किया गया है वैसाही कथन यहाँ पर भी जानना चाहिये अर्थात् वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है । इस प्रकार से ये ४ आलाप तेजस्कायिकों की उत्पत्ति के विषय में हो जाते हैं । "वाउकाइए सुहुमवायरेसु जहा आउक्काइएसु उववाइओ तथा उववाएयव्वो" हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा और मर कर वह इसी रत्नप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में सूक्ष्म अपर्याप्त वायुकायिकों में उत्पत्ति के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समय वाले

अने मरीने ते मनुष्य क्षेत्रमां पर्याप्त वादर तेजस्कायिकपण्णाथी उत्पन्न थवाने योग्य अनेल डोय तो हे लगवन् ते त्यां डेटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे डे-डे गौतम ! उपर ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, अने प्रमाणेनुं कथन अहियां यणु समणुं. अर्थात्—ते त्यां अेक समयवाणी विग्रहगतिथी यणु उत्पन्न थाय छे, अे समयवाणी विग्रहगतिथी यणु उत्पन्न थाय छे अने त्रणु समय वाणी विग्रहगतिथी यणु उत्पन्न थाय छे, आ प्रमाणेता आ चार आलापके तेजस्कायिकेनी उत्पत्तिना संबंधमां थर्थ ज्ञय छे

'वाउकाइए सुहुमवायरेसु जहा आउक्काइएसु उववाइओ तथा उववाएयव्वो' हे लगवन् केथ अपर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां मरणु पाभे अने मरीने ते आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिमचरमान्तमां सूक्ष्म अपर्याप्तक वायुकायिकेमां उत्पन्न थवाने योग्य अनेल डोय तो हे लगवन् ते त्यां डेटला समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री अित्तारवाणीने कडे छे

वादरवायुकायिकेषु ३. पर्याप्त वादरवायुकायिकेषु ४ अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिकस्योपपातं वदता चत्वार आलापका ज्ञातव्या इति । 'एवं वणस्सइकाइएसु वि

विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! वह वहाँ जैसा ऊपर में उत्तर रूप में कहा गया है वैसा ही यहाँ पर जानना चाहिये । ऐसा यह प्रथम आलापक है । इसी प्रकार से—'हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी कायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा और मर कर वह उसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिकों में उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ?' इस प्रश्न के उत्तर में भी यही पूर्वोक्त रूप से समाधान हे गौतम ! जानना चाहिये । इसी प्रकार से—'हे भदन्त ! कोई सूक्ष्म अपर्याप्त पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा और मरकर वह उसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त वादरवायुकायिकों में उत्पत्ति के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में भी हे गौतम ! वही पूर्वोक्त रूप से समाधान जानना चाहिये इसी प्रकार से—'हे भदन्त ! कोई सूक्ष्म अपर्याप्त पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व

के-हे गौतम ! हे प्रभाणु उपर उत्तर वाक्य इपे कडेव छे, ते प्रभाणु ते त्यां उत्पन्न थाय छे. तेम समज्जुं. आ प्रभाणुने आ पडेवे. आलापक कहेल छे आण प्रभाणु हे लगवन् केर अपर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां मरे अने मरीने ते अेण रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिकेमां उत्पन्न थवाने योग्य अन्ये डोय तो हे लगवन् ते त्यां केटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुश्री कहे छे के हे गौतम ! आ पूर्वोक्त कथन समाधान इपथी उत्तर इपे समज्जुं.

अेण प्रभाणु हे लगवन् केर सूक्ष्म अपर्याप्तक वायुकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां मरए पाये अने मरए पछी आण रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां अपर्याप्तक वादर वायुकायिकेमां उत्पन्न थवाने योग्य थयेल डोय ? तो हे लगवन् ते त्यां केटला समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां पणु हे गौतम ! पडेला कहेल ते उत्तर समाधान इपे समज्जवे. हे लगवन् केर सूक्ष्म अपर्याप्तक वायु-

२०, एवम् अप्कायिकवदेव वनस्पतिकायिकेषु अपर्याप्तकसूक्ष्मेषु पर्याप्तकसूक्ष्मेषु
'अपर्याप्तवादरेषु पर्याप्तवादरेषु चापर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्योपपातो
वक्तव्यः ४, प्रकारस्तु पूर्ववदेवेति भावः ॥सू०१॥

चरमान्त में मरा और मरकर वह उसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम
चरमान्त में पर्याप्त वादरवायुकायिकों में उत्पत्ति के योग्य हुआ तो
'हे भदन्त ! वह वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ?'
'हे गौतम इस प्रश्न के उत्तर में भी वही पूर्वोक्त रूप से समाधान
जानना चाहिये । इस प्रकार से यहां ये चार आलापक होते हैं । "एवं
वणस्सहकाइएसु वि' २०-अपकायिक के जैसे ही वनस्पतिकायिकों
में भी अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक का उपपात कहना चाहिये । जैसे-
हे भदन्त ! कोई अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभा
पृथिवी के पूर्वचरमान्त में मरा और मरकर वह उसी रत्नप्रभा पृथिवी-
के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों में उत्पत्ति के
योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न
होता है ? हे गौतम ! इस प्रश्न के उत्तर में वही पूर्वोक्त समाधान
जानना चाहिये । ऐसा यह प्रथम आलापक है । इसी प्रकार से पर्याप्त
सूक्ष्म वनस्पतिकायिकों में उत्पन्न होने के सम्बन्ध में अपर्याप्त वादर

कायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमा भरणुपामे अने पछी
ते अण्ण रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमा पर्याप्त वादर वायुकायिकेमां
उत्पन्न थवने योग्य थयेल डाय तो डे लगवन् ते त्यां डेटला समयवाणी
विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे डे डे
गौतम ! आ प्रश्नना उत्तरमां पणु आ पूर्वोक्त इपथी समाधान समण्वुं.

आ रीते अहियां आ चार आलापके थाय छे 'एवं वणस्सहकाइएसु वि'
२ अप्कायिकना कथन प्रमाणे वनस्पतिकायिकेमां पणु अपर्याप्तक सूक्ष्म वन-
स्पतिकायिकेना उपपात कडेवे। जेधअे. जेम डे-डे लगवन् डैध अपर्याप्तक
सूक्ष्म वनस्पतिकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमा भरणुपामे
अने मरीने ते आण रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां अपर्याप्तक सूक्ष्म
वनस्पति कायिकेमां उत्पत्तिने योग्य थयेल डाय तो डे लगवन् ते त्यां
डेटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री
कडे छे डे-डे गौतम ! आ प्रश्नना उत्तरमां पडेला कछा प्रमाणेनुं समाधान
समण्वुं. आ रीते आ आ पडेदी आलापक कडेल छे. आण प्रमाणे पर्या

मूलम्—पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्प-
 भाए पुढवीए, एवं पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइओ वि पुरत्थिमिल्ले
 चरिमंते समोहणाविता, एएणं चैव कमेणं एएसु चैव वीससु
 ठाणैसु उववाएयव्वो जाव वायरवणस्सइकाइएसु पञ्जत्तएसु
 वि ४० । एवं अपञ्जत्त वायरपुढवीकाइओ वि ६० । एवं पञ्जत्त-
 वायरपुढवीकाइओ वि ८० । एवं आउकाइओ वि चउसु वि
 गमएसु पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, एयाए चैव वत्तव्वया
 एएसु वीसइ ठाणैसु उववाएयव्वो १६० । सुहुम तेउकाइओ वि
 अपञ्जत्तओ पञ्जत्तओ य एएसु चैव वीसइ ठाणैसु उववाएयव्वो ।
 अपञ्जत्त वायरतेउकाइए णं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए समो-
 हणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले
 चरिमंते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए सै णं
 भंते ! कइ ससइएणं विग्गहेणं उव्वज्जेज्जा, सेसं तहेव जाव
 से तेणट्टेणं । एवं पुढवीकाइएसु चउत्तिहेसु वि उववाएयव्वो ।
 एवं आउकाइएसु चउत्तिहेसु वि । तेउकाइएसु सुहुमेसु अप-
 जत्तएसु पञ्जत्तएसु य एवं चैव उववाएयव्वो । अपञ्जत्त
 वायरतेउकाइए णं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए समोहणित्ता जे
 भविए मणुस्सखेत्ते अपञ्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए
 से णं भंते ! कइ सासइएणं० सेसं तं चैव । एवं पञ्जत्तवायर-

वनरूपतिक्काधिकों में उत्पन्न होने के सम्बन्ध में और पर्याप्त बादर
 वनरूपतिक्काधिकों में उत्पन्न होने के सम्बन्ध में भी इसके तीन आला-
 पक जानने चाहिये । सू० १॥

पतक सूक्ष्म वनरूपतिक्काधिकोंमें उत्पन्न थवाना संभ्रमं अपर्याप्तक बादर वन
 रूपतिक्काधिकोंमा उत्पन्न थव ना संभ्रमं अने पर्याप्तक बादर वनरूपति क्काधि-
 कोंमा उत्पन्न थवाना संभ्रमं पणु आना उत्रणु आलापको समञ्च देवा । सू. १॥

तेउक्काइयत्ताए वि उववाएयवो । वाउक्काइयत्ताए य वणस्सइ
 काइयत्ताए य जहा पुढवीकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेएणं उव-
 वाएयवो । एवं पज्जत्तवायरतेउकाइओ वि समयखेत्ते समो-
 हणावेत्ता एएसु चेव वीसइ ठाणेषु उववाएयवो जहेव अप-
 ज्जत्तओ उववाइओ, एवं सव्वत्थ वि वायरतेउकाइया अप-
 ज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते उववाएयवा समोहणावेय-
 व्वा वि २४० । वाउक्काइया वणस्सइकाइया य जहा पुढवी-
 काइया तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयवा जाव पज्जत्ता४०० ।
 वायरवणस्सइकाइएणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुर-
 त्थिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहणित्ता जे भविए इमीसे
 रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते ! पज्जत्तवायर-
 वणस्सइकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइ समइएणं,
 सेसं तहेव जाव से तेणट्टेणं० । अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं
 भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते
 समोहए समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए
 पुरत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उवव-
 ज्जित्तए से णं भंते ! कइ समइएणं सेसं तहेव निरवसेसं । एवं
 जहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते सव्वएएसु वि समोहया पच्चत्थि-
 मिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया जे य समयखेत्ते समो-
 हया पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया, एवं
 एएणं चेव कमेणं पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समो-
 हया पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयवा तेणैव
 गमए णं एवं एएणं गमए णं दाहिणिल्ले चरिमंते समोहयाणं

उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ एवं च्वेव उत्तरिल्ले
चरिमंते समयखेत्ते य समोहया दाहिणिल्ले चरिमंते समय-
खेत्ते य उववाएयट्वा तेणेव गमएणं ॥सू० २।

छाया--पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! एतस्या रत्नप्रभायाः-
पृथिव्याः एवं पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकोऽपि पौरस्त्ये चरमान्ते समवघात्य एतेनैव
क्रमेण एतेष्वेव विंशतिस्थानेषु उपपातयितव्यः, यावद्वादरवनस्पतिकायिकेषु
पर्याप्तकेष्वपि ४०, एवमपर्याप्त वादरपृथिवी-कायिकोऽपि ६०, एवं पर्याप्तवादर
पृथिवी-कायिकोऽपि ८०, एवम् अण्कायिकोऽपि चतुष्वपि गमकेषु पौरस्त्ये चर-
मान्ते समवहतः एतया एव वक्तव्यतया एतेष्वेव विंशतिस्थानेषु उपपातयितव्यः ।
१६०, सूक्ष्मतेजस्कायिकोऽपि अपर्याप्तकः पर्याप्तकश्च एतेष्वेव विंशतिस्थानेषु
उपपातयितव्यः । अपर्याप्तवादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! मनुष्यक्षेत्रे समवहतः
समवहत्य यो भव्यः एतस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पाश्चात्ये चरमान्ते अपर्याप्त
सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुं स खलु भदन्त कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत'
शेषं तथैव यावत्तत्तेनार्थे० । एवं पृथिवीकायिकेषु चतुर्विधेष्वपि उपपातयितव्यः ।
एवमण्कायिकेषु चतुर्विधेष्वपि । तेजस्कायिकेषु सूक्ष्मेषु अपर्याप्तकेषु पर्याप्त-
केषु च एवमेव उपपातयितव्यः । अपर्याप्तवादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त !
मनुष्यक्षेत्रे समवहतः समवहत्य यो भव्यो मनुष्यक्षेत्रे अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक-
तया उत्पत्तुं स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन० शेषं तदेव । एवं पर्याप्त वादर
तेजस्कायिकतयाऽपि उपपातयितव्यः । वायुकायिकतया च यथा पृथिवीकायिकेषु
तथैव चतुष्केन भेदेन उपपातयितव्यः । एवं पर्याप्त वादरतेजस्कायिकोऽपि समय
क्षेत्रसमवघात्य एतेष्वेव विंशतिस्थानेषु उपपातयितव्यः यथैव अपर्याप्तक उप-
पातितः एवं सार्वत्रापि वादरतेजस्कायिकाः अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च समयक्षेत्र
उपपातयितव्याः समयघातयितव्या अपि २४० ॥

वायुकायिका वनस्पतिकायिकाश्च यथा पृथिवीकायिकाः तथैव चतुष्केन भे-
देनोपपातयितव्याः, यावत् पर्याप्ताः ४००, वादरवनस्पतिकायिकः खलु
भदन्त ! एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य
यो भव्य एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पाश्चात्ये चरमान्ते पर्याप्त वादरवनस्पति
कायिकतया उत्पत्तुं स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन० शेषं तथैव यावत् तत्तेना-
र्थेन, अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! एतस्या रत्नप्रभायापृथिव्याः
पाश्चात्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य यो भव्यः एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः
पौरस्त्ये चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुं स खलु भदन्त ! कति

सामयिकेन, शेषं तथैव निरवशेषम् । एवं यथैव पौरस्त्ये चरमान्ते सर्वपक्षेत्राणि
समवहताः पाश्चात्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातिताः, ये च समयक्षेत्रे समवहताः
पाश्चात्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातिताः, एवमेतेनैव क्रमेण पाश्चात्ये चरमान्ते
समयक्षेत्रे च समवहताः पौरस्त्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातयितव्याः तेनैव
गणकेन । एवमेतेन गणकेन दाक्षिणात्ये चरमान्ते समवहताः आत्तरे चरमान्ते
समयक्षेत्रे चोपपातः, एवमेव आत्तरे चरमान्ते समयक्षेत्रे च समवहताः दाक्षिणात्ये
चरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातयितव्या स्तेनैव गणकेन । सू० २॥

टीका—‘पञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते’ पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः
खलु भदन्त । ‘इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पूर्वं
चरमान्ते समवहतः समवहत्य एतस्या एव रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पश्चिमे चरमान्ते
पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकतया समुत्पत्तियोग्यो विद्यते स खलु भदन्त । कति
सामयिकेन द्विपहेणोत्पद्येत इत्यादिकं सर्वं प्रश्न वाक्यं पूर्ववदेव अत्रापि वक्तव्यम् ।
उत्तरमाह—‘एवं’ इत्यादि ।

‘पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ इ०

टीकार्थ—‘पञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइए णं भंते !’ हे भदन्त ! कोई
पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव ‘इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ इस
रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त (पूर्व भाग के अन्त में) मरा और मर
कर वह इसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त (पश्चिम भाग के
अन्तिम) में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूप से उत्पत्ति के योग्य
हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विश्रह से उत्पन्न होता
है ? इत्यादि प्रश्नवाक्य पूर्व के जैसा वहाँ कहना चाहिये अब उत्तर में
प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं पञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइओ वि पुरत्थिमिल्ले चरि-

‘पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’ इत्यादि

टीकार्थ—‘पञ्जत्त सुहुमपुढवी काइए णं भंते !’ हे भगवन् केई पर्याप्तक
सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव ‘इमीसे रयणप्पभाएभाए पुढवीए’ आ रत्नप्रभा पृथ्वीना
पूर्वचरमान्तमा—पूर्वलागना अन्तमां भरणुयामे अने मरीने ते आ रत्नप्रभा
पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां—पश्चिम लागना अन्तमां पर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वी
कायिक पणुधी उत्पन्न थराने योग्य अनेल होय तो हे भगवन् त्यां
केटला समयराणी विश्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? विगेशे तमाभ प्रश्नवाक्ये
पडेलां कथां प्रमाणेना अडियां समज्जा आना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के
‘एवं’ पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइओ वि पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहणावेत्ता एएण’

‘एवं पञ्जत्सुहृमपुठवीकाहो वि पुग्थिमिल्ले चरिंते समोहणावेत्ता एणं चैव कमेणं एणसु चैव वीसइसु ठाणेसु उववाएयव्वो’ एवम् अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवद्देव पथात्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकोऽपि ज्ञातव्यः, तं रत्नप्रभायाः पौरस्त्ये चरमान्ते समवघात्य मारणान्तिकमसुद्घातं कारयित्वा एतेनैव अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकोक्तेनैव क्रमेण—प्रकारेण एतेष्वेव विंशतौ स्थानेषु तानि विंशतिस्थानानि यथा—पृथिव्यादयः पञ्च ते सूक्ष्म वादरभेदाद्दण, तेषां प्रत्येकं पर्याप्तकापर्याप्तकभेदकरणात्ते विंशति भवन्ति, इति विंशतिः स्थानानि, तथाहि—पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः, पर्याप्त सूक्ष्म मते समोहणावेत्ता एणं चैव कमेणं एणसु चैव वीसइसु ठाणेसु उववाएयव्वो’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के जैसे ही पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक को भी जानना चाहिये । अर्थात्—इस पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक का रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात कराकर इसी अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के सम्बन्ध में कथित प्रकार के अनुसार इन्हीं पूर्वोक्त बीस स्थानों में—पृथिव्यादि पांचो के सूक्ष्म वादर पर्याप्त अपर्याप्त रूप स्थानों में—यावत् वादर वनस्पतिकायिक के पर्याप्तक तक उसे उत्पन्न कराना चाहिये । कहने का भाव ऐसा है—पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक एकेन्द्रिय जीव के ५ भेद होते हैं । ये पांचो ही सूक्ष्म और वादर के भेद से १० भेदवाले होने से बीस भेद हो जाते हैं । पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकों के इन २० स्थानों में इस प्रकार से उत्पन्न करना चाहिये । हे भदन्त ! कोई पर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव इस रत्नप्रभापृथिवी

‘चैव कमेणं एणसु चैव वीसइसु ठाणेसु उववाएयव्वो’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकनी जेभञ्च पर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक पणु सम्भवा अर्थात् आ अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक रत्नप्रभापृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां-मारणान्तिक समुद्घात करीने—आ प्रकरणमां अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिकना संधमां कडेला प्रकारथी आ पूर्वोक्त संधानोमां—पृथिवी विगेरे पांचेना सूक्ष्म. आदर, पर्याप्त अपर्याप्त ३५ स्थानमां—यावत् आदर वनस्पतिकाय सुधी ऐकेन्द्रिय एवना पांच लेदो थाय छे, आ पांचेना सूक्ष्म अने आदर लेदथी १० लेदो थथ जय छे, आ इस लेदोना पणु दरेकना पर्याप्त अने अपर्याप्तक जेवा लेदो थवाथी २० वीस लेदो थथ जय छे पर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिकेना आ २० वीस स्थानोमां आ प्रभाणेनी उत्पत्ति छेदथी जेथजे

पृथिवीकायिकः, अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकः पर्याप्तवादरपृथिवीकायिकः एवं पृथिवीकायिकस्य चत्वारो भेदाः ४, अपर्याप्तसूक्ष्मायिकायिकः पर्याप्तसूक्ष्मायिकायिकः, अपर्याप्त वादरायिकायिकः, पर्याप्तवादरायिकायिकः, एते चत्वारोऽयिकायिकस्य भेदाः ८. अपर्याप्तसूक्ष्मतेजस्कायिकः, पर्याप्तसूक्ष्मतेजस्कायिकः, अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकः पर्याप्तवादरतेजस्कायिकः ४. एते चत्वारस्तेजस्कायिकस्य भेदाः, १२, अपर्याप्तसूक्ष्मवायुकायिकः, पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकः २, अपर्याप्तवादर वायुकायिकः ३, पर्याप्त वादरवायुकायिकः ४, एते चत्वारो भेदा वायुकायिकस्य १६, अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकः, १ पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकः, २,

के पूर्व चरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात करके मरा और मरकर वह उसी रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवी कायिक में उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में हे गौतम ! वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है, दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है' ऐसा ही पूर्वोक्त समाधान जानना चाहिये । ऐसा यह प्रथम आलापक है । इसी प्रकार से इस पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी कायिक को पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक में उत्पन्न कराने के सम्बन्ध में भी आलापक कह लेना चाहिये । यह द्वितीय आलापक है । इसी प्रकार से इस पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक को अपर्याप्त वादर पृथिवी कायिक में उत्पन्न कराने के सम्बन्ध में भी तृतीय आलापक कह लेना

हे भगवन् केछ पर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वं चरमान्तमां मारणान्तिक समुद्घात करी पश्चिम चरमान्तमां अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकमां उत्पन्न थवाने योग्य भनेल होय तो हे भगवन् ते त्यां केटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे के-हे गौतम ! ते त्यां अेक समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, जे समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, अने त्रषु समय वाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे. आ प्रम जेनुं पडेला कडेल समा- धान समजवुं. आ पडेला आलापक कडेल छे. १ आण प्रमाणे आ अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकने पर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिकमां उत्पन्न थवाना संबंधमां पणु आलापके कडेवा जेछअे. आ रीते आ णीने आलापक कडेल छे. २ आण रीते अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकने अपर्याप्तक वादर पृथ्वीकायिकमां उत्पन्न करववाना संबंधमां पणु त्रीने आलापक कडेवा अेण प्रमाणे आ अपर्याप्तक

अर्थात्तवादरवनस्पतिकायिकः ३, पर्याप्तवादरवनस्पतिकायिकः ४ एते चत्वारो भेदा वनस्पतिकायिकस्य २०, एतेषु त्रिंशतिस्थानेषु उपपातयितव्य-
उपपातः करणीयः । क्वियत्पर्यन्तमुपपातयितव्य एतन्नाह—‘जाव’ इत्यादि । ‘जाव

चाहिये । इसी प्रकार इस पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक को पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक में उत्पन्न कराने के सम्बन्ध में भी आलापक कह लेना चाहिये । यह चतुर्थ आलापक है । इस प्रकार ये पृथिवीकायिकके ४ भेद हैं । इसी प्रकार से अप्कायिक के अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक अपर्याप्त वादर अप्कायिक और पर्याप्त वादर अप्कायिक ये चार भेद होते हैं । इसी प्रकार से तेजस्कायिक अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक और पर्याप्त वादरतेजस्कायिक ये चार भेद होते हैं । इसी प्रकार से वायुकायिक के अपर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिक पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिक अपर्याप्त वादर वायुकायिक पर्याप्त वादर वायुकायिक ये ४ चार भेद होते हैं । इसी प्रकार से वनस्पतिकायिक के अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक अपर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक ये ४ चार भेद होते हैं । सो इन २० स्थानों में पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक को उत्पन्न कराना चाहिये । यही बात यहां याव-

सूक्ष्म पृथ्वीकायिकने पर्याप्त वादर पृथ्वीकायिकमां उत्पन्न कराववाना सम्बन्धमां पणु आलापक कडेवे। जेअने, आ येथे आलापक कडेले छे आ रीते पृथ्वीकायिकेमां आर लेहे कडेला छे, सूक्ष्म अने आदर

आज प्रमाणे अप्कायिकमां अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक, पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक, अपर्याप्त आदर अप्कायिक, अने पर्याप्त आदर अप्कायिकना आर लेहे थाय छे. आज प्रमाणे तेजस्कायिकमां अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक अपर्याप्त आदर तेजस्कायिक पर्याप्त आदर तेजस्कायिक आ प्रमाणेना आर लेहे थाय छे. आज प्रमाणे वायुकायिकेमां अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक, पर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक, अपर्याप्त आदर वायुकायिक अने पर्याप्त आदर वायुकायिकना लेहथी ४ आर लेहे समजवा. आज प्रमाणे वनस्पतिकायिकेमां अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त आदर वनस्पतिकायिक, पर्याप्त आदर वनस्पतिकायिक अरीतना ४ आर लेहे थाय छे. तो आ २० वीस स्थानेमां पर्याप्त सूक्ष्म

વાયરવળસ્સહકાદ્દસુ પ્વજ્જત્તેસુ વિ' યાવત્ પર્યાપ્ત વનસ્પતિકાયિકેવ્વપિ, યાવત્ પદેન અર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયિકત આરમ્મ્ય અપર્યાપ્તવાદરવનસ્પતિ-કાયિકાન્તસ્ય ગ્રહણં ભવતિ । તથા ચ આલાયપ્રકારઃ, પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયિકઃ સ્વલુ ભદન્ત ! એતસ્મા રત્નપ્રમાયાઃ પૃથિવ્યાઃ પૂર્વે ચરમાન્તે સમવહતઃ સમ-વહત્ય એતસ્યા એવ રત્નપ્રમાયાઃ પશ્ચિમે ચરમાન્તે અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિક-તયા સમુત્પત્તિયોગ્યો વિષયતે સ્વલુ ભદન્ત । કતિ સામયિકેન વિગ્રહેણ ઉત્પદ્યતે । હે ગૌતમ ! એકસામયિકેન વા, દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા, વિગ્રહેણો-ત્પદ્યેત, તત્કેનાર્થેન ભદન્ત ! એવમુચ્ચયતે, એકસામયિકેનેત્યાદિ । ગૌતમ ! મંયા સપ્ત શ્રેણયઃ ઋજ્જ્વાયતાદિકાઃ પ્રજ્જપ્તાઃ । તત્ર પ્રથમ શ્રેણ્યા ઉત્પત્તિમાસાદયન્ એકસામયિકેન દ્વિતીયયા ગચ્છન્ દ્વિસામયિકેન વિગ્રહેણ, તૃતીયયા ગચ્છન્

ત્પદ સે પ્રકટ કી ગઈ હૈ । અબ ગૌતમપ્રશ્નુ સે એસા પ્રછતે હૈ-હે ભદન્ત । એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ એકસમયવાલે વિગ્રહ સે યાવત્ ત્રીન સમયવાલે વિગ્રહ સે વહ વહાં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રશુશ્રી કહતે હૈ-હે ગૌતમ ! મૈને સ્નાન શ્રેણિયાં કહી હૈ-ઉત્તર મેં એક ઋજ્જ્વાયત શ્રેણિ હૈ દૂસરી એકતોવકાશ્રેણિ હૈ । ત્રીસરી દ્વિધાવકા શ્રેણિ હૈ ચૌથી એકતઃ સ્વા શ્રેણિ હૈ । પાંચવીં દ્વિધાવા શ્રેણિ હૈ છટ્ટી ચક્રવાલ શ્રેણિ હૈ ઓર સાતવીં અર્ધચક્રવાલ શ્રેણિ હૈ । इनमें जो जीव प्रथम श्रेणि से उत्पत्ति स्थान में जाता है वह वहां एक समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है द्वितीय श्रेणि से जो जीव उत्पत्तिस्थान में जाता है वह दो समय वाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है । तथा-तृतीय श्रेणी से जो उत्पत्ति स्थान में जाता है वह तीन समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न

પૃથ્વીકાયિકની ઉત્પત્તિ કહેવી જોઈએ. આ સમગ્ર કથન અહિયાં યાવત્ પંદરથી પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે.

હે ગૌતમસ્વામી પ્રશુશ્રીને એવું પૂછે છે કે-હે ભગવન્ આપ એવું કયા કારણથી કહે છે કે-એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી યાવત્ ત્રણ સમય વાળી વિગ્રહગતિથી તે ત્યાં ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રશુશ્રી કહે છે કે-હે ગૌતમ ! મેં સાત શ્રેણીઓ કહેલ છે. તેમાં એક ઋજ્જ્વાયત શ્રેણી છે. ૧ ખીજ એકતો વકા શ્રેણી છે ૨ ત્રીજ દ્વિધાનો વકા શ્રેણી કહી છે. ૩ ચોથી એકતઃ આ શ્રેણી છે. ૪ પાંચમી દ્વિધાનો આ શ્રેણી કહેલ છે. ૫ છટ્ટી ચક્રવાલ શ્રેણી કહેલ છે. ૬ અને સાતમી અર્ધ ચક્રવાલ શ્રેણી છે. ૭ તેમાં જે છવ પહેલી શ્રેણીથી ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં જાય છે, તે ત્યાં એક સ્થાનવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. ખીજ શ્રેણીમાં જે છવ ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં જાય છે, તે બે સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન

त्रिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्यन्ते । ततोनाथेन एव मुच्यते, एक सामयिकेनेत्यादिकं सर्वम् अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव ज्ञातव्यम् । एवं पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्तेषु उपपातालापकाः स्वयमेव ऊहनीयाः । एवमेव अग्रेऽपि सर्वत्रालाप प्रकारः स्वयमेवोहनीय इति तदेव मादितश्चत्वारिंशद्गमका अभवन् ४० ।

‘एवं अपञ्जत्त वायरपुढवीकाइओ वि’ एवम् अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकोऽपि पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकवदेव, अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकोऽपि अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीतआरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्तेषु सर्वत्रोपपा-

होता है इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह वहां एक समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न हो जाता है दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न हो जाता है और तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न हो जाता है । इस प्रकार यहाँ सब कथन सूक्ष्म अपर्याप्तक पृथिवीकायिक के जैसा ही जानना चाहिये । पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिक तक में उपपात होने के सम्बन्ध में आलापक अपने आप उद्भावित कर लेने चाहिये । इस प्रकार से मिलकर सब गमक ४० हो जाते हैं । ‘एव अपञ्जत्त वादरपुढवीकाइओवि’ इसी प्रकार से अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिक को भी पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक के जैसे अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकतक के

थाय छे तथा-त्रीणु श्रेणीथी न्ने एव उत्पत्ति स्थानमां नय छे, ते त्रणु समयवाणी विग्रहगतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे. ते कारणुथी छे गौतम ! मे ज्येवुं कहेल छे के-ते त्या ज्येक समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, जे समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, अने त्रणु समय वाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे आ प्रमाणे अडियां सधणुं कथन सूक्ष्म अपर्याप्तः पृथ्वीकायिकः ॥ कथन प्रमाणे समञ्जुं तथा अपर्याप्तः सूक्ष्म पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लधने पर्याप्त आदर वनस्पतिकाय सुधीमां उपपात थवाना सधधमां आलापके स्वयं जनावीने समञ्ज देवा. आ रीते जथा नणीने कुव ४० याणीस जमे थध नय छे ‘एवं अपञ्जत्त वादर पुढवीकाइओ वि’ ज्येज प्रमाणे अपर्याप्त आदर पृथ्वीकायिक पणु पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिकता कथन प्रमाणे अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लधने पर्याप्त आदर वनस्पतिकाय सुधीना सधणा ज्येवोमां उत्पत्ति समञ्जवी. आ सधधमां

तयितव्यः । उपपातप्रकारश्च पूर्ववदेव सर्वत्र स्वयमेवोहनीय इति । ६०, 'एवं पञ्ज-
त्तवायुः पुढवीकाइओ वि । ८० एवम् अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकवदेव
पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकोऽपि विंशति स्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत
आरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकायिकान्तेषु अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक-
वदेव उपपातयितव्य इति । ८०, 'एवं आउक्काइओ वि चउसु वि गमएसु पुरत्थि-
मिल्ले चरिमंते समोहए' एवं पृथिवीकायिकवदेव अप्कायिकोऽपि चतुर्विंशति गम-
केषु, अपर्याप्त सूक्ष्म, पर्याप्त सूक्ष्मापर्याप्त वादर पर्याप्त वादर रूपेषु रत्नप्रभायाः
पृथिव्याः पौरुष्ये चरमान्ते समवहतः, 'एयाए चैव वत्तव्वयाएएसु चैव वीसइट्टा-
णेषु उववाएयव्वो' एतयैव वत्तव्वयतया एतेष्वेव विंशति स्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्म
पृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्त रूपेषु उपपातयितव्यः,

समस्त जीवों में उत्पन्न कर लेना चाहिये । इस सम्बन्ध में उपपात
सम्बन्धी आलापक प्रकार अपने आप उद्भावित कर लेना चाहिये ६०,
'एवं पञ्जत्त वायुःपुढवीकाइओ वि' ८० इसी प्रकार से अपर्याप्त वादर
पृथिवीकायिक के जैसे ही पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक भी २०
स्थानों में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त वादरवनस्पति
कायिकतक के जीवों में उत्पन्न करा लेना चाहिये ८० । 'एवं आउक्का-
इओ वि चउसु वि गमएसु पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' इसी प्रकार
अप्कायिक जीव भी अपर्याप्त सूक्ष्म पर्याप्त सूक्ष्म, अपर्याप्त वादर
और पर्याप्त वादर रूप चारों गमकों को आश्रित करके रत्नप्रभापृथिवी
के पूर्व चरमान्त में समुद्घात पूर्वक 'एयाए चैव वत्तव्वयाए एएसु चैव
वीसइट्टाणेषु उववाएयव्वो' इसी वत्तव्वयता द्वारा ऊपर में प्रदर्शित
बीस स्थानों में उत्पन्न कराना चाहिये । तात्पर्य कहनेका यही है कि

उपपात विधेना आलापकेना प्रकार स्वयं जननीने समञ्ज देवे। 'एवं पञ्जत्त
वायुःपुढवीकाइओ वि' आ अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकना कथन प्रभाणे ७
पर्याप्त वादर पृथिवीकायिक पणु २० वीसे स्थानेमां अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकथी
लधने पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक सुधीना ञ्जेवां उत्पन्न थयाना संबंधमां
कथन समञ्ज देवुं. ८० 'एवं आउक्काइयो वि चउसु वि गमएसु पुरत्थिमिल्ले
चरिमंते समोहए' आ ७ प्रभाणे अप्कायिक ञ्जेव पणु अपर्याप्त सूक्ष्म. पर्याप्त
सूक्ष्म, अपर्याप्त वादर. अने पर्याप्त वादर इय चारे गमेने आश्रय करीने
रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्वचरमान्तमां समुद्घात पूर्वक 'एयाए चैव वत्तव्वयाए
एएसु चैव वीसइ ट्टाणेषु उववाएयव्वो' आ कथन प्रभाणे उपर जनावेला वीस
स्थानेमां उत्पत्ति कडेवी लेधने कडेवानुं तात्पर्य अे छे के-पृथिवीकायिकना

पृथिवीकायिकवदेव अप्कायिकस्यापि वक्तव्यता भणितव्येति । अप्कायिकस्य सूक्ष्म बादरपर्याप्तापर्याप्त भेदभिन्नस्य चतुष्कस्य पृथिवीकायिकादिवनस्पतिकायिकान्त विंशतिस्थानेषु उपपातकरणेन अशीतिभेदा भवन्ति । अशीत्य रीति भेद भिन्न पृथिवीकायिकाऽप्कायिकयोः संमेलनात् षष्ठ्याधिकशतभेदा भवन्ति १६० ।

‘सुहुमतेउकाइओ वि अपज्जत्तओ पज्जत्तओ य एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो’ सूक्ष्मतेजस्कायिकोऽपि अपर्याप्तकः पर्याप्तश्च, एतेष्वेव विंशति स्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिकान्तेषु उपपातयितव्यः अपर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकयोरपि विंशतिस्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव रत्नप्रभायामुपपातो वर्णनीय इति तदेवं चत्वारिंशद् भेदा भवन्ति ४० (२००)

पृथिवीकायिक की जैसी ही वक्तव्यता अप्कायिक जीव की है । इस प्रकार सूक्ष्मबादर पर्याप्त और अपर्याप्त भेद विशिष्ट होने से चार प्रकार के अप्कायिक जीव के पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के २० स्थानों में उत्पाद कराने के कथन से ८० भेद हो जाते हैं । ८०-८० भेद युक्त हुए पृथिवीकायिक और अप्कायिक के सम्मेलन से १६० भेद ही जाते हैं ।

‘सुहुमतेउकाइओ वि अपज्जत्तओ पज्जत्तओ य एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो’ अपर्याप्त पर्याप्तक सूक्ष्मतेजस्कायिक भी इन्हीं बीस स्थानों में अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक तक के जीवों में-उत्पादयितव्य है । अतः इन दोनों प्रकार के तेजस्कायिक जीवों का अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के जसा २० स्थानों में रत्नप्रभापृथिवी में उपपात वर्णित कर लेना चाहिये ।

कथन प्रमाणेनुं ज कथन अप्कायिक लुवनुं छे. आ रीते सूक्ष्म भादर, पर्याप्त अने अपर्याप्त लेहवाणा होवाथी चार प्रकारना अप्कायिक लुवेना पृथिवीकायिकेथी लधने वनस्पतिकाय सुधीना २० वीस स्थानेमा उत्पात थवाना कथनथी ८० ओंसी लेहो थर्ध नय छे ८०-८० ओंसी ओंसी लेहवाणा पृथिवीकायिकने भेणववाथी कुल १६० ओकसोसाठठ लेहो थर्ध नय छे.

‘सुहुम तेउकाइओ वि अपज्जत्तओ य एएसु चेव वीसइ ठाणेसु उववाएयव्वो’ अपर्याप्त, पर्याप्तक, सूक्ष्म तेजस्कायिक पणु आण वीस स्थानेमा अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकेथी लधने पर्याप्तक भादर वनस्पतिकायिक सुधीना लुवेमां उत्पात थवाना संबंधमां कडेपुं नेधये. तेथी आ जन्ने प्रकारना तेजस्कायिक लुवेना अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकेथी नेम २० वीसे स्थानेमां रत्नप्रभा पृथिवीमां उत्पात थवाना संबंधमां कडेपुं नेधये. आ रीते

वाद्दरतेजस्कायिकानां मनुष्यक्षेत्रादन्यत्रामम्भवात् सूक्ष्मपर्याप्तनापर्याप्त-
योरेव द्वौ भेदो कथितौ । वाद्दरपर्याप्तापर्याप्तयो स्तेजस्कायिकयो द्वौ भङ्गौ
मनुष्यक्षेत्रम् अधिकृत्याग्रिमसूत्रे कथयिष्येते इति । तदेवाह—‘अपञ्जत्त वायरतेउ-
काइएणं भंते !’ अपर्याप्त वाद्दर तेजस्कायिकः खलु भदन्त । ‘मणुष्म खेत्ते समोहए’
मनुष्यक्षेत्रे समवहतः, ‘समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए’
समवहत्य यो भव्य एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः, ‘पच्चत्थिमिल्ले चरिमते
अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ पाश्चात्ये—पश्चिमे चरमान्ते अप-
र्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकनया पृथिवीकायिकरूपेणेत्यर्थः उत्पत्तुम् ‘से णं
भंते ! कहसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन

इस प्रकार से यहाँ ४० चालीस भेद होते हैं । ४०। वाद्दरतेजस्कायिकों
का मनुष्यक्षेत्र से बाहर संबन्ध नहीं है वहीं पर इनका सद्भाव है
इसलिये यहाँ उनके सूक्ष्म पर्याप्त और सूक्ष्म अपर्याप्त ऐसे दो ही
भेद कहे हैं । बाकी के इनके वाद्दर पर्याप्त और वाद्दर अपर्याप्त से
दो भङ्ग मनुष्य क्षेत्र को अधिकृत करके सूत्रकार आगे के सूत्र में कह
रहे हैं—‘अपञ्जत्त वायर तेउकाइए णं भंते !’ हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त
वाद्दरतेजस्कायिक मनुष्य क्षेत्र में मारणान्तिक समुद्घात करके मरा
‘और समोहणित्ता’ मरकर ‘जे भविए’ हमीसे रयणप्पभाए पुढवीए
पच्चत्थिमिल्ले चरिमत्ते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’
इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक
रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ ‘से णं भंते ! कहसमइए णं विग्गहेणं
उववज्जेज्जा’ तो हे भदन्त ! वह यहाँ कितने समयवाले विग्रह से

अधियां ४० याणीस लेदो थाय छे वाद्दर तेजस्कायिकेनो मनुष्यक्षेत्रनी
अहार संलव छोता नथी. मनुष्य क्षेत्रमां ज ते ज्ञानो सदुभाव छे, तेथी
अधियां तेजे ना सूक्ष्म अपर्याप्त अने सूक्ष्म पर्याप्त जेवा जे जे लेदो क्खी
छे. आनीना तेजाना वाद्दर पर्याप्त अने वाद्दर अपर्याप्त जे रीते जे
लंगो. मनुष्य क्षेत्रने अधिकृत करीने सूत्रकार आगणना सूत्रमां कहेसे.
‘अपञ्जत्त वायर तेउकाइएणं भंते !’ हे भगवन् कोरि अपर्याप्त वाद्दर तेजस्कायिक
मनुष्यक्षेत्रमां मारणान्तिक समुद्घात करीने मरणापाने अने मरीने ते
‘इमीसे रयअप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमते अपञ्जत्त सुहुम पुढवी
काइयत्ताए उववज्जित्तए भविए’ आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमां अपर्याप्त
सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पञ्चाथी उत्पन्न थाने योग्य थयो होय ‘से णं भंते ! कह
समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ तो हे भगवान् ते त्यां केट्ठो समयवाणी

विग्रहेणोत्पद्येत ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘सेसं’ इत्यादि, ‘सेसं तद्देव जाव से तेणट्टेणं’ शेषम्-प्रश्नातिरिक्तमुत्तरं तद्देव समुत्पद्यमानस्य पृथिवीकायिकस्य यत् कथितं तद्देव यावत् तत्तेनार्थेन०, हे गौतम ! एकसामयिकेन वा, यावत् त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येत, तत् तेनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, एकसामयिकेन वा, यावत् त्रिसामयिकेनेत्यादि । हे गौतम ! मया खलु सप्तश्रेणयः कथिताः, इत्यादिकं सर्वमिहानुसन्धेय मिति । ‘एवं पुढवीकाइएसु चउन्विहेसु उववाएयन्वो’ एवम्-प्रदर्शितक्रमेण पृथिवीकायिकेषु चतुर्विधेष्वपि सूक्ष्मवाद्पर्याप्तापर्याप्त भेदभिन्नेषु अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकस्य उपपातो वर्णनीयः वर्णनप्रकारस्तु स्वयमेवोहनीयः ।

‘एवं आउकाइएसु चउन्विहेसु वि’ एवं यथा चतुर्विध पृथिवीकायिकेषु उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘सेसं तद्देव जाव से तेणट्टेणं’ हे गौतम ! वह वहाँ पर एक समयवाले विग्रह से अथवा दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ऐसा यहाँ पर सब उत्तर रूप कथन पूर्ववत् समझ लेना चाहिये । हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं ? हे गौतम ! मैंने सात श्रेणि कही हैं । यहाँ पर भी उत्तर रूप में सब कथन पूर्वके जैसा ही लगा लेना चाहिये । ‘एवं पुढवीकाइएसु चउन्विहेसु उववाएयन्वो’ इस प्रकार प्रकट किये गये क्रम से अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकके उत्पादका सूक्ष्मवाद् पर्याप्त अपर्याप्त भेद विशिष्ट पृथिवीकायिकों में उपपात कर लेना चाहिये, तथा इस सम्बन्ध में वर्णन करनेका प्रकार—अपने आप उद्भावित कर लेना चाहिये । ‘एवं आउकाइएसु चउन्विहेसु वि’ जिस रीति से

विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे—‘सेसं’ तद्देव जाव से तेणट्टेणं’ हे गौतम ! त्यां ओक समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा ये समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा त्रण समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. आ प्रमाणे अहियां सधणु उत्तर वाक्य इप कथन समल देवुं. हे लगवन् आप ओवुं शा कारणुथी कहे छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां हे गौतम ! मे सात श्रेणीथे कही छे, विगेरे सधणुं कथन अहियां यणु उत्तर इपे पहुँलां कहे। प्रमाणेनुं कथन समल देवुं ‘एवं पुढवीकाइएसु चउन्विहेसु उववाएयन्वो’ आ रीने उपर प्रगट करवामां आवेला कुमथी अपर्याप्त आद्दर तेजस्कायिकेना उत्पादनु—सूक्ष्म, आद्दर, पर्याप्त अने अपर्याप्त लेदवाणा पृथिवीकायिकेनुं वणुंन समल देवुं. तथा आ विषयनुं वणुंन करवानी रीत स्वयं समल देवी. ‘एवं आउकाइएसु चउन्विहेसु वि’ जे रीतथी आर प्रकारना

अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्योपपातो दर्शित स्तथैव अप्कायिकेषु चतुर्विधेषु अपर्याप्तादि भेदभिन्नेषु अपर्याप्तवादरतेजस्कायिकस्योपपातोऽपि वर्णयितव्यः इति । 'तेउकाइएसु सुहुमेसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य एवं चैव उववाएयव्वो' सूक्ष्मतेजस्कायिकेषु अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च एवमेव पूर्वप्रदर्शितक्रमेणैव उपपातयितव्यः । अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्यापर्याप्तसूक्ष्मतेजस्कायिकेषु तथा पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकेषु पूर्वोक्तरूपेणैवोपपातो वर्णनीय इति भावः । 'अपज्जत्तवायरतेउकाइएणं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! मनुष्यक्षेत्रे समवहतः 'समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए' समवहत्य मारणान्तिकसमुद्घातं

चतुर्विध पृथिवीकायिकों में अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक का उपपात दिखाया गया है उसी रीति से अपर्याप्तादि भेदवाले चतुर्विध अप्कायिकों में अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक के उत्पादका वर्णन कर लेना चाहिये । 'तेउकाइएसु सुहुमेसु अपज्जत्तएसु य एवंचैव उववाएयव्वो' इसी प्रकार से अपर्याप्तक और पर्याप्तक सूक्ष्मतेजस्कायिकों में भी वादर अपर्याप्त तेजस्कायिक के उत्पादका वर्णन कर लेना चाहिये । अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकों में एवं पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकों में पूर्व में दिखाए गए क्रमके अनुसार वादर अपर्याप्त तेजस्कायिकके उत्पादका कथन कर लेना चाहिए ।

'अपज्जत्त वायरतेउकाइएणं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए' हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक जीव मनुष्य क्षेत्र में सरा 'समोहणित्ता

पृथ्वीकायिकोमां अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकोना उपपात अताववामां आवेद छे' अत्र प्रभाषे अपर्याप्त विगरे लेहवाणा यार प्रकारना अप्कायिकोमां अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकना उत्पादनुं वणुंन समञ्च देवु. 'तेउकाइएसु सुहुमेसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य एवं चैव उववएयव्वो' अत्र प्रभाषे अपर्याप्त अने पर्याप्तक तेजस्कायिकोमां पणु वादर अपर्याप्त तेजस्कायिकना उत्पादनुं वणुंन करी देवु. अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकोमां अने पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकोमां तथा अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकोमां अने पर्याप्त वादर तेजस्कायिकोमां पडेलां अतावेदा कम प्रभाषे वादर अपर्याप्त तेजस्कायिकना उत्पादनुं कथन करी देवु' नेधये.

'अपज्जत्त वायरतेउकाइएणं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए' हे भगवन् कोर्ध अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक एव मनुष्य क्षेत्रमां भरणु यामे 'समोहणित्ता जे

कृत्वा यो भव्यो मनुष्यक्षेत्रे अपर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकतया-तेजस्कायिकरूपेणो-
त्यत्तुम्-से णं भंते ! कइ समइएणं' स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण
उत्पद्यतेति प्रश्नः । उत्तरमाह-‘सेसं’ इत्यादि । ‘सेसं तं चेव’ शेषं प्रश्नव्य-
तिरिक्तम् उत्तरं सर्वमपि तदेव अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकप्रकरणकथितमेव ।
'एवं पज्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए वि उववाएयव्वो' एवं पर्याप्तवाद्दरतेजस्कायि-
कतयाऽपि उपपातयितव्याः । यथा अपर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकस्य मनुष्यक्षेत्रे
समवहतस्यापर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकरूपेण उपपातो दर्शित स्तथैवापर्याप्त-
वाद्दरतेजस्कायिकस्य मनुष्यक्षेत्रसमवहतस्य पर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकरूपेणा-
ऽपि उपपातो वक्तव्यः प्रक्रिया पूर्ववदेवोहनीयेति भावः । 'वाउकाइयत्ताए य

'जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए'
और मरकर वह मनुष्य क्षेत्र में ही अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिक रूप से
उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो 'से णं भंते ! कइ समइएणं०' हे भदन्त !
वह कितने समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री
गौतमस्वामी से कहते हैं-‘सेसं तंचेव’ हे गौतम ! इस सम्बन्ध में
उत्तर रूप सब कथन अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के प्रकरण में कहे
अनुसार ही समझना चाहिए । 'एवं पज्जत्तवायर तेउकाइयत्ताए वि
उववाएयव्वो' जिस प्रकार से मनुष्यक्षेत्र में समवहत अपर्याप्त वाद्दर-
तेजस्कायिकका अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिक रूप से मनुष्यक्षेत्र में उप-
पात दिखाया है, उसी प्रकार से मनुष्यक्षेत्र में समवहत अपर्याप्त वाद्दर-
तेजस्कायिकका पर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिक रूप से भी उपपात कह लेना
चाहिये । इस सम्बन्ध में प्रक्रिया पूर्व के जैसी ही उद्भावित कर लेनी

भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्त वायर तेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए' अने भरीने ते
मनुष्य क्षेत्रमां न अपर्याप्त आदर तेजस्कायिकपण्णथी उत्पन्न थवाने योग्य थयो
छाय तो 'से णं भंते ! कइ समइएणं.' डे लगवन् ते डेटत्ता समयवाणी विग्रह
गतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कडे छे डे- 'सेसं
तं चेव' डे गौतम ! आ सम्बन्धमां उपपात इय सधणुं कथन अपर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिकना प्रकरणमां कइया प्रमाणे न समज्जुं.

'एवं पज्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए वि उववाएयव्वो' ने प्रमाणे मनुष्य
क्षेत्रमां समवहत अपर्याप्त आदर तेजस्कायिकने उपपात अपर्याप्त आदर
तेजस्कायिकपण्णथी जतावेद छे, अने प्रमाणे मनुष्य क्षेत्रमां समवहत
अपर्याप्त आदर तेजस्कायिकने उपपात-पर्याप्त आदर तेजस्कायिक पण्णथी

वणस्सइकाइयत्ताए य जहा पुढवीकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयव्वो' वायुकायिकतया च वनस्पतिकायिकतया च यथा-पृथिवीकायिकेपु तथैव भेद चतुष्टयेन सूक्ष्म वादरतेजस्कायिकरय यथा पृथिवीकायिकेपु उपपातः कथित-स्तथा-सूक्ष्म वादर पर्याप्तापर्याप्तक चतुष्कभेदेन वायुकायिकरूपेण वनस्पति-कायिकरूपेण उपपातो वर्णनीय इति । 'एव पज्जत्त वायरतेउकाइओ वि समय-खेत्ते समोहणावेत्ता एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो' एवमपर्याप्तवादरतेज-स्कायिकवदेव पर्याप्त वादरतेजस्कायिकोऽपि विज्ञेयः, तं समयक्षेत्रे समवघात्य एतेष्वेव विंशतिस्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिकान्तेषु विंशतिस्थानेषु उपपातयितव्यः, उपपातप्रकारस्तु पूर्वदर्शित-क्रमेणैव ज्ञातव्य इति । क इव ? इत्याह-'जहेव अपज्जत्तओ उववाइओ' यथैव,

चाहिये । 'वाउकाइयत्ताए य वणस्सइकाइयत्ताए य जहा पुढवीकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयव्वो' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकका जैसा-पृथिवीकायिकों में उपपात कहा है उसी प्रकार से इसके उपपात का वर्णन सूक्ष्म वादर पर्याप्त और अपर्याप्त भेदोवाले वायुकायिकों में और वनस्पतिकायिकों में भी कर लेना चाहिये । 'एवं पज्जत्तवायरतेउ-काइओ वि समयखेत्ते समोहणावेत्ता एएसु चेव वीसइठाणेसु उव-वाएयव्वो' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक के जैसा ही पर्याप्त वादरतेज-स्कायिकका भी कथन जानना चाहिये । अर्थात् समयक्षेत्र में उसका मारणांतिक समुद्घात से भरण करवाकर इन्हीं वीस स्थानों में-अप-र्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिक तक के जीवों में-उसका उत्पात करवाना चाहिये ! उत्पात करवाने की रीति पहिले प्रकट ही की जा चुकी है । 'जहेव अपज्जत्तओ उववाइओ'

पणु समञ्ज देवो. आ संणधमां आलापेना प्रकार पडेला क्ख्हा प्रमाणे ञ समञ्ज देवो. 'वाउकाइयत्ताए य वणस्सइकाइयत्ताए य जहा पुढवीकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेएण उववाएयव्वो' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकने उपपात ने प्रमाणे पृथिवीकायिकेमां कडेले छे. एए प्रमाणे तेना उपपातनुं वणुं न सूक्ष्म वादर पर्याप्त अने अपर्याप्त लेहोवाणा वायुकायिकेमां अने वनस्पति कायिकेमां पणु करी देवुं.

'एवं पज्जत्त वायरतेउकाइओ वि समयखेत्ते समोहणावेत्ता' एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो' अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकेनी जेम ञ पर्याप्त वादर तेजस्कायिकतुं कथन पणु समञ्जपुं. अर्थात् समय क्षेत्रमां तेभने मारणांतिक समुद्घातथी भरणु करवावने आ वीस स्थानेमां-अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकेथी लधने पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक सुधीना एवेमां-तेआने उपपात कडेवे जेमअने उत्पात करवानी रीत पडेला ञ अताववामां आवेल छे. ते प्रमाणे

अपर्याप्तक उपपातितः, यथा-अव्यहित पूर्वम् अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्य उपपातो वर्णित स्तद्वत् पर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्याऽपि उपपातो वर्णनीय इति भावः । एवं सव्वत्थ वि वायरतेउकायिका अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते उववाएयव्वा समोहणावेयव्वा वि' । २४० । एवं यथैव अपर्याप्तक वादरतेजस्कायिक उपपातितः 'अपज्जत्तवायरतेउकाइएणं भंते !' इत्यादि सूत्रेण, एवमेव सर्वत्रापि विंशतिस्थानेष्वपि वादरतेजस्कायिका अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च समयक्षेत्रे उपपातयितव्याः समवघातयितव्या अपि । एवमपर्याप्त पर्याप्त वादरतेजस्कायि-

अर्थात् जिस प्रकार से अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक के उत्पातका अभी अभी वर्णन किया गया है उसी प्रकार से पर्याप्त वादरतेजस्कायिक के उत्पात का भी वर्णन कर लेना चाहिये यही इस कथनका सारांश है । 'एवं सव्वत्थ वि वायरतेउकाइया अपज्जत्तगाय पज्जत्तगाय समयखेत्ते उववाएयव्वा समोहणावेयव्वा वि' जिस प्रकार 'अपज्जत्त वायरतेउ काइएणं भंते !' इत्यादि सूत्र द्वारा अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक के उत्पातका कथन किया गया है, इसी प्रकार से सर्वत्र २० स्थानों में भी अपर्याप्तक और पर्याप्तक वादरतेजस्कायिक जीवों के समयक्षेत्रको मनुष्यक्षेत्र को आश्रित करके उत्पातका कथन कर लेना चाहिये । अर्थात् उन्हें वहाँ उत्पन्न बोलना चाहिये । और वहीं पर उनका मारणा- न्तिक समुद्घात से मरण बोलना चाहिये । इस प्रकार अपर्याप्त और पर्याप्त वादरतेजस्कायिक जीवोंका मनुष्यक्षेत्र में ही समुद्घात और

समञ्जसी 'जहेर अपज्जत्तओ उववाइओ' अर्थात् जे प्रमाणे अपर्याप्त आदर तेजस्कायिकेना उत्पातनु वर्णन कइएणं जे उपर कडेवाभां आवेल छे, ओज प्रमाणे पर्याप्त आदर तेजस्कायिकेना उत्पातनु वर्णन पणु समञ्जसुं. ओज आ कथनेना साराश कडेल छे. 'एव सव्वत्थ वि वायर तेउकाइया अपज्जत्त गाय पज्जत्तगाय समयखेत्ते उववाएयव्वा समोहणावेयव्वा वि' जे प्रमाणे 'अपज्जत्त वायरतेउकाइएणं भंते !' इत्यादि सूत्र द्वारा अपर्याप्त आदर तेजस्कायिकेना उत्पातनु कथन करवाभां आवेल छे, ओज प्रमाणे सधणे ठेकाए-ओटले के वीसे स्थानाभां पणु अपर्याप्तक अने पर्याप्त आदर तेजस्कायिके लोपेना समय क्षेत्र-मनुष्य क्षेत्रने आश्रय करीने उत्पातनु कथन कडेपुं जेधये. अर्थात् तेमनी उत्पत्ती त्यां कडेवी जेधये. अने त्यांज तेजे तु मास्वान्तिक समुद्घातथी मरण कडेपुं जेधये आ रीने अपर्याप्त अने पर्याप्त आदर तेजस्कायिकेना समुद्घात अने उत्पत्ती मनुष्य क्षेत्रभां जे कइथी वीसे

कानां मनुष्यक्षेत्रे समुद्रघातः मनुष्यक्षेत्रे एवोपपातो यथाक्रमं विंशतिस्थानेषु वर्णनीय इति । वर्णनप्रकारस्तु पूर्वप्रदर्शित एव ज्ञातव्यः । २४०॥

‘वउक्काइया वणस्सइकाइया य जहा पुढवीकाइया तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वा’ वायुकायिका वनस्पतिकायिकाश्च यथा पृथिकायिका स्तथैव चतुष्केन भेदेन सूक्ष्मवादरपर्याप्तापर्याप्तभेदेन उपपातयितव्याः । वायुकायिकोऽपि च द्विविधः, सूक्ष्मो वादरश्च । सूक्ष्मोऽपि अपर्याप्त पर्याप्त भेदेन द्विविध स्तथा वादरोऽपि अपर्याप्त पर्याप्त भेदेन द्विविध स्तदेवं चतुर्विधा वायुकायिकाः । तेषां चतुष्केन भेदेन वायुकायवनस्पतिकाययोः सर्वत्र सम्भवात् पृथिवीकायिकवदेव उपपातो वर्णनीयः । (३२०) एवमेव वनस्पतिकायिकानामपि चतुष्केन भेदेन पृथिवीकायिकवदेव उपपातो वक्तव्यः । ४०० । क्रियत्पर्यन्तं चतुर्भेदभिन्नयोः वायुवनस्पतिकायिकयो रूपपातो वर्णनीय इति तत्राह—‘जाव’ इत्यादि, जाव पञ्जत्त

उपपात यथाक्रम वील स्थानों में वर्णित करना चाहिये अन्यत्र नहीं । वर्णन करनेका प्रकार पूर्व में दिखा ही दिया गया है २४० ।

‘वउक्काइयो वणस्सइकाइया य जहा पुढवीकाइया तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वा’ पृथिवीकायिक के जैसा वायुकायिक का और वनस्पतिकायिकका अपने अपने भेदों के साथ सर्वत्र उपपाद कहना चाहिये । वायुकायिक भी सूक्ष्म और वादर के भेद से दो प्रकार का होता है इनमें सूक्ष्म वायुकायिक भी अपर्याप्त और पर्याप्त के भेद से दो प्रकार का कहा गया है तथा वादरवायुकायिक भी अपर्याप्त और पर्याप्तके भेद से दो प्रकार का कहा गया है । इस प्रकार चार प्रकार के वायुकायिके और चार प्रकार के वनस्पतिकायिके सर्वत्र संभवित होने से पृथिवीकायिक के जैसे इनके उपपाद का वर्णन कर लेना चाहिये

स्थानेमां वर्णनं कहेषु जेठये जीने नही. वर्णन करवाने. प्रकार पडेलीं उपर अताववामा आवी गयेर छे. ते मुज्जण समज्जवे. २४०)

‘वाउक्काइया वणस्सइकाइया य जहा पुढवीकाइया तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वा’ पृथिवीकायिकता कथन प्रमाणे वायुकायिकतुं अने वनस्पतिकायिकतुं कथन लेहे साथे स्वयं अतावीने सधणा स्थानेमां उपपात समज्जवे. वायुकायिक पणु सूक्ष्म अने अदरना लेदथी जे प्रकारना थाय छे. सूक्ष्मवायुकायिके पणु अपर्याप्त अने पर्याप्तना लेदथी जे प्रकारना कहेल छे तथा वादर वायुकायिक पणु अपर्याप्त अने पर्याप्तना लेदथी जे प्रकारना कहेल छे. आ रीते चार प्रकारना वायुकायिक अने चार प्रकारना वनस्पतिकायिकतुं अथे संभवित पणुं हेवाथी पृथ्वीकायिकती जेम तेमना उपपातनुं वर्णन

वायरवणस्सइकाइएणं भंते !' यावत्पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकः खलु भदन्त !
अत्र यावत्पदेन पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकस्यापर्याप्त वादरवायुकायिकस्य, पर्याप्त-
वादरवायुकायिकस्य, अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकस्य, पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पति-
कायिकस्य, अपर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकस्य च संग्रहो भवति । एतादृशः
पूर्वोक्तचतुर्भेदभिन्नो वनस्पतिकायिकः, 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' एतस्या
रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' पौरस्त्ये पूर्वस्मिन् चर-
मान्ते समग्रहतः, 'समोहणित्ता' समग्रहत्य मरणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा, 'जे
भविण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए' यो भव्य एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः,
पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते पञ्जत्त वायरवणस्सइकाइयत्ताए उव्वज्जित्तए' एतस्यात्ये-
पश्चिमे चरिमान्ते पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकतयोत्पत्तुम् । 'से णं भंते ! कइ-
समइएणं' स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्यतेति प्रश्नः ।

४००, 'जाव पञ्जत्तवायरवणस्सइकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए
पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' यावत् हे भदन्त ! कोई पर्याप्त
वादरवनस्पतिकायिक इह रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मरा
और 'समोहणित्ता जे भविण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पञ्चत्थि-
मिल्ले चरिमंते पञ्जत्त वायरवणस्सइकाइयत्ताए उव्वज्जित्तए' मरकर
वह इसी रत्नप्रभा के पश्चिम चरमान्त में वादर पर्याप्त वनस्पतिका-
यिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ 'से णं भंते ! कइसमइएणं०' 'तो
हे भदन्त ! वह कितने समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है ? यहाँ
यावत् शब्द से सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिक का अपर्याप्त वादरवायुकायिक

करी देवु' नेछंये. ४०० 'जाव पञ्जत्त वायर वणस्सइकाइएण भंते ! इमीसे
रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते ! समोहए' यावत् हे भगवन् कोई
पर्याप्त वनस्पतिकायिक आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां मरणुपाये
अने 'समोहणित्ता जे भविण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते !
पञ्जत्त वायरवणस्सइकाइयत्ताए उव्वज्जित्तए' मरीने ते आ रत्नप्रभा
पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमा आदर पर्याप्तक वनस्पतिकायिक पण्णाथी उत्पन्न
थवाने योग्य थये डोय तो 'से णं भंते ! कइसमइएण' हे भगवन् ते केटवा
समयवाणी विग्रह गतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे ? अडिया यावत् शब्दथी सूक्ष्म
पर्याप्त वायुकायिकनुं, अपर्याप्त आदर वायुकायिकनुं, पर्याप्त आदर वायु-
कायिकनुं, अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकनुं, पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिक यिकेनु
अने अपर्याप्त आदर वनस्पतिकायिकनुं थडुथु थयेत छे आ प्रश्नना उत्तरमां
प्रभुश्री ठडे छे के- 'सेस' तहेव जाव से वेणट्टणं हे गौतम ! ने प्रभाणे अपर्याप्त

ઉત્તરયત્તિ—‘સેમં’ इत्यादिना, ‘सेमं तद्देव जाव से तेणट्टेणं’ शेषं तथैव यथा अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकोपपातावसरे उत्तरे कथितं तथैव इहापि यावत्तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते, इत्यादि प्रकरणान्तं सर्वमपि उत्तरादिकं ज्ञातव्यम् । यावत् पदेन सम्पूर्णस्यापि उत्तरवाक्यस्य संग्रहो भवति ।

‘दक्षिण चरमान्ते उपपातं वर्णयितुमाह—अपज्जत्तसुहुम’ इत्यादि । ‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ एतस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पाश्चात्ये—पश्चिमे चरमान्ते समवहतः ‘समोहणित्ता जे भविए’ समव-

का अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकका, एवं अपर्याप्त वादरवनस्पतिकायिक का संग्रह हुआ है । इस प्रकार प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री गौतम स्वामी से कहते हैं—‘सेसं तद्देव जाव से तेणट्टेणं’ हे गौतम ! जैसा अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के उपपात के अवसर में उत्तररूप में कहा गया है उसी प्रकार से यहां पर भी ‘यावत् हे गौतम ! मैंने इस कारण से ऐसा कहा है’ इस प्रकरण तक कह लेना चाहिये । यहां यावत् पद से सम्पूर्ण उत्तर वाक्य का संग्रह हुआ है ।

अब सूत्रकार पूर्व दक्षिण चरमान्त में उपपात का वर्णन करते हैं—इसमें गौतमस्वामीने प्रभुश्री से ऐसा पूछा है—‘अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइएणं भंते !’ हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव ‘इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ इस रत्नप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में भारणान्तिक समुद्घात से मरा ‘समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते

સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિકના ઉપપાતના સંબંધમાં ઉત્તર રૂપથી કથન કરેલ છે, તેજ રીતે આ પ્રકરણમાં પણ યાવત્ હે ગૌતમ ! મેં આકારણથી એવું કહ્યું છે કે—આ પ્રકરણ પર્યાન્ત સમગ્ર લેવું અહિયાં યાવત્ પદથી આ સમગ્ર ઉત્તર વાક્ય ગ્રહણ કરાયું છે.

હવે સૂત્રકાર દક્ષિણ ચરમાન્તમાં ઉપપાતનું વર્ણન કરે છે આમાં ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને એવું પૂછ્યું છે કે—‘અપજ્જત્ત સુહુમ પુઢવીકાઇયાણં ભંતે !’ હે ભગવન્ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ કોઈ પૃથ્વીકાયિક જીવ ‘ઇમીસે રયણપ્પભાએ પુઢવીએ પચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે ! સમોહએ’ આ રત્નહલા પૃથ્વીના પશ્ચિમ ચરમાન્તમાં ભારણાન્તિક સમુદ્ઘાતથી મરણપામે અને ‘સમોહણિત્તા જે ભવિએ

इत्य-मारणान्तिक समुद्घातं कृत्वा यो भव्यः 'इमीसे रयणपभाए पुढवीए' एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः, 'पुरस्थिमिल्ले चरिमते' पौरस्त्ये-पूर्वे चरमान्ते, 'अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिक-तया अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकरूपेणोत्पत्तुम्, 'से णं भंते ! कइ समइएणं' स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहणोत्पद्यतेति प्रश्नः । उत्तरमाह-सेसं तहेव' इत्यादि । 'सेसं तहेव निरवसेसं' शेषम्-एतदतिरिक्तं निरवशेषं प्रश्न वाक्यमुत्तरवाक्यं च तथैव-सर्वत्र समुद्घातेषु सर्वत्र बोधपातेषु यथैव प्रश्नोत्तर प्रकरणं कथितं तेनैव रूपेण निरवशेषम् इहापि अध्येतव्यम् । एकसामयिकेन यावत् त्रिसामयिकेन वा विग्रहणोत्पद्यत 'से केणट्टेणं' इत्यादिकं पूर्वसूत्रपठितमेव

'अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' और सरकर वह उसी रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ 'से णं भंते ! कइ समइएणं०' तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री गौतमस्वामी से कहते हैं-'सेसं तहेव निरवसेस' हे गौतम ! इस समयन्ध में जैसा कि पूर्व में सर्वत्र समुद्घातों में और उपपातों में प्रश्नोत्तर प्रकरण कहा गया है वैसा ही यहाँ पर भी वही सब कथन कह लेना चाहिये । अर्थात् वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है अथवा दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है । 'से केणट्टेणं' इत्यादि सूत्र से प्रश्न और 'से तेणट्टेण०' इत्यादि सूत्र से उत्तर जैसा पहिले कहा जा चुका है वह सब यहाँ पर वहाँ से आकर्षित कर कह लेना चाहिये । यही बात-'सेसं तहेव निरवसेसं'

इमीसे रयणपभाए पुढवीए पुरस्थिमिल्ले चरिमंते । सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' भरथु पाभीने ते ओए रत्नप्रभा पृथ्वीना यरमन्तमां सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पण्णाथी उत्पन्न थवाने योग्य अनेल डोय 'से णं भंते ! कइ समइएणं०' तो हे भगवन् ते त्यां डेटला समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के-'सेसं तहेव निरवसेस' हे गौतम ! आ सं'ंधमां ने प्रभाणे मे' पडेला अघे स्थणे समुद्घातोमां अने उपपातोमां प्रश्नोत्तर रूपथी प्रकरण कहुं छे, ओए प्रभाणे अडियां पण ते सधणुं कथन कही देवुं. नेधंओ. अर्थात् ते त्यां ओक समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे अथवा ओ समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. 'से केणट्टेण' इत्यादि सूत्रथी प्रश्न अने 'से तेणट्टेणं' इत्यादि सूत्रथी उत्तर ने प्रभाणे पडेलां कडेल छे. ओए प्रभाणे ते तमाम उत्तर अडियां कही देवो. ओए वात 'सेसं तहेव निरवसेस' आ सूत्रपाठ द्वारा अडियां सूत्रकडे

ज्ञातव्यमितिभावः । 'एवं जहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते सव्वपदेसु वि समोहया' एवं यथैव पौरस्त्ये चरमान्ते सर्वपदेष्वपि अपर्याप्त पर्याप्तादि भेदमिन्नपृथिव्यादि वनस्पतिकायिकान्त विंशति स्थानेषु समदहताः 'पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया' पाश्चात्ये चरमान्ते पृथिव्यप् वायुवनस्पतिकायिकाः समयक्षेत्रे-चापर्याप्तवादरपर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिका उपपातिताः । 'जे य समयखेत्ते समोहया ये च समयक्षेत्रे समदहताः सत्तः', 'पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया' पाश्चात्ये चरमान्ते पृथिव्यादय श्वस्वारः, समयक्षेत्रे च वाद्दर-तेजस्कायिका उपपातिताः । 'एवं एणं चैव कमेणं' एवमेतेनैव क्रमेण, 'पच्चत्थि-मिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य

इस सूत्रपाठ द्वारा यहाँ स्पष्टाई गई है । 'एवं जहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते सव्वपदेसु वि समोहया पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया' तथा इस सूत्र पाठ द्वारा सूत्रकार ऐसा समझा रहे हैं कि जैसा पूर्वचरमान्त में अपर्याप्त पर्याप्त आदि भेद विंशति पृथिवी आदि से लेकर वनस्पतिकायिक तक के २० स्थानोंवाले जीवोंका मारणांतिक समुद्घात करके मरण कहा गया है और मरण करके जैसा उनका पाश्चात्य चरमान्त के पृथिवी अप् वायु और वनस्पतिकायिकों में उपपात कहा गया है तथा अपर्याप्त वाद्दर और पर्याप्त वाद्दर तेजस्कायिकों का समयक्षेत्र में उत्पाद कहा गया है तथा 'जे य समयखेत्ते समोहया पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया' जो जीव वाद्दर अपर्याप्त तेजस्कायिक, वाद्दर पर्याप्त तेजस्कायिक-समयक्षेत्र में मारणांतिक समुद्घात करके पाश्चात्य चरमान्त में-रत्नप्रभा पृथिवी के पश्चिम-चरमान्त में एवं समयक्षेत्र में उत्पन्न हुए कहे गये हैं । 'एवं

समआवेद छे. 'एवं जहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते सव्वपदेसु वि समोहया पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया' तथा आ सूत्रपाठ द्वारा सूत्रकार એવું समझवे छे के-जेम पूर्व चरमान्तमां अपर्याप्त पर्याप्त विगेरे लेहवाणा पृथ्वीकाय विगेरेथी लछने वनस्पतिकाय सुधीना २० वीस स्थानोमां मारणा न्तिक समुद्घात करीने एवेनुं मरण कहेवामां आवेद छे, अने मरण कहीने जे रीते तेओनुं-ओटके के पृथ्वी, अप्, वायु, अने वनस्पतिकायिकोमां-ओटके के पश्चिम चरमान्तमां उपपात कहेद छे, तथा 'जे य समयखेत्ते समोहया पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते ! समयखेत्ते य उववाइया' जे एव वाद्दर अपर्याप्तक तेजस्कायिक, वाद्दर पर्याप्त तेजस्कायिक समय क्षेत्रमां मारणांतिक समुद्घात करीने पश्चिम चरमान्तमां-रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां यथेदा

उववाएयव्वा तेणेव गमएणं' पाश्चात्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे च समवहताः पौरस्त्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे च उपपातयितव्या स्तेनैव गमकेन-तेन पूर्वोक्तनैव प्रकारेणेति । 'एवं एएणं गमएणं दाहिणिल्ले चरिमंते समोहयाणं उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ' एवमेतेन गमकेन दाक्षिणात्ये चरमान्ते दक्षिण चरमान्ते समवहतानाम् औत्तरे चरमान्ते समयक्षेत्रे च उपपातो वर्णनीय 'एवं चैव उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया' एवमेवौत्तरे चरमान्ते समयक्षेत्रे च समवहताः 'दाहिणिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं' दाक्षि-

एएणं चैव कमेणं पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते समोहया पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा' उसी प्रकार इसी क्रम से पश्चिम चरमान्त में और समयक्षेत्र में उनका धारणान्तिक समुद्घात से मरण कहना चाहिये और मरण कहकर उनका पूर्वचरमान्त में एवं समयक्षेत्र में उत्पाद कहना चाहिये । 'एवं एएणं गमएणं दाहिणिल्ले चरिमंते समोहयाणं उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ 'तथा इसी प्रकार इसी क्रम से इन जीवोंका दक्षिण चरमान्त में धारणान्तिक समुद्घात से मरण कहकर उनका उत्तर चरमान्त में और समयक्षेत्र में उत्पाद का वर्णन करना चाहिये । 'एवं चैव उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया दाहिणिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं' तथा इसी प्रकार से इसी क्रम से उत्तर चरमान्त में और समयक्षेत्र में उनका धारणान्तिक समुद्घात कहकर दक्षिण के

'एवं एएणं चैव कमेणं पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते । समयखेत्ते समोहया पुरत्थिमिल्ले चरिमंते । समयखेत्ते य उववाएयव्वा' अने रीते आ ऊभथी पश्चिम चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां तेसनुं भारणान्तिक समुद्घातथी मरणु कडेवु न्नेधं अने मरणु कडीने पूर्वचरमान्तमा अने समय क्षेत्रमां तेओनो उत्पात कडेवो न्नेधंओ. 'एवं एएणं गमेणं दाहिणिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ' तथा आण प्रमाणे आण ऊभथी आ ओवेनु दक्षिण चरमान्तमां भारणान्तिक समुद्घातथी मरणु कडीने तेओनुं उत्तर चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां उत्पादनु वर्णन करु' न्नेधंओ. 'एवं चैव उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया दाहिणिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं' तथा आण प्रमाणे आण ऊभथी उत्तरमां चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां तेओनो भारणान्तिक समुद्घात कडीने दक्षिणमा

णात्ये चरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातयितव्याः तेनैव पूर्वप्रदर्शितेनैव गमकेन प्रकारे-
णेति । अयं भावः यथा-रत्नप्रभा पूर्वचरमान्ते समवहतरथ रत्नप्रभापश्चिम
चरमान्ते उपपातो वर्णितः, एवं रत्नप्रभा पश्चिमचरमान्ते समवहतरथ रत्नप्रभा
पूर्वचरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातो वर्णयितव्यः, तथा रत्नप्रभाया दक्षिणचरमान्ते
समयक्षेत्रे च समवहतरथ रत्नप्रभा उत्तरचरमान्ते समयक्षेत्रे च समवहतरथ
रत्नप्रभाया उत्तरचरमान्ते समयक्षेत्रे चोपपातो वर्णयितव्यः, तथैव रत्नप्रभाया
उत्तरचरमान्ते समयक्षेत्रे च समवहतरथ रत्नप्रभा दक्षिणचरमान्ते चोपपातो वर्ण-
नीयः । आलापकप्रकारः स्वयमेव ऊहनीयः ॥

॥ इति रत्नप्रभाश्रितोपपातप्रकारप्रकरणात्मकं द्वितीयं सूत्रम् ॥

चरमान्त में और समयक्षेत्र में उनके उत्पादका कथन उसी प्रकार के
गमकसे करना चाहिये । तात्पर्य यह है-जैसा रत्नप्रभा चरमान्त पृथिवी
के पूर्व चरमान्त में समवहत पृथिव्यादिकाधिक जीव का रत्नप्रभा
पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में उपपात वर्णित हुआ है वैसा ही रत्नप्रभा
पृथिवी के पश्चिम चरमान्त में समवहत पृथिव्यादिकाधिक जीवका
रत्नप्रभापृथिवी के पूर्वचरमान्त में और समयक्षेत्र में उपपाद वर्णित
कर लेना चाहिये । तथा रत्नप्रभा के दक्षिण चरमान्त में और समय-
क्षेत्र में समवहत हुए उस जीव के उत्पादका वर्णन रत्नप्रभापृथिके
उत्तर चरमान्त में और समयक्षेत्र में कर लेना चाहिये । इसी प्रकार से
रत्नप्रभा पृथिवी के उत्तर चरमान्त में एवं मनुष्यक्षेत्र में समवहत हुए

चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां तेभ्योना उत्पादनुं कथन करवुं लेधये. कडे-
वानुं तात्पर्यं ये छे के-ने रीते रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां ने
प्रभाणु समुद्घात कडेला पृथिव्यादिकाधिक विगेरे भवने रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम
चरमान्तमां उपपातनुं वर्णन करवुं छे, अण प्रभाणु रत्नप्रभा पृथ्वीना
पश्चिम चरमान्तमां समुद्घात करेल पृथ्वीकाधिक विगेरे भवने रत्नप्रभा
पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां समुद्घात कडेले भवना
उत्पादनुं वर्णन करी लेवुं लेधये. तथा रत्नप्रभा पृथ्वीना दक्षिण चरमान्तमां
अने समय क्षेत्रमां समुद्घात करेल ते भवना उत्पादनुं वर्णन
रत्नप्रभा पृथ्वीना उत्तर चरमान्तमां अने समयक्षेत्रमां करी
लेवुं लेधये. अण प्रभाणु रत्नप्रभा पृथ्वीना उत्तर चरमान्तमां अने

अत्र रत्नप्रभा प्रकरणे पृथिव्याद्येकैकस्मिन् जीवस्थाने त्रिंशति त्रिंशति गमकसद्भावेन पूर्वान्तगमानां चत्वारि शतानि ४००, एवं पश्चिमान्त दक्षिणान्तोत्तरान्तगमानां प्रत्येकं चत्वारि चत्वारि शतानीति समीप्य सर्वे षोडशशत संख्यकाः १६०० गमा भवन्तीति ॥सू-२॥

इति रत्नप्रभापृथिव्याश्रितोपपातप्रकारप्रवरगात्मकं द्वितीयं सूत्रम् ॥२॥

जीवोंके उत्पाद का वर्णन रत्नप्रभा पृथिवी के दक्षिण चरमांत में और समयक्षेत्र में कर लेना चाहिये। आलाप प्रकार इस सम्बन्ध में अपने आप उत्पन्न कर लेना चाहिये। इस प्रकार रत्नप्रभाश्रित उपपात के प्रकार का यह प्रकरण रूप द्वितीय सूत्र समाप्त हुआ। इस रत्नप्रभा प्रकरण में पृथिवी आदि एक एक जीव स्थान में बीस २ गमकोंका सद्भाव है इससे पूर्वान्त गमकोंकी संख्या ४०० होती है। इसी प्रकार से पश्चिमान्त, दक्षिणान्त और उत्तरान्त गमकोंकी प्रत्येककी ४००-४०० की संख्या होती है। इस प्रकार चारों दिशाओं के गमक १६०० होते हैं। ॥सू० २॥

मनुष्य क्षेत्रमां समुद्घात करेला अथवा उत्पातनुं वर्णन रत्नप्रभा पृथ्वीना दक्षिण अरमान्तमां अने समय क्षेत्रमां करी लेवुं. आ रीते रत्नप्रभा पृथ्वीना आश्रयवाणा उपपातना प्रकारेनु आ प्रकरणे इयं षोडश सूत्र समाप्त थयुं. आ रत्नप्रभा प्रकरणमां पृथ्वी विगेरे अक अक अव स्थानमां बीस बीस गमकेना सद्भाव कहेल छे अथी पूर्वान्तना गमेनी संख्या ४०० आरसो थाय छे अथ रीते पश्चिमान्त, दक्षिणान्त अने उत्तरान्त, गमेनी दरेकनी संख्या ४००-४०० आरसो, आरसोनी थाय छे. आ रीते आरे दिशाओना थयने कुल गमके १६०० सोणसे थाय छे. ॥सू० २॥



रत्नमभापृथिव्याश्रिताना मेकेन्द्रिय जीवानां संघातोपपातप्रकारं संप्रदर्श्य
शर्करानभाश्रितैकेन्द्रियजीवानां समुद्घातोपपातं प्रदर्शयन्नाह—अपञ्जत्त' इत्यादि ।

मूलम्—अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! सक्करप्पभाए
पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिसंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए
सक्करप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिसंते अपञ्जत्त सुहुम-
पुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए । एवं जहेव रयणप्पभाए जाव
से तेणट्टेणं० एवं एएणं कसेणं जाव पञ्जत्तएसु सुहुमतेउ-
काइएसु । अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! सक्करप्पभाए
पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिसंते समोहए समोहणित्ता जे भविए
समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते !
कइ समइएणं पुच्छा, गोयमा ! दुसमइएण वा, ति समइएण
वा विग्गहेणं उववज्जिज्जा । से केणट्टेणं० एवं खलु गोयमा !
मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ तं जहा, उज्जुयायथा जाव
अच्छक्कवाला । एमओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे, दुसम-
इएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, दुहओ वंकाए सेढीए उवव-
ज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्टेणं०
एवं पञ्जत्तएसु वि वायरतेउकाइएसु, सेसं जहा रयणप्पभाए ।
जे वि वायरतेउकाइया अपञ्जत्तगा य पञ्जत्तगा य समयखेत्ते
समोहणित्ता दोघाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिसंते पुढवी-
काइएसु चउव्विहेसु आउकाइएसु चउव्विहेसु, तेउकाइएसु
दुविहेसु, वाउकाइएसु चउव्विहेसु, वणहमइकाइएसु चउव्विहेसु
उववज्जंति ते वि एवं चेव दुसमइएण वा, तिसमइएण वा विग्ग-
हेणं उववाएयव्वा । वायरतेउकाइया अपञ्जत्तगा य पञ्जत्तगा य

जाहे तेषु चैव उववज्जंति, ताहे जहेव रयणप्पभाए तहेव एग-
समइय दुसमइय तिसमइय विग्गहा भाणियठ्ठा, सेसं जहेव
रयणप्पभाए तहेव निरवसेसं । जहा सद्धरप्पभाए वत्तव्वया
भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए वि भाणियठ्ठा ॥सू० ३॥

छाया—अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! शर्कराप्रभायाः पृथि-
व्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समग्रहतः समग्रहत्य यो भव्यः शर्कराप्रभायाः पृथिव्याः
पाश्चात्ये चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतयोपपत्तुम्, एवं यथैव रत्न-
प्रभायां यावत् तत्तेनार्थेन० । एवम्—एतेन कथेण यावत् पर्याप्तकेषु सूक्ष्मतेज-
स्कायिकेषु । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! शर्कराप्रभायाः पृथि-
व्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समग्रहतः समग्रहत्य यो भव्यः समयक्षेत्रे अपर्याप्तवाद्-
तेजस्कायिकतया उत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन पृच्छा, गौतम !
द्वि सामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत, तत्केनार्थेन, एवं खलु
गौतम ! मया सप्तश्रेणयः मङ्गलाः तद्यथा ऋज्जायता यानदूर्ध्वं चक्रनाला एकतो
वक्रया श्रेण्या उपपद्यमान त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, द्विधातो वक्रया
श्रेण्या उपपद्यमान त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, तत्तेनार्थेन० । एवं पर्या-
प्तकेष्वपि वाद्दरतेजस्कायिकेषु शेषं यथा रत्नप्रभायाम् । येऽपि वाद्दर-
तेजस्कायिका अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च समयक्षेत्रे समग्रहत्य द्वितीयायाः पृथि-
व्याः पाश्चात्ये चरमान्ते पृथिवीकायिकेषु चतुर्विधेषु, अपह्नायिकेषु, चतुर्विधेषु,
तेजस्कायिकेषु द्विविधेषु, वायुनायिकेषु, चतुर्विधेषु, दनस्पतिकायिकेषु चतु-
र्विधेषु उत्पद्यन्ते तेऽपि एवमेव, त्रिसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण
उपपातयितव्याः । वाद्दरतेजस्कायिकाः अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च यदा तेष्वे-
वोत्पद्यन्ते तदा यथैव रत्नप्रभायां तथैव एकसामयिक द्विसामयिक—त्रिसामयिक
विग्रहा भणितव्याः । शेषं यथैव रत्नप्रभायां तथैव निरवशेषम् । यथा शर्करा
प्रभाया वक्तव्यता भणिताः, एवं यावद्धः सप्तम्या अपि भणितव्याः ॥सू० ३॥

रत्नप्रभापृथिवी के आश्रित एकेन्द्रिय जीवों के समुद्घात और
उपपात के प्रकार को प्रकट करके अब शर्कराप्रभाश्रित एकेन्द्रिय जीवों
के समुद्घात और उपपात के प्रकार को सूत्रकार प्रकट करते हैं—

रत्नप्रभा पृथ्वीना आश्रयवाणा ऐकेन्द्रिय जिवाना सघात अने उपपात
ना प्रकारने प्रकट करीने हवे सूत्रकार शर्कराप्रभा पृथ्वीना आश्रयवाणा
ऐकेन्द्रिय जिवाना समुद्घातो अने उपपातना प्रकारे प्रकट करे छे,—

टीका—‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘सक्करप्पभाए पुढवीए’ शर्कराप्रभायाः द्वितीयनारकपृथिव्याः, ‘पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ पौरस्त्ये पूर्वस्थितान् चरमान्ते समबहतो मारणान्तिकममुद्घातं कृतवान् । ‘समोहणित्ता जे भविए’ समबहत्य मारणान्तिक समुद्घातं कृतवा यो भव्यः योग्यः ‘सक्करप्पभाए पुढवीए’ शर्कराप्रभाया द्वितीय-पृथिव्याः, ‘पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते’ पश्चिमात्त्ये-पश्चिमे चरमान्ते, ‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइत्ताए उववज्जित्तए’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवरूपेणोत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! एकसामयिकेन वा, विग्रहेण यावत् त्रिसामयिकेन विग्रहेण

‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! सक्करप्पभाए पुढवीए’ इत्यादि टीकार्थ—‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ हे भदन्त ! जिस अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवने ‘सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ शर्कराप्रभा पृथिवीके पूर्वचरमान्त पूर्वभागके अन्त में मारणान्तिक समुद्घात से मरण क्रिया ‘समोहणित्ता जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइत्ताए उववज्जित्तए’ और मरकर वह शर्कराप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त ‘पश्चिम भाग के अन्त’ में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ तो हे भदन्त ऐसा वह जीव वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? क्या एक समयवाले विग्रह से वह वहां उत्पन्न होता है ? अथवा दो समयवाले विग्रह से वह वहां उत्पन्न होता है ? अथवा तीन समयवाले विग्रह से वह वहां

‘अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइयाणं भंते ! सक्करप्पभाए पुढवीए’ इत्यादि टीकार्थ—‘अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइए णं भंते !’ हे लगवन् ने अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जे ‘सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते ! समोहए’ शर्कराप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्त (पूर्वभागनाअन्त)मां मारणान्तिक समुद्घात करीने मरणपामे अने ‘समोहणित्ता जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइत्ताए उववज्जित्तए’ अने मरणपामीने ते शर्कराप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्त पश्चिभागना अन्तमा अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पञ्चाथी उत्पन्न थवाने योग्य थयेत डोय तो हे लगवन् जेवो ते जेव त्यां केटला समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? शुं ते जेक समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा जे समयवाणी विग्रह गतिथी ते त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा त्रय समय वाणी विग्रह गतिथी ते त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री

ઉત્પદ્યેતેતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-‘એવં જહેવ’ ઇત્યાદિ, ‘એવં જહેવ રચણપ્પમાણ જાવ સે તેણટ્ટેણં’ એવં યથૈવ રત્નપ્રમાયાં તથૈવ શર્કરાપ્રમાયામપિ વાચ્યમ્, યાવત્ તત્તેનાથેન હે ગૌતમ ! એવમુચ્યતે એકસામયિકેન વા, દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામ-યિકેન વા, વિગ્રહેણ ઉત્પદ્યેત ઇતિ પ્રચ્યન્તઃ પાઠોઽન્ન વાચ્યઃ । ‘એવં એણં કમેણં જાવ પજ્જત્તસુહુમતેઽકાહણસુ’ એવમેતેન ઉપર્યુક્ત પ્રકારેણ યાવત્ પર્યાપ્તસૂક્ષ્મ-તેજસ્કાયિકેષુ અન્ન યાવત્પદેન પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકાઽપર્યાપ્ત વાદર પૃથિવીકાયિક પર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિકાઽપર્યાપ્ત સૂક્ષ્માપ્કાયિક-પર્યાપ્ત-સૂક્ષ્માપ્કાયિકાઽપર્યાપ્તવાદરાઽપ્કાયિક-પર્યાપ્તવાદરાપ્કાયિકાઽપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ તેજસ્કાયિકાનાં સંગ્રહો ભવતિ । તથા ચ-અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિ-

ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામી સે ત્હત્તે હૈ-‘એવં જહેવ રચણપ્પમાણ જાવ સે તેણટ્ટેણં હે ગૌતમ ! જૈસા રત્નપ્રમાપૃથિવી મેં કહા ગયા હૈ વૈસા હી શર્કરાપ્રમાપૃથિવી મેં ણી યાવત્ હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ વહ વહાં એક સમયવાલે વિગ્રહ સે ણી ઉત્પન્ન હોતા હૈ દો સમયવાલે વિગ્રહ સે ણી ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ત્રી સમયવાલે વિગ્રહ સે ણી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યહાં તકકે પ્રકરણકા કથન કરના વાહિયે । ‘એવં એણં કમેણં જાવ પજ્જત્ત સુહુમ તેઽકા-હણસુ’ હસી ક્રમ સે યાવત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ તેજસ્કાયિક તક મેં જાનના વાહિયે । યહાં યાવત્પદ સે ‘પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયિક અપર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિક, પર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિક, અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિક, પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિક, અપર્યાપ્ત વાદરઅપ્કાયિક, પર્યાપ્ત વાદર અપ્કાયિક એવં અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ તેજસ્કાયિક’ હન સ્વકા ગ્રહણ

ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘એવં જહેવ રચણપ્પમાણ જાવ સે તેણટ્ટેણં’ હે ગૌતમ-રત્નપ્રમા પૃથ્વીના પ્રકરણમાં જે પ્રમાણેનું કથન કરવામાં આવેલ છે. એજ પ્રમાણેનું કથન શર્કરાપ્રમા પૃથ્વીના સંબંધમાં પણ યાવત્-હે ગૌતમ ! મેં એવું કહ્યું છે કે-તે ત્યાં એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે. જે સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે, અને ત્રણ સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે. આ કથન સુધીનું સઘળું પ્રકરણ કહેલુ ભેદએ. ‘એવં એણં કમેણ જાવ પજ્જત્તસુહુમતેઽકાહણસુ’ આજ ક્રમથી યાવત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ-તેજસ્કાયિક સુધીમાં સમજવું અહિયાં યાવત્પદથી પર્યાપ્તસૂક્ષ્મપૃથ્વીકાયિક, અપર્યાપ્ત વાદરપૃથ્વીકાયિક, પર્યાપ્તવાદરપૃથ્વીકાયિક, અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિક પર્યાપ્તસૂક્ષ્મ અપ્કાયિક, અપર્યાપ્ત વાદર અપ્કાયિક પર્યાપ્ત વાદરઅપ્કાયિક અને અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિક આ સઘળા શ્રદ્ધા કરાયા છે. તથા-અપ-

कस्य शर्कराप्रभा पूर्वचरमान्ते समवहत्य शर्कराप्रभा पश्चिमचरमान्ते समुत्पद्यमानस्य अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकादारभ्य यावत् पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकेषु उत्पत्तिं वदन् एष एव क्रमो ज्ञातव्य इति । अथ एतदेव समयक्षेत्रमाश्रित्याह—‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त । ‘सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ शर्कराप्रभाया द्वितीय पृथिव्याः पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, मारणान्तिकसमुद्घातं कृतवान् ‘समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उव्वज्जित्तए’ समवहत्य मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यः समयक्षेत्रे अपर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकतया—अपर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकरूपेण उत्पत्तुम्, ‘से णं भंते । कइ समइएणं पुच्छा’ स खलु भदन्त । कति सामयिकेन विग्रहेण उत्प-

हुभा है । तथा च—अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकका शर्कराप्रभा पृथिवी के पूर्वचरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात द्वारा मरण कहकर जैसा उसका शर्कराप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूप से उत्पाद एक अथवा दो अथवा तीन समयवाले विग्रह द्वारा कहा गया है—सो इसी प्रकार से इसकी उत्पत्ति पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकों तक में कह लेनी चाहिये । ‘अपञ्जत्त सुहुम पुढवीकाइएणं भंते ! हे भदन्त ! जिस अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवने ‘सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ शर्कराप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात से मरण किया ‘समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्त वायर तेउकाइयत्ताए’ और मरकर वह समयक्षेत्र अढाई द्वीप समुद्र में अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिक रूप से उत्पत्ति के योग्य हुआ तो ‘से णं भंते ! कइसमइएणं

र्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकानुं शर्कराप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमा मारणान्तिक समुद्घातद्वारा मरण करीने जे रीते तेओने शर्कराप्रभा पृथ्वीना पश्चिमचरमान्तमा अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपण्णाथी उत्पाद ओक अथवा जे अथवा त्रण समयवाणी विग्रह गतिथी कइए छे, ते ओक प्रमाणे तेओनी उत्पत्ति पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिके सुधीमां कइएवी जेथओ ‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइएणं भंते !’ जे लगवन् जे अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ओवे ‘सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ शर्कराप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तमा मारणान्तिक समुद्घातथी मरण पाये। ‘समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उव्वज्जित्तए’ अने मरीने समयक्षेत्र (अढी द्वीप)मां अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकपण्णाथी उत्पन्न थवाने योग्य

घेत ? इति पृच्छया-प्रश्नः समुत्पत्ते । भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘दुसमइएण वा, तिसमइएण वा, विग्गहेण उव्वज्जेज्जा’ द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येव इत्युत्तरम् । इह शर्करामभा पृथिवी पूर्वचरमान्ताद् मनुष्यक्षेत्रे समुत्पद्यमानस्य बादरतेजस्कायिकस्य समश्रेणि नास्तीति, ‘दुसमइएणं’ इत्यादि कथितम् । एकसामयिकेनेति न कथितम् । समश्रेण्यां गच्छत एव एरुसामयिक विग्रहसम्भवो भवति, विश्रेण्या गच्छन्स्तु द्वयादिसामयिक विग्रह यथाक्रमं भवतीति भावः, ‘से केणट्टेणं’ तत्केनार्थेन भदन्त ! एवं-मुच्यते द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत ? इति पुनः प्रश्नः । भगवानाह-‘एवं खलु’ इत्यादि । ‘एवं खलु गोयमा !’ एवं खलु हे गौतम !

पुच्छा ‘हे भदन्त ! वह वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? इसके सम्बन्ध में प्रभुश्री उत्तर रूप से कहते हैं-‘गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उव्वज्जेज्जा’ ‘हे गौतम ! वह वहां दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि शर्करा पृथिवी के पूर्व चरमान्त से मनुष्यक्षेत्र में उत्पन्न होनेवाले बादरतेजस्कायिक जीव का वह उत्पत्ति स्थान समश्रेणि में नहीं पड़ता है । एक समयवाला विग्रह समश्रेणिवाले उत्पत्ति स्थान में जानेवाले जीवका होता है । विश्रेणि से जानेवाले जीव को दो आदि समयका ही विग्रह होता है । ‘से केणट्टेणं भंते !’ हे भदन्त ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वह वहां दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘एवं खलु गोयमा ! एवं-

भनेव डोय, ‘से णं भंते ! कइ समएणं पुच्छा’ डे भगवन् ते त्यां केट्ठा समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-‘गोयमा ! दुसमइएणं वा, तिसमइएणं वा विग्गहेणं उव्वज्जेज्जा’ डे गौतम ! ते त्यां मे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. कहेवानुं तात्पर्यं मे छे के-शर्कराप्रभा पृथ्वीना पूर्वचरमान्तथी मनुष्यक्षेत्रमां उत्पन्न थवावाणा बादरतेजस्कायिक अवतुं ते उत्पत्तिस्थान समश्रेणीमा पडतुं नथी. मेक समयवाणे विग्रह समश्रेणीवाणा उत्पत्तिस्थानमां जवावाणा अवनेो डोय छे. विश्रेणीथी जवावाणा अवने मे विगेरे समयनी ज विग्रह गति डोय छे.

‘से केणट्टेणं भंते !’ डे भगवन् आप अवुं शा कारणुथी कहेो छे के-ते त्यां मे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-‘एवं खलु

‘મए सत्त सेढीओ पणत्ताओ’ मया-महावीरेण सप्तश्रेणयः प्रज्ञप्ताः, ‘तं जहा’ तद्यथा-‘उज्जुयायया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्वायता यावद् अर्द्धचक्रवाला, अत्र-यावत्पदेन एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा, द्विधातः खा, चक्रवाला इत्यन्तश्रेणीनां संग्रहो भवति, तत्र-‘एकओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ एकतो वक्रया द्वितीय श्रेण्या उत्पद्यमानो द्विसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत इति । ‘से तेणट्टेणं’ तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेण समुत्पद्येतेति । ‘एवं पज्जत्तएसु

सत्त सेढीओ पणत्ताओ ‘हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही हैं ‘तं जहा’ जैसे-‘उज्जुयायया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्वायता यावत् अर्धचक्रवाला यहाँ यावत्पद से-एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा, द्विधातः खा, और चक्रवाला’ इन अवशिष्ट श्रेणियों का ग्रहण हुआ है । इन में से जो जीव ‘एकओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ उत्पत्तिस्थान में एकतो वक्रा श्रेणि से उत्पन्न होता है वह वहाँ दो समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । यहाँ समश्रेणि नहीं है । इसलिए-प्रथमश्रेणि से गमन का अभाव रहता है । ‘दुहओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जो जीव उत्पत्तिस्थान में द्विधातो वक्रा श्रेणि से जाकर उत्पन्न होता है वह वहाँ तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? ‘से तेणट्टेणं’ इस कारण हे गौतम ! मैंने पूर्वोक्तरूप से ऐसा कहा है कि वह वहाँ दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न

गोयमा । मए सत्त सेढीओ पणत्ताओ’ हे गौतम ! मैं सात श्रेणीयो कहेल છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે-‘ઉજ્જુયાયયા જાવ અદ્ધચક્કવાલા’ ઋજ્વાયતા યાવત્ અર્ધચક્રવાલા અહિયાં યાવત્પદથી એકતોવક્રા, દ્વિધાતોવક્રા, એકતઃ ! ખા, દ્વિધાતઃ ! ખા અને ચક્રવાલા આ બાકીની શ્રેણીયો અહણુ કરાઈ છે. આમાંથી જે શુવ ‘એકઓ વંકાએ સેઢીએ ઉવવજ્જમાણે દુસમઇએણં વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ ઉત્પત્તિસ્થાનમાં એકતોવક્રા શ્રેણીથી ઉત્પન્ન થાય છે. તે ત્યાં બે સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. અહિયાં સમશ્રેણી હોતી નથી. એથી પહેલી શ્રેણીથી ગમનને અભાવ રહે છે. ‘દુહઓ વંકાએ સેઢીએ ઉવવજ્જમાણે તિસમઇએણં વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ જે શુવ ઉત્પત્તિસ્થાનમાં દ્વિધાતોવક્રા શ્રેણીથી જન્મને ઉત્પન્ન થાય છે, તે ત્યાં ત્રણ સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. ‘સે તેણટ્ટેણં’ તે કારણથી હે ગૌતમ ! મેં પહેલાં કહ્યા પ્રમાણે એવું કહેલ છે કે-તે ત્યાં બે સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી

वि वायरतेउकाइएसु' एवम् पर्याप्तवाद्दरतेजस्कायिकेषु यथा-अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्य द्विसामयिकेन वा त्रिसामयिकेन वा विग्रहेणोत्पादः कथितो न तु एकसामयिकेन तथैव पर्याप्तेषु अपि वाद्दरतेजस्कायिकेषु शर्कराप्रभा पूर्व-चरमान्तात् शर्कराप्रभापश्चिमचरमान्ते आगत्य समुत्पत्तुं योग्यस्य अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्य द्विसामयिकेन वा त्रिसामयिकेन वा विग्रहेण समुत्पादो ज्ञातव्य इति । 'सेसं जहा-रयणप्पभाए' शेषम् वायुकायिकादिसम्बन्धे यथा-येन प्रकारेण रत्नप्रभायां कथितं तथैव अत्रापि ज्ञातव्यम् इति । 'जे वि वायरतेउकाइया अपज्जत्तगाय' येऽपि वाद्दरतेजस्कायिका अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च, 'समयखेत्ते समोहणित्ता दोच्चाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते' समयक्षेत्रे

होता है । 'एवं पज्जत्तएसु वि वायरतेउकाइएसु' जिस प्रकार अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकों में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक का दो समयवाले विग्रह से अथवा तीनसमयवाले विग्रह से उत्पाद कहा गया है-एक समयवाले विग्रह से नहीं उसी प्रकार से पर्याप्त वाद्दर तेजस्कायिकों में शर्कराप्रभा के पूर्व चरमान्त से समयक्षेत्र में आकरके उत्पत्ति के योग्य हुए अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक का दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पाद जानना चाहिये 'सेसं जहा रयणप्पभाए' जिस प्रकार से शेष वायुकायिक आदि के संबंध में जैसा रत्नप्रभा में कहा गया है उसी प्रकार से यहाँ पर भी जानना चाहिये 'जे वि वायरतेउकाइया अपज्जत्तगाय पज्जत्तगाय समयखेत्ते समोहणित्ता दोच्चाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते' और जो पर्या-

अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न घाय छे. 'एवं पज्जत्तएसु वि वायरतेउकाइएसु' ने रीते अपर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकोमां अपर्याप्तसूक्ष्म तेजस्कायिकनी जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पत्ति कडेण छे.-जेक समयवाणी विग्रह गतिथी नही' जेण रीते पर्याप्त वाद्दरतेजस्कायिकोमां शर्कराप्रभापृथ्वीना पूर्वचरमान्तथी शर्कराप्रभाना पश्चिमचरमान्तमा आवीने उत्पन्न थवाने योग्य थयेला अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकेनो उत्पात जे समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी समज्जये. 'सेसं जहा रयणप्पभाए' ने रीते अवान्तर प्रश्नोत्तरे विगेरे रत्नप्रभाना प्रकरणमा कइया छे, जेण रीते अहिंयां पणु समज्जवा. 'जे वि वायर अपज्जत्तगा य समयखेत्ते समोहणित्ता दोच्चाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते' पर्याप्तक अने अपर्याप्तक वाद्दर तेजस्कायिक ने एव समय

मनुष्यक्षेत्रे इत्यर्थः समग्रदृश्य मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा मृत्वेत्यर्थः, द्वितीयायाः य पृथिव्याः शर्कराप्रभाया इत्यर्थः, पाश्चात्ये चरमान्ते 'पृथ्वीकाइएसु चउव्विहेसु' पृथिवीकायिकेषु चतुर्विधेषु अपर्याप्त सूक्ष्म, पर्याप्त सूक्ष्माऽपर्याप्त वादर-पर्याप्तवादर पृथिवीकायिकरूपेषु, तथा—'आउक्काइएसु चउव्विहेसु' अप्कायिकेषु अपर्याप्तादि चतुर्विधेषु तथा 'तेउक्काइएसु दुविहेसु' तेजस्कायिकेषु द्विविधेषु अपर्याप्त सूक्ष्म भेदभिन्नैषु, तथा—'वाउक्काइएसु चउव्विहेसु' वायुकायिकेषु चतुर्विधेषु तथा—'वणस्सहकाइएसु चउव्विहेसु' वनस्पतिकायिकेषु चतुर्विधेषु 'उव्वज्जंति' उत्पद्यन्ते, अपर्याप्तकपर्याप्तकाः वादरतेजस्कायिका एषु अधिकरणेषु समुत्पत्तिं लभन्ते, 'तेवि एवं चेव दुवमइएण वा, तिसमइएण वा विग्रहेण उववाएयव्वा' तेऽप एवमेव द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा विग्रहेण

सक और अपर्याप्तक वादरतेजस्कायिक जीव समक्षेत्र में—मनुष्यक्षेत्र में मारणान्तिक समुद्घात से मरण करके शर्कराप्रभा के पाश्चात्य चरमान्त में चारों प्रकारके—अपर्याप्त सूक्ष्म, पर्याप्त सूक्ष्म, अपर्याप्त वादर और पर्याप्त वादर—पृथिवीकायिकों में तथा 'आउक्काइएसु चउव्विहेसु' अपर्याप्तकादि चारों भेदवाले अप्कायिकों में 'तेउक्काइएसु दुविहेसु' तथा—अपर्याप्त सूक्ष्म एवं पर्याप्त सूक्ष्म दो भेद वाले तेजस्कायिकों में तथा—'वाउक्काइएसु चउव्विहेसु' चारों प्रकारके वायुकायिकों में तथा—'वणस्सहकाइएसु चउव्विहेसु' चारों प्रकारके वनस्पतिकायिकों में 'उव्वज्जंति' उत्पन्न होते हैं, वे इसी प्रकार से वहाँ दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होते हैं 'ते वि एवं चेव' जिस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकका अपर्याप्त

क्षेत्रमा, मनुष्यक्षेत्रमा मारणान्तिक समुद्घातथी मरण पासीने शर्कराप्रभाना पश्चिम चरमान्तमां यारे प्रकारना—अष्टवे के—पर्याप्त सूक्ष्म, अपर्याप्तसूक्ष्म, अपर्याप्त वादर पर्याप्त वादर—पृथ्वीकायिकेमां तथा 'आउक्काइएसु चउव्विहेसु' अपर्याप्त विगेरे यारे लेहवाणा अप्कायिकेमां 'तेउक्काइएसु दुविहेसु' तथा अपर्याप्त सूक्ष्म अने पर्याप्त सूक्ष्म ये लेहवाणा तेजस्कायिकेमां तथा 'वाउक्काइएसु चउव्विहेसु' यारे प्रकारना वायुकायिकेमां तथा 'वणस्सहकाइएसु चउव्विहेसु' यारे प्रकारना वनस्पतिकायिकेमां 'उव्वज्जंति' उत्पन्न थाय छे. अण प्रमाणे तेमां त्यां ये समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रण समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. 'ते वि एवं चेव' जे प्रमाणे अपर्याप्त-सूक्ष्म पृथ्वीकायिकेना अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकेमां ये वगेरे समयवाणी

विषमश्रेण्या उपपातयितव्याः, यथा अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्य अपर्याप्त वादरतेजस्कायिके द्वयादिसामयिकविग्रहेणोत्पादः कथितस्तथैव अपर्याप्त पर्याप्त वादरतेजस्कायिकानामपि समयक्षेत्रे समबहुतानां शर्कराप्रभायाः पश्चिमचरमान्त स्थित पृथिव्यादिवनस्पतिकायिकान्तेषु द्वित्रिसामयिकविग्रहेणैव उपपातो वर्णयितव्य इति भावः । 'वायरतेउकाइया अपज्जत्तगाय पज्जत्तगाय' वादरतेजस्कायिका अपर्याप्तकाश्च पर्याप्तकाश्च, 'जाहे तेसु चेव उववज्जंति' यदा तेष्वेव पूर्वोक्त विशेषणविशिष्टेषु पृथिव्यादिवनस्पतिकायिकान्तेषु उत्पद्यन्ते । 'ताहे जहेव रयणप्पभाए' तदा यथैव रत्नप्रभायासु, 'तहेव एगसमइय-दुसमइय-तिसमइय विग्गहा भाणियव्वा' तथैव-रत्नप्रभावदेव एकसामयिक-

वादरतेजस्कायिके दो आदि समयवाले विग्रह से उत्पाद प्रकट किया गया है, उसी प्रकार से अपर्याप्त पर्याप्त वादरतेजस्कायिकोंका भी जो कि समयक्षेत्र में समबहुत हुए हैं और शर्कराप्रभा के पश्चिम चरमान्त के पर्यन्त में उत्पाद दो समय वाले अथवा तीन समयवाले विग्रह से वर्णित कर लेना चाहिये । 'वायरतेउकाइया अपज्जत्तगाय पज्जत्तगाय जाहे तेसु चेव उववज्जंति' अपर्याप्तक एवं पर्याप्तक वादरतेजस्कायिक जीव जब उन्हीं पूर्वोक्त विशेषण विशिष्ट पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के जीवों में उत्पन्न होते हैं 'ताहे जहेव रयणप्पभाए तहेव एगसमइय दुसमइय तिसमइय विग्गहा भाणियव्वा' तब जैसा रत्नप्रभा के सम्बन्ध में कहा गया है वैसा इन के सम्बन्ध में एक समयवाले दोसमयवाले अथवा तीनसमयवाले

विग्रह गतिथी उत्पत्तिना संभंधमां कथन करवामां आव्युं छे जेण प्रभाणे अपर्याप्त पर्याप्त वादर तेजस्कायिकेना पणु जेमके समयक्षेत्रमां समुद्घात करेल छे. अने शर्कराप्रभाना पश्चिम चरमान्तना पर्यन्तना उत्पादनुं वणुंन जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी करी लेवुं 'वायर तेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य जाहे तेसु चेव उववज्जंति' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक वादर तेजस्कायिक एव ज्यारे आज पडेला कडेल विशेषणोधी युक्त पृथ्वीकायिक विगरेथी लधने वनस्पतिकायिक सुधीना एवोमां उत्पन्न थाय छे 'ताहे जहेव रयणप्पभाए तहेव एगसमइय दुसमइय तिसमइय विग्गहा भाणियव्वा' त्यारे रत्नप्रभा पृथ्वीना संभंधमा जे प्रभाणे कडेवामां आवेल छे जेण प्रभाणेतुं कथन अपर्याप्त पर्याप्त वादरतेजस्कायिकेना संभंधमां जेक समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह

द्विसामयिक-त्रिसामयिक, विग्रहा भणितव्याः, 'सेसं जहेव रयणप्पभाए तहेव निरवसेसं' शेषम्-अत्रान्तरप्रश्नोत्तरादिकं 'तत्केवार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते' इत्यादिकं यथैव रत्नप्रभायां कथितं तथैव निरव-
शेषमिहापि भणितव्यमिति । 'जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया एवं जाव अहे सत्त-
माए वि भाणियव्वा' यथा-शर्कराप्रभा द्वितीयनारकपृथिव्या वत्तव्वया भणिता-
कथिता, तथैव-तेनैव रूपेण यावद्धः सप्तम्या स्तगरतमाया अपि पृथिव्या
वत्तव्वया भणितव्या, सर्वत्रालापप्रकारः स्वयमेवोहनीय इति ॥३॥

पूर्वं शर्कराप्रभात् आरभ्याधः सप्तमीपृथिवीपर्यन्तमुपपातः प्रदर्शितः,
साम्पतं स्वामान्येन अत्रःक्षेत्र मूर्ध्वक्षेत्र चाश्रित्याह- 'अपज्जत्त०' इत्यादि ।

मूलम्-अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइण्णं भंते ! अहोलोचखेत्त-
नालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए । समोहणित्ता जे भविए
उड्डूलोचखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइ-

विग्रह से ये उत्पन्न होते हैं ऐसा कह लेना चाहिये । 'सेसं जहेव रयण-
प्पभाए तहेव निरवसेसं' याही का और सब प्रश्नोत्तरादि रूप कथन
'हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण कहते हैं ? हे गौतम ! मैंने सात
श्रेणियां कही हैं' इत्यादि रूप प्रश्न और उत्तररूप कथन सब जैसा रत्न
प्रभापृथिवी के प्रकरण में कहा जा चुका है वैसा ही यहां द्वितीय
शर्कराप्रभापृथिवी की वत्तव्वया में कह लेना चाहिये 'जहा सक्करप्प-
भाए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव अहे सत्तमाए वि भाणियव्वा' जैसी
यह द्वितीय शर्कराप्रभा पृथिवी की वत्तव्वया कही गई है इसी प्रकार
की वत्तव्वया यावत् अत्रः सप्तमी पृथिवी तक कह लेनी चाहिए । इस
सम्बन्ध में आलापक प्रकार अपने आप उत्पन्न कर लेना चाहिये ॥सू०३॥

गतिथी उत्पन्न धाय छे. तेम कडेवुं जेधं अये. 'सेसं' जहेव रयणप्पभाए तहेव
निरवसेसं' भाकीतुं भाणुं सधणुं प्रश्नोत्तरादि रूप कथन 'हे भगवन् आप
अये प्रभाए शा करणुथी कडे छे ? हे गौतम ! मे' सात श्रेणीयो कही छे.'
विगेरे प्रकरथी प्रश्न अने उत्तररूप कथन-जे रीते रत्नप्रभा पृथ्वीना प्रक-
रणुमां कडेवामां आवेद छे, अये प्रभाए अडियां आ भाणुं शर्कराप्रभा
पृथ्वीना कथनमां कही देवुं. 'जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव
अहे सत्तमाए वि भाणियव्वा' आ भाणुं शर्कराप्रभापृथ्वीतुं कथन जे प्रभाए
कथुं छे, अये प्रभाएतुं कथन यावत् अत्रःसप्तमी पृथ्वीना कथन सुधी
समणुं देवुं. आ विषयमां आलापके स्वयं अनापीने करी देवा. ॥सू० ३॥

યત્તાણ ઉવવજ્જિત્તાણ સે ણં મંતે ! કઙ્ગ સમઙ્ગણં વિગ્ગહેણં ઉવ-
 વજ્જેજ્ઞા ૧ । ગોયમા ! તિસમઙ્ગણ વા, ચતુસમઙ્ગણ વા વિગ્ગ-
 હેણં ઉવવજ્જેજ્ઞા । સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્ચઙ્ગ તિસમઙ્ગણં
 વા ચતુસમઙ્ગણં વા વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્ઞા ? ગોયમા ! અપ-
 વ્વજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઙ્ગણં અહોલોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે
 સમોહણ સમોહણિત્તા જે મવિણ ઉહ્હુલોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે
 ચેત્તે અપવ્વજ્જત્તસુહુમપુઠ્ઠવીકાઙ્ગણં ણમપયરંમિ અણુસેઠીણ
 ઉવવજ્જિત્તાણ, સે ણં તિસમઙ્ગણં વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્ઞા । જે
 મવિણ વિસેઠીણ ઉવવજ્જિત્તાણ સે ણં ચતુસમઙ્ગણં વિગ્ગહેણં
 ઉવવજ્જેજ્ઞા, સે તેણદ્દેણં જાવ ઉવવજ્જેજ્ઞા । એવં પવ્વજ્જત્તસુહુમ-
 પુઠ્ઠવીકાઙ્ગણં વિ, એવં જાવ પવ્વજ્જત્તસુહુમતેઉકાઙ્ગણં । સુ. ૪

હાયા—અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકઃ સ્વલુ મદન્ત ! અધોલોકક્ષેત્રનાડયા
 વાહ્યે ક્ષેત્રે સમવહતઃ સમવહત્ય યો મવ્યઃ ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રનાડયા વાહ્યે ક્ષેત્રે અપર્યાપ્ત
 સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકતયા ઉત્પત્તુમ્, સ સ્વલુ મદન્ત ! કતિ સામયિકેન વિગ્રહેણ
 ઉત્પદ્યેત ? ગૌતમ ! ત્રિસામયિકેન વા, ચતુઃસામયિકેન વા વિગ્રહેણોત્પદ્યેત ।
 તત્કેનાર્થેન સ્વલુ મદન્ત ! એવમુચ્યતે ત્રિસામયિકેન વા, ચતુઃસામયિકેન વા,
 વિગ્રહેણ ઉત્પદ્યેત ? । ગૌતમ ! અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકઃ સ્વલુ અધોલોકક્ષેત્ર
 નાડયા વાહ્યે ક્ષેત્રે સમવહતઃ સમવહત્ય યો મવ્યઃ ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રનાડયા વાહ્યે ક્ષેત્રે
 અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકતયા એકમતરે અનુશ્રેણ્યા ઉત્પત્તું સ સ્વલુ ત્રિસામયિકેન
 વિગ્રહેણ ઉત્પદ્યેત । યો મવ્યો વિશ્રેણ્યા ઉત્પત્તું સ સ્વલુ ચતુઃસામયિકેન વિગ્રહેણો-
 ત્પદ્યેત, તત્કેનાર્થેન યાવદુત્પદ્યેત, એવં પર્યાપ્તસૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકતયા અપિ ।
 એવં યાવત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિકતયા ॥૪॥

હસ પ્રકાર શર્કરામમા સે લેકર અધઃસપ્તમી પૃથિવી તક ઉપપાત
 'ઉત્પન્ન હોના' દિસ્યાયા હૈ । અવ સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપસે અધઃક્ષેત્ર
 ઔર ઉર્ધ્વક્ષેત્રકો આશ્રિત કરકે હસી ઉપપાત કા કથન કરતે હૈ—

આ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે શર્કરાપ્રલાથી લઈને અધઃસપ્તમી પૃથ્વી સુધી
 ઉપપાત (ઉત્પત્તિ) બતાવવામાં આવેલ છે. હવે સૂત્રકાર સામાન્યરૂપથી અધઃ
 ક્ષેત્ર અને ઉર્ધ્વક્ષેત્રનો આશ્રય કરીને આ ઉપપાતનું કથન કરે છે.

ટીકા—‘અપજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઈણ ણં મંતે !’ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવી-કાયિકઃ સ્વલુ મદન્ત ! ‘અહોલોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે સમોહણ’ અધોલોકક્ષેત્રનાડયાઃ અધોલોકરૂપે ક્ષેત્રે યા નાડી-ત્રસનાડી, તસ્યાઃ વાહો ક્ષેત્રે સમવહતો મારણાન્તિકસમુદ્ઘાતં કૃતવાન્ ‘સમોહણિત્તા’ સમવહત્ય મારણાન્તિક-સમુદ્ઘાતં કૃત્વા, ‘જે મહિણ ઉહુલોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે’ યો મવ્યઃ, ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રનાડી ત્રસનાડી સા ઊર્ધ્વલોક ક્ષેત્રનાડી તસ્યા ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રત્રસનાડયાઃ વાહો ક્ષેત્રે ‘અપજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઈયત્તાણ ઉવ-વજ્જિત્તણ’ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકતયા તાદૃશપૃથિવીકાયિકરૂપેણો-ત્પત્તુમ્ ‘સે ણં મંતે ! કહસમહણં વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ સ સ્વલુ કતિસામ-યિકેન વિગ્ગહેણ ઉત્પચતેતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ—‘ગોચમા’ ઇત્યાદિ’ ‘ગોચમા’ હે ગૌતમ ! ‘તિસમહણ વા, ચડસમહણ વા, વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ ત્રિસામયિકેન ‘પજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઈણ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—હે મદન્ત ! જિસ અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિક જીવને ‘અહો લોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે સમોહણ’ અધોલોકસ્થિત ત્રસનાડી સે વાહ્યક્ષેત્ર મે સ્થાવરનાડી મેં મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત સે મરણ ક્રિયા હૈ ઓર ‘સમોહણિત્તા’ મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરકે ‘જે મહિણ ઉહુલોચ ચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે અપજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઈયત્તાણ ઉવવજ્જિ-ત્તણ’ ઊર્ધ્વલોક મેં સ્થિત ત્રસનાલી કે વાહર કે ક્ષેત્ર મેં—‘સ્થાવરનાલી અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયિક રૂપસે ઉત્પન્ન હોને કે યોગ્ય હુઆ હૈ ‘સે ણં મંતે ! કહસમહણં વિગ્ગહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ તો હે મદન્ત ! એસા વહ જીવ કિતને સમયવાલે વિગ્રહ સે વહાં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રભુ શ્રી ગૌતમસ્વામી સે કહતે હૈ—‘ગોચમા ! તિસમહણ-

‘અપજ્જત્તસુહુમપુઠ્ઠવીકાઈણ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—હે ભગવન્ જે અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવે ‘અહોલોચ-ચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે સમોહણ’ આ અધોલોકમાં રહેલી ત્રસ નાડીથી બહારના ક્ષેત્રમાં મારણાન્તિક સમુદ્ઘાતથી મરણ કરેલ છે, અને ‘સમોહણિત્તા’ મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરીને ‘જે મહિણ ઉહુલોચચેત્તનાલીણ વાહિરિલ્લે ચેત્તે અપજ્જત્ત સુહુમપુઠ્ઠવીકાઈયત્તાણ ઉવવજ્જિત્તણ’ ઉર્ધ્વલોકમાં રહેલ ત્રસ નાડીના બહારના પ્રદેશમાં અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથ્વીકાયિકપણથી ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય બનેલ છે, ‘સે ણં મંતે ! કહ સમહણં વિગ્ગહેણ ઉવવજ્જેજ્જા’ તો હે ભગવન્ એવો તે જ કેટલા સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી ત્યાં ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—‘ગોચમા ! તિસમહણ ચડસમહણ વા

वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेणोत्पद्येत, ऊर्ध्वलोकनाडया बाह्ये क्षेत्रे इति । 'से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ, तिसमइएण वा, चउसमइएण वा, विग्गहेणं उवव ज्जेज्जा' तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, त्रिषामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत इति अद्यान्तरप्रश्नः भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते-समोहए' अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु अधो लोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे सम-वहतो मारणान्तिरुसमुद्घातं कृतवान्, 'सपोहणित्ता जे भविए उड्डुलोयखेत्तना-लीए बाहिरिल्ले खेत्ते' समवहत्य मारणान्तिरुसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यः—योग्य ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया, बाह्ये क्षेत्रे, 'अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयत्ताए' अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया 'एगपयरंमि अणुसेढीए उववज्जित्तए' एकपतरे अनुश्रेण्या

वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा' हे गौतम ! वह वहाँ तीन समयवाले विग्रहसे अथवा चारसमयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । 'तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते' हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वह वहाँ तीन समयवाले विग्रह से अथवा चार समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! अप-ज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं अहोलोय खेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते-समोहए' हे गौतम ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव अधोलोक स्थित ब्रसनाडी के बाहिरी क्षेत्र में मारणान्तिक समुद्घात करके मरा है और मरण करके 'जे भविए उड्डुलोय खेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते' जो ऊर्ध्वलोक स्थित क्षेत्रनाडी के बाहरके क्षेत्र में 'अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइयत्ताए' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से 'एगपयरंमि

विग्गहेणं उववज्जेज्जा' तो डे गौतम ! येवो ते एव त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा चार समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. 'तत्केना-र्थेन भदन्त ! एवमुच्यते' डे लगवन् आप जेपुं शा कारणुथी डडे छे डे-ते त्यां त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा चार समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे । आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने डडे छे डे—'गोयमा ! अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइएणं अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्लेखेत्ते-समोहए' डे गौतम ! जे अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक एव अधोदोक्तमां वर्त-मान ब्रस नाडीना अहारना क्षेत्रमां मारणान्तिक समुद्घात करीने भरणु पाभेल छे. अने भरणु पाभीने 'जे भविए उड्डुलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते' जे उर्ध्वदोक्तमां रडेल क्षेत्रनाडीना अहारना प्रदेशमां 'अपज्जत्तसुहुमपुढवी-काइयत्ताए' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायपणुथी 'एगपयरंमि अणुसेढीए उवव-

गत्वा उत्पत्तुम् 'से णं तिसमहणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' स खलु तिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, अयं भावः—अधोलोकक्षेत्रत्रसनाडया वह्निः पूर्वादिदिशि मृत्वा, एकेन समयेन नाडी मध्ये प्रविष्टः द्वितीये समये ऊर्ध्वं गतः स्ततः एक प्रतरे पूर्वस्यां दिशि पश्चिमायां वा, दिशि यदा उत्पत्ति भवति तदा अनुश्रेण्यां गत्वा तृतीयसमये उत्पद्यते इति । 'जे भविए विसेठीए उववज्जित्तए से णं चउसमहणं विग्गहेणं उवज्जेज्जा' यो भव्यो विश्रेण्याम् उत्पत्तुम्, स खलु चतुःसामायिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । अयं भावः—यदा त्रसनाडयाः वह्निर्वायव्यादिविदिशि मृतः तदा एकसमयेन पश्चिमाया मुत्तरस्यां वा, दिशि गतो भवति द्वितीयेन त्रसनाडयाः

अणुसेठीए उववज्जित्तए' एकप्रतर में अनुश्रेणी से जाकरके उत्पन्न होने के योग्य है 'से णं तिसमहणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' वह तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । तात्पर्य इसका यह है कि—अधो लोक क्षेत्रमें त्रसनाडी के बाहर पूर्वादिदिशा में मरकर जीव एकसमय में त्रसनाडी के मध्य में प्रविष्ट होता है । दूसरे समय में वह ऊर्ध्व-गमन करता है । इसके बाद जब वह एकप्रतर में पूर्वदिशा में अथवा पश्चिमदिशा में उत्पन्न होता है तब वह समश्रेणि में जाकर तृतीय समय में वहां उत्पन्न होता है । 'जे भविए विसेठीए उववज्जित्तए से णं चउसमहणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' और जब वह विश्रेणि में उत्पन्न होने के योग्य है तब वह वहां चारसमयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । तात्पर्य यह है कि जब जीव त्रसनाडी के बाहर वायव्य आदि विदिशाओ से धरता है तब वह एक समय में पश्चिमदिशा में

ज्जित्तए' एक प्रतरमां अनुश्रेणीथी ज्जने उत्पन्न थवाने योग्य डाय छे. 'से णं तिसमहणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' ते त्रलु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे डडेवानुं तात्पर्यं अे छे डे—अधोलोक क्षेत्रमां त्रसनाडीनी णडार पूर्वादिशां मरने लव अेक समयमां त्रसनाडीनी मध्यमां प्रवेश करे छे. तीज समयमां ऊर्ध्वगमन करे छे ते पछी ज्यारे ते अेक प्रतरमां पूर्वादिशां अथवा पश्चिमदिशां उत्पन्न थाय छे, त्यारे ते समश्रेणीमां ज्जने तीज समयमां त्या उत्पन्न थाय छे. 'जे भविए विसेठीए उववज्जित्तए से णं चउसमहणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' अने ज्यारे ते विश्रेणीमां उत्पन्न थवाने योग्य डाय त्यारे ते त्यां चरम समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. तात्पर्यं डडेवानुं अे छे डे—ज्यारे लव त्रसनाडीनी णडार वायव्य विगेरे विदिशां मरे छे, त्यारे ते अेक समयमां पश्चिम

प्रविष्टो भवति, तृतीयसमये ऊर्ध्वं गतः चतुर्थसमये अनुश्रेण्यां गत्वा पूर्वादिदिशि उत्पद्येत इति । 'से तेणट्टेणं जाव उववज्जेज्जा' तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते त्रिसामयिकेन वा, चतुः सामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येत इति, 'एवं पज्जत्तसुहुम पुढवी काइयत्ताए वि' एवं यथा अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य अधोलोकक्षेत्र-नाडया बाह्यदेशे समवहतस्य ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये देशे अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिकायिकतयोत्पादो दर्शितः तथैव तस्यैव तथाविधस्य पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी-कायिकतया समुत्पद्यमानस्य त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पादो ज्ञातव्यः । 'एवं जाव पज्जत्त सुहुम तेउकाइयत्ताए' एवं यावत् पर्याप्त

अथवा उत्तरदिशा में जाता है और दूसरे समय में ब्रह्मनाडी में प्रविष्ट होता है और तृतीय समय में वह ऊर्ध्व गमन करता है और चौथे समय में वह अनुश्रेणि में जाकरके पूर्वादि दिशा में उत्पन्न हो जाता है । 'से तेणट्टेणं जाव उववज्जेज्जा' इसलिए, हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह तीनसमयवाले अथवा चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । 'एवं पज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए वि' जिस प्रकार से अधोलोक क्षेत्र स्थित ब्रह्मनाडी के बाहिर के प्रदेश में भारणान्तिक समुद्रघात करके घरे हुए अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव का ऊर्ध्व-लोक क्षेत्रस्थित ब्रह्मनाडी के बाह्य प्रदेश में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी कायिक रूप से उत्पाद प्रकट किया गया है उसी प्रकार से पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य हुए उसका तीनसमयवाले विग्रह से अथवा चारसमयवाले विग्रहसे उत्पाद कहना चाहिये । 'एवं

दिशामा अथवा उत्तर दिशामा जय छे, अने गीज समयमां ब्रह्म नाडीमां प्रवेश करे छे. अने त्रीज समयमां ऊर्ध्वगमन करे छे अने चौथा समयमां ते विश्रेणुीमां जेधने पूर्वादिशामां उपन्न थय जय छे 'से तेणट्टेणं जाव उववज्जेज्जा' ते कारण्थी छे गौतम ! मे ओबु कडेल छे के-ते त्रणु समय वाणी अथवा चार समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे 'एवं पज्जत्त-सुहुमपुढवीकाइयत्ताए वि' जे प्रमाणे अधोलोक क्षेत्रमा रडेल ब्रह्म नाडीमा अकारना प्रदेशोमां भारणान्तिक समुद्रघात करीने भरणु पायेला अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अथवा ऊर्ध्वक्षेत्रमा रडेला ब्रह्म नाडीमा अकारना प्रदेशोमां अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपण्थी उपपात अतायेल छे ओज प्रमाणे पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपण्थी उत्पन्न थवाने योग्य थयेला तेओना उत्पाद त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा चार समयवाणी विग्रह गतिथी कडेवे। जेधओ. 'एवं जाव पज्जत्तसुहुमतेउकाइयत्ताए' आण

સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિકતયા, અત્ર યાવત્પદેન અપર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિકતયા, પર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિકતયા, અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્માપ્કાયિકતયા, પર્યાપ્ત સૂક્ષ્માપ્કાયિકતયા, અપર્યાપ્તવાદરાપ્કાયિકતયા, પર્યાપ્ત વાદરાપ્કાયિકતયા, અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિકતયા, એતદન્તાનાં ગ્રહણં ભવતિ । તથા ચ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિકસ્યાધોલોકક્ષેત્રનાડયા વાહ્યે દેશે સમગ્રહતસ્ય ઝર્ધ્વલોકનાડયા વાહ્યે ક્ષેત્રે અપર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિકતયા, इत्यत आरभ्य पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकतया इत्यन्तरूपेण उत्पद्यमानस्य उत्पादप्रकारः पूर्ववदेव ज्ञातव्यः । आलापप्रकारः प्रत्येकस्मिन् पदे विविच्य स्वयमेवोहनीयः ॥४॥

જાવ પડજત્ત સુહૃષ્ તેઝકાહ્યન્તાઈ' હસી પ્રકાર સે જવ વહ યાવત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિક રૂપસે ઉત્પન્ન હોને કે યોગ્ય હોતા હૈ તથા બી વહ વહાં ત્રીન સમયવાલે વિગ્રહ સે અથવા ચાર સમયવાલે વિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ એસા જાનનાં ચાહિયે । યહાં યાવત્ પદ સે 'જવ વહ અપર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિક રૂપસે, પર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિક રૂપસે, પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિક રૂપસે ઓર અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિક રૂપ સે ઉત્પન્ન હોને કે યોગ્ય હોતા હૈ' એસા પાઠ ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । તથા ચ 'જો અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયિક જો કિ અધોલોક સ્થિત ગ્રસનાડી કે બાહ્ય પ્રદેશ મેં સમગ્રહત હુઆ હૈ ઓર ઝર્ધ્વલોકસ્થિત ગ્રસનાડી કે બાહ્ય પ્રદેશ મેં અપર્યાપ્ત વાદરપૃથિવીકાયિક રૂપસે ઉત્પન્ન હોને કે યોગ્ય હુઆ હૈ' યહાં સે લેકર 'પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિક રૂપસે ઉત્પન્ન હોને કે યોગ્ય હુઆ હૈ' યહાં તક કો ઉસકા ઉત્પાદ પ્રકાર પૂર્વ કે જૈસે હી જાનનાં ચાહિયે । તથા હસ સમ્બન્ધ મેં આલાપ પ્રકાર પ્રત્યેક પદ મેં અલગ અલગ અપને આપ ઉદ્ભાવિત કર લેનાં ચાહિયે ॥૪॥

પ્રમાણે જ્યારે તે યાવત્ અપર્યાપ્ત વાદર પૃથ્વીકાયિકપણ્થી, પર્યાપ્ત વાદર પૃથ્વીકાયિકપણ્થી અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિકપણ્થી પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ અપ્કાયિકપણ્થી અને અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ તેજસ્કાયિકપણ્થી ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય થાય છે. એ રીતને પાઠ ગ્રહણ થયેલ છે. તથા જે અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક કે જે અધોલોક ક્ષેત્રમાં રહેલ ગ્રસ નાડીના બહારના પ્રદેશોમાં સમુદ્ધાત કરે છે, અને ઝર્ધ્વલોકમાં રહેલ ગ્રસ નાડીના બહારના પ્રદેશમાં અપર્યાપ્ત વાદર પૃથ્વીકાયિકપણ્થી ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય થયા છે. આ કથનથી લઈને 'પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મતેજસ્કાયિકપણ્થી ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય થયા છે, આ કથન સુધીને તેના ઉત્પાદનો પ્રકાર પહેલાની જેમજ સમજવો. તથા આ સંબંધમાં આલાપનો પ્રકાર દરેક પદમાં જુદો જુદો સ્વયં બનાવીને કહી લેવો જોઈએ. ॥૪૦ ૪॥

मूलम्—अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! अहोलोग जाव समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ? गोयमा ! दुसमइएणं वा, तिसमइएणं वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केणट्टेणं० एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेठीओ पणत्ताओ । तं जहा उज्जुयायया जाव अद्धचक्कवाला । एगओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । दुहओ वंकाए सेठीए उववज्जमाणे तिसमइएणं वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ! से तेणट्टेणं । एवं पज्जत्तएसु वि वायरतेउकाइएसु वि उववाएयव्वो । वाउकाइयवणस्सइकाइयत्ताए चउक्कएणं भेद्वेणं जहा आउकाइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो २० । एवं जहा अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइयस्स गमो भणियो एवं पञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयस्स वि भाणियव्वो, जहेव वीसाए ठाणैसु उववाएयव्वो ४० । अहोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहणित्ता, एवं वायरपुढवीकाइयस्स वि अपञ्जत्तगस्स य पञ्जत्तगस्स य भाणियव्वं८० । एवं आउकाइस्स वि चउविहस्स वि भाणियव्वं १६० । सुहुमतेउकाइस्स दुविहस्स वि एवं चेत्र २०० । अपञ्जत्त वायरतेउकाइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए समोहणित्ता जे भविए उडूलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ? गोयमा ! दुसमइएणं वा, तिसमइएणं वा, चउत्तमइएणं वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केणट्टेणं० । अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेठीओ, एवं जाव अपञ्जत्तवायरतेउकाइ-

एणं भंते ! समयखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए उड्ड-
लोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते पज्जत्तसुहुमतेउकाइयत्ताए
उववज्जित्तए, से णं भंते ! सेसं तं चेव । अपज्जत्त वायरतेउ-
काइए णं भंते ! समयखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए
समयखेत्ते, अपज्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए, से णं
भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ? । गोयमा ! एग-
समइएण वा, दुसमइएण वा, तिसमइएण वा, विग्गहेणं उव-
वज्जेज्जा, से केणट्टेणं० । अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त
सेठीओ, एवं पज्जत्त वायरतेउकाइयत्ताए वि । वाउकाइएसु
वणस्सइकाइएसु थ जहा पुढवीकाइएसु उववाइओ तहेव चउ-
क्कएणं भेदेणं उववायव्वो । एवं पज्जत्त वायरतेउकाइओ वि
एएसु चेव ठाणेसु उववाएयव्वो । वाउकाइय वणस्सइकाइ-
याणं जहेव पुढवीकाइयत्ते उववाओ तहेव भाणियव्वो ॥ अप-
ज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! उड्डलोगखेत्तनालीए बाहिरि-
ल्लेखेत्ते समोहए समोहणित्ता जे भविए अहे लोगखेत्तनालीए
बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए
से णं भंते ! कइ समइएणं । एवं उड्डलयखेत्तनालीए बाहिरि-
ल्ले खेत्ते समोहयाणं अहोलोगखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते उव-
वज्जयाणं सो चेव गमओ निरवसेसो भाणियव्वो जाव वायर-
वणस्सइकाइओ पज्जत्तओ वायरवणस्सइकाइयएसु पज्जत्त-
एसु उववाइओ ॥सू० ५॥

छाया--अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकादिकः खलु भदन्त अधोलोक० यावत्
सम्बहत्य यो भव्यः समयक्षेत्रे अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकतया उत्पत्तुम्, स खलु

भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत ? गौतम ! द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत । तत्केनार्थेन ? एवं खलु गौतम ! मया सप्तश्रेणयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-ऊर्ध्ववायता १ यावद् अर्द्धचक्रवाला ७ । एकतो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो द्विसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, द्विधातो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानं त्रिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत, तत्केनार्थेन० । एवं पर्याप्तकेष्वपि वादरतेजस्कायिकेष्वपि उपपातयितव्यः । वायुकायिकवनस्पतिकायिकतया चतुष्केन भेदेन, यथा-अपकायिकतया तथैव उपपातयितव्यः । २० एवं यथा अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य गमको भणितः एवं पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्यापि भणितव्यः । तथैव विंशति स्थानेषु उपपातयितव्यः ४० । अधोलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समवहतः समवहत्य, एवं वादरपृथिवीकायिकस्यापि अपर्याप्तकस्य पर्याप्तकस्य च भणितव्यम् ८० । एवमपकायिकस्य चतुर्विधस्यापि भणितव्यम् १६० । सूक्ष्मतेजस्कायिकस्य द्विविधस्यापि एवमेव २०० । अपर्याप्तवादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समवहतः समवहत्य यो भव्यः ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उपपत्तुं स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत ? गौतम ! द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेणोत्पद्येत । तत्केनार्थेन० । अर्थो यथैव रत्नप्रभायां तथैव सप्तश्रेणयः एवं यावदपर्याप्त वादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समवहतः समवहत्य यो भव्यः ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकतया उपपत्तुं स खलु भदन्त ! शेषं तदेव । अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समवहतः समवहत्य यो भव्यः समयक्षेत्रे अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकतया उपपत्तुं स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन विग्रहोत्पद्येत ? गौतम ! एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्येत तत्केनार्थेन० । अर्थो यथैव रत्नप्रभायां तथैव सप्तश्रेणयः । एवं पर्याप्तवादरतेजस्कायिकतयाऽपि । वायुकायिकेषु वनस्पतिकायिकेषु च यथा पृथिवीकायिकेषु उपपातितस्तथैव चतुष्केन भेदेन उपपातयितव्यः । एवं पर्याप्तवादरतेजस्कायिकोऽपि एवैव स्थानेषु उपपातयितव्यः । वायुकायिक-वनस्पतिकायिकानां यथैव पृथिवीकायिकत्वे उपपातितस्तथैव भणितव्यः । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समवहतः समवहत्य यो भव्यः अधोलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उपपत्तुम्, स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन. एवम् ऊर्ध्वलोक क्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समवह-तानाम् अधोलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे उत्पद्यमानानां स एव गमको निरवशेषो भणितव्यो यावद् वनस्पतिकायिकः पर्याप्तको वादरवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्त-केषु उपपातितः ॥सू०५॥

टीका—‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘अहोलोग जाव समोहणित्ता’ अधोलोक, यावत् समवहत्य, अत्र यावत्पदेन ‘क्षेत्रनाडया बाहूये क्षेत्रे समवहतः’ इत्यस्य ग्रहणं भवति । ‘जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए’ यो भव्यः समयक्षेत्रे अपर्याप्तवादरतेजस्कायिकतया, तादृशतेजस्कायिकरूपेणोपपत्तुम् । ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येतेति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘दुसमइएणं वा, तिसमइएणं वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा विग्रहेण समुत्पद्येत, ‘सेकेणट्टेणं’

‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! अहोलोग जाव समोहणित्ता’ इत्यादि ॥५॥

टीकार्थ—‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! हे भदन्त ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक ‘अहोलोग जाव समोहणित्ता’ अधोलोक स्थित ब्रसनाडी के बाहरीक्षेत्र में मरण समुद्घात करके ‘जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ समयक्षेत्रमें मनुष्यक्षेत्रमें अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य हुआ है ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ ऐसा वह अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! दुसमइएणं वा तिसमइएणं वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! वह अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव जो कि अधोलोकस्थित ब्रसनाडी के बाहरीक्षेत्र में मरणसमुद्घात

‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! अहोलोग जाव समोहणित्ता’ इत्यादि

टीकार्थ—अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! अहोलोग जाव समोहणित्ता’ हे भगवन् ने अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ‘अहोलोग जाव समोहणित्ता’ अधोलोकभां रडेदा ब्रसनाडीना अहारना क्षेत्रभां भरणसमुद्घात करीने ‘जे भविए समयखेत्ते अपञ्जत्तवायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ समयक्षेत्रभां—मनुष्यक्षेत्रभां अपर्याप्त आदरतेजस्कायिकपणुथी उत्पन्न थवाने योग्य थयेद डेय ‘से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ अवे। ते अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव त्यां डेटदा समयवाणी विशुद्ध गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरभां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—‘गोयमा ! दुसमइएणं वा, तिसमइएणं वा, विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! ते अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव डे ने अधोलोकभां रडेदा ब्रसनाडीना अहारना क्षेत्रभां

तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, यद् द्विसामयिकेन वा त्रिसामयिकेन वा विग्रहेणोत्पद्येतेति अवान्तरप्रश्नः । भगवानाह—‘एवं खलु’ इत्यादि । ‘एवं खलु गीयमा ! मए सत्तसेढीओ पन्नत्ताओ’ एवं खलु हे गौतम ! मया सप्तश्रेणयः प्रज्ञप्ताः, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘उज्जुआयया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्जायता यावद् अद्धचक्कवाला, अत्र यावत्पदेन एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा, द्विधातः खा चक्रवाला इत्येतासां श्रेणीनां संग्रहो भवतीति । तत्र ‘एकओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उवज्जेज्जा’ एकतोवक्रया श्रेण्या समुत्पद्यमानोऽपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिको द्विसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत, दुहओ वंकाए

करके समयक्षेत्र में अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य हुआ है वहां दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘से केणट्टेणं०’ हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वह वहां दो समयवाले विग्रहसे अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? इस अवान्तर प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री गौतमस्वामी से कहते हैं—‘एवं खलु गीयमा ! मए सत्तसेढीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही है—‘तं जहा’ जो इस प्रकार से हैं—‘उज्जुआयया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्जायता, यावत् अद्धचक्कवाला’ यहां यावत्पदसे ‘एकतो वक्रा द्विधातो वक्रा एकतः खा, द्विधातः खा चक्रवाला’ इन अवशिष्ट श्रेणियों का ग्रहण हुआ है । इनमें जो ‘एकओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उवज्जेज्जा’ एकतः वक्रा श्रेणिसे गमन करता हुआ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक

भरणसमुद्घात करीने समयक्षेत्रमां अपर्याप्त आदरतेजस्कायिकपञ्चाथी उत्पन्न थवाने योग्य थयेल डोय तो ते त्यां जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ‘से केणट्टेणं०’ छे लगवन आप ओधुं शा कारणथी कडे छे के—ते त्यां जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ अवान्तर प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘एवं खलु गीयमा ! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ’ छे गौतम ! मे सात श्रेणीथी कडेल छे. ‘तं जहा’ ते आ प्रमाणे छे. ‘उज्जुआयया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्जायता, ओकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, ओकतः आ, द्विधातः आ, चक्रवाला अने अर्धचक्रवाला. आ श्रेणियां जे ‘एकओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उवज्जेज्जा’ ओकतः वक्रा श्रेणीथी गमन करीने अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव उत्पत्ति

‘सेढीए उववज्जमाणे तिसमहएणं विग्रहेणं उववज्जेज्जा’ द्विधातो वक्रया श्रेण्या समुत्पद्यमानः त्रिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येतेति । ‘से तेणद्वेणं’ तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते—द्विसामयिकेन वा त्रिसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येतेति । ‘एवं पज्जत्तएसु वायरतेउकाइएसु वि उववाएयव्वो’ एवं यथा—अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकेषु उपपातो वर्णितस्तथैव पर्याप्तकेष्वपि वादरतेजरकायिकेषु उपपातो वर्णनीयः प्रकारस्तु स्वयमेवोद्दनीय, इति । ‘वाउकाइय वणरसइकाइयत्ताए चउक्कएणं भेद्वेणं जहा आउक्काइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो’ वायुकायिकतया वनस्पतिकायिकतया च चतुष्केन भेदेन यथा अण्कायिकतया तथैव

जीव उत्पत्ति स्थान में समयक्षेत्र में वादरतेजरकायिक रूपसे उत्पन्न होता है वह वहां दो समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है । ‘दुहओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमहएणं विग्रहेणं उववज्जेज्जा’ और जब वह द्विधातः वक्राश्रेणि से गमन करता हुआ वहां उत्पन्न होता है तब वह वहां तीनसमयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘से तेणद्वेणं०’ इसी कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह वहां दो समयवाले अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘एवं पज्जत्तएसु वायरते-उकाइएसु वि उववाएयव्वो’ इसी रीति के अनुसार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवके उत्पादका वर्णन पर्याप्त वादरतेजस्कायिकों में भी कर लेना चाहिये तथा आलाप प्रकार इस सम्बन्ध में अपने आप उद्भावित कर लेना चाहिये । ‘वाउक्काइयवणरसइकाइयत्ताए चउक्कएणं भेद्वेणं जहा आउक्काइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो’ इस अपर्याप्त

स्थानमां—समयक्षेत्रमां वादरतेजस्कायिकपञ्चाथी उत्पन्न थाय छे, ते त्यां मे समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे, ‘दुहओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमहएणं विग्रहेणं उववज्जेज्जा’ अने न्यारे द्विधातो वक्रा श्रेणीथी गमन करीने त्यां उत्पन्न थाय छे, त्यारे ते त्यां त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे, ‘से तेणद्वेणं०’ आ कारणुथी हे गौतम ! मेंं अणुं कहुं छे हे—ते त्यां मे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे, ‘एवं पज्जत्तएसु वायरतेउकाइएसु वि उववाएयव्वो’ आन रीते अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जवना उत्पातनुं वणुंन पर्याप्त वादरतेजस्कायिकेमां पणु करी लेवुं, तथा तेना आलापनेा प्रकार आ विषयमां स्वयं अनावीने समणु लेवे। अेधंअे, ‘वाउक्काइयवणरसइकाइयत्ताए चउक्कएणं भेद्वेणं जहा आउक्काइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो’ आ अपर्याप्त सूक्ष्म

उपपातयितव्यः २० । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य अपर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिके, पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिके, अपर्याप्तवाद्दरवायुकायिके, पर्याप्त वाद्दरवायुकायिके अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिके, पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिके, अपर्याप्त वाद्दरवनस्पतिकायिके पर्याप्त वाद्दरवनस्पतिकायिके अत्रैव प्रदर्शितः अपकायिकवदेव उपपातो वर्णनीयः, उपपात प्रकारस्तु स्वयमेवोहनीय इति । २० 'एवं जहा अपञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स गमओ भणिओ' 'एवं यथा-पूर्वोक्तप्रकारेण अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य तमको भणितः-कथितः, 'एवं पञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स वि भाणियव्वो' एवम् अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकस्यापि तमको भणितव्यः, तथाहि-पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु

सूक्ष्मपृथिवीकायिकका हस्ती रीति के अनुसार' अपर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिक में पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिक में, अपर्याप्त वाद्दरवायुकायिक में पर्याप्तवाद्दरवायुकायिक में, अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में, पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में, अपर्याप्त वाद्दरवनस्पतिकायिक में और पर्याप्त वाद्दरवनस्पतिकायिक में' इन जीवों में अपकायिकके जैसा ही उत्पाद दर्शित कर लेना चाहिये । तथा इस सम्बन्ध में उपपाद का प्रकार अपने आप उद्भाषित कर लेना चाहिये । २० 'एवं जहा अपञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स गमओ भणिओ' इस प्रकार जैसा उत्पाद प्रकार यह अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक का कहा गया है, 'एवं पञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स वि भाणियव्वो' उसी प्रकार से पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकका भी उत्पाद प्रकार कर लेना चाहिये ।

पृथिवीकायिकतुं आञ्ज प्रमाणे 'अपर्याप्तसूक्ष्म वायुकायिकेमां, पर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिकेमां, अपर्याप्त आद्दर वायुकायिकेमां पर्याप्त आद्दर वायुकायिकेमां, अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकेमां, पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकेमां अपर्याप्त आद्दर वनस्पतिकायिकेमां अने पर्याप्त आद्दर वनस्पतिकायिकेमां, अपकायिक श्रवणा उत्पादना कथन प्रमाणेतुं वर्णन करी देवुं' तथा आस भंधमां उत्पात-उत्पत्तिने प्रकार स्वयं उद्भाषित करी समञ्ज देवो. २०, 'एवं जहा अपञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स गमओ भणिओ' अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकना उत्पादने प्रकार के रीते कहेल छे, 'एवं पञ्जत्सुहुमपुढवीकाइयस्स वि भाणियव्वो' अने प्रमाणे पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकने उत्पाद

भदन्त ! अधोलोक क्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समवहतः समवहत्य उर्ध्वलोक क्षेत्र-
नाडया वहिः क्षेत्रे यो भव्यः अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया समुत्पत्तुमिस्थ्यादि
क्रमेण आलापप्रकारो वर्णनीय इति । 'तहेव वीसाए ठाणेसु उपवाएयन्त्रो' तथैव
विंशति स्थानेषूपपातयितव्यः ४० अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य यथा विंशति
स्थानेषूपपातः कथितस्तथैव तेनैव रूपेण विंशतिस्थानेषु अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवी-
कायिकादारभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्तेषु अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवादर-
पृथिवीकायिकेषु तथा तादृशाप्तेजो वायुवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवी-
कायिकस्योपपातो वक्तव्य इति ॥४०॥

जैसे हे भदन्त ! 'जो पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव अधोलोक
स्थान ब्रह्मनाडी के बाहरी क्षेत्रमें मरण समुद्घात करके ऊर्ध्वलोक
क्षेत्रनाली 'ब्रह्मनाडी' के बाहरी क्षेत्रमें अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक
रूपसे उत्पन्न होने के योग्य है वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह
से उत्पन्न होता है ? इत्यादि क्रम से यहाँ आलाप प्रकार वक्तव्य
है । 'तहेव वीसाए ठाणेसु उपवाएयन्त्रो' इसी प्रकार से इस पर्याप्त
सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवका उत्पाद बीस स्थानको में कह लेना
चाहिये । अर्थात् जिस प्रकार से अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकका
बीस स्थानों में उत्पाद कहा गया है । इसी प्रकार से इस पर्याप्त
सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवका भी अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवादर अप्र-
कायिकों में तेजस्कायिकों में वायुकायिकों में और वनस्पतिकायिकों
में इन बीस स्थानों में उत्पाद कह लेना चाहिये । ४०॥

पणु करी देवो. नेमव-डे लगवन् 'ने पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक एव
अधोलोकमां रडेल ब्रह्म नाडीना अडारना क्षेत्रमां अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवी-
कायिकपणुथी उत्पन्न भवाने येऽग्य थयेल होय तो ते त्यां डेटला समयवाणी
विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ?' विगेरे कमथी अडियां आलापना प्रकारे
कही देवा. 'तहेव वीसाए ठाणेसु उपवाएयन्त्रो' आण प्रभाणु आ पर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवने उत्पाद वीसे स्थानोमां समणु देवो. अर्थात् ने
प्रभाणु अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवने बीस स्थानोमां उत्पादने
प्रकार बतावेल छे, आण प्रभाणु आ पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवने
पणु अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्म वादर पृथिवीकायिकोमां तथा अपर्याप्त, पर्याप्त
सूक्ष्म वादर अणुकायिकोमां तेजस्कायिकोमां अने वनस्पतिकायिकोमां वीसे
स्थानोमां उत्पाद समणु देवो. ४०॥

‘अधोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहणित्ता’ अधोलोकक्षेत्र-
नाडया बाह्ये क्षेत्रे समवहतः समवहत्येत्यादि प्रश्नः, उत्तरमाह-‘एवं’ इत्यादि।
‘एवं वायर पुढवीकाइयस्स त्ति अपज्जत्तगस्स षज्जत्तगस्स य भाणियवं’ एवं
पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव वादरपृथिवीकायिकस्याऽपर्याप्तकस्य पर्याप्त-
कस्य च भणितव्यम् । एवमेव पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकस्यापि त्रिंशत्तिस्थानेषु

‘अधोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहणित्ता’
अधोलोकस्थित ब्रह्मनाली के बाहरी क्षेत्रमें मरण समुद्घात किया और
मरणसमुद्घात कर इत्यादि प्रश्न रूपसे यहाँ पर कथन पर्याप्त और
अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिक जीव के सम्बन्ध में भी कह लेना चाहिए
और उत्तर रूपमें सब कथन जैसा पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के
सम्बन्ध में किया जा चुका है वैसा ही वह सब कथन यहाँ भी कह लेना
चाहिये। तात्पर्य इस कथन का केवल ऐसा ही है कि हे भदन्त ! जिस
अपर्याप्त अथवा पर्याप्त वादरपृथिवीकायिक जीव ने अधोलोकस्थित
ब्रह्मनाली के बाहरीक्षेत्र में मरण समुद्घात किया है और मरण
समुद्घातकर वह ऊर्ध्वलोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाहरी प्रदेश में अपर्याप्त
अथवा पर्याप्तपृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ है
तो हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता
है ? ऐसा यह प्रश्न है और हे गौतम ! इस सम्बन्ध में पर्याप्त सूक्ष्म
पृथिवीकायिकके सम्बन्ध में जैसा कहा है वैसा ही जानना चाहिये

‘अधोलोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए समोहणित्ता’ अधोलोकमां
रहेल ब्रह्म नाडीना अहारना क्षेत्रमां भरणु समुद्घात करे, अने भरणु समु-
द्घात करीने विगेरे प्रश्न इपत्तुं कथन अडियां पर्याप्त अने अपर्याप्त आदर
पृथिवीकायिक लवना संअंधमां कडेवुं जेधये अने उत्तरउपे सधणुं कथन
पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकना संअंधमां जे रीते करवामां आव्युं छे, ओळ
प्रभाणु ते सधणुं कथन अडियां पणु समल लेवुं. आ कथननुं तात्पर्य अये
छे डे-डे लगवन जे अपर्याप्त अथवा पर्याप्त आदर पृथिवीकायिक लवे अधो-
लोकमां रहेल ब्रह्मनाडीना अहारना क्षेत्रमां भरणुसमुद्घात कर्यो होय अने
भरणुसमुद्घात करीने ऊर्ध्वलोकमां रहेल ब्रह्म नाडीना अहारना प्रदेशमां
अपर्याप्त अथवा पर्याप्त पृथिवीकायिकपणुथी उत्पन्न थवाने योग्य अनेल होय,
तो हे लगवन ते त्यां डेटला समयवाणी विग्रह गतिधी उत्पन्न धाय छे ?
आ रीतने अडिं प्रश्न करेल छे अने हे गौतम आ संअंधमां पर्याप्त
सूक्ष्म पृथिवीकायिकना संअंधमां जे प्रभाणु आ विषयमां कडेवामां आवेद

उपपातो वक्तव्य इति ८० । 'एवं आउक्काइयस्स चउच्चिहस्सवि भाणियव्वं' एवं चतुर्विधस्य पृथिवीकायिकस्याधोलोकस्य नाड्या बाह्ये क्षेत्रे समवहतस्य ऊर्ध्व-लोकनाड्या बाह्ये क्षेत्रे समुत्पद्यमानस्य यथा-विंशतिस्थानेषूपपातो वर्णित स्तेनैव रूपेण अप्कायिकस्य चतुर्विधस्य अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म वादरभेदभिन्नस्यापि विंशति-स्थानेषूपपातो वर्णनीय इति भावः १६० । 'सुहुमतेउक्काइयस्स दुच्चिहस्स वि एवं चेव' सूक्ष्मतेजस्कायिकस्य द्विविधस्यापर्याप्तपर्याप्तकस्य च

यह उत्तर रूप कथन है। इस प्रकार से अपर्याप्तक बादरपृथिवीकायिकों को २० स्थानों में उत्पादयुक्त करने से और पर्याप्तक पृथिवीकायिकों के भी २० स्थानों में उत्पादित करने से ८० गणक हो जाते हैं। 'एवं आउक्काइयस्स चउच्चिहस्स विभाणियव्वं' जिस प्रकार से अधोलोक स्थित ब्रह्मनाडी के बाह्यप्रदेश में भारणान्तिक समुद्धत करके ऊर्ध्व लोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाहिरी प्रदेशमें उत्पन्न हुए पृथिवीकायिकका उत्पाद बीस स्थानों में कहा गया है, उसी प्रकार से अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म और बादर भेदवाले अप्कायिकका भी २० स्थानों में उपपात वर्णित कर लेना चाहिये। इस प्रकार से चारों प्रकारके अप्कायिकों के ८० गणक हो जाते हैं। पहिले के ८० और ये ८० आपस में जोड़ देने से १६० गणक होते हैं।

'सुहुमतेउक्काइयस्स दुच्चिहस्स वि एवं चेव' इसी प्रकार से अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक का भी पृथिवीकायिक के जैसे २० स्थानों में उपपात कहलेना चाहिये। इस प्रकार से ४० गणक और

छे, अत्र प्रमाणेणु कथन अडियां पणु समज्जुं. आ प्रम षे प्रभुअे उत्तर कडेल छे आ रीते अपर्याप्तक बादर पृथिवीकायिकेना वीस स्थानमां उत्पात-उत्पत्ति कडेवाथी अने पर्याप्त पृथिवीकायिकेना पणु २० स्थानेमां उत्पात्ति कडेवाथी ८० अंसी गमके थं नय छे 'एवं आउक्काइयस्स चउच्चिहस्स वि भाणियव्वं' जे प्रम षे अधोलोकमां रडेल ब्रह्म नाडीना अडारना प्रदेशमां भारणान्तिक समुद्धत करीने ऊर्ध्वलोक स्थित ब्रह्मनाडीना अडारना प्रदेशमां उत्पन्न थयेला पृथिवीकायिकेना उत्पाद वीसे स्थानेमां कडेवामां आवेल छे, अत्र प्रमाणे अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्म अने बादर लेदवाणा अप्कायिकेना पणु वीसे स्थानेमां उपपातनुं वर्णन करी लेवुं नेछये आ रीते थारे प्रकारना अप्कायिकेना ८० अंसी गमके थं नय छे. पडेलां कडेल ८० अंसीने आ अप्कायिकेमां भेणववाथी १६० अकसे साठठ गमके (लेदो) थाय छे.

'सुहुम तेउक्काइयस्स दुच्चिहस्स वि एवं चेव' हे गौतम! आज प्रमाणे अपर्याप्तक अने पर्याप्तक सूक्ष्मतेजस्कायिकेना पणु उपपात पृथिवीकायिकेना

पृथिव्यादिकायिकवदेव त्रिंशति स्थानेषूपपातो वर्णनीय इति २०० । 'अपञ्जत्त वायरतेउक्काइए णं भंते ! समयखेत्ते समोहए' अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समवहतः, 'समोहणित्ता जे भविए उड्डुल्लोय खेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते' समवहत्य मारणान्तिकसङ्घट्टघातं कृत्वा यो भव्य ऊर्ध्वलोक-क्षेत्रनाड्या बाह्ये क्षेत्रे, 'अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' अपर्याप्त-सूक्ष्म पृथिवीकायिकतया-तथाविध पृथिवीकायिकरूपेण समुत्पत्तुम् 'से णं भंते ! कहसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत इति प्रश्नः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'दुसमइएण वा, तिसमइएण वा, चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा' त्रिसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येतेत्युत्तरम् ।

मिलाने से २०० गमक हो जाते हैं । 'अपञ्जत्तवायर तेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते ! समोहए' हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक जीव समयक्षेत्र में समवहत हुआ । 'समोहणित्ता जे भविए उड्डुल्लोय खेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' और समवहत होकर वह ऊर्ध्वलोक क्षेत्र स्थित त्रसनाडी के बाहिरी प्रदेश में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हुआ हो 'से णं भंते ! कहसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' हे भदन्त ! ऐसा वह जीव कितने समयवाले विग्रह से वहाँ उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-'गोयमा ! दुसमइएण वा, तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा' हे गौतम ! वह वहाँ दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले

कथन प्रमाणे २० वीसे स्थानोमां कडेवे जेधये. आ रीते आ ४० गमके भेणववाथी २०० असे गमके थध जय छे 'अपञ्जत्त वायरतेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए' छे लगवन् कैध अपर्याप्तक आदर तेजस्कायिक एव समय क्षेत्रमां समुद्घात करे 'समोहणित्ता' समुद्घात करीने 'जे भविए उड्डुल्लोयखेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए' उध्व'दो'क क्षेत्रमांरडेल त्रसनादीना अडारना प्रदेशमां अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिकपणाथी उत्पन्न थवाने ये.ज्य थयेल डोय तो 'से णं भंते ! कह समइएण विग्गहेण उववज्जेज्जा' छे लगवन् अवे। ते एव डेटवा समयनी विशद गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे-'गोयमा' दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा' छे गौतम ! ते त्यां जे समयवाणी विशद गतिथी अथवा त्रयु समयवाणी

पुनः प्रश्नयन्नाह—‘से केणट्टेणं’ इत्यादि । ‘से केणट्टेणं’ तत्केनार्थेन भदन्त ! एवम् उच्यते द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा समुत्पन्नेतेति । ‘अट्टो जहेव’ इत्यादि । ‘अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ’ अर्थो हेतुः कारणं यथैव येनैव प्रकारेण रत्नप्रभायां कथित स्तथैव सप्त श्रेणिरूपो वक्तव्यः । यथा रत्नप्रभायां श्रेणि विभज्य द्विसामयिकादि विग्रहस्य समर्थनं तथैव इहापि श्रेणिविभागपूर्वकमेव उत्तर मिति । कियत्पर्यन्तं रत्नप्रभाप्रकरणं वक्तव्यं तत्राह—‘जाव’ इत्यादि । ‘एवं जाव’ एवं यावत्, अत्र यावत्पदेन सप्तश्रेणय ऋज्वायता यावदूर्ध्वचक्रवाला । तत्र एकतो वक्रया गच्छन्, द्विसामयिकेन वा,

विग्रह से अथवा चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘से केणट्टेणं भंते’ हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वह वहां दो समयवाले विग्रहसे यावत् चार समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘अट्टो जहेवरयणप्पभाए तहेव सत्तसेढीओ’ हे गौतम ! जैसा कारण रत्नप्रभापृथिवी में कहा गया है वैसा ही कारण सप्तश्रेणि रूप यहां पर भी कह लेना चाहिये । अर्थात् जिस प्रकार से रत्नप्रभा में श्रेणिका विभाग करके द्विसामयिक आदि विग्रहका समर्थन किया गया है उसी प्रकार से यहां पर भी श्रेणि के विभाग पूर्वक ही उत्तर कह लेना चाहिये । यह रत्नप्रभा प्रकरण यहां यावत् शब्दसे वहां तक का लिया गया है कि जहां पर प्रभुश्रीने उत्तर रूपमें ऐसा कहा, है कि हे गौतम ! मैंने ऋज्वायता यावत् अर्धचक्रवाला इस प्रकार से सात श्रेणियां कही

विग्रह गतिथी अथवा चार समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे । ‘से केणट्टेणं भंते ! ०’ हे लगवन आप अबुं शा ठारणुथी कडे छे डे—ते त्यां छे समयवाणी विग्रह गतिथी यावत् चार समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—‘अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ’ हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वीना कथनमां ने प्रभाणेतुं ठारणु कडेवामां आवेल छे. जेण प्रभाणेतुं सात श्रेणी इप कथन अडियां पणु समणु’ अर्थात् जे प्रभाणेतुं रत्नप्रभा पृथ्वीमां श्रेणीना विभाग करीने जे समय विगरे विग्रह गतिनुं समर्थन करवामां आणुं छे, जेण प्रभाणेतुं अडियां पणु श्रेणीना विभागपूर्वक जे उत्तर समणुवे. आ रत्नप्रभा प्रकरण अडियां यावत् शब्दथी अडणु करवामां आवेल छे. ते रत्नप्रभा प्रकरण त्यां सुधीतुं अडणु करवामां आवेल छे डे—त्यां प्रभुश्रीजे उत्तर इपथी अबुं कडेल छे डे—हे गौतम ! मैंने ऋज्वायता यावत् अर्धचक्र-

द्विधातो वक्रया गच्छन्, त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत विश्रेण्या मुत्पद्यमानश्चतुः
सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते द्विसामयिकेनवा,
त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेण समुत्पद्येत, एवम् पृथिवीकायि-
केषु चतुर्विधेषु उपपातयितव्यः अक्कायिकेषु चतुर्विधेषु, तथा अपर्याप्तेषु सूक्ष्म
तेजस्कायिकेषु चोपपातयितव्य एतदन्तस्य ग्रहणं भवतीति भावः 'अपञ्जत्त
वायरतेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए समोहणित्ता जे भविए' अपर्याप्त

हैं। उनमें से एकतो वक्रा श्रेणिसे जाता हुआ जो जीव उत्पत्ति
स्थान में उत्पन्न होता है वह वहाँ दो समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता
है। द्विधातो वक्रा श्रेणिसे जाता हुआ जो जीव उत्पत्ति स्थान में
उत्पन्न होता है वह तीन समयवाले विग्रहसे वहाँ उत्पन्न होता है
और जो जीव विश्रेणि में उत्पन्न होता है वह चार समयवाले विग्रह
से वहाँ उत्पन्न होता है। 'तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते' इसलिये
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह वहाँ दो समयवाले विग्रहसे
उत्पन्न होता है। तीनसमयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है अथवा चार
समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है। इसी प्रकार से उसे चारों प्रकार
के पृथिवीकायिक जीवों में उत्पादित कर लेना चाहिये। चारों प्रकारके
अक्कायिकों में उत्पादित कर लेना चाहिये और अपर्याप्तक सूक्ष्म
तेजस्कायिकों में उत्पादित कर लेना चाहिये।

'अपञ्जत्त वायर तेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए समोह-

वाला आ रीते सात श्रेणीया कडेल छे. तेमांथी अकतो वक्रा श्रेणीथी जधने
जे एव उत्पत्तिस्थानमां उत्पन्न थाय छे, ते त्यां जे समयवाणी विग्रह
गतिथी उत्पन्न थाय छे, अने द्विधातो वक्रा श्रेणीथी जनारे एव उत्पत्ति
स्थानमां उत्पन्न थाय ते त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय
छे, अने जे एव विश्रेणीथी उत्पन्न थाय छे, ते आर समयवाणी विग्रह
गतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे. 'तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते' जे कारणुथी
हे गौतम ! मे' एवु' कडेल छे के-ते त्यां जे समयवाणी विग्रह गतिथी
उत्पन्न थाय छे, त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. आर
समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. आ प्रमाणे ते आरे प्रकारना
पृथ्वीकायिकेमां उत्पन्न थवा संण'धी कथन कडेवुं लेध'अ. अने अपर्याप्तक,
पर्याप्तक तेजस्कायिकेमां उत्पन्न थवाना संण'धमां कडेवुं लेध'अ.

'अपञ्जत्त वायर तेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए समोहणित्ता' हे अश्वत्थ

वादरतेजस्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समयहतो-मारणान्तिक समुद्घातं कृतवान्, समयहत्य-मारणान्तिक समुद्घातं कृत्वा यो भव्यः, 'उड्डूलोयखेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते' ऊर्ध्वलोक क्षेत्रनाड्या बाह्ये क्षेत्रे' 'पज्जत्त सुहुम तेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए' पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकतया तद्रूपेणोपपत्तुम्, 'से णं भंते ! स खलु भदन्त ! कत्तिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येतेति प्रश्नः । उत्तरमाह-'सेसं' इत्यादि । 'सेसं तं चेव' शेषमुत्तर मत्र सर्वं द्विसामयिकेव वा' त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येतेत्यादिकं सर्वं पूर्ववदेवेति ज्ञातव्यमिति । 'अपज्जत्त वायर तेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए' अपर्याप्त वादरतेज-

णित्ता' हे भदन्त ! जो अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक समयक्षेत्रमें मारणान्तिक समुद्घात से मरण करता हैं और मरणकरके 'जे उड्डूलोयखेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते पज्जत्त सुहुमतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए भविए' जो ऊर्ध्वलोक स्थित ब्रह्मनाडी के बाहरी क्षेत्रमें पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य होता है तो 'से णं भंते ! हे भदन्त ! ऐसा वह जीव कितने समयवाले विग्रह से यहां उत्पन्न होता है ? उत्तरमें प्रभुश्रीं कहते हैं-'सेसं तं चेव' हे गौतम ! इस सम्बन्ध में उत्तर यहाँ 'वह वहाँ दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है, तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है तथा चार समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है' इत्यादि रूपसे पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये ।

'अपज्जत्त वायर तेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए' हे

जे अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक समयक्षेत्रमां मारणान्तिक समुद्घातथी मरण पाये छे, अने मरण पायीने 'जे उड्डूलोयखेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते पज्जत्तसुहुम-तेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए भविए' जे ऊर्ध्वलोकमा रहैला ब्रह्मनाडीना प्रदेशमां पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकपणुथी उत्पन्न थयाने योग्य होय छे, 'से णं भंते !' छे लगवन् ओवे ते एव कइला समयवाणी विग्रह गतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-'सेसं तं चेव' छे गौतम ! आ संबन्धमां उत्तर अडियां 'ते त्यां जे समयवाणी विग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, त्रयु समयवाणी विग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, तथा चार समयवाणी विग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, विगेरे प्रकारथी पडेला कइला प्रमाणे जे समजये।

'अपज्जत्तवायरतेउक्काइएणं भंते ! समयखेत्ते समोहए' छे लगवन् जे

स्कायिकः खलु भदन्त ! समयक्षेत्रे समवहतो-मारणान्तिकसमुद्घातं कृतवान्, 'समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्त वायरतेउक्कायत्ताए उववज्जित्तए' समयहत्य-मारणान्तिक समुद्घातं कृत्वा यो भव्योऽपर्याप्तवादरतेजस्कायिक-तया समुत्पत्तुम् । 'से णं भंते ! कइ समइएणं विग्रहेणं उववज्जेज्जा' स खलु भदन्त ! अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकः कति सामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येतेति प्रश्नः । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'एगसमइएण वा, दुसमइएण वा, तिसमइएण वा, विग्रहेणं उववज्जेज्जा' एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्यतेत्युत्तरम् । पुनः प्रश्नयति 'से केणट्टेण' तत्केनार्थेन, उत्तरमाह-'अट्ठो जहंवे' इत्यादि । 'अट्ठो जहेव रयणप्प-

भदन्त ! जो अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक जीव समयक्षेत्र में समवहत होता है-मारणान्तिक समुद्घात करता है-और 'समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्त वायरतेउक्कायत्ताए उववज्जित्तए' 'मारणान्तिक समुद्घात करके जो अनुष्यक्षेत्र में अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य होता है 'से णं भंते ! कइसमइएणं विग्रहेणं उववज्जेज्जा 'ऐसा वह जीव है भदन्त ! वहाँ कितने समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-'गोयमा ! एग-समइएण वा दुसमइएण वा, तिसमइएण वा विग्रहेणं उववज्जेज्जा' हे गौतम ! वह वहाँ एक समयवाले विग्रहसे, अथवा दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है । 'से केणट्टेणं' हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वह अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक जीव समयक्षेत्र में मारणान्तिक समुद्घात करके वहीं

अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक एव समयक्षेत्रमां समवहत थाय छे. अर्थात् मारणा-न्तिक समुद्घात करे छे, अने 'समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तवायर-तेउक्कायत्ताए उववज्जित्तए' मारणान्तिक समुद्घात करीने ले अनुष्यक्षेत्रमां अप-र्याप्त वादर तेजस्कायिकपण्णथी उत्पन्न थव ने योग्य डोय छे, 'से णं भंते ! कइ समइएण विग्रहेणं उववज्जेज्जा' अवे ते एव डे लगवन् डेटता समय-वाणी विग्रह गतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के-'गोयमा ! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्रहेणं उववज्जेज्जा' डे गौतम ! अवे ते एव त्या अेक समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा छे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे. 'से वेणट्टेणं' डे लगवन् आप अेवुं शा कारण्थी कडे छे ? के ते अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक एव समयक्षेत्रमां मारणान्तिक

भाए तहेव सत्तसेढीओ' अर्थो हेतुः यथैव रत्नप्रभायां तथैव सप्तश्रेणिरुगो विज्ञेयः।

'एवं पञ्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए वि' एवम् अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक-
तया समुत्पद्यमानस्य यथैव वक्तव्यता भणिता तथैव पर्याप्त वादरतेजस्कायिक-
तया समुत्पद्यमानस्यापि वक्तव्यता भणितव्येति भावः 'वाउक्काइएसु वणस्सइ-
काइएसु य जहा पुढवीकाइएसु उववाइओ तहेव चउक्कएणं भेदेणं उववाएयव्वो'
वायुकायिकेषु वनस्पतिकायिकेषु च यथा-येन प्रकारेण पृथिवीकायिकेषु चतुर्वि-
धेषु उपपातितः-उपपातो दर्शित स्तथैव-तेनैव रूपेण चतुष्केन भेदेन अपर्याप्त

पर अपर्याप्त वादरतेजस्कायिक रूपसे एक समयवाले विग्रहसे, अथवा दो समयवाले विग्रह से अथवा तीन समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है ? उत्तरमें प्रभुश्री कहते हैं-'अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त-सेढीओ' हे गौतम ! जैसा रत्नप्रभा प्रकरण में इस सम्बन्ध में मेरे द्वारा सात श्रेणियों का प्रतिपादन रूप कारण बनलाया गया है वही कारण यहाँ पर भी खनल लेना चाहिये ।

'एवं पञ्जत्त वायरतेउक्काइयत्ताए वि' जैसी वक्तव्यता अपर्याप्त वादर तेजस्कायिक रूप से उत्पन्न होनेवाले जीवके संबन्ध में कही गई है उसी प्रकार की वक्तव्यता पर्याप्त तेजस्कायिक रूप से उत्पन्न होने वाले जीव के विषय में भी कह लेनी चाहिये । 'वाउक्काइएसु वणस्सइ-काइएसु य जहा पुढवीकाइएसु उववाइओ तहेव चउक्कएणं भेदेणं

समुद्घात करीने त्यां ज अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकपण्णाथी ओउ समयवाणी विग्रह गतिथी, अथवा जे समयवाणी विग्रह गतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रह गतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के-'अट्टो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ' हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वीना प्रकरणमां जे रीतनु आ सम्बन्धमा मे कथन कर्युं छे के-सात श्रेणी डाय छे, विगेरे प्रतिपादन रूप कारण भताण्युं छे, तेज कारण अडियां पणु सम्भवेणु लेणु जेधये.

'एवं पञ्जत्तवायरतेउक्काइयत्ताए वि' जे प्रमाणेणुं कथन अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकपण्णाथी उत्पन्न थनारा एवना सम्बन्धमां कल्युं छे, जेज प्रमाणेणुं कथन पर्याप्त तेजस्कायिकपण्णाथी उत्पन्न थवावाणा एवना सम्बन्धमां पणु सम्भयणुं. 'वाउक्काइएसु वणस्सइकाइएसु य जहा पुढवीकाइएसु उववाइयो तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयव्वो' जे प्रमाणे आर प्रकारना पृथ्वीकायिक एवमां

पर्याप्त सूक्ष्म वादर भेदेनोपपातयितव्यः । चतुष्पकारकेषु वायुकायिकेषु तथा-
चतुष्पकारकेषु वनस्पतिकायिकेष्वपि अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्योपपातो
वर्णनीय इति । 'एवं पञ्जत्त वायरतेउकाइओ वि एएसु चैव ठाणेसु उववाएयव्वो'
एवम् अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्य वायुवनस्पतिकायिकेषु उपपातो दर्शित
स्तेनैव रूपेण पर्याप्त वादरतेजस्कायिकस्यापि प्रत्येकं चतुर्विधेषु पृथिव्यप्रतेजो-
वायुवनस्पतिकायिकेषूपपातो वर्णनीय इति । 'वाउकाइय-वणस्सइकाइयाणं जहेव
पुढवीकाइयत्ते उववाओ तहेव भाणियव्वो' वायुकायिक वनस्पतिकायिकानां चतु-
र्विधानाम् यथैव पृथिवीकायिकतया-पृथिवीकायिकरूपेणोपपातः कथित स्तथै-
वैषाम् अत्रापि उपपातो भणितव्यः, आलापमकारश्च स्वयमेवोहनीयः । पूर्वमधो-

उववाएयव्वो' जिस प्रकारसे चतुर्विध पृथिवीकायिकों में अपर्याप्त
वादरतेजस्कायिक का उपपात दिखाया गया है । उसी प्रकार से चतु-
र्विध वायुकायिकों में और चतुर्विध वनस्पतिकायिकों में भी उसका-
अपर्याप्त वादरतेजस्कायिकका-उपपात कह लेना चाहिये ।

'एवं पञ्जत्त वायरतेउकाइओ वि एएसु चैव ठाणेसु उववाएयव्वो'
इसी रीति के अनुसार पर्याप्त वादरतेजस्कायिक का भी चतुर्विध
पृथिवीकायिकोंमें, चतुर्विध अपकायिकोंमें, चतुर्विध तेजस्कायिकोंमें,
चतुर्विध वायुकायिकों में और चतुर्विध वनस्पतिकायिकों में उपपात
कह लेना चाहिये । 'वाउकाइयवणस्सइकाइयाणं जहेव पुढवीकाइयत्ते
उववाओ तहेव भाणियव्वो' चतुर्विधवायुकायिकों का और चतुर्विध
वनस्पतिकायिकों का जैसा पृथिवीकायिकों में उपपात कहा गया है
उसी प्रकार से इनका यहां पर भी उपपात कह लेना चाहिये । इस

अपर्याप्त वादर तेजस्कायिकने उत्पात कइयो छे अण प्रभाण्णे यार प्रकारना
वायुकायिकेभां अने यार प्रकारना वनस्पतिकायिकेभां पण्णे तेने अपर्याप्त
वादर तेजस्कायिकने' उत्पात कइवे। नेधअ

'एवं पञ्जत्तवायरतेउकाइयो वि एएसु चैव ठाणेसु उववाएयव्वो' अण
प्रभाण्णे पर्याप्त वादर तेजस्कायिकेने। पण्णे यार प्रकारना पृथ्वीकायिकेभां
यार प्रकारना अण्कायिकेभां यार प्रकारना तेजस्कायिकेभां यार प्रकार वायु
कायिकेभां अने यार प्रकारना वनस्पतिकायिकेभां उत्पात कइवे। नेधअ
'वाउकाइय वणस्सइकाइयाणं जहेव पुढवीकाइयत्ते उववाओ तहेव भाणियव्वो'
यार प्रकारना वायुकायिकेने अने यार वनस्पतिकायिकेने उत्पात पृथ्वी-

લોકક્ષેત્રનાડી વાહ્યક્ષેત્રે સમવહતાનામૂર્ધ્વલોકક્ષેત્રનાડી વાહ્યક્ષેત્રે સમુપ્તિસૂત્રનાં પૃથિવ્યાદીનામુપપાતો વર્ણિતઃ, સામ્પતમૂર્ધ્વલોકક્ષેત્રનાડી વાહ્યક્ષેત્રે સમુપ્તિસૂત્રનાં પૃથિવ્યાદીના મુપપાતઃ પૂર્વવદેવ મન્વતીતિ પ્રદર્શયતે—‘અપજ્જત્ત’ इत्यादि। ‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘उड्डुल्लोय-खेत्तनालीए वाहिरिल्लेखेत्ते समोहए’ ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया वाह्ये क्षेत्रे समवहतो-मारणान्तिकसमुद्घात कृतवान्. ‘समोहणित्ता जे भविए अहेल्लोयखेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएत्ताए उववज्जत्तए’ सम्प्रवहत्य-मार-

સમ્બન્ધ મેં આલાપ પ્રકાર સ્પષ્ટ ઉદ્ભાવિત કર લેના ચાહિયે । જિસ પ્રકાર સે અધોલોક ક્ષેત્ર સ્થિત ત્રસનાડી કે વાહિરી ક્ષેત્રમેં સમવહત હુए पृथिव्यादि जीवों का जो कि ऊर्ध्वलोक स्थित त्रसनाडी के वाह्य प्रदेश में उत्पन्न होने के योग्य हैं । उत्पाद कहा गया है उसी प्रकार से ऊर्ध्वलोक स्थित त्रसनाडी के वाह्य क्षेत्र में समवहत हुए जीवों का जो कि अधोलोक स्थित त्रसनाडी के बाहिरी प्रदेश में उत्पन्न होने के योग्य हैं उत्पाद है यह प्रकट किया जाता है—

‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! उड्डुल्लोय खेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते समोहए’ हे भदन्त । कोई अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव ऊर्ध्वलोकस्थित त्रसनाडी के बाहिरी प्रदेश में मारणान्तिक समुद्घात करके मरा और मरकर ‘जे भविए अहेल्लोय खेत्तनालीए वाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएत्ताए उववज्जत्तए’ वह

કાયિકોમા જે પ્રમાણે કહેલ છે, એજ રીતથી તેઓના ઉપપાત અહિયાં પણ કહી લેવો. આ વિષયમાં આલાપકોનો પ્રકાર સ્વયં સમજી લેવો.

જે પ્રમાણે અધોલોક ક્ષેત્રમાં રહેલ ત્રસનાડીના બહારના ક્ષેત્રમાં સમુદ્ઘાત કરેલ પૃથ્વીકાયિક વિગેરે જીવોના કે જે ઉર્ધ્વલોકમાં રહેલ ત્રસનાડીના બાહ્ય પ્રદેશમાં ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય છે, તેઓના સંબંધમાં ઉત્પાદ કહેલ છે, એજ પ્રમાણે ઉર્ધ્વલોકમાં રહેલ ત્રસનાડીના બહારના ક્ષેત્રમાં સમુદ્ઘાત કરેલ કે જે નીચેના લોકમાં રહેલ ત્રસનાડીના બહારના પ્રદેશમાં ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય છે, તેઓના ઉત્પાત થાય છે. તેમ કહેવામાં આવેલ છે. ‘અપજ્જત્તસુહુમપુઢવી-કાઈએણ મંતે ! ઉડ્ડુલ્લોયખેત્તનાલીએ વાહિરિલ્લે ખેત્તે સમોહએ’ હે ભગવન કોઈ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવ ઉર્ધ્વલોકમાં રહેલ ત્રસ નાડીના બહારના પ્રદેશમાં મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરીને મરણ પામે, અને મરણ પામીને ‘જે મવિએ અહોલોયખેત્તનાલીએ વાહિરિલ્લે ખેત્તે અપજ્જત્તસુહુમપુઢવીકાઈએત્તાએ ઉવ-

णान्तिकसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यः योग्यः, अधोलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे
अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया तादृश पृथिवीकायिक स्वरूपेणोत्पत्तुम्—समुत्प-
त्तिम् आसादयितुम्, 'से णं भंते ! कइसमइएणं' स खलु भदन्त ! कति सामयिकेन
विग्रहेण समुत्पद्यतेति प्रश्नः । अस्योत्तरमतिदेशेनाह—'एवं' इति । एवं—यथा—
अधोलोकक्षेत्रनाडी बाह्यक्षेत्रे—समवहताना ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडी बाह्यक्षेत्रे समुत्पित्सुनां
विषये उपपातो वर्णित स्तथैव—'ऊर्ध्वलोकक्षेत्रेनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोइयाणं'
ऊर्ध्वलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समवहतानां पृथिव्याद्येकेन्द्रियाणाम्, 'अहेलोक
खेत्तनालीए बाहिरिल्ले खेत्ते उच्चवज्जमाणणं' अधोलोकक्षेत्रनाडया बाह्ये क्षेत्रे समुत्प-
द्यमानानामपि 'सो चेव गमओ निरवसेसो भाणियव्वो' स एव—पूर्वोक्त एव अधो-
लोकक्षेत्रनाडयाः बहिः क्षेत्राद् ऊर्ध्वलोक क्षेत्रनाडी बहिः क्षेत्रसमुत्पित्सु सदृश
एव गमको निरवशेषः—समग्रो भणितव्यः । क्रियत्पर्यन्तं पूर्वप्रकरणमिह भणित-
व्यम्, तत्राह 'जाव' इत्यादि । 'जाव वायरवणस्सइकाइयाओ पज्जत्तओ वायर-

अधोलोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाहिरी प्रदेश में उत्पन्न होने के योग्य
हुआ—तो 'से णं भंते ! कइसमइएणं०' हे भदन्त ! ऐसा वह जीव
वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? अतिदेश से
उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं 'एवं' 'हे गौतम ! जिस
रीति से अधोलोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाह्य प्रदेशमें समवहत हुए
पृथिव्यादि एकेन्द्रिय जीवोंके ऊर्ध्वलोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाह्यप्रदेश
के विषय में उपपातका—उत्पादका कथन किया गया है उसी रीतिसे
ऊर्ध्वलोकस्थित ब्रह्मनाडी के बाह्यप्रदेश में समवहत हुए पृथिव्यादि
एकेन्द्रिय जीवों के अधोलोकस्थित ब्रह्मनाली के बाह्यप्रदेश में उत्पाद का
कथन है ऐसा जानना चाहिये । यही बात 'सो चेव गमओ निरवसेसो
भाणियव्वो' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है । और यह सब पूर्व

वज्जित्तए' ते अधोलोकमां रडेल ब्रसनाडीना णडारना प्रदेशमां उत्पन्न थवाने
योग्य थये होय तो 'से णं भंते ! कइ समइएणं०' हे भगवन् श्रेयो ते
एव डेटला समयवाणी विग्रह गतिथो त्यां उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो
उत्तर अतिदेश (ललाभणु)धी आपतां प्रभुश्री डडे छे डे—'एवं' हे गौतम !
ने रीते अधोलोकमां रडेल ब्रसनाडीना णडारना प्रदेशमां समुद्घात करेद
पृथ्वीकायिक विगरे अकेन्द्रिय एवोने ऊर्ध्वलोकमां रडेल ब्रसनाडीना णडारना
प्रदेशना विषयमां उपपातनु कथन डडेल छे. तेज प्रमाणे आभना उत्पादुं
कथन पणु छे. तेम समज्जुं आण वात 'सो चेव गमओ निरवसेसो भाणि
यव्वो' आ सूत्रपाठ द्वारा अताववामां आवेल छे अने आ सधणुं पडेलानुं

वणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु उववाइओ' यावद् वादरवनस्पतिकायिकः पर्याप्तको वादर वनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेषूपपातितः । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिक एकेन्द्रियजीवाः अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवी कायिकतः आरभ्य पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्तेषु एकेन्द्रियेषु उपपातित स्तथैव विज्ञेयः । सर्वत्रालापप्रकारः स्वयमेवोहनीयः ॥सू० ५॥

अथ—लोकस्य पौरस्त्यादि चरमान्त विषयः समुद्घातोपपातः प्रदर्शयते—
'अपज्जत्त' इत्यादि ।

मूलम्—अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! लोगस्स पुर-
त्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स
पुरत्थिमिल्ले चेव चरिमंते, अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए
उववज्जत्तए, से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उववज्जे-
ज्जा ? गोयमा ! एगसमइएण वा, दुसमइएण वा, तिसमइएण
वा, षडसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केणट्टेणं भंते !
एवं वुच्चइ एगसमइएण वा जाव उववज्जेज्जा ?, एवं खलु

प्रकरण यहाँ पर 'जाव वायर वणस्सइकाइओ पज्जत्तओ वायरवणस्सइ-
काइएसु पज्जत्तएसु उववाइओ' इस सूत्रपाठ तक उर्धोका त्यों कहना
चाहिये । तात्पर्य कहने का यह है कि अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव
जैसे पहिले पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिक तक के एकेन्द्रिय जीवोंमें
उत्पादित बतलाये गये हैं वैसे ही यहाँ पर इन्हे उत्पादित बतलाना
चाहिये । इस सम्बन्ध में सर्वत्र आलाप प्रकार स्वयं ही उद्भावित
कर लेना चाहिये ॥ ५॥

प्रकरणम् अडियां 'जाव वायरवणस्सइकाइयाओ पज्जत्तओ वायरवणस्सइकाइएसु पज्ज-
त्तएसु उववाइओ' आ सूत्रपाठना कथन सुधी नेमत्तुं तेम कही देवुं नेधंमे.

कडेवानुं तात्पर्यं अे छे के—अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव ने
दीते पडेलां पर्याप्त वादर वनस्पतिकायिक सुधीना अेक छन्द्रियवाणा एवोमां
उत्पन्न थवाना संबंधमां कथन करवामां आवेल छे, अेव प्रमाणे अडियां
पञ्च तेओना उत्पन्न थवाना संबंधमां कथन करवुं नेधंमे. आ विषयमां
आलापकेनो प्रकार स्वयं अनापाने समल देवो. ॥सू० ५॥

गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ तं जहा—उज्जुआययां
जाव अद्धचक्कवाला । उज्जुआययाए सेढीए उववज्जमाणे
एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । एगओ वंकाए सेढीए
उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । दुहओ
वंकाए सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेढीए
उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, जे
भविए विसेढीए उववज्जित्तए, से णं अउसमइएणं विग्गहेणं
उववज्जेज्जा, से तेणट्टेणं जाव उववज्जेज्जा । एवं अपज्जत्त
सुहुमपुढवीकाइओ लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते ! समोहए,
समोहणित्ता लोगस्स पुरत्थिमिल्ले च्वेव चरिमंते अपज्जत्तएसु
पज्जत्तएसु य सुहुमपुढवीकाइएसु२, सुहुमआउकाइएसु अप-
ज्जत्तएसु पज्जत्तएसु४, सुहुमतेउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्ज-
त्तएसु य ६, सुहुमवाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु ८,
बायरवाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु१०, सुहुमवणस्सइकाइ-
एसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य ११, बारससु वि ठाणैसु एएणं
च्वेव कमेणं भाणियव्वो । १२ सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं
च्वेव निरवसेसो बारससु वि ठाणैसु उववाएयव्वो १४ । एवं एएणं
गमएणं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइ-
एसु पज्जत्तएसु च्वेव भाणियव्वो । अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं
भंते ! लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे
भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइय-
त्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते ! कइ समइएणं विग्गहेणं उव-
वज्जेज्जा ? गोयमा ! दुसमइएणं वा तिसमइएणं वा अउसमइ-
एणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ १ ।

एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पन्नत्ताओ तं जहा-
 उज्जुआयया जाव अद्धचक्कवाला । एगओ वंकाए सेढीए उव-
 वज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । दुहओ वंकाए
 सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेढीए उवव-
 जिजत्तए, से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । जे भविए
 विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववजे-
 ज्जा । से तेणट्टेणं गोयमा ! एवं एएणं गमएणं पुरत्थिमिल्ले
 चरिमंते समोहए दाहिणिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जाव
 सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्त-
 एसु चेव । सव्वेसिं दुसमइओ, तिसमइओ, चउसमइओ विग्गहो
 भाणियव्वो । अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स
 पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स
 पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयत्ताए उवव-
 जिजत्तए, से णं भंते ! कइ ससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?
 गोयमा ! एग ससइएण वा, दुससइएण वा, तिससइएण वा,
 चउससइएण वा, विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से केणट्टेणं० । एवं
 जहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहया पुरत्थिमिल्ले चेव चरि-
 मंते उववाइया, तहेव पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहया पच्च-
 त्थिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वया सव्वे । अपज्जत्त सुहुमपुढवी-
 काइएणं भंते ! लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए समो-
 हणित्ता जे भविए लोगस्स उत्तरिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुम-
 पुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए । से णं भंते ! एवं जहा पुरत्थि-
 मिल्ले चरिमंते समोहओ दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ तथा
 पुरत्थिमिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो ॥सू०६॥

छाया—अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य यो भव्यो लोकस्य पौरस्त्ये एव चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्यते ? गौतम ! एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा, विग्रहेणोत्पद्यते, तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, एकसामयिकेन वा यावत् उत्पद्येत । एवं खलु गौतम ! मया सप्तश्रेणयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—ऋज्वायता यावदूर्ध्वचक्रवाला ७। ऋज्वायतया श्रेण्या उत्पद्यमान एक-सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । एकतो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो द्विसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, द्विधातो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो यो भव्य एकप्रतरे अनुश्रेण्याम् उत्पत्तुम्, स खलु त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । यो भव्यो विश्रेण्यामुत्पत्तुं स खलु चतुःसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत, तत्केनार्थेन यावदुत्पद्येत । एवमपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिको लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य लोकस्य पौरस्त्ये एव चरमान्ते अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च सूक्ष्म पृथिवीकायिकेषु, सूक्ष्मपृथिवीकायिकेषु अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च, वादरवायुकायिकेषु अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च सूक्ष्म वनस्पतिकायिकेषु अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च, द्वादशस्वपि स्थानेषु एतेनैव क्रमेण भणितव्यः १२। सूक्ष्म पृथिवीकायिकः पर्याप्तक एवमेव निरवशेषो द्वादशस्वपि स्थानेषु उपपातयितव्यः ५४ । एवमेतेन गमकेन यावत् सूक्ष्मवनस्पति कायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव भणितव्यः । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समव-हत्य यो भव्यो लोकस्य दक्षिणात्ये चरमान्ते, अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकेषु उपपत्तुम्, स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । गौतम ! द्वि साम-यिकेन त्रिसामयिकेन चतुःसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, एवं खलु गौतम ! मया सप्तश्रेणयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ऋज्वायता यावत् अर्द्धचक्रवाला ७ । एकतो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो द्विसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत । द्विधातो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो यो भव्य एकप्रतरे अनुश्रेण्या मुत्पत्तुम्, स खलु त्रिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत, यो भव्यो विश्रेण्या मुत्पत्तुम्, स खलु चतुःसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येत, तत्केनार्थेन गौतम ! एवमेतेन गमकेन पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः दक्षिणात्ये चरमान्ते उपपातयितव्यो यावत् सूक्ष्म वनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव । सर्वेषां द्विसा-मयिकः, त्रिसामयिकः, चतुःसामयिको विग्रहो भणितव्यः । अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य यो भव्यो लोकस्य पाश्चात्ये चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकतयोत्पत्तुं

स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत । गौतम ! एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेणोत्पद्येत । तत्केनार्थेन एवम्० । यथैव पौरस्त्ये एव चरमान्ते समवहताः पौरस्त्ये एव चरमान्ते उपपातिता स्तथैव पौरस्त्ये चरमान्ते समवहताः पाश्चात्ये चरमान्ते उपपातयितव्याः सर्वे । अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समववहत्य यो भव्यो लोकस्य औत्तरे चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकतयोत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! एवं यथा पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतो दाक्षिणात्ये चरमान्ते उपपातितः तथा-पौरस्त्ये चरमान्ते समवहत औत्तरे चरमान्ते उपपातयितव्यः ॥सू. ६॥

‘टीकाः—‘अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ लोकस्य पौरस्त्ये पूर्वदिक् सम्बन्धिनि चरमान्ते समवहतो-मारणान्तिकसमुद्घातं कृतवान्, ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चैव चरिमंते’ समवहत्य-मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यो लोकस्य पौरस्त्ये एव चरमान्ते, ‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उत्पत्तुम् ‘से णं

अब लोकके पूर्वादि चरम भाग विशेषका उपपात दिखलाया जायगा । ‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इत्यादि

टीकार्थ-‘अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ जिस अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवने ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ लोकके पूर्वदिक् संबंधि चरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात किया है-‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चैव चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ और मरण करके वह लोकके पूर्व दिशाके ही अन्तिम भागमें अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूपसे उत्पन्न होनेके योग्य हुआ है ‘से णं

इवे दोकना पूर्व विगेरे चरमान्त लाग विशेषने। उपपात अताववाभां आवे छे. ‘अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ-‘अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ जे अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक एव ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ दोकना पूर्व दिशा सम्बन्धी चरमान्तभां मारणान्तिक समुद्घात करीने भरेल होय ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चैव चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ अने मरण पाभीने ते दोकना पश्चिमना अन्तलागभां अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक पणुथी उत्पन्न थवाने योग्य होय छे,

મંતે ! કહસમહૂણં વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા' સ લલુ મદન્ત ! કતિ સામયિકેન વિગ્રહેણ ગત્યા સમુત્પદ્ધેત ઇતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘ણસમહૂણ વા, દુસમહૂણ વા, તિસમહૂણ વા, ચડસમહૂણ વા, વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ ઇકસામયિકેન વા, દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા, ચતુઃસામયિકેનવા વિગ્રહેણ ગત્યા સમુત્પદ્ધેતેત્યુત્તરમ્ । પુનઃ પ્રશ્નયન્નાહ- ‘સે કેણદ્દેણં મંતે ઇવં વુચ્ચઈ ઇણસમહૂણ વા જાવ ઉવવજ્જેજ્જા’ તત્કેનાર્યેન મદન્ત ! ઇવમુચ્યતે ઇકસામયિકેન વા યાવત્ ઉત્પદ્ધેતેતિ । અત્ર યાત્પદેન દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા, ચતુઃસામયિકેન વા, ઇતેણાં ગ્રહણં મવતીતિ ?

મંતે ! કહસમહૂણં વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ ‘તો હે મદન્ત ! ઇસા વહ જીવ વહાં કિતને સમય વાલે વિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈ-‘ગોયમા ! ઇણસમહૂણ વા દુસમહૂણ વા તિસમહૂણ વા ચડસમહૂણ વા વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ હે ગૌતમ ! વહ વહાં ઇકસમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, દો સમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તીનસમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ચાર સમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ‘સે કેણદ્દેણં મંતે ! ઇવં વુચ્ચઈ ઇણસમહૂણ વા જાવ ઉવવજ્જેજ્જા’ હે મદન્ત ! ઇસા અપ કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ વહ વહાં ઇકસમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ યાવત્ ચાર સમયવાલે વિગ્રહ સે મી ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? યહાં યાવત્પદ સે ‘દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા ચતુઃસામયિકેન વા’ ઇસ પાઠકા ગ્રહણ

‘સે ણં મંતે ! કહસમહૂણ વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ તો હે ભગવન્ એવો તે જીવ કેટલા સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ત્યાં ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘ગોયમા ! ઇણસમહૂણ વા દુસમહૂણ વા તિ સમહૂણ વા ચડસમહૂણ વા વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા’ હે ગૌતમ ! ત્યા તે એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે, બે સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે ત્રણ સમયવાળી વિગ્રહગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને ચાર સમયવાળી વિગ્રહગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે ‘સે કેણદ્દેણં મંતે ! ઇવં વુચ્ચઈ ઇણસમહૂણ વા જાવ ઉવવજ્જેજ્જા’ હે ભગવન્ આપ એવું શા કારણથી કહો છો કે તે ત્યા એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. યાવત્ ચાર સમયવાળી વિગ્રહગતિથી પણ ઉત્પન્ન થાય છે અહિયાં યાવત્ શબ્દથી ‘દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા, ચતુઃસામયિકેન વા’ આ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી

મગવાનાહ-‘एवं’ इत्यादि । ‘एवं खलु हे गौतम ! मए सत्तसेढीओ पन्नत्ताओ’ मया सप्त श्रेणयः प्रज्ञप्ताः, तं जहा’ तद्यथा-‘उज्जुभायया जाव अद्धचक्कवाला’ ऋज्वायता यावदद्धचक्रवाला, अत्र यावत्पदेन-एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा, द्विधातः खा चक्रवालानां श्रेणीनां संग्रहो भवति । तत्र-‘उज्जुभाययाए सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ ऋज्वायतया सरलया लम्बायमानया च श्रेण्या समुत्पद्यमानो जीव एकसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत, तथा-‘एगओ वंकाए सेढीए दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ एकतो वक्रया कुटिलया श्रेण्या समुत्पद्यमानो जीवो द्विसामयिकेन विग्रहेण गत्या समुत्पद्येत । तथा-‘दुहओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे’ द्विधातो वक्रया श्रेण्या समुत्पद्यमानो जीवः

હુઆ હૈ । ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈ-‘एवं खलु गोयमा ! मए सत्त-सेढीओ पन्नत्ताओ’ ‘हे गौतम ! मैने सात श्रेणियां कही हॆं-‘तं जहा’ जो इस प्रकार से हॆं-‘उज्जुभायया जाव अद्धचक्कवाला’ ‘ऋज्वायता यावत् अद्धचक्रवाला यहां यावत्पद से ‘एकतो वक्रा द्विधातो वक्रा, एकतः खा द्विधातःखा और चक्रवाला’ ‘इन अवशिष्ट श्रेणियों का ग्रहण हुआ है । इनमें जो ‘उज्जुभाययाए सेढीए उववज्जमाणे एग-समइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ ‘जो जीव अपने उत्पत्तिस्थान में ऋज्वायता श्रेणी से गमन करता हुआ उत्पन्न होता है वह वहाँ एक समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ‘एगओ वंकाए सेढीए उववज्ज-माणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ तथा जो जीव एकतो वक्रा श्रेणि से गमन करता हुआ अपने उत्पत्ति स्थान में उत्पन्न होता है वह वहाँ दो समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । तथा-‘दुहओ वंकाए

ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पणत्ताओ’ કે ગૌતમ ! મેં સાત શ્રેણીઓ કહેલ છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે. ‘उज्जु आयया जाव अद्ध चक्कवाला’ ऋજ્વાયત યાવત્ અર્ધચક્રવાલા અહિંયાં યાવત્પદથી એકતો વક્રા, દ્વિધાતો વક્રા, એકતઃ ખા, દ્વિધાતો ખા, અને ચક્રવાલા આ યાક્રીની શ્રેણીયો ગ્રહણ કરવામાં આવી છે. આ શ્રેણીયોમાં જે ‘उज्जु-आययाए सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ જે એવ પોતાની ઉત્પત્તી સ્થાનમાં ઋજ્વાયતા શ્રેણીથી ગમન કરીને ઉત્પન્ન થાય છે, તે ત્યાં એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. ‘एगओ वंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ તથા જે એવ એકતો વક્રા શ્રેણીથી ગમન કરીને પોતાના ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે ત્યાં બે સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તથા ‘दुहओ

‘जे भविण एगपयरंमि अणुसेढीं उववज्जित्तए’ यो भव्य एकप्रतरे अणुश्रेणिमाश्रित्य समुत्पत्तुम्, ‘से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ स खलु जीव त्रिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत, ‘जे भविण विसेढीं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ यो भव्यो विश्रेणि-विश्रेणिमाश्रित्य विश्रेण्यामित्यर्थः, उत्पत्तुम्, स खलु चतुःसामयिकेन विग्रहेण गत्या समुत्पद्येत इति । ‘से तेणद्वेणं जाव उववज्जेज्जा’ तत्तेनार्थेन गौतम ! एव मुच्यते एकसामयिकेन वा, द्विसामयिकेन वा, त्रिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत इति । ‘एवं अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइओ लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ एवं पूर्वोक्त

सेढीए उववज्जमाणे जे भविण एगपयरंमि अणुसेढिं उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जो जीव द्विधातो वक्का श्रेणि से गमन करता हुआ एक प्रतर में त्रिसमश्रेणि से उत्पन्न होता है तो वह तीन समयवाले विग्रह से वहाँ उत्पन्न होता है । और ‘जे भविण विसेढीं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जो विश्रेणि में उत्पन्न होने के योग्य है वह वहाँ चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘से तेणद्वेणं जाव उववज्जेज्जा’ इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह वहाँ एकसमयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है, तीन समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और चार समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है । ‘एवं अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइओ लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ इसी पूर्वोक्त क्रम के अनुसार कोई अपर्धापत्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव लोक के पूर्व चरमान्त में

वक्काए सेढीए उववज्जमाणे जे भविण एगपयरंमि अणुसेढिं उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जे एव द्विधातो वक्का श्रेणीथी गमन करतो थके। एक समयमां सभ श्रेणीथी उत्पन्न थाय छे. तो ते त्रयु समय वाणी विग्रहगतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे अने ‘जे भविण विसेढिं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ जे विश्रेणीमां उत्पन्न थवाने योग्य छे, ते त्यां चार समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. ‘से तेणद्वेणं जाव उववज्जेज्जा’ आ कारणुथी हे गौतम ! मे’ अपु’ कहेल छे के-ते त्यां एक समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे जे समयवाणी विग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे. त्रयु समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे अने चार समयवाणी विग्रह गतिथी पणु उत्पन्न थाय छे. ‘एव अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइओ लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’

क्रमेणैवापर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतो मारणा-
 न्तिकसमुद्घातं कृतवान् । 'समोहणित्ता लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चेव चरिमंते'
 समवहत्य-मारणन्तिकसमुद्घातं कृत्वा लोकस्य पौरस्त्ये एव चरमान्ते । 'अपज्जत्त-
 एसु पज्जत्तएसु य सुहुमपुढवीकाइएसु' अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च सूक्ष्मपृथिवी-
 कायिकेषु अपर्याप्त पर्याप्त भेदद्वयभिन्नेषु पृथिवीकायिकेषु इत्यर्थः तथा—'सुहुम-
 आउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु' सूक्ष्माऽपकायिकेषु अपर्याप्तपर्याप्तभेदतयु-
 क्तेषु तथा—'सुहुमतेउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु
 च सूक्ष्मतेजस्कायिकेषु, तथा—'सुहुमवाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य'
 अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च सूक्ष्मवायुकायिकेषु, तथा—'वायरवाउकाइएसु अपज्जत्त-
 एसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च वादरवायुकायिकेषु, तथा—'सुहुम-
 वणस्सइकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्तकेषु पर्याप्तकेषु च सूक्ष्मवन-

समवहत हुआ और 'समोहणित्ता लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चेव
 चरिमंते' समवहत होकर लोक के पूर्व ही चरमान्त में 'अपज्जत्तएसु
 पज्जत्तएसु सुहुमपुढवीकाइएसु' अपर्याप्त एवं पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी
 कायिकों में तथा 'सुहुम आउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु'
 अपर्याप्त एवं पर्याप्तक सूक्ष्म अपकायिकों में तथा 'सुहुम तेउकाइएसु
 अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्त एवं पर्याप्तक सूक्ष्मतेजस्का-
 यिकों में, तथा—'सुहुम वाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य'
 अपर्याप्त एवं पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकों में तथा—'वायरवाउकाइएसु
 अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्त एवं पर्याप्त वादरवायुकायिकों
 में तथा—'सुहुम वणस्सइकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्या-

आ पडेलां छडेल डभथी डेछ अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिक एवं लोकना
 पूर्व' चरमान्तमां समुद्घात करीने अने 'समोहणित्ता लोगस्स पुरत्थिमिल्ले
 चेव चरिमंते !' समुद्घात करीने लोकना पूर्व' चरमान्तमां ७ 'अपज्जत्तएसु
 पज्जत्तएसु सुहुमपुढवीकाइएसु' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकेमां
 तथा 'सुहुमआउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक सूक्ष्म
 अपकायिकेमां तथा 'सुहुम तेउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य' अपर्याप्तक
 अने पर्याप्तक सूक्ष्म तेजस्कायिकेमां तथा—'सुहुम वाउकाइएसु अपज्जत्तएसु
 पज्जत्तएसु य' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिकेमां तथा 'वायर-
 वाउकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक वादर वायुकायिकेमां
 तथा—'सुहुम वणस्सइकाइएसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु' अपर्याप्तक अने पर्याप्तक

स्पतिकायिकेषु, 'वारससु वि ठाणेषु एएणं चेव कमेणं भाणियव्वो' द्वादशस्वपि स्थानेषु अपर्याप्त पर्याप्त विशेषणविशिष्टेषु—सूक्ष्मपृथिवीकायिक २, सूक्ष्माप्कायिक ४, सूक्ष्मतेजस्कायिक ६, सूक्ष्मवायुकायिक ८, वादरवायुकायिक १० सूक्ष्म वनस्पतिकायिक १२ रूपेषु, एतेनैव क्रमेण अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य उपपातो भणितव्यः । १२।

ननु लोकरस्य चरमान्तीय जीवानामुपपातो द्वादशैव स्थानानि कथं कथितानि, इतः पूर्वसूत्रे विंशति स्थानेषु उपपातस्य वर्णनादितिचे दुच्यते—इहलोक चरमान्तभागे वादराः पृथिवीकायिकाप्कायिकतेजस्कायिकवनस्पतिकायिकाः न सन्ति, सूक्ष्मस्तु पञ्चावि जीवाः सन्ति, वादरवायुकायिकाश्च, तत्र सन्तीति

पत्रक एवं पर्याप्तक सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों में 'वारससु वि ठाणेषु एएणं चेव कमेणं भाणियव्वो' इस क्रम से कथित इन १२ स्थानों में उत्पन्न होने के योग्य हुआ इस रूपसे इसका इन १२ स्थानों में उत्पाद कहना चाहिये और इसी क्रमसे 'सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं चेव' इसी प्रकार से पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकका भी इन १२ स्थानों में उत्पाद कहना चाहिये।

शंका—लोकके चरमान्तीय जीवों के उपपात में यहाँ १२ स्थान क्यों कहे हैं? क्योंकि इससे पहिले सूत्र में २० स्थानों में उपपात का वर्णन सूत्रकार ने किया है।

उत्तर—लोकके चरमान्त भाग में वादरपृथिवीकायिक, वादर अप्कायिक, वादरतेजस्कायिक और वादरवनस्पतिकायिक जीव नहीं हैं। सूक्ष्मपृथिवीकायिक सूक्ष्मअप्कायिक, सूक्ष्मतेजस्कायिक, सूक्ष्मवनस्पतिकायिक और सूक्ष्मवायुकायिक एवं वादरवायुकायिक

सूक्ष्म वनस्पति कायिकों में 'वारससु वि ठाणेषु एएणं चेव कमेणं भाणियव्वो' आ उभ प्रमाणे कडेवाभां आवेता आ १२ आरे स्थानोभां उत्पन्न थवाने योग्य थयेत आ इपथी तेओनुं आ आरे स्थानोभां उत्पादनुं कथन करवुं नेधओ. अने आण उभ प्रमाणे 'सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं चेव' पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकने उपपात पणु आ आर स्थानोभां कडेवे नेधओ.

शंका—लोकने चरमान्तना ओवेना उपपातभां १२ आर स्थानो केम कथा छे? केम के—आनाथी पडेलाना सूत्रोभां तो २० वीस स्थानोभां उपपातनुं वणुंन सूत्रकारे करेव छे.

उत्तर—लोकने चरमान्त भागभां वादर पृथ्वीकायिक, वादर अप्कायिक, वादर तेजस्कायिक अने वादर वनस्पतिकायिक ओव डोता नथी. सूक्ष्म पृथ्वीकायिक, सूक्ष्म अप्कायिक, सूक्ष्म तेजस्कायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक अने

पर्याप्तपर्याप्त भेदेन द्वादश स्थानस्यैव सूत्रकृताऽनुसरणं कृतमिति । इह च लोकस्य पूर्वचरमान्तात् पूर्वचरमान्ते समुत्थमानस्य एकसामयादिका चतुःसमयान्ता गतिः संभवति अनुश्रेणि विश्रेणी संभावात् । पुनः दक्षिण चरमान्ते पूर्वचरमान्तात् समुत्पद्यमानस्य तु द्वयादि चतुःसामयिक्येव गतिस्तत्रानुश्रेणेरभावात् । एवमन्यत्रापि विश्रेणी गमने द्वयादि चतुःसामयिक्येव गति भवतीति भावः ।

‘सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं चेव’ सूक्ष्मपृथिवीकायिकः पर्याप्तकः एवमेव अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव अयं पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकोऽपि

ये ही जीव वहां हैं । इसलिये सूत्रकार ने पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से इन १२ स्थानोंका ही यहां अनुसरण किया है । यहां लोकके पूर्वचरमान्त से पूर्वचरमान्त में उत्पन्न हुए जीवकी एक समयवाली और यावत् चारसमयवाली गति हो सकती है क्योंकि यहां अनुश्रेणि रूपसे जाकर भी उत्पन्न होता है और विश्रेणि में भी उत्पन्न होता है तथा दक्षिण चरमान्त में पूर्वचरमान्त से उत्पन्न होने वाले जीवकी गति दोसमय से लेकर चार समयतककी होती है । क्योंकि यहां उत्पत्ति स्थान सीधमें नहीं होने के कारण ऋज्वायता श्रेणि का अभाव है । इसलिये एकसमयवाली गति यहां नहीं कही है । इसी प्रकार से अन्यत्र भी विश्रेणि स्थित स्थान में उत्पन्न होने वाले के गमन में दोसमयवाली गतिसे लेकर चारसमयवाली ही गति होती है ऐसा जानना चाहिये ।

‘सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं चेव’ इत्यादि पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक भी इसी प्रकार से—अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकके जैसे

सूक्ष्म वायुकायिक तथा आहर वायुकायिक आटला ७ ७वो त्यां डोय छे, तेथी सूत्रकारे पर्याप्त अने अपर्याप्तना लेदथी आ १२ आर स्थानोतुं ७ अडियां कथन कथुं छे, अडियां लोकता पूर्वचरमान्तथी पूर्वचरमान्तमां उत्पन्न थनारा ७वनी अेक समयवाणी अने यावत् चार समयवाणी गति पणु डोय छे केम के अडियां अनुश्रेणी गति पणु डोय छे, अने विश्रेणी गति पणु डोय छे, तथा दक्षिण चरमान्तमां पूर्व चरमान्तथी उत्पन्न थवा-वाणा ७वनी गति अे समयथी लधने चार समय सुधीनी डोय छे, केम के अडियां अनुश्रेणी गतिने अलाव कडेल छे, तेथी अेक समयवाणी गति अडियां कडी नथी, अे ७ प्रमाणे ७ीने पणु विश्रेणी गमनमां अे समयवाणी गतिथी लधने चार समयवाणी ७ गति डोय छे- तेम समज्जुं नेधअे.

‘सुहुमपुढवीकाइओ पज्जत्तओ एवं चेव’ पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पणु आ ७ प्रमाणे, अेटले के अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकनी ७ेम ७ आरे

‘निरवसेसो’ निरवशेषः—सम्पूर्णः ‘वारससु वि ठाणेषु’ द्वादशस्वपि स्थानेषु पूर्व प्रदर्शितेषु ‘उववण्यव्वो’ उपपातयितव्यः—उपपातः करणीयः, तथाहि—पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकेषु २, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्माष्कायिकेषु ४, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकेषु अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकेषु ८, अपर्याप्त पर्याप्त वादरवायुकायिकेषु १०, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु १२ इत्येवं द्वादशस्वपि स्थानेषु उपपातयितव्यः पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य एतेषु द्वादश स्थानेषु उपपातः कर्तव्य इति भावः (१२) २४ ।

एयं—पूर्वोक्तगमानुसारेण अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकवदेव अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्माष्कायिकस्य अपर्याप्त पर्याप्त विशेषण विशिष्टेषु सूक्ष्मपृथिवीकायिकाष्कायिक तेजस्कायिक सूक्ष्मवायुकायिक वादरवायुकायिक सूक्ष्मवनस्पतिकायिक रूपेषु द्वादशसु स्थानेषु उपपातः कथनीयः ३६ । एवं शेषतेज-

१२ स्थानों में—अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकों में २, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म अष्कायिकों में ४, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिकों में ६, अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिकों में ८ अपर्याप्त पर्याप्त वादरवायुकायिकों में १० और अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों में १२—उत्पादित करा लेना चाहिये । अर्थात् इस प्रकार इन १२ स्थानों में पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकके उत्पादका कथन कर लेना चाहिये इसी प्रकार—पूर्वोक्तगमके अनुसार अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक के जैसा ही अपर्याप्त पर्याप्त अष्कायिकका भी अपर्याप्त पर्याप्त विशेषण वाले सूक्ष्मपृथिवीकायिक, अष्कायिक, तेजस्कायिक, सूक्ष्मवायुकायिक वादरवायुकायिक और सूक्ष्मवनस्पतिकायिक इन १२ स्थानों में उत्पाद

स्थानोभां—अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकोभां २ अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म अष्कायिकोभां ४ अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकोभां ६ अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिकोभां ८ अपर्याप्त पर्याप्त वादर वायुकायिकोभां १० अने अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकोभां १२ उत्पन्न थाना संबंधमां कथन करी लेवुं. ओठले के आरे स्थानोभां उपर अताव्या प्रमाणे पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकना उत्पातनुं कथन करी लेवुं. कडेवानुं तात्पर्य ओ छे के—आ पडेलां कडेला गभके प्रमाणे अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक कथन प्रमाणे न अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्म अष्कायिकोनु ४ अपर्याप्त पर्याप्तक सूक्ष्म तेजस्कायिक ६ अपर्याप्तक पर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक ८ वायुकायिक १० अने सूक्ष्म वनस्पतिकायिक १२ आ आरे स्थानोभां ।

स्कायिक वायुकायिक वनस्पतिकायिक विषयेऽपि विज्ञेयम् । तत्र अपर्याप्त सूक्ष्मा
 प्कायिकस्य द्वादशस्थानविशिष्टा द्वादशगमाः १२, एवं पर्याप्त सूक्ष्मापकायिक-
 स्यापि द्वादशगमा भवन्तीति अपर्याप्त पर्याप्त सूक्ष्मापकायिकमधिकृत्य चतु-
 विंशतिर्गमा वाच्या २४ एवमेव सूक्ष्मतेजस्कायिकस्य चतुर्विंशतिः २४ सूक्ष्म-
 वायुकायिकस्य वादरवायुकायिकस्य २४, सूक्ष्मवनस्पतिकायिकस्य २४ प्रत्येकं च
 चतुर्विंशतिगमभावेन सर्वे विंशत्यधिकशतसंख्यका गमा जायन्ते १२० ततः
 सूक्ष्मपृथिवीकायिकस्य चतुर्विंशतिगमसम्मेलने चतुश्चत्वारिंशदधिकशतं (१४४)
 पञ्चानां स्थावराणां गमा भवन्तीति उपपातप्रकारः स्वयमेव ऊहनीय इति ।

करा लेना चाहिये ३६ इसी प्रकार से शेष तेजस्कायिक, वायुकायिक
 और वनस्पतिकायिक के विषय में भी जानना चाहिये । इस प्रकार
 अपर्याप्त सूक्ष्म अपकायिक के द्वादश स्थान सम्बन्धी १२ गम होते
 हैं । पर्याप्त सूक्ष्म अपकायिक के भी १२ स्थान सम्बन्धी १२ गम होते
 हैं । दोनों प्रकारके अपकायिकों के इस रीति से २४ गम हो जाते
 हैं । इसी रीति के अनुसार सूक्ष्मतेजस्कायिकके भी २४ गम होते
 हैं । सूक्ष्मवायुकायिक के भी २४ गम होते हैं । वादरवायुकायिक के
 भी २४ गम होते हैं । सूक्ष्मवनस्पतिकायिक के भी २४ गम होते हैं ।
 कुल गम मिलकर १२० गम हो जाते हैं । सूक्ष्मपृथिवीकायिक के २४
 गम इन में मिलाने से पांच स्थावरोके १४४ गम होते हैं । इनके
 सम्बन्ध में उपपात प्रकार अपने आप उद्भावित कर लेना चाहिये ।

थवाना संबंधमा कथन करी देवुं उ६ आ७ प्रभाषे आक्षीना तेजस्कायिक,
 वायुकायिक अने वनस्पतिकायिकना संबंधमां पणु समञ्ज देवुं. आ रीते
 अपर्याप्त सूक्ष्म अपकायिकेना आर १२ स्थाने संबंधी आर गमके थाय छे.
 पर्याप्त सूक्ष्म अपकायिकेना पणु १२ आर स्थान संबंधी १२ आर गमे
 थाय छे. अन्ने प्रकारना अपकायिकेना आ रीत प्रभाषे २४ येवीस गमके
 थर्छ नय छे. आ७ रीत प्रभाषे सूक्ष्म तेजस्कायिकेना पणु २४ येवीस
 गमके थर्छ नय छे. अने सूक्ष्म वनस्पति कायिकेना पणु २४ येवीस गमके
 थाय छे आ अथा गमे मणीने कुद ८६ छन्नु गमके थर्छ नय छे. सूक्ष्म
 पृथ्वीकायिकेना २४ येवीस गमे आमां भेणववाथी पांच स्थानेना १२०
 अकसेवीस गमे थाय छे आमां पृथ्वीकायिकेना २४ येवीस गमे भेणववाथी
 पांचे स्थानकेना १४४ अकसे। शुंभाणीस गमे थर्छ नय छे. आमना
 संबंधमां उपपातने प्रकार स्वयं अनावी देवे।

‘अपञ्जत्सुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते समोहए’ लोकस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः—मारणान्तिकसमुद्धातं कृतवान्, ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चरिंमंते’ समवहत्य—मारणान्तिकसमुद्धातं कृत्वा यो भव्यो लोकस्य दक्षिणात्ये—दक्षिणे चरमान्ते ‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएसु उदवज्जित्तए’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकेपू.पत्तुम्, ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ स खलु भदन्त ! कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत ? इति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! दुसमइएण वा, तिसमइएण वा, चउसमइएण वा, विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ द्विसामयिकेन विग्रहेण वा, तिसामयिकेन वा, चतुः सामयिकेन वा, विग्रहेण उत्पद्येतेत्युत्तरम् । पुनः प्रश्न-

‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ हे भदन्त कोई अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते समोहए’ लोक के पूर्व के चरमान्त में मरा ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चरिंमंते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ और मरकर वह लोकके दक्षिण चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी कायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य है तो ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे भदन्त ! ऐसा वह जीव वहां कितने समय वाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! वह वहां दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है, तीनसमयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होता है और चारसमयवाले

‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइएण भते । हे भगवन् उोअ अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी-
कायिक एव ‘लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते समोहए’ लोकना पूर्वना चरमन्तमां
भरथु पाभे अने ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चरिंमंते अपञ्जत्त-
सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ अने भरथु पाभीने लोकना दक्षिण चरमान्तमां
अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पण्णाथी उत्पन्न थवाने योग्य होय तो
‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे भगवन् एवा ते एव
त्यां उट्ठता समयवाणा विग्रहथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभु
उडे छे डे—‘गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं
उववज्जेज्जा’ हे गौतम ! ते त्यां भे समयवाणी विग्रहगतिथी पण्ण उत्पन्न थय
छे, त्रथु समयवाणी विग्रहगतिथी पण्ण उत्पन्न थाय छे अने चार समयवाणी
विग्रहगतिथी पण्ण उत्पन्न थाय छे, ‘से केणट्ठेणं भते । एवं वुच्चइ’ हे भगवन्

यन्नाह—‘से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ’ तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, द्विसामयिकेन वा, यावत् चतुःसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येतेति प्रश्नः । भगवानाह—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं—खलु गोयमा’ एवं खलु हे गौतम ! ‘मए सत्तसेहीओ’ पन्नत्ताओ’ मया सप्तसंख्यकाः श्रेणयः प्रज्ञप्ताः कथिताः । ‘तं जहा’ तच्चथा—‘उज्जुभायया जाव अद्धचक्रवाला’ ऋज्वायता यावदद्धचक्रवाला, अत्र यावत्पदेन एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा, द्विधातः खा चक्रवालानां पञ्चानां श्रेणीनां ग्रहणं भवतीति । तत्र सप्तश्रेणीषु मध्ये ‘एकओ वंकाए सेहीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ एकतो वक्रया श्रेण्या मरणस्थानात् उत्पत्तिस्थानं गच्छन् द्विसामयिकेन विग्रहेण उपपद्येतेति । ‘दुहओ वंकाए सेहीए उववज्ज-

विग्रह से भी उत्पन्न होता है । ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ’ हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि वहाँ दो समयवाले अथवा तीन समयवाले अथवा चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? ‘एवं खलु गोयमा ! मए सत्तसेहीओ पन्नत्ताओ’ उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियाँ कही हैं । ‘तं जहा’ जो इस प्रकार से हैं—‘उज्जुभायया जाव अद्धचक्रवाला’ एक ऋज्वायता यावत् सातवीं अद्धचक्रवाला यहाँ यावत् शब्द से ‘एकतो वक्रा, द्विधातो वक्रा, एकतः खा द्विधातः खा और चक्रवाला इन पाँच श्रेणियों का ग्रहण हुआ है । इन सात श्रेणियोंमें से जो ‘एकओ वंकाए सेहीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ एकतो वक्रा श्रेणि से गमन करता हुआ उत्पत्ति स्थान में उत्पन्न होता है ऐसा वह जीव वहाँ दो समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । ‘दुहओ वंकाए सेहीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेहीए उववज्जित्तए’

आप એવું શા કારણથી કહે છે કે—તે ત્યાં બે સમયવાળી ૧ અથવા ત્રણ સમયવાળી અથવા ચાર સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે ? ‘एवं खलु गोयमा ! मए सत्तसेहीओ पन्नत्ताओ’ આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—ગૌતમ ! મેં સાત શ્રેણીયો કહી છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે. ઉજ્જુઆયયા જાવ અદ્ધચક્રવાલા’ એક ઋજ્વાયત યાવત્ સાતમી અર્ધ ચક્રવાલા યાવત્ શબ્દથી “એકતો વક્રા દ્વિધાતો વક્રા, એકતઃ ખા દ્વિધાતો ખા અને ચક્રવાલા આ પાંચ શ્રેણીયો ગ્રહણ કરાઈ છે આ સાત શ્રેણીયોમાંથી ‘एकओ वंकाए अणुसेहीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ એકતો વક્રા શ્રેણીથી ગમન કરતો ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં ઉત્પન્ન થાય છે. એવો તે જ ત્યાં બે સમયવાળી વિગ્રહ ગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે. ‘दुहओ वंकाए सेहीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेहीए

माणे जे भव्दीए एगपयंरंमि अणुसेढीए उववज्जित्तए' द्विधातो वक्रया श्रेण्या उत्पद्यमानो यो भव्य एकप्रतरे अनुश्रेण्या उपपत्तुम्, 'से णं तिससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' स खल्ल तिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत, 'से णं भंते ! भविए विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' यः खलु भव्यो विश्रेण्यां समुत्पत्तु स खल्ल चतुःसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येत, न तु एकसामयिकेन विग्रहेण गच्छति, दिगन्तात्-दिग्गन्ते गमनात् 'से तेणट्ठेणं गोयमा !' तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते, द्विसामयिकेन वा, तिसामयिकेन वा, चतुःसामयिकेन वा विग्रहेण उत्पद्येत इति, 'एवं एएणं गमेणं' एवम् एतेन गमकेन, 'पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते समोहओ' लोकरस्य पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, 'दाहिणिल्ले चरिंमंते उववाएयव्वो' दक्षिणात्ये-दक्षिणे-चरमान्ते उपपातयितव्यः ।

तथा जो द्विधातो वक्रा श्रेणियो गमन करता हुआ उत्पत्ति स्थान में उत्पन्न होता है ऐसा वह जीव वहाँ यदि एक प्रतर में 'समश्रेणि में' उत्पन्न होता है तब तो 'से णं तिससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' वह वहाँ तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है 'से णं भंते भविए विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' और यदि वह विश्रेणि वाले उत्पत्ति स्थान में उत्पन्न होता है तो वह वहाँ चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । एक समयवाले विग्रहसे नहीं । क्योंकि एक दिगन्त से दूसरे दिगन्त में उसका गमन होता है । 'से तेणट्ठेणं गोयमा !' इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वह वहाँ दो समयवाले अथवा तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है । 'एवं एएणं गमेणं पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते समोहओ दाहिणिल्ले चरिंमंते उववाएयव्वो' इस प्रकार इसी गमके अनुसार लोकके पूर्वके चरमान्त

उववज्जित्तए' तथा जे द्विधातो वक्रा श्रेणीथी गमन करता थके उत्पत्ति स्थानमां उत्पन्न थाय छे, जेवे ते एव त्यां जे जेक प्रतरमां समश्रेणीमां उत्पन्न थाय तो ते त्यां त्रयु समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. से णं भंते ! भविए विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउससइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा' अने जे ते विश्रेणीथी जेतो थके त्यां उत्पन्न थाय छे, तो ते त्यां चार समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे जेक समयवाणी विग्रहगतिथी नहीं केम्पु के जेक दिगन्तमां तेनुं गमन थाय छे. 'से तेणट्ठेणं गोयमा !' ते द्वारणीथी हे गौतम ! में जेकुं कडेल छे के-त्यां जे समयवाणी अथवा त्रयु समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. 'एवं एएणं गमेणं पुरत्थिमिल्ले चरिंमंते । समोहओ दाहिणिल्ले चरिंमंते उववाएयव्वो' आ गमके प्रमाणे लोकना पूर्व चरमान्तमां

कियत्पर्यन्तानामुपपातो व्यक्तव्यस्तत्राह—‘जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ, सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव’ यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव, यावत् पदेन पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्यापर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्ताः संगृह्यन्ते । तथा च पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्तानामुपपातः, अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्तेषु द्वादश स्थानेषु वर्णनीय इति । तत्र—‘सव्वेसिं दुसमइओ तिसमइओ चउसमइओ विग्गहो भाणियव्वो’ सर्वेषां पर्याप्त सूक्ष्मपृथिव्यादि पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्तानां

में समवहत हुए जीव को दक्षिण चरमान्त में उत्पादित कर लेना चाहिये ‘जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुम वणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु’ और यह उत्पाद कथन यावत् पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकों में उत्पन्न होता है, यहाँ तक कहना चाहिये । यहाँ यावत्पद से पर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक से लेकर अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक तकका सब कथन ग्रहीत हुआ है । तथा च—पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक तकके जीवों का उपपाद अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक तकके जीवों में १२ स्थानों में वर्णित कर लेना चाहिये । इनमें ‘सव्वेसिं दुसमइओ तिसमइओ, चउसमइओ विग्गहो भाणियव्वो’ सबका दो समयवाले अथवा तीनसमयवाले अथवा चारसमयवाले विग्रह से उत्पाद होता

समुद्घात करेद एवने दक्षिण चरमान्तमां उत्पन्न थवाना संभंधमां कथन करी देवुं नेधंमे. ‘जाव सुहुम वणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु’ अने आ उत्पाद संभंधी कथन पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक एवो पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकेमां उत्पन्न थाय छे. “आ कथन सुधीनुं कडेवुं नेधंमे. अडियां यावत्पदथी पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लउने अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक सुधीनुं सधणुं कथन अडणु थयेद छे. तथा पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लउने अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक सुधीना एवोना संभंधमां १२ आरे स्थानेमां वणुं करी देवुं नेधंमे. तेओमां ‘सव्वेसिं दुसमइओ तिसमइओ चउसमइओ विग्गहो भाणियव्वो’ सधणाने उत्पाद ये समयवाणी विअडगतिथी अथवा त्रथु समयवाणी विअडगतिथी

विग्रहस्तु द्विसामयिको वा, त्रिसामयिको वा, चतुःसामयिको वा, भणितृष्यो न तु एकसामयिकः दिगन्ताद् दिगन्ते गमनादिति ॥

‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! लोकस्य पौरस्त्ये पूर्वस्मिन् चरमान्ते समवहतो—मारणान्तिकसमुद्घातं कृतवान्, ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ समवहत्य—मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यो लोकस्य पाश्चात्ये—पश्चिमे चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया समुत्पत्तुम्, ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ स खलु भदन्त ! कतिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येतेति मरुतः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘एगसमइएण वा, है ऐसा कथन करना चाहिये । एकसमयवाले विग्रह से उत्पाद होता है ऐसा नहीं कहना चाहिये क्योंकि इनका एक दिगन्त से दूसरे दिगन्त में गमन होता है ।

‘अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ हे भदन्त ! कोई अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव लोकके पूर्वचरमान्त में मरण समुद्घात से मरा और ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ ‘मरण समुद्घात कर वह लोकके पाश्चात्य चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य हुआ ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ हे भदन्त ! ऐसा वह जीव कितने समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है उत्तर में प्रभुश्री

अथवा चार समयवाणी विग्रहगतिथी थाय छे. आ प्रभाणेतुं कथन कडेवुं जेधंये. ओक समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पाद थाय छे. तेम कडेवुं नही. केम के—तेओतु ओक दिशाथी भीण दिशाभां गमन थाय छे. ‘अपज्जत्त सुहुम पुढवीकाइएणं भंते ! लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए’ छे भगवन् केधं अपर्याप्तिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव लोकना पूर्वचरमान्तभां मरुण समुद्घात करीने मरुण पावे. अने ‘समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पञ्चत्थिमिल्ले चरिमंते ! अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ मरुण समुद्घात करीने ते लोकना पश्चिम चरमान्तभां अपर्याप्तिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पण्णुथी उत्पन्न थवाने योग्य छाय ते। ‘से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा’ छे भगवन् ओवे ते एव केटला समयवाणी विग्रहगतिथी त्यां उत्पन्न थाय छे ?

દુસમહણ વા, તિસમહણ વા, ચતુસમહણ વા વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા' એકસામ-
યિકેન-વા, દ્વિસામયિકેન વા, ત્રિસામયિકેન વા ચતુઃસામયિકેન વા વિગ્રહેણ સમુ-
ત્પચ્છેત્ત ઇત્યુત્તરમ્ । 'સે કેણદ્દેણં' તત્કેનાર્થેન ભદન્ત ! એવમુચ્ચયેતે, એકસામયિકેન
યાવત્ ચતુઃસામયિકેન વા વિગ્રહેણોત્પચ્છેતેતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—'એવં' ઇતિ, યાવ-
ત્તેનાર્થેન એવમુચ્ચયેતે ઇત્યેતદ્ધર્મ્યન્તમિતિ । 'એવં જહેવ પુરત્થિમિલ્લે ચરિમંતે સમોહયા
પુરત્થિમિલ્લે ચરિમંતે ઉવવાહયા' એવમ્—અનેનેવ પ્રકારેણ યથેવ—યેનેવ રૂપેણ પૌર-
સ્ત્યે ચરમાન્તે સમવહતાઃ પૌરસ્ત્યે એવ ચરમાન્તે ઉપપાતિતાઃ, 'તદેવ પુરત્થિમિલ્લે
ચરિમંતે સમોહયા પ્ચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે ઉવવાણ્ણવા સવ્વે' તથેવ તેનેવ રૂપેણ

કહતે હૈ—'ગોયમા । એકસમહણ વા દુસમહણ વા તિસમહણ વા
ચતુસમહણ વા વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા' હે ગૌતમ ! વહ વહાં એક-
સમયવાલે વિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ અથવા દો સમયવાલે વિગ્રહ
સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ અથવા ત્રીણ સમયવાલે વિગ્રહ સે ઉત્પન્ન
હોતા હૈ, અથવા ચાર સમયવાલે વિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।
'સે કેણદ્દેણં મંતે ! 'હે ભદન્ત ! એલા આપ ફિસ કારણસે કહતો હૈ કિ
વહ વહાં એકસમયવાલે વિગ્રહ સે યાવત્ ચારસમયવાલે વિગ્રહસે ઉત્પન્ન
હોતા હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈ—'એવં જહેવ પુરત્થિમિલ્લે ચરિમંતે
સમોહયા પુરત્થિમિલ્લે ચેવ ચરિમંતે ઉવવાહયા' હે ગૌતમ ! જિસ
પ્રકાર સે પૌરસ્ત્ય ચરમાન્ત મેં સમવહત હુણ જીવ પૌરસ્ત્ય ચરમાન્ત
મેં હી ઉત્પાદિત કિયે ગયે હૈ 'તદેવ પુરત્થિમિલ્લે ચરિમંતે સમોહયા
પ્ચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે ઉવવાણ્ણવા' ઉસી પ્રકાર સે પૌરસ્ત્ય ચરમાન્ત

આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—'ગોયમા । એકસમહણ વા દુસમહણ
વા તિસમહણ વા, ચતુસમહણ વા વિગ્રહેણં ઉવવજ્જેજ્જા' હે ગૌતમ ।
તે ત્યાં એક સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે, બે સમયવાળી વિગ્રહ
ગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે, અથવા ત્રણ સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય
છે, અથવા ચાર સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે, 'સે કેણદ્દેણં મંતે
હે ભગવન્ આપ એવું શા કારણથી કહે છે કે—તે ત્યાં એક સમયવાળી
વિગ્રહગતિથી યાવત્ ચાર સમયવાળી વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે ? આ
પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે—'એવં જહેવ પુરત્થિમિલ્લે
ચરિમંતે સમોહયા પુરત્થિમિલ્લે ચેવ ચરિમંતે ઉવવાહયા' હે ગૌતમ ! બે પ્રમાણે
પૂર્વ ચરમાન્તમાં સમુદ્ધાત કરેલ એવ પૂર્વ ચરમાન્તમાં જ ઉત્પન્ન થવાના
સૂબંધમાં કથન કર્યું છે, 'તદેવ પુરત્થિમિલ્લે ચરિમંતે ! સમોહયા પ્ચ્ચત્થિમિલ્લે
ચરિમંતે ઉવવાણ્ણવા' એજ પ્રમાણે પૂર્વ ચરમાન્તમાં સમુદ્ધાત કરેલ એવાનો

पौरस्त्ये-पूर्वस्मिन् चरमान्ते समवहताः पाश्चात्ये-पश्चिमे चरमान्ते उपपातयित्वाः सर्वे अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्ता इति । 'अपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइए णं भंते !' अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! 'लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहए' लोकस्य पौरस्त्ये पूर्वचरमान्ते समवहतो भारणान्तिकसमुद्धातं कृतवान् । 'समोहणित्ता जे भविए लोगस्स उत्तरिल्ले चरिंते अपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जत्तए से णं भंते !' समवहत्य यो भव्यो लोकस्योत्तरे चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया समुत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येतेति प्रश्नः । उत्तरमाह-एवं जहेव' इत्यादि । 'एवं जहा पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहओ' एवं

में समवहत हुए जीवों को पश्चिम चरमान्त में उत्पादित कर लेना चाहिये । अर्थात् समस्त अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक तकके एकेन्द्रिय जीवों वा पूर्वोक्त जीवों के जैसा ही उत्पाद पूर्वचरमान्त से पश्चिम चरमान्त में कर लेना चाहिये ।

'अपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइए णं भंते !' हे भदन्त ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव 'लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहए समोहणित्ता० अपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जत्तए से णं भंते !' लोकके पूर्वचरमान्त में भारणान्तिकसमुद्धात करके मरा और मरकर वह लोकके उत्तर चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूपसे उत्पन्न होने के प्रोग्य हुआ तो है भदन्त ! ऐसा वह जीव वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? उत्तर में प्रभु कहते हैं-'एवं जहा पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहओ दाहिणिल्ले चरि-

उत्पाद पश्चिम चरमान्तमां उत्पन्न थवाना संणधमां कथन क्खी देवु' लो०अ०. अर्थात् सधना अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकथी लधने पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक सुधीना अेकेन्द्रिय अवेना पडेला कडेल अवेनी नेम अ पूर्वचरमान्तथी पश्चिमचरमान्तमां उत्पाद क्खी देवो.

जपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !' हे लगवन् अे अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक अथ 'लोगस्स पुरत्थिमिल्ले चरिंते समोहए समोहणित्ता० अपञ्जत् सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जत्तए से णं भंते !' लोकना पूर्व चरमान्तमां भारणान्तिक समुद्धात करीने मरणु पाभे अने मरणु पाभीने ते लोकना उत्तर चरमान्तमां अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक पण्णथी उत्पन्न थवाने योग्य होय तो हे लगवन् अेवो ते अथ त्यां केटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय अे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुथी कडे अे के-'एवं जहा पुरत्थिमिल्ले चरिंते ! समोहओ

यथा पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः, 'दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ' दाक्षिणात्ये चरमान्ते उपपातितः, 'तहा पुरत्थिमिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो' तथा-पौरस्त्ये समवहतः उत्तरे चरमान्ते उपपातयितव्यः । यथा पूर्वदिशि समवहतस्य दक्षिणस्यां दिशि समुत्पादो वर्णित स्तथैव पूर्वदिशि समवहतस्य उत्तरदिशि अपि समुत्पादो वर्णयितव्यः सू० ॥६॥

मूलम्-अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जत्ताए । एवं जहा पुरत्थिमिल्ले समोहओ पुरत्थिमिल्ले चेव उववाइओ तहेव दाहिणिल्ले समोहए दाहिणिल्ले चेव उववाएयव्वो । तहेव निरवसेसं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्ताओ सुहुमवणस्सइकाइएसु चेव पज्जत्ताएसु दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ, एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चत्थिमिल्ले उववाएयव्वो । नवरं दुसमइय तिसमइय-चउसमइय विग्गहो, सेसं तहेव । दाहिणिल्ले

मंते उववाइओ तहा पुरत्थिमिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो' हे गौतम ! जिस प्रकार से लोकके पूर्वचरमान्त में समवहत हुए जीव के दक्षिण चरमान्त में उत्पाद के विषय में कहा गया है, उसी प्रकारसे लोकके पूर्वचरमान्त में समवहत हुए जीवके उत्तर चरमान्त में उत्पाद के सम्बन्ध में भी कह लेना चाहिये । तात्पर्य कहने का यही है कि पूर्वदिशा में समवहत हुए जीवका दक्षिण दिशा में जैसा उत्पाद वर्णित हुआ है उसी प्रकार से पूर्वदिशा में समवहत हुए जीव का उत्तर दिशा में भी उत्पाद वर्णित कर लेना चाहिये ॥सू० ॥६॥

दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ तहा पुरत्थिमिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो' हे गौतम ! जे प्रमाणे लोकना पूर्व चरमान्तमां समुद्घात करेत्त उनना दक्षिण चरमान्तमां उपपात थवाना संणंधमां कडेवामां आवेत्त छे, जेज प्रमाणे लोकना पूर्व चरमान्तमां समुद्घात करेत्त उनना उत्तर चरमान्तमां उत्पन्न थवाना संणंधमां पणु कडेवुं लेत्तछे. कडेवानुं तात्पर्य छे छे के-पूर्व दिशांमां समुद्घात करेत्त उनना उपपात उत्तर दिशांमां पणु पणुं करी देवे लेत्तछे. ॥सू०६॥

समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्टाणे तहेव ।
 एगसमइय-दुसमइय-तिसमइय-चउसमइय विग्गहां । पुर-
 तिथिमिल्ले जहा पच्चत्थिमिल्ले तहेव दुसमइय-तिसमइय चउसम-
 इय विग्गहो । पच्चत्थिमिल्ले य चरिमंते समोहयाणं पच्चत्थि-
 मिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहा सट्टाणे उत्तरिल्ले उववज्जमाणाणं
 एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तहेव । पुरत्थिमिल्ले जहा सट्टाणे,
 दाहिणिल्ले एगसमइओ विग्गहो नत्थि । सेसं तं चेव उत्तरिल्ले
 समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्टाणे । उत्त-
 रिल्ले समोहयाणं पुरत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव नवरं
 एगसमइओ विग्गहो नत्थि । उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले
 उववज्जमाणाणं जहा सट्टाणे । उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थि-
 मिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि । सेसं तहेव
 जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु
 पज्जत्तएसु चेव ॥सू०७॥

छायाः—अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त । लोकस्य दाक्षिणात्ये चर-
 मान्ते समवहतः, समवहत्य यो भव्यो लोकस्य दाक्षिणात्ये एव चरमान्ते अपर्याप्त
 सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उपपत्तुम् । एवं यथा पौरस्त्ये समवहतः, पौरस्त्ये एवो-
 पपातित स्तथैव दाक्षिणात्ये समवहतो दाक्षिणात्ये एव उपपातयितव्यः । तथैव
 निरवशेषं यावत्सूक्ष्मवनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेणैव पर्या-
 प्तकेषु दाक्षिणात्ये चरमान्ते उपपातितः । एवं दाक्षिणात्ये समवहतः पाश्चात्ये
 चरमान्ते उपपातयितव्यः । नवरं द्विसामयिकः त्रिसामयिकः चतुःसामयिक
 विग्रहः । शेषं तथैव । दक्षिणात्ये समवहतः औत्तरे चरमान्ते उपपातयितव्या यथैव
 स्वस्थाने तथैव । एक सामयिक—द्विसामयिक—त्रिसामयिक—चतुःसामयिक विग्रहः ।
 पौरस्त्ये यथा—पाश्चात्ये तथैव—द्विसामयिक—त्रिसामयिक—चतुःसामयिक विग्रहः ।
 पाश्चात्ये च चरमान्ते समवहतानां पाश्चात्ये एवोपपद्यमानानां यथास्वस्थाने, औत्तरे
 उत्पद्यमानानामेकसामयिको विग्रहो नास्ति शेषं तथैव । पौरस्त्ये यथा स्वस्थाने
 दाक्षिणात्ये एकसामयिको विग्रहो नास्ति शेषं तदेव । औत्तरे समवहताना

मौत्तरे एवोत्पद्यमानानां यथैव स्वस्थाने । औत्तरे समवहतानां पौरस्त्ये उत्पद्यमानानाम् एवमेव । नक्षरम् एकसामयिको दिग्रहो नास्ति । औत्तरे समवहतानां दाक्षिणात्ये उत्पद्यमानानां यथा स्वस्थाने । औत्तरे समवहतानां पाश्चात्ये उत्पद्यमानानामेकसामयिको दिग्रहो नास्ति, शेषं तथैव यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव ॥४॥

टीका—‘अपञ्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! ‘लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए’ लोकस्य दाक्षिणात्ये दक्षिणे चरमान्ते—मान्तभागे समवहतो—मारणान्तिकसमुद्घातं कृतवान् । ‘समोहणिता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चेव चरिमंते’ समवहत्य—मारणान्तिकसमुद्घातं कृत्वा यो भव्यो लोकस्य दक्षिणे एव चरमान्ते ‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया तादृशपृथिवीकायिकरूपेण समुत्पत्तुम्, स खलु भदन्त ! कृतिसामयिकेन विग्रहेण समुत्पद्येतेति पूर्ववदेव प्रश्नः । भगवान् पूर्वातिदेशेनाह—‘एवं जहा’ इत्यादि । ‘एवं जहा पुर-

‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स दाहिणिल्ले’ इत्यादि सू० ॥६॥

टीकार्थ—‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !’ हे भदन्त ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव ‘लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए’ लोक के दक्षिण चरमान्त में समवहत हुआ है और ‘समोहणिता’ समवहत होकर वह ‘जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चेव चरिमंते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ लोकके दक्षिण चरमान्त में ही अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक रूपसे उत्पन्न होने के योग्य हुआ है तो ‘से णं भंते !’ हे भदन्त ! वह वहाँ कितने समयवाले विग्रहसे उत्पन्न होता है ? इसका पूर्वातिदेश से उत्तर देते हुए प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं जहा

‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! लोगस्स दाहिणिल्ले’ इत्यादि

टीकार्थ—‘अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !’ हे भगवन् ने अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव ‘लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए’ लोकना दक्षिण चरमान्तभां समुद्घात करे छे. अने “समोहणिता” समुद्घात करीने ‘भविए लोगस्स दाहिणिल्ले पव चरिमंते अपञ्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए’ लोकना दक्षिण चरमान्तभां न अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पण्णथी उत्पन्न थवाने योग्य अनेल डोय ‘से णं भंते’ हे भगवन् ते त्यां डेटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नने उत्तर पडेला कडेल तेना अनिदेश

ત્થિમિલ્લે સમોહઓ પુરત્થિમિલ્લે ચેવ ઉવવાહઓ' એવં યથા-યેન પ્રકારેણ પૌરસ્ત્યે પૂર્વચરમાન્તે સમવહતો-મૃતઃ પૌરસ્ત્યે-પૂર્વે એવ ચરમાન્તે ઉપપાતિતઃ, 'તહેવં દાહિગિલ્લે સમોહણ દાહિગિલ્લે ચેવ ઉવવાણ્યવ્વો' યથૈવ દક્ષિણે ચરમાન્તે સમવહતઃ દક્ષિણે એવ ચરમાન્તે ઉપપાતયિતવ્યઃ, પૂર્વચરમાન્તે મૃતાનાં પૂર્વે એવ ચરમાન્તે સમુત્પચમાનાનાં યેન પ્રકારેણ ઉપપાતઃ કથિત રતથા તેનૈવ રૂપેણ દક્ષિણે ચરિમાન્તે સમવહતાનાં તત્રૈવોત્પચમાનાના મુપપાત પ્રકારસ્તુલ્યતયૈવ વર્ણનીયઃ । 'તહેવં નિરવસેસં' તથૈવ નિરવશેષ સર્વમપિ ઋણિતવ્યમ્, પ્રકારસ્તુ દર્શિત એવ । ક્રિયત્પર્યન્તં પૂર્વચરમાન્તપ્રકરણમ્ ઇહ ઋણિતવ્યં તત્રાહ- 'જાવ' ઇત્યાદિ । 'જાવ સુહુમવણસ્સહકાહઓ પજ્જત્તઓ સુહુમવણસ્સહકાહણસુ ચેવ પજ્જત્તણસુ દાહિગિલ્લે

પુરત્થિમિલ્લે સમોહઓ પુરત્થિમિલ્લે ચેવ ઉવવાહઓ' 'હે ગૌતમ । જિસ પ્રકાર સે પૂર્વચરમાન્ત મેં સમવહત હુઆ જીવ પૂર્વ હી ચરમાન્ત મેં ઉત્પાદિત પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ 'તહેવં દાહિગિલ્લે સમોહણ દાહિગિલ્લે ચેવ ઉવવાણ્યવ્વો' ઉસી પ્રકાર સે દક્ષિણ ચરમાન્ત મેં સમવહત હુણ જીવકા દક્ષિણ ચરમાન્ત મેં હી ઉત્પાદ કહ લેલા ચાહિયે । તાત્પર્ય યહી હૈ કિ પૂર્વચરમાન્ત મેં મૃતોંકા પૂર્વહી ચરમાન્ત મેં જિસ પ્રકાર સે ઉપપાત કહા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર સે દક્ષિણ ચરમાન્ત મેં સમવહત હુણ જીવોંકા દક્ષિણ ચરમાન્ત મેં ઉપપાત પ્રકટ કરના ચાહિયે । ઇસ સમ્બન્ધ મેં જો ઉપપાત પ્રકાર હૈ વહ સ્વષ્ટ એકસા હૈ । ઇમી લિયે' તહેવં નિરવસેસં' ઇસ સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારને 'સ્વષ્ટ કથન વૈસાહી હૈ' એસા કહા હૈ । પૂર્વચરમાન્ત પ્રકરણ યહાં કહાં તક કહને કે યોગ્ય કહા ગયા હૈ ? યહ વાત 'જાવ સુહુમવણસ્સહકાહઓ પજ્જત્તઓ સુહુમવણસ્સહકાહણસુ ચેવ પજ્જત્ત-

બલામણુ આપતા પ્રભુશ્રી ઠહે છે કે- 'એવ જહા પુરત્થિમિલ્લે સમોહઓ પુરત્થિમિલ્લે ચેવ ઉવવાહઓ' હે ગૌતમ । જે પ્રમાણે પૂર્વ ચરમાન્તમાં સમુદ્ધાત ઠરેલ છેવ પૂર્વચરમાન્તમાં જ ઉત્પન્ન થવાના સંબંધમાં કથન કરવામાં આવેલ છે. 'તહેવં દાહિગિલ્લે સમોહણ દાહિગિલ્લે ચેવ ઉવવાણ્યવ્વો' એજ પ્રમાણે દક્ષિણ ચરમાન્તમાં સમુદ્ધાત ઠરેલ છેવનેા ઉત્પાત દક્ષિણ ચરમાન્તમાંજ ઠહેવો નેઇએ. આ કથનતુ તાત્પર્ય એ છે કે પૂર્વ ચરમાન્તમાં મરણ પામેલાનેા ઉપપાત પૂર્વ ચરમાન્તમાં જ જે રીતે ઠહેલ છે એજ રીતે દક્ષિણ ચરમાન્તમાં સમુદ્ધાત ઠરેલ છેવેનેા ઉપપાત દક્ષિણ ચરમાન્તમાં ઠહેવો નેઇએ. આ સંબંધમાં ઉપપાતનેા જે પ્રકાર છે, તે એક સરખોજ છે. તેથી 'તહેવં નિરવસેસં' આ સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે "સઘળું" કથન એમ જ છે એમ ઠહેલ છે, પૂર્વ ચરમાન્ત પ્રકરણ અહીયાં કયાં કયાં સુધી ઠહેવું નેઇએ" એ વાત- 'જાવ સુહુમ વણસ્સહકાહઓ પજ્જત્તઓ સુહુમ

चरिमंते उववाइओ' यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव दक्षिणे चरिमान्ते उपपातितः। पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्तवनस्पतिकायिकान्ताः सर्वेऽपि एकेन्द्रिया अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य पर्याप्त वनस्पतिकायिकान्तेषु दक्षिणे लोकचरमान्ते समवहतानां दक्षिणे एव लोकचरमान्ते एकसामयिकादि यावत् चतुःसामयिकादि विग्रहेणोपपातिताः 'एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो' एवं यथा दक्षिणे समवहतस्य दक्षिणे एव चरिमान्ते उपपातो वर्णित एवमेव लोकस्य दक्षिणे चरमान्ते समवहतस्य लोकस्य पश्चिमे चरमान्ते उपपातो-

एसु दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ' सूत्रकार ने इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की है-इसके द्वारा उन्होंने यह समझाया है कि जिस प्रकार से यावत् पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक जीव पर्याप्तक सूक्ष्मवनस्पतिकायिक रूपसे दक्षिण चरमान्त में ही उपपातित प्रकट किया गया है। अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्तवनस्पतिकायिकान्त समस्त एकेन्द्रिय जीव, अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर पर्याप्तसूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्तों में लोकके दक्षिण चरमान्तमें उनके समवहत होने पर लोकके दक्षिण चरमान्त में ही जिस रूपसे एकसमयवाले विग्रह से दो समयवाले विग्रह से तीनसमयवाले विग्रह से और चार समयवाले विग्रह से उपपादित प्रकट किये गये हैं 'एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो' इसी प्रकार से लोकके दक्षिण चरमान्त में समवहत हुए जीव का पश्चिम

वणस्सइकाइएसु वेव पज्जत्तएसु दाहिणिल्ले चरिमंते। उववाइओ' सूत्रकारे आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करेला छे. आ कथनथी तेओओ ओ समअण्युं छे के ओ प्रमाणे यावत् पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक एव पर्याप्तक सूक्ष्म वनस्पतिकायिक पण्णथी दक्षिण चरमान्तमां न उत्पन्न थवना संअंधमां कथन कथुं छे. अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकधी लधने पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक सुधीना सधणा ओकेन्द्रियवाणा एवे, अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकधी लधने पर्याप्त वनस्पति कायिकेमां लोकना दक्षिण चरमान्तमां तेओना समइघात करवाथी लोकना दक्षिण चरमान्तमां न न इपथी-ओक समयवाणी विग्रहगतिथी, ओ समयवाणी विग्रह गतिथी त्रयु समयवाणी विग्रहगतिथी अने चार समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थवना संअंधमां कथन करवामां आवेला छे. 'एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चत्थिमिल्ले ! चरिमंते उववाएयव्वो' ओन प्रमाणे लोकना दक्षिण चरमान्तमां समुइघात करेला एवने उपपात पश्चिम

ऽपि वक्तव्य इति । परन्तु पूर्वापेक्षया यद् वैलक्षण्यं तद्दर्शयति 'नवरं' इत्यादि 'नवरं दुसमइय-तिसमइय-चउसमइय विग्रहो' नवरम्-केवलं वैलक्षण्यमिदमेव यत् द्विसामयिक-त्रिसामयिक-चतुःसामयिको विग्रहो वर्णनीयो न तु एकसामयिको विग्रहोऽत्र सम्भवति । 'सेसं तहेव' शेषं नवरमित्यादिना यत्कथितं तदतिरिक्तं सर्वमुत्पातप्रकारादिकं पूर्ववदेव तत्र नास्ति किमपि वैलक्षण्यमिति । 'दाहिणिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्टाणे' दक्षिणे लोकचरमान्ते समवहतः उत्तरचरमान्ते उपपातयितव्यः, यथैव स्वस्थाने । स्वस्थाने इति यत्र चरमान्ते समवहत स्तत्रैव चरमान्ते उपपातो भवति, तथाविधे स्वस्थाने इति ।

चरमान्त में भी उपपात कह लेना चाहिये । परन्तु पूर्व के प्रकरण की अपेक्षा जो इस प्रकरण में अन्तर है वह 'नवरं दुसमइय य तिसमइय चउसमइय विग्रहो' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट किया गया है अर्थात् इस प्रकरण में केवल एक समयवाला विग्रह नहीं कहना चाहिये । किन्तु दो समयवाला तीन समयवाला और चारसमयवाला विग्रह कहना चाहिये । एकसमयवाला विग्रह यहां संभचित नहीं हो सकने से वक्तव्य नहीं कहा गया है । 'सेसं तहेव' इसके अतिरिक्त और सब उपपातादि सम्बन्धी कथन और उपपात पूर्वोदित जैसा ही है । उसमें कोई अन्तर नहीं । 'दाहिणिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्टाणे' स्वस्थान के जैसा दक्षिण चरमान्त में मरण और उत्तर चरमान्तमें उपपात कहना चाहिए । जिस चरमान्त में समवहत 'समुद्घात' हुआ जीव उसी चरमान्त में जो उत्पन्न होता है वह स्वस्थान है-

चरमान्तमां पथु ढडेवो नेधओ परतु पडेलाना कथननी अपेक्षाओ आ प्रकरणुमां ने अंतर-इरक्षर छे, ते 'नवरं दुसमइय तिसमइय चउसमइय विग्रहो' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करवामां आवेल छे. अर्थात् आ प्रकरणुमां केवल ओक समयवाणी विग्रहगति ढडेवी न नेधओ परंतु ते समय, त्रथु समय अने चार समयनी विग्रहगति ढडेवी नेधओ. ओक समयवाणी विग्रहगति अहियां संभवित न थउ शकवाथी तेनु' कथन कथु नथी. 'सेसं तहेव' आ कथन शिवाय उपपात विगरे सधणु' कथन अने उपपातनो प्रकार पडेलां कथा प्रमाणे न छे तेमां केध न इरक्षर ढडेव नथी. 'दाहिणिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्टाणे' स्वस्थानना कथन प्रमाणे दक्षिण चरमान्तमां मरण अने उत्तर चरमान्तमा उपपात ढडेवो नेधओ. ने चरमान्तमां समुद्घात करेव एव ओव चरमान्तमां ने उत्पन्न थाय छे, ते स्वस्थान ढडेवाय छे. नेम के लोकना पूर्व चरमान्तमां समुद्घात करेव एव

તહા- 'તદેવ એકસમય-દુસમય-તિસમય-ચડસમય વિગ્રહો' તથેવ પૂર્વોક્ત-
 દેવ એકસામયિક-દ્વિસામયિક-ત્રિસામયિક-ચતુઃસામયિકો વિગ્રહો ભવતીતિ ।
 'પુરત્થિમિલ્લે જહા પચ્ચત્થિમિલ્લે તદેવ દુસમય-તિસમય-ચડસમય વિગ્રહો'
 દક્ષિણે લોકચરમાન્તે સમવહત્ય પૌરસ્ત્યે ચરમાન્તે ઉપપાતસ્તુ યથા-દક્ષિણે
 સમવહતસ્ય પશ્ચિમે કથિત સ્તથેવ દ્વિસામયિક-ત્રિસામયિકો વિગ્રહો વર્ણયિતવ્યઃ,
 ઉપપાતપ્રકારઃ સમગ્રોઽપિ સ્વયમેવોદનીયઃ, 'પચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે સમોદયાણં
 પચ્ચત્થિમિલ્લે ચેવ ઉવવજ્જમાણાણં જહા સદ્દાણે' પશ્ચિમે ચરમાન્તે સમવહતાનાં

જેસે લોકકે પૂર્વ ચરમાન્ત મેં સમવહત છુઝા જીવ જમ્મ લોકકે હી
 પૂર્વચરમાન્ત મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો યહ સ્વસ્થાન ઉત્પાત હૈ । સ્વસ્થાન
 મેં ઉત્પન્ન છુએ જીવકો વહાં ઉત્પન્ન હોને મેં એકસમયવાલા વિગ્રહ મી
 હોતા હૈ દોસમયવાલા વિગ્રહ મી હોતા હૈ, ત્રીન સમયવાલા
 વિગ્રહ મી હોતા હૈ ઓર ચારસમયવાલા વિગ્રહ મી હોતા હૈ ।
 હસી પ્રકાર સે દક્ષિણ ચરમાન્ત મેં સમવહત છુએ જીવ ઉત્તર ચર-
 માન્ત મેં ઉત્પન્ન હોને પર વહો પર મી ઉસે ણેસે હી સમયવાલા
 વિગ્રહ હોતા હૈ । 'પુરત્થિમિલ્લે જહા પચ્ચત્થિમિલ્લે તદેવ દુસમય
 તિસમય ચડસમય વિગ્રહો' પશ્ચિમ ચરમાન્ત કે જેસા પૂર્વચરમાન્ત
 મેં દો સમયવાલા, ત્રીનસમયવાલા ઓર ચારસમયવાલા વિગ્રહ હોતા
 હૈ । હસ સમ્બન્ધ મેં ઉપપાત પ્રકાર સ્વપૂર્ણરૂપસે અપને આપ ઉદ્ભા-
 વિત કર લેના ચાહિયે । 'પચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે સમોદયાણં પચ્ચત્થિ-
 મિલ્લે ચેવ ઉવવજ્જમાણાણં જહા સદ્દાણે' પશ્ચિમ ચરમાન્ત મેં સમુદ્ઘાત

ન્યારે લોકના પૂર્વચરમાન્તમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે, તો તે સ્વાસ્થાનમાં
 ઉત્પાદ કહેવાય છે. સ્વસ્થાનમાં ઉત્પન્ન થયેલા જીવને ત્યાં ઉત્પન્ન થવામાં
 એક સમયવાળી વિગ્રહગતિ પણ હોય છે, બે સમયવાળી વિગ્રહગતિ
 પણ હોય છે, ત્રણ સમયવાળી વિગ્રહગતિ પણ હોય છે. અને ચાર સમયવાળી
 વિગ્રહગતિ પણ હોય છે. એજ રીતે દક્ષિણ ચરમાન્તમાં સમુદ્ઘાત કરેલ જીવને
 ઉત્તર ચરમાન્તમાં ઉત્પન્ન થાય ત્યારે પણ તેને આ પ્રમાણેના સમયવાળી વિગ્રહ-
 ગતિ હોય છે. 'પુરત્થિમિલ્લે જહા પચ્ચત્થિમિલ્લે તદેવ દુસમય તિસમય
 ચડસમય વિગ્રહો' પશ્ચિમ ચરમાન્તના કથન પ્રમાણે પૂર્વ ચરમાન્તમાં
 બે સમયવાળી ત્રણ સમયવાળી અને ચાર સમયવાળી વિગ્રહગતિ હોય છે. આ
 વિષય સંબંધી ઉપપાતને પ્રકાર સંપૂર્ણપણાથી સ્વયં બનાવી સમજ લેવો જોઈએ.
 'પચ્ચત્થિમિલ્લે ચરિમંતે સમોદયાણં પચ્ચત્થિમિલ્લે ચેવ ઉવવજ્જમાણાણં જહા
 સદ્દાણે' પશ્ચિમ ચરમાન્તમાં સમુદ્ઘાત કરીને પશ્ચિમ ચરમાન્તમાં જ ઉત્પન્ન

पश्चिमे एव चरमान्ते उत्पद्यमानानां यथा स्वस्थाने उपपातः कथितस्तथैव एकसामयिक विग्रहादारभ्य यावत् चतुःसामयिको विग्रहो व्यावर्णनीय इति । 'उत्तरिल्ले उववज्जमाणणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तहेव' पश्चिमे समवहताना मुत्तरे लोकचरमान्ते समुत्पद्यमानानामेकसामयिको विग्रहो नास्ति- न भवति, द्वि त्रि चतुःसामयिकविग्रहास्तु सन्त्येव, शेषम्-उपपातप्रकारादिकं सर्वं तु पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति । 'पुरत्थिमिल्ले जहा सट्टाणे' पाश्चात्ये समवहतानां पौरस्त्ये पूर्वचरमान्तविषये उत्पद्यमानानां यथा-स्वस्थाने समुद्घातोपपातयोरेक स्थानरूपे कथितं तथैव इहापि सर्वं ज्ञातव्यमिति । 'दाहिणिल्ले

करके पश्चिम ही चरमान्त में उत्पन्न हुए पृथिवीकायिक आदि जीवों के सम्बन्ध में जैसा उपपात स्वस्थान में कहा गया है उसी प्रकार से वह वहाँ एक समयवाला यावत् चार समयवाला होता है ऐसा कह लेना चाहिये । 'उत्तरिल्ले उववज्जमाणणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि-सेसं तहेव' पश्चिमदिशा से लम्बवहत हुए जीवों के उत्तर चरमान्त में उपपात होने पर वहाँ उनके उपपात में एकसमयवाला विग्रह नहीं होता है किन्तु दो समयवाला यावत् चार समयवाला विग्रह होता है । बाकीका और सब उपपात प्रकार आदि का कथन पूर्वोक्त जैसा ही है । 'पुरत्थिमिल्ले जहा सट्टाणे' पश्चिम चरमान्त में समवहत हुए जीवों के पूर्वचरमान्त में उत्पन्न होने पर वहाँ स्वस्थान के उत्पाद के जैसा उत्पाद कहना चाहिये । अर्थात् वे जीव वहाँ एकसमयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होते हैं दो समयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होते हैं तीनसम-

थयेला पृथ्वीकायिक विगरे लोवेना सम्बन्धमां स्वस्थानमां के रीते उपपात कडेला छे, ओज रीते ते त्यां ओक समयवाणे यावत् चार समयवाणे डोय छे, तेम समजपुं. 'उत्तरिल्ले उववज्जमाणणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तहेव' पश्चिम दिशामां समुद्घात करेला लोवेना उपपात उत्तर चरमान्तमां थाय त्यारे त्यां तेना उपपातमां ओक समयवाणी विग्रहगति डोली नथी. परंतु के समयवाणी यावत् चार समयवाणी विग्रहगति डोय छे. बाकीनु उपपात विगरे सधणुं कथन पडेलां कथा प्रमाणेनुं ज छे. 'पुरत्थिमिल्ले जहा सट्टाणे' पश्चिम चरमान्तमां समुद्घात करेला लोवे पूर्व चरमान्तमां उत्पन्न थाय त्यारे त्यां स्वस्थानना उत्पादना कथन प्रमाणे उपपाद कडेवे लेधमे. अर्थात् ते लोवे त्यां ओक समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, के समय वाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे, त्रणु समयवाणी विग्रहगतिथी पणु

एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तं-चेव' पाश्चात्थे समवहतानां दक्षिणचरमान्ते उत्पद्यमानानाम् एकसामयिका विग्रहो नास्ति शेष मन्यत्सर्वं पूर्ववदेवेति ।

‘उत्तरिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्ठाणे’ उत्तरे चरमान्ते समवहताना मुत्तरे एव चरमान्ते समुत्पद्यमानानां यथैव स्वस्थाने एकसामयिकादारभ्य यावत् चतुःसामायको विग्रहो वर्णनीयः । ‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पुरत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव’ उत्तरचरमान्ते समवहतानां पौरस्त्ये पूर्वचरमान्ते समुत्पद्यमानाना मेवमेव । उत्तरे समवहताना मुत्तरे एव समुत्पद्यमानानां यथा कथितं तथैव ज्ञातव्यम् । ‘नवरं एगसमइओ विग्गहो

यवाले विग्रह से भी उत्पन्न होते हैं और चारसमयवाले विग्रह से भी उत्पन्न होते हैं । ‘दाह्णिणिल्ले एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तं चेव’ पश्चिम चरमान्त में समवहत जीवों के दक्षिण चरमान्त में उत्पन्न होने पर एक समयवाला विग्रह नहीं होता है । इसके अतिरिक्त और सब कथन पूर्वके जैसा ही है ।

‘उत्तरिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्ठाणे’ लोकके उत्तर चरमान्त में समवहत हुए जीवोंका उत्तर चरमान्त में ही उत्पन्न होने के सम्बन्ध में एक समय से लेकर यावत् चारसमयतक का विग्रह होता है । ऐसा जानना चाहिये । ‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पुरत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव’ उत्तर चरमान्त में समवहत हुए जीवों का पूर्वदिशा में उपपात होने के सम्बन्ध में भी दो समय से लेकर चारसमय तकका विग्रह होता है । यहाँ एक-

उत्पन्न थाय छे, चार समयवाणी विग्रहगतिथी पणु उत्पन्न थाय छे. ‘दाह्णिणिल्ले एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तं चेव’ पश्चिम चरमान्तमां समुद्घात करेद एव दक्षिण चरमान्तमा उत्पन्न थाय त्यारे ओक समयवाणी विग्रहगति डोती नथी. आ शिवाय सघणुं कथन पडेला कट्ठा प्रमाणे छे. तेम सम्भवुं.

‘उत्तरिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्ठाणे’ के कता उत्तर चरमान्तमां समुद्घात करेद एवोना उत्तर चरमान्तमां उत्पन्न थवाना संभंधमां ओक समयथी लधने यावत् चार समय सुधीनी विग्रहगतिथी डोय छे. ‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पुरत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव’ उत्तर चरमान्तमां समुद्घात करेद एवोना उपपात पूर्वदिशां थवाना संभंधमां पणु ओ समयथी लधने चार समय सुधी विग्रहगति डोय छे. अडियां ओक समयनी विग्रहगति डोती नथी. ओज वात ‘नवरं एगसमइओ विग्गहो नत्थि’ आ सूत्रपाठद्वारा प्रगट करवांमां आवेद छे.

नत्थि' नवरं केवलम् एकसामयिको विग्रहो नास्ति—न वक्तव्यः किन्तु द्वयादि सामयिक एव विग्रहो वक्तव्य इति । 'उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले उववज्जमाणाणं जहा सट्टाणे' उत्तरे चरमान्ते समवहतानां दक्षिणे चरमान्ते समुपघमानानां यथा स्वस्थाने एकसामयिकादारभ्य चतुःसामयिको विग्रहो वक्तव्य इति । 'उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तहेव' उत्तरे लोकचरमान्ते समुत्पद्यमानानां एकसामयिको विग्रहो न भवति, किन्तु द्वयादि सामयिक एव विग्रहो दर्शयितव्यः । शेषम्—प्राथमिक विग्रहव्यतिरिक्तं सर्वं पूर्ववदेव वर्णनीयम् । कियत्पर्यन्तं पूर्वप्रकरणसमुस्मरणीयम्, 'तत्राह—'जाव' इत्यादि । 'जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइ

समयका विग्रह नहीं होता है । यही बात 'नवरं एगसमइओ विग्गहो नत्थि' हल सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है ।

'उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले उववज्जमाणाणं जहा सट्टाणे' उत्तर चरमान्त में समवहत हुए जीवों के दक्षिण चरमान्त में उपपात के सम्बन्ध में उनके स्वरधान में उत्पाद होने के जैसा ही एकसमयवाला दो समयवाला तीनसमयवाला और चारसमयवाला विग्रह होता है ऐसा जानना चाहिये । 'उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि, सेसं तहेव' लोकके उत्तर चरमान्त में समवहत हुए जीवों का पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न होने के सम्बन्ध में दो समयवाले विग्रह से लेकर चार समयवाला विग्रह होता है । यहाँ एकसमयवाला विग्रह नहीं होता है ऐसा जानना चाहिये । बाकी का और सब कथन पूर्वके जैसा ही है । 'जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव'

'उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले उववज्जमाणाणं जहा सट्टाणे' उत्तर चरमान्तमां समुद्घात करेत्त एवेने उपात्त दक्षिण चरमान्तमां डोवाना संभंधमां तेओने स्वस्थानमां उत्पाद डोवानी नेमए ओक समयवाणी, डे समयवाणी, त्रए समयवाणी अने चार समयवाणी विशुद्धगति डोय छे. तेम समएवु. 'उत्तरिमिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि सेसं तहेव' लोकना उत्तर चरमान्तमां समुद्घात करेत्त एवेने उपात्त पश्चिम चरमान्तमां थवाना संभंधमां डे समयवाणी विशुद्धगतिथी लधने चार समयवाणी विशुद्ध गति डोय छे. अडियां ओक समयवाणी विशुद्धगति डोती नथी तेम समएवु आकीनुं भीणुं सधणुं कथन पडोला कथा प्रभाणे ए छे 'जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव' आ कथन यावत्

काइएसु पज्जत्तएसु चेत्र' यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिकः पर्याप्तकः सूक्ष्मवनस्पति कायिकेषु पर्याप्तकेष्वेव । अत्र यावत्पदेन अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्तस्थ ग्रहणं भवति । द्वादशानां द्वादशस्थानेषु उपपातप्रकारः स्वयमेवोद्दनीय इति ॥सू०७॥

एवमुत्पादमधिकृत्य एकेन्द्रियप्ररूपणा कृता, अथ तेषामेव स्थानादि प्ररूपणायाह—'कहिं णं भंते !' इत्यादि ।

मूलम्—कहिं णं भंते ! वायरपुढवीकाइया णं पज्जत्तगाणं
ठाणा पणत्ता ? गोयमा ! सट्टाणेणं अट्टसु पुढवीसु जहा ठाण-
पदे जाव सुहुमवणस्सइकाइया जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते
सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्ना पन्नत्ता
समणाउसो ! अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्म-
पगडीओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ,
तं जहा नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं । एवं चउक्कएणं भेएणं
जहेव एगिंदियसएसु जाव वायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ।
अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ बंधंति ?
गोयमा ! सत्तविह बंधगा वि, अट्टविह बंधगा वि, जहा एगिं-

एवं यह कथन 'यावत् पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक का पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों में ही उपपात होता है' यहाँ तक कहना चाहिए यहाँ यावत्पद से अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर अपर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकान्त के जीवोंका ग्रहण हुआ है । तात्पर्य कहनेका यही है कि १२ प्रकार के जीवोंका १२ प्रकार के स्थानों में उपपात कहना और इस सम्बन्ध में उपपात प्रकार अपने आप उद्भावित कर लेना चाहिए ॥सू०७॥

पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिकोना पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पति कायिकोमां ७ उपपात थाय छे आ कथन सुधी कडेपुं लेछेअे अहियां यावत्पदथी अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लधने अपर्याप्त सूक्ष्म वनस्पति कायिक सुधीना एवेा ग्रहण कराया छे अडेवानुं तात्पर्य अे छे के-१२ आ.२ प्रकारना एवेानो १२ आर प्रकारना स्थानोमां उपपात कडेवेा अने आ स'बंधमा उपपात प्रकार स्वयं अनापीने समल्ल देवेा लेछेअे, ॥सू०७॥

दिय सप्तसु जाव पज्जत्त वायरवणस्सइकाइया । अपज्जत्तसुहुम-
पुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वेदंति ? गोयमा !
चोदस्स कम्मपगडीओ वेदंति, तं जहा नाणावरणिज्जं जहा
एगिंदियसप्तसु जाव पुरिसवेदवज्जं । एवं जाव वायरवणस्सइ-
काइयाणं पज्जत्तगाणं । एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति, किं
नेरइएहिंतो उववज्जंति ? जहा वक्कंतीए पुढवीकाइयाणं उव-
वाओ । एगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्घाया पन्नत्ता ? गोयमा !
चत्तारि समुग्घाया पन्नत्ता, तं जहा—वेयणा समुग्घाए जाव
वेउट्ठिवयसमुग्घाए ४ । एगिंदिया णं भंते ! किं तुल्लट्ठिइया तुल्ल-
विसेसाहियं कम्मं पकरंति । तुल्लट्ठिइया वेमाय विसेसाहियं कम्मं-
पकरंति ? वेमायट्ठिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरंति, वेमाय-
ट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरंति ? गोयमा ! अत्थे-
गइया तुल्लट्ठिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरंति, अत्थेगइया
तुल्लट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरंति । अत्थेगइया
वेमायट्ठिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरंति । अत्थेगइया
वेमायट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरंति । से केणट्ठेणं
भंते ! एवं चुच्चइ ? अत्थेगइया तुल्लट्ठिइया जाव वेमायविसे-
साहियं कम्मं पकरंति ? गोयमा ! एगिंदिया चउट्ठिवा पन्नत्ता,
तं जहा—अत्थेगइया सम्माउया समोववन्नगा । १ । अत्थेगइया
समाउया विसमोववन्नगा । २ । अत्थेगइया विसमाउया समो-
ववन्नगा । ३ । अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा । ४ ।
तत्थ णं जे ते सम्माउया समोववन्नगा तेणं तुल्लट्ठिइया तुल्ल-
विसेसाहियं कम्मं पकरंति १ । तत्थ णं जे ते समाउया विसमो-
ववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरंति २ ।

तत्थ णं जे ते विसमाउथा समोववन्नगा ते णं वेमायट्टिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेति ३ । तत्थ णं जे ते विसमाउथा विसमोववन्नगा ते णं वेमायट्टिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेति ४ । से तेणट्टेणं गोयसा ! जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेति ! सेवं भंते ! सेवं भंतं ! त्ति जाव विहरइ ॥सु० ८॥

चउतीसइमे सए पढमे एगिंदियसए पढमो उद्देशो समत्तो । ३४-२।

छाय—कुत्र खलु भदन्त ! वादर पृथिवीकायिकानां पर्याप्तज्ञानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि ? गौतम ! स्वस्थानेनाष्टासु पृथिवीषु यथा स्थानपदे यावत् सृष्टमवनस्पतिकायिका ये च पर्याप्तका ये चापर्याप्तका स्ते सर्वे एकविधा अविशेषा अनानात्वाः, सर्वलोके पर्याप्तनाः प्रज्ञप्ताः श्रमणासृष्टम् ! अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृताः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! अप्पत्ती कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—ज्ञानावरणीयं यावदन्तरायिकम् । एवं चतुष्केन भेदेन यथैव एकेन्द्रियशतकेषु यावद् वादरवनस्पतिकायिकानां पर्याप्तज्ञानाम् । अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्म प्रकृतीर्वन्ति ? गौतम ! सप्त विधवन्धका अपि अष्टविधवन्धका अपि, यथा एकेन्द्रियशतकेषु यावत् पर्याप्ता वादरवनस्पतिकायिकाः । अपर्याप्तं सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति कर्मप्रकृति वेदयन्ति ? गौतम ! चतुर्दशकर्मप्रकृति वेदयन्ति । तद्यथा—ज्ञानावरणीयं यथा एकेन्द्रियशतेषु यावत्पुरुषवेदवधम् । एवं यावद् वादरवनस्पतिकायिकानां पर्याप्तज्ञानाम् । एकेन्द्रियाः । एकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत्र उत्पद्यन्ते ? किं नैरयिकेभ्य उत्पद्यन्ते ? यथा व्युत्क्रान्तौ पृथिवीकायिकानामुपपातः । एकेन्द्रियाणां भदन्त ! कति समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! चत्वारः समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—वेदनासमुद्घातो ? यावद् वैक्रियसमुद्घातः ४ एकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! किं तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? विमात्रस्थितिका स्तुल्य विशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? विमात्रस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! अस्त्येकके तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । अस्त्येकके तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति अस्त्येकके विमात्रस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते अस्त्येकके तुल्यस्थितिका यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! एकेन्द्रियाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ता तद्यथा—अस्त्येकके समायुष्काः समोपपन्नकाः ? अस्त्ये-

कके समायुष्का विषमोपपन्नकाः २ । अस्त्येकके विषमायुष्काः समोपपन्नकाः ३ । अस्त्येकके विषमायुष्काः विषमोपपन्नकाः ४, तत्र खलु ये ते समायुष्काः समोपपन्नकास्ते खलु तुल्यस्थितिका स्तुल्य विशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति १ तत्र खलु ये ते समायुष्का विषमोपपन्नका स्ते खलु तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति २ तत्र खलु ये ते विषमायुष्काः समोपपन्नकाः ते खलु विमात्रस्थितिका स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ३ तत्र खलु ये ते विषमायुष्का विषमोपपन्नका स्ते खलु विमात्रस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ४ तत्तेनार्थेन गौतम ! यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥सू० ८॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमे एकेन्द्रियशते प्रथमोद्देशकः समाप्तः ।

टीका—‘कहि णं भंते ! वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता’ कुत्र खलु भदन्त ! वादरपृथिवीकाइकानां पर्याप्तता गुणविशिष्टानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि—कथितानि, इति स्थानविषयकः प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सट्ठाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ स्वस्थानेनाण्टसु पृथिवीसु रत्नप्रभापृथिवीत आरभ्य तमस्तमापृथिवी पर्यन्तासु सप्तसु, अष्टम्यां च ईष-

इस प्रकार से उत्पादको आश्रित करके सूत्रकारने एकेन्द्रिय जीवों की प्ररूपणा की अब उन्हीं के स्थान आदिकों की प्ररूपणा के लिये वे सूत्र का कथन करते हैं—‘कहि णं भंते ! वायरपुढवीकाइयाणं’ इत्यादि

टीकार्थ—‘कहि णं भंते ! वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता’ हे भदन्त ! पर्याप्त वादपृथिवीकायिकोंके स्थान कहां पर कहे गये हैं । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ स्वस्थान की अपेक्षा से पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकोंके स्थान रत्नप्रभापृथिवी

आ रीते उत्पादने आश्रय करीने सूत्रकारे एकेन्द्रिय जीवोनी प्ररूपणा करी छे. हवे तेमना ज स्थान विगेरेनी प्ररूपणा करवा भाटे सूत्रकार सूत्रनुं कथन करे छे.—‘कहि णं भंते ! वायर पुढवीकाइयाणं’ इत्यादि

टीकार्थ—‘कहि णं भंते ! वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगा णं ठाणा पन्नत्ता’ हे भगवन् पर्याप्त वादर पृथिवीकायिकोना स्थानो कथा कडेवामां आल्या छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ स्वस्थाननी अपेक्षाथी पर्याप्त वादर पृथिवीकायिकोनुं स्थान रत्नप्रभा पृथिवीथी लक्ष्मिने तमस्तमा सुधीनी सात पृथिवीयोमां अने आठमी धित्तागमारा

त्प्राग्भारापृथिव्या मित्यष्टसु पृथिवीषु स्वस्थानं यत्र वादरपृथिवीकायिक आस्ते तेन स्वस्थानेन स्वस्थानमाश्रित्येत्यर्थः । 'जहा ठाणपदे' यथा स्थानपदे' स्थान पदं च प्रज्ञापनासूत्ररय द्वितीयं पदम् । तच्चैत्रम्, 'तं जहा रयणप्पभाए सकरप्पभाए बालुयप्पभाए' इत्यादि । कियत्पर्यन्तमिह स्थानपदमध्येतव्यम्, तत्राह- 'जाव' इत्यादि, 'जाव सुहुमवणस्सइकाइया' यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः इति पर्यन्तम्, अत्र यावत्पदेन वादरपृथिवीकायिकानन्तरं सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः, वादराष्कायिकाः, सूक्ष्माष्कायिकाः वादरतेजस्कायिकाः, सूक्ष्मतेजस्कायिकाः वादरवायुकायिकाः, सूक्ष्मवायुकायिकाः, वादरवनस्पतिकायिकाः, इत्येषां ग्रहणं भवति । एते च 'जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे' ये च पर्याप्तका ये च

से लेकर तमस्तथा तत्कक्षी स्थान पृथिवीषु सौ और आठवीं ईषत्प्राग्भारा पृथिवी में कहे गये हैं । क्योंकि इन पृथिवीषु में वादरपृथिवीकायिक जीव रहते हैं । इसीलिये यहां स्वस्थान को आश्रित करके वादरपृथिवीकायिक जीवों के स्थान कहे गये हैं । 'जहा ठाणपदे' प्रज्ञापना सूत्रका स्थान पद द्वितीय पद है-उसमें ऐसा प्रकट किया गया है-'तं जहारयणप्पभाए सक्करप्पभाए बालुयप्पभाए' इत्यादि-कि रत्नप्रभापृथिवी में, शर्कराप्रभा पृथिवी में बालुकाप्रभा पृथिवी में इत्यादि प्रकट किया गया है । 'जाव सुहुमवणस्सइकाइया' यावत् सूक्ष्मवनस्पतिकायिक, जीवों का स्थान है 'यहां यावत्पद से वादर पृथिवीकायिक के बाद 'सूक्ष्मपृथिवीकायिक, वादर अपूकायिक, सूक्ष्मअष्कायिक, वादरतेजस्कायिक, सूक्ष्मतेजस्कायिक, वादरवायुकायिक, सूक्ष्मवायुकायिक और वादरवनस्पतिकायिक' इन सबका ग्रहण हुआ है । 'जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे' ये सब चाहे पर्याप्त हो चाहे अपर्याप्त

पृथ्वीमां कडेवामां आव्या छे. केमके आ पृथ्वीयोमां आदर पृथ्वीकायिके एवे। रडे छे. तेथी अडियां स्वस्थानेनो आश्रय करीने आदर पृथ्वीकायिके एवेना स्थानो कडेवामां आवेल छे. 'जहा ठाणपदे' प्रज्ञापना सूत्रनु 'णीणु' ने स्थान पद कडेल छे, तेमां अे प्रभाणु कडेल छे 'तं जहा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए बालुयप्पभाए' इत्यादि रत्नप्रभा पृथ्वीमां, शर्करा प्रभा पृथ्वीमां, बालुका प्रभा पृथ्वीमां 'जाव सुहुम वणस्सइ काइया' यावत् सूक्ष्म वनस्पतिकायिके एवेनु स्थान छे. अडियां यावत्पदथी आदर पृथ्वीकायिके पछी सूक्ष्म वनस्पतिकायिके अने आदर अष्कायिके सूक्ष्म अष्कायिके, आदर तेजस्कायिके, सूक्ष्मतेजस्कायिके आदर वायुकायिके सूक्ष्मवायुकायिके अने आदर वनस्पतिकायिके आ अथा अडणु करायो छे. 'जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे' आ

અપર્યાપ્તકા સ્થે સર્વે 'અગવિદ્યા' એકવિધાઃ એકમજારકા એવ પ્રકૃત સ્વસ્થાનાદિ વિચાર મધિકૃત્યૌઘનઃ, 'અવિસેસમણાણત્તા' અવિશેષા અનાનાત્વાઃ અવિશેષાઃ વિશેષરહિતાઃ, યથા પર્યાપ્તકા સ્તથૈવેતરેડપિ અનાનાત્વાઃ નાનાત્વવર્જિતાઃ યેષ્વેવ આધારભૂતાકાશપદેશેષુ એકે-પર્યાપ્તકા-ભવન્તિ તેષ્વેવ ઇતરે અપર્યાપ્ત્તા અપિ ભવન્તીત્યર્થઃ । 'સવ્વલોગ પરિચાવન્ના' સર્વલોકપર્યાવન્નાઃ ઉપપાત્ત સમુદ્ઘાત સ્વસ્થાનૈઃ સર્વલોકે વર્તન્તે ઇત્યર્થઃ, તત્રોપપાત્ત ઉપપાતામિમુખ્યમ્' સમુદ્ઘાત ઇહ મારણાન્તકાદિઃ સ્વસ્થાનં યત્ર તે આસતે 'પન્નત્તા' પ્રજ્ઞપ્તાઃ-કથિતાઃ । 'સમણાઉસો' હે શ્રમણ ! હે આયુષ્મન્ ! એતેપાં સર્વેપામાલાપરુપકારઃ પ્રજ્ઞાપના સૂત્રસ્ય દ્વિતીયસ્થાનપદે દ્રષ્ટવ્યઃ તદ્વ્યાખ્યાનમપિ તત્રૈવ મત્કૃનાયાં પ્રમેયવોધિની વ્યાખ્યાયાં દ્રષ્ટવ્યમ્ । 'અપજ્જત્ત સુહુમ્પુઢવીકાહયાણં મંતે ! કહ્ કમ્મપગ્ગહીઓ

હો સ્વ સૂક્ષ્મવનસ્પતિકાધિક સામાન્ય સ્થે એક પ્રકાર કે હૈ । ઇનમ્ને કોઈ ભિન્નતા નહીં હૈ । જિસ પ્રકાર પર્યાપ્તક હૈ ઊસી પ્રકાર અપર્યાપ્તક હૈ જિન આધારભૂત પ્રદેશો મ્ને પર્યાપ્તક રહતે હૈ ઊન્હી આકાશ પ્રદેશો મ્ને અપર્યાપ્તક રહા કરતે હૈ । 'સવ્વલોગ પરિચાવન્ના' ઉપપાત્ત સમુદ્ઘાત એવ સ્વસ્થાનો કી અપેક્ષા સ્થે યે સર્વલોક મ્ને પાચે જાતે હૈ ઉત્પત્તિકા નામ ઉપપાત્ત હૈ મારણાન્તિક આદિ સમુદ્ઘાત હૈ ઓર જહાં યે રહતે હૈ વહ સ્વસ્થાન હૈ ।' ઇસ પ્રકાર સે યે હે આયુષ્મન્ ! શ્રમણ ! સર્વ-લોકમ્ને હૈ' ઇનકા આલાપક પ્રકાર પ્રજ્ઞાપના સૂત્રકે દ્વિતીય સ્થાન પદ મ્ને દેસ લેના ચાહિયે । ઇસ પર મ્ને પ્રમેયવોધિની ટીકા લિખી હૈ । ઊસ ટીકા સે ઇસકા વ્યાખ્યાન સમજ લેના ચાહિયે ।

'અપજ્જત્ત સુહુમ્પુઢવીકાહયાણં મંતે ! કહ્ કમ્મપગ્ગહીઓ પળ્લત્તાઓ

અધા પર્યાપ્ત હોય કે અપર્યાપ્ત હોય અધા સૂક્ષ્મ વનસ્પતિ કાધિક સામાન્ય રીતે એક પ્રકારના છે. તેમાં કાઈ જ ભિન્ન પણ નથી. જે પ્રમાણે પર્યાપ્તક કહ્યા છે, એજ રીતે અપર્યાપ્તક પણ કહેલ છે, જે આધારભૂત પ્રદેશમાં પર્યાપ્તકો રહે છે, એજ આકાશ પ્રદેશોમાં અપર્યાપ્તકો રહે છે. 'સવ્વલોગ-પરિચાવન્ના' ઉપપાત્ત સમુદ્ઘાત અને સ્વસ્થાનની અપેક્ષાથી આ સર્વ લોકમાં રહેલા છે. ઉત્પત્તિ નામ ઉપપાત્ત છે, મારણાન્તિક વિગેરે સમુદ્ઘાતો છે. અને જ્યાં તેઓ રહે છે. તે સ્વસ્થાન કહેવાય છે. તેના આલાપકોનો પ્રકાર પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના બીજા સ્થાન પદમાંથી સમજ લેવો જોઈએ.

આ વિષયમાં પ્રમેયવોધિની ટીકા કે જે મેં રચી છે, તેમાંથી આ સંબંધનું કથન સમજ લેવું.

'અપજ્જત્ત સુહુમ્પુઢવીકાહયાણં મંતે ! કહ્ કમ્મપગ્ગહીઓ પળ્લત્તાઓ'

पन्नत्ताओ' अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकानां मेकेन्द्रियजीवानां खलु भदन्त ! वदि कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः-कथिताः। एतेषां कति कर्मप्रकृतयो भदन्तीति प्रश्नः। भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि। ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ अष्टौ कर्म प्रकृतयः प्रज्ञप्ताः। ‘तं जहा’ तद्यथा-‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीयं यावदन्तरायिकम्, अत्र यावत्पदेन दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीयायुष्य नाम गोत्रकर्मप्रकृतीनां ग्रहणं भवतीति भावः। ‘एवं चउक्कएणं भेदेणं जहेव एगिंदियसएसु’ एवं चतुष्केन भेदेन यथैव एकेन्द्रियशतकेषु त्रयस्त्रिंशत्तमे शतके द्वादशसु एकेन्द्रियशतेषु मध्ये प्रथम एकेन्द्रिय शतके पृथिव्यादिवनस्पतिकायिकान्तानां द्वौ भेदौ सूक्ष्मवादरौ कथितौ, तदनु पर्याप्ता-पर्याप्तौ द्वौ भेदौ, मिलित्वा चतुष्को भवति’ तद्वदिहापि चतुष्को भेदो

हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियों का सत्त्व (सत्ता) कहा गया है ? अर्थात् इनके कितनी कर्मप्रकृतियां होती हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! इनके आठ कर्म प्रकृतियां कही गई हैं। ‘तं जहा’ जिनके नाम इस प्रकार से हैं-‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायिक यहाँ यावत् पदसे ‘दर्शनावरणीय वेदनीय मोहनीय आयु, नाम, गोत्र, इन प्रकृतियों का ग्रहण हुआ है। ‘एवं चउक्कएणं भेदेणं जहेव एगिंदियसएसु’ इस प्रकार सूक्ष्म, वादर, पर्याप्त और अपर्याप्त इन चारों प्रकार के पृथिवीकायिकोंके एवं इन्हीं चारों भेदवाले अपकायिक जीवों के, इन्हीं चारों भेदवाले तेजस्कायिक जीवों के, इन्हीं चारों भेदों वाले वायुकायिक जीवों के और इन्हीं

हे भगवन् अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जिवाने कटली कर्मप्रकृतियो उडेवामां आवेल छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री उडे छे के-‘गोयमा ! अट्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! तेजाने आठ कर्मप्रकृतियो उडेवामा आवेल छे. ‘तं जहा’ तेमना नामो आ प्रमाणे छे. ‘नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं’ ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायिक अडियां यावत् पदथी दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, अने नाम गोत्र आ कर्मप्रकृतियो ग्रहण करवामां आवेल छे. ‘एवं चउक्कएणं भेदेणं जहेव एगिंदियसएसु’ आ रीते सूक्ष्म, वादर, पर्याप्त अने अपर्याप्त आ चार प्रकारना पृथ्वीकायिकेना अने आ चार लेहवाणा अण्डिकायिकेना अण प्रमाणेना चार लेहवाणा तेजस्कायिकेना आण प्रमाणेना चार लेहवाणा वायुकायिक जिवाना अने अण रीतना चारलेहवाणा वनस्पति कायिक जिवाना ज्ञानावरणीय कर्मप्रकृतियो लघने अन्तरायिक कर्मप्रकृति सुधी

ज्ञातव्यः, कियत्पर्यन्त मेकेन्द्रियशतकं ज्ञातव्यम्, तत्राह—‘जाव’ इत्यादि’
‘जाव वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तणाणं’ यावद्दहनस्वत्तिकायिकानां पर्याप्तकानां
यावत्पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य अपर्याप्त वादरवनस्वत्तिकायिकान्तस्य
ग्रहणं भवति । तथा च सूक्ष्मवादरपर्याप्तापर्याप्तभेदभिन्नानां पृथिव्यादि वनस्व-
त्तिकायिकान्तानां सर्वैकेन्द्रियाणां पश्चानामपि ज्ञानादरणीयादिका अन्तराय-
पर्यन्ता अष्टौ कर्मप्रकृतयो ज्ञातव्या इति प्रकरणाशयः ।

‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपगडीयो वंधंति’ । अपर्याप्त
सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति—कियत्संख्यकाः कर्मप्रकृती वधन्तीति
कर्मबन्धविषयकः प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम !
‘सत्तविहवंधगा वि अट्टविहवंधगा वि’ सप्तप्रकारकर्मप्रकृतीनां बन्धका अपि
भवन्ति सूक्ष्मपृथिवीकायिका अपर्याप्तकाः, तथा—अष्टविधकर्मप्रकृतीनां बन्धका

चारो भेदवाले वनस्पतिकायिक जीवों के ज्ञानावरणीय कर्म प्रकृति से
लेकर अन्तरायिक कर्मप्रकृति तक ८ ही कर्मप्रकृतियां होती हैं ऐसा
जानना चाहिये । ३३ वे शतक रूप एकेन्द्रिय शतक में ऐसा ही प्रति-
पादन सूत्रकार ने किया है । यही बात ‘एवं चउक्कएणं भेएणं जहेव
एगिंदियसएसु जाव वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तणाणं’ इत्य सूत्र पाठ
द्वारा यहाँ समझाई गई है ।

‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइया णं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति’
हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव कितनी कर्म प्रकृतियों
का बंध करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! सत्तविह
बंधगा वि अट्टविह बंधगा वि’ हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक
जीव सात प्रकार की कर्मप्रकृतियों का भी बन्ध करते हैं और धाठ

८थाठ ७ कर्मप्रकृतियो होय छे. तेम समज्जुं. भत्रीसभा शतकना कोकेन्द्रिय
शतकमां सूत्रकारे ओज प्रमाणे प्रतिपादन करेला छे. ओज वात ‘एवं
चउक्कएणं भेएणं जहेव एगिंदियसएसु जाव वणस्सइकाइयाणं’ आ सूत्रपाठ
द्वारा अहियां समज्जवी छे.

‘अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वंधंति’ हे लगवन्
अपर्याप्तक पृथ्वीकायिक ७व केटली कर्मप्रकृतियोना बंध करे छे ? आ प्रश्नना
उत्तरमां प्रभुश्री उडे छे के—‘गोयमा ! सत्तविह बंधगा वि अट्टविह बंधगा वि’
हे गौतम अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ७व सात प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना

અપિ ભવન્તિ તે । 'જહા ઈન્દ્રિયસપ્સુ' યથા-યેન પ્રકારેણ એકેન્દ્રિયશતકેષુ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાચિક પ્રમૃત્યેકેન્દ્રિયજીવાનાં કર્મપ્રકૃતિ વન્ધત્રિપયે કથિતં તથૈદેહાપિ સર્વં જ્ઞાતવ્યમિતિ । તથાહિ-સપ્તકર્મપ્રકૃતી વંધન્ત આયુર્વર્જાઃ સપ્તજ્ઞાનાદરણીયાદિકાઃ કર્મપ્રકૃતી વંધન્તિ, અષ્ટવિધકર્મપ્રકૃતી વંધન્તઃ પરિ- પૂર્ણાં અષ્ટાત્રપિ કર્મપ્રકૃતી વંધન્તીતિ । કિયત્પર્યન્તમેકેન્દ્રિયશતકમિહાધ્યે- તવ્યં તન્નાહ-'જાવ' ઇત્યાદિ । 'જાવ પજ્જત્તા વાયરવળસ્સડકાહ્યા' યાવસ્પ- ર્યાપ્તા વાદરવનસ્પતિકાચિકાઃ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાચિકત આરભ્ય અપર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિકાચિકાન્તાઃ સર્વેઽપિ યાવત્ પદગ્રાહ્યા ભવન્તિ । તથા ચ-અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાચિકત આરભ્ય પર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિકાચિકાન્તાઃ સર્વેઽપિ એકે

પ્રકાર કી કર્મપ્રકૃતિયો' કા બી વન્ધ કરતે હૈં । 'જહા ઈન્દ્રિયસપ્સુ' હસ સમ્બન્ધ મેં જૈસો કથન એકેન્દ્રિય શતક મેં કિયા ગયા હૈં ઉસી પ્રકાર સે વહી કથન યહાં અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાચિકાદિ એકેન્દ્રિય જીવો કે કર્મપ્રકૃતિયો' કે વન્ધ કે સમ્બન્ધ મેં બી કર લેના ચાહિયે । જૈસે-જવ વે સાતકર્મ પ્રકૃતિયો' કે વન્ધક હોતે હૈં-તવ વે આયુકર્મ કો છોડકર શેષ સાતકર્મ પ્રકૃતિયો' કા વન્ધ કરતે હૈં ઓર જવ આઠ કર્મપ્રકૃતિયો' કે વન્ધક હોતે હૈં તવ પૂરી કી પૂરી વે આઠો' કર્મપ્રકૃતિયો' કા વન્ધ કરતે હૈં । હસી પ્રકાર કા કથન યાવત્ પર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિકાચિક જીવો' તરુ કરતે જાના ચાહિયે । અર્થાત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મપૃથિવીકાચિક સે લેકર અપર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિકાચિક તકકે જીવ યહાં યાવત્ પદસે ગૃહીત હુએ હૈં-સો વે અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ- પૃથિવીકાચિક સે લેકર પર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિકાચિક તક કે સમસ્ત

પણ બંધ કરે છે. અને આઠ પ્રકારની કર્મપ્રકૃતિયોનો પણ બંધ કરે છે 'જહા ઈન્દ્રિયસપ્સુ' આ સંબંધમાં જે પ્રમાણેનું કથન અહિયાં એકેન્દ્રિય શતકમાં કરવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે એજ કથન અહિયાં એકેન્દ્રિય વિગેરે જીવોને કર્મપ્રકૃતિયોના બંધના સંબંધમાં પણ કહેવું જોઈએ. જેમ કે-જ્યારે તેઓ સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરનાર હોય છે. ત્યારે તે અથુ કર્મપ્રકૃતિને છોડીને બાકીની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરે છે અને જ્યારે તેઓ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરે છે, ત્યારે તેઓ પૂરેપૂરી આ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરે છે આજ પ્રમાણેનું કથન યાવત્ પર્યાપ્ત વાદર વનસ્પતિકાચિક જીવોના કથન સુધીમાં સમજી લેવું અર્થાત્ પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાચિકથી લઈને અપર્યાપ્તક વાદર વનસ્પતિકાચિક સુધીના જીવો અહિયાં યાવત્પદથી ગ્રહણ કરાયા છે. તો આ અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાચિકથી લઈને અપર્યાપ્ત વાદરવનસ્પતિ

न्द्रियजीवाः सप्तप्रकारकर्मप्रकृतीनां बन्धका अपि भवन्ति, तथापृथिवीकर्म-
प्रकृतीनां बन्धका अपि भवन्तीति भावः । 'अपञ्जत्त सुहृमपुढवीकाइयाणं भंते ।
कइकम्मपगडीओ वेदे'ति' अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कति
कर्मप्रकृती वेदयन्तीति भावः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा !'
हे गौतम ! 'चोदसकम्मपगडीओ वेदे'ति' चतुर्दश-चतुर्दशसंख्यकाः कर्मप्रकृती
वेदयन्ति । चतुर्दश भेदमेव दर्शयति—'तं जहा' इत्यादि । 'तं जहा' तद्यथा—
'नाणावरणिज्जं' ज्ञानवरणीयम् 'जहा एगिंदियसएसु' यथा—एकेन्द्रियशतकेषु
कथितम् ज्ञानावरणीयादि कर्मप्रकृतिवेदनं तथैवेहापि कर्मप्रकृतिवेदनं ज्ञातव्यम् ।
क्रियत्पर्यन्तमेकेन्द्रियशतके ज्ञातव्यं तत्राह—'जाव' इत्यादि । 'जाव पुरिसवेद-
वज्झ' यावत्पुपवेदवधयम् । अत्र यावत्पदेन दर्शनावरणीयतः आरभ्य अन्तराय

जीव सात प्रकार की कर्मप्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं और आठ
प्रकार की कर्मप्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं ।

'अपञ्जत्तसुहृमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ वेदे'ति'
हे भदन्त ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियों
का वेदन करते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! चोदस
कम्मपगडीओ वेदे'ति' 'हे गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीव
१४ कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं । 'तं जहा' जिनके नाम इस प्रकार
से हैं—'नाणावरणिज्जं जहा एगिंदियसएसु' ज्ञानावरणीय आदि जैसा
कि एकेन्द्रिय शतक में कहा गया है । इन १४ प्रकृतियों में 'जाव
पुरिसवेदवज्झ' यावत् पुरुषवेदावरणीय तक कही गई प्रकृतियां आ
जाती हैं । जो इस प्रकार हैं—'ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय,

कायिक सुधीना एव सात प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना पणु बंध करे छे. अने
आठ कर्मप्रकृतियोना पणु बंध करे छे.

'अपञ्जत्त सुहृमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइकम्मपगडीओ वेदे'ति' हे
भगवन् अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव डेटली कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करे
छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के "गोयमा ! चोदस
कम्मपगडीओ वेदे'ति' हे गौतम ! अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव १४ चौद
कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करे छे ? 'तं जहा' तेना नामे आ प्रभाछे छे.—
'नाणावरणिज्जं जहा एगिंदियसएसु' ज्ञानावरणीय विगेरे के प्रभाछे ओकेन्द्रिय
शतकमां कडेवामां आवेल छे, आ १४ चौद कर्मप्रकृतियोमां 'जाव पुरिसवेदवज्झ'
यावत् पुरुष वेदावरणीय सुधी कडेल कर्मप्रकृतियो आवी जाय छे. के आ प्रभाछे

पर्यन्तानां तथा श्रोत्रेन्द्रियवध्य, चक्षुरिन्द्रियवध्य, रसनेन्द्रियवध्य, घ्राणेन्द्रिय वध्य-स्त्रीवेदवध्यान्तानां च कर्मप्रकृतीनां संग्रहो भवति । तथा च ज्ञानावरणीयादारुध्य पुरुषवध्यान्त चतुर्दश कर्मप्रकृतीनामपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकादयः सर्वेऽपि वेदयन्तीतिभावः । 'एवं जाव वायर वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं' एवम्-अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां यथा चतुर्दश कर्मप्रकृति वेदनं कथितं तथैव यावद् वादरवनस्पतिकायिकपर्याप्तकानामपि चतुर्दश कर्मप्रकृति वेदनं ज्ञातव्यम् अप्रापि यावत्पदेन पर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत आरभ्य अपर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकान्ताः मन्नादरासूक्ष्मपर्याप्तपर्याप्तमेद-

मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय तक ८ कर्मप्रकृतियां तथा श्रोत्रेन्द्रियवध्य चक्षुर्इन्द्रिय वध्य घ्राणेन्द्रिय वध्य रसनेन्द्रिय वध्य स्त्रीवेद वध्य और पुरुषवेद वध्य' इस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक आदि से लेकर दोनों प्रकारके वनस्पतिकायिक तकके समस्त एकेन्द्रिय जीव ज्ञानावरणीय आदि से लेकर अन्तराय कर्म तक और श्रोत्रेन्द्रिय से लेकर पुरुषवेदावरण तक १४ कर्म प्रकृतियों का वेदन करते हैं। चाहे ये पर्याप्त हो अथवा अपर्याप्त हो। 'एवं जाव वायर वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं' यही बात इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है। अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकों के सम्बन्ध में जिस प्रकारसे १४ कर्मप्रकृतियों का वेदन करना कहा गया है उसी प्रकार से यावत् पर्याप्त वादरवनस्पतिकायिकों के सम्बन्ध में भी १४ कर्मप्रकृतियों का वेदन करना कह लेना चाहिये। यहां यावत् पदसे पर्याप्त

छे.-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र अने अंतराय, सुधीनी आठ कर्मप्रकृतियो तथा श्रोत्रेन्द्रियवध्य, चक्षुर्इन्द्रिय वध्य घ्राणेन्द्रियवध्य, रसनेन्द्रियवध्य, स्त्रीवेदवध्य अने पुरुष वेदवध्य आ रीते अपर्याप्तके सूक्ष्म पृथ्वीकायिकथी लधने गन्ने प्रकारना वनस्पतिकायिक सुधीना सधणा ओकेन्द्रिय लवो ज्ञानावरणीय विगेरेथी लधने अंतराय कर्म सुधी अने श्रोत्रेन्द्रियथी लधने पुरुष वेदावरण सुधी १४ चौद कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करे छे. ते पर्याप्त होय के अपर्याप्त होय 'एवं जाव वायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं' ओळ बात आ सूत्र पाठद्वारा प्रकट करवाभां आवेल छे. अर्थात् अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिकेना संभंधमां ने प्रमाणे १४ चौद कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करवानुं कल्युं छे, ओळ प्रमाणे यावत् वादर वनस्पतिकायिकेना संभंधमां पण १४ चौद कर्मप्रकृतियोनुं वेदन करवानुं कल्युं छे.

भिन्नाः सर्वेऽपि संग्रहीतव्या इति । अथैकेन्द्रियाणां मुत्पत्तिविषयं सूत्रमाह—
 'एगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति' एकेन्द्रियजीवाः खलु भदन्त ! कुतः—
 कस्मात् स्थानविशेषाद् आगत्य समुत्पद्यन्ते 'किं नेरइएहिंतो उववज्जंति' किं
 नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते किं वा—तिर्यग्योनिकेभ्य आगत्य समुत्पद्यन्ते मनु-
 ष्येभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति प्रश्नः ।
 उत्तरमाह—'जहा' इत्यादि । 'जहा वक्कंतोर पुढवीकाइयाणं उववाओ' यथा
 व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनासूत्रस्य षष्ठपदे पृथिवीकायिकानामुपपातः तथैवेहापि
 एकेन्द्रियाणां मुत्पत्तौ वर्णयितव्यः । तथाहि—एकेन्द्रिया नैरयिकेभ्य आगत्य
 नोत्पद्यन्ते, किन्तु देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते, मनुष्येभ्य आगत्योत्पद्यन्ते । तथा—

सूक्ष्मपृथिवीकायिक से लेकर सूक्ष्म वादर पर्याप्त और अपर्याप्त भेद
 वाले वनस्पतिकायिक तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव गृहीत हुए हैं ।

'एगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीव
 किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? 'किं नेरइएहिंतो
 उववज्जंति' क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा
 तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से
 आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकरके उत्पन्न होते
 हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'जहा वक्कंतोर पुढवीकाइयाणं उव-
 वाओ' हे गौतम ! जिस रीतिसे प्रज्ञापना सूत्रके छठे व्युत्क्रान्तिकपद
 में पृथिवीकायिकों का उपपाद कहा गया है उसी रीति से उनका वह
 उत्पाद यहां पर भी जान लेना चाहिये । जैसे—एकेन्द्रिय जीव नैरयिकों
 में से आकरके उत्पन्न नहीं होते हैं किन्तु देवों में से आकरके उत्पन्न

तेषु समञ्जसु'. अद्वियां यावत् पठथी सूक्ष्म पृथ्विकायिकथी लघने सूक्ष्म आदर
 पर्याप्त अने अपर्याप्त लेहोवाणा वनस्पतिकायिक सुधीना तसाम् अकेन्द्रिय
 लुवे। अद्वेषु करार्येन छे.

'एगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति' हे लघवन् अकेन्द्रिय लुवे। क्या
 स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति'
 शु' तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी
 आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने तेओ उत्पन्न थाय छे ?
 आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कहे छे के—'जहा वक्कंतोर पुढवीकाइयाणं उववाओ'
 हे गौतम ! जे प्रमाणे प्रज्ञापना सूत्रना छठे व्युत्क्रान्ति पदमा पृथ्वीकायिकेने।
 उपपाद कहेवामां आवेद छे. ओज प्रमाणे तेओने। उपपात अद्वियां पधु
 समञ्जयो. जेमके—अकेन्द्रिय नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थता नथी, अने

तिर्यग्योनिकेभ्य आगत्य एकेन्द्रियेषु समुत्पद्यन्ते इति प्रज्ञापना सूत्रोक्तोत्तरमिति भावः । 'एगिंदिया णं भंते ! कइ समुग्घाया पणत्ता' एकेन्द्रियाणां खलु भदन्त ! कति समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः-कथिता इति प्रश्नः । भगवानाह- 'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'चत्तारि समुग्घाया पणत्ता' चत्वारः समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः-कथिताः । प्रकारभेदमेव दर्शयति- 'तं जहा' इत्यादि, 'तं जहा' तद्यथा- 'वेयणा समुग्घाए जाव वेउव्विय समुग्घाए' वेदनासमुद्घातो यावद् वैक्रिय समुद्घातः । अत्र यावत्पदेन कषाय समुद्घात मारणान्तिक समुद्घातयोः संग्रहो भवति । तथा च-वेदनाकषाय मारणान्तिक वैक्रियारूपाश्चत्वारः समुद्घाता भवन्तीति भावः । अत्र यत् चत्वारः समुद्घाताः कथिता स्तत्र वैक्रिय समुद्घातो

होते हैं । अनुष्यों में से भी आकरके उत्पन्न होते हैं और तिर्यग्योनिको में से भी आकरके उत्पन्न होते हैं । ऐसा ही यह उत्तर प्रज्ञापना सूत्र का है । 'एगिंदियाणं भंते कइ समुग्घाया पणत्ता' हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीवों के कितने समुद्घात होते कहे गये हैं ? 'गोयमा ! चत्तारि समुग्घाया पणत्ता' हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीवों के चार समुद्घात कहे गये हैं । 'तं जहा' जो इस प्रकार से हैं - 'वेयणा समुग्घाए जाव वेउव्वियसमुग्घाए' वेदना समुद्घात, यावत् वैक्रिय समुद्घात यहाँ यावत्पद से कषाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात, इन दो समुद्घातों का ग्रहण हुआ है । तथा च-वेदना, कषाय, मारणान्तिक और वैक्रिय ये चार समुद्घात इन एकेन्द्रिय जीवों के होते हैं यहाँ चार जो समुद्घात कहे गये हैं सो इनमें जो वैक्रिय समुद्घात

देवोभांथी आवीने पणु उत्पन्न थता नथी. परंतु गल्लंज अनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, अने तिर्य'य योनिडेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, आ प्रभाणु आ प्रज्ञापना सूत्रनुं कथन कडेल छे. 'एगिंदिया णं भंते ! कइ समुग्घाया पणत्ता' हे भगवन् अेक धन्द्रियवाणा लुवेने केटला समुद्घातो डोवानुं कडेल छे ? 'गोयमा ! चत्तारि समुग्घाया पणत्ता' हे गौतम ! अेक धन्द्रियवाणा लुवेने आर समुद्घातो डोवानुं कडेल छे. 'तं जहा' तेआ प्रभाणु छे.-'वेयणा समुग्घाए जाव वेउव्विय समुग्घाए' वेदना समुद्घात यावत् वैक्रिय समुद्घात अडियां यावत्पदथी कषाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात आ अे समुद्घातो थडणु कराया छे. जेभ के-वेदना, कषाय, मारणान्तिक, अने वैक्रिय आ आर समुद्घातो आ अेकेन्द्रिय लुवेने डोय छे, अडियां जे आर समुद्घातो

वायुकायिकानाश्रित्य कथित', वायुकायिकान् विहायान्येषां वेदनाकषायमार-
णान्तिकरूपा स्रय एव समुद्घाता भवन्ति न तु वैक्रियसमुद्घात इति । 'एगि-
दियाण भंते !' एकेन्द्रियजीवाः खलु भदन्त ! 'किं तुल्लद्विहया तुल्लविसे-
साहियं कम्मं पकरेति' किं तुल्यस्थितिका परस्परापेक्षया समानायुष्काः
तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । परस्परापेक्षया तुल्यत्वेन विशेषेण असंख्येय
भागादिना अधिकं पूर्वकालवद्धकर्मापेक्षयाऽधिकतरं तुल्यविशेषाधिकं कर्म
ज्ञानावरणीयादिकं प्रकुर्वन्ति किमिति प्रश्नः । तथा 'तुल्लद्विहया वेमाय
विसेसाहियं कम्मं पकरेति' तुल्यस्थितिकाः विमात्रः अन्योऽन्या-
पेक्षया विषमपरिमाणः कस्याऽप्यसंख्येयभागरूपोऽन्यस्य संख्येयभागरूपयो
विशेषस्तेनाधिकं पूर्वकालवद्धकर्मापेक्षया यत् तद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म

है वह वायुकायिकों को आश्रित करके कहा गया है । वायुकायिकोंको
छोड़कर अन्य एकेन्द्रिय जीवों को वेदना कषाय और घारणान्तिक
ये तीन ही समुद्घात होते हैं । वैक्रिय समुद्घात इनको नहीं होता है ।

'एगिदिया णं भंते ! किं तुल्लद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पक-
रेति' 'हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीव की जिनकी आयु आपसमें समान
होती है क्या तुल्य और विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं ?
परस्परकी अपेक्षा समानता को लेकर यहां तुल्यता कर्म में फही गई
और पूर्वकाल में बद्ध कर्मों की अपेक्षा असंख्यातवे' भाग आदिको
लेकर कर्म में विशेषाधिकता कही गई है ।

अथवा—'तुल्लद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेति ? 'तुल्य-
स्थितिवाले एकेन्द्रिय जीव परस्पर भिन्न २ विशेषाधिक कर्मबन्ध करते
हैं ? किसी एकेन्द्रिय जीव के पूर्वबद्ध कर्मोंकी अपेक्षासे असंख्येय

कहा छे, ते पैकी जे वैक्रियसमुद्घात छे, ते वायुकायिकेनो आश्रय करीने डडेल
छे वायुकायिकेने छोडीने थीन अेधन्द्रियवाणा जेवने वेदना, कषाय अने
मारणान्तिक आ त्रण समुद्घात जे डोय छे. तेज्जेने वैक्रिय समुद्घात डोतो नथी.

'एगिदिया णं भंते ! किं तुल्लद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेति' जे
लगवन् अेक धन्द्रियवाणा जेवो जे जेज्जेनु आयुष्य परस्परमां सरणुं डोय
छे, जेवा जेवो शु तुल्य अने विशेषाधिक कर्मनो भंध करे छे ? परस्परनी
अपेक्षाथी समान पणुने लधने अडिया कर्ममां तुल्यपणुं कलु छे, अने पूर्व
कालमां अथकर्मनी अपेक्षाथी अथज्यातमा भाग विजेरेने लधने कर्ममां
विशेषाधिक पणुं कलुं छे. अथवा 'तुल्लद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेति'
समान स्थितिवाणा अेकेन्द्रिय जेवो अन्ये। अन्य जुहा जुहा विशेषाधिक कर्मनो
भंध करे छे ? डोय अेक धन्द्रियवाणा जेवना अथज्यात भाग ३५ अने

ज्ञानावरणीयादिकं प्रकुर्वन्ति वध्नन्ति । तथा—‘वेमायद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ विमात्रस्थितिकाः विमात्रा-विपममात्रा स्थितिः—आयु येषां ते विमात्रस्थितिकाः विपमायुष्का इत्यर्थः । तुल्यविशेषाधिकं पूर्ववदेव कर्म प्रकुर्वन्ति । ३ । ‘वेमायद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति ४’ विमात्र-स्थितिकाः विमात्रविशेषाधिकं कर्म ज्ञानावरणीयादिकं प्रकुर्वन्ति वध्नन्ति किमिति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अत्थे गइया तुल्लद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ अस्त्येकके तुल्यस्थितिका

भाग रूप और किसी एकेन्द्रिय जीवके संलघेय भाग रूप अधिक कर्मबन्ध को लेकर इस विकल्प में कर्मबन्ध में भिन्नता कही गई जाननी चाहिये । अथवा—‘वेमायद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ ‘भिन्न २ स्थितिवाले एकेन्द्रिय जीव परस्पर में तुल्य विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं ? अथवा—‘वेमायद्विहया वेमाय विसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ ‘भिन्न २ स्थितिवाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न २ विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं ? ऐसे ये बन्ध के विषय में चार विकल्प रूप प्रश्न हैं । इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! अत्थेगइया तुल्ल-द्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ हे गौतम ! कितनेक एकेन्द्रिय जीव जो तुल्यस्थितिवाले होते हैं तुल्य विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं । ‘अत्थेगइया तुल्लद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’

कोई एक एकेन्द्रियवाणा जिवना संणयात् लाग इय कम्मं अंधने लधने आ विकल्पमां कम्मंअंधमां जुदापणुं इत्थं छे, तेम समणपुं, अथवा—‘वेमायद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ जुदी जुदी स्थितिवाणा ओक एकेन्द्रिय जिवे परस्परमां तुल्य अथवा विशेषाधिक कम्मंनो अंध करे छे ? अथवा ‘वेमायद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ जुदी जुदी स्थितिवाणा ओक एकेन्द्रियवाणा जिवे जुदा जुदा विशेषाधिक कम्मंनो अंध करे छे ? आ रीते आ अंधना संणधमां आर विकल्पोइय प्रश्न गौतमस्वामीओ प्रबुने पूछेल छे, आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—‘गोयमा ! अत्थेगइया तुल्लद्विहया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ हे गौतम ! केटलाक ओक एकेन्द्रियवाणा जिवे के जे समान स्थितिवाणा होय छे, तेओ तुल्य अने विशेषाधिक कम्मंनो अंध करे छे, ‘अत्थेइया तुल्लद्विहया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तथा कोई कोई समान स्थितिवाणा ओक एकेन्द्रिय जिवे ओवा होय छे के जेओ जुदी जुदी मात्रमां विशेषाधिक कम्मंनो अंध करे छे, ‘अत्थेगइया तुल्लद्विहया तुल्लविसेसाहियं

तुल्य विशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । 'अत्येगइया वेमायद्विइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' अस्त्येकके विमात्रस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । 'अत्येगइया वेमायद्विइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' अस्त्येकके विमात्रस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्तीत्युत्तरम् । 'से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्येगइया तुल्लद्विइया जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति ?' तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, अस्त्येकके तुल्यस्थितिकाः यावद् विमात्र-विशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति, अत्र यावत्पदेन अस्त्येकके तुल्यस्थितिका स्तुल्य-

'तथा कोई कोई तुल्यस्थितिवाले एकेन्द्रिय जीव ऐसे होते हैं जो भिन्न भिन्न मात्रा में विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं, 'अत्येगइया वेमायद्विइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' तथा कोई कोई एकेन्द्रिय जीव ऐसे भी होते हैं कि जिनकी आयु परस्पर में भिन्न भिन्न होती है पर वे तुल्य विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं । तथा—'अत्येगइया वेमाय-द्विइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' कोई कोई एकेन्द्रिय जीव ऐसे भी होते हैं कि जिनका आयुकर्म भी परस्पर में भिन्न भिन्न होता है और वे भिन्न भिन्न विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं । 'से केणट्टेणं भंते ! 'एवं वुच्चइ अत्येगइया तुल्लद्विइया जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' हे भदन्त ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि कितने क तुल्यस्थितिवाले एकेन्द्रिय जीव तुल्यविशेषाधिक ज्ञानावरणीय आदि कर्मका बन्ध करते हैं और यावत् कितनेक भिन्न भिन्न स्थितिवाले

कम्मं पकरे'ति' तथा केअ केअ अके एन्द्रियवाणा एवे। एवा पणु डाय छे के-वेओतुं आयुष्य परस्पर एडुं एडुं डाय छे. परंतु तेओ। तुल्य अने विशेषाधिक कर्मना अंध करे छे. तथा 'अत्येगइया वेमायद्विइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' केअ केअ अके एन्द्रिय एवे। एवा पणु डाय छे के-वेओतुं आयुष्य कर्म पणु परस्परमां एडुं एडुं डाय छे अने तेओ। भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्मना अंध करे छे. तथा 'अत्येगइया वेमायद्विइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' केअ केअ अके एन्द्रिय एवे। एवा पणु डाय छे के-आयुष्य कर्म पणु परस्परमां एडुं एडुं डाय छे. अने तेओ। भिन्न-भिन्न विशेषा-धिक कर्मना अंध करे छे 'से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्येगइया तुल्लद्विइया जाव विसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' हे भगवन् आप अे प्रमाणे शा डारणुथी कडे। छे के-केटलाक तुल्य—सरभा शरीरावाणा अकेएन्द्रिय एवे। तुल्य अने विशेषाधिक ज्ञानावरणीय वगेरे कर्मना अंध करे छे ? अने यावत्केटलाक जूती जूती स्थितिवाणा अकेएन्द्रिय एवे। जूदा

વિશેષાધિકં કર્મ કુર્વન્તિ । અસ્ત્યેકકે તુલ્યસ્થિતિકા વિમાત્રવિશેષાધિકં કર્મ કુર્વન્તિ, અસ્ત્યેકકે વિમાત્રસ્થિતિકા સ્તુલ્યવિશેષાધિકં કર્મ કુર્વન્તિ, इत्येषां संग्रहो भवतीत्यवान्तरप्रश्नः । મગવાનાદ્-‘ગોયમા’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘एगिंदिया चउन्विहा पणत्ता’ एकेन्द्रिया श्रतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः ‘तं जहा’ तद्यथा-‘अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा’ अस्त्येकके समायुष्काः समोपपन्नकाः, समम्-तुल्यम् आयुर्येषां ते समायुष्काः समानस्थितिका इत्यर्थः । ‘अत्थे गइया समाउया विसमोववन्नगा’ अस्त्येकके समायुष्काः-तुल्यायुष्काः समोपपन्नकाः, ‘अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा’ अस्त्येकके विषमायुष्का समोपपन्नकाः अस्त्येकके विषमायुष्काः

एकेन्द्रिय जीव भिन्न भिन्न विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं ? यहां यावत् पदसे बीच के दो विह्वलप गृहीत हुए हैं । इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! एगिंदिया चउन्विहा पणत्ता’ हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के कहे गये हैं । ‘तं जहा’ ‘जो इस प्रकार से हैं- ‘अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा’ एक वे एकेन्द्रिय जीव जो समान आयुवाले होते हैं और एक ही साथ उत्पन्न होते हैं । ‘अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा’ दूसरे वे एकेन्द्रिय जीव जो समान आयुवाले तो होते हैं पर एक ही साथ उत्पन्न नहीं होते हैं किन्तु भिन्न भिन्न समय में उत्पन्न होते हैं । तीसरे ‘अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा’ वे एकेन्द्रिय जीव जो विषम आयुवाले तो होते हैं पर साथ साथ में एक समयमें उत्पन्न होते हैं ३ । चौथे वे एकेन्द्रिय जीव जो

જૂદા વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે ? અહિયાં યાવત્પદથી વચ્ચેના બે વિકલ્પો ગ્રહણ કરાયા છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘ગોયમા ! ઇગિંદિયા ચરન્વિહા પણત્તા’ હે ગૌતમ ! એક ઇન્દ્રિયવાળા જીવો ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવેલ છે. ‘તં જહા’ જે આ પ્રમાણે છે. ‘અત્થે ગહયા સમાઉયા સમોવવન્નગા’ એક તે એક ઇન્દ્રિય જીવો છે, કે જેઓ સરખા આયુષ્યવાળા હોય છે અને એક સાથે જ ઉત્પન્ન થાય છે ‘અત્થેગહયા સમાઉયા સમોવવન્નગા’ બીજા તે એકેન્દ્રિય જીવો હોય છે કે જેઓ સરખા આયુષ્યવાળા તો હોય છે, પણ એક સાથે ઉત્પન્ન થતા નથી. પરંતુ જુદા જુદા સમયે ઉત્પન્ન થાય છે. ‘અત્થેગહયા વિસમાઉયા સમોવવન્નગા’ અત્થે ગહયા વિસમાઉયા વિસમોવવન્નગા’ અને ત્રીજા તે એક ઇન્દ્રિયવાળા જીવો જેઓ વિષમ આયુષ્યવાળા તો હોય છે, પરંતુ સાથે સાથે એક સમયમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. ચોથા તે એક ઇન્દ્રિયવાળા જીવો જુદા જુદા આયુષ્યવાળા પણ હોય છે, અને જુદા જુદા સમયમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે એક ઇન્દ્રિયવાળા

विषमोपपन्नका स्त इमे चत्वारो भेदा भवन्ति एकेन्द्रियाणाम् । 'तत्थ णं जे ते समाजया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' तत्र चतुर्षु मध्ये ये ते एकेन्द्रियाः समायुष्का समोपपन्नकां स्ते खलु तुल्यस्थितिकाः समकमेवोत्पन्ना स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति तत्रैते तुल्यस्थितिकाः समोत्पन्नत्वेन परस्परेण समानयोगत्वात् तुल्य मिति समानमेव कर्म कुर्वन्ति, तथा ते च पूर्वकर्मापेक्षया हीनं वा अधिकं वा कर्म कुर्वन्ति यद्यधिकं तथा विशेषाधिक मपि, तच्च परस्परतः तुल्य विशेषाधिकं न तु विशेषाधिकमेव इत्यत उक्तं तुल्य-विशेषाधिकमिति १ । 'तत्थ णं जे ते समाजया विषमोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया

भिन्न भिन्न आयुवाले भी होते हैं और भिन्न भिन्न सभ्यमें भी उत्पन्न होते हैं ।' इस प्रकार से एकेन्द्रियों के ये चार प्रकार होते हैं 'तत्थ णं जे ते समाजया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया तुल्लविसे-साहियं कम्मं पकरे'ति' इनमें जो एकेन्द्रिय जीव समान आयुवाले और एक ही सभ्य में उत्पन्न हुए होते हैं—वे एक ही स्थितिवाले होते हैं । और तुल्यविशेषाधिक कर्मके बन्धक होते हैं । क्योंकि तुल्य-स्थितिवाले जीव समकालमें उत्पन्न होने के कारण आपस में समान योगवाले होते हैं—इसलिये वे समान ही कर्मका बन्ध करते हैं । अथवा तो वे पूर्व कर्मको हीन कर्म करते हैं अथवा अधिक कर्म करते हैं । यदि अधिक कर्म करते हैं तो वह परस्पर में तुल्य होता हुआ भी पूर्व कर्म की अपेक्षा विशेषाधिक होता है केवल विशेषाधिक ही नहीं होता है । इसीलिये उसे तुल्य और विशेषाधिक इन दो विशेषणों से विशिष्ट बतलाया गया है ।

जुवेना आर लेहो डोय छे. 'तत्थ णं जे ते समाजया समोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' आमां जे जेक छन्द्रीयवाणा जेवे समान आयुष्यवाणा अने जेक साथे ज उत्पन्न थाय छे, तेज्जे सरणी स्थितिवाणा डोय छे. अने तुल्य विशेषाधिक कर्मना बंध करवा-वाणा डोय छे. केम के—तुल्य स्थितिवाणा जेवे सरणा काणमां उत्पन्न थवाने कारणे परस्परमां सरणा योगवाणा डोय छे. तेथी तेज्जे सरणा कर्मना ज बंध करे छे. अथवा तो ते पूर्व कर्मने जेटवे के पडेला करेला कर्मने हीन ज्योधा करे छे अथवा अधिक कर्म करे छे. जे अधिक कर्म करे तो तेज्जे परस्परमां तुल्य थछने पद्य पूर्वकर्मनी अपेक्षाथी विशेषाधिक डोय छे. केवण विशेषाधिक ज डोता तेथी तेज्जेने तुल्य अने विशेषाधिक आ जे विशेषणथी युक्त कडेल छे. 'तत्थ णं जे ते समाजया

વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' તત્ર ચલુ યે તે સમાયુષ્કા વિષમોપપન્નાસ્તે ચલુ તુલ્યસ્થિતિકા વિમાત્રવિશેષાધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તિ, એતે સમાયુષ્કા વિષમોપપન્નકા સ્તુલ્યસ્થિતિકાઃ વિષમોપપન્નત્વેન ચ યોગવૈષમ્યાદ્ વિમાત્રવિશેષાધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તીતિ ૨ ।

'તત્થ ણં જે તે વિસમાડયા સમોવવન્નગા તે ણં વેમાયટ્ટિહયા તુલ્લવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' તત્ર ચલુ યે તે વિષમાયુષ્કાઃ સમોપપન્નકાસ્તે ચલુ વિમાત્રસ્થિતિકા સ્તુલ્યવિશેષાધિકં કર્મ દ્વાનાવરણીયાદિકં પ્રકુર્વન્તિ-બધ્નન્તિ એતે વિમાત્રસ્થિકાઃ સમોપપન્નત્વેન ચ સમાનયોગત્વાત્ તુલ્યવિશેષાધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તીતિ ।૩।

'તત્થ ણં જે તે સમાડયા વિસમોવવન્નગા તે ણં તુલ્લટ્ટિહયા વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' 'તથા જો એકેન્દ્રિય જીવ સમાન આયુવાલે હોતે હુએ ખી ભિન્ન ભિન્ન સમય મેં ઉત્પન્ન હુએ હોતે હેં વે તુલ્યસ્થિતિ વાલે હોને પર ખી ભિન્ન ભિન્ન સમય મેં ઉત્પન્ન હોને કે કારણ યોગોં કી વિષમતા કો લેકર ભિન્ન ભિન્ન વિશેષાધિક કર્મ કે બન્ધક હોતે હેં । 'તત્થ ણં જે તે વિસમાડયા સમોવવન્નગા તે ણં વેમાય ટ્ટિહયા તુલ્લ વિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' તથા જો એકેન્દ્રિય જીવ વિષમ આયુવાલે હોતે હેં ઓર સાથ સાથ મેં ઉત્પન્ન હુએ હોતે હેં વે વિષમસ્થિતિવાલે હોતે હેં ઓર તુલ્યવિશેષાધિક કર્મકે બન્ધક હોતે હેં । યે વિમાત્ર સ્થિતિ કે એકેન્દ્રિય જીવ સમોપપન્ન હોને કે કારણ તુલ્ય-યોગવાલે હોતે હેં, હસસે વે તુલ્યવિશેષાધિક કર્મ કે બન્ધક હોતે હેં । ૩ 'તત્થ ણં જે તે વિસમાડયા વિસમોવવન્નગા તે ણં વેમાયટ્ટિહયા વેમાય-

વિસમોવવન્નગા તે ણં તુલ્લટ્ટિહયા વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' તથા જે એકે ઇન્દ્રિયવાળા હોવે સમાન આયુષ્યવાળા હોવા છતાં પણ જુદા જુદા સમયમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તેઓ તુલ્ય સ્થિતિવાળા હોવા છતાં પણ જુદા જુદા સમયે ઉત્પન્ન થવા ને કારણે યોગના વિષમ પણાને લઈને જુદા જુદા વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરવાવાળા હોય છે. 'તત્થ ણં જે તે વિસમાડયા સમોવવન્નગા તે ણં વેમાયટ્ટિહયા તુલ્લવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે'તિ' તથા જે એકે ઇન્દ્રિયવાળા હોવે વિષમ આયુષ્યવાળા હોય છે, અને એક સાથે ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે, તેઓ વિષમ સ્થિતિવાળા તુલ્ય વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે. તેઓ વિમાત્રસ્થિતિના એકે ઇન્દ્રિયવાળા હોવે સમાન ઉત્પન્નિવાળા હોવાને કારણે સરખા યોગવાળા હોય છે. તેથી તેઓ તુલ્ય વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરનારા હોય છે. ।૩। 'તત્થ ણં જે તે વિસમાડયા

‘तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा ते णं वेमायट्ठिइया वेमाय-
विसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तत्र खलु ये ते विषमायुष्का विषमोपपन्नकारते खलु
विमात्र विशेषाधिकं कर्म ज्ञानावरणीयादिकं प्रकुर्वन्ति, एते विमात्रस्थितिका विष-
मायुषो विषमोपपन्नकाः विषमोपपन्नत्वाच्च योगवैषम्येण विमात्रविशेषाधिकं
कर्म प्रकुर्वन्तीति ४ ।

‘से तेणट्ठेणं गोयमा ! वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तत् तेनार्थेन
गौतम !, यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति, अत्र यावत्पदेन एवमुच्यते,
अस्त्येकके तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति इत्यारभ्य अस्त्येकके
विमात्रस्थितिका एतदन्त प्रकरणस्य संग्रहो भवतीति ।

विसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ ‘तथा जो एकेन्द्रिय जीव विषम आयुवाले
होते हैं और विषम समय में उत्पन्न हुए होते हैं वे विषम स्थितिवाले
होते हैं और विषम विशेषाधिक कर्मके बन्धक होते हैं । ४ तात्पर्य
कहने का यही है कि जहाँ विषमकाल में उत्पन्न होता है वहाँ पर योगों
की विषमता है और उसकी विषमता से भिन्न भिन्न विशेषाधिक
कर्मोंकी बन्धकता है और जहाँ समान समय में उपपात है वहाँ
योगों की समता है इससे वहाँ समान विशेषाधिक कर्मों की बन्ध-
कता है ऐसा जानना चाहिये । ‘से तेणट्ठेणं गोयमा जाव वेमायविसे-
साहियं कम्मं पकरे’ति’ इसी कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि वे
एकेन्द्रिय जीव यावत् विषम विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं । यहाँ
यावत्पद से ‘एवमुच्यते अस्त्येकके तुल्यस्थितिका तुल्यविशेषाधिकं

विसमोववन्नगा तेणं वेमायट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तथा जे
એક ઈન્દ્રિયવાળા જીવો વિષમ આયુષ્યવાળા હોય છે, અને વિષમ સમયમાં
ઉત્પન્ન થાય છે, તે વિષમ સ્થિતિવાળા હોય છે અને વિષમ વિશેષાધિક
કર્મનો બંધ કરનારા હોય છે. ૪ આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે-ન્યાં
વિષમ કાળમાં ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યાં યોગોનું વિષમપણું હોય છે. અને તે
વિષમ પણાથી જુદા જુદા વિશેષાધિક કર્મોનું બંધ પણું રહે છે અને ન્યાં
સમાન સમયમાં ઉત્પન્ન થવાનું કહેલ છે, ત્યાં યોગોનું સમાનપણું છે. તેથી
ત્યાં સમાન વિશેષાધિક કર્મોનું બંધકપણું કહેલું છે તેમ સમજી લેવું
‘સે તેણટ્ઠેણ ગોયમા ! જાવ વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ આ કારણથી
હે ગૌતમ ! મેં એવું કહેલ છે કે-તે એક ઈન્દ્રિયવાળા જીવો યાવત્ વિષમ
વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે. અહિંયાં યાવત્પદથી ‘એવમુચ્યતે અસ્ત્યેકકે

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद् विहरति । हे भदन्त ! एकेन्द्रियजीवानां विषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत् सर्वमेवमेव सर्वथैव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू०८॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपद्भूषितबालब्रह्मचारि - ‘जैनाचार्य’

पूज्यश्री-घासीलालत्रिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां

व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमस्य एकेन्द्रियशतकस्य

प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३४॥१॥१॥

कर्म प्रकुर्वन्ति’ यहां से लेकर ‘अस्त्येकके विद्याप्रस्थितिका ‘यहां तक का पाठ ग्रहीत हुआ है । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति’ जाव विहरइ ‘हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीवों’ के विषय में जो आप देवानुप्रियने जो कहा है वह सर्व ही सर्वथा सत्य है २ इस प्रकार कहकर गौतमने भगवान् को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना और नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० ८॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत

“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौतीसवें शतक के

प्रथम एकेन्द्रियशतक का पहला उद्देशक समाप्त ॥३४-१॥

तुल्यस्थितिकाः तुल्य विशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति’ आ कथन्ती लघने ‘अस्त्येकके विमात्रस्थितिका’ अद्वियां सुधीना पाठ ग्रहण करेला छे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ’ हे भगवन् एकेन्द्रियवाणा जीवोना संयममां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने प्रबुश्रीने वंदना करी नमस्कार कथा वंदना नमस्कार करीने तपशी तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०८॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलाल महाराजकृत ‘भगवतीसूत्र’ की

प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना चौतीसवें शतकमां एकेन्द्रिय शतकने

पहले उद्देशो समाप्त ॥३४-१॥

अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते

मूलम्—कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया
 पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया
 पन्नत्ता तं जहा—पुढवीकाइया दुया भेओ जहा—एगिंदियसएसु
 जाव वायरवणस्सइकाइया य, कहिं णं भंते ! अणंतरोववन्नगा
 णं वायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! सट्टाणैणं
 अट्टसु पुढवीसु तं जहा—रणप्पभाए जहा ठाणपदे जाव
 दीवेषु समुद्देशु । एत्थ णं अणंतरोववन्नगाणं वायरपुढवी-
 काइयाणं ठाणा पन्नत्ता, उववाएणं सव्वलोए । समुग्घाएणं
 सव्वलोए । सट्टाणैणं लोमस्स असंखेज्जइभागे । अणंतरो-
 ववन्नग सुहुमपुढवीकाइया एगविहा अविलेससणाणत्ता सव्व-
 लोए परियावन्ना पन्नत्ता समणाउसो ! एवं एएणं कमेणं
 सव्वे एगिंदिया भाणियव्वा, सट्टाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपदे
 तेसिं पज्जत्तगाणं वायराणं उववाय समुग्घाय सट्टाणाणि जहा
 तेसिं च्च अपज्जत्तगाणं वायराणं सुहुमाणं सव्वेसिं जहा—
 पुढवीकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइ-
 यत्ति । अणंतरोववन्नगाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ
 कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! अट्ट कम्मपगडीओ
 पन्नत्ताओ, एवं जहा एगिंदियसएसु अणंतरोववन्नग उद्देशए
 तहेव पन्नत्ताओ तहेव वंधंति । तहेव वेदंति जाव अणंतरो-
 ववन्नगा वायरवणस्सइकाइया । अणंतरोववन्नगएगिंदिया
 णं भंते ! कओ उववज्जंति । जहेव ओहिओ उद्देशओ भणिओ
 तहेव । अणंतरोववन्नगएगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्घाया पन्नत्ता ।
 गोयमा ! दोन्नि समुग्घाया पन्नत्ता । तं जहा—वेयणासमु-
 ग्घाए य कसायसमुग्घाए य । अणंतरोववन्नग एगिंदियाणं

भंते ! किं तुल्लट्टिइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरेंति ?,
 पुच्छा तहेव । गोयमा ! अत्थेगइया तुल्लट्टिइया तुल्ल विसे-
 साहियं कम्मं पकरेंति, अत्थेगइया तुल्लट्टिइया वेमायविसेसा-
 हियं कम्मं पकरेंति । से केणट्टेणं जाव वेमाय विसेसाहियं कम्मं
 पकरेंति ? गोयमा ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया दुविहा पन्नत्ता ।
 तं जहा—अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा १, अत्थेगइया
 समाउया विसमोववन्नगा २ । तत्थ णं जे ते समाउया समो-
 ववन्नगा ते णं तुल्लट्टिइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।
 तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं तुल्लट्टिइया
 वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, से तेणट्टेणं जाव वेमाय विसे-
 साहियं कम्मं पकरेंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

चोत्तीसइमेसए पढमे एगिंदियसए वीओ उद्देशो समत्तो । ३४-१-२।

छाया—कतिविधाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
 गौतम ! पञ्चविधा अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—पृथिवी-
 कायिका द्विपदो भेदो यथा—एकेन्द्रियशतकेषु यावद् वादर वनस्पतिकायिकाश्च ।
 कुत्र खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाणां वादरपृथिवीकायिकानां स्थानानि प्रज्ञ-
 प्तानि ? गौतम ! स्वस्थानेनाष्टसु पृथिवीसु, तद्यथा—रत्नप्रभायां यथा स्थानपदे
 यावद् द्वीपेषु समुद्रेषु, अत्र खलु अनन्तरोपपन्नकानां वादरपृथिवीकायिकानां
 स्थानानि प्रज्ञप्तानि । उपपातेन सर्वलोके, समुद्रघातेन सर्वलोके, स्वस्थानेन
 लोकस्यासंख्येयभागे, अनन्तरोपपन्नकं सूक्ष्मपृथिवीकायिका एकविधा अवि-
 शेषा अनानात्वाः सर्वलोके पर्यापन्नाः प्रज्ञप्ताः, श्रमण ! आयुष्मन् ! एवमेतेन
 क्रमेण, सर्वे एकेन्द्रिया भणितव्याः, स्वस्थानानि सर्वेषां यथा स्थानपदे ।
 तेषां पर्यन्तकानां वादराणामुपपातसमुद्रघातस्वस्थानानि यथा तेषामेवापर्याप-
 कानां वादराणाम् । सूक्ष्माणां सर्वेषां यथा पृथिवीकायिकानां भणितानि तथैव
 भणितव्यानि यावद् वनस्पतिकायिका इति । अनन्तरोपपन्नकानां सूक्ष्मपृथिवी-
 कायिकानां भदन्त ! कति कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः, गौतम ! अष्टौ कर्मप्रकृतयः
 प्रज्ञप्ताः । एवं यथा एकेन्द्रियशतेषु अनन्तरोपपन्नकोद्देशके तथैव वध्नन्ति, तथैव
 वेदयन्ति, यावदनन्तरोपपन्नकाः वादरवनस्पतिकायिकाः । अनन्तरोपपन्नकै-

न्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते, यथैवौधिकउद्देशको भणितस्तथैव । अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाणाम्, भदन्त ! कति समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्वौ समुद्घातौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-वेदना समुद्घातश्च कषायसमुद्घातश्च । अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! किं तुल्यस्थितिका स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? पृच्छा तथैव । गौतम ! अस्त्येकके तुल्यस्थितिका स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । अस्त्येकके तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तत्केनार्थेन यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रिया द्विविधा, प्रज्ञप्ताः । तद्यथा-अस्त्येकके समायुष्काः समोपपन्नकाः १, अस्त्येकके समायुष्काः विषमोपपन्नकाः २ तत्र खलु ये ते समायुष्काः समोपपन्नकास्ते खलु तुल्यस्थितिका स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तत्र खलु ये ते समायुष्का विषमोपपन्नकास्ते खलु तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तत्तेनार्थेन यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! चतुर्विंशत्तमे शते प्रथमे एकेन्द्रियशते द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३४॥१॥२॥

टीका—‘कइविहाणं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः कति प्रकाराः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः, ये अनन्तरे-उत्पत्तेः प्रथमे समये वर्तन्ते । तेऽनन्तरोपपन्नकाः इत्थंभूता एकैन्द्रियजीवाः प्रज्ञप्ताः कथिताः, कियन्तो भेदा एकेन्द्रियाणामिति प्रश्नः । भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ पञ्चविधाः-

दूसरे उद्देशिका प्रारंभ-

‘कइविहाणं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया’ इत्यादि

टीकार्थ-‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भदन्त जो उत्पत्ति के प्रथम समयमें वर्तते हैं ऐसे वे अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता’ हे गौतम !

॥३४॥१॥२॥

‘कइ विहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया’ इत्यादि

‘कइ विहाणं भंते ! अणंतरोववन्नगा एगिंदिया पणत्ता’ हे भगवन् वे आनी उत्पत्ती ओक व समयमां डाय छे. ओवा ते अनंतरोपपन्नक ओक-इन्द्रिय ओवा उटला प्रकारना कडेवामां आओया छे ? ‘गोयमा ! पंचविहा

પંચપ્રકારકા અનન્તરોપપન્નકા એકેન્દ્રિયજીવાઃ પ્રજ્ઞતા-કથિતાઃ । પ્રકાર-
 ભેદમેવ દર્શયતિ-‘તં જહા’ इत्यादि । ‘तं जहा’ तद्यथा-‘पृथ्वीकाइया दुया भेदो
 जहा एगिंदियसएसु जाव वायरवणस्सइकाइयाय’ पृथिवीकायिकाः द्विपदो भेदो
 यथा-एकेन्द्रियशतेषु त्रयस्त्रिंशत्समे शते एकेन्द्रियशतेषु मध्ये प्रथमस्य एकेन्द्रिय
 शतस्य द्वितीये उद्देशके यावद् वादरवनस्पतिकायिकाश्च द्विपदो भेदः सूक्ष्म-
 वादररूपः । इहानन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाणामधिकारात् अनन्तरोपपन्नकानां च
 पर्याप्तकत्वाभावात् अपर्याप्तकानां सतां सूक्ष्मा वादराश्चेति द्विपद एव भेदः
 कथितो नत्वन्यत्रेव चतुष्को भेदः कथित इति । स्थानभेदनिरूपणायह-‘कहिं णं’
 इत्यादि । ‘कहिं णं भंते ! अणंतरोववन्नगाणं वायरपुठवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता’
 कुत्र-खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकानां वादरपृथिवीकायिकानां स्थानानि-निवा-
 साधिकरणानि प्रज्ञप्तानि-कथितानीति प्रश्नः । भगवान्नाह-‘गोयमा’ इत्यादि ।

अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं ‘तं जहा’
 जैसे-‘पृथ्वीकाइया दुया भेदो जहा एगिंदियसएसु जाव वायरवण-
 स्सइकाइया य’ ‘पृथिवीकायिक वगैरह इनके दो दो भेद जैसे एके-
 न्द्रिय शतको’ में कहे गये हैं सूक्ष्म और वादर के भेद से यावत्
 वनस्पतिकायिक तक वैसे ही यहां जानना चाहिये । यहाँ अनन्तरो-
 पपन्नक एकेन्द्रियो’ का अधिकार है । इसलिये इनमें पर्याप्तता का
 अभाव रहता है । इसलिये यहां सूक्ष्म और वादर ऐसे ये दो भेद
 ही इनके कहे गये हैं । दूसरी जगह के जैसे यहां एकेन्द्रिय पृथिवी
 कायिकके चार भेद नहीं कहे हैं । ‘कहिं णं भंते ! अणंतरोववन्नगाणं
 वायरपुठवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता’ हे भदन्त ! इन अनन्तरोपपन्नक
 वादर पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीवों के स्थान कहां कहे गये हैं ?

अणंतरोववन्नगा पणत्ता’ हे गौतम ! अनंतरोपपन्नक એકેન્દ્રિય જીવો પાંચ
 પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે. ‘તં જહા’ તે આ પ્રમાણે છે. ‘પૃથ્વીકાઈયા દુયા
 ભેદો જહા એગિંદિયસસુ જાવ વાયરવણસ્સઈકાઈયા ય’ પૃથ્વીકાઈયિક વિગેરેના
 બે ભેદો બે રીતે એકઠંન્દ્રિય શતકમાં કહેવામાં આવેલ છે. સૂક્ષ્મ અને વાદરના
 ભેદથી યાવત્ વનસ્પતિકાઈયિક સુધીના કહ્યા છે, એજ પ્રમાણે અહિયાં પણ
 સમજવું. અહિયાં અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયોના અધિકાર છે. તેથી પર્યાપ્ત
 પણાનો અભાવ રહે છે. તેથી અહિયાં સૂક્ષ્મ અને વાદર એવા બે જ ભેદો
 તેઓના કહ્યા છે. અન્ય સ્થળની જેમ અહિયાં એકઠંન્દ્રિયવાળા પૃથ્વીકાઈયિકોના
 ચાર ભેદો કહ્યા નથી. ‘કહિં ણં ભંતે ! અણંતરોવવન્નગાણં વાયર પુઠ્ઠવીકાઈયાણં
 ઠાણા પન્નત્તા’ હે ભગવન્ આ અનંતરોપપન્નક વાદર પૃથ્વીકાઈયિક એકઠંન્દ્રિય

‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सद्वाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ स्वस्थानेन अट्टसु पृथिवीषु यत्र ते तिष्ठन्ति तानि तेषां स्वस्थानानि, तदपेक्षया तेषामष्टासु पृथिवीषु स्थानानि कथितानि, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘रयणप्पभाए जहा ठाणापदे’ रत्नप्रभायां यथा—स्थानपदे प्रज्ञापनाया द्वितीयं पदं तत्र यथा रत्नप्रभादिकं प्राग्भारापृथिवी पर्यन्तं स्थानतया कथितं तदेव स्थानतया अत्रापि ज्ञातव्यमिति । कियत्पर्यन्तं प्रज्ञापनायाः स्थानपदमिह ग्रह्यम्, तत्राह—‘जाव’ इत्यादि । ‘जाव दीवेसु समुद्देसु’ यावद्दीपेषु समुद्रेषु द्वीपसमुद्रादिकं सर्वमेव अनन्तरोपपन्न वादरपृथिवीकायिकै-केन्द्रियाणां स्थानमिति । स्थानमुपसंहरन्नाह—‘एत्थ णं’ इत्यादि । ‘एत्थ णं अणंत-

उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । सद्वाणे णं अट्टसु पुढवीसु’ हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा से इन अनन्तरोपपन्नक वादर एकेन्द्रिय जीवोंके स्थान आठ पृथिवियों में कहे गये हैं क्योंकि ये वहाँ पर रहते हैं । वे आठ पृथिवियां इस प्रकार से हैं—‘रयणप्पभाए जहा ठाणपदे’ स्थानपद यह प्रज्ञापना का द्वितीय पद है । उसमें रत्नप्रभा से लेकर ईषत्प्राग्भारा पृथिवी तकके स्थान को इनका निवासस्थान बतलाया गया है । सो ऐसा ही यहाँ पर इनके निवासस्थान के सम्बन्ध में जानना चाहिये । ‘जाव दीवेसु समुद्देसु’ इन पृथिवियों आदि के अतिरिक्त और भी इन अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवोंके रहने के स्थान हैं जो इस सूत्रपाठ द्वारा बतलाये गये हैं वे स्थान हैं द्वीप और समुद्र । समस्त द्वीपोंमें और समस्त समुद्रों में भी ये अनन्तरोपपन्नक वादरपृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीव रहते हैं ।

अवेणुं स्थान कयां कडेवामां आवेल छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा । सद्वाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ हे गौतम ! स्वस्थाननी अपेक्षाथी आ अनंतरोपपन्नक वादर ऐकधन्द्रियवाणा अवेणा स्थाने आठ पृथ्वीयोयां कडेवामां आवेल छे. केम के ते त्यां रहे छे. ते आठ पृथ्वीयो आ प्रमाणु छे ‘रयणप्पभाए जहा ठाणपदे’ प्रज्ञापना सूत्रना थील स्थान पदमां रत्नप्रला विदेशी लधने प्राग्भारा पृथ्वी सुधीना स्थाने तेओना निवास स्थान कडेल छे. तो ते व प्रमाणु अहीया तेओना निवास स्थानना संघंघमा समञ्जु’. ‘जाव दीवेसु समुद्देसु’ आ पृथ्वीयो शिवाय थील पणु आ अनंत-रोपपन्नक ऐकधन्द्रिय अवेने रहेवामा स्थाने छे ने आ सूत्रपाठ द्वारा अताववामां आवेल छे ते स्थाने द्वीप अने समुद्र छे सधणा द्वीपोमां अने सधणा समुद्रोमां पणु आ अनंतरोपपन्नक ऐक धन्द्रियवाणा अवे रहे छे. आ रीते ‘एत्थ णं अणंतरोवण्णमाणं वायर पुढवीकाइयाणं ठाणा

शैववन्नगाणं वायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता' अत्र रत्नप्रभादिषु द्वीपसमुद्रादिषु च खलु अनन्तरोपपन्नकानां वादरपृथिवीकायिकानां स्थानानि प्रसृतानि कथितानि । एतेषु द्वीपसमुद्रादिषु एते तिष्ठन्तीति भावः ।

तत् किमेतावदेव स्थानम् अनन्तरोपपन्नकानां तत्राह—'उववाएणं' इत्यादि । 'उववाएणं सव्वलोए' उपपात्तेन सर्वलोके स्थानम्, 'समुग्घाएणं सव्वलोए' समुद्घातेन सर्वलोके तत्रोपपातेन—उपपाताभिमुख्येनापान्तरालवृत्त्येत्यर्थः समुद्घातेन मारणान्तिकेनेति । अनन्तरोपपन्नका हि उपपातमारणान्तिक समुद्घाताभ्यामति बहुत्वात् सर्वलोकमपि व्याप्य वर्तन्ते, अत्रचैवं भूतया स्थापनया भावना कर्तव्या ।



अत्र प्रथमवक्रं यथैव एके संहरन्ति, तदैव तद्वक्रदेश मन्ये पूरयन्ति । एवं द्वितीयवक्रसंहरणेऽपि अवक्रोत्पत्तावपि प्रवाहतो भावनीयम् । अनन्तरोपपन्नकत्वं चेह भाविभावापेक्षं

इस प्रकार 'एत्थ णं अणंतरोववन्नगाणं वायर पुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता' इन रत्नप्रभा आदि पृथिवियों में और जम्बूद्वीप आदि द्वीपों में एवं लवण समुद्र आदि समुद्रों में अनन्तरोपपन्नक वादरपृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीवों के स्थान कहे गये हैं । इन सब में ये एकेन्द्रिय जीव रहते हैं । 'उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए' उपपात की अपेक्षा से और मारणान्तिक समुद्घात की अपेक्षा ये जीव बहुत ही अधिक होनेके कारण समस्त लोकको व्याप्त कर के रह रहे हैं । इनकी ऐसी रचनासे भावना करनी चाहिये ।

यहां जब प्रथम वक्र स्थानको कितनेक अनन्तरोपपन्नक जीव संहृत करते हैं—खाली करते हैं—तब



उसी समय उस वक्र स्थानको दूसरे और अनन्तरोपपन्नक जीव भर देते हैं । इसी प्रकार से जब द्वितीय वक्र स्थानका संहरण होता है तब उसे और दूसरे अनन्तरोपपन्नक जीव भर देते हैं इस

पन्नत्ता' आ रत्नप्रभा विगेरे पृथ्वीयोमां अने ज'भूद्वीप विगेरे द्वीपोमां तथा लवण समुद्र विगेरे समुद्रोमां अनंतरोपपन्नक वादर ओकधेन्द्रियवाणा लोवना स्थाने। उडेवामां आवेल छे. आ णधामां ओक धेन्द्रियवाणा लोवे रहे छे. 'उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए' उपपातनी अपेक्षाथी अने मारणान्तिक समुद्घातनी अपेक्षाथी आ लोवे घण्टा वधादे होवाने कारणे सधणा लोकने व्याप्त करीने रहे छे. तेओनी स्थाना आ प्रकारनी करीने लावना करवी जेधये. अडियां न्यादे पडेवा वकस्थानने डेटलाक अनंतरोपपन्नक लोवे भाली करे छे, त्यादे तेज समये ते वकस्थानने



धीन अनंतरोपपन्नक लोवे लारी हे छे, ओ रीते न्यादे धीन वक

ग्राह्यमपान्तराले तस्य साक्षादभावात् । मारणान्तिकसमुद्घातश्च प्राक्तन भावापेक्षया अनन्तरोपपन्नकावस्थायां तस्यासम्भवादिति । 'सद्वाणेणं लोगस्स असंखेज्जइ भागे ति' स्वस्थानेन लोकरयासंख्येयभागे रत्नप्रभादि पृथिवीनां विमानानां च लोकस्यासंख्येयभागवर्तित्वात्, पृथिव्यादीनां च पृथिवीकायिकानां स्वस्थान-त्वादिति । 'अणंतरोववन्नग सुहुमपुढवीकाइया एगविहा अविसेसमणाणत्ता' अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः सर्वेऽपि एकविधा एकप्रकारका एव भवन्ति अविशेषाः परस्पर विशेषरहिता अतानात्वाः परस्परं भेदरहिताश्च भवन्ति 'सव्व लोए परियावन्ना' सर्वलोके पर्यापन्नाः व्याप्ताः 'पन्नत्ता' प्रज्ञप्ताः—कथिता इति

प्रकार प्रवाह रूप से यह सदा धरा ही रहता है । अनन्तरोपपन्नकता यहाँ भावी भव की अपेक्षा से कही गई है । क्योंकि अपान्तराल में इसका साक्षात् अभाव रहता है । मारणान्तिक समुद्घात प्राक्तन भवकी अपेक्षा से कहा गया है । क्योंकि अनन्तरोपपन्नक की अवस्था में इसका अभाव होता है, 'सद्वाणेणं लोगस्स असंखेज्जइ भागे ति' स्वस्थान की अपेक्षा से लोकके असंख्यातवें भाग में रहते हैं । क्योंकि रत्नप्रभा आदि पृथिवियां और विमान ये सब लोकके असंख्यातवें भाग में हैं । और पृथिवी आदि पृथिवीकायिकों के स्वस्थान हैं । 'अणंतरोववन्नग सुहुमपुढवीकाइया एगविहा अविसेस-मणाणत्ता' सब अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीव एकप्रकार के ही होते हैं । परस्पर में ये विशेषता से रहित होते हैं । और इनमें कोई भेद नहीं होता है । 'सव्वलोए परियावन्ना' ये

स्थानतुं संडरणु थाय छे त्त्यारे तेनाथी णीण अनंतरोपपन्नक लोवे ते स्थान लरी हे छे. आ प्रमाणे प्रवाह इपथी अडियां अथा लर्याण रडे छे. अनंतरोपपन्नकपणुं अडियां आगामी लवनी अपेक्षाथी कडेल छे. केम के—अपान्तरालमां तेना साक्षात् अभाव रडे छे. 'सद्वाणेणं लोगस्स असंखेज्जइ भागेत्ति' स्वस्थाननी अपेक्षाथी तेओ लोकना असंख्यात लागमां रडे छे. केम के रत्नप्रभा विगेरे पृथ्वीयो अने विमानो ओ अथा लोकना असंख्यातमा लागमा छे. अने पृथ्वी विगेरे पृथ्वीकायिकीनुं स्वस्थान छे. 'अणंतरोववन्नगसुहुमपुढवीकाइया एगविहा अविसेसमणाणत्ता' सधणा अनंतरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ओक ईन्द्रियवाणा लोवे ओक प्रकारना णु होय छे. तेओ अन्ये अन्य विशेष पणुथी रहित होय छे. अने तेओमां कांई लेह होतो नथी. 'सव्वलोए परियावन्ना' आ सधणा लोकमां व्याप्त

‘समणाउसो’ हे श्रमण आयुष्मन् ! ‘एवं एएणं कमेणं सव्वे एगिंदिया भाणियव्वा’ एवम् अनन्तरोपपन्नक पृथिवीकायिकेकेन्द्रियवद्देव सर्वेऽपि अप्कायिकादय एकेन्द्रिया भणितव्याः प्ररूपणीया इति । ‘सट्टाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपदे तेसिं पज्जत्तगाणं वायराणं’ स्वस्थानानि सर्वेषां शेवाणामप्कायिकाद्येकेन्द्रियाणां यथा-स्थानपदे-प्रज्ञापनाया द्वितीयपदे तेषां पर्याप्तकानां वादराणां यथा कथितानि तथैव ज्ञातव्यानि । वादरपृथिवीकायिकानां स्वस्थानानि चैत्रम्-‘अट्टसु पुढवीसु तं जहा-रयणप्पभाए’ अष्टसु पृथिवीषु तद्यथा-रत्नप्रभायाम् इत्यादि, वादरा-प्कायिकानाम् ‘सत्तसु घणोदहीसु’ सप्त घनोदधयः स्वस्थानम्, वादरतेजस्कायिका-

समस्त लोक में व्याप्त होकर रहते हैं ऐसा ‘समणाउसो’ हे श्रमण आयुष्मन् ! इनके सम्बन्ध में कहा गया है । ‘एवं एएणं कमेणं सव्वे एगिंदिया भाणियव्वा’ इसी प्रकार से समस्त सूक्ष्म अप्कायिक आदि एकेन्द्रिय जीव कह देने चाहिये । ‘सट्टाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपदे, तेसिं पज्जत्तगाणं वायराणं’ इन पृथिवीकायिक जैसा ही समस्त अप्कायिक आदि एकेन्द्रिय जीवों के स्वस्थान प्रज्ञापना के स्थान पद में कहे गये अनुसार जानना चाहिये ! जिस प्रकारसे पर्याप्त वादर एकेन्द्रियों के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान कहे गये हैं उसी प्रकार से वे अपर्याप्त वादर एकेन्द्रिय जीवों के भी जानना चाहिये । वादरपृथिवीकायिकों के स्वस्थान इस प्रकार से हैं-‘अट्टसु पुढवीसु तं जहा रयणप्पभाए’ वादरपृथिवीकायिकों का स्वस्थान रत्नप्रभा आदि आठ पृथिवियों में है ‘सत्तसु घणोदहीसु’ वादरअप्कायिकों का स्वस्थान सात घनोदधियों में है । वादर तेजस्कायिकों का

थधने रहे छे. ओ प्रभाणे “समणाउसो” हे श्रमण आयुष्मन् आभना विषयमां कडेल छे. ‘एवं एएणं कमेणं सव्वे एगिंदियो भाणियव्वा’ आण प्रभाणे सधणा सूक्ष्म अप्कायिक विगेरे ओकेन्द्रिय ओवेना संभंधमां कडेल छे. ‘सट्टाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपदे तेसिं पज्जत्तगाणं वायराणं’ आ सधणा अप्कायिक ओकेन्द्रिय ओवेतुं स्वस्थान प्रज्ञापना सूत्रना स्थानपदमां कट्टा प्रभाणे समञ्जुं. ओ रीते पर्याप्त आदर ओकेन्द्रियवाणा ओवेना उपपात, समुद्घात अने स्वस्थान कडेवामां आवेल छे, ओण प्रभाणे आ अपर्याप्त आदर ओकेन्द्रियवाणा ओवेना संभंधमां पणु समञ्जुं. आदर पृथ्वीकायिकेना स्वस्थान आ प्रभाणे कडेल छे.-‘अट्टसु पुढवीसु तं जहा रयणप्पभाए’ आदर पृथ्वीकायिकेनुं स्वस्थान रत्नप्रभा विगेरे आठ पृथ्वीयोमां छे. ‘सत्तसु घणोदहीसु’ आदर अप्कायिकेनुं स्वस्थान सातघनोदधि छे. आदर

नाम् 'अंतोमणुस्सखेत्ता' अन्तर्भनुष्यक्षेत्रमित्यादि, वादरवायुकायिकानां पुनः स्वस्थानम् 'सत्तसु घगवायवलएसु' सप्तघनवाततलवाः वादरवनस्पतीनां तु स्वस्थानम् 'सत्तसु घणोदहीसु' सप्तघनोदधर इत्यादि । 'उत्रवाय समुग्घाय सट्टाणाणि जहा तेसिं चैव अपज्जत्तगाणं वायराणं' उपपातसमुद्घातस्वस्थानानि यथा तेषां पृथिवीकायिकानामेव अपर्याप्तकानाम् अपर्याप्ततागुणविशिष्टानां वादराणाम्, अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकादीनां येन प्रकारेणोपपातसमुद्घात स्वस्थानानि कथितानि तेनैव रूपेण पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकादीनामपि उपपात समुद्घात स्वस्थानानि ज्ञातव्यानि, तानि चैवम् 'जत्थेव वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव वायर पुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं सव्वलोए, समुग्घाएणं सव्वलोए, सट्टाणेणं लोमस्स असंखेज्ज

स्वस्थान 'अंतो मणुस्सखेत्ते' अन्तर्भनुष्य क्षेत्र है । 'सत्तसु घगवायवलएसु' वादरवायुकायिकों का स्वस्थान सात घनवात आदि हैं । वादरवनस्पतिकायिकों का स्वस्थान 'सत्तसु घणोदहीसु' सात घनोदधियों में है । इत्यादि । 'उत्रवाय समुग्घाय सट्टाणाणि जहा तेसिं चैव अपज्जत्तगाणं वायराणं' उपपात, समुद्घात और स्वस्थान ये तिस्र प्रकार से पर्याप्त वादर एकेन्द्रिय जीवों के कहे हैं । उसी प्रकारसे ये अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिक आदिकों के कहे गये हैं ऐसा जानना चाहिये । 'जत्थेव वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव वायरपुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता' इसीलिये ऐसा यह सूत्र कहा गया है जहां पर पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकों के स्थान हैं वहीं पर अपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकों के स्थान हैं । 'उववाएणं सव्वलोए, समुग्घाएणं

तेनस्कायिकेतुं स्वस्थान 'अंतोमणुस्स खेत्ता' अन्तर्भनुष्य क्षेत्र छे वादरवायु कायिकेतु स्वस्थान सात घनवात विगेरे छे. वादर वनस्पतिकायिकेतुं स्वस्थान 'सत्तसु घणोदहीसु' सात घनोदधियात वलय छे इत्यादि 'उत्रवाय समुग्घाय सट्टाणाणि जहा तेसिं चैव अपज्जत्तगाणं वायराणं' उपपात, समुद्घात, अने स्वस्थान अे अथा ने प्रमाणे पर्याप्त वादर अेकधन्द्रियवाणा जीवोना कहा छे, अेअ प्रमाणे आ अपर्याप्त वादर पृथ्वीकायिक विगेरेना पणु कहेला छे. तेअ समनु 'जत्थेव वायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव वायर पुढवीकाइयाण अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता' अे आटे अ आ प्रमाणेतुं आ सूत्र कहेल छे. ज्यां पर्याप्त वादर पृथ्वीकायिकेतु स्वस्थान छे, त्यां अ अपर्याप्त वादर पृथ्वीकायिकेतुं स्थान छे. 'उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएण

इमागे' इत्यादि । यथैव वादरपृथिवीकायिकानां पर्याप्तकानां स्थानानि तथैव वादरपृथिवीकायिकानामपर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि उपपातेन सर्व-लोकं, समुद्रघातेन सर्वलोके, स्वस्थानेन लोकस्यासंख्येयभागे, इत्यादीति-च्छाया । 'सुहुमाणं सव्वेसिं जहा पुढवीकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइयत्ति' सूक्ष्माणं सर्वेषामपकायिकादीनां वनस्पतिकायिकान्तानां यथा पृथिवीकायिकानां मुपपातसमुद्रघातस्वस्थानानि तथैव-तेनैव रूपेण अपकायिकादीनां सूक्ष्माणामपि उपपातसमुद्रघात स्वस्थानानि भणितव्यानि यावद्व-नस्पतिकायिका इति, अपकायिकादारभ्य वनस्पतिकायपर्यन्तानां मुपपात समु-द्रघात स्वस्थानानि पृथिवीकायिकवदेव ज्ञातव्यानीति भावः । 'अणंतरोववन्नगाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' 'अनन्तरोपपन्नकानां सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां भदन्त ! कति-कियत्संख्यकाः कर्मप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः ?

सव्वलोए, सट्टाणेणं लोवस्स असंखेज्जइ भागे' ये उपपातकी अपेक्षा से सर्वलोक में हैं' समुद्रघातकी अपेक्षा से भी ये सर्वलोक में हैं और स्वस्थान की अपेक्षा से ये लोकके असंख्यातवे' भागमें रहते हैं । 'सुहुमाणं सव्वेसिं जहा पुढवीकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइयत्ति' जिस प्रकार से सूक्ष्म पृथिवीकायिकों के उप-पात समुद्रघात और स्वस्थान कहे गये हैं उसी प्रकार से समस्त सूक्ष्म एकेन्द्रियोंके-अपकायिक से लेकर वनस्पतिकायिकों तकके उपपात समुद्रघात और स्वस्थान कह लेना चाहिये । 'अणंतरोवव-न्नगाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' 'हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियां कही गई हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं- 'जोयमा अट्ट-

सव्वलोए, सट्टाणेणं लोवस्स असंखेज्जइ भागे' उपपातकी अपेक्षाथी आ सर्व लोकमा रडे छे. समुद्रघातकी अपेक्षाथी पण्ण आ सर्व लोकमा रडे छे. अने स्वस्थानकी अपेक्षाथी आ सर्व लोकमा असंख्यातमा भागमा रडे छे. 'सुहुमाणं सव्वेसिं जहा पुढवीकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा' जाव वण-स्सइकाइयत्ति' ये प्रमाणे सूक्ष्म पृथिवीकायिकानां उपपात, समुद्रघात, अने स्वस्थान इहमा छे. अण्ण प्रमाणेसधमा सूक्ष्म एकेन्द्रियवाणां लोवने अपकायिकथी लोवने वनस्पति कायिके सुधीनां उपपात, समुद्रघात अने स्वस्थान इडेवा लोवने 'अणंतरोववन्नगाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ' हे भागवन् अनंतरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक लोवने डेटली कर्म प्रकृतियो इडेवामा आवी छे ? आ प्रश्ना उत्तरमा प्रभुश्री गौतमस्वामीने

इति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अष्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ अष्ट कर्मप्रकृतयः ज्ञानावरणीयादिकाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः ‘एवं जहा एग्गि-दिय सएसु अणंतरोववन्नगउद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव वंधंति तहेव वेदंति’ एवं यथा—एकेन्द्रियशतेषु त्रयस्त्रिंशत्प्रशतकस्य प्रथमे एकेन्द्रियशते द्वितीये अनन्तरो-पपन्नकोद्देशके तथैव प्रज्ञप्ताः । तथा तथैव वध्नन्ति तथैव वेदयन्ति इति ज्ञातव्यम् । प्रज्ञापनबन्धनवेदनरूपा स्तिस्त्रोऽपि वक्तव्यता एकेन्द्रियशतकोक्तवदेव वाच्या इति भावः, तथाहि—एकेन्द्रियशतके पञ्चविधा एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ता इति, बन्धन सूत्रे सप्तकर्मप्रकृती वध्नन्ति २, वेदनसूत्रे चतुर्दशविधाः ज्ञानावरणीया-

कम्म पगडीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! इनके आठ कर्मप्रकृतियां कही गई हैं । ‘एवं जहा एग्गिदियसएसु अणंतरोववन्नग उद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव वंधंति तहेव वेदंति’ जिस प्रश्नार से ३३ वै शतक के एकेन्द्रिय शतको में से प्रथम एकेन्द्रियशतक में द्वितीय अनन्तरो-पपन्नक उद्देशक में हे गौतम ! बन्ध और वेदन के सम्बन्ध में जैसा कहा गया है उसी प्रकारसे इनके सम्बन्ध में भी कहा गया जानना चाहिये । तात्पर्य इस कथनका केवल ऐसा ही है कि प्रज्ञापन-सत्त्व, बन्धन एव वेदन के सम्बन्ध में जैसा कथन एकेन्द्रिय शतको के अनन्तरोपपन्नक उद्देशक में करा है, उसी प्रकार का कथन यहां पर भी कह लेना चाहिये । जैसे इस सम्बन्ध में एकेन्द्रिय शतक में पांच प्रकारके एकेन्द्रिय जीव कहे गये हैं—बन्धन सूत्र में सात कर्मप्रकृतियों का इनके

कडे छे डे—‘गोयमा ! अष्ट कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! तेज्जोने आठ कर्म प्रकृतियो कडेवाभां आवी छे. ‘एवं जहा एग्गिदियसएसु अणंतरोववन्नग उद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव वंधंति तहेव वेदंति’ जे प्रमाणे उउ तेत्रीसभा शतकना अकेन्द्रिय शतकोमांथी पडेला अकेन्द्रिय शतकमां थील अनंतरो-पपन्नक उद्देशाभां हे गौतम ! अंधं अने वेदनना सम्बन्धमां जे प्रमाणे कडेवाभां आवेल छे, जेज प्रमाणे तेज्जोना सम्बन्धमां पण कडेवुं जेधं अ. कडेवातुं तात्पर्यं जे छे डे—सत्त्व, अंधन अने वेदनना संअंधमां अकेन्द्रिय शतकोना अनंतरोपपन्नक उद्देशाभां जे प्रमाणेनुं कथन करवाभां आवेल छे, जेज प्रमाणेनुं कथन आ प्रकरणुंमां अटले डे अनंतरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वी-कायिकोना संअंधमां समजवुं. जेम डे—प्रज्ञापना सूत्रमां पांच प्रकारना अकेन्द्रिय लोवा कडेवाभां आव्या छे. अन्धन सूत्रमा सात कर्मप्रकृतियोना तेज्जोने अंधं थाय छे, तेम कडेवाभां आवेल छे. वेदना सूत्रमां आ चौद प्रकारनी कर्मप्रकृतियोनुं

घट ८, श्रोत्रेन्द्रियाघातस्तः ४, स्त्री पुरुषवध्यरूपे द्वे २, एवं चतुर्दश कर्मप्रकृती
वेदयन्तीति तात्पर्यार्थः । क्रियत्पर्यन्त मेकेन्द्रियशतकमिहाध्येतव्यं तत्राह—‘जाव’
इत्यादि । ‘जाव अणंतरोववन्नगा वणस्सइकाइया’ यावदनन्तरोपपन्नका वन-
स्पतिकायिकाः अप्कायिकादारभ्य वनस्पतिकायिकान्ताः सर्वेऽपि अनन्तरोपपन्नकै
केन्द्रिया इत्थमेव पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः इत्थमेव कर्मप्रकृती बन्धन्ति वेदयन्ति
चेति भावः । ‘अणंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ अनन्तरोपप-
न्नकैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुतः—कस्मात् स्थानविशेषादागत्योत्पद्यन्ते ? इत्यु-
त्पादविषयकः प्रश्नः उत्तरमाह—‘जहेव ओहिओ उद्देसओ भणिओ तहेव’ यथैव
औघिक उद्देशको भणितः, अस्यैव चतुस्त्रिंशत्तमस्य शतकस्य पथमे एकेन्द्रियशते

बन्ध होना है ऐसा कहा गया है । वेदन सूत्र में ये चौदह प्रकार
की कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं ऐसा कहा गया है । वे चौदह
प्रकृतियां इस प्रकारसे हैं—ज्ञानावरणीयादिक ८ श्रोत्रेन्द्रियावरण ४
स्त्रीपुरुषावरणरूप दो २ । ‘जाव अणंतरोववन्नगा वणस्सइकाइया’ इसी
प्रकार का कथन यावत् अनन्तरोपपन्नक वनस्पतिकायिक तक जानना
चाहिये । अर्थात् ‘अप्कायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक सब
अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव जो कि पांच प्रकार के कहे गये हैं
इसी प्रकारसे कर्मप्रकृतियों का बन्ध करते हैं और इसी प्रकारसे
वे उनका वेदन करते हैं ।

‘अणंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भदन्त !
अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘जहेव ओहिओ उद्देसओ भणिओ तहेव’
‘हे गौतम ! जैसा सामान्य उद्देशक में कहा गया है वैसाही यहां पर भी

वेदन करे छे. अटले के ज्ञानावरणीय विगरे आठ ८ श्रोत्रेन्द्रियावरण ४ तथा
स्त्रीवेदावरण १३ पुरुषवेदवरण १४ ‘जाव अणंतरोववन्नगा वणस्सइकाइया’
आज प्रमाणेतुं कथन यावत् अनन्तरोपपन्नक वनस्पतिकायिकना कथन सुधी सम-
न्वुं. अर्थात् अप्कायिकथी लधने वनस्पतिकायिक सुधी सधणा अनन्तरोपप-
न्नक एकेन्द्रिय लवे के ने पांच प्रकारना छेवाभां आल्या छे, ते अधा अज
प्रमाणे कर्मप्रकृतियोना अंध करे छे. अने अज प्रमाणे तेओ तेनु वेदन करे छे.

‘अणंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भगवन् अनन्त-
रोपपन्नक एकेन्द्रिय लवे कथांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना
उत्तरभां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे ई—‘जहेव ओहिओ उद्देसओ भणिओ

प्रथमोद्देशके एकेन्द्रियाणां उत्पादः कथितः तत्रापि व्युत्क्रान्तिपदस्य प्रज्ञापनायाः पृष्ठपदस्य संकेतः कृतस्तत्तत्र येन रूपेण उत्पादः कथितः स्तथैवेहापि ज्ञातव्यः । तथाहि—सामान्यतया एकेन्द्रियाः नारकान् विहाय तिर्यङ्मनुष्य देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते । पृथिव्यन्नवनस्पतिकायिकेषु देवानामपि उत्पत्तिः सदृभावात् । तेजोवायुकायिकेषु देवेभ्य आगत्य नोत्पद्यन्ते, तत्र च तिर्यग्योनिकेभ्यः संसृष्टिम गर्भजेति द्विविधेभ्योऽपि मनुष्येभ्य आगत्योत्पद्यन्ते, इति विवेकः ।

अथ समुद्घातसूत्रमाह—‘अणंतरोववन्नगं’ इत्यादि । ‘अणंतरोववन्नगं’ एगिंदियाणं भंते ! कइसमुग्धाया पणत्ता’ अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाणां भदन्त । कति

कह लेना चाहिये । अर्थात् इसी चौतीसवें शतक के प्रथम एकेन्द्रियशतक में प्रथम उद्देशक में एकेन्द्रिय जीवों का उत्पाद कहा गया है और इस सम्बन्ध में वहाँ प्रज्ञापना के छठे व्युत्क्रान्तिपदका संकेत किया गया है, इसलिये वहाँ जिस रूपसे उत्पाद कहा गया है उसी प्रकार से वह वहाँ पर भी जानना चाहिये । सामान्यतया एकेन्द्रिय जीव नैरयिकों को छोड़कर तिर्यश्च मनुष्य एवं देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं । पृथ्वीकायिकों में अप्कायिकों में और वनस्पतिकायिकों में देवों की उत्पत्ति हो जाती है । तेजस्कायिकों में एवं वायुकायिकों में देवों की उत्पत्ति नहीं होती है । वहाँ तिर्यग्योनिकों से एवं संसृष्टिम और गर्भज मनुष्यों से आकरके ही जीव उत्पन्न होते हैं ।

‘अणंतरोववन्नगं एगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्धाया पणत्ता’ हे भदन्त जो अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव हैं उनके कितने समुद्घात

तहेव’ हे गौतम ! सामान्य उद्देशाभां ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, अण प्रमाणे अडियां पणु समञ्ज देवुं. अर्थात् आ योत्रीसमा शतकना पडेला अकेन्द्रिय शतकभां पडेला उद्देशाभां अकेन्द्रिय एवोना उपपात कडेल छे, अने ते संबंधभां त्यां प्रज्ञापना सूत्रना छटा व्युत्क्रान्ति पदनी बलाभणु करेल छे, तेथी त्यां ने प्रमाणे उत्पाद कडेवामां आवेल छे, अण प्रमाणे ते कथन अडियां पणु समञ्जुं. सामान्य रीते अक छेन्द्रियवाणा एवो नैरयिकोने छोडीने तिर्यश्च मनुष्य अने देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, पृथ्वीकायिकोभां, अप्कायिकोभां, अने वनस्पतिकायिकोभां देवोनी उत्पत्ती पणु थाय छे, तेजस्कायिकोभां अने वायुकायिकोभां देवोनी उत्पत्ती थती नथी. त्यां तिर्यश्च योनिकोभांथी अने संसृष्टिम अने गर्भज मनुष्योभांथी आवी ने ए एव उत्पन्न थाय छे.

‘अणंतरोववन्नगं एगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्धाया पणत्ता’ हे भगवन् अनन्तरोपपन्नक अकेन्द्रिय ने एवो छे. तेओने कटला समुद्घातो कहा छे ?

समुद्घाताः—क्रियत्संख्यकाः समुद्घाता भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम । ‘दोन्नि समुग्घाया पन्नत्ता’ द्वौ समुद्घातौ मज्झत्तौ ‘तं जहा’ तद्यथा—‘वेयणा समुग्घाए य कसाय समुग्घाए य’ वेदना समुद्घातश्च कषाय समुद्घातश्च अनन्तरोपपन्नकत्वेन मारणान्तिकादि समुद्घातानामसंभवात् द्वौ एव वेदनाकषयात्मकौ समुद्घातौ कथितविति भावः । ‘अनंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते !’ अनन्तरोपपन्नकैकेन्द्रियाः खलु भदन्त । ‘किं तुल्लद्विइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरंति पुच्छा तहेव’ किं तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति अथवा तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति अथवा विमात्रस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति अथवा—विमात्रस्थितिका

कहे गये हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! दोन्नि समुग्घाया पन्नत्ता’ ‘हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों के दो समुद्घात कहे गये हैं’ ‘तं जहा’ जैसे—‘वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए’ ‘वेदनासमुद्घात और कषायसमुद्घात मारणान्तिक आदि समुद्घातों का यहाँ अनन्तरोपपन्नक होने से अभाव रहता है । ‘अनंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते ! किं तुल्लद्विइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरंति’ हे भदन्त ! जो अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव समान आयुवाले होते हैं वे क्या तुल्य विशेषाधिक कर्मका बन्ध करते हैं ? ‘पुच्छा तहेव’ इस प्रकार से पहिले के जैसे यहाँ प्रश्न करना चाहिये । अतः यहाँ ये तीन प्रश्न और कर लेना चाहिये । जैसे—हे भदन्त ! जो अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव समान आयुवाले होते हैं वे क्या भिन्न भिन्न रूप में

आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे कहे—‘गोयमा ! दोन्नि समुग्घाया पणत्ता’ छे लगवन् अनंतरोपपन्नक ऐकेन्द्रिय लुवेने जे समुद्घातो छेवेमां आवेत्त छे. ‘तं जहा’ जेम के—‘वेयणा समुग्घाए कसायसमुग्घाए’ वेदना समुद्घात अने कषाय समुद्घात अहियां अनंतरोपपन्नक डोवाथी मारणान्तिक विगेरे समुद्घातो नोअलाव छे. ‘अनंतरोववन्नग एगिंदियाणं भंते ! किं तुल्लद्विइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरंति’ छे लगवन् जे अने अनंतरोपपन्नक ऐकेन्द्रियवाणा लुवे सरभा आयुष्यवाणा डोय छे. तेओ शुं तुल्य अथवा विशेषाधिक कर्मनो बंध करे छे ? ‘पुच्छा तहेव’ आ प्रभाणे गौतमस्वामीओ पडेला कथा प्रभाणेना पांच प्रश्नो पूछया छे. जेथी अहियां आझीना जीअ तलु प्रश्नो करी लेवा जेछेओ. जेम के—छे लगवन् जे अनंतरोपपन्नक ऐकेन्द्रियवाणा लुवे समान आयुष्यवाणा डोय छे, तेओ शुं लुहा लुहा प्रकारथी विशेषाधिक

વિમાત્રવિશેષાધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તિ, इति पृच्छया संगृह्यते, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अत्येगइया तुल्लट्टिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ अस्त्येकके तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म ज्ञानावरणीया दिकं प्रकुर्वन्ति ‘अत्येगइया तुल्लट्टिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ अस्त्येकके तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्मप्रकुर्वन्तीत्युत्तरम् । पुनः शङ्कते ‘से केणट्टेणं’ इत्यादि, ‘से कणट्टेणं जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तत्केनार्थेन भदन्त ! यावद् विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति इति, अत्र यात्प-

વિશેષાધિક કર્મકા બન્ધ કરતે હૈં ? અથવા જો અનન્તરોપપન્નક જીવ ભિન્ન ભિન્ન સ્થિતિવાલે હોતે હૈં વે તુલ્ય વિશેષાધિક કર્મકા બન્ધ કરતે હૈં ? અથવા જો ભિન્ન ભિન્ન સ્થિતિવાલે અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ હૈં વે વિષમ વિશેષાધિક કર્મકા બન્ધ કરતે હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં—‘ગોયમા ! અત્યેગહયા તુલ્લટ્ટિહયા તુલ્લવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ હૈ ગૌતમ ! કિતનેક અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ એસે હોતે હૈં જો સમાન સ્થિતિવાલે હોતે હૈં એસે વે જીવ તુલ્યવિશેષાધિક જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મકા બન્ધ કરતે હૈં । ‘અત્યેગહયા તુલ્લટ્ટિહયા વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ તથા કિતનેક અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ એસે હોતે હૈં જો સમાન સ્થિતિવાલે તો હોતે હૈં પર વે ભિન્ન ભિન્ન રુપ મેં વિશેષાધિક કર્મપ્રકૃતિયોં કા બન્ધ કરતે હૈં ।

‘સે કેણટ્ટેણં જાવ વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ હૈ ભદન્ત ! એસા

કર્મનો બંધ કરે છે ? અથવા જે અનંતરોપપન્નક એવ બુદ્ધી બુદ્ધી સ્થિતિવાળા હોય છે, તેઓ શું તુલ્ય અથવા વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે ? અથવા જે બુદ્ધી બુદ્ધી સ્થિતિવાળા અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિય એવો છે, તેઓ વિષમ પશ્ચાથી વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—‘ગોયમા ! અત્યેગહયા તુલ્લટ્ટિહયા તુલ્લવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ હૈ ગૌતમ ! કેટલાક અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયવાળા એવો એવા હોય છે, કે જેઓ સમાન સ્થિતિવાળા હોય છે, એવા તે એવો તુલ્ય વિશેષાધિક જ્ઞાનાવરણીય વિગેરે કર્મનો બંધ કરે છે. ‘અત્યેગહયા તુલ્લટ્ટિહયા વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ તથા કેટલાક અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયવાળા એવો એવા હોય છે કે જેઓ સમાન સ્થિતિવાળા હોય છે, પરંતુ તેઓ બુદ્ધા બુદ્ધા પ્રકારે વિશેષાધિક કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરે છે.

‘સે કેણટ્ટેણં જાવ વેમાયવિસેસાહિયં કમ્મં પકરે’તિ’ હૈ ભગવન્

દેન તુલ્યસ્થિતિકાઃ તુલ્યવિશેષાધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તિ અસ્ત્યેકકે તુલ્યસ્થિતિકા
 इत्यन्तस्य प्रकरणस्य संग्रहो भवतीति । 'उत्तरमाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा'
 हे गौतम ! 'अणंतरोवचन्नगा एगिंदिया दुविहा पन्नत्ता' अनन्तरोपपन्नका एके-
 न्द्रिया द्विविधाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः 'तं जहा' तद्यथा—'अत्येगइया समाउया
 समोववन्नगा' अस्त्येकके अनन्तरोपपन्नका एकेन्द्रियाः समायुष्काः समोपपन्नकाः
 'अत्येगइया समाउया विसमोववन्नगा' अस्त्येकके समायुष्का विपमोपपन्नकाः

આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ કિતનેક અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય
 जीव ऐसे होते हैं जो समान स्थितिवाले होते हैं और तुल्यविशेषाधिक
 જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકા પન્થ કરતે હૈં ? ઓર કિતનેક અનન્તરોપપન્નક
 એકેન્દ્રિય જીવ જો સમાન સ્થિતિવાલે તો હોતે હૈં પર વે ભિન્ન ભિન્ન
 વિશેષાધિક કર્મકા પન્થ કરતે હૈં ? યહાં યાવત્ પદ સે યહી પાઠ ગ્રહીત
 હુઆ હૈં । હસ સમ્બન્ધ મેં ઉત્તર દેતે હુએ પ્રસુશ્રી ગૌતમ સે કહતે હૈં—
 'ગોયમા ! અણંતરોવચન્નગા એગિંદિયા દુવિહા પન્નત્તા' હે ગૌતમ !
 અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ દો પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં । 'તં જહા'
 જૈસે—'અત્યેગહયા સમાઝયા સમોવવન્નગા, અત્યેગહયા સમાઝયા વિસ
 મોવવન્નગા' કિતનેક અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ એસે હોતે હૈં જો
 ઘરાઘર કી આયુવાલે હોતે હૈં ઓર સાથ સાથ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । તથા-
 કિતનેક અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ એસે હોતે હૈં જો ઘરાઘર કી
 આયુવાલે તો હોતે હૈં પર વે ભિન્ન ભિન્ન સમય મેં ઉત્પન્ન હુએ હોતે

આપ એવું શા કારણથી કહો છો ? કે કેટલાક અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયવાળા
 એવા એવા હોય છે, કે એઓ સરખી સ્થિતિવાળા હોય છે. અને તુલ્ય
 વિશેષાધિક જ્ઞાનાવરણીય વિગેરે કર્મનો બંધ કરે છે ? તથા કેટલાક અનંત-
 રોપપન્નક એવા એવા હોય છે કે—એઓ સમાન સ્થિતિવાળા હોય છે, પરંતુ
 તેઓ જુદા જુદા વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે ? આ પાઠ અહિયાં યાવ
 ત્પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રશ્નોઉત્તર આપતાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામી
 ને કહે છે કે—'ગોયમા ! અણંતરોવચન્નગા એગિંદિયા દુવિહા પન્નત્તા' હે ગૌતમ !
 અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિય એવા બે પ્રકારના કહેવામાં આવેલ છે. 'તં જહા'
 તે આ પ્રમાણે છે.— 'અત્યેગહયા સમાઝયા સમોવવન્નગા અત્યેગહયા સમાઝયા
 વિસમોવવન્નગા, કેટલાક અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયવાળા એવા એવા હોય
 છે કે એઓ સરખી આયુષ્યવાળા હોય છે, અને એક સાથે જ ઉત્પન્ન થાય
 છે. તથા કેટલાક અનંતરોપપન્નક એકેન્દ્રિયવાળા એવા એવા હોય છે કે

‘तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा’ तत्र खलु ये ते समायुष्काः समोपपन्नकाः
 ‘ते णं तुल्लट्ठिइया तुल्ल विसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ ते खलु तुल्यस्थितिकाः
 तुल्य विशेषाधिकं कर्म ज्ञानावरणीयादिकं प्रकुर्वन्ति । ये समायुष्का अनन्तरोपप-
 न्नक पर्यायमाश्रित्य एकसमयमात्रस्थितिकाः तत्परतः परस्परोपपन्नरूपपदे-
 शात्, समोपपन्नका एकस्मिन्नैव समये उत्पत्तिस्थानं प्राप्ता स्ते तुल्यस्थितयः
 समोपपन्नकत्वेन समयोक्तत्वात् तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति । ‘तत्थ णं जे ते
 समाउया विसमोववन्नगा तेणं तुल्लट्ठिइया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’
 तत्र खलु ये ते समायुष्का विषमोपपन्नका स्ते खलु तुल्यस्थितिका विमात्रविशे-
 हैं । ‘तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा’ इनमें जो ये समायुष्क
 समोपपन्नक अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव हैं, ‘ते णं तुल्लट्ठिइया
 तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तुल्यस्थितिवाले होते हैं और तुल्य
 विशेषाधिक ज्ञानावरणीय आदि कर्मका बन्ध करते हैं । तात्पर्य इस
 कथन का ऐसा है कि जो समायुष्क होते हैं अनन्तरोपपन्नक पर्याय को
 आश्रित करके एक समय मात्र की स्थितिवाले होते हैं क्योंकि इसके
 बाद वे परस्परोपपन्नक हो जाते हैं । समोपपन्नक एक समय में उत्पत्ति
 स्थान को प्राप्त हो जाते हैं इसलिये वे तुल्यस्थितिवाले होते हुए समो-
 पपन्नक होने के कारण समान योगवाले होते हैं । इस कारण वे तुल्य
 और विशेषाधिक रूपसे ज्ञानावरणीय आदि कर्मप्रकृतियों का बन्ध
 करते हैं । ‘तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं तुल्लट्ठिइया
 वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तथा जो समायुष्क होते हैं और

वेओ समान आयुवाणा ते। होय छे, परंतु तेओ लुदा लुदा समये उत्पन्न
 थाय छे. १ ‘तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा’ तेओमां वे आ समान
 आयुष्यवाणा अने साथे उत्पन्न थवावाणा अनंतरोपपन्नक ओकेन्द्रियवाणा लुवे।
 छे. ‘ते णं तुल्लट्ठिइया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरे’ति’ तेओ तुल्य स्थितिवाणा
 होय छे, अने तुल्य विशेषाधिक ज्ञानावरणीय विगरे कर्मने। अथ करे छे.
 कहेवातुं तात्पर्यं ओ छे के-वेओ समान आयुष्यवाणा होय छे. तेओ अनंत-
 रोपपन्नक पर्यायने। आश्रय करीने ओक समय मात्रनी स्थितिवाणा होय छे.
 केम के ते पछी तेओ परपरोपपन्नक थर्ष लय छे, समोपपन्नक-ओक साथे
 उत्पन्न थवावाणा अने ओक समयमांज उत्पत्ती स्थानने प्राप्त करी ले छे.
 तेथी तेओ तुल्यस्थितिवाणा होवा छतां समान उत्पत्तिवाणा होवाने कारणे
 समान योगवाणा होय छे. ते कारणुथी तेओ तुल्य अने विशेषाधिक पणुथी
 ज्ञानावरणीय विगरे कर्मप्रकृतियेने। अथ करे छे. ‘तत्थ णं जे ते समाउया

પાદિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તિ યે તુ સમાયુષ્કા સ્તથૈવ વિપમોપપન્નકા વિગ્રહગત્યા સમ-
યાદિ ભેદેનોત્પત્તિસ્થાનં પ્રાપ્તા સ્તે તુલ્યસ્થિતય ઉત્પત્તિસ્થાનપ્રાપ્તિવૈપમ્યે
ણોત્પત્તિસ્થાનપ્રાપ્તિકાલવૈપમ્યાદ્ વિગ્રહેડપિ ચ વન્ધકત્વાદ્ વિમાત્ર વિશેષા-
ધિકં કર્મ પ્રકુર્વન્તિ, વિષમસ્થિતિક સમ્વન્ધિ તુ અન્તિમમદ્ગદ્યમનન્તરોપપ-
ન્નકાનાં ન સમ્પવતિ અનન્તરોપપન્નકત્વે વિષમસ્થિતેરભાવાત્ ઇતિ । 'સે

વિપમોપપન્નક હોતે હૈં વે યદ્યપિ તુલ્યસ્થિતિવાલે હોતે હૈં પર વિપમોપ-
પન્નક હોને કે કારણ વિષમયોગ યુક્ત હોને સે વિમાત્ર વિશેષાધિક
કર્મ કા બન્ધ કરતે હૈં । તાત્પર્ય્ ઇસ કથન કા એસા હૈં કિ જો અનન્ત-
રોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવ સમાન આયુવાલે હોતે હૈં વે તુલ્ય સ્થિતિવાલે
તો હોતે હી હૈં પરન્તુ ઇન્હેં જો વિમાત્ર વિશેષાધિક કર્મ કા બન્ધક
કહા ગયા હૈં વહ વિપમોપપન્નક હોને કે કારણ કહા ગયા હૈં ।
વિષમોપપન્નકતા ઇનમૈં હસલિયે આતી હૈં કિ એસે યે જીવ વિગ્રહ
ગતિ સે કિ જિરા મૈં સમયાદિક કા ભેદ હોતા હૈં ઉત્પત્તિ સ્થાન મૈં
આતે હૈં અતઃ વે તુલ્યસ્થિતિવાલે બલે હી રહે પરન્તુ ઉત્પત્તિ સ્થાન કો
પ્રાપ્ત હોને કો વિપમતા સે ઉત્પત્તિ કાલ કી વિષમતા કો લેકર ઓર
વિગ્રહ મૈં ઓ કર્મબન્ધ કરને કે કારણ એસે યે અનન્તરોપપન્નક એકે-
ન્દ્રિય જીવ વિમાત્ર વિશેષાધિક કર્મ કે બન્ધક હોતે હૈં । વિષમસ્થિતિ
સે સમ્વન્ધ રચનેવાલે અન્તિમ દો અદ્ગ અનન્તરોપપન્નક એકેન્દ્રિય જીવો

વિસમોવવન્નગા તેણં તુલ્લલ્લિહ્યા વેમાયવિસેસાહિય કર્મં પકરેતિ' તથા જેઓ
સમાન આયુષ્યવાળા હોય છે, અને વિષમોપપન્નક હોય છે, તેઓ
જોકે-સરખી સ્થિતિવાળા હોય છે, પરંતુ વિષમોપપન્નક હોવાના કારણથી
વિષમ યોગવાળા હોવાથી વિમાત્રથી વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે. આ
કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે-જે અનંતરોપપન્નક એકધન્દ્રિયવાળા હોવે સમાન
આયુષ્યવાળા હોય છે, તેઓ તુલ્ય સ્થિતિવાળા તો હોય છે. પરંતુ તેઓને
જે વિમાત્રથી વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરવાવાળા કહ્યા છે, તે વિષમોપપન્નક
હોવાના કારણે કહેલ છે. તેઓના વિષમોપપન્નક પણ એ માટે આવે છે કે-
એવા એ હોવે વિગ્રહ ગતિથી કે જેમાં સમય વિગેરેનો ભેદ હોય છે, ઉત્પત્તિ
સ્થાનમાં આવે છે. તેથી તેઓ સમાનસ્થિતિવાળા રહેવા છતાં પણ આયુષ્યના
ઉદયના વિષમ પણાને લીધે અને વિગ્રહગતિમાં પણ કર્મનો બંધ કરવાના કારણે
એવા આ અનંતરોપપન્નક એકધન્દ્રિયવાળા હોવે વિમાત્રથી વિશેષાધિક કર્મનો
બંધ કરવાવાળા હોય છે. વિષમ સ્થિતિથી સંબંધ રાખવાવાળા છેલ્લા એ ભંગો
અનંતરોપપન્નક એકધન્દ્રિયવાળા હોવાને સંભવતા નથી. કેમ કે અનંતરોપ-
પપન્નક હોવાથી તેઓમાં વિષમ સ્થિતિનો અભાવ રહે છે.

तेणद्वेणं जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरे'ति' तत्तेनार्थेन गौतम । एवमुच्यते
अस्त्येकके तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति अस्त्येकके तुल्य-
स्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्तीति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकेकेन्द्रियपृथि-
व्यादि जीवविषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सर्वथैव तत्यमिति कथयित्वा
गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संप्रमेन तपसा आत्मानं
भावयन् यथासुखं विहरतीति ॥सू० २॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धाचार्य-पञ्चदशभाषा-

कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,

वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-

'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-

बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर

पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री

"भगवतीभूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां

व्याख्यायाम् चतुस्त्रिंशत्तमे शतके

प्रथमे एकेन्द्रियशते द्वितीयोद्देशकः

समाप्तः ॥३४-१-२॥

के संभवित नहीं होते हैं । क्यों कि अनन्तरोपपन्नक होने से इनमें
विषमस्थिति का अभाव रहता है । 'से तेणद्वेणं जाव वेमायविसेसाहियं
कम्मं पकरे'ति' इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक
अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव ऐसे होते हैं जो तुल्य स्थितिवाले होते
हुए तुल्यविशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं और कोई कोई अनन्तरो-
पपन्नक एकेन्द्रिय जीव ऐसे होते हैं जो तुल्यस्थितिवाले होते हुए भी
विमात्र विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !

'से तेणद्वेणं' जाव वेमायविसेसाहियं कम्म पकरे'ति' ते शरणीथी हे
गौतम । मे' ओवुं उडेल छे के-केटलाक अन'तरोपपन्नक ओकध'न्द्रियवाणा
ओवो ओवा डोय छे के-नेओ सरणी स्थितिवाणा डोवा छतां समान अने
विशेषाधिक कर्म'ने। अंध करे छे अने डोय डोय अन'तरोपपन्नक ओकध'न्द्रिय
वाणा ओवो ओवा डोय छे के नेओ तुल्य स्थितिवाणा डोवा छतां पणु
विमात्रथी विशेषाधिक कर्म'ने। अंध करे छे ।

'सेवं भंते ! सेवं ! भंते ! त्ति' हे भगवन् अन'तरोपपन्नक पृथ्वीकाधिक
ओकध'न्द्रियवाणा ओवाना सं'बंधमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते

स्ति' हैं भदन्त ! अनन्तरोपपन्नं पृथिव्यादि एकेन्द्रिय जीवों के विषय में जो आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा ही सत्य है । इस प्रकार कहकर गौतमने भगवान् को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० २॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौतीसवे शतक के प्रथम एकेन्द्रियशतक का दूसरा उद्देशक समाप्त ॥३४-२॥

सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे, डे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां करेव कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये प्रबुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथीपोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना चौतीसवां शतकमां पड़ेवा अेकधन्द्रिय शतकने ॥गीजे उद्देशे समाप्त ३४-२॥



अथ तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते

मूलम्—कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदियां
पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता,
तं जहा-पुढवीकाइया भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइ-
यत्तिं । परंपरोववणग अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे
रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोह-
णित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव पच्चत्थि-
मिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयत्ताए उववज्जि-
त्तए० एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमो उद्देसओ जाव
लोग चरिमंतो त्ति । क्हिणं भंते ! परंपरोववन्नग वायरपुढवी-
काइयाणं ठाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! सट्टणोणं अट्टसु पुढवीसु
एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्टिइय
त्ति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू०१॥

चोत्तीसइमे सए पढमे एगिंदियसए तइओ उद्देसो समत्तो । ३४-३।

छाया—कतिविधाः खलु भदन्त ! परोपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
गौतम ! पञ्चविधाः परम्परोपपन्नका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पृथिवी-
कायिकाः भेदो चतुष्को यावद् वनस्पतिकायिका इति । परम्परोपन्नकाऽप-
र्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! एस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः
पौरस्त्ये चरमान्ते समबहतः समबहत्य यो भव्य एतस्या रत्नप्रभायाः
पृथिव्या यावत्पाश्चत्ये चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकतया उपपत्तुम्
एवमेतेनाभिलापेन स्थैत्र प्रथमोद्देशको यावत्लोकचरमान्त इति । कुत्र खलु
भदन्त ! परम्परोपपन्नक वादरपृथिवीकायिकानां स्थानानि प्रज्ञप्नानि ?
गौतम ! स्वस्थानेनाप्टासु पृथिवीपु, एवमेतेनाभिलापेन यथा-प्रथमे उद्देशके
यावत् तुल्यस्थितिका इति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ सू० १॥

चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमे एकेन्द्रियशतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३४।१।३॥

टीका:--'कइविहाणं भंते !' कतिविधाः खलु भदन्त ! 'परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता' परम्परोपपन्नकाः एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः-कथिताः ? इति प्रश्नः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा !' 'हे गौतम ! 'पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता' पञ्चविधाः-पञ्चप्रकारकाः परम्परोपपन्नका उत्पत्ते द्वितीयादिप्रमये वर्तमाना एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः-कथिताः 'तं जहा' तथा-'पृथ्वीकाय्या' पृथिवीकायिकाः अप्कायिकाः तेजस्कायिकाः वायुकायिकाः, वनस्पतिकायिकाश्च । पृथिवीकायिकाः कतिविधाः प्रज्ञप्ताः गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः सूक्ष्माश्च बादराश्च एवं यावद्वनस्पतिकायिका अपि सूक्ष्म-

ज्ञातक २४ उद्देशक ३

'कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता' इत्यादि

टीकार्थ--'कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता' हे भदन्त ! एकेन्द्रिय परम्परोपपन्नक जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं-'गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पन्नत्ता' हे गौतम ! एकेन्द्रिय परम्परोपपन्नक जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं । जो जीव उत्पत्ति के द्वितीयादि समय में वर्तते हैं वे परम्परोपपन्नक कहे गये हैं । 'तं जहा' वे परम्परोपपन्नकों के पांच भेद इस प्रकार से हैं-पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक वायुकायिक और वनस्पतिकायिक, हे भदन्त ! पृथिवीकायिक कितने प्रकार के कहे गये हैं ? हे गौतम ! पृथिवीकायिक दो प्रकार के कहे गये हैं । वे दो प्रकार सूक्ष्म और बादर के भेद से होते हैं । इसी प्रकार से दो भेद यावत् वनस्पतिकायिकों तक जानना

त्रीण उद्देशानो प्रारंभ--

'कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पणत्ता' इत्यादि

टीकार्थ--'कइविहाणं भंते ! परंपरोववन्नगा एगिंदिया पणत्ता' हे

लगवन् अेकधन्द्रियवाणा परंपरोपपन्नक अवे। डेटला प्रकारना डडेवामां आव्या छे, आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री डडे छे डे-'गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा एगिंदिया पणत्ता' हे गौतम ! अेकधन्द्रियवाणा परंपरोपपन्नक अवे। पांच प्रकारना डडेवामां आवेल छे. 'तं जहा' ते परंपरोपपन्नकेना पांच लेहे आ प्रभाछे छे-पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक हे लगवन् पृथ्वीकायिके डेटला प्रकारना डडेवामां आव्या छे ? उत्तरमां प्रभुश्री डडे छे डे हे गौतम ! पृथ्वीकायिके के प्रकारना डडेवामां आव्या छे. ते के प्रकार सूक्ष्म, अने आहर अे प्रभाछे छे. आण प्रभाछे सूक्ष्म अने आहर अे के लेहे यावत् वनस्पतिकायिके सुधी समजवा।

वादरभेदेन द्विविधाः । परम्परोपपन्नकाः सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः कतिविधाः
 मज्ञप्ताः गौतम ! द्विविधाः मज्ञप्ताः पर्याप्ताश्च अपर्याप्ताश्च एवं यावद्वन-
 स्पतिकायिका अपि पर्याप्तापर्याप्तभेदेन द्विविधा भवन्तीति एतदाशयेनैवाह-
 'भेदो चउक्तो जाव वणस्तइकाइयत्ति' भेद श्रुत्वा यो यावद्वनस्पतिकायिका
 इति, वनस्पतिकायिकपर्याप्तानाम् एते चत्वारः सूक्ष्मवादरपर्याप्ता
 पर्याप्तरूपा भेदा ज्ञातव्या इति । 'परंपरोवन्नग अपज्जत्त सुहुमपुढवी-
 काइएणं भंते !' परम्परोपपन्नकापर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त !
 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए' एतस्या रत्न-
 प्रभायाः पृथिव्याः पौरस्थे चरमान्ते समवहतः 'समोहणित्ता जे सविए

चाहिये । हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिक कितने
 प्रकार के कहे गये हैं ? हे गौतम ! ये दो प्रकार के कहे गये हैं एक
 पर्याप्तक और दूसरे अपर्याप्तक, वनस्पतिकायिक तक इसी प्रकार से
 दो भेद होते हैं एक पर्याप्तक और दूसरे अपर्याप्त इसी आशय को
 लेकर 'भेदो चउक्तो जाव वणस्तइ काइयत्ति' सूत्रकार ने यह सूत्र कहा
 है । पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक ये चार चार सूक्ष्म
 वादर पर्याप्तक और अपर्याप्तक भेद होते हैं ।

'परंपरोवन्नग अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइएणं भंते ! इमीसे रयण-
 प्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते समोहए०' हे भदन्त ! वह
 परम्परोपपन्नक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कि जिसने
 इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्वचरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात किया
 है । और समुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथिवी के पश्चिम चरमान्त में

डे लगवन् परंपरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिको केटला प्रकारना कडेवामां
 आ०या छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के डे गौतम ! पर्याप्त अने अपर्याप्तक
 ओ ओ लेदथी परंपरोपपन्नक सूक्ष्म पृथिवीकायिको जे प्रकारना छे, आ० प्रभाजे
 आ ओ लेदो यावत् वनस्पतिकायिक सुधी समजवा, अर्थात् अपर्याप्तकथी
 लधने वनस्पतिकायिक सुधीना एवो पर्याप्तक अने अपर्याप्तक ओ ओ लेदवाजा
 डाय छे, तेम समजपु, आ अलिप्रायथी 'भेओ चउक्तो जाव वणस्तइ काइयत्ति'
 सूत्रकारे आ सूत्रपाठ कडेल छे, पृथिवीकायिकथी लधने वनस्पतिकाय सुधीना
 एवने सूक्ष्म, वादर पर्याप्तक अने अपर्याप्तक ओ रीतना चार लेदो डाय छे,

'परंपरोवन्नगा अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयणं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए
 पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमंते ! समोहए' डे लगवन् ते परंपरोपपन्नक अपर्याप्त-
 क सूक्ष्म पृथिवीकायिक एव के ओओ आ रत्नप्रभा पृथिवीना पूर्व चरमान्तमां
 मारणान्तिक समुद्घात करेल छे, अने मारणान्तिक समुद्घात करीने ओ आ

इमीसे रयणप्पभाए पुढनीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्त सुहुमपुढवी-
 काइयत्ताए उनवज्जित्तए' समवहत्य यो भव्य एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः
 पाश्चात्ये चरमान्ते अपर्याप्त सूक्ष्मपृथिवीकायिकत्वा उत्पत्तुं स खलु भदन्त !
 क्रियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येतेति प्रश्नः, उत्तरमाह—'एवं' इत्यादि, एवं एएणं
 अभिलावेणं जहेव पढमो उद्देसओ' एवमेतेनाभिलापेन यथैव प्रथमोद्देशकः एत-
 स्यैव चतुस्त्रिंशत्तमशतकस्य प्रथमोद्देशके यथा यथा यद् यत् कथितं तत्सर्वं
 तेनैव रूपेणेहापि ज्ञातव्यम्, क्रियत्पर्यन्तः प्रथमोद्देशक इहाध्येतव्य स्तत्राह—
 'जाव' इत्यादि, 'जाव लोणचरिमंते त्ति' यावत् लोकचरमान्त इति एकसा
 मधिकेन यावत् चतुःसामयिकेन विग्रहेण उत्पद्येतेत्वारभ्य लोकचरमान्त पर्यन्तं
 सर्वमपि वक्तव्यम् किन्तु औत्तरे चरमान्ते समवहतानां पाश्चात्ये चरमान्ते च

अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य है,
 वह कितने समयवाले विग्रह से वहां उत्पन्न होता है ? इसके उत्तर
 में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमउद्देसओ' हे
 गौतम ! इस अभिलाप द्वारा जैसा इसी चौतीसवें शतक के पूरे
 प्रथम उद्देशक में जैसा जैसा जो जो कहा गया है वह सब उसी रूप
 से यहां पर भी जानना चाहिये । और ऐसाही यह सब कथन इस
 सम्बन्ध में 'जाव लोणचरिमंते त्ति !' यावत् लोक के चरमान्त तक
 करना चाहिये अर्थात् यह यावत् लोकके चरमान्त तक में एक समय
 वाले विग्रह से दो समयवाले विग्रह से तीन समयवाले विग्रह से
 और चार समयवाले विग्रह से उत्पन्न होना है किन्तु उत्तर लोक को

रत्नप्रभा पृथ्वीना पश्चिम चरमान्तमां अपर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिक पण्णथी
 उत्पन्न थवाने योग्य भवेत्त छे, ते त्यां डेटला समयनी विग्रहगतिथी उत्पन्न
 थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के 'एएणं'
 अभिलावेण जहेव पढमो उद्देसओ' हे गौतम ! आ अभिलाप द्वारा जे रीते आ
 चौतीसवा शतकना पड़ेला उद्देशमां कड़ेवामां आवेल छे ते सधणुं कथन ओज
 प्रमाणे अडियां पणु समयवुं अने ओज प्रमाणेवुं ते सधणुं कथन आ विषयमां
 'जाव लोणचरिमंते ! त्ति' यावत् लोकना चरमान्त सुधी कड़ेवुं जेधजे. अर्थात्
 ते यावत् लोकना चरमान्तमां ओक समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा जे
 समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा त्रणु समयवाणी विग्रहगतिथी अथवा चार
 समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे, परंतु उत्तर लोकना चरमान्तमां
 समुद्घात करीने पश्चिम चरमान्तमां उत्पन्न थवावणाओने ओक समयने
 विग्रह डोतो नथी आ कथन सुधी कड़ेवुं जेधजे. आ संबन्धमां आ शतकना

समुत्पद्यमानानामेकसामयिको विग्रहो न भवति अत्तस्तेषां द्वयादि चतुःसामयिको विग्रहो भवति, उक्तं च प्रथमोद्देशकान्ते—‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उव्वज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि’ इत्यन्तं वाच्यम् ‘कहिं णं भंते ! परंपरोववन्नगा वायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता’ कुत्र खलु भदन्त ! परम्परोप-पन्नक वादरपृथिवीकाधिकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि—कथितानीति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा ! हे गौतम ! सट्टाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ स्वस्थानेन यत्र परम्परोपपन्नका जीवा आसते तत् स्वस्थानम् स्थानापेक्षया अट्टासु रत्नप्रभा दीपत्प्राम्भारा पृथिवी पर्यन्तेषु परम्परोपपन्नक वादरपृथिवीकाधिकै-केन्द्रियजीवानां स्थानानि प्रज्ञप्तानीत्युत्तरम् । ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्ठिइयत्ति’ एवमेतेन पूर्वोक्तेनाभिलापेन आलापकप्रकारेण यथैव

चरमान्त में समुद्घात करके पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न होनेवालों को एकसमयका विग्रह नहीं होता है, यहां तक कहना चाहिये इस संबन्ध में इसी शतक के प्रथम उद्देशक के अन्त में भगवानने कहा है—‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उव्वज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो नत्थि’ ‘कहिं णं भंते ! परंपरोववन्नगा वायर पुढवीकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता’ हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक वादर पृथिवीकाधिक के स्थान कहां पर कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! सट्टाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ हे गौतम ! परम्परोपपन्नक वादर पृथिवीकाधिकों के स्थान स्वस्थानकी अपेक्षासे आठ पृथिवियों में कहे गये हैं वे आठ पृथिवीयां रत्नप्रभापृथिवी से लेकर ईषत्प्राम्भारा पृथिवी तक हैं । ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्ठिइयत्ति’ इसी प्रकार से इस अभिलाप द्वारा इनके सम्बन्ध का सब प्रश्नोत्तर रूप कथन यावत् तुल्यस्थितिवाले परम्परोप-

पडेला उद्देशाना अंतमा लगवाने कहु छे के—‘उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चत्थिमिल्ले उव्वज्जमाणा णं एगसमइओ विग्गहो नत्थि ।

‘कहि णं भंते ! परंपरोववन्नगा वायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता’ हे लगवन् परंपरोपपन्नक वादर पृथिवीकाधिकानां स्थानो कथा कथा छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—‘गोयमा ! सट्टाणेणं अट्टसु पुढवीसु’ हे गौतम ! परंपरोपपन्नक वादर पृथिवीकाधिकानां स्थानो आठ पृथिवीयां कथा छे ते आठ पृथिवीयां रत्नप्रभा पृथिवीयां लधने ईषत्प्राम्भारा पृथिवी सुधीनी आठ पृथिवीयां छे, ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्ठिइयत्ति’ अथ प्रभाषे आ अभिलापद्वारा आ विषय संबंधमां भील सधणा प्रश्नोत्तर रूप कथन यावत् उटलाके तुल्य स्थितिवाणा

अथैव शतकस्य प्रथमोद्देशके कथितं तथैव सर्वमिहापि ज्ञातव्यम् । क्रियत्पर्यन्तं प्रथमोद्देशकप्रकरणमवगन्तव्यं तत्राह—‘जात्र’ इत्यादि, ‘जात्र तुल्लट्टिइयत्ति’ यावत् तुल्यस्थितिका इति, ‘परंपरोपपन्नका एकेन्द्रिया-किं तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति किं वा तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ती त्यादिकं प्रश्नः हे गौतम ? तुल्यस्थितिका विमात्रविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ती त्याद्युत्तरादिकं च प्रथमोद्देशकप्रदेव ज्ञातव्यम् । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त ! परम्परोपपन्नकैकेन्द्रियजीवविषये यद्देवानु प्रियेण कथितं तत्पर्यं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो । भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्सिद्धत्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू० १॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुमादिपद्भूषितवाल्लवहचारि - ‘जैनाचार्य’ पूज्यश्री-घासीलालत्रिविरचिनायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमोद्देशकस्य तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३४१॥१॥

पन्नक अपर्थाप्य सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव विमात्र विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं, यहाँ तक प्रथम उद्देशक के जैसा ही जानना चाहिये ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों के विषय में जो आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा ही सत्य है । इस प्रकार कहकर गौतमने भगवान को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को आविष्ट करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

तृतीय उद्देशक समाप्त ॥३४-३॥

परंपरोपपन्नक अपर्थाप्य सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव विमात्राथी विशेषाधिक कर्मना बंध करे छे. आ कथन सुधी पडेलो उद्देशाभां कया प्रमाणेनुं कथन समणुं.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ छे भगवन् परंपरोपपन्नक ओक एन्द्रियवाणा जीवोना संबंधगां आप देवानुप्रिये ने कथन कयुं छे, ते समणुं कथन सर्वथा सत्य छे. छे भगवन् आप देवानुप्रियतुं समणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे इलीने गौतमस्वामीने प्रमाणुनीने वंदना करी नमस्कार कया वंदना नमस्कार करीने ते पछी गौतमस्वामी तप अने संयमथी पोताना आत्माने आविष्ट करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थका. ॥सू० १॥

॥त्रीने उद्देशे समाप्ता ॥३४-३॥

अथ चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते-

मूलम्—‘एवं सेसा वि अट्ट उद्देशगा जाव अचरिमोत्ति’ नवरं
अणंतरसरिसा परंपरा परंपरसरिसा चरमा य अचरमा य
एवं चेव । एवं एए एकारस उद्देशगा ॥३४-११-१॥

चोत्तीसइमे सए पढमे ष्णिंदियसए ॥३४-४-११ उद्देशगा समत्ता

॥ पढमं ष्णिंदियसेढीरुयं समत्तं ॥

छाया—‘एवं शेपा अपि अष्टौ’ उद्देशका यावदचरम इति । अचरम् अनन्त
रसदशाः परम्पराः परम्परसदशा श्रमाश्चाचरमाथ एवमेव । एवमेते एका
दशोद्देशकाः ॥३४।१।११

चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमे एकेन्द्रियशते ४-११ उद्देशाः समाप्ताः
प्रथममेकेन्द्रियश्रेणिशतकं समाप्तम् ॥

टीका—‘एवं सेसा वि अट्ट उद्देशगा जाव अचरिमोत्ति’ एवम्—परम्परोपपन्न-
कोद्देशकवदेव शेपा एतद्भिन्ना अष्टावपि उद्देशकाः यावद् अचरमोद्देशक इति ।
तत्राष्टौ चतुर्थत आरभ्य एकादश पर्यन्ताः—अनन्तरावगाढ ४—परम्परावगाढा ५
—अनन्तराहारक ६—परम्पराहारक ७—अनन्तरपर्याप्त ८—परम्परपर्याप्त ९=चरमा
१०=चरम ११ रूपा अवसेया इति । ‘नवरं अणंतरा ‘अणंतरसरिसा’ अनन्तरो-

॥शतक ३४ उद्देशक ४-११॥

‘एवं सेसा वि अट्ट उद्देशगा जाव अचरिमोत्ति’ इत्यादि

टीकार्थ—इसी प्रकार से बाकी के भी आठ उद्देशक अवश्य उद्देशक
तक कह लेना चाहिये। वे आठ उद्देशक इस प्रकार से हैं—‘अन्तरावगाढ
४, परम्परावगाढ ५, अनन्तराहारक ६, परम्पराहारक ७, अन्तरपर्याप्त ८,
परम्परपर्याप्त ९, चरम १०, और अचरम ११ ‘नवरं अणंतरा अणंतर-
सरिसा परंपरा परंपरसरिसा चरमा य अचरमाय एवं चेव’ जिनमे

॥ यथा उद्देशानो प्रारंभ ॥

‘एवं सेसा अट्ट उद्देशगा जाव अचरिमोत्ति’ इत्यादि

आज प्रमाणे पाडीना आठे उद्देशाओ यावत् अचरम उद्देशा सुधी
छडेवा नेछये ते आठ उद्देशाओ आ प्रमाणे छे. अनतरावगाढ ४ परम्परावगाढ
५ अनंतरहारक ६ परम्परहारक ७ अनन्तर पर्याप्त परंपरपर्याप्त ९ चरम
१० अने अचरम ११ ‘नवरं अणंतरसरिसा परम्परा, परम्परसरिसा

દેશકા યાવન્ત સ્તે સર્વેऽપિ અનન્તરોપપન્નકવદેવ જ્ઞાતવ્યાઃ ‘પરંપરા પરંપરસ-
રિસા’ પરમ્પરોદેશકાઃ પરમ્પરોપપન્નકોદેશક સદશા જ્ઞાતવ્યાઃ ચરમા અચરમા
અપિ એવમેવ-પરમ્પરોપપન્નકવદેવેતિ ‘એવં એઃ એકારસ ઉદેસગા’ એવં પૂર્વોક્ત
પ્રકારેણ એતે-પૂર્વોક્તા એકાદશોદેશકાઃ ચતુસ્ત્રિંશત્તમશતકે પ્રથમેકેન્દ્રિયશતે
ભવન્તીતિ ॥૩૪।૧।૪=૧૧।

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - ‘जैनाचार्य’
पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमस्य एकेन्द्रियशतकस्य चतुर्थ
एवं एकादशोददेशकः समाप्त ॥३४-४-१-११॥

इति प्रथमेकेन्द्रिय श्रेणिशतकं समाप्तम् ।

અનન્તરોદેશક હૈં વે સ્વ અનન્તરોપપન્નક કે જૈસે હૈં ‘પરંપરા પરંપર-
સરિસા’ એવં પરમ્પરોદેશક પરમ્પરોદેશક કે જૈસે હૈં તથા ચરમ ઓર
અચરમ મી હસી પ્રકાર અર્થાત્ પરમ્પરોપપન્નક કે જૈસે હી જાનના
ચાહિયે । ‘એવં એઃ એકારસ ઉદેસગા’ હસ પ્રકાર સે યે ૩૪ વેં શતક મેં
પ્રથમ એકેન્દ્રિય શતક મેં ૧૧ ઉદેશક હૈં ॥મૂ० ૧॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चोतीसवें शतक का
चार से ग्यारहवां उद्देशक समाप्त ॥३४-१-४-११॥

यह पहला एकेन्द्रियश्रेणि शतक समाप्त हुआ ॥

ચરમા ય અચરમા ય એવં ચેવ’ જોટલા અનંતરોદેશક છે, તે યથા અનંતરોપ-
પન્નક પ્રમાણે છે. તેમ સમજવું. એવં પરંપરોદેશક પરમ્પરોપપન્નકોદેશક
પ્રમાણે છે. તથા ચરમ અને અચરમ પણ આજ પ્રમાણે સમજવા ‘એવં એઃ
એકારસ ઉદેસગા’ આ રીતે આ ૩૪ ઉદેશકો કહ્યા છે. ॥મૂ०૧॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र”ની
પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના ચોત્રીસ શતકના ચારથી અગીયાર ઉદેશ
સમાપ્ત ॥૩૪-૧-૪-૧૧॥

પહેલું એકેન્દ્રિયશતક સમાપ્ત થયું. ॥

द्वितीयमेकेन्द्रियशतं प्रारभ्यते

मूलम्—कङ्कविहा णं भंते ! कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ?
 गोयमा ! पंचविहा कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता । भेओ
 चउक्कओ जहा—कणहलेस्स एगिंदियस्सए जाव वणस्सइकाइयत्ति ।
 कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइए णं भंते ! इमीसे रयण-
 प्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिह्ले० एवं एएणं अभिलावेणं जहेव
 ओहि उद्देसओ जाव लोगचरिंमंते ! त्ति, सव्वत्थ कणहलेस्सेसु
 चेव उववाएयव्वो । कहि णं भंते ! कणहलेस्स अपज्जत्तवायर-
 पुढवीकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता ? एवं एएणं अभिलावेणं जहा
 ओहि उद्देसओ जाव तुल्लट्टियत्ति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।
 एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस
 उद्देसगा भाणियव्वा ॥३४-१॥

विद्वयं एगिंदियसेढिसयं समत्तं ॥३४-२॥

छाया--कतिविधाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ?
 गौतम ! पञ्चविधाः कृष्णलेश्या एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः भेदश्चतुष्को यथा कृष्ण-
 लेश्यैकेन्द्रियशते यावद्वनस्पतिकायिका इति । कृष्णलेश्याऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी-
 कायिकः खलु भदन्त ! एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पौरस्त्ये० एवमेतेना
 मिलापेन यथैवौघिकोद्देशको यावल्लोकचरमान्ते इति, सर्वत्र कृष्णलेश्येष्वेदो-
 पपातयितव्यः । कुत्र खलु भदन्त ! कृष्णलेश्याऽपर्याप्त वादरपृथिवीकायिकानां
 स्थानानि प्रज्ञप्तानि, एवमेतेनामिलापेन यथा—औघिकोद्देशको यावत्तुल्यस्थितिका
 इति, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । एवमेतेनामिलापेन यथैव प्रथमं
 श्रेणिशतं तथैव एकादशोद्देशका भणितव्याः ॥३४-२-१॥

द्वितीयमेकेन्द्रियश्रेणीशतं समाप्तम् । ३४-२॥

टीका--'कङ्कविहा णं भंते ! कणहलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता' कतिविधाः
 कतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्यैकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ता--कथिता ? इति

પ્રશ્નઃ, મગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇશ્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘પંચવિહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પન્નત્તા’ પન્નવિધાઃ—પન્નપકારકાઃ પૃથિવીકાયિકાદિ વનસ્પતિ કાયિકાન્તાઃ કૃષ્ણલેશ્યા એકેન્દ્રિયાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ કથિતાઃ । ‘મેઓ ચચકકઓ જહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયસણ જાવ વળસ્સહકાહયત્તિ’ મેદ શ્વતુષ્કકો યથા કૃષ્ણલેશ્યેકેન્દ્રિયશતે ત્રયસિંશત્તમે શતકે દ્વિતીયે એકેન્દ્રિયશતે યાવદૂ વનસ્પતિકાયિકા ઇતિ । કૃષ્ણલેશ્ય પૃથિવીકાયિકાદારભ્ય કૃષ્ણલેશ્ય વનસ્પતિકાયિકાનાં પન્નાનામ્પિ સૂક્ષ્મ-બાદર-પર્યાપ્તા-અપર્યાપ્તરૂપા ચત્વારો મેદાઃ, ઇતિ

શતક ૩૪ મેં દૂસરા એકેન્દ્રિય શતક ૨

‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ ૩૪-૧૧

ટીકાર્થ—‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે મદન્ત ! ‘કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિય જીવ કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં ? ‘ગોયમા !’ પંચવિહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિય જીવ પાંચ પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં । ઓર યે પૃથિવીકાયિક સે લેકર વનસ્પતિકાયિક તક હૈં । ‘મેઓ ચચકકઓ જહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયસણ જાવ વળસ્સહકાહયત્તિ’ હન કે ચાર મેદ કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિયશતક મેં કહે અનુસાર યાવત્ વનસ્પતિકાયિક તક જાનના ચાહિયે અર્થાત્ ૩૩ વેં શતક મેં દ્વિતીય એકેન્દ્રિય શતક મેં યાવત્ વનસ્પતિકાયિક તક પાંચો કૃષ્ણલેશ્યાવાલે એકેન્દ્રિયો કે સૂક્ષ્મ બાદર પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત રૂપ સે

બીજા એકેન્દ્રિય શતકનો પ્રારંભ —

‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ— ‘કહ્વિહા ણં મંતે ! કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ભગવન્ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય જીવો કેટલા પ્રકારના કહેવામાં આવેલ છે ? ‘ગોયમા ! પંચવિહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયા પળ્ણત્તા’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય જીવો પાંચ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે. અને તે પૃથ્વીકાયિકથી લઈને વનસ્પતિ કાયિક સુધીના સમજવા. ‘મેઓ ચચકકઓ જહા કળ્હલેસ્સા ઇગિંદિયસણ જાવ વળસ્સહકાહયત્તિ’ કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય શતકમાં કહ્યા પ્રમાણે તેઓના ચાર ભેદો યાવત્ વનસ્પતિકાય સુધી સમજવા. અર્થાત્ ૩૩ તેત્રીશમાં શતકના બીજા એકેન્દ્રિય શતકમાં યાવત્ વનસ્પતિકાય સુધી પાંચે પ્રકારના કૃષ્ણલેશ્યાવાળા એકેન્દ્રિય જીવને સૂક્ષ્મ, બાદર, પર્યાપ્તક અને અપર્યાપ્તક રૂપથી ચાર ભેદો જે પ્રમાણે કહ્યા છે, એજ પ્રમાણે અહિંયાં પણ સમજવા.

चत्वारो भेदा भवन्तीति । 'कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकइण णं भंते !' कृष्णलेइयाऽपर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त ! 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले०' एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः पौरस्त्ये० 'एवं एणं अभिलावेणं जहेव ओहिउदेसओ जाव लोगचरिमंतेत्ति' एवमेतेनाभिलापेन यथैव औघिकोदेशको यावल्लोकचरमान्त इति, 'सव्वत्थ कणहलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो' सर्वत्र कृष्णलेइयेष्वेव उपपातयितव्यः । यथैवौघिक उदेशकः अत्रैव चतुस्त्रिंशत्तमशतकगते प्रथमे एकेन्द्रियशतके सामान्येन-अपर्याप्त सूक्ष्म-पृथिवीकायिकप्रकरणोक्तं सर्वं प्रकरणं वाच्यम्, विशेष एतावानेव यत्

चार भेद जैसे कहे गये हैं वैसे ही वे यहां पर भी जानना चाहिये । 'कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !' हे भदन्त ! वह कृष्ण-लेइयावाले अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कि जिसने 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले' इस रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में मारणान्तिक समुद्घात किया है और पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न होने के योग्य हुआ है तो हे भदन्त ! ऐसा वह जीव वहां कितने समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? इत्यादि पाठ द्वारा जैसा औघिक उद्देशक में कहा गया है वैसे ही लोक के चरमान्तसंबन्धी प्रकरण तक समझना चाहिये । 'सव्वत्थ कणहलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो' और इन सबका सर्वत्र कृष्णलेइयावालों में ही उपपात कहना चाहिये । तात्पर्य कहने का यही है कि जिस प्रकार से ३४ वे शतक गत प्रथम एकेन्द्रिय शतक में सामान्य से अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक के प्रकरण में कहा

'कणहलेस्स अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइयाणं भंते !' हे भगवन् ते कृष्ण-देश्यावाणा अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एव के जेणे 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले' आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां मारणान्तिक समुद्घात करीने पश्चिम चरमान्तमां उत्पन्न थवाने योग्य डोय तो हे भगवन् जेवा ते एव त्यां केटला समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे ? इत्यादि पाठद्वारा औघिक उद्देशाभां जे प्रभाणे कडेवाभां आवेल छे जे प्रभाणे दोकना चरमान्त सुधी समज्जुं जेधजे. 'सव्वत्थ कणहलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो' जने आ जधाने उपपात जधे केकाणे कृष्णदेश्यावाणाभां कडेवे जेधजे. कडेवानुं तात्पर्य जे छे के-जे प्रभाणे चोत्रीसमां शतकना पडेला जेकेन्द्रिय शतकमां सामान्य पण्ठाथी अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकना प्रकरणमां कडेवाभां आवेल छे. जे प्रभाणेनुं सधणुं प्रकरण अडियां पणु कडेवुं जेधजे.

अत्र कृष्णलेश्यविशेषणविशिष्टाः सर्वे पृथिव्यादयो वाच्याः, उपपातोऽपि सर्वेषां सर्वत्र कृष्णलेश्येष्वेव कर्त्तव्यः । कियत्पर्यन्तमित्याह—‘जात्र लोगचरि-मंते’ यावल्लोकचरमान्त इति, लोक-चरमान्तसूत्रपर्यन्तं संग्राह्यम् । जीवो यस्यां लेश्यायां म्रियते तरयामेवोत्पद्यते, इति न्यायात् कृष्णलेश्य जीवानां कृष्णलेश्येष्वेव उपपातो वर्णनीयः, इति भावः । ‘कहिणं भंते ! कणहलेस्स अपज्जत्तवायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता’ कुत्र खलु भदन्त ! कृष्णलेश्य पर्याप्त वादरपृथिवीकायिकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानीति प्रश्नः स्वस्थानापेक्षयाऽऽष्टसु पृथिवीषु इत्युत्तरम् इत्यादि, ‘एवं एएणं अभिलावेणं

गया है वही सब प्रकरण यहां वाच्य हुआ है । विशेषता उस प्रकरण से इस प्रकरण में केवल इतनी सी है कि यहां पर समस्त पृथिवीकायिक आदि एकेन्द्रिय जीव कृष्णलेश्या स्व विशेषण से विशिष्ट हुए हैं । तथा इन सब का उपपात भी सर्वत्र कृष्णलेश्यावालों में ही कर्त्तव्य हुआ है । ऐसा यह सब उपपात सम्बन्धी कथन लोक के चरमान्त प्रकरण तक गृहीत हुआ है । वर्यो कि जीव जिस लेश्या में मरता है वह उसी लेश्या में उत्पन्न होता है । इस न्याय के अनुसार कृष्णलेश्यावाले जीवों का उपपात कृष्णलेश्यावालों में ही होता है । ऐसा वर्णन कर लेना चाहिये ।

‘कहिणं भंते ! कणहलेस्स अपज्जत्त वायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले अपर्याप्त वादर पृथिवीकायिकों के स्थान कहां पर कहे गये हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा से उनके स्थान आठों पृथिवियों में अर्थात्

ते प्रकशु करतां आ प्रकरुमां विशेषता केवण अटती न छे के अडियां सधणा पृथ्वीकायिके विगेरे अकेन्द्रिय लुवे कृष्णलेश्याना विशेषलुथी कडेवाना छे, तथा आ अधाने उपपात पणु अधे न कृष्णलेश्यावाणाओमां न कडेवे लोथये, आ प्रमाणे आ सधणुं उपपात संबन्धी कथन दोकना चरमान्त सूत्र सुधी अडुषु करायेल छे, केम के लुव न लेश्यामां भरलुपामे छे, ते अेन लेश्यामां उत्पन्न थाय छे, आ न्याय प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा लुवेनो उपपात कृष्णलेश्यावाणाओमां न थाय छे अे प्रमाणेतुं वलुन करी देवुं लोथये.

‘कहिणं भंते ! कणहलेस्स अपज्जत्त वायरपुढवी काइयाणं ठाणा पणत्ता’ हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा अपर्याप्तक वादर पृथ्वीकायिकेना स्थाने कयां कडेवामां आवेल छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे छे के-हे गौतम ! स्वस्थाननी अपेक्षाथी तेओना स्थाने रत्तप्रला पृथ्वीभी

जहा ओहि उद्देसओ जाव तुल्लट्टिइयत्ति' एवमेतेन पूर्वोक्तेनाभिलापेन-
अभिलापप्रकारेण यथा अस्य औघिकः प्रथमोद्देशकश्चतुस्त्रिंशत्तमस्य शतकस्य
प्रथमे एकेन्द्रियशते प्रथमोद्देशके, यावत् तुल्यस्थितिका इति, 'सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यानद्विहरति, 'एवं एएणं
अभिलावेणं जहेव पढमं सेदिसयं तहेव एकारस उद्देसगा भाणियव्वा' एवमेते-
नाभिलापेन यथैव प्रथमं श्रेणिशतकं तथैव एकादशोद्देशका भणितव्याः ॥मू० १॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुभादिपदभूषितबालब्रह्मचरि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमे शतके द्वितीयमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३४-२॥

रत्नप्रभा पृथिवी से लेकर ईषट्प्राग्भारा पृथिवी तक में कहे गये हैं
इत्यादि 'एवं एएणं' अभिलावेणं जहा ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्ल-
ट्टिइयत्ति' इसी प्रकार पूर्वोक्त अभिलाप से जैसा इसका चौंतीसवें
शतक का प्रथम उद्देशक कहा गया है एकेन्द्रिय शतक में यावत् तुल्य
स्थितिवाले प्रकरण तक कहा गया है वैसा ही यहाँ पर भी तुल्य
स्थिति प्रकरण तक कह लेना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'
हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस
प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया ।
वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित
करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

लभने षट्प्राग्भारा पृथ्वी सुधीमां कडेल छे. इत्यादि 'एवं एएणं' अभिलावेणं
जहा ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्लट्टिइयत्ति' आज प्रमाणे आ पडेला कडेल
अभिलाप प्रमाणे जे रीते येत्रीस ३४ मा शतकना पडेला उद्देशामां कडेवामां
आवेद छे, अर्थात् एकेन्द्रिय शतकमां यावत् तुल्य स्थितिवाणानाकथन सुधी कडेल
छे, एज प्रमाणेनुं कथन अडिया पण तुल्यस्थितिवाणा कथन सुधी कडेवुं जेधजे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये जे प्रमाणेनुं
कथन आ विषय संभधमा करेद छे, ते सधणुं कथन सत्य छे, छे लगवन्
आप देवानुप्रियेनु सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे आ प्रमाणे कडीने गौतम-
स्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपधी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थानपर
भिराजमान थया.

‘एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस उद्देशणा भाणियव्वा’ इस अभिलाप से जैसा प्रथम श्रेणिशतक कहा गया है उसी प्रकार से इसके भी ११ उद्देशक कह लेना चाहिये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौतीसवें शतकका द्वितीय एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥३४-२॥

‘एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस उद्देशणा भाणियव्वा’ आ अलिदापथी पडेला श्रेणी शतकमां ने प्रभाणे उडेवामां आवेलछे. ओज प्रभाणे आना ११ अगियार उद्देशाओ उडेवा नेछे ॥सू०१॥
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत “भगवतीसूत्र”नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना चौतीसवा शतकतुं भीणु ओकेन्द्रिय शतक समाप्त



‘अह तइय चउत्थ पंचम सयाइं’

मूलम्—एवं नीललेस्सेहि वि तइयं सयं । काउलेस्सेहि वि सयं एवं
चेव चउत्थं सयं । भवसिद्धिएहिं वि सयं । पंचमं सयं समत्तं । सू. २।

छाया—एवं नीललेश्यैरपि तृतीय शतम् ॥३॥ कापोतलेश्यैरपि शतम् एवमेव
चतुर्थं शतम् ॥४॥ भवसिद्धिकैरपि शतम् । पञ्चमं शतं समाप्तम् ॥सू०१॥३४५

टीकाः—‘एवं नीललेस्सेहि वि तइयं सयं’ एवं यथा कृष्णलेश्यैकेन्द्रि-
यस्य शतमेकादशोद्देशकयुतं भणितं तथैव नीललेश्यैरपि तृतीयं शतम् एका-
दशोद्देशकयुक्तं भणितव्यम् ॥३४३॥

‘काउलेस्से वि सयं एवं चेव चउत्थं सयं’ कापोतलेश्यैरपि शतम् एवमेव—
तृतीयशतवदेव चतुर्थं शतमपि भणितव्यम् । एवमेकादशोद्देशकयुक्तं चतुर्थं
कापोतलेश्यशतं निरूपणीयमिति चतुर्थं शतं समाप्तम् ॥३४४॥

‘भवसिद्धिएहिं वि सयं’ एवं यथा नीललेश्यादिभिः शतं भणितं तथैव
भवसिद्धिकैरपि शतं भणितव्यम् । तथाहि—भवसिद्धिकैकेन्द्रियाः खलु भदन्त !

तीसरे से पांच तक के तीन उद्देशक

‘एवं नीललेस्सेहिं वि तइयं सयं’ इत्यादि

टीकार्थ—जिस प्रकार से ११ उद्देशों से युक्त कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय
जीव का शतक कहा गया है उसी प्रकार से नीललेश्यावालों के सम्बन्ध
में भी ११ उद्देशकों से युक्त तृतीय शतक भी कह लेना चाहिये ॥३४-३॥

‘काउलेस्सेहि वि सयं एवं चेव चउत्थं सयं’ इसी प्रकार से कापोत-
लेश्यावालों के सम्बन्ध में भी ११ उद्देशकों से युक्त चतुर्थ शतक भी
कह लेना चाहिये ॥३४-४॥

‘भवसिद्धिएहिं वि सयं’ जिस प्रकार से नीललेश्यादिवालों के सम्बन्ध
में शतक कहे गये हैं उसी प्रकार से भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के

त्रील, योथा, अने पांचमा शतकनो प्रारंभ—

‘एवं नीललेस्सेहिं वि तइयं सयं’ इत्यादि

टीकार्थ—ने प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा अकेन्द्रिय लुवना संभंधमां ११
अगियार उद्देशावाणुं शतक कडेल छे, अने प्रमाणे नीललेश्यावाणाओना
संभंधमां पण ११ अगियार उद्देशावाणुं त्रीलुं शतक कडेलुं नेऽपि ॥३४-३॥

‘काउलेस्सेहिं वि सयं एवं चेव चउत्थं सयं’ आन प्रमाणे कापोतिकलेश्यावाणा
लुवना संभंधमां पण ११ अगियार उद्देशावाणुं योथुं शतक पण कडेलुं
नेऽपि ॥३४-४॥

‘भवसिद्धिएहिं वि सयं’ ने प्रमाणे नीललेश्या विगेरे वाणाओना
संभंधमां शतक कडेवामां आवेल छे, अने प्रमाणे भवसिद्धिक अकेन्द्रियाणा

कति प्रकारकाः प्रज्ञप्ताः हे गौतम ! पञ्चप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—पृथिवी-
कायिका यावद्वनस्पतिकायिकाः । भवसिद्धिक पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त !
कतिप्रकारकाः प्रज्ञप्ताः हे गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—सूक्ष्माश्च
बादराश्च । एवमेव यावद्वनस्पतिकायिका अपि । भवसिद्धिकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः
कतिविधाः प्रज्ञप्ताः हे गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः अपर्याप्ताश्च पर्याप्ताश्च
एवं यावद्वनस्पतिकायिकाः । हे भदन्त ! भवसिद्धिकापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी-
कायिकः एतस्या रत्नप्रभाया पौरस्त्ये चरमान्ते समवहतः समवहत्य
एतस्या रत्नप्रभायाः पौरस्त्ये चरमान्ते भवसिद्धिकापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी
कायिकतया समुत्पत्तियोग्यो विद्यते स खलु कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येते-

सम्बन्ध में भी शतक कहलेना चाहिये । तथा च—हे भदन्त ! भव-
सिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के बहे गये हैं ? हे गौतम ! वे
पांच प्रकार के कहे गये हैं । जैसे—पृथिवीकायिक से लेकर यावत् वन-
स्पतिकायिक तक हे भदन्त ! भवसिद्धिक पृथिवीकायिक कितने प्रकार
के कहे गये हैं ? हे गौतम ! दो प्रकार के कहे गये हैं । सूक्ष्म और बादर
इसी प्रकार से ये दो भेद यावत् वनस्पतिकायिक जीवों के भी जानना
चाहिये । भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे
गये हैं ? हे गौतम ! दो प्रकार के कहे गये हैं । पर्याप्त और अपर्याप्त इसी
प्रकार के दो भेद यावत् बादरवनस्पतिकायिक तक जानना चाहिये ।
हे भदन्त वह भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव जो इस
रत्नप्रभापृथिवी के पूर्व चरमान्त में समवहत हुआ है और समवहत
होकर उसी पूर्व चरमान्त में भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक

ज्वना संभ्रमां पणु शतकं कडेवुं जेठजे. तथा हे लगवन् भवसिद्धिक
जेकेन्द्रिय ज्वो केटला प्रकारना कडेवामां आंव्या ? छे हे गौतम ! तेजे. पांच
प्रकारना कडेवामां आवेल छे. जेथ के—पृथ्वीकायिकथी लघिने यावत् वनस्पति
काय सुधीना पांच प्रकार समजवा. हे लगवन् भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक ज्वो
केटला प्रकारना कडेवामां आंव्या छे ? हे गौतम ! तेजे. जे प्रकारना कडेवामां
आंव्या छे ? ते जे प्रकारे पर्याप्तक अने अपर्याप्तक जे रीते छे. आव
प्रमाणेना जे लेहो यावत् वनस्पतिकाय सुधी समजवा.

हे लगवन् ते भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ज्व के जेजे
आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां समुद्घात करेल छे, अने समुद्घात
करीने आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व चरमान्तमां भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म

त्यारभ्य तुल्यस्थितिकाः तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ति एतत्पर्यन्तमेतस्य प्रथम शतवदेव सर्वमिहापि, एवमेकादशोद्देशकाः पूर्ववदेव भणितव्याः तदित्यम् एकादशोद्देशकयुक्तं पंचमं भवसिद्धिकशतं समाप्तं भवति ॥सू० १॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजपदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
-पूज्यश्री घासिलालव्रतिचिरचितायां श्री "भग-
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमशतके
पञ्चममेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥ ३४५॥

रूप से ही उत्पन्न होने के योग्य हुआ है वह कितने समयवाले विग्रह से वहाँ उत्पन्न होता है ? इस प्रश्न सूत्र से लेकर 'तुल्यस्थितिवाले तुल्य विशेषाधिक कर्म' का बन्ध करते हैं 'यहाँ' तरु का समस्त कथन इसी के प्रथम शत के जैसा ही यहाँ पर भी जानना चाहिये और यहाँ पर भी ११ उद्देशक पूर्व के जैसे ही कहलेना चाहिये । इस प्रकार यह पांचवां भवसिद्धिक शतक जो कि ११ उद्देशकों युक्त कहा गया है समाप्त होता है ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौनीसवें शतक का पांचवां एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥ ३४-५॥

पृथ्वीकायिक पञ्चाथी उत्पन्न थवाने योग्य भनेल છે, તેઓ ત્યાં કેટલાસમયની વિગ્રહગતિથી ઉત્પન્ન થાય છે? આ પ્રશ્ન સૂત્રથી લઇને તુલ્ય સ્થિતિવાળા તુલ્ય વિશેષાધિક કર્મનો બંધ કરે છે. આ કથન સુધીનું સંઘળું કથન આ ૩૪ ચોત્રીસમા શતકના ત્રીજા ઉદ્દેશાના પહેલા એકેન્દ્રિય શતકમાં કહ્યા પ્રમાણે છે તેમ સમજવું અને અડિયાં પણ ૧૧ અગીયાર ઉદ્દેશાઓ પહેલા કહ્યા પ્રમાણે કહ્યા છે તેમ સમજવું. આ રીતે આ પાચમું ભવસિદ્ધિક શતક કે જે ૧૧ અગીયાર ઉદ્દેશાઓવાળું છે. તે સમાપ્ત થયું છે.

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર શ્રી પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત 'ભગવતીસૂત્રની પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના તેત્રીસમા શતકનું પાચમું એકેન્દ્રિયશતક સમાપ્ત ॥૩૪-૫॥

अथ षष्ठं शतकं प्रारभ्यते

मूलम्—कइविहा णं भंते ! कणहलेस्सा भवसिद्धिया एगि-
दिया पन्नत्ता एवं जहेव ओहि उद्देसओ । कइविहा णं भंते !
अणंतरोववन्नगा कणहलेस्सा भवसिद्धिया एगिदिया पन्नत्ता
जहेव अणंतरोववन्नगा उद्देसओ ओहिओ तहेव । कइविहा णं
भंते ! परंपरोववन्नगा कणहलेस्सा भवसिद्धिय एगिदिया पन्नत्ता
ओहिओ भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति । परंपरोववन्न
कणहलेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्तसुहुमपुढवीकाइए णं भंते !
इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए एत्तं एएणं अभिलावेणं जहेव
ओहिओ उद्देसओ जाव लोयचरिन्ते त्ति । सव्वत्थ कणहलेस्सेसु
भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो । कहि णं भंते ! परंपरोववन्न
कणहलेस्स भवसिद्धिय एज्जत्तवायरपुढवीकाइया णं ठाणा
पन्नत्ता एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव
तुल्लट्टिइयत्ति । एवं एएणं अभिलावेणं कणहलेस्स भवसिद्धिय
एगिदिएहिं वि तहेव एक्कारस्स उद्देसगसंजुत्तं छट्ठं सयं । सु०१।

चोत्तीसइमे सए छट्ठं एगिदियसयं समत्तं

छाया--कतिविधाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्यभवसिद्धिका एकेन्द्रियाः
प्रज्ञप्ताः ? यथैवौघिकोद्देशकः । कतिविधाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः
कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः यथैवानन्तरोपपन्नकोद्देशक औघिक-
स्तथैव । कतिविधाः खलु भदन्त ! परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या भवद्विकै-
केन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! षष्ठविधाः परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्य भवसि-
द्धिकैकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः औघिको भेदश्चतुष्को यावद्वनस्पतिकायिकाः इति ।
परंपरोपपन्न कणहलेश्यभवसिद्धिकापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकः खलु भदन्त !
एतस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः एवमेतेनाभिज्ञापेन यथैवौघिक उद्देशकः
यावद्लोकचरमान्त इति । सर्वत्र कृष्णलेश्येषु भवसिद्धिकेषु उपपातयितव्यः
कुत्र खलु भदन्त ! परम्परोपपन्न कृष्णलेश्यभवसिद्धिकपर्याप्तवादरपृथिवी-

कायिकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि एवमेतेनाभिलापेन यथैवाधिक उद्देशको यावत् तुल्यस्थितिका इति । एवमेतेनाभिलापेन कृष्णलेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि तथैव एकादशोद्देशकसंयुक्तं पण्डं शतम् ॥मू० १॥

चतुस्त्रिंशत्तमे शतके पण्डमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३४६॥

टीका—‘कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ कतिविधाः—कतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘एवं जहेव ओहियउद्देशओ’ एवं यथैवाधिकोद्देशकः, अस्यैव चतुस्त्रिंशत्तमशतकस्य औधिके उद्देशके—प्रथमे उद्देशके यथा

शतक ३४ छठाशत

‘कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रियजीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं जहेव ओहिओ’ हे गौतम ! जैसे ३४ वे शतक के प्रथम उद्देशक में भेदों का कथन किया गया है । उसी प्रकार से यहाँ पर पृथिवीकायिक से लेकर यावत् वनस्पतिकायिक तक पांच भेद इसके जानना चाहिये ।

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता’ हे भदन्त ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘जहेव अणंतरोववन्न उद्देशओ ओहिओ तहेव’ हे गौतम ! जैसा इसी ३४ वे शतक का अनन्तरोपपन्नक उद्देशक कहा गया है । उसी

७६। ऐकेन्द्रियशतकेना प्रारंभ—

‘कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक ऐक्यन्द्रियवाणा एवे। केटला प्रकारना कडेवामां आ.व्या छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतम स्वामीने कडे छे के—‘एवं जहेव ओहिय उद्देशओ’ हे गौतम ! ३४ यात्रीसमा शतकेना पहिला उद्देशामां के प्रमाणे लेदोनुं कथन करवामां आवेल छे, ओज प्रमाणेनुं कथन अहियां पृथ्वीकायिकथी लधने यावत् वनस्पतिकाय सुधी पांच लेदो समजवा.

‘कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पणत्ता’ हे भगवन् अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक ऐक्यन्द्रियवाणा एवे। केटला प्रकारना कडेवामां आवेल छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के ‘जहेव अणंतरोववन्न उद्देशओ ओहिओ तहेव’ हे गौतम ! आ यात्रीसमा

भेदाः कथिता स्तथैवात्रापि पञ्चविधा ज्ञातव्याः पृथिवीकायिका यावद्ब्रह्मस्पति-
कायिका इति । 'कइविहा णं भंते ! अणंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया
एगिंदिया पन्नता' कतिविधाः—कतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! अनन्तरोपपन्नकाः
कृष्णलेश्या भवसिद्धिका एकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः कथिताः ? इति प्रश्नः, उत्तर-
माह—'जहेव' इत्यादि, 'जहेव अणंतरोववन्न उद्देसओ ओहिओ तहेव' यथैवानन्त-
रोपपन्नोद्देशक औघिक स्तथैव चतुस्त्रिंशच्छतकस्य औघिके द्वितीये अनन्तरोपप-
न्नकप्रकरणे यथा कथितं तथैवात्रापि सर्वं ज्ञातव्यम् । कतिप्रकारका इति प्रश्नस्य
पञ्चप्रकारकाः तद्यथा—पृथिवीकायिका यावद्ब्रह्मस्पतिकायिकाः, अनन्तरोपपन्न
कृष्णलेश्याभवसिद्धिक पृथिवीकायिकाः कति प्रकारका इति प्रश्नस्य द्विप्रकारकाः
सूक्ष्माश्च बादराश्च एवं यावद्ब्रह्मस्पतिकायिकाः । अत्र द्विपद एव भेदो वर्णयितव्यः
अनन्तरोपपन्नकत्वादेव पर्याप्तापर्याप्तभेदयोरभावादिति । अन्यत्सर्वं प्रथमोद्देशक-
वदेव ज्ञातव्यम् ॥ 'कइविहा णं भंते ! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धि

प्रकार से यहाँ पर भी सब प्रकरण जानना चाहिये । जैसे—कृष्णलेश्या
वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पृथिवीकायिक से लेकर ब्रह्मस्पति
कायिक तक पांच प्रकार के कहे गये हैं 'अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या
वाले भवसिद्धिक पृथिवीकायिक जीव सूक्ष्म और बादर के भेद से दो
प्रकार अण्कायिक तेजस्कायिक वायुकायिक और ब्रह्मस्पतिकायिक इन
सब एकेन्द्रिय जीवों के भी जानना चाहिये । यहाँ पर्याप्त और अप-
र्याप्त ऐसे दो भेद विवक्षित नहीं हुए हैं । क्यों कि अनन्तरोपपन्नक
होने से इन में ये दो भेद होते नहीं हैं । और सब कथन इन के
संबन्ध में प्रथमोद्देशक के जैसा ही सबज्ञाना चाहिये । 'कइविहा णं
भंते ! परंपरोववन्नगा' हे भदन्त ! परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले

शतकेना अनंतरोपपन्नक संबंधी उद्देशा जे प्रमाणे उडेवाभां आवेल छे, ओज
प्रमाणे अहियां पणु तमास प्रकरण समजवुं. जेम के—कृष्णलेश्यावाणा लव-
सिद्धिक एकेन्द्रिय पृथ्वीकायिकथी लघने वनस्पतिकायिक सुधी पांच प्रकारना
उडेवाभां आवेल छे. अनंतरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिक पृथ्वीकायिक
एव सूक्ष्म अने बादरना लेदथी जे प्रकारना उडेल छे. आज प्रमाणेना आ
जे लेदो अण्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक आ सधणा
एकेन्द्रियवाणा एवोना संबंधभां पणु समजवा. अहियां पर्याप्त अने
अपर्याप्त आ जे लेदोनी विवक्षा करेल नथी. जेम के अनंतरोपपन्नक डोवाथी
आभनाभां आ जे लेदो डोता नथी. आकीनुं सधणुं कथन आ विषयना
संबंधभां पडेला उद्देशाभां कइया प्रमाणे समजवुं.

एगिदिया पन्नत्ता' कतिविधाः—ऋतिप्रकारकाः खलु भदन्त ! परम्परोपपन्नाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिकैकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह— 'गोयमा !' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धियएगिदिया पन्नत्ता' पञ्चविधाः—पञ्चप्रकारकाः परम्परोपपन्नकाः कृष्णलेश्या भवसिद्धिकैकेन्द्रियाः प्रज्ञप्ताः—कथिताः । तद्यथा—पृथिवीकायिका यावद्वनस्पतिकायिकाः परम्परोपपन्नक पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त ! कतिविधाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—सूक्ष्माश्च बादराश्च तत्र सूक्ष्मा पुनर्द्विविधाः पर्याप्ताश्चापर्याप्ताश्च बादरा अपि द्विविधाः पर्याप्ताश्चापर्याप्ताश्च एवं यावद्वनस्पतिकायिकाः, एतदाशयेनाह—'ओहिओ भेदो चउक्कओ जाव वण-

भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गये हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धियएगिदिया पन्नत्ता' हे गौतम ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे गये हैं । जैसे—पृथिवीकायिक यावद्वनस्पतिकायिक । परम्परोपपन्नक पृथिवीकायिक जीव हे भदन्त ! कितने प्रकार के कहे गये हैं ! हे गौतम ! ये दो प्रकार के कहे गये हैं । एक सूक्ष्म और दूसरे बादर इन में सूक्ष्म भी पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार के कहे गये हैं । इसी प्रकार के भेदवाले एकेन्द्रिय जीव यावत् वनस्पतिकायिक तक जानना चाहिये । इसी आशय को लेकर सूत्रकार ने 'ओहिओ भेदो चउक्कओ जाव वणस्सइ काइयत्ति' ऐसा यह सूत्रपाठ कहा है । 'परंपरोववन्न कण्हलेस्स भव-

'कइविहा णं भते । परंपरोववन्नगकं' हे लगवन् परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रिय एवो केटला प्रकारना कडेवामा आवेल छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिय एगिदिया पणत्ता' हे गौतम ! परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रियवाणा एवो पृथ्वीकायिकथी लधने वनस्पतिकाय सुधीना पाय प्रकारना कडेवामा आवेल छे । हे लगवन् परंपरोपपन्नक पृथ्वीकायिक एवो केटला प्रकारना कडेवामा आव्या छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—हे गौतम ! तेओ सूक्ष्म अने बादरना लेदथी छे प्रकारना कडेवामा आवेल छे । तेओमां सूक्ष्म पणु पर्याप्तक अने अपर्याप्तकना लेदथी छे प्रकारना कडेवामा आवेल छे । आ प्रमाणेना लेदोवाणा एकेन्द्रियाणा एवो यावत् वनस्पतिकाय सुधीना समज्जा । आज् अबिप्रायथी सूत्रकारे 'ओहिओ भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइयत्ति' आ प्रमाणेना सूत्रपाठ कडेल छे,

रसइकाइयत्ति' औघिको भेदश्चतुष्कको सूक्ष्मवाटरपर्याप्तापर्याप्तरूपो यावद्-
नस्पतिकायिका इति । 'परंपरोववन्न कणहलेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुढवी-
काइएणं भंते !' परम्परोपपन्न कृष्णलेइया भवसिद्धिकापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवी-
कायिकः खलु भदन्त ! 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए०' एतस्या रत्नप्रभायाः
पृथिव्याः पूर्वं चरमान्ते समवहतः समवहत्य यो भव्य एतस्या एव रत्नप्रभायाः
पश्चिमे चरमान्ते परम्परोपपन्न कृष्णलेइय भवसिद्धिकापर्याप्त सूक्ष्मपृथिवी-
कायिकतया समुत्पत्तुं स खलु भदन्त ! कियत्सामयिकेन विग्रहेणोत्पद्येत हे
गौतम ! एकसामयिकेन वा यावत् त्रिसामयिकेन वा समुत्पद्येत इत्यारभ्य-
लोकचरमान्तपर्यन्तं सर्वमपि औघिकप्रकरणवदेव ज्ञातव्यमित्याशयेनाह-
'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव लोयचरिमंते त्ति'

सिद्धिय अपज्जत्तसुहुम पुढवीकाइए णं भंते !' वह परम्परोपपन्नक
कृष्णलेइयावाला भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव जो
'इमीसे रयणप्पभाए पुढवी ए०' इस रत्नप्रभा पृथिवी के पूर्व चरमान्त
में समवहत हुआ है और समवहत होकर इसी रत्नप्रभा पृथिवी के
पश्चिम चरमान्त में परम्परोपपन्नक कृष्णलेइया युक्त भवसिद्धिक
अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य है कितने
समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! वह वहाँ 'एकसमय
वाले विग्रह से यावत् तीन समयवाले विग्रह से उत्पन्न होता है' ऐसे
इस कथन से लगाकर लोक चरमान्त प्रकरण तक का सब कथन
औघिक प्रकरण जानना चाहिये । इसी आशय को लेकर 'एवं एएणं
अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव लोय चरिमंते । त्ति' ऐसा

'परंपरोववण्ण कणहलेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्त सुहुमपुढवीकाइएणं भंते !' हे
भगवन् परंपरोपपन्नक कृष्णलेइयावाणा भवसिद्धिक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वी
कायिक एव हे हे 'इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए०' आ रत्नप्रभा पृथ्वीना पूर्व
चरमान्तमां समुद्घात करीं छे. अने समुद्घात करीने आ रत्नप्रभा पृथ्वीना
पश्चिम चरमान्तमां परंपरोपपन्नक कृष्णलेइया युक्त भवसिद्धिक अपर्याप्तक
सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पण्णाथी उत्पन्न थवाने योग्य होय छे ? हे गौतम ! ते
त्यां ओक समयवाणी विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. यावत् त्रयु समयवाणी
विग्रहगतिथी उत्पन्न थाय छे. ओ प्रमाणेना कथनथी लधने चरमान्त सुधीतुं
तमां कथन औघिक प्रकरणमां कथा प्रमाणे समज्जुं. आ अलिप्रायने लधने
सूत्रकारे 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव चरिमंते त्ति'

एवमेतेन पूर्वोदितेनाभिलाषेण प्रकारेण यथैवीधिकोदेशकः चतुस्त्रिंशत्तमशत-
कस्य प्रथमोदेशः, यावत्लोकचरमान्त इति । औघिकप्रकरणत्रये सर्वं ज्ञात-
व्यमिति । 'सर्व्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो' सर्वत्र कृष्णलेश्येषु
भवसिद्धिकेषूपपातयितव्यः परम्परोपपन्न कृष्णलेश्यभवसिद्धिकानां कृष्णलेश्य-
भवसिद्धिकेष्वेवोपपातो वर्णयितव्यः, 'कहि णं भंते ! परंपरोववन्नकण्हलेस्स
भवसिद्धियपज्जत्तवायरपुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता' कुत्र खलु भदन्त !
परम्परोपपन्न कृष्णलेश्य भवसिद्धिक वादरपृथिवीकायिकानामेकेन्द्रियाणां
स्थानानि प्रज्ञप्तानि—कथितानीति प्रश्नः, हे गौतम ! स्वस्थानापेक्षया अष्टासु
पृथिवीषु स्थानानि प्रज्ञप्तानि इत्यारभ्य यावत् तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्ती-
त्येतत् पर्यन्तम् औघिकोदेशकवदेव ज्ञातव्यमित्याशयेनाह—'एवं' इत्यादि, 'एवं

यह सूत्रपाठ कहा है 'सर्व्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो'
सर्वत्र परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिको' का कृष्णलेश्यावाले
भवसिद्धिको' में ही उपपात वर्णित करना चाहिये ।

'कहि णं भंते ! परंपरोववन्न कण्हलेस्स भवसिद्धिय पज्जत्तवायर
पुढवीकाइयाणं ठाणा पणत्ता' हे भदन्त ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या
वाले भवसिद्धिक वादर पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय जीवों के स्थान कहां
पर कहे गये हैं । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'हे गौतम ! स्वस्थान की
अपेक्षा से इनके स्थान आठ पृथिवीयों आदिको में ७ स्थान रत्नप्रभा-
दिक नरकों में एवं आठवीं पृथिवी ईषत्प्राग्भारा पृथिवी में कहे
गये हैं । इस के अतिरिक्त और भी इस सम्बन्ध में जो कथन है वह
सब कथन यावत् तुल्य विशेषाधिक कर्म का वे बन्ध करते हैं' इत्यादि

आ प्रभाषेने। सूत्रपाठ कडेल छे ' सर्व्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो
लोकेना पूर्व चरमान्तमां समुद्घत्त करेस परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा
भवसिद्धिकेने। उपपात कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिकेमां न वल्लुववे। नेउअे।

'कहिण' भंते ! परंपरोववन्न कण्हलेस्स भवसिद्धिय अपज्जत्त वायरपुढवी
काइयाणं ठाणा पणत्ता' हे भगवन् परंपरोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक
वादर पृथ्वीकायवाणा एकेन्द्रिय जीवोना स्थान कयां कडेवामां आवेल छे ?
आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के-हे गौतम ! स्वस्थाननी
अपेक्षाथी तेओना आठ स्थानो पृथ्वीकायिकेमां, रत्नप्रभा विगेरे नरकेमां.
तेमन आठमी षषत्प्राग्भारा पृथ्वीमां कडेवामा आवेल छे. आ शिवाय आ
विषयना स'अ'धमां भीअु' ने कथन छे, ते सधणुं कथन यावत् तुल्य विशेषाधिक
कर्म'ने ण'ध करे छे. आ कथन सुधी औघिक उदेशमां कया प्रभाषे सम'अ'पु'

एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्लड्ढियत्ति' एवमेतेन पूर्वोक्तेनाभिलापेन प्रकारेण यथैवौधिक उद्देशकः चतुस्त्रिंशत्तमशतकस्य प्रथमो-यावत्तुल्यस्थितिका इति, सर्वमिदं औधिक प्रकरणद्वयं ज्ञातव्यं यावत्तुल्य स्थितिका स्तुल्यविशेषाधिकं कर्म प्रकुर्वन्तीति भावः । 'एवं एएणं अभिला-वेणं कण्हलेस्स भवसिद्धि एगिदि एहिं वि तहेव एकारस उद्देससंजुत्तं छट्ठं सयं' एवमेतेनाभिलापेन यथा-औधिक भवसिद्धि सम्बन्धि पञ्चमं शतकं कथितं तथैवास्य षष्ठशतकस्य औधिकानन्तरोपपन्नक परम्परोपपन्नकेत्युद्देशकत्रयविशिष्टकेन्द्रि-यैरपि तथैवैकादशोद्देशकसंयुक्तं षष्ठं शतकम्, अनन्तरावगाढ परम्परावगाढानन्तरा-हारक परम्पराहारकानन्तरपर्याप्तकपरस्परपर्याप्तक चरमाचरमेत्यष्टौ उद्देशका अपि वक्तव्याः तद्विन्ध्यमेकादशोद्देशक संयुक्तं षष्ठं शत निर्मातव्यमिति भावः ॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुल्लभादिपदभूषितबालत्रयचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालत्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चतुस्त्रिंशत्तमशतके षष्ठमेकेन्द्रियशतं समाप्तम् ॥३४६॥

कथन तक औधिक उद्देशक के जैसा ही जानना चाहिये । हमी आशय को लेकर 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्ल ड्ढियत्ति' सूत्रकार ने ऐसा यह सूत्रपाठ यहां कहा है । 'एवं एएणं अभिलावेणं कण्हलेस्स भवसिद्धिय एगिदि एहिं वि तहेव एकारस उद्देससंजुत्तं छट्ठं सयं' इस के अभिलाप प्रकार से कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में भी ग्यारह उद्देशकों से युक्त यह छठा शतक कहना चाहिये । अर्थात् जिस रीति से औधिक सामान्य भवसिद्धिक संबंधी पांचवां शतक कहा गया है उसी प्रकार से इस छठे शतक के औधिक अनन्तरोपपन्नक परम्परोपपन्नक इनतीन

आ अलिप्रायथी सूत्रकारे 'एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव तुल्लड्ढियत्ति' आ प्रभाषे सूत्रपाठ कडेल छे, 'एवं एएणं अभिलावेणं कण्हलेस्स भवसिद्धिय एगिदि एहिं वि एकारस उद्देससंजुत्तं छट्ठं सयं' आ प्रभाषे कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवोना संबन्धमां पणु ११ अगियार उद्देशाओ आ छट्ठा शतकमां कडेवा जेधओ, अर्थात् जे प्रभाषे परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक एकेन्द्रियोना उद्देशे कडेल छे,

उद्देशक के अतिरिक्त शेष अनन्तरावगाढ, परम्परावगाढ अनन्तरा-
हारक, परम्पराहारक, अन्तरपर्याप्तक, परम्परपर्याप्तक, चरम और अच-
रम ये आठ उद्देशक भी इसके सम्बन्ध में कहलेना चाहिये ।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौतीसवे शतक के
उद्घा एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥३४-६॥

अने प्रमाणे अनन्तरावगाढ, परंपरावगाढ, अनन्तराहारक, परंपराहारक,
अनन्तरपर्याप्तक, परंपरपर्याप्तक चरम अने अचरम आ अधाना सम्बन्धमां
पण उद्देशाणे उद्देवा लेधने ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत ‘भगवतीसूत्र’
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना चोत्रीसमां शतकतुं
॥३४६॥ एकेन्द्रियशतक समाप्त ॥३४-६॥



अथ सप्तममष्टमादि शतकानि

मूलम्—नीललेस्स भवसिद्धिय एगिदिएसु सयं सत्तमं समत्तं ।
एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिएहि वि अट्टमं सयं ।
जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाणि एवं अभवसिद्धिएहि वि
चत्तारि सयाणि भाणियव्वाणि । नवरं चरम अचरमवज्जा नव
उद्देसगा भाणियव्वा सेसं तं चेव । एवं एयाइं बारस एगिदिय-
सेढिसयाइं सेवं भन्ते ! सेवं भन्ते ! त्ति जाव विहरइ ॥सू०१॥

एगिदियसेढिसयाइं समत्ताइं ॥३४-१२॥

चउत्तीसइमे छट्ठं एगिदियसेढिसयं समत्तं ॥३४॥

छाया—नीललेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियेषु शतं सप्तमं समाप्तम् । एवं
कापोतलेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि अष्टमं शतम् । यथा भवसिद्धिकैश्चत्वारि
शतानि, एवमभवसिद्धिकैरपि चत्वारि शतानि भणितव्यानि । नवरं चरमा-
चरमवर्जा नवोद्देशका भणितव्याः शेषं तदेव । एवमेतानि द्वादश एकेन्द्रिय
श्रेणिशतानि । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥ सू० १॥

चतुस्त्रिंशत्तमशतके षष्ठमेकेन्द्रियश्रेणि शतम् समाप्तम् ॥३४॥

टीका—‘नीललेस्स भवसिद्धियएगिदिएसु सयं सत्तमं’ नीललेश्य भव-
सिद्धिकैकेन्द्रियेषु शतं सप्तमं समाप्तम्, यथा कृष्णलेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियै-
रेकं शतमधीतं तद्वत् सप्तमं शतं नीललेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियाणामपि वक्त-

चोत्तीसवे शतक का सानवां एकेन्द्रिय शतक

‘नीललेस्स भवसिद्धियएगिदिएसु’ इत्यादि

टीकार्थ—नीललेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में
सप्तम शतक समाप्त कर लेना चाहिए । अर्थात् जैसा—कृष्णलेश्यावाले
भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में कहा गया है । उसी प्रकार से यह

॥सातमा ऐकेन्द्रियशतकनो प्रारंभ—

‘नीललेस्स भवसिद्धियएगिदिएसु’ इत्यादि

टीकार्थ—नीललेश्यावाणा भवसिद्धिक ऐकैन्द्रियवाणाऽना स’अ’धमां
सातमु’ शतक समाप्ति पर्यन्त कडेवु’ जेध’अ. अर्थात् जे प्रमाणे कृष्णलेश्या-
वाणा भवसिद्धिक ऐकैन्द्रियवाणाऽना स’अ’धमां कडेवामां आवेल छे. अथ

व्यम्, नवरं पूर्वं यत्र कृष्णलेश्यपदं दत्तं तादृशस्थाने इह नीललेश्यपदं देयम्, अन्यत्सर्वं पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति । तथा तत्र यथा एकादशोद्देशकाः कथिताः तथा अत्रापि एकादशोद्देशकाः कथयितव्या, इति सप्तमं शतम् 'एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिएहि वि अट्टमं सयं' एवं कापोतलेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि अष्टमं शतं ज्ञातव्यम्, नवरं नीललेश्य-स्थाने कापोतलेश्यपदं देयम् अत्रापि पूर्ववदेव एकादशोद्देशका ज्ञातव्याः प्रकारस्तु सर्वत्र पूर्व-

सातवां शतक नीललेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में कह लेना चाहिये । परन्तु इस सप्तम शतक में पूर्व शतक की अपेक्षा यही विशेषता है कि इस शतक में जैसा कि पूर्व शतक में जहां कृष्ण लेश्यापद दिया गया है । उस जगह नीललेश्यापद रखना चाहिये । बाकी का और स्वयं कथन पहिले के जैसा ही जानना चाहिये । तथा जिस रीति से वहां ११ उद्देशक कहे गये उसी रीति से यहां पर भी ११ उद्देशक कहलेना चाहिये । ॥सू०१॥

सप्तम एकेन्द्रिय शतक समाप्त ॥३४-७॥

चौतीसवे शतक के आठवां एकेन्द्रिय शतक

'एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिए हि वि अट्टमं सयं' इत्यादि टीकार्थ-इसी रीति से कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में भी आठवां शतक कह लेना चाहिये । परन्तु नीललेश्य

प्रमाणे सातमुं शतक नीललेश्यावाणा लवसिद्धिक ऐकधन्द्रियवाणाओना संभंधमां कडेपुं नेधये परंतु आ सातमा शतकमां पडेला शतक करतां ये लिन्नपणुं छे के आ शतकमां पडेला ना शतकमां न्यां कृष्णलेश्या पद आपवामां आवेद छे. त्यां नीललेश्या पद भूडीने कडेपुं नेधये. भाडीतु णीलुं सधणुं कथन पडेला क्ख्हा प्रमाणे न समणुं. नेधये तथा ने प्रमाणे त्यां अगीयार उद्देशाओ कडेवामां आव्या छे. ओण प्रमाणे अडिया पणु अगियार उद्देशाओ कडेवा नेधये.

॥सातमुं शतक समाप्त ॥३४-७॥

आठमा ऐकेन्द्रिय शतकनो प्रारंभ—

'एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिएहि वि अट्टमं सयं' इत्यादि टीकार्थ—आ नीललेश्यावाणा लवसिद्धिक ऐकधन्द्रियवाणाओना संभंधमां कडेल रीत प्रमाणे कापोतलेश्यावाणा लवसिद्धिक ऐकेन्द्रियेना संभंधमां पणु आठमुं शतक कडेपुं नेधये. परंतु नीललेश्या ये पदना स्थाने कापोत-

वदेव ज्ञातव्य इत्यष्टमं शतं समान्तम् । 'जहा भवसिद्धिर्एहि चत्वारि सयाणि एवं
अभवसिद्धिर्एहि वि चत्वारि सयाणि भाणियन्वाणि' यथा भवसिद्धिकै श्रत्वारि
शतानि भणितानि एवम् अभवसिद्धिकैरपि चत्वारि शतानि भणितव्यानि । तत्रा-
भवसिद्धिकस्यौधिकं शतं प्रथमम् । द्वितीयं शतं कृष्णलेश्यभवसिद्धिकस्य
तृतीयं चतुर्थं च नीलकापोतेति लेश्याद्वयमधिकृत्य भवति, तदेवं चत्वारि
शतानि भवन्ति अभवसिद्धिकस्य । 'नवरं चरम अचरमवज्जा नव उद्देशगा

पद के स्थान में कापोतलेश्य पद रखना चाहिये । यहाँ पर भी पूर्व के
जैसे ११ उद्देशक है । इन में अलापक प्रकार सर्वत्र पूर्व के जैसा ही
जानना चाहिये ॥सू०१॥

आठवां शतक समाप्त ॥३४-८॥

नववां एकेन्द्रिय शतक

'जहा भवसिद्धिर्एहि चत्वारि सयाणि एवं अभ०' इत्यादि

टीकार्थ—जिस रीति से भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में चार
शतक कहे गये हैं, उसी रीति से अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध
भी शत-शतक-कह लेना चाहिये । इन में अभसिद्धिक एकेन्द्रिय के
सम्बन्ध में औधिक शतक प्रथम है । कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिक
के सम्बन्ध में द्वितीय शत है । तृतीय और चतुर्थ शत नीललेश्यावाले
एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में और कापोतलेश्यावाले एकेन्द्रियों के सम्बन्ध
में हैं । इस प्रकार से ये चार शत अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के

लेश्य पद भूक्षुं जेष्ठं अे अडियां आ कापोतलेश्याना संभंधमां पणु पडेलां
कहा प्रमाणेना ११ अगियार उद्देशां अे समज्जा. तेअेमां आलापनेा प्रकार
अेण पडेला कहा प्रमाणे अे समज्जा देवे ॥सू०१॥

॥आठमं शतक समाप्त ॥३४-८॥

'जहा भवसिद्धिर्एहि चत्वारि सयाणि एवं अभ०' इत्यादि

टीकार्थ—अे प्रमाणे अवसिद्धिक अेकेन्द्रियवाणा एवेना संभंधमां चार
शतक कडेवामां आवेल अे. अेण प्रमाणे अवसिद्धिक अेकेन्द्रियोना संभंधमां
पणु चार शतके कडेवा जेष्ठं अे आमां अवसिद्धिक अेकेन्द्रियोना संभंधमां
औधिक शतक पडेलुं अे. १ कृष्णलेश्यावाणा अवसिद्धिकना संभंधमां णीणुं
शतक कडेल अे. तथा त्रीणुं अने योथुं शतक नीललेश्यावाणा अेकेन्द्रिय
एवेना संभंधमां अने कापोतलेश्यावाणा अेकेन्द्रिय एवेना कडेल अे. ३-४
आ रीते आ चार शतके अवसिद्धिक अेकेन्द्रियोना संभंधमां कडेल अे.

भाणियव्वा' नवरं वैलक्षण्यमेतदेव यत् पूर्वपूर्वशतेषु औघिकोद्देशतोऽनन्तरोपप-
न्नादिका अचरमपर्यन्ता एकादशएकादशोद्देशका निर्मिताः, अभवसिद्धिकशत-
चतुष्टयेतु चरमवर्जा नवैवोद्देशकाः पठनीयाः अभवसिद्धिकानां चरमाचरमयोरभा-
वादिति । 'सेसं तं चेव' शेषमन्यत्सर्वं भवसिद्धिकप्रकरणवदेव सर्वं भवतीति । 'एवं
एयाइं वारसएगिदियसेदिसयाइं' एवं पूर्वप्रदर्शितक्रमेण एतानि द्वादश एकेन्द्रिय
श्रेणिशतानि भवन्ति, औघिककृष्णनीलकापोतलेश्येति चतुष्टयमाश्रित्यैकेन्द्रियशतानि

सम्बन्ध में । 'नवरं चरमअचरमवज्जा नव उद्देशगा भाणियव्वा' परन्तु यहाँ जो भिन्नता है वह ऐसी है कि भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के पूर्व पूर्व शतों में औघिक उद्देश से लेकर अनन्तरोपपन्नादिक अचरम पर्यन्त ११-११ उद्देशक हैं । परन्तु अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के चार शतों में चरम और अचरम इन शतों को छोड़कर नौ ही उद्देशक होते हैं । क्यों कि अभवसिद्धिकों के चरम अचरम ये दो उद्देशक नहीं हैं कारण कि इनका उन में अभाव है । 'सेसं तं चेव' वाकी का और सब कथन यहाँ भवसिद्धिक प्रकरण के ही जैसा है ।

'एवं एयाइं वारस एगिदियसेदिसयाइं' इस प्रकार पूर्वप्रदर्शित क्रम के अनुसार ये १२ एकेन्द्रिय श्रेणि शत होते हैं । औघिक शतको एवं कृष्ण, नील, और कापोतलेश्या इन सम्बन्धी तीन शतों को आश्रित कर के एकेन्द्रिय सम्बन्धी चार शतक हैं और भवसिद्धिक

'नवरं चरम अचरमवज्जा नव उद्देशगा भाणियव्वा' परन्तु अद्वियां ७ किन्न पण्युं छे, ते अणु छे के-अवसिद्धिक अक धन्द्रियवाणाओना पडेलाना शत-
कामां औघिक उद्देशाथी लधने अनंतरोपपन्नादिक अचरम सुधीना ११-११
अगियार अगियार उद्देशाओ कह्या छे परन्तु आ अवसिद्धिक अकधन्द्रिय
ओवोना चार शतकेमा चरम अरे अचरम आ शतकेने छोडीने नवउद्देशा-
ओव छेय छे. केम के-अवसिद्धिकेमा चरम अने अचरम आ ओ उद्देशाओ
डोता नथी. कारणु के तेओमा आ चरम अचरम पणुओ अलाव रहे छे.

'सेसं तं चेव' आ शिवाय णाडीतुं सधणुं कथन आ अवसिद्धिकेना संभंधमां अवसिद्धिक प्रकरणमा कह्या प्रमाणे न समणुं लेधये. 'एवं एयाइं वारसएगिदियसेदिसयाइं' आ शीते पडेलां गतावेल कुम प्रमाणे आ १२ आर अकैन्द्रिय श्रेणी शनके थाय छे, औघिक शतकने तथा कृष्ण, नील, अने कापोतलेश्यावाणा संभंधमां. त्रणु शतकेने आश्रय करीने अकै

ચત્વારિ, एवं भवसिद्धिकैकेन्द्रियशतानि चत्वारि, तथा अभवसिद्धिकैकेन्द्रियैः सह चत्वारि शतानि, सर्वसङ्कलनया चतुस्त्रिंशत्तमशतके द्वादशशतानि भवन्ति, आद्याष्टशतेषु एकादशैकादशोद्देशकाः, अन्तिमाऽभवसिद्धिकशतचतुष्टये तु नवनवोद्देशकाः, तदेवं सर्वसङ्कलनया चतुर्विंशत्यधिकशतमुद्देशकाः (१२४) एतस्मिन् शतके भवन्तीति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति हे भदन्त ! एकेन्द्रियविषये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत् सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विरहतीति ॥ 'एगिंदिय सेहि सयाइं समत्ताइं' एकेन्द्रियश्रेणिशतानि समाप्तानि ॥सू० १॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमैकेन्द्रियश्रेणिशतकं समाप्तम् ॥३४॥

एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में चार शतक हैं । तथा अभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में चार शतक हैं । कुल मिलाकर ये सब १२ शतक इस चौतीसवें शतक में हैं । अन्तिम जो चार अभवसिद्धिक शतक हैं उनमें ९-९ उद्देशक हैं । इस प्रकार इन १२ शतकों के १२४ उद्देशक होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भदन्त ! एकेन्द्रिय जीवों के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप

न्द्रिय ૭૧ સંબંધી ચાર શતકો થાય છે. તથા અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયો સંબંધમાં ચાર શતકો થાય છે તેમ જ અભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિયોના સંબંધમાં ચાર શતકો થાય છે. તે રીતે કુલ બધા મળીને આ ૧૨ બાર શતકો આ ચોત્રીસમા શતકમાં કહ્યા છે. છેલ્લા ચાર જે અભવસિદ્ધિક શતક છે તેમાં ૯-૯ નવ નવ ઉદ્દેશાઓ કહ્યા છે. આ રીતે આ બાર શતકોના કુલ ૧૨૪ એકસોચોવીસ ઉદ્દેશાઓ થાય છે.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' હે ભગવન્ એકેન્દ્રિય ૭૧૦ના સંબંધમાં આપ દેવાનુપ્રિયે જે કથન કર્યું છે, તે સઘળું કથન સર્વથા સત્ય છે. હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયત્વું સઘળું કથન સર્વથા સત્ય જ છે. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને વંદના કરી નમસ્કાર કર્યાં. વંદના નમસ્કાર કરીને તે પછી તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત

से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । इस प्रकार से एकेन्द्रिय श्रेणि शतक समाप्त हुए । इनकी समाप्ति में ३४ वाँ एकेन्द्रिय श्रेणि शतक समाप्त हुआ ॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहारजकृत “भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चौतीसवें शतक में ॥ सातवें से बारहवें पर्यन्तके श्रेणिशतक समाप्त ॥

॥ चौतीसवां शतक समाप्त ॥

कहता था कि पोताना स्थानपर विराजमान था। आ रीते ऐकेन्द्रिय श्रेणी शतक समाप्त था तेनी साथे आ योत्रीसमुं ऐकेन्द्रिय श्रेणि शतक समाप्त थयुं छे.

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत ‘भगवतीसूत्र’नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना योत्रीसमा शतकना सातमाथी आरमा सुधीना ऐकेन्द्रिय शतके समाप्त ॥

॥ योत्रीसमुं शतक समाप्त ॥



॥ 'अह पणतीसइमं सयं' ॥ (पढमो उद्देशो)

चतुस्त्रिंशत्तमे शतके एकेन्द्रियजीवाः श्रेणीक्रमेण प्रायो निरूपिताः, अथ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके तु ते एव एकेन्द्रियाः राशिक्रमेण निरूप्यन्ते तदनेन सम्बन्धेन आयातस्य द्वादशावान्तरशतयुत्तरस्य पञ्चत्रिंशत्तमशतकस्येदसादिमं सूत्रम्—'कइणं' ३०

मूलम्—कइ णं भंते ! महाजुम्मा पन्नत्ता ? गोयमा ! सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता, तं जहा—कडजुम्मकडजुम्मे १, कडजुम्मतेओगे २, कडजुम्मदावरजुम्मे ३, कडजुम्मकलिओगे ४, तेओए कडजुम्मे ५, तेओगतेओए ६, तेओगदावरजुम्मे ७, तेओगकलिओगे ८, दावरजुम्मकडजुम्मे ९, दावरजुम्मतेओगे १०, दावरजुम्मदावरजुम्मे ११, दावरजुम्मकलिओगे १२, कलिओग कडजुम्मे १३, कलिओग तेओगे १४, कलिओग दावरजुम्मे १५, कलिओगकलिओगे १६, से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता तं जहा—कडजुम्मकडजुम्मे १ जाव कलियागकलिओगे १६, गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया ते वि कडजुम्मा से त्तं कडजुम्म कडजुम्मे १ । जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए । जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा से त्तं कडजुम्म तेओगे २ । जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स समया कडजुम्मा से त्तं कडजुम्मदावरजुम्मे ३ । जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा से त्तं कडजुम्म कलियोगे ४, (१) । जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं

अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहार-
समया तेओगा से त्तं तेओगकडजुम्मे ५। जे णं रासी चउक्क-
एणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासि-
स्स अवहारसमया तेओगा से त्तं तेओगतेओगे ६। जे णं रासी
चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दो पज्जवसिए जे णं तस्स
रासिस्स अवहारसमया तेओगा से त्तं तेओगदावरजुम्मे ७।
जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए
जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा से त्तं तेओग
कलिओगे ८। (२) जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीर-
माणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया
दावरजुम्मा से त्तं दावरजुम्म कडजुम्मे ९। जे णं रासी चउक्क-
एणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए जे णं तस्स रासि-
स्स अवहारसमया दावरजुम्मा से त्तं दावरजुम्मतेओगे १०।
जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुप्पज्जवसिए
जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा से त्तं दावर-
जुम्म दावरजुम्मे ११। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अव-
हीरमाणे एगपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया
दावरजुम्मा से त्तं दावरजुम्मकलिओगे १२। (३) जे णं रासी
चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स
रासिस्स अवहारसमया कलिओगा से त्तं कलियोगकड-
जुम्मे १३। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिप-
ज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा से
त्तं कलियोगतेओगे १४। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अव-

हीरमाणे दुपञ्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया
कलिओगा से त्तं कलिओगदावरजुम्मे १५। जे णं रासी चउ-
क्खणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपञ्जवसिए जे णं तस्स
रासिस्स अवहारसमया कलिओगा से त्तं कलिओगकलिओगे
१६ (४) से तेणट्ठेणं जाव कलिओगकलिओगे ॥सू० १॥

छाया--कति खलु भदन्त ! महायुग्माः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! षोडश
महायुग्मानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा--कृतयुग्मकृतयुग्म १, कृतयुग्मत्रयोजः २, कृतयुग्म-
द्वापरयुग्मः ३, कृतयुग्मकलयोजः ४, त्रयोजकृतयुग्मः ५, त्रयोजत्रयोजः ६,
त्रयोजद्वापरयुग्मः ७, त्रयोजकलयोजः ८, द्वापरयुग्मः कृतयुग्मः ९, द्वापरयुग्मत्रयोजः
१०, द्वापरद्वापरयुग्मः ११, द्वापरयुग्मकलयोजः १२, कलयोजकृतयुग्मः १३
कलयोजत्रयोजः १४, कलयोजद्वापरयुग्मः १५, कलयोजकलयोजः १६ तत्केनार्थेन
भदन्त ! एवमुच्यते षोडश महायुग्माः प्रज्ञप्ताः तद्यथा कृतयुग्मकृतयुग्मः याव-
त्कलयोजकलयोजः । गौतम ! यः खलु राशिः चतुष्केणापहारेण अपह्रियमाणश्चतुः
पर्यवसितः, ये खलु तस्य राशेरपहारसमया सोऽपि कृतयुग्माः सोऽयं कृतयुग्म-
कृतयुग्मः १, यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेणापह्रियमाणस्त्रिपर्यवसितः, यः खलु
तस्य राशेरपहारसमयाः कृतयुग्मा सोऽयं कृतयुग्मत्रयोजः । यः खलु राशिः चतु-
ष्केणापहारेण अपह्रियमाणो द्विपर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः कृत-
युग्माः सोऽयं कृतयुग्मद्वापरयुग्मः । ३ यः खलु राशिः चतुष्केणापहारेण अपह्रिय
माण एक पर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः कृतयुग्माः सोऽयं कृतयुग्म-
कलयोजः ४ । (१) यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेणापह्रियमाणश्चतुःपर्यवसितः ये
खलु तस्य राशेरपहारसमयाः त्रयोजाः सोऽयं त्रयोजकृतयुग्मः ५ । यः खलु राशिः
चतुष्केणापहारेणापह्रियमाणस्त्रिपर्यवसितः, ये खलु तस्य राशेरपहारसमया
सत्रयोजाः, सोऽयं त्रयोजत्रयोजः ६ । यः खलु राशिः चतुष्केणापहारेणा
पह्रियमाणो द्विपर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमया सत्रयोजाः
सोऽयं त्रयोजद्वापरयुग्मः ७ । यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेणापह्रियमाण
एकपर्यवसितः, ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः त्रयोजाः सोऽयं त्रयोज
कलयोजः ८ । (२) यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेणापह्रियमाणः चतुः
पर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्माः सोऽयं द्वापर
कृतयुग्मः ९ । यः खलु राशिश्चतुष्केणापहारेण अपह्रियमाण स्त्रिपर्यवसितः

ये खलु तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्माः सोऽयं द्वापरयुग्मञ्चोऽयः १०
यः खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेणापह्रियमाणो द्विपर्यवसितः ये खलु
तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्माः सोऽयं द्वापरयुग्मद्वापरयुग्मः ११।
यः खलु राशि श्रुतुष्केण अपहारेणापह्रियमाण एकपर्यवसितः ये खलु तस्य
राशेरपहारसमया द्वापरयुग्माः सोऽयं द्वापरयुग्मकलयोजः १२। (३)
यः खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेण अपह्रियमाण श्रुतुःपर्यवसितः ये खलु
तस्य राशेरपहारसमयाः कलयोजा सोऽयं कलयोजकृतयुग्मः १३। यः
खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेणापह्रियमाण द्विपर्यवसितः ये खलु तस्य
राशेरपहारसमयाः कलयोजाः सोऽयं कलयोजञ्चोऽयः १४ यः खलु राशि
श्रुतुष्केणापहारेण अपह्रियमाणो द्विपर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः
कलयोजाः सोऽयं कलयोजद्वापरयुग्मः १५ यः खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेणा-
पह्रियमाण एकपर्यवसितः ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः कलयोजाः सोऽयं
कलयोजकलयोज इति १६ (१) तत्तेनार्थेन यावत् कलयोज कलयोजः ॥सू० १॥

टीका—‘कइ णं भंते ! महाजुम्मा पन्नत्ता’ कति खलु भदन्त ! इह
युग्मशब्देन राशिविशेषा कथयन्तं ते च क्षुल्लका अपि भवन्ति यथा प्राक्-

पैंतीसवे शतक का प्रथम उद्देशक

चौतीसवे शतक में एकेन्द्रिय जीवों का श्रेणि क्रम से प्रायः
निरूपण हो चुका है परन्तु अब इस ३५ वे शतक में उन्हीं एकेन्द्रिय
जीवों का राशिक्रम से निरूपण होना है। इसी सम्बन्ध से इसे
प्रारम्भ किया जा रहा है—

‘कइ णं भंते ! महाजुम्मा पन्नत्ता’ इत्यादि सूत्र ॥१॥

टीकार्थ—हे भदन्त ! महायुग्म—महाराशियां—कितने कहे गये हैं ?
युग्म शब्द से यहाँ राशिविशेष कहा गया है ये युग्म क्षुल्लक भी होते

पाँतीसवा शतकने प्रारंभ—

उद्देशो पडेदो.

चौतीसवा शतकमां ओक छन्दियवाणा लवोने श्रेष्ठिना कभथी प्रायः
निश्पण्ण करवाभां आवी गथुं छे परंतु हवे आ उप पाँतीसवा शतकमां
ओ ओक छन्दियवाणा लवोनुं राशिना कभथी निश्पण्ण करवाभां आवशे. ओ
संभधी आ पाँतीसमुं शतक प्रारंभ करवाभां आवे छे.—

‘कइणं भंते ! महाजुम्मा पणत्ता’ इत्यादि

टीकार्थ—हे लगवन् महायुग्म—महाराशियो केटला कडेवाभां आव्या छे ?
अहियां युग्म शण्ठी राशि विशेष कडेल छे. आ युग्म क्षुल्लक पण्ण डोय

प्ररूपिता अतस्तद्व्यवच्छेदार्थं महदिति विशेषणं दत्तम् । तथा च—महान्ति-
च तानि युग्मानीति महायुग्मानि—राशि विशेषाः ? इति प्रश्नः, भगवानाह—
'गोयमा' इत्यादि, गोयमा' हे गौतम ! 'सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता' षोडश
महायुग्मानि राशिविशेषाः प्रज्ञप्तानि—कथितानि 'तं जहा' तद्यथा 'कडजुम्म
कडजुम्मे' कृतयुग्मकृतयुग्मः यो राशिः सामयिकेन चतुष्कापहारेणापह्रिय-
माणश्चतुःपर्यवसितो भवेत् तथा अपहारसमया अपि चतुष्कापहारं चतुः-
पर्यवसिता एव भवेयुः असौ राशिः कृतयुग्म इत्यभिधीयते अपह्रियमाणद्रव्या

हैं । जैसा कि पहिले प्ररूपित किया जा चुका है । अतः उनका व्यवच्छेद
करने के लिये यहाँ युग्म शब्द के साथ 'महत्' यह विशेषण रखा गया
है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता'
हे गौतम ! महायुग्म १६ कहे गये हैं । 'तं जहा' जो इस प्रकार
से हैं 'कडजुम्म कडजुम्मे' कृतयुग्म कृतयुग्म १, कृतयुग्मऽयोज, २,
कृतयुग्म द्वापरयुग्म ३, कृतयुग्म कलयोज ४, ऽयोजकृतयुग्म ५, ऽयोज
ऽयोज ६, ऽयोज द्वापरयुग्म ७, ऽयोज कलयोज ८, द्वापरयुग्म कृतयुग्म
९, द्वापरयुग्म ऽयोज १०, द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म ११, द्वापरयुग्म
कलयोज १२, कलयोज कृतयुग्म १३, कलयोज ऽयोज १४, कलयोज
द्वापरयुग्म १५, और कलयोज कलयोज १६, इन में जिस राशि को
प्रति समय चार चार से अपहृत करते हुए अन्त में उस में से चार बचे
रहते हैं और अपहार (नीकालना) समयों में से भी चार चार के

छे. जेस के पहिला प्रतिपादन करवाभां आवी गयेल छे. तेथी तेना व्यवच्छेद
करवा भाटे अहियां युग्म शब्दनी साथे "महत्" शब्दतुं विशेषणु राशवामां
आवेल छे. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—'गोयमा !
सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता' हे गौतम ! महायुग्म शब्द १६ सोण प्रकारना
कहेवामां आवेल छे. 'तं जहा' ते आ प्रमाणे छे.—कडजुम्मकडजुम्मे'
कृतयुग्म कृतयुग्म १ कृतयुग्म ऽयोज २, कृतयुग्म द्वापरयुग्म ३, कृतयुग्म कलयोज
४, ऽयोज कृतयुग्म ५, ऽयोज ऽयोज ६, ऽयोजद्वापरयुग्म ७, ऽयोजकलयोज
८, द्वापरयुग्मकृतयुग्म ९, द्वापरयुग्म ऽयोज १०, द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म ११,
१२, कलयोज कृतयुग्म १३, कलयोज ऽयोज १४, कलयोज द्वापरयुग्म १५,
अने कलयोज कलयोज १६, आमां जे राशिने प्रतिसमय चार चारने
अपहार (अहार कडाउतुं ते) करतां करतां छेवटे तेमांथी चार अथे छे,
अने अपहार समयमांथी पणु चार चारना अपहारथी ते नीकणी जतां छेवटे चार

पेक्षया तत्समयापेक्षया च द्विधा कृतयुगमत्वात्। एवदन्यत्रापि शब्दार्थो योजनीयः स च द्विल जघन्यतः षोडश संख्यात्मकः एषां हि चतुष्कापहारात् श्वतुरग्रत्वात् समयानां च चतुःसंख्यत्वादिति १ 'कडजुगमतेओगे २' कृतयुगम ज्योजः यो राशिः प्रतिसमयं चतुष्कापहारेणापह्रियमाण स्त्रिर्यवसानो भवति तत्समयाश्च चतुःपर्यवसिता एव, असौ अपह्रियमाणापेक्षया ज्योजः अपहारापेक्षया कृतयुगम एवेति कृतयुगम ज्योज इति कथ्यते तत् संख्याका जघन्यतएकोनविंशतिः तत्र चतुष्कापहारे त्रयोऽत्रशिष्यन्ते तत्समयाश्च

अपहार से उसके अपहृत होने पर अन्त में चार वचने रहते हैं ऐसी जो राशि है वह कृतयुगम कृतयुगम राशि है। कारण कि अपह्रियमाण द्रव्य की अपेक्षा से और समय की अपेक्षासे दोनों रीति से उस राशि में कृतयुगमता आती है। इसी प्रकार अन्यत्र भी शब्द का अर्थ योजित कर लेना चाहिये। जैसे १६ संख्यात्मक कृतयुगम कृतयुगम राशि जघन्य रूप है। क्योंकि इस राशि को चार से अपहृत करने पर में अन्त में चार ही बचते हैं और अपहार समय चार ही है। जो राशि प्रतिसमय चार से अपहृत होकर अन्त में ३ बाकी बचाती है और उसके समय चार में ही पर्यवसित (समाप्त) होते हैं ऐसी वह राशि अपह्रियमाण की अपेक्षा ज्योजरूप और अपहार की अपेक्षा कृतयुगम होती है। जघन्य से इस कृतयुगम ज्योज की संख्या १९ है। इस संख्या को चारसे अपहृत करने पर अन्त में तीन बचते हैं और इस के समय चार ही है। इस प्रकार से राशि अद् के सूत्र इस के

वधे छे, जेवी जे राशी (समूह) ते कृतयुगम कृतयुगम राशी कडेवाय छे. कारण के अहार काठनार द्रव्यनी अपेक्षाधी अने समयनी अपेक्षाधी जेम अन्ने प्रकारधी ते राशिमां कृतयुगम पणु आवी जाय छे. आज प्रमाणे जीजे पणु शब्दोना अर्थनी योजना करीने समथ लेपुं. जेम के-१६ सोण संख्यावाणी कृतयुगम कृतयुगमराशी जघन्य रूप छे. केम के आ राशीने आरनी संख्याधी अपहार करतां छेवटे आर ज अये छे अने अपहार समय पणु आर ज छे. जे राशीमांथी प्रतिसमये आरने अपहार करता छेवटे त्रणु भाडी रडे छे, अने तेना समय आरमांज समाप्त थाय छे, जेवी ते राशी अपहारीमाणु (अहार कडाडवा)नी अपेक्षाधी ज्येज रूप अने अपहारनी अपेक्षाधी कृतयुगम रूप होय छे. जघन्यधी आ कृतयुगम ज्येजनी संख्या १६ जोगणीसनी थाय छे. आ संख्याने आरधी अपहार करतां छेवटे त्रणु अये

ચત્વાર ઈવેતિ ૨ । एवं राशिभेदसूत्राणि एतद्विवरणसूत्रेभ्यो ज्ञातव्यानि
इह च सर्वत्रापि अपहारकसमयापेक्षयाऽऽद्यं पदम् अपह्रियमाणद्रव्या
पेक्षया तु द्वितीयमिति । 'कइणं भंते । महाजुम्मा पन्नत्ता ? 'गोयमा' । सोलस
महाजुम्मा पणत्ता' इत्यादि, संख्यासूत्रे विशेषणविशेष्यभावे विशेषणस्य
प्राक् प्रयोगः विशेष्यस्य च परप्रयोग इति नियमेन द्रव्यबोधक सूत्रसिद्धपदस्य
परप्रयोगः समयबोधक सूत्रसिद्धपदस्य च प्राक्प्रयोगः कृतः, ततः 'से केण-
ट्टेण' इत्यादि प्रश्नस्य 'जे णं रासी' इत्याद्युत्तर सूत्रव्याख्यानेतु द्रव्यबोधकपदस्य
प्रथमतो विवरणम्, समयबोधकस्य च पश्चाद्विवरणं कृतमिति । 'कडजुम्मदारजुम्मे'

વિવરણ સૂત્રોં કે દ્વારા જ્ઞાતવ્ય છે । યહાં સર્વત્ર અપહારક સમય કી
અપેક્ષા સ્ત્રી આચ પદ છે ઓર અપહ્રિયમાણ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે દ્વિતીય
પદ છે 'કહ ણં ભંતે । મહાજુમ્મા પન્નત્તા' 'ગોયમા । સોલસ મહાજુમ્મા
પન્નત્તા' હત્યાદિ સંખ્યા સૂત્ર મેં જો કિ વિશેષણ વિશેષ્ય ભાવ સે
યુક્ત છે 'વિશેષણ કા પહિલે પ્રયોગ હોતા છે' ઓર વિશેષ્ય કા બાદ
મેં પ્રયોગ હોતા છે । હસ નિયમ કે અનુસાર દ્રવ્ય બોધક સૂત્ર સે સિદ્ધ
પદ કા પરપ્રયોગ ઓર સમય બોધક સૂત્ર સે સિદ્ધ પદ કા પહિલે
પ્રયોગ ક્રિયા ગયા છે । હસલિયે 'કેણટ્ટેણં' હત્યાદિ પ્રશ્ન કે 'જે ણં
રાસિ' હત્યાદિ ઉત્તર રૂપ સૂત્ર કે વ્યાખ્યાન મેં દ્રવ્યબોધક પદકા
પહિલે વિવરણ ક્રિયા ગયા છે ઓર સમયબોધક પદ કા પીછે વિવરણ
ક્રિયા ગયા છે । અબ ગૌતમસ્વામી હન સોલસ રાશિયોં કે અર્થ કો
પૂછતે હેં—'સે કેણટ્ટેણં ભંતે । एवं बुच्चइ, सोलस महाजुम्मा' हे भदन्त !

છે અને તેનો સમય આર જ છે. આ રીતે રાશી ભેદના સૂત્રો તેના વિવરણ
સૂત્રોદ્વારા જાણાય છે. અહિયાં બધે ઠેકાણે આહારક સમયની અપેક્ષાથી પહેલું
પદ છે. અને અપહારકમાણ દ્રવ્યની અપેક્ષાથી બીજું પદ કહેલ છે. 'કइणं
भंते । महाजुम्मा पन्नत्ता' गोयमा ! सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता' इत्यादि संख्या
सूत्रमां जे विशेष्य विशेष लावथी युक्त છે, विशेषણનો પહેલાં પ્રયોગ થાય
છે. અને વિશેષ્યને પછીથી પ્રયોગ થાય છે, આ નિયમ પ્રમાણે દ્રવ્યનો બોધ
કરાવનાર બોધક સૂત્રથી સિદ્ધપદનો પહેલાં પ્રયોગ કરવામાં આવેલ છે. તેથી
'કેણટ્ટેણં' વિગેરે પ્રશ્નોના 'જેણં રાસિ' વિગેરે ઉત્તર રૂપ સૂત્રોના વ્યાખ્યાનમાં
દ્રવ્ય બોધક પદનું વિવરણ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે. અને સમય બોધના
પદનું પછીથી વિવરણ કરેલ છે.

હવે ગૌતમસ્વામી આ સોળ રાશિયોનો અર્થ પ્રભુશ્રીને પૂછે છે.
'સે કેણટ્ટેણં ભંતે । एवं बुच्चइ सोलस महाजुम्मा' हे भगवन् आप शा कारवथी

कृतयुगमद्वापरयुगमः ३ 'कडजुम्मकलियोगे' कृतयुगम कलयोजः ४ । 'तेओम कड-
जुम्मे' ऽयोजकृतयुगमः ५ । 'तेओमतेओगे' ऽयोज-ऽयोजः ६ 'तेओम दावरजुम्मे'
ऽयोज द्वापरयुगमः ७ । 'तेओमकलियोगे' ऽयोजकलयोजः ८ 'दावरजुम्मकडजुम्मे'
द्वापरयुगम कृतयुगमः ९ 'दावरजुम्मतेओगे' द्वापरयुगमऽयोजः १० । 'दावरजुम्म-
दावरजुम्मे' द्वापरयुगम द्वापरयुगमः ११ 'दावरजुम्मकलियोगे' द्वापरयुगम
कलयोजः १२ 'कलियोग कडजुम्मे १३, कलयोज कृतयुगमः १३ 'कलियोग
तेओगे' कलयोजऽयोजः १४ 'कलियोग दावरजुम्मे' कलयोज द्वापरयुगमः
१५ । 'कलियोगकलियोगे' कलयोज कलयोजः १६ । एते षोडश महायुगम
राशयो भवन्तीति । षोडशराशीनामर्थं गौतमः पृच्छति—'से केणड्डेणं भंते !
एवं वुच्चइ सोलस महाजुम्मा पन्नत्ता' तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते
षोडशमहायुग्माः प्रज्ञप्ता-कथिताः 'तं जहा' तद्यथा—'कडजुम्मकडजुम्मे जात्र
कलियोग कलियोगे' कृतयुगमकृतयुगमो यावत्कलयोजकलयोज इति अत्र
यावत्पदेन 'कडजुम्मतेओगे' इत्यारभ्य 'कलियोग दावरजुम्मे' इत्यन्तानां
ग्रहणं भवतीत्यवान्तरप्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' 'हे गौतम !
'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए' यः खलु राशिः चतु-
ष्केणापहारेणापहियमाणश्चतुःपर्यवसितो भवति चतुःसंख्यया विभज्यमाने
चतुः शेषो भवतीत्यर्थः तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया ते वि कड

आप किस कारण से कहते हैं कि महायुगम सोलह होते हैं । जैसे कि
वे कृतयुगम कृतयुगम से लेकर आपने 'कलियोगकलियोग' पद तक कहे
हैं । यहां यावत् शब्द से 'कडजुम्म तेओगे' से लेकर 'कलियोगदावर
जुम्मे' तक के १४ महायुगम गृहीत हुए हैं इस प्रकार का यह अवान्तर
प्रश्न है । इस के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! जे णं रासी
चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए' हे गौतम ! जो
राशि चार की संख्या से विभक्त होकर अन्त में चार बचाती है तथा

कडे छे के महायुग्मे सोण छे ? नेम के-कृतयुगम कृतयुगमधी लधने कलियोग
पद सुधी आये कइया छे अडियां यावत्पदधी 'कडजुम्म तेओगे' आ पदधी
लधने 'कलियोगदावरजुम्मे' आ पद सुधी १४ यौद महायुग्मे अडिअ
कराया छे. आ रीने आ अवान्तर प्रश्न करेव छे आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री
गौतमस्वामीने कडे छे के—'गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीर-
माणे चउपज्जवसिए' हे गौतम ! ने राशीने आरनी स'आमांथी विसाग करवाधी
छेवटे आर अये छे, तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया ते वि कडजुम्मा'

જુમ્મા' એ સ્વલુ તસ્ય રાશૈરપહારસમયા સ્તૈઽપિ કૃતયુગમસ્વરૂપાઃ ચતુઃ પર્યવસિતા એવ મવન્તિ । 'સૈત્ત કલ્ડજુમ્મ કલ્ડજુમ્મે' સોઽયં કૃતયુગમકૃતયુગમઃ, તત્તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે કૃતયુગમકૃતયુગમઃ, ઇત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ, સ ચ જઘન્યતઃ ષોડશાત્મકઃ (૧૬) અપહ્રિયમાણ દ્રવ્યાપેક્ષયા સમયાપેક્ષયા ચ કૃતયુગસ્વાદિતિ ૧ । 'જે ણં રાસી ચઝક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિ પજ્જવસિણ' યઃ સ્વલુ રાશિ શ્ચતુષ્કેણાપહારેણાપહ્રિયમાણ સ્તિપર્યવસિતો મવન્તિ તથા—'જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલ્ડજુમ્મા સૈત્તં કલ્ડજુમ્મ તેઓણ' એ સ્વલુ તસ્ય રાશૈરપહારસમયાઃ કૃતયુગમા શ્ચતુઃ પર્યવસાના મવન્તિ 'સૈ ત્તં કલ્ડજુમ્મ તેઓણ' તસ્માત્કારણાત્ સોઽયં રાશિવિશેષઃ કૃતયુગમ યોજ ઇતિ કથયતે સ ચ જઘન્યત એકોનવિંશત્યાત્મકઃ (૧૯) ૨ । 'જે ણં રાસી ચઝક્રુણં અવહારેણં

'જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહાર સમયા તે વિ કલ્ડજુમ્મા 'જો હસ રાશિ કે અપહારક સમય હોતે હૈં' વે મી ચાર રૂપ હી હોતે હૈં' એસી વહ રાશિ કૃતયુગમ કૃતયુગમ રૂપ કહી ગઈ હૈ 'હસી લિયે મૈને ઇસે કૃતયુગમ કૃતયુગમ રૂપ કહા હૈ । જૈસે ૧૬ સંરૂપા કી રાશિ જવ ચાર સે વિમક્ત હોતી હૈ તો અન્ત મૈં હસકે ૪ ષવતે હૈં' ઓર યહાં અપહારક સમય મી ચાર હૈ, હસલિયે અપહ્રિયમાણ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે ઓર અપહારક સમય કી અપેક્ષા સે હમ મૈં કૃતયુગમ કૃતયુગમ રૂપતા આતી હૈ એસા જાનના ચાહિયે । જે ણં રાસી ચઝક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિપજ્જવસિણ' જો રાશિ ચાર કે દ્વારા વિમક્ત હોતી હુઈ જિસ કે અન્ત મૈં ત્રીન વચેં એસી હોતી હૈ તથા—'જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલ્ડજુમ્મા સૈ ત્તં કલ્ડજુમ્મતેઓણ' ઇસ રાશિ કે અપહાર સમય કૃતયુગમ

જે તે રાશીને અપહાર કરવાળો સમય હોય છે, તે પણ ચારનો જ હોય છે. એવી તે રાશી કૃતયુગમ કૃતયુગમ કહેવાય છે. તેથી મેં તેને કૃતયુગમ કૃતયુગમ રૂપ કહેલ છે. જે રીતે ૧૬ સોળ સંખ્યાની રાશીને બ્યારે ચારથી વિભાજ કરવામાં આવે છે, તે છેવટે તેમાંથી ૪ ચાર બચે છે. અને અહિયાં અપહાર કરનાર સમય પણ ચાર જ છે. તેથી અપહાર કરતાં દ્રવ્યની અપેક્ષાથી અને અપહારક સમયની અપેક્ષાથી આમાં કૃતયુગમ કૃતયુગમપણુ' આવે છે. તેમ સમજવું. જે ણં રાસી ચઝક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિપજ્જવસિણ' જે રાશી ચારથી વિભક્ત કરાતિ થકી જેના અંતમાં ત્રણ બચે એવી હોય છે. તથા 'જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલ્ડજુમ્મા સૈત્તં કલ્ડજુમ્મતેઓણ' તે રાશીને અપહાર સમય કૃતયુગમ—ચાર રૂપ હોય છે. એવી તે રાશિ કૃતયુગમ, ચ્યોજ

अवहीरमाणे दुपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रतुष्केणापहारेणापहियमाणो द्विपर्यवसितो भवति तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्म दावरजुम्मे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः कृतयुग्मरूपा भवन्ति तस्मात् स राशि विशेषः कृतयुग्मद्वापरयुग्म इत्यभिधीयते, स च जघन्यजोऽष्टादशात्मक इति (१८) 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रतुष्केणापहारेणापहियमाण एकपर्यवसित एव भवति तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्मकलिओगे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमया एकपर्यवसिता एव भवन्ति तस्मात् स राशिः कृतयुग्मकल्योज इत्यभिधीयते स च जघन्यत सप्तदशात्मकः (१७) इति ४ ।

चार रूप होते है' ऐसी वह राशि कृतयुग्म व्योज कही गई है । वह राशि जघन्य से १९ संख्या रूप होती है 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए' जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्म दावरजुम्मे' तथा—जो राशि चतुष्क से अपहन-विभक्त होकर अन्त में दो बचाती है और जिस के अपहार समय चार रूप से होते हैं ऐसी वह राशि कृतयुग्म द्वापरयुग्म रूप है । जघन्य से इस राशिका प्रमाण १८ है । अपहार समयों की अपेक्षा इस में कृतयुग्मता है और द्रव्य की अपेक्षा अन्त में दो बचने के कारण द्वापरयुग्म है । 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' जो राशि चार से विभक्त होकर अन्त में एक बचाती राशि कृतयुग्म कल्योज रूप है । तथा इसके अपहारक समय है । 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्म कलिओगे' एवं जिस राशिका अपहार समय एक होता है, वह राशि कृतयुग्म कल्योज रूप है । तथा इसके अपहार समय चार होते हैं । इसलिये इस में कृतयुग्मता है ऐसी वह राशि जघन्य से १७ संख्या रूप होती है । 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीर-

कडेवाय छे. ते राशि जघन्यथी १८ ओगणुसनी सज्या ३५ छे 'जे ण रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा सेत्तं कडजुम्म दावरजुम्मे' तथा जे रासी चारनी सज्याथी अपहार करता वडेखाधने छेवटे जे वधे छे अने जेने अपहार समय चार ३५ डोय छे. ओवी ते राशि कृतयुग्मद्वापरयुग्म ३५ डोय छे जघन्यथी आ राशित् प्रमाणु १ अराउतु' छे, अपहार समयोनी अपेक्षथी आमा कृतयुग्म पणु डडेव छे. अने छेवटे जे अथवाने करेजे द्वापरयुग्मपणु छे. 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' जे रासी चारथी वडेखाथी छेवटे ओक वधे छे, 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया सेत्तं कडजुम्म कलिओगे' अने जे राशीने अपहार समय ओक डोय ते राशि कृतयुग्म इत्येव ३५ छे. अने तेने

‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં અવહારેણં અવહીરમાણે ચઝપઞ્જવસિણ’ યઃ સ્વલ્લ રાશિ-
શ્ચતુષ્કેણાપહારેણાપહિયમાણશ્ચતુઃપર્યવસિતો ભવેત્ તથા-‘જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ
અવહારસમયા તેઓગા સેત્તં તેઓગકઢજુમ્મે ૫ । યે સ્વલ્લ તસ્ય રાશેરપહાર
સમયાઃ ંયોજા ભવન્તિ તસ્માત્કારણાત્ સ રાશિવિશેષઃ ંયોજ કૃતયુગ્મ રૂપ
દ્વ્યભિધીયતે સ ચ જઘન્યતો દ્વાદશાત્મકઃ (૧૨) ઇતિ ૫ । ‘જે ણં રાસી ચઝ-
ક્રણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિ પઞ્જવસિણ’ યઃ સ્વલ્લ રાશિ શ્ચતુષ્કેણા-
પહારેણ અપહિયમાણત્રિપર્યવસિતો ભવેત્ તથા-‘જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહાર
સમયા તેઓગા સેત્તં તેઓગ તેઓગે’ યે સ્વલ્લ તસ્ય રાશેરપહારસમયાઃ
ંયોજા ભવન્તિ તસ્માત્કારણાત્ સ રાશિવિશેષઃ ંયોજ ંયોજ રૂપોઽભિધીયતે’
સ ચ જઘન્યતઃ પશ્ચદશાત્મકઃ (૧૫) ઇતિ ૬ । ‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં અવહારેણં
અવહીરમાણે દો પઞ્જવસિણ’ યઃ સ્વલ્લ રાશિ શ્ચતુષ્કેણાપહારેણ અપહિયમાણે
દ્વિપર્યવસિત ઇવ ભવતિ તથા-‘જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા તેઓગા

માણે ચઝપઞ્જવસિણ જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા તેઓગા સેત્તં
તેઓગ કઢજુમ્મે’ જો રાશિ ચાર સે અપહત હોને પર ચાર ષચાતી
હૈં ઓર ઉસકે અપહાર સમય ૩ રૂપ હોતે હૈં’ એસી વહ રાશિ ંયોજ
કૃતયુગ્મ રૂપ હાંતી હૈં । એસી વહ રાશિ જઘન્ય સે ૧૨ સંખ્યા રૂપ
હોતી હૈં । ‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિપઞ્જવસિણ
જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા તેઓગા સેત્તં તેઓગતેઓગે’
૬ ‘જો રાશિ ચાર સે અપહત હોને પર અન્ત મેં તીત ષચાતી હૈં
ઓર ઉસ રાશિ કે અપહાર સમય ંયોજ રૂપ હોતે હૈં’ વહ ંયોજ
ંયોજ રાશિ હૈં । જઘન્ય પ્રમાણ ૧૫ હૈં । ‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં
અવહારેણં અવહીરમાણે દો પઞ્જવસિણ, જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહાર

અપહારક સમય ચાર હોય છે. તેથી તેમાં કૃતયુગ્મ પણ આવે છે. એવી તે
રાશી જઘન્યથી ૧૭ સત્તર સંખ્યા રૂપ છે ‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં અવહારેણં
અવહીરમાણે ચઝપઞ્જવસિણ જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા તેઓગા સેત્તં
તેઓગ કઢજુમ્મે’ જે રાશીમાં ચારની સંખ્યાથી અપહાર કરતાં ચાર વધે છે,
અને તેના અપહારનો સમય ૩ ત્રણ રૂપ હોય છે. એવી તે રાશી ંયોજ
કૃતયુગ્મ રૂપ હોય છે, એવી તે રાશી ૧૨ ચારની સંખ્યા રૂપ હોય છે

‘જે ણં રાસી ચઝક્રણં અવહારેણં અવહીરમાણે તિપઞ્જવસિણ જે ણં તસ્સ
રાસિસ્સ અવહારસમયા તેઓગા સેત્તં તેઓગતેઓગે’ જે રાશીમાંથી ચાર
ના અપહારથી ઇવટે ત્રણ બચે છે, અને અપહારનો સમય ંયોજ રૂપ હોય છે,
તે ંયોજ ંયોજ રાશી કહેવાય છે તેની સંખ્યાનું પ્રમાણ ૧૫નું છે, ‘જે ણં રાસી ચઝ-
ક્રણં અવહારેણં અવહીરમાણે દો પઞ્જવસિણ, જે ણં તસ્સ રાસિસ્સ અવહારસમયા

सेत्तं तेओग दावरजुम्मे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः त्र्योजा भवन्ति तस्मात्कारणात् स राशि विशेषः त्र्योज द्वापरयुगम इति कथ्यते स च जघन्यत श्रतुर्दशात्मकः (१४) इति ७। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रतुष्केणापहारेणापहियमाण एक एव पर्यवसितो भवेत् तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा सेत्तं तेओगकलिओगे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमया त्र्योजा भवन्ति, तस्मात् कारणात् स राशिविशेषः त्र्योजकलयोज इत्यभिधीयते स च जघन्यत स्वयोदशात्मकः (१३) इति ८। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रतुष्केणापहारेणापहियमाण इतुःपर्यवसितो भवति तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्पकडजुम्मे'

समया तेओगा सेत्तं तेओगदावरजुम्मे' ७ जिस राशि में से चतुष्क के अपहार से अन्त में दो बचते हैं और अपहार समय जिसके त्र्योज रूप होते हैं ऐसी वह राशि त्र्योजद्वापरयुगम रूप होती है इसका जघन्य प्रमाण १४संख्या रूप है। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' जो राशि चतुष्क से अपहन होने पर अन्त में एक बचाती है और 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा सेत्तं तेओग कलिओगे' अपहार समय जिसराशि के त्र्योजरूप होते हैं ऐसी वह राशि त्र्योज कलयोज रूप होती है। इसका जघन्य प्रमाण १३, संख्यारूप होता है। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए' जो राशि चार से विभाजित होकर अन्त में चार बचाती है तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्प कडजुम्मे'

तेओगा सेत्तं तेओगदावरजुम्मे' ७, ७ राशिभाथी चारने अपहार करवाथी छेवटे ७ भये छे, अने ७ना अपहारने समय त्र्योज ३५ होय छे, अवी ते राशी त्र्योज द्वापरयुगम ३५ होय छे, तेनुं जघन्य प्रमाण १४ यौद स भ्या ३५ होय छे, 'जे णं रासी चउक्कएण अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए' ७ राशी चारनी स भ्याथी अपहार थवाथी छेवटे ७क भये छे, अने 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा सेत्तं तेओगकलिओगे' अने ७ने अपहारने समय त्र्योज ३५ होय छे, अवी ते राशी त्र्योज कल्योज ३५ होय छे, तेनुं प्रमाण १३ तेर स भ्या ३५ होय छे, २ 'जे णं रासी चउक्कएण अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए' ७ राशीभाथी चारने विलाग करवाथी छेवटे चार भये छे तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्प कडजुम्मे' ७ राशिने अपहार समय द्वापरयुगम छे, अवी ते राशि द्वापर

ये खलु तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्मा भवन्ति तस्मात्कारणात् स राशि-
विशेषो द्वापरयुग्मकृतयुग्म इत्यभिधीयते, स च जघन्यतोऽष्टात्मकः, इति
(८) ९। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए' यः
खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेणापहियमाणो द्विपर्यवसितो भवति तथा—'जे णं
तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा से तं दावरजुम्मतेओगे' ये खलु
तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्मरूपा भवन्ति तस्मात्कारणात् स राशि
विशेषः द्वापरयुग्मत्रोज इति कथ्यते स च जघन्यत एकादशात्मकः (११)
इति १०। 'जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्ज-
वसिए' यः खलु राशि श्रुतुष्केणापहारेणापहियमाणो द्विपर्यवसितो भवति
तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा से तं दावरजुम्म
दावरजुम्मे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्मरूपा भवन्ति
तस्मात्कारणात् स राशिविशेषो द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म इति कथ्यते स च जघ-

जिस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म हैं ऐसी वह राशि द्वापरयुग्म कृत
युग्म कही गई है। वह राशि जघन्य रूप से ८ संख्यात्मक है। ९ 'जे णं
रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए' जो राशि
चार से अपहन होकर अन्त में तीन बचाती है। तथा 'जे णं तस्स
रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा से तं दावरजुम्मतेओगे' जिस
राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म रूप हैं ऐसी वह राशि द्वापरयुग्म
त्रोजरूप है। यह संख्या में जघन्य से ११ संख्या रूप होती है। 'जे णं
रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए' जो राशि चार
से अपहन होकर—विभाजित होकर अन्त में दो बचाती हैं तथा 'जे णं
तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा' जिस राशि के अपहार
समय द्वापरयुग्म रूप हैं—ऐसी वह राशि द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म रूप है।
यह जघन्य संख्या में १० रूप होती है। 'जे णं रासी चउक्कएणं

युग्म कृतयुग्म ठडेअ छे ते आठ ८ संख्यात्मक छे, ९ 'जे णं रासी चउक्कएणं
अवहारेणं अवहीरमाणे ति पज्जवसिए' जे राशी चारथी अपहृत थधने छेवटे
त्रणु अथावे छे, तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अपहारसमया दावरजुम्मा से तं दावर
जुम्म तेओगे' जे राशिने अपहार समय द्वापरयुग्म रूप छे, जेवी ते राशि
द्वापरयुग्म त्रोज रूप छे, तेनी जघन्य संख्या ११नी डोय छे 'जे णं रासी चउ-
क्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए' जे राशी चारथी अपहार थधने
वडेअथाथी छेवटे जे अथे छे, तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अपहारसमया दावर
जुम्मा' जे राशीने अपहार समय द्वापरयुग्म रूप छे, जेवी ते राशि द्वापर
युग्म द्वापरयुग्म रूप छे, आ संख्यामां १० हस रूप डोय छे, 'जे णं रासी

न्यतो दशात्मकः (१०) इति ११। 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रुत्तुक्केणापहारेणापहियमाण एक पर्यवसित एव भवति तथा—'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावर जुम्पा सेत्तं दावरजुम्पकलिओगे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमया द्वापरयुग्म रूपा भवन्ति तस्मात्कारणात् स राशिविशेषो द्वापरयुग्म कलयोज इति कथ्यते, स च नवात्मकः (९) इति १२। 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउप्पज्जवसिए' यः खलु राशि श्रुत्तुक्केणापहारेणापहियमाण श्रुतुःपर्यव सितो भवति तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा सेत्तं कलिओगा कडजुम्मे' ये खलु तस्य राशेरपहारसमयाः कलयोजाः तस्मात्कारणात् स राशिविशेषः कलयोजकृतयुग्म इत्यभिधीयते, स च जघन्यत श्रुत्तुक्कात्मकः (४) इति १३। 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए' यः खलु राशि श्रुत्तुक्केणापहारेणापहियमाणस्त्रिपर्यवसितो भवति

अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए' जो राशि चार से अपहृत होकर अन्त में एक बचाती हैं तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्पा सेत्तं दावरजुम्पकलिओगे' जो उस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म रूप हैं ऐसी राशि द्वापरयुग्म कलयोज रूप होती है। यह जघन्य संख्या में ९ रूप होती है। 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउप्पज्जवसिए' 'जो राशि चार से विभक्त होकर अन्त में चार बचाती है। 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलियोगा सेत्तं कलिओगा कडजुम्मे' तथा जिस राशि के अपहार समय कलयोज रूप होते हैं ऐसी वह राशि कलयोज कृतयुग्म कहलानी है। संख्या में वह जघन्य से चार रूप है। 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीर-

चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एणपज्जवसिए' ७ राशी चारथी अपहृत थाथी ७ये भये तथा 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्पा सेत्तं दावरजुम्पकलिओगे' ७ राशिनो अपहार समय द्वापरयुग्म ३५ छे, ७वी ते राशीद्वापरयुग्म कल्येण ३५ डोय छे. आ संख्यामा ८ नव ३५ डोय छे. 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउप्पज्जवसिए' ७ राशी चारथी वडे आधने छेवटे चार भयावे छे, 'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा सेत्तं कलिओगाकडजुम्मे' तथा ७ राशिनो अपहार समय कल्येण ३५ डोय छे, ७वी ते राशी कल्येण कृतयुग्म कडेवाय छे. संख्यामां ते चार ३५ डोय छे. 'जे णं राशी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा सेत्तं कलिओगा

તથા-‘જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા સેત્તં કલિયોગ તેઓને’
 યે સ્વલુ તસ્ય રાશેરપહારસમયાઃ કલ્યોજાઃ તસ્માત્કારણાત્ સ રાશિવિશેષઃ
 કલ્યોજ ંયોજ ઇતિ કથ્યતે સ ચ જઘન્યતઃ સપ્તાત્મકઃ (૭) ઇતિ ૧૪।
 ‘જે ણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં અવહારેણં અવહીરમાણે દુપ્પજ્જવસિણ્’ યઃ સ્વલુ રાશિ
 શ્ચતુષ્કેણાપહારેણાપહિયમાણા દ્વિપર્યવસિતો ભવતિ તથા ‘જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ
 અવહારસમયા કલિઓગા સેત્તં કલિઓગદાવરજુમ્મે યે સ્વલુ તસ્ય રાશેરપહાર
 સમયાઃ કલ્યોજા ભવન્તિ તસ્માત્ કારણાત્ સ રાશિ વિશેષઃ કલ્યોજ દ્વાપરયુગ્મ
 ઇતિ કથ્યતે, સ ચ જઘન્યતઃ પડાત્મકઃ (૬) ઇતિ ૧૫। ‘જે ણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં
 અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપ્પજ્જવસિણ્’ યઃ સ્વલુ રાશિશ્ચતુષ્કેણાપહારેણાપહીય-
 માણ એકપર્યવસિતો ભવેત્ તથા-‘જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા
 સેત્તં કલિઓગ કલિઓને’ યે સ્વલુ તસ્ય રાશેરપહારસમયાઃ કલ્યોજા ભવન્તિ

માણે તિપ્પજ્જવસિણ્ ‘જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા
 સેત્તં કલિઓગતેઓને’ જો રાશિ ચાર સે વિભક્ત હોકર અન્ત મેં
 ત્રીન બચાતી હૈ, તથા ઉસ ક્કે અપહાર સમય કલ્યોજ રુપ હોતે હૈં એસી
 વહ રાશિ કલ્યોજ ંયોજ રુપ કહી ગઈ। વહ જઘન્ય સંખ્યા મેં ૭ રુપ
 હૈ। ‘જે ણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં અવહારેણં અવહીરમાણે દુપ્પજ્જવસિણ્’
 ‘જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા સેત્તં કલિઓગ
 દાવરજુમ્મે’ જો રાશિ ચાર સે વિભક્ત હોતી હુઈ અન્ત મેં દો બચાતી
 હૈ ઓર ઉસ ક્કે અપહાર સમય કલ્યોજ રુપ હોતે હૈ। એસી વહ કલ્યોજ
 દ્વાપરયુગ્મ કહી જાતી હૈં। સંખ્યા મેં વહ જઘન્ય સે ૬ રુપ હોતી હૈ।
 ‘જે ણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપ્પજ્જવસિણ્ જે
 ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા સેત્તં કલિઓગકલિ-
 ઓને’ જો રાશિ ચાર સે અપહૃત હોકર અન્ત મેં એક બચાતી હૈ। તથા

તેઓને’ જે રાશી ચારથી વહેચાઈને છેવટમાં ત્રણ બચાવે છે, તથા તેના અપ-
 હારનો સમય કલ્પેબ ૩૫ હોય છે, એવી તે રાશી કલ્પેબ ૩૫ કહેલ
 છે. તે સંખ્યામાં ૭ સાત ૩૫ છે. ‘જેણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં અવહારેણં અવહીરમાણે
 દુપ્પજ્જવસિણ્ જેણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા સેત્તં કલિઓગદાવર
 જુમ્મે’ જે રાશી ચારથી વહેચાઈને છેવટે બે બચાવે છે, અને તેના જે
 અપહારનો સમય કલ્પેબ ૩૫ હોય છે, એવી તે રાશી કલ્પેબ દ્વાપરયુગ્મ
 ૩૫ કહેવામાં આવે છે. તે સંખ્યામાં ૬ છ ૩૫ છે. ‘જેણં રાસી ચઙ્ક્રકર્ણં
 અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપ્પજ્જવસિણ્ જે ણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા
 કલિઓગા સેત્તં કલિઓગકલિઓને’ જે રાશી ચારની સંખ્યાથી અપહૃત થઈ
 ને છેવટે એક બચાવે છે. તથા ‘જેણં તસ્મ રાસિસ્સ અવહારસમયા કલિઓગા

तस्मात्कारणात् स राशि विशेषः कलयोज कलयोज इति कथ्यते एष च जघन्यतः पञ्चात्मकः (५) इति १६ । 'से तेणट्टेणं जाव कलिभोगकलिभोगे' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते कृतयुग्मकृतयुग्मो यावत् कलयोज कलयोज इति षोडशा-पहारराशयो भवन्ति यावत्पक्षेन 'कडजुम्मकडजुम्मे' इत्यारभ्य 'कलिभोग दावरजुम्मे' इत्यन्तस्य सर्वस्य ग्रहणं भवतीति ॥सू०१॥

मूलम्—कडजुम्म कडजुम्म एगिंदिया णं भंते ! कओ उवव-ज्जंति ? किं नेरइएहिंतो० ? जहा उप्पलुद्देसए तहा उववाओ । ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ? गोयसा ! सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति । ते णं भंते ! जीवा समए समए पुच्छा, गोयसा ! ते णं अणंता समए समए अवहीरमाणा अवहीरमाणा अणंताहिं उस्सपिणी ओसपिणीहिं अवहीरंति णो चेव णं अवहरिया सिया । उच्चत्तं जहा उप्पलुद्देसए । ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिजस्स कम्मस्स किं बंधगा अवंधगा ? गोयसा ! बंधगा, नो अवंधगा । एवं सव्वेसिं आउयवज्जाणं । आउयस्स बंधगा वा अवंधगा वा । ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स पुच्छा, गोयसा ! वेयगा नो अवेयगा । एवं सव्वेसिं । ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा

'जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिभोगा से त्तं कलिभोग कलिभोगे' जो उस राशि के अपहारसमय कलयोज रूप होते हैं, ऐसी वह राशि कलयोज कलयोज है यह ५ संख्यारूप होती है । ? ६ । 'से तेणट्टेणं जाव कलिभोग कलिभोगे' इस कारण हे गौतम ! मैंने कृतयुग्म कृतयुग्म से लेकर कलयोज कलयोज तक १६ महाराशिषां कही हैं ॥सू०१॥

से त्तं कलिभोगकलिभोगे' ने राशीना अपहार समय कल्येण ३५ डोय छे जेवी ते राशी कल्येण कल्येण ३५ छे. आनी संख्या ५६२१५ ३५ डोय छे. १९६ । 'से तेणट्टेणं जाव कलिभोग कलिभोगे' आ डारणुथी छे गौतम ! मे' कृतयुग्म कृतयुग्मथी लथने कल्येण कल्येण सुधी १६ सोण भडाराशीयो कही छे. ॥सू०१॥

असायावेयगा पुच्छा, गोयसा ! सायावेयगा असायावेयगा वा ।
 एवं उप्पलुहेसगपरिवाडी । सव्वेसिं कम्माणं उदई नो अणुदई ।
 छण्हं कम्माणं उदीरगा नो अणुदीरगा । वेयणिज्जाउयाणं उदी-
 रगा वा अणुदीरगा वा । तेणं भंते ! जीवा किं कण्हं पुच्छा,
 गोयसा ! कण्हलेस्सा वा, नीललेस्सा वा, काउलेस्सा वा
 तेउलेस्सा वा । नो सम्मदिट्ठी, नो सम्मामिच्छादिट्ठी, मिच्छा-
 दिट्ठी, नो नाणी अन्नाणी नियमं दुअन्नाणी, तं जहा मइ
 अन्नाणी य सुय अन्नाणी य नो मगजोगी, नो वइजोगी, काइ-
 जोगी । सागारोवउत्ता वा अणागारोवउत्ता वा । तेसिं णं
 भंते ! जीवाणं सरीरा कइ वन्ना जहा उप्पलुहेसए सव्वत्थ
 पुच्छा गोयसा ! जहा उप्पलुहेसए ऊसासगा वा, नीसासगा
 वा, नो ऊसासनीसासगा वा । आहारगा वा अणाहारगा वा ।
 नो विग्घा अदिरया, नो विरयादिरया, सकिरिया, नो अकि-
 रिया । सत्तविहवंधगा वा, अट्ठविहवंधगा वा । आहारसन्नोव-
 उत्ता वा जाव परिग्रहसन्नोवउत्ता वा । कोहकसाई वा माण-
 कसाइ जाव लोभकसाई वा । नो इत्थिवेयगा, नो पुरिसवेयगा
 णपुंसगवेयगा । इत्थिवेयबंधगा वा, पुरिसवेयबंधगा वा, णपुं-
 सगवेयबंधगा वा । णो सन्नी, असन्नी । सइंदिया नो अणिं-
 दिया । ते णं भंते ! कडजुम्म कडजुम्म एगिंदिया कालओ
 केवच्चिरं होति ? गोयसा ! जहन्नेणं एकं समयं, उक्कोसेणं अणंतं
 कालं—अणंता उस्सप्पिणी ओसप्पिणीओ वणस्सइकाइय कालो ।
 संवेहो न भवइ । आहारो जहा उप्पलुहेसए । नवरं निव्वाघाएणं
 छदिसिं, वाधायं पडुच्च सिय तिदिसिं, सिय चउरिसिं सिय पंच
 दिसिं, सेसं तहेइ । ठिई जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं बावीसं

वाससहस्राई । समुग्धाया आदिल्ला चत्तारि । मारणंतिय
समुग्धाएणं समोहया वि सरंति असमोहया वि सरंति । उव्व-
ट्टणा जहा उप्पलुद्देसए । अह भंते ! सव्वपाणा जाव सव्व सत्ता
कडजुम्मकडजुम्मएगिंदियत्ताए उव्वन्नपुठ्वा ? हंता गोयमा !
असइं अदुवा अणंतखुत्तो ॥सू० २॥

छाया--कृतयुग्मयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरकेभ्य०
यथोत्पल्लोद्देशके तथा उपपातः ते खलु भदन्त ! जीवाः एकसमयेन कियन्त
उत्पद्यन्ते गौतम ! षोडश वा संख्येया वा, असंख्येया वा, अनन्ता वा, उत्पद्यन्ते ।
ते खलु भदन्त ! जीवाः समये समये पृच्छा गौतम ! ते खलु अनन्ताः
समये समये अपह्रियमाणा अपह्रियमाणा अनन्ताभिस्तत्सर्पिणीभिः(पह्रियन्ते, नैव
खलु अपहृताः स्युः । उच्चत्वं यथोत्पल्लोद्देशके । ते खलु भदन्त ! जीवाः ज्ञाना-
वरणीयस्य कर्मणः किं बन्धका अबन्धकाः ? गौतम ! बंधहा नो अबन्धकाः ।
एवं सर्वेषां मायुष्कवर्जिणाम् । आयुष्कस्य बन्धका वा, अबंधका वा । ते खलु
भदन्त ! जीवाः ज्ञानावरणीयस्य० पृच्छा गौतम ! वेदका नो अवेदका एवं
सर्वेषाम् । ते खलु भदन्त ! जीवाः किं सातावेदका असातावेदकाः० पृच्छा,
गौतम ! सातावेदका वा, असातावेदका वा, एवमुत्पल्लोद्देशकपरिपाटी ।
सर्वेषां कर्मणा मुदयिनो नो अनुदयिनः पण्णां कर्मणा मुदीरकाः, नो अनुदी-
रकाः, वेदनीयायुष्कायोः उदीरका वा, अनुदीरका वा । ते खलु भदन्त जीवाः
किं कृष्ण० पृच्छा, गौतम ! कृष्णलेश्या वा, नीललेश्या वा, कापोतलेश्या वा,
तेजोलेश्या वा । नो सम्पग्गहृष्टयः नो सम्पग्गिण्ठाहृष्टयः, मिथ्या-
हृष्टयः । नो ज्ञानिनः, अज्ञानिनः नियमात् द्वयज्ञानिनः तद्यथा--मत्यज्ञानिनश्च
श्रुताज्ञानिनश्च । नो मनोयोगिनो नो वचोयोगिनः काययोगिनः । साकारोपयुक्ता
वा, अनाकारोपयुक्ता वा । तेषां खलु भदन्त ! जीवानां शरीराणि कति वर्णानि,
यथोत्पल्लोद्देशके सर्वत्र पृच्छा, गौतम ! यथोत्पल्लोद्देशके उच्छ्वासका वा निःश्वा-
सका, वा, नो उच्छ्वासनिःश्वासकाः । आहारका वा अनाहारका वा, नो विरताः
अविरताः, नो विरहाविरताः । सक्रियाः नो अक्रियाः । सप्तविधबन्धका वा
अष्टविधबन्धका वा । आहारसंज्ञोपयुक्ता वा यावत्परिग्रहसंज्ञोपयुक्ता वा । क्रोध
कषायिनो वा मानकषायिनो यावत्लोभकषायिनो वा । नो स्त्रीवेदका नो
पुरुषवेदकाः, नपुंसकवेदकाः । स्त्रीवेदबन्धका वा, पुरुषवेदबन्धका वा, नपुं-
सकवेदबन्धका वा । नो संज्ञिनोऽसंज्ञिनः । सेन्द्रिया नो अनिन्द्रियाः । ते खलु
भदन्त ! कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? गौतम !

जघन्येन एकं समयम्, उत्कर्षेणानन्तं कालम्, अनन्ता उत्सर्पिष्यवसर्पिष्यः वन-
स्पतिकायिककालः। संवेधो न भण्यते, आहारो यथा—उत्पलोद्देशके, नवरं
निर्व्याधात्तेन षड्दिशम्, व्याघातं प्रतीत्य स्यात् चतुर्दिशम्, स्वात् पञ्चदिशं शेषं
तथैव। स्थितिर्जन्येनान्तर्मुहूर्तम्, उत्कर्षेण द्वात्रिंशतिवर्षसहस्राणि। समु-
द्घाता आद्याश्चत्वारः। मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता अपि त्रियन्ते,
असमवहता अपि त्रियन्ते। उद्वर्तना यथा उत्पलोद्देशके। अथ भदन्त ! सर्व-
प्राणा यावत् सर्वस्रजाः कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रियतया उत्पन्नपूर्वाः ? गौतम !
असकृत् अथवा—अनन्तकृत्वः ॥ सू० २॥

टीकाः—‘कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कृतयुग्मकृतयुग्मै-
केन्द्रियाः खलु भदन्त ! ये एकेन्द्रियाः चतुष्कापहारे चतुःपर्यवसिताः अप-
हारसमयाश्च चतुःपर्यवसानास्ते कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः कथ्यन्ते एवं
सर्वत्र ज्ञातव्यम् ‘कथो उववज्जंति’ इत्थंभूता एकेन्द्रियाः कुतः कस्मात् स्थान-
विशेषादागत्योत्पद्यन्ते ‘किं नेरइएहिंतो०’ किं नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते
तिर्यग्घोनिकेभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते मनुष्येभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते देवेभ्यो
वा आगत्योत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह—अतिदेशमुखेन ‘जहा उप्पलुहेसए तहा

‘कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! इत्यादि

टीकार्थ—‘कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते !’ हे भदन्त ! जो
एकेन्द्रिय कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमाण है। ऐसे वे एकेन्द्रिय जीव
‘कथो उववज्जंति’ किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
‘किं नेरइएहिंतो०’ क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं
अथवा तिर्यग्घोनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों से आकर के उत्पन्न
होते हैं ? इस प्रश्न का अतिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम-

‘कडजुम्मकडजुम्मएगिंदियाणं’ इत्यादि

टीकार्थ—कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! हे भगवन् ! वे एकेन्द्रिय
कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमाण होय अथवा ते एकेन्द्रिय अथवा ‘कथो उववज्जंति’
क्या स्थान विशेषमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? ‘किं नेरइएहिंतो’ शुं
तेअो नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्घोनिकेमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां अति देशथी
प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे कडे—‘जहा उप्पलुहेसए तहा सववाओ’ आ भगवती

उववाओ' यथा उत्पल्लोद्देशे तथा उपपातो भगवतीसूत्रस्यैव एकादशशतके प्रथमो-
द्देशक उत्पल्लोद्देशकः तत्र यथा—एकेन्द्रियाणामुपपातः कथित स्तथैवात्रापि—
उपपातो ज्ञातव्यः नो नैरधिकेभ्य उपपद्यन्ते, तिर्यग्योनिकेभ्यो वा, मनुष्येभ्यो
वा, देवेभ्यो वा उपपद्यन्ते, पृथिव्यवनस्पतिषु देवानामुत्पत्तिसंभवात्, तदपेक्ष-
यैव देवेभ्य आगत्य एकेन्द्रियेषु उत्पद्यन्ते इति कथितम् । इह यत्र यत्र यस्मिन्
यस्मिन् पदे उत्पल्लोद्देशकस्यातिदेशः कृतो भवेत् तत्तदेव पदं तत्रत्यं वाच्यम् ।
'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उश्वज्जंति' ते खञ्ज भदन्त ! जीवाः

स्वामी से कहते हैं 'जहा उत्पल्लोद्देश ए तथा उववाओ' इस भगवती
सूत्र का जो ११ वे शतक में प्रथम उद्देशक है—वही उत्पल्ल उद्देशक है
सो इस उत्पल्ल उद्देशक में जिस रीति से एकेन्द्रिय जीवोंका उपपात
कहा गया है उसीरीति से उनका उपपात यहां पर भी जानना चाहिये
तथा च—कृतयुगम कृतयुगम राशि प्रमाण एकेन्द्रिय जीव नैरधिकों में से
आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं, किन्तु वे तिर्यग्योनिकों में से आकर के
भी उत्पन्न होते हैं मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं और देवों
में से भी आकर के उत्पन्न होते हैं । क्यों कि पृथिवीकायिक अप्कायिक
और वनस्पतिकायिक इन में देवों की उत्पत्ति हो सकती है । इसलिये
यहां पर देवों से आकर के भी एकेन्द्रिय जीव रूप से जीव उत्पन्न होते
हैं ऐसा कहा गया है । यहां जहां जहां जिस जिस पद में उत्पल्ल उद्देशक
का अतिदेश किया हो वहां वहां का वही पद कहना चाहिये । 'ते णं'

सूत्रना ११ अगियारमा शतकनो पडेवो उद्देशो छे तेज उत्पल्ल उद्देशो कडेवाय
छे ते उत्पल्ल उद्देशामां जे प्रभाणु अकधन्द्रियवाणा लुवेनो उपपात कडेवामां
आवेल छे, अज प्रभाणु तेजोना उपपात अडियां कडेवो जेधजे. तथा
कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा अकधन्द्रिय लुवेमांथी नैरधिकेमांथी आवीने उत्पन्न
थता नथी परंतु तेजो तिर्यग्य योनिकेमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे,
मनुष्येमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे. अने देवेमांथी आवीने पणु
उत्पन्न थाय छे. केम के पृथ्वीकायिक, अप्कायिक अने वनस्पति कायिकेमां
देवानी उत्पत्ति थध शके छे. अज कारणुथी अडियां देवेमांथी आवीने पणु
अकधन्द्रिय लुव पणुथी लुव उत्पन्न थाय छे. तेम कडेवामां आवेल छे.

अडियां ल्यां ल्यां जे जे पदमां उत्पल्ल उद्देशानो अतिदेश—ललाभणु
करवामां आवेल छे, त्यां त्यां अज पदो कडेवा जेधजे. 'ते णं भंते ! एगः

कृतयुगम् कृतयुग्मराशिप्रमाणा एकेन्द्रिया एकसमयेन एकस्मिन् समये कियन्तः कियत्संख्यका उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा हे गौतम ! ‘सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा, उववज्जंति’ पोडश वा संख्याता वा असंख्याता वा अनन्ता वा उत्पद्यन्ते, अनन्ता इति वनस्पत्तपेक्षया इति । ‘ते णं भंते ! जीवा समए समए पुच्छा’ ते खलु भदन्त ! जीवाः समये समये अपहियमाणः कियता कालेनापहियन्ते ? इति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘ते णं अणंता समए समए अवहीरमाणा अवहीरमाणा’ ते खलु अनन्ताः समये समये एकैकमाश्रित्य अपहियमाणाः अपहियमाणा ‘अणंताहिं उस्सप्पिणीओसप्पिणीहिं अवहीरंति’ अनन्ताभिरुत्सर्पिण्यव-

भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति’ हे भदन्त ! वे कृतयुगम् कृतयुग्म राशि प्रमाण रूप एकेन्द्रिय जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा । सोलसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति’ हे गौतम ! वे एक समय में सोलह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं’ ‘अनन्त उत्पन्न होते हैं’ ऐसा जो कहा गया है वह वनस्पतिकायिक जीवों की अपेक्षा से कहा गया है । ‘ते णं भंते ! जीवा समए समए पुच्छा’ हे भदन्त ! वे अनन्त जीव यदि एक एक समय में अपहृत किये जावे (निकाले जावे) तो कितने काल में वे खाली हो सकते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं ‘गोयमा । ते णं अणंता, समए २ अवहीरमाणा अवहीरमाणा अणंताहिं उस्सप्पिणीओसप्पिणीहिं अवहीरंति’ हे गौतम ! वे अनन्त,

समएणं केवइया उववज्जंति’ हे भगवन् ते कृतयुगम् कृतयुग्मराशि प्रमाणा एकेन्द्रिय जीव । एक समयमां डेटला उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘गोयमा ! सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति’ हे गौतम ! तेओ एक समयमां-सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न थाय छे. ‘अनन्त उत्पन्न थाय छे’ ओ प्रमाणे जे कडेवामां आवेत्त छे ते वनस्पतिकायिक जीवोनी अपेक्षाथी कडेवामां आवेत्त छे. ‘ते णं भंते ! जीवा समए समए पुच्छा’ हे भगवन् ते अनन्त जीव जे ओक ओक समयमां अपहृत करवामां आवे (अडारकाडाडवामां) आवे तो डेटला समयमां तेओ भावी थर्छ शके छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘गोयमा ! तेणं अणंता समए २ अवहीरमाणा अवहीरमाणा अणंताहिं उस्सप्पिणीओसप्पिणीहिं अवहीरंति’ हे गौतम ! तेओ ओक ओक

सर्पिणीभिरपह्रियन्ते 'णो चैव णं अवहरिया सिया' नैव खलु ते अनन्ता अपहृताः स्युः। 'उच्चत्तं जहा उप्पल्लुद्देसए' उच्चत्वं यथोत्पल्लोद्देशके तेषां कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियजीवानां शरीरोच्चत्वे यथोत्पल्लोद्देशके उत्पल्लविषये कथितं तथैव ज्ञातव्यम्, जघन्येनांगुलासंख्येयभागम् उत्कर्षेण सातिरेकं योजनसदृशं वनस्पत्यपेक्षया इति। 'ते णं भंते ! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वंधगा अवंधगा' ते खलु भदन्त ! कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियजीवाः ज्ञानावरणीयस्य कर्मणः किं बन्धका भवन्ति अथवा अबन्धका भवन्तीति प्रश्नः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि,

यदि एक एक स्वप्न्य में एक एक निकाले जावे तो इन के खाली करने में अनन्त उत्सर्पिणी और अनन्त अवसर्पिणी काल समाप्त हो सकते हैं। परन्तु 'णो चैव णं अवहरिया सिया' वे खाली नहीं किये जा सकते हैं। अर्थात् इतने काल में भी नहीं गिने जा सकते हैं 'उच्चत्तं जहा उप्पल्लुद्देसए' इन के शरीर की ऊंचाई के विषय में जैसा कथन उत्पल्ल उद्देशक में किया गया है—वैसा जानना चाहिये। अर्थात् जघन्य से इन के शरीर की ऊंचाई अंगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण होती है और उत्कृष्ट से कुछ अधिक १ हजार योजन प्रमाण होती है यह ऊंचाई का उत्कृष्ट रूप से कथन कमल की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये।

'ते णं भंते ! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वंधगा अवंधगा' हे भदन्त ! वे जीव क्या ज्ञानावरणीय कर्म के बन्धक होते हैं अथवा अबन्धक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! वंधगा, नो

समयमां अनंत अनंतनी संख्यामां कडाउवामां आवे तो पणु तेओने णाली करवामां अनंत उत्सर्पिणी अने अनंत अवसर्पिणीकाण समाप्त थं नय छे. परंतु 'णो चैव णं अवहरिया सिया' तेओ णाली करी शकता नथी अर्थात् ते स्थान परथी बिलकुव भन्नेडी शकता नथी. 'उच्चत्तं जहा उप्पल्लुद्देसए' तेओना शरीरनी उचाई ना संबंधमां उत्पल्ल उद्देशमां वे प्रमाणेतु कथन करवामां आवेल छे, ओण प्रमाणेतु कथन समज्जुं अर्थात् जघन्यथी तेओना शरीरनी उचाई आंगणनासंख्यातमा लाग प्रमाणुनी होय छे, अने उत्कृष्टथी कथक वधारे १ ओक हजार योजन प्रमाणुनी होय छे. आ उचाईतु प्रमाणु उत्कृष्ट पणुथी कथन कमणनी अपेक्षाथी कडेवासां आव्यु छे तेम समज्जुं लेईओ.

'हेण भत्ते ! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वंधगा अवंधगा' हे भगवन् ते एवे ज्ञानावरणीय कर्मने अंध करववाणा होय छे, अथवा अंध करतार होता नथी ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! वंधगा

‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘बंधगा नो अबंधगा’ बन्धका एव ज्ञानावरणीयस्य कर्मणस्ते भवन्ति न तु अबन्धका भवन्तीति । ‘एवं सव्वेसिं आउयवज्जाणं’ एवं ज्ञानावरणीयस्य कर्मण इव सर्वेषां दर्शनावरणीयादीनाम् आयुष्कर्मवर्जितानां सप्तानां कर्मणां नियमाद् बन्धका एव ते जीवा भवन्ति, न तु अबन्धका भवन्ति आयुः कर्मवन्धे भजनेति ग्राह—‘आउयस्स’ इत्यादि, ‘आउयस्सबंधगा वा अबंधगा वा’ आयुष्कस्य तु कर्मणस्ते जीवा बन्धका अपि भवन्ति अबन्धका अपि भवन्तीति भावः । ‘तेणं भंते ! जीवा’ ते खलु भदन्त ! जीवाः ‘नाणावरणिज्जस्स पुच्छा’ ज्ञानावरणीयस्य कर्मणः किं वेदका अवेदकाः ? इति प्रश्नः पृच्छा शब्देन गृह्यते । भगवानाह—‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘वेयगा’ नो अवेयगा’ वेदकाः, नो अवेदकाः कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया जीवा ज्ञानावरणीयं कर्म वेदयन्त्येव नियमादिति भावः । ‘एवं सव्वेसिं’ एवम्—अनेनैव प्रकारेण

अबंधगा’ हे गौतम ! वे जीव ज्ञानावरणीय कर्म के बन्धक होते हैं अबन्धक नहीं होते हैं । ‘एवं सव्वेसिं आउयवज्जाणं’ इस प्रकार ये सब जीव आयुष्क कर्म के सिवाय दर्शनावरणीयादि सात कर्मप्रकृतिओं के नियम से बन्धक ही होते हैं अबन्धक नहीं होते आयु कर्म के बन्ध में यहां भजना हैं—यही बात—‘आउयस्स बंधगा वा अबंधगा वा’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है—‘तेणं भंते ! जीवा नाणावरणिज्जस्स पुच्छा’ हे भदन्त ! वे जीव क्या ज्ञानावरणीय कर्म के वेदक होते हैं अथवा अवेदक होते हैं ? उत्तर में प्रबुध्री कहते हैं—‘गोयमा । वेयगा, नो अवेयगा’ हे गौतम ! वे जीव ज्ञानावरणीय कर्म के वेदक होते हैं अवेदक नहीं होते हैं । इसी प्रकार से ये कृतयुग्मकृतयुग्म शशि प्रमाण एकेन्द्रिय

नो अबंधगा’ हे गौतम । ते एवे ज्ञानावरणीय कर्मना बंध करनार डोय छे, अबंधक डोता नथी. ‘एवं सव्वेसिं आउयवज्जाणं’ आ रीने सधणा एवे आयुष्य कर्म शिवाय दर्शनावरणीय विगेरे सात कर्म प्रकृतियोना नियमथी बंध करनारा न डोय छे. अबंधक डोता नथी. आयु कर्मना बंधमां अडियां लखना कडी छे, अज वात ‘आउयस्स बंधगा वा अबंधगा वा’ आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करेले छे. ‘तेणं भंते ! नाणावरणिज्जस्स पुच्छा’ हे लगवन् ते एवे शुं ज्ञानावरणीय कर्मनुं वेदन करवावाणा डोय छे ? अथवा अवेदक डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुध्री गौतमस्वामीने कडे छे—‘गोयमा ! वेयगा, नो अबंधगा’ हे गौतम ! ते एवे ज्ञानावरणीय कर्मनुं वेदन करवावाणा डोय छे, अवेदक डोता नथी. अज प्रमाणे आ कृतयुग्म कृत-

‘सर्व्वेसि’ सर्व्वेषां कर्मणां दर्शनावरणीयादारभ्यान्तरायिकर्ष्यन्तानां वेदका एव भवन्ति किन्तु अवेदका न भवन्तीति भावः । ‘ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा पुच्छा’ हे भदन्त ! ते कृतयुग्मकेन्द्रियजीवाः किं सातस्य-सातावेदनीयकर्मणो वेदका अनुभवकर्त्तारो भवन्ति अथवा असातावेदनीयस्य वेदका भवन्तीति प्रश्नः पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सातावेदगा वा असातावेदगा वा’ ते जीवाः सातावेदका अपि भवन्ति तथा असातावेदका अपि भवन्तीति । ‘एवं उत्पल्लुद्देमपरिवाडी’ एवं यथा उत्पल्लोद्देशके कर्मपरिपाटी कथिता सैवेहापि अनुसन्धेया ‘सर्व्वेसि कम्माणं उदई’ ते जीवाः सर्व्वेषां कर्मणा मुदयिनो भवन्ति तेषां जीवानां सर्व्व कर्मणामेवोदयो भवन्तीति । ‘नो अणुदई’ नो अनुदयिनो भवन्ति कर्मणामिति ।

जीव ‘सर्व्वेसि’ दर्शनावरणीयादि से लेकर अन्तराय कर्म तक के समस्त कर्मों के वेदक ही होते हैं अवेदक नहीं होते हैं । ‘ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा’ हे भदन्त ! ये कृतयुग्म कृतयुग्म राशि प्रमाण एकेन्द्रिय जीव क्या साता वेदनीय कर्म के वेदक होते हैं ? अथवा असाता वेदनीय कर्म के वेदक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! सायावेयगा वा असायावेयगा वा’ हे गौतम ! वे साता कर्म के वेदक भी होते हैं और असाता कर्म के वेदक भी होते हैं । ‘एवं उत्पल्लुद्देमपरिवाडी’ इस प्रकार से उत्पल्ल उद्देशक में जैसी कर्म वेदन की परिपाटी कही गई है वैसी ही यहां पर जानना चाहिये । ‘सर्व्वेसि’ कम्माण उदई’ इन जीवों के समस्त कर्मों का उदय होता है । ‘नो अणुदई’ अनुदयवाले ये नहीं होते हैं । उद्दीरणा के

युग्मराशि प्रमाण एकेन्द्रिय एवो ‘सर्व्वेसि’ दर्शनावरणीय विवेक्षी तर्धने अन्तराय कर्म सुधीना सधणा कर्म्मोनु वेदन करवावाणा न डोय छे. अवेदक डोता नथी. ‘ते णं भंते ! जीवा किं सायावेदगा असायावेयगा’ हे भगवन आ कृतयुग्म कृतयुग्म राशीप्रमाणवाणा एकेन्द्रिय एवो शुं साता वेदनीय कर्म्मोनु वेदन करवावाणा डोय छे ? अथवा असाता वेदनीय कर्म्मोनु वेदन करवावाणा डोय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमरवाभीने कडे छे के-‘गोयमा ! साया वेदगा वा असाया वेयगा वा’ हे गौतम ! तेओ सात कर्म्मोनु वेदन करवावाणा पणु डोय छे अने असाता कर्म्मोनु वेदन करवावाणा डोय छे. ‘एवं उत्पल्लुद्देम परिवाडी’ आ रीते उत्पल्ल उद्देशां न प्रमाणेनी कर्म्मना वेदननी परिपाटी कडेवांमां आवेद छे. ओओ प्रमाणेनी परिपाटी अडियां पणु समनवी. ‘सर्व्वेसि’ कम्माण उदई’ आ एवोने सधणा कर्म्मोनि उदय धाय छे.

उदीरकप्रकरणे - 'छण्हं कस्माणं उदीरगा नो अणुदीरगा' षण्णां वेदनीयायुष्क-
वर्जानां कर्मणां ज्ञानावरणीयादीनां नियमादुदीरका एव भवन्ति न तु अनुदीरका
भवन्तीति । किन्तु 'वेदणिज्जाउयाणं उदीरगा वा अणुदीरगा वा' वेदनीयकर्मणाम्
आयुष्ककर्मणां चोदीरका वा भवन्ति अनुदीरका वा भवन्तीति तत्र भजने
भावः । 'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हं पुच्छा' ते खल्ल भदन्त ! जीवाः किं
कृष्णलेश्यावन्तो भवन्ति अथवा-नीलकापोतादिलेश्यावन्तो भवन्तीति प्रश्नः
पृच्छया संगृह्यते । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'कण्ह-
लेस्सा वा' कृष्णलेश्या वा ते जीवाः कृष्णलेश्यावन्तोऽपि भवन्ति 'नीललेस्सा
वा काउलेस्सा वा तेउलेस्सा वा' नीललेश्या वा भवन्ति कापोतिकलेश्या वा,
भवन्ति तेजोलेश्या वा भवन्ति पृथिव्यप्वनस्पतीनामपर्यासावस्थाऽपेक्षया

प्रकरणे ये - 'छण्हं कस्माणं उदीरगा नो अणुदीरगा' वेदनीय और
आयुष्क को छोड़कर शेष ज्ञानावरणीय आदि छह कर्मों के ये नियम
से उदीरक होते हैं अनुदीरक नहीं होते हैं । किन्तु 'वेदनीय और
आयुष्क कर्मों की उदीरणा इन में भजनीय होनी है इसलिये ये इनके
उदीरक भी होते हैं' और उदीरक नहीं भी होते हैं । यही बात-
'वेदणिज्जाउयाणं उदीरगावा अणुदीरगा वा' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट
की गई है । 'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हं पुच्छा' हे भदन्त ! वे
जीव क्या कृष्णलेश्यावाले होते हैं ? अथवा नीलकापोत आदि
लेश्यावाले होते हैं ? इस के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-'गोयमा !
कण्हलेस्सा वा, नीललेस्सा वा, काउलेस्सा वा, तेउलेस्सा वा' हे
गौतम ! ये कृष्णलेश्यावाले भी होते हैं, नीललेश्यावाले भी होते
हैं, कापोतलेश्यावाले भी होते हैं और तेजोलेश्यावाले भी होते हैं ।

'नो अनुदीर' आ अनुद्वयवाणा होता नथी. उदीरणाणा प्रकरणेमां आ 'छण्हं
कस्माणं उदीरगा नो अनुदीरगा' वेदनीय अने आयुष्य कर्मने छोडीने आकीना
ज्ञानावरणीय आदि छ कर्मोना नियमथी उदीरक डाय छे. अनुदीरक डोता
नथी परंतु वेदनीय अने आयुष्य कर्मोनी उदीरणु आमां लजनाथी डाय छे.
अथवा 'वेदणिज्जाउयाणं उदीरगावा अणुदीरगावा' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट
करेव छे. 'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हं पुच्छा' हे भगवन् ते ज्ञेये शुं कृष्णलेश्या-
वाणा डाय छे ? अथवा नीललेश्यावाणा अथवा कापोत विगेरे लेश्या-
वाणा डाय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-'गोयमा ! कण्ह-
लेस्सा वा, नीललेस्सा वा, काउलेस्सा वा, तेउलेस्सा वा' हे गौतम !
ते कृष्णलेश्यावाणा पणु डाय छे, नीललेश्यावाणा पणु डाय छे, कापोतिक
लेश्यावाणा पणु डाय छे, अने तेजोलेश्यावाणा पणु डाय छे. केम के-पृथ्वी,

तत्र देवानामुत्पत्ति सम्भवात् इति । 'नो सम्मदिट्टी' ते जीवाः सम्मदृष्टयो न भवन्ति तथा—'नो सम्मामिच्छादिट्टी' नो सम्यग्मिथ्यादृष्टयो मिश्रदृष्टयोऽपि न भवन्ति अपितु—'मिच्छादिट्टी' मिथ्यादृष्टयो भवन्ति ते जीवाः । 'नो नाणी अन्नाणी' नो ज्ञानिनो भवन्ति ते जीवाः किन्तु अज्ञानिनो भवन्ति तत्रापि 'नियमं दुअन्नाणी नियमा' नियमाद् अज्ञानद्वयवन्तो भवन्ति, तदेव दर्शयति—'तं जहा' तद्यथा 'मइ अन्नाणीय सुय अन्नाणी य' मत्स्यज्ञानिनश्च भवन्ति तथा श्रुताज्ञानिनश्च भवन्ति । 'णो मणोजोगी णो वहजोगी' नो मनोयोगिनो भवन्ति नो न वा, वचोयोगिनो भवन्ति । किन्तु 'कायजोगी' केवलं काययोगिन एव भवन्ति । 'सागारोवउत्ता वा अणागारोवउत्ता वा, साकारोययोगवन्ता वा भवन्ति

क्योंकि पृथिवी, अग्नि और वनस्पतिकारिकों को अपर्याप्त अवस्था में इन लेश्याओं का सद्भाव कहा गया है । इस का कारण यह है कि इनमें देवों की उत्पत्ति का सम्भव है । 'नो सम्मदिट्टी' ये जीव सम्मदृष्टि नहीं होते हैं तथा—'नो सम्मामिच्छादिट्टी' मिश्र दृष्टि भी नहीं होते हैं किन्तु 'मिच्छादिट्टी' मिथ्यादृष्टि होते हैं । 'नो नाणी अन्नाणी' ये ज्ञानी नहीं होते हैं । किन्तु अज्ञानी ही होते हैं, इनमें भी 'नियमं दुअन्नाणी' इस के दो अज्ञान नियम से होते हैं 'तं जहा' जैसे 'मइ अन्नाणी य सुय अन्नाणी य' नियम से मत्स्यज्ञान और श्रुताज्ञान ऐसे ये दो ही ज्ञान होते हैं 'णो मणोजोगी, णो वहजोगी' इसी प्रकार से इन में केवल एक स्पर्शन इन्द्रिय होने से ये मनोयोगी और वचनयोगी नहीं होते हैं किन्तु 'कायजोगी' काययोगी ही होते हैं 'सागारोवउत्ता वा अणागारोवउत्ता वा' ये

अध्यायिक, अने वनस्पतिकारिकोंने अपर्याप्त अवस्था में आ लेश्याओं ने सद्-
भाव कहेवा में आवेले छे तेतु कारण छे छे के—तेओमा देवोनी उत्पत्तिने स'भव
होय 'नो सम्मदिट्टी' आ ओवे सम्यग्दृष्टिवाणा होता नथी 'नो सम्मामिच्छादिट्टी'
मिश्र दृष्टिवाणा पणु होता नथी परतु 'मिच्छादिट्टी' मिथ्यादृष्टिवाणा होय छे.
'नो नाणी' तेओ ज्ञानी होता नथी. 'अन्नाणी नियमा' परंतु तेओ
नियमथी अज्ञानी न होय छे. तेमां पणु तेओ 'नियम दुअन्नाणी'
मतिअज्ञान अने श्रुताज्ञान ओ रीते ओअ अज्ञानोवाणा नियमथी होय छे.
ओअ वात सूत्रकादे 'मइ अन्नणीय सुयअन्नणी' आ सूत्रपाठ द्वारा समझावी
छे. 'णो मणोजोगी, णोवहजोगी' ओअ रीते तेओमा केवण ओअ स्पर्शन इन्द्रिय
होवाथी भने योगवाणा अने वचन योगवाणाहोता नथी परंतु 'काययोगी'
तेओ काययोगवाणा न होय छे. 'सागारोवउत्तावा अणागारोवउत्तावा' तेओ

અનાકારોપયોગયુક્તા વા ભવન્તીતિ 'તેસિં ણં મંતે ! જીવાણં સરીરા-
કઙ્કવણ્ણા' તેષાં સ્વસ્થ સ્વસ્થ પુચ્છા' યથોત્પલોદેશકે તથા સર્વત્ર પૃચ્છા-પ્રશ્નઃ, અયં
ભાવઃ-હે ભદન્ત ! તેષાં જીવાણાં શરીરાણિ કાલાદિવર્ણવન્તિ ભવન્તિ કિમ્
એવં ક્રમેણ વિશિષ્ટ્ય પશ્ચવર્ણવિષયે પ્રશ્નઃ કરણીય ઇતિ । મગવાનાહ-'ગોયમા'
ઇત્યાદિ, ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'જહા ઉપ્પલુદેસણ' યથા ઉત્પલોદેશકે વર્ણવિષયે
કથિતં તથૈવેહાપિ જ્ઞાતવ્યમ્, તથાહિ-તેષાં જીવાણાં શરીરાણિ પશ્ચવર્ણયુક્તાનિ
ભવન્તિ-પશ્ચવર્ણવન્તિ શ્વન્તિ દ્વિવિધગન્ધવન્તિ ભવન્તિ, અષ્ટપ્રકારકસ્પર્શવન્તિ
ભવન્તીતિ । તથા-'ઝસાસગા વા' તે જીવા ઉચ્છ્વાસવન્તો ભવન્તિ 'નીસાસગા વા'
તે જીવા નિઃશ્વાસવન્તોઽપિ ભવન્તિ 'નો ઝસાસનીસાસગાવા' તથા-ઉચ્છ્વાસ

સાકારોપયુક્ત ધી હોતે હિં ઓર અનાકારોપયુક્ત ધી હોતે હિં । 'તેસિં ણં
મંતે ! જીવાણં સરીરા કઙ્ક વણ્ણા' હે ભદન્ત ! હન જીવોં કે શરીર
કિતને વર્ણોં વાલે હોતે હિં ? ઉત્તર મેં પ્રમુશ્રી કહતે હિં -'જહા ઉપ્પલુદેસણ
સ્વસ્થ પુચ્છા' હે ગૌતમ ! હન જીવોં કે શરીર ઉત્પલોદેશક મેં કહે
ગયે અનુસાર કાલ આદિ વર્ણવાલે હોતે હિં । અર્થાત્ વહો પાંચ વર્ણોં કે
વિષય મેં ગૌતમસ્વામીને પ્રમુશ્રી સે પ્રશ્ન કિયા હૈ-તવ પ્રમુશ્રીને ગૌતમ
સે એસા હી કહા હૈ હે ગૌતમ ! ઉત્પલોદેશક મેં વર્ણ કે વિષય મેં જૈસા
કહા ગયા હૈ વૈસા હી યહાં પર ધી જાનના ચાહિયે । તથા ચ-અનકે
શરીર પાંચ વર્ણોં સે યુક્ત હોતે હિં । ઢો ગંધોવાલે હોતે હિં । આઠ પ્રકાર
કે સ્પર્શ વાલે હોતે હિં । તથા યે જીવ 'ઝસાસગા વા, નીસાગા વા'
ઉચ્છ્વાસ વાલે ધી હોતે હિં ઓર નિઃશ્વાસવાલે ધી હોતે હિં ઓર 'નો

સાકાર ઉપયોગવાળા પણ હોય છે. અને અનાકાર ઉપયોગવાળા પણ હોય છે.
'તેસિં ણં મંતે ! જીવાણં સરીરા કઙ્કવણ્ણા' હે ભગવન્ તે જીવોના શરીરો કેટલા-
વર્ણુવાળા હોય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રમુશ્રી કહે છે કે-'જહા ઉપ્પલુદેસણ
સ્વસ્થ પુચ્છા' હે ગૌતમ ! આ જીવોના શરીરો ઉત્પલોદેશકમાં કહેવામાં આવ્યા
પ્રમાણેકાળા વિગેરે વર્ણુવાળા હોય છે. અર્થાત્ ત્યાં પાંચ વર્ણુના સંબંધમાં
ગૌતમસ્વામીને પ્રમુશ્રીને પ્રશ્ન કરેલ છે, ત્યારે પ્રમુશ્રીએ ગૌતમસ્વામીને એવું જ કહ્યું
છે, કે હે ગૌતમ ! ઉત્પલ ઉદેશકમાં વર્ણુના સંબંધમાં જે પ્રમાણે કહેવામાં
આવેલ છે, એજ પ્રમાણે તું કથન અહિયાં પણ સમજવું. તથા-તેઓના
શરીરો પાંચ વર્ણુવાળા હોય છે, તથા તે જીવો 'ઝસાસગા વા, નીસાસગા વા,
ઉચ્છ્વાસવાળા પણ હોય છે, અને નિઃશ્વાસવાળા પણ હોય છે, 'નો ઝસાસ

निःश्वासवन्तः अपर्याप्तावस्थायां वा भवन्ति । 'आहारगा वा अणाहारगा वा' ते जीवा आहारका वा, भवन्ति तथा अनाहारका वा विग्रहमयापेक्षया भवन्ति । 'नो विरया' नो विरताः सर्वविरतिमंतो वा न भवन्ति । 'अविरया' अविरताः सर्वविरतिरहिता भवन्ति, 'नो विरयाविरया वा' नो विरताऽविरता वा देशविरता अपि न भवन्ति । 'सक्रिया' सक्रियाः क्रिया सहिता एव भवन्ति । 'नो अक्रिया' नो अक्रियाः क्रियारहिता न भवन्ति । 'सत्तविहवंधगा वा अट्टविहवंधगा वा' आयुर्वर्जानां सप्तविधकर्मणां बन्धका वा भवन्ति अष्टविधकर्मणां बन्धका वा भवन्ति । 'आहारसन्नो वउत्ता वा जाव परिग्गहसन्नोवउत्तावा' आहारसंज्ञोपयुक्ता वा भवन्ति यावत्परिग्रह-
 उसासनीसासगा वा' नो उच्छवास निःश्वासवाले भी होते हैं । हां अपर्याप्तावस्था में इन के उच्छवास निःश्वास नहीं होते हैं । इसलिये उस अवस्था में इनसे रहित होते हैं । अर्थात् उच्छ्वास निःश्वास से रहित होते हैं । 'आहारगा वा अणाहारगावा' ये जीव आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । यहां अनाहारकता विग्रह गतिकी अपेक्षा से कही गई है ऐसा जानना चाहिये । 'नो विरया' ये सर्व विरति सम्पन्न नहीं होते हैं । किन्तु 'अविरया' सर्व विरति से रहित ही होते हैं । इसी प्रकार से ये 'नो विरयाविरया' देशविरति से भी सहित नहीं होते हैं 'सक्रिया, नो अक्रिया' ये क्रियावाले ही होते हैं अक्रियावाले नहीं होते हैं । 'सत्तविह वंधगा वा अट्टविह वंधगा वा' आयु को छोड़कर शेष सानों कर्म प्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं और आठों कर्म प्रकृतियों के भी बन्धक होते हैं । 'आहारसन्नोवउत्ता

नीसासगावा' उच्छ्वास निःश्वास विनाना होता नथी केवल अपर्याप्त अवस्थां तेओने उच्छ्वास निःश्वास होता नथी. तेओ ये अवस्थां उच्छ्वास निःश्वास विनाना होय छे. 'आहारगा वा अणाहारगा वा' ते ओवे आहारक पणु होय छे अने अनाहारक पणु होय छे. अहियां अनाहारक पणु विग्रह गतिनी अपेक्षाथी कहेल छे. तेम समज्जु 'नो विरया' तेओ सर्व विरति वाणा होता नथी. परंतु 'अविरया' सर्व विरति विनाना होय छे. ओज्ज प्रभाणे 'नो विरयाविरया' तेओ देशविरतिवाणा पणु होता नथी. सक्रिया, नो अक्रिया' तेओ क्रियावाणा न होय छे, अक्रियावाणा होता नथी. 'सत्तविह वंधगा वा अट्टविह वंधगा वा' आयु कर्म प्रकृतिने छोडीने आडीनी साते कर्म प्रकृतियोने अंधकरवावाणा होय छे. अने आठे कर्म प्रकृतियोने अंध करवावाणा पणु होय छे. 'आहारसन्नोवउत्ता वा जाव परिग्गहसन्नोवउत्ता

संज्ञोपयुक्ता वा भवन्ति यावत्पदेन भयमैथुनसंज्ञयोः परिग्रहो भवति । 'कोहकसाई वा माणकसाई वा जाव लोभकसाई वा' क्रोधपायिनो वा मानकपायिनो वा यावत्लोभकपायिनो वा भवन्ति ते जीवाः यावत्पदेन मायाकषायस्य ग्रहणं भवतीति । 'नो इत्थिवेयगा नो पुरिसवेयगा' नो स्त्रीवेदका नो वा पुरुषवेदकास्ते जीवा भवन्ति किन्तु 'नपुंसगवेयगा' नपुंसकवेदकास्ते जीवा भवन्ति । 'इत्थिवेयबंधगा वा, पुरिसवेयबंधगा वा, नपुंसगवेयबंधगा वा' स्त्रीवेदबन्धका वा भवन्ति पुरुषवेदबन्धका वा भवन्ति नपुंसकवेदबन्धका वा भवन्ति स्वयं केवलं नपुंसकवेदबन्धः सन्तोऽपि बन्धकारतु त्रयाणामपि वेदानां भवन्तीति भावः 'नो सन्नी' नो संज्ञिनः अपितु 'असन्नी' असंज्ञिनस्य जीवा भवन्ति । 'सइंदिया' सेन्द्रियाः स्वर्शने-

वा जाव परिग्रहसन्तोऽप्युक्ता वा' ये आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रह संज्ञोपयुक्त होते हैं । यावत्पद से 'भयसंज्ञा' और 'मैथुन संज्ञा' इन दो संज्ञाओं का ग्रहण हुआ है । ये 'कोहकसाई वा माणकसाई वा जाव लोभकसाई वा' क्रोध कषायवाले भी होते हैं, मानकषायवाले भी होते हैं मायाकषायवाले भी होते हैं । 'नो इत्थिवेयगा, नो पुरिसवेयगा' ये स्त्रीवेदवाले और पुरुषवेदवाले नहीं होते हैं किन्तु 'नपुंसगवेयगा' एक नपुंसकवेदवाले ही होते हैं । 'इत्थिवेयबंधगा वा पुरिसवेयबंधगा वा नपुंसगवेयबंधगा वा' ये स्त्रीवेद के बन्धक भी होते हैं, पुरुष वेद के भी बंधक होते हैं और नपुंसकवेद के भी बंधक होते हैं, यद्यपि ये स्वयं एक नपुंसक वेदवाले ही होते हैं परन्तु फिर भी बन्धक तीनों वेदों के होते हैं । 'नो सन्नी' ये संज्ञी नहीं होते हैं । किन्तु

वा' तेऽपि अहार संज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रह संज्ञोपयुक्त डोय छे. अडियां यावत् पदथी "अय संज्ञा अने मैथुन संज्ञा आ जे संज्ञाऽपि अडिषु करार छे. 'कोहकसाई वा माणकसाई वा जाव लोभकसाई वा' तेऽपि क्रोधकषायवाणा पणु डोय छे, मानकषायवाणा पणु डोय छे, मायाकषायवाणा पणु डोय छे. अने यावत् लोभकषायवाणा पणु डोय छे. 'नो इत्थिवेयगा, नो पुरिसवेयगा' तेऽपि स्त्री वेदवाणा अथवा पुरुषवेदवाणा डे ता नथी. परंतु 'नपुंसगवेदगा' अेक नपुंसकवेदवाणा अडोय छे. 'इत्थिवेयबंधगा पुरिसवेयबंधगा वा' नपुंसगवेदबंधगा वा' तेऽपि स्त्री वेदने अंध करवावाणा पणु डोय छे, पुरुषवेदने अंध करवावाणा पणु डोय छे. अने नपुंसक वेदने अंध करवावाणा पणु डोय छे. जे के आ स्वयं अेक नपुंसक वेदवाणा अडोय छे. परंतु तेऽपि त्रिषु वेदने अंध करवावाणा डोय छे. 'नो सन्नी' तेऽपि संज्ञी डोता नथी. परंतु 'असन्नी' असंज्ञी अडोय छे. 'सइंदिया, नो अणिंदिया' तेऽपि स्पर्शन अन्द्रियो सदित अडोय छे. अन्द्रियो सदित डोता नथी.

न्द्रियवन्तो भवन्ति 'नो अग्निदियाः—इन्द्रियरहित न भवन्ति । 'ते णं भंते ! कडजुम्म एग्निदिया कालओ केवलच्चिरं होति' ते खलु भदन्त ! कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? इति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'जहन्नेणं एककं समयं' जघन्येनैकं समयम् 'उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंता उस्सर्पिणी ओसर्पिणीओ' उत्कर्षेणानन्तं कालरुनन्ता उत्सर्पिण्यवसर्पिण्यः 'वणस्सइकाइयकालो' वनस्पतिकायिककालः । 'संवेहो न भण्णइ' अत्र संवेधो न भण्यते उत्पल्लोद्देशके उत्पल्लजीवस्योत्पादो विवक्षितः तत्र च पृथिवीकायिकादिका-यान्तरापेक्षया कायसंवेधः संभवति इह तु एकेन्द्रियाणां कृतयुगमकृतयुगम विशेषा-

'असन्नी' असन्नी ही होते हैं । 'सइंदिया नो अग्निदिया' ये ऐन्द्रिय स्पर्शन इन्द्रिय सहित ही होते हैं, इन्द्रिय रहित नहीं होता है ।

'ते णं भंते ! कडजुम्मकडजुम्म एग्निदिया कालओ केवलच्चिरं होति' हे भदन्त ! ये कृतयुगम कृतयुगम राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीव काल की अपेक्षा से कब तक रहते हैं ! उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं !—'गोयमा जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं' हे गौतम ! ये जघन्य से तो एक समय तक रहते हैं और उत्कृष्ट से अनन्तकाल तक रहते हैं । इस अनन्तकाल में अनन्त उत्सर्पिणी और अनन्त अवसर्पिणी समाजाती है । ऐसा यह कथन 'वणस्सइकाइय कालो' वनस्पति कायिक के काल की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये । 'संवेहो न भण्णइ' यहां संवेध नहीं कहना है । क्योंकि उत्पल्ल उद्देशक में उत्पल्ल के जीव का उत्पाद विवक्षित हुआ है और वह उत्पल्ल जीव पृथिवी आदि अन्यकायिक में उत्पन्न होकर फिर से वही उत्पन्न हो जाते हैं

'ते ण भंते ! कडजुम्मएग्निदिया कालओ केवलच्चिरं होती' हे भगवन् आ कृतयुगम कृतयुगमराशि प्रमित ऐक एन्द्रियवाणा एवो कालणी अपेक्षाथी कयां सुधी रडे छे ? आ प्रश्नता उत्तरमा प्रभुश्री कडे छे डे—'गोयमा ! जहन्नेणं एकक समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं' हे गौतम ! आ जघन्यथी तो ऐक समय सुधी रडे छे, अने उत्कृष्टथी अनंतकाल सुधी रडे छे आ अनंतकालमा अनंत उत्सर्पिणी अने अनंत अवसर्पिणी समाध नय छे. ये प्रमाणेतु आ कथन 'वणस्सइकाइय कालो' वनस्पतिकायिकना कालणी अपेक्षाथी कल्याणु नल्लु लोछे 'संवेहो न भण्णइ' अडियां संवेध कडेवानो नथी. डेम डे—उत्पल्ल उद्देशमां एवने उत्पाद विवक्षित थयेद छे, अने ते उत्पल्ल एव पृथ्वी विगेरे अन्य कायिकेमां उत्पन्न थधने इरिथी त्यां न उत्पन्न थध नय छे. तेथी त्या कायसंवेध अनी नय छे. परंतु अडियां कृतयुगम कृतयुगमराशि

णामुत्पादोऽधिकृतः ते चैकेन्द्रिया वस्तुतोऽनन्ता एवोत्पद्यन्ते तेषां चोद्भूतेर
संभवात् कायसंबंधो न संभवति । यश्च षोडशादीना मेकेन्द्रियेषूपपातः कथितः
स च त्रसकायिकेभ्यो ये एकेन्द्रियेषूपपद्यन्ते तदपेक्ष एव, न पुनः पारमार्थिकः
अनन्तानां प्रतिसमयं तेषूपपादादिति । 'आहारो जहा उत्पल्लुद्देशए' कृतयुग्म
कृतयुग्मेकेन्द्रियाणामाहारो यथा उत्पलोद्देशके कथितस्तथैवात्रापि ज्ञातव्यः ।
'नवरं निव्वाघाएणं छद्दिसि' नवरं केवलम् उत्पलोद्देशकापेक्षया इदं वैलक्षण्यं
यत् निर्व्याघातेन यदि कश्चित्प्रतिबन्धको न भवेत् तदा पद्ददिशम् पद्ददिग्भ्य
आहारग्रहणं कुर्वन्तीति । 'वाघायं पडुच्च सिय तिदिस्सि' व्याघातं प्रतीत्य स्यात्

इसलिये वहां काय संबंध बनजाता है पर यहां कृतयुग्मकृतयुग्म राशि-
प्रमित एकेन्द्रियोंका उत्पाद अधिकृत है । ये एकेन्द्रिय वस्तुतः अनन्त
रूप से उत्पन्न होते हैं और ये फिर से निकल कर पुनः वहीं पर उत्पन्न
होवे तो इनका काय संबंध बन सकता है पर इनका वहां से निकलना
असंभव है अतः कायसंबंध नहीं बनता है षोडश राशिप्रमित
जीवों का जो एकेन्द्रिय जीवों में उत्पात कहा गया है वह जो
त्रसकायिक से आकर के वहां उत्पन्न होते हैं उस अपेक्षा से
कहा गया है । पर वह वास्तविक उत्पाद नहीं कारण कि एकेन्द्रियों में
अनन्त जीवों का उत्पाद होता है । 'आहारो जहा उत्पल्लुद्देशए' कृत
युग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियों का आहार जैसा उत्पल उद्देशक में कहा गया
है वैसा ही यहां पर भी जानना चाहिये 'नवरं निव्वाघाएणं छद्दिसि'
परन्तु वहां की अपेक्षा यहां केवल इतनी सी विशेषता है कि यदि
कोई प्रतिबन्ध नहीं होता है तो ये छहों दिशाओं से आहार ग्रहण

प्रमित एकेन्द्रियोना उपपातनो अधिकार कहेल छे. आ एकेन्द्रियो
वस्तुतः अनंतपण्णथी उत्पन्न थाय छे. अने ते इरिथी त्यांथी नीकणीने
इरीथी त्यां ज उत्पन्न थाय तो तेओनो कायसवेध णनी शके छे. परंतु
त्यांथी तेओनुं नीकणवुं असंभव थाय छे. तेथी कायसवेध णनतो
नथी. सोणराशी प्रमित एवोनो वे एकेन्द्रिय एवोमां उत्पात कहेल छे, ते
त्रसकायिकथी आनीने त्यां उत्पन्न थाय छे ते अपेक्षाथी कहेल छे परंतु ते
वास्तविक उत्पात नथी कारण के-एकेन्द्रियोमां अनंत एवोनो उत्पाद थाय छे.
'आहारो जहा उत्पल्लुद्देशए' कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियोनो आहार वे प्रमाणे
उत्पल उद्देशमां कहेल छे, एज प्रमाणे अडियां पणु समणवो लोधे.
'नवरं निव्वाघाएणं छद्दिसि' परंतु त्यांना कथन करतां अडियां डेवण एट्ठुं
ज विशेषपणुं छे के-जे कोठ प्रतिबंध न डोय तो आ छे दिशाओमांथी

કદાચિત્ ત્રિદિશમ્ 'સિય ચડદિસિ' સ્યાત્ કદાચિત્ ચતુર્દિશમ્ 'સિય પંચદિસિ' સ્યાત્ કદાચિત્ પશ્ચદિશમ્ 'સેસં તદેવ' શેપમ્ एतद् व्यतिरिक्तं सर्वं तथैव उत्पल्लोद्देशकवदेव ज्ञातव्यम् इति । ठिई जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं' स्थितिर्जघन्येनान्त-
 મુહૂર્તે તેવામેકેન્દ્રિયાગામુ 'ઉવકોસેણં વાવીસ વાસમહસ્સાહ' ઉત્કૃષ્ટેણ દ્વાવિ-
 શતિવર્ષસહસ્રાણિ । 'સમુગ્ધાયા આદિલ્લા ચત્તારિ' સમુદ્ઘાતા આઘાશ્ચત્વારઃ
 વેદનાકપાયમારણાન્તિકૃત્વૈક્રિયાભ્યાઃ । 'મારણાંતિયસમુગ્ધાણં સમોહયા વિ
 મરંતિ અસમોહયા વિ મરંતિ' તે કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મૈકેન્દ્રિયજીવા મારણાન્તિક સમુ-
 દ્ઘાતેન સમવહતા અપિ મ્રિયન્તે અસમવહતા અપિ મ્રિયન્તે । 'ઉવ્વટ્ટુણા જહા

करते हैं 'वाघायं पडुच्च सिय तिदिसि' और यदि प्रतिबन्ध होता है तो ये कदाचित् तीन दिशाओं से 'सिय चडदिसि' कदाचित् चार दिशाओं से 'सिय पंचदिसि' कदाचित् पांच दिशाओं से आहार ग्रहण करते हैं । 'सेसं तदेव' बाकी का और सब कथन उत्पल उद्देशक के जैसा ही है । 'ठिई जहन्नेणं अंतो मुहुत्तं' उक्कोसेण वावीसं वासमहस्साह' इनकी स्थिति जघन्य से अन्तमुहूर्त की होनी है और उत्कृष्ट से २२ हजार वर्ष की होती है । 'समुग्घाया आदिल्ला चत्तारि समुद्घात इनके आदि के चार होते हैं—वेदनासमुद्घात, कपायसमुद्घात, मारणान्तिकसमुद्घात और वैक्रियसमुद्घात 'मारणांतिय समुग्घाणं समोहया वि मरंति असमोहया वि मरंति' ये मारणान्तिकसमुद्घात कर के भी मरते हैं और विना मारणान्तिक समुद्घात के भी मरते हैं 'उव्वट्टुणा जहा उपपल्लुद्देसए' इन कृतयुगमकृतयुगम एकेन्द्रिय जीवों की उद्धर्तना उत्पल उद्देशक में कही गई के अनुसार ही जाननी चाहिये ।

આહાર ગ્રહણ કરે છે. 'વાઘાયં પડુચ્ચ સિય તિદિસિ' અને બે પ્રતિબન્ધ હોય તો તેઓ કદાચિત્ ત્રણ દિશાઓમાંથી સિય ચડદિસિ' કે.ઇ.વાર ચાર દિશાઓથી 'સિય પંચદિસિ' કે.ઇ.વાર પાંચ દિશાઓમાંથી આહાર ગ્રહણ કરે છે 'સેસં તદેવ' બાકીનું બીજુ તમામ કથન ઉત્પલ ઉદ્દેશામાં કહ્યા પ્રમાણે જ છે 'ઠિઈ જહન્નેણં અંતોમુહૂત્તં' ઉક્કોસેણં વાવીસં વાસમહસ્સાહ' તેઓની સ્થિતિ જઘન્યથી એક અંતમુહૂર્તની હોય છે અને ઉત્કૃષ્ટથી ૨૨ બાવીસ હજારવર્ષની હોય છે 'સમુગ્ધાયા આદિલ્લા ચત્તારિ' તેઓને આદિના ચાર સમુદ્ઘાતો હોય છે તે આ પ્રમાણે છે. વેદના સમુદ્ઘાત કપાય સમુદ્ઘાત મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, અને વૈક્રિય સમુદ્ઘાત 'મારણાંતિયસમુગ્ધાણં' સમોહયા વિ મરંતિ અસમોહયા વિ મરંતિ' તેઓ મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરીને પણ મરે છે અને મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કર્યા વિના પણ મરે છે. ઉવ્વટ્ટુણા જહા ઉપપલ્લુદ્દેસए' આ કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશીવાળા એકેન્દ્રિય જીવોની ઉદ્ધર્તના ઉત્પલ ઉદ્દેશામાં કહેલ છે, તે પ્રમાણે સમજવી.

ઉપલોદેસ' એવામેકેન્દ્રિય જીવાનાસુદર્શના યથા ઉત્પલોદેશકે કથિતા તથૈવ જ્ઞાતવ્યા । 'અહ ણં મંતે ! સવ્વપાણા જાવ સવ્વ સત્તા કલ્હુમ્મ કલ્હુમ્મ ઇગ્ગિદિય- ત્તાએ ઉવવન્નપુવ્વા' અથ સ્વલ્લ મદન્ત ! સર્વે પ્રાણાઃ સર્વેભૂતાઃ સર્વેજીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ કિં ક્કુનયુગ્મક્રુત્તમ્મૈકેન્દ્રિયસ્વરુપેણ ઉત્પન્નપૂર્વા.પૂર્વે સમુત્પન્નાઃ કિમિતિ પ્રશ્નઃ મગવ્વાનાહ—'હંતા' ઇત્યાદિ, 'હંતા ગોયમા !' હવ ગૌતમ ! પૂર્વે સમુત્પન્નાઃ તે પુનરેકશરં નેત્યાહ—'અસહં અદુશ અણંતસુત્તો' અસક્રુત્ અનેકશરમ્ એતાવ્વદેવ ન અપિતુ અનન્તક્રુત્વાઃ અનન્તવારં પૂર્વે તે તત્ત સમુત્પન્ના આસન્ન ઇતિ ॥સૂ૦ ૨॥

ઇતિ ષોડશ મહાયુગ્મેષુ ક્રુતયુગ્મ ક્રુતયુગ્મૈકેન્દ્રિયાણાં પ્રથમપદાયુગ્મવક્તવ્યતા સમાપ્તા ॥૧॥

'અહ ણં મંતે ! સવ્વપાણા, જાવ સવ્વસત્તા કલ્હુમ્મકલ્હુમ્મ ઇગ્ગિદિયત્તાએ ઉવવન્નપુવ્વા' હે મદન્ત ! સમસ્ત પ્રાણ યાવત્ સમસ્ત સત્ત્વ કયા પહિલે ક્કુનયુગ્મ ક્કુનયુગ્મ એકેન્દ્રિય રુપ સે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈ ? યહાં યાવત્ પદસે સમસ્ત મૂત્ત ઓર સમસ્ત જીવ હન પદોકા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ઉત્તરમે પ્રભુશ્રી કહતે હૈ—'હંતા ગોયમા' હાં ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણ સમસ્ત મૂત્ત સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ પહિલે ક્કુનયુગ્મ ક્કુનયુગ્મ રાશિ- પ્રમિત એકેન્દ્રિય જીવોં કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈ । 'અસહં અદુશ અણંતસુત્તો' કે વહાં એક હી વાર ઉત્પન્ન હુએ હોં સો વાત નહોં કિન્તુ અનેક વાર ઓર અનન્તવાર વહાં કે ઉત્પન્ન હુએ હૈ ॥સૂ૦ ૨॥

ક્કુનયુગ્મ ક્કુનયુગ્મ એકેન્દ્રિય જીવોંકી મહાયુગ્મ વક્તવ્યતા સમાપ્ત ॥

'અહ ણં મંતે ! સવ્વપાણા, જાવ સવ્વસત્તા કલ્હુમ્મકલ્હુમ્મ ઇગ્ગિદિયત્તાએ ઉવવન્નપુવ્વા' હે ભગવન્ સઘણા પ્રાણિયો યાવત્ સઘણા સત્ત્વો શું પહેલાં ક્રુતયુગ્મ ક્રુતયુગ્મ એકેન્દ્રિય પશ્ચાત્થી ઉત્પન્ન થઈ ચૂકયા છે ? અહિયાં યાવત્ પદથી 'સઘણા ભવો અને સઘણા ભૂનો' આ પદો અહુચ્ચ કરાયા છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે—'હંતા ગોયમા ! હા ગૌતમ ! સઘણા પ્રણો સઘણા ભવો, સઘણ ભૂનો અને સઘણા સત્ત્વો પહેલાં ક્રુતયુગ્મ ક્રુતયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય ભવોની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થઈ ચૂકયાં છે 'અસહં અદુશ અણંતસુત્તો' તેઓ ત્યાં એક જ વાર ઉત્પન્ન થયા હોય એવી વાત નથી પરંતુ અનેક વાર અને અનંતવાર તેઓ ત્યાં ઉત્પન્ન થયા છે. ॥સૂ૦૨॥

ક્રુતયુગ્મ ક્રુતયુગ્મ એકેન્દ્રિય ભવોનું મહાયુગ્મ કથન સમાપ્ત

अथ शेष पञ्चदशभेदानाह—'कडजुम्मतेओग' इत्यादि

मूळम्—कडजुम्मतेओगएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति उववाओ तहेव । तेणं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा, गोयमा ! एगूणवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं जहा कडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो २ । कडजुम्म दावरजुम्मएगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? उववाओ तहेव । ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं० पुच्छा, गोयमा ! अट्टारस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ३ । कडजुम्म कलियोग एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति उववाओ तहेव । परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ४ । तेओग कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? उववाओ तहेव । परिमाणं वारस वा, संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ५ । तेओग तेओग एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति, उववाओ तहेव । परिमाणं पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा । सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ६ । एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ । नवरं परिमाणं णाणत्तं तेओगदावरजुम्मेसु परिमाणं चोदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति ७ । तेओग कलिओगेसु तेरस वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति ८ । दावरजुम्म कडजुम्मेसु अट्ट वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति ९ । दावरजुम्म तेओगेसु एकारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १० । दावर-

जुम्म दावरजुम्मेसु दसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति ११ । दावरजुम्म कलिओगेसु नव वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १२ । कलिओग कड-जुम्मेसु चत्तारि वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १३ । कलिओग तेओगेसु सत्त वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १४ । कलिओग दावरजुम्मेसु छवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १५ । कलिओगकलिओगे एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? उववाओ तहेव । परिमाणं पंच वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति १६ । सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० ३॥

पणतीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥३५-१॥

छाया-कृतयुग्मत्र्योजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते उपपातस्तथैव ते खलु भदन्त ! जीवा एकसमयेन पृच्छा० गौतम ! एकोनविंशति वा संख्येया वा असंख्येया वा, अनन्ता वा उत्पद्यन्ते शेषं यथा कृतयुग्मकृतयुग्मानां यावदनन्त कृत्वः २ । कृतयुग्म द्वापरयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते उपपातस्तथैव । ते खलु भदन्त ! जीवा एकसमयेन पृच्छा, गौतम ! अष्टादश वा, संख्येया वा, असंख्येया वा, अनन्ता वा, उत्पद्यन्ते शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः ३ कृतयुग्म कलयोजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? उपपातस्तथैव । परिमाणं सप्तदशवा संख्येया वा, असंख्येया वा, अनन्ता वोत्पद्यन्ते । शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः ४ । त्र्योज कृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? उपपातस्तथैव । परिमाणं द्वादशवा, संख्येया वा, असंख्येया वा अनन्ता वोत्पद्यन्ते' शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः ५ त्र्योजत्र्योजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते उपपातस्तथैव परिमाणं पञ्चदशवा-संख्येया वा, असंख्येया वा, अनन्ता वा, शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः ६ । एवमेतेषु षोडशसु महायुग्मेषु एको गमकः । नवरं परिमाणे नानात्वम्-त्र्योजद्वापरयुग्मेषु परिमाणं चतुर्दश वा, संख्येया वा असंख्येया वा, अनन्तावोत्पद्यन्ते ७ । त्र्योजकलयोजेषु त्रयोदश वा, संख्येया वा असंख्येया वा,

अनन्ता वोत्पद्यन्ते ८ द्वापरयुगकृतयुगेषु अष्टौ वा-संख्येया वा, असंख्येया वा,
अनन्तावोत्पद्यन्ते ९ द्वापरयुग त्रयोजेषु एकादश वा, संख्येया वा, असंख्येया वा,
अनन्तावोत्पद्यन्ते १० द्वापरयुग द्वापरयुगेषु दश वा संख्येया वा, असंख्येया वा
अनन्तावोत्पद्यन्ते ११ द्वापरयुगकलयोजेषु नव वा, संख्येया वा, असंख्येया
वा अनन्तावोत्पद्यन्ते १२ कलयोज कृतयुगेषु चत्वारो वा, संख्येया वा, असंख्येया
वा, अनन्तावोत्पद्यन्ते १३ कलयोजत्रयोजेषु सप्त वा, संख्येया वा, असंख्येया
वा, अनन्तावोत्पद्यन्ते १४ । कलयोज द्वापरयुगेषु पञ्च वा संख्येया वा, असंख्येया वा
अनन्तावोत्पद्यन्ते १५ कलयोजकलयोजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ?
उपपातस्तथैव । परिमाणं पञ्च वा, संख्येया वा, असंख्येया वा, अनन्तावोत्पद्यन्ते
१६ शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥ सू० ३ ॥

‘पञ्चत्रिंशत्तमे शतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥ ३५ ॥ १

टीका—‘कडजुम्भतेओग एगिंदियाणं भंते । कओ उववज्जंति’ कृतयुग
त्रयोजैकेन्द्रियजीवाः खलु भदन्त ! कुतः—कस्मात्स्थानविशेषादागत्य समुत्प-
द्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य समुत्पद्यन्ते तिर्यग्भ्यो वा आगत्य मनुष्येभ्यो वा
आगत्य देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘उववाओ’
इत्यादि, ‘उववाओ तद्देव’ उपपातः कृतयुग त्रयोजैकेन्द्रियाणां तथैव यथा कृतयुग-

पन्द्रह भेदो का कथन

‘कडजुम्भ तेओग एगिंदियाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—‘कडजुम्भ तेओग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे
भदन्त कृतयुग त्रयोजराशि प्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष
से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न
होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा
मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकरके
उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘उववाओ तद्देव

पंढर लेटोनु’ कथन

‘कडजुम्भतेओगएगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ कृतयुग, त्रयो-
राशीवाणां एकेन्द्रिय जीवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्भ्योनिके-
मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय
छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री
गौतमस्वामीने कडे छे के—‘उववाओ तद्देव’ छे गौतम ! आ कृतयुग त्रयो-

कृतयुगमैकेन्द्रियाणां कथितः तिर्यग्भ्यो वा आगत्य मनुष्येभ्यो वा आगत्य समु-
त्पद्यन्ते इति । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा' ते खलु भदन्त ! जीवा
कृतयुगमत्रयोजैकेन्द्रिया एकसमयेन कियन्त उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः पृच्छया संगृ-
ह्यते । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'एगूणवीसा वा'
एकोनविंशतिर्वा 'संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंतावा उववज्जंति' संख्याता वा
असंख्याता वा अनन्ता वा कृतयुगमत्रयोजैकेन्द्रिया एकसमयेन समुत्पद्यन्ते इति ।
'सेसं जहा कडजुम्मकडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो' शेषं यथा कृतयुगम कृतयुग्मानां

'हे गौतम ! इन कृतयुगम त्रयोज राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीवों का उत्पाद
जैसा कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रियों का कहा गया है वैसा ही
जानना चाहिये । अर्थात् ये तिर्यग्घोनिकों में से आकरके भी उत्पन्न
होते हैं, मनुष्यों में से भी आकरके उत्पन्न होते हैं और देवों में से
भी आकर के उत्पन्न होते हैं । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं
पुच्छा' हे भदन्त ! ये कृतयुगम त्रयोज प्रमित एकेन्द्रिय जीव एकसमय
में कितने उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभु कहते हैं—'गोयमा' एगूण
वीसा वा, संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति' हे
गौतम ! ये एक समय में १९ तक उत्पन्न होते हैं अथवा संख्यात,
असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं । 'सेसं जहा कडजुम्म कड-
जुम्माणं जाव अणंतखुत्तो' इनके सम्बन्ध में ओर सब कथन जैसाकि
अभी अभी कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों के प्रकरण
में कहा जा चुका है वैसा ही सब कथन यावत् अनन्तवार वे वहां
उत्पन्न हुए हैं यहाँ तक कह लेना चाहिये ।

राशीवाणा अेकधन्द्रियाणा लुवेना उपपात, कृतयुगमराशिवाणा अेकेन्द्रियोना
ले रीते उपपात कडेले छे, अेज प्रमाणे समजवे। अर्थात् तेअो तिय"योमांथी
आवीने पणु उत्पन्न थाय छे ? मनुष्ये मांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे ?
अने देवोमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे. 'तेणं भंते ! जीवा एगसमएणं
पुच्छा' हे भगवन आ कृतयुगम, त्रयोण राशिवाणा अेकेन्द्रिय लुवे अेकसम
यमां केटलां थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे
हे—'गोयमा ! एगूणवीसा वा, संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, अणंतावा उववज्जंति'
हे गौतम ! तेअो अेक समयमां १९ अेगण्णीस सुधी उत्पन्न थाय छे. अथवा
संख्यात असंख्यात अथवा अनंत उत्पन्न थाय छे ? 'सेसं जहा कडजुम्म
कडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो' आना संअंधमां आकीनुं सधणुं कथन हमांणुं
कृतयुगम, कृतयुगम राशिवाणा अेकेन्द्रिय लुवेना प्रकरणमां करवामां आवेद
छे, अेज प्रमाणेनुं तमां कथन यावत् अनंतवार तेअो त्यां उत्पन्न थाय छे,

कथितं तथैव यावत् अनन्तकृत्व इति २ । 'कडजुम्म दावरजुम्म एगिदिद्याण भते ! कभोहिंतो उववज्जंति' कृतयुग्म द्वापरयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य इत्यादि प्रश्नः, उत्तरमाह—'उववाभो तहेव' उपपातस्तथैव—पूर्व कथितप्रकारेणैव । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा' ते खलु भदन्त ! कृतयुग्मद्वापरयुग्मैकेन्द्रियजीवा एकसमयेन क्रियन्त उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह—'गोयमा' हे गौतम ! 'अट्टारस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति' अष्टादश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, अनन्ता-

'कडजुम्म दावरजुम्म एगिदिद्याणं भंते ! कभोहिंतो उववज्जंति' हे भदन्त ! कृतयुग्म द्वापरयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रियजीव किस स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री गौतमस्वामी स्ने कहते हैं—'उववाभो तहेव हे गौतम ! इस सम्बन्ध में समस्त कथन पूर्व में जैसा कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं पुच्छा' हे भदन्त ये कृतयुग्म द्वापरयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव एक समयमें कितने उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! अट्टारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' हे गौतम ! एक समय में १८ उत्पन्न होते हैं' अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं 'सैसं तहेव जाय अणंतखुत्तो' अचशिष्ट और

त्या सुधी कही देवु नेधये 'कडजुम्म दावरजुम्म एगिदिद्याण भते ! कभोहिंतो उववज्जंति' हे भगवन् कृतयुग्मद्वापरयुग्म राशिवाणा ऐकेन्द्रिय एवे कथा स्थान विशेषणी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेयो नैरयिकेभ्य आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्योनिकेभ्य आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येभ्य आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेभ्य आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री कहे छे के—उववाभो तहेव' हे गौतम ! आ विषयमां समष्टु कथन पडेलां ने प्रभावे कडेवामां आवेल छे, ऐव प्रभावेणुं समष्टु. 'ते णं भंते जीवा एगसमएणं पुच्छा' हे भगवन् आ कृतयुग्म द्वापरयुग्म राशिवाणा ऐकेन्द्रिय एवे ऐक समयमा केटला उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमा प्रभुश्री गौतम स्वामीने कहे छे के—'गोयमा ! अट्टारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' हे गौतम ! तेयो ऐक समयमां १८ अट्टार उत्पन्न थाय छे, अथवा संख्यात अथवा असंख्यात

वोत्पद्यन्ते इति ३ । 'कडजुम्म कलिओग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृतयुग कल्याणैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत्र उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरयति- 'उववाओ तहेव' उपपातः पूर्ववदेव 'परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' परिमाणद्वारे जघन्यतः सप्तदश वा संख्याता वा असंख्याता वा अनन्ता वा उत्पद्यन्ते 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो' शेषं समये समये अपहरणादिकं सर्वं यावत् अनन्तकृत्व एतत्पर्यन्तं तथैव कृतयुग कृतयुगैकेन्द्रियप्रकरणवदेव ४ । 'तेओग कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' ष्योज

सब कथन यावत् 'वे वहां अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं 'यहां तक का यहां पर कह लेना चाहिये । 'कडजुम्म कलिओग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! कृतयुग कलयोज एकेन्द्रिय किस स्थान से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरिधिकों में से तिर्यग्योनिकों में से मनुष्यों में से अधवा देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री गौतमस्वामी से कहते हैं 'उववाओ तहेव' इनका उपपात पहले जैसा ही समझना चाहिये 'परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' परिमाण में वे जघन्य से सत्रह १७ उत्पन्न होते हैं संख्याता असंख्याता अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो अवशिष्ट सष कथन वे कृतयुग कलयोज एकेन्द्रियपने से अनन्त वार उत्पन्न हो चुके हैं, यहां तक यहां पर कहना चाहिए ॥४॥

'तेओग कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' हे

अथवा अनंत उत्पन्न थाय छे. 'सेसं तहेव अणंतखुत्तो' णाडीनु तमाम कथन यावत् तेओ त्यां अनंतवार उत्पन्न थर्ध युक्था छे, आ कथन सुधीनु' अडियां कडेवुं लेधओ.

'कडजुम्म कलिओग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भगवन् कृतयुग कल्याणैकेन्द्रियो कथा स्थानेथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरिधिकोमांथी आवीने अथवा तिर्यग्योनिकोमांथी अथवा मनुष्योमांथी अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के- 'उववाओ तहेव' तेमने उपपात पडेलां दह्या प्रमाणे न छे. 'परिमाणं सत्तरसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' परिमाणे तेमनु जघन्यथी १७ सत्तर सुधी उत्पन्न थाय छे. अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनंत उत्पन्न थाय छे 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो' अ डीनुं तमाम कथन तेओ कृतयुग कल्याणैकेन्द्रिय पण्थाथी अनेकवार उत्पन्न थर्ध युक्थे छे आ कथन सुधी अडियां कडी लेवुं लेधओ. ॥४॥

'तेओग कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' हे भगवन्

कृतयुग्मकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यः इत्यादि पूर्वव-
देव प्रश्नः, उत्तरमाह—‘उववाओ तहेव’ उपपात एतेषां तथैव पूर्वोक्तवदेव ज्ञातव्यः
‘परिमाणं वारस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति’
त्रयोजकृतयुग्मकेन्द्रियाणां परिमाणं द्वादश वा संख्याता वा असंख्याता वा,
अनन्तावोत्पद्यन्ते । ‘सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो’ शेषं परिमाणातिरिक्त सर्व
तथैव यावत् अनन्तकृत्वः ५ । ‘तेओगतेओग एगिंदियाणं भंते । कओहिंतो
उववज्जंति’ त्रयोजत्रयोजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यः

भदन्त । त्रयोज कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव इत्य स्थान विशेष
से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न
होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा
मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न होते ? अथवा देवों में से आकरके
उत्पन्न होते हैं ? इसके उत्तर में प्रभुश्री कहने हैं—‘उववाओ तहेव’ हे
गौतम ! इनका उपपाद पूर्व के जैसे ही जानना चाहिये । ‘परिमाणं
वारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति’ ये त्रयोज
कृतयुग्म रूप एकेन्द्रिय जीव एक समय में १२ अथवा संख्यात अथवा
असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं । ‘सेसं तहेव जाव अणंत
खुत्तो’ परिमाण कथन से अतिरिक्त और सब कथन ‘वे अनन्तवार
उत्पन्न हो चुके हैं’ यहां तकका यहां पर कह लेना चाहिये । ‘तेओग
तेओग एगिंदियाणं भंते । कओहिंतो उववज्जंति’ हे भदन्त ! त्रयोज

त्रयोज कृतयुग्म राशिवाणा एकेन्द्रिय एवो कया स्थान विशेषथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
तिर्यग्येनिकेभांथी आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येभांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ
प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वाभीने कहे छे उ—‘उववाओ तहेव’ हे गौतम !
तेओने उपात पडेला कहा प्रमाणे समजये। ‘परिमाणं वारस वा संखेज्जा
वा, असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति’ आ त्रयोज कृतयुग्म रूप एके
न्द्रियवाणा एवो एक समयमां १२ वार अथवा संख्यात अथवा असंख्यात
अथवा अनंत उत्पन्न थाय छे. ‘सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो’ परिमाणना कथन
शिवायनुं भाडीनुं सधणुं कथन “तेओ अनंतवार उत्पन्न थधं यूकया छे,”
आटला सुधीनुं कथन अडियां कहेबुं जेधंजे ‘तेओग तेओग एगिंदियाणं भंते !
कओहिंतो उववज्जंति’ हे भगवन् त्रयोज त्रयोज एकेन्द्रिय एवो कया स्थान

इत्यादि रूपेण प्रश्नः, उत्तरमाह—‘उववाओ तहेव’ उपपातस्तथैव यथा—कृतयुग्म-
कृतयुग्मप्रकरणे कथितः । ‘परिमाणं पन्नरस वा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा,
अणंता वा’ परिमाणं त्र्योज त्र्योजैकेन्द्रियाणां पञ्चदश वा, संख्याता वा, असं-
ख्याता वा, अनन्ता वेत्ति । ‘सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो’ शेषं परिमाणातिरिक्तं
तथैव यावत् अनन्तकृत्यः ६ । ‘एवं एएसु सोलससु महाजुम्भेसु एको गमओ’

त्र्योज एकेन्द्रिय जीव किस स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ?
क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों
में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न
होने हैं ? अथवा देवों में आकरके उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री
कहते हैं—‘उववाओ तहेव’ हे गौतम । इनके उपपाद के सम्बन्ध में कथन
पूर्वके जैसाही जानना चाहिये । अर्थात् जैसा कथन कृतयुग्म कृतयुग्म
एकेन्द्रिय जीवों के प्रकरण में किया गया है वैसा ही यहाँ पर समझना
चाहिये । ‘परिमाणं पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा’
त्र्योज त्र्योज एकेन्द्रिय जीवों का एकसमय में उत्पन्न होने का परि-
माण १५ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त जानना
चाहिये । ‘सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो’ इस परिमाण कथन के अति-
रिक्त और सब कथन ‘वे अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं’ यहाँ तक जैसा
पहिले कहा गया है वैसा ही यहाँ पर कह लेना चाहिये । ‘एवं एएसु
सोलससु महाजुम्भेसु एको गमओ’ इस प्रकार जैसा कि ऊपर में

विशेषधी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अथवा तिर्यग्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्योमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ
प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के— ‘उववाओ तहेव’ हे गौतम ! आम्ना
उत्पादना संभंधमां पड़ेला कथा प्रमाणेतुं कथन समजतुं अर्थात् जेपुं कथन
कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय लोचना प्रकरणमां करवामां आवेल छे, ओज प्रमा-
णेतुं कथन अहियां समजवुं लेछे ओ ‘परिमाणं पन्नरसवा संखेज्जा वा
असंखेज्जावा अणंतावा वा’ त्र्योज त्र्योज एकेन्द्रिय लोचानुं ओक समयमां
उत्पन्न थवानुं परिमाण १५ पंदर अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा
अनंत समजवुं । ‘सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो’ आ परिमाण शिवायनुं जाकीनुं
धीनुं तमाम कथन “तेओ अनंतवार उत्पन्न थछे चूक्या छे, “आ कथन
सुधीनुं पड़ेलां जे प्रमाणे कहेवामां आवेल छे, ओज प्रमाणे अहियां समजवुं

एवमुपरि प्रदर्शितप्रकारेण षोडशसु महायुग्मेषु एको गमकः सर्वत्र महायुग्मेषु एकएव प्रकार इति भावः । 'नवरं परिमाणे नाणत्तं' नवरं केवलं परिमाणे नानात्वं भेदोऽवगन्तव्यः अन्यत् सर्वमेकप्रकारकमेवेति । परिमाणे नानात्वमेव विशिष्य दर्शयति—'तेओगदावरजुम्मेसु परिमाणं चोदस वा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंतावा उववज्जंति' त्रयोजद्वापरयुग्मेषु एकेन्द्रियेषु परिमाणं चतुर्दश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, अणंता वा एतादृश संख्यका इमे एकसमयेनोत्पद्यन्ते इति ७ । 'तेओगकलिओगेसु तेरस वा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति' त्रयोजकलयोजएकेन्द्रियेषु परिमाणं त्रयोदश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, अनन्ता वा, एतादृशपरिमाणदिशिष्टा इमे

दिखलाया जा चुका हैं सोलह महायुग्मों में कथन प्रकार एक जेना ही है, तात्पर्य इसका ऐसा है कि परिमाण कथन से अतिरिक्त और सब कथन इन १६ राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में एक ही प्रकार का है । यही बात 'तेओग परिमाणे नाणत्तं' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है । परिमाण में नानात्वका कथन इस प्रकार से है—'तेओग दावरजुम्मेसु परिमाणं चोदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' त्रयोज द्वारा युग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों का एक समय में उत्पन्न होनेका परिमाण १४ है । अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं । 'तेओगकलिओगेसु तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' त्रयोजकलयोज राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीवों का एकसमय में उत्पन्न होनेका परिमाण १३ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'दावरजुम्मे

'एवं एषु सोलसमहाजुम्मेसु एको गमको' आ रीते ने प्रमाणे उपर कडेवाभां आवेल छे, ते सोण महायुग्मेनो कथन प्रकार एक सरणो छे. कडेवानुं तात्पर्य ओ छे के-परिमाणना कथन शिवायनुं भा.श्रीनुं सघणुं कथन १६ सोण राशिवाणा ओकेन्द्रिय लोवोना सभंधमा ओक ल सरणुं छे ओक वात 'नवरं परिमाणे नाणत्तं' आ सूत्रपाठ द्वारा अतावेल छे, परिमाणभां नानात्व (लुदा लुदा प्रकारतु) तुं कथन आ प्रमाणे छे—'तेओग दावरजुम्मेसु परिमाणं चोदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंतावा' त्रयोजद्वापरयुग्म राशिवाणा ओकेन्द्रिय लोवोनुं ओक समयभां उत्पन्न धवानुं परिमाण १४ औदतुं छे अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त छे 'तेओग कलिओगेसु तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' त्रयोज कलयोज राशिप्रमित ओकेन्द्रिय लोवोनुं ओक समयभां उत्पन्न धवानुं परिमाण १३ तेर अथवा

एकदा समुत्पद्यन्ते ८ । 'दावरजुम्म कडजुम्मेसु अद्रवा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अनन्ता वा, उववज्जंति' द्वापरयुग्म कृतयुग्मेषु अष्टौ वा संख्याता वा, असंख्याता वा अनन्ता वा उत्पद्यन्ते ९, 'दावरजुम्म तेओगेसु एकारसवा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अनन्ता वा, उववज्जंति' द्वापरयुग्मत्रयोर्जेषु एकादश वा संख्याता वा, असंख्याता वा, अनन्तावोत्पद्यन्ते इति १० । 'दावरजुम्मदावरजुम्मेसु दस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' द्वापरयुग्म द्वापरयुग्मेषु दश वा, संख्याता वा, असंख्याता वा अनन्ता वा उत्पद्यन्ते ११ ।

कडजुम्मेसु अद्र वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' 'द्वापरयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों का परिमाण एकसमय में उत्पन्न होनेका आठ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'दावरजुम्म दावरजुम्मेसु दसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीवोंका एकसमय में उत्पन्न होनेका परिमाण दस अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'दावरजुम्म तेओगेसु एकारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' द्वापरयुग्म त्रयोज राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवोंका एकसमय में उत्पन्न होने का परिमाण ११ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'दावरजुम्म दावरजुम्मेसु दसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों का एकसमय में उत्पन्न होनेका परिमाण १० अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त

संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त છે. 'દાવરજુમ્મકડજુમ્મેસુ અદ્રવા સંખેજ્જાવા અસંખેજ્જા વા અણંતા વા ઉવવજ્જંતિ' દ્વાપરયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય જીવોનું પરિમાણ એક સમયમાં ઉત્પન્ન થવાનું આઠ અથવા સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત અથવા અનંત છે. 'દાવરજુમ્મ દાવરજુમ્મેસુ દસ વા સંખેજ્જા વા અસંખેજ્જા વા અણંતા વા ઉવવજ્જંતિ' દ્વાપરયુગ્મ દ્વાપરયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય જીવોનું એક સમયમાં ઉત્પન્ન થવાનું પરિમાણ દસ અથવા સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત અથવા અનંત છે. 'દાવરજુમ્મ તેઓગેસુ એકારસવા સંખેજ્જા વા અસંખેજ્જા વા અણંતા વા ઉવવજ્જંતિ' દ્વાપરયુગ્મ ત્રયોજ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય જીવોનું એક સમયમાં ઉત્પન્ન થવાનું પરિમાણ ૧૧ અગિયાર અથવા સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત અથવા અનંત છે. 'દાવરજુમ્મ દાવરજુમ્મેસુ દસ વા સંખેજ્જા વા અસંખેજ્જા વા અણંતા વા ઉવવજ્જંતિ' દ્વાપરયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય જીવોનું એક સમયમાં ઉત્પન્ન થવાનું પરિમાણ ૧૦ દસ

'दावरजुम्म कलियोगेषु नव वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उवव-
ज्जंति' द्वापरयुगमकलयोजेषु नव वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, अनन्ता वा,
उत्पद्यन्ते १२ । 'कलियोगकडजुम्मेसु चत्तारि वा, संखेज्जा वा असंखेज्जा
वा, अणंता वा उववज्जंति' कलयोजकृतयुग्मेषु चत्वारो वा, संख्याता वा, असं-
ख्याता वा, अनन्ता वा, उत्पद्यन्ते १३ । कलियोग तेओगेषु सत्त वा, संखेज्जा
वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा, उववज्जंति' कलयोजत्रयोजेषु सप्त वा, संख्याता
वा, असंख्याता वा, अनन्ता वा, उत्पद्यन्ते १४ । 'कलियोगदावरजुम्मेसु छ वा,
संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति' कलयोजद्वापरयुग्मेषु
षड् वा, संख्याता वा, असंख्याता वा, अनन्ता वा उत्पद्यन्ते १५ । 'कलियोग

हैं । 'दावरजुम्म कलिओगेषु नव वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता
वा उववज्जंति' द्वापरयुगम कलयोज राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवोंका
एकसमय में उत्पन्न होनेका परिमाण नौ अथवा संख्यात अथवा असं-
ख्यात अथवा अनन्त है । 'कलियोग कडजुम्मेसु चत्तारि वा संखेज्जा
वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' कलयोजकृतयुगम राशिप्रमित
एकेन्द्रिय जीवों का एकसमय में उत्पन्न होने का परिमाण चार अथवा
संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'कलियोगतेओगेषु सत्त
वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' कलयोज त्रयोज
राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीवों का उत्पन्न होने का परिमाण एकसमय का
सात अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'कलियोग
दावरजुम्मेसु छ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति'
'कलयोज द्वापरयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों का एकसमय में

अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त छे, 'दावरजुम्म कलियोगेषु
नव वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणता वा उववज्जंति' द्वापरयुगम कलियोज
राशिवाणा एकेन्द्रिय एवेतुं एक समयमां उत्पन्न थवानुं परिमाणु नव
अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त छे, 'कलियोगकडजुम्मेसु
चत्तारि वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणता वा उववज्जंति' कलियोज
राशिवाणा एकेन्द्रिय एवेतुं उत्पन्न थवानुं परिमाणु चार अथवा संख्यात
अथवा असंख्यात अथवा अनन्त छे, 'कलियोग तेओगेषु सत्त वा संखेज्जा वा
असंखेज्जा वा अणता वा उववज्जंति' कलियोज त्रयोज राशिवाणा एकेन्द्रिय एवेतुं
उत्पन्न थवानुं परिमाणु सात अथवा संख्यात अथवा असंख्यात
अथवा अनन्त छे, 'कलियोग दावरजुम्मेसु छ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा
अणंता वा उववज्जंति' कलियोज द्वापरयुगम राशिवाणा एकेन्द्रिय एवेतुं एक

एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कलयोजकलयोजैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य इत्यादि पूर्वप्रकारेणैव प्रश्नः, उत्तरमाह—'उववाओ तहेव' उपपात स्तथैव कृतयुग्मकृतयुग्म प्रकरणपठित एव ज्ञातव्यः । 'परिमाणं पंच वा, संखेज्जा वा-असंखेज्जा वा, अणंता वा, उववज्जंति' परिमाणं पञ्च वा, संख्याता वा असंख्याता वा अनन्ता वा उत्पद्यन्ते इति । 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो' शेषं परिमाणातिरिक्तं सर्वं तथैव कृतयुग्म प्रकरणपठितमेव यावदनन्तकृत्व इति १६ ।

उत्पन्न होने के परिमाण ६ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है 'कलिभोग कलिभोग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कलयोज कलयोज राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव हे भदन्त ! किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्घोनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रसुश्री कहते हैं—'उववाओ तहेव' 'हे गौतम ! कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों के प्रकरण में जैसा उपपात के स्वग्रन्थ में कहा गया है वैसा ही यहां पर भी उपपात के स्वग्रन्थ में कथन जानना चाहिये यहां—'परिमाणं पंच वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' उत्पन्न होनेका परिमाण पांच अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनन्त है । 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो' परिमाण पञ्चके अतिरिक्त और सब कथन यहां पर

समयमां उत्पन्न थवानुं परिणाम ६ ७ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनंत छे. 'कलिभोगकलिभोग एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृतयोञ्ज कृतयोञ्ज राशिवाणा ऐकेन्द्रिय लुवे छे लगवन कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? तिर्यंथोमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्योमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां कडे छे के—'उववाओ तहेव' छे गौतम ! कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा ऐकेन्द्रिय लुवेना प्रकरणमां उपपातना संबंधमां ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, ओञ्ज प्रमाणेनुं कथन अद्वियां उपपातना संबंधमां कडेवुं नेछे. अद्वियां 'परिमाणं पंच वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति' परिमाण पांच अथवा संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनंत छे. 'सेसं तहेव जाव अणंत खुत्तो' परिमाणना कथन शिवायनुं सधुं कथन अद्वियां तेओ

संख्या १६	महायुग्मनामानि	युग्मनिर्माणसंख्या
१	कृतयुग्म कृतयुग्मः	१६
२	कृतयुग्म त्रयोजः	१९
३	कृतयुग्म द्वापरयुग्मः	१८
४	कृतयुग्म कलयोजः	१७
५	त्रयोज-कृतयुग्मः	१२

‘वे अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं’ यहां तकका पूर्व में कहे गये अनुसार एकसा ही जानना चाहिये ।

यह सब प्रकरण इस यंत्र से स्पष्ट जाना जा सकता है—

संख्या	सोलह-महायुग्मों के नाम	महायुग्मादिका निर्माण एवं महायुग्मादि राशि प्रमित एकेन्द्रिय जोड़ों की एकसमयमें उत्पन्न होनेकी जघन्य संख्याका प्रमाण
१	कृतयुग्म कृतयुग्म	१६
२	कृतयुग्म त्रयोज	१९
३	कृतयुग्म द्वापरयुग्म	१८
४	कृतयुग्म कलयोज	१७
५	त्रयोज कृतयुग्म	१२

अनन्तवार उत्पन्न थलं चूक्या छे. आ कथन सुधीतुं पडैलां कया प्रभाषे अेक सरणु समजतुं.

आ प्रकारतुं तमाम कथन आ यंत्रथी स्पष्ट लखवामा आवे छे—

संख्या सोलह—	महायुग्मोना नामे	महायुग्मदितुं निर्माण अने मह युग्म विगेरे राशिवाणा अेकेन्द्रिय लवोनी अेक समथनी सभ्यातु प्रभाषु
१	कृतयुग्म कृतयुग्म	१६
२	कृतयुग्म त्रयोज	१९
३	कृतयुग्म द्वापरयुग्म	१८
४	कृतयुग्म कलयोज	१७
५	त्रयोज कृतयुग्म	१२

६	त्र्योज त्र्योजः ३-३	१५
७	त्र्योजद्वापरयुग्मः	१४
८	त्र्योज-कलयोजः	१३
९	द्वापरकृतयुग्मः	८
१०	द्वापरत्र्योजः	११
११	द्वापर द्वापरयुग्मः	१०
१२	द्वापरयुग्म कलयोजः	९
१३	कलयोज कृतयुग्मः	४
१४	कलयोज त्र्योजः	७
१५	कलयोज द्वापरयुग्मः	६
१६	कलयोज कलयोजः	५

६	त्र्योज त्र्योज-३-३	१५
७	त्र्योज द्वापरयुग्म	१४
८	त्र्योज कलयोज	१३
९	द्वापरयुग्म कृतयुग्म	८
१०	द्वापरयुग्म त्र्योज	११
११	द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म	१०
१२	द्वापरयुग्म कलयोज	९
१३	कलयोज कृतयुग्म	४
१४	कलयोज त्र्योज	७
१५	कलयोज द्वापरयुग्म	६
१६	कलयोज कलयोज	५

६	त्र्येण त्र्येण	१५
७	त्र्येण द्वापरयुग्म	१४
८	त्र्येण कलेण	१३
९	द्वापरयुग्म कृतयुग्म	८
१०	द्वापरयुग्म त्र्येण	११
११	द्वापर युग्म द्वापरयुग्म	१०
१२	द्वापर युग्म कलेण	९
१३	कलेण कृतयुग्म	४
१४	कलेण त्र्येण	७
१५	कलेण द्वापरयुग्म	६
१६	कलेण कलेण	५

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति हे भदन्त ! महायुगमविषयये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति सू० ॥३॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-

कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,

वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-

'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-

बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर

पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री

"भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां

व्याख्यायाम् पञ्चत्रिंशत्तमे शतके

प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३५॥ १॥

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' 'हे भदन्त महायुगम के विषय में जो आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे गौतम संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० ३॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पैंतीसवें शतक का १' प्रथम उद्देशक समाप्त ॥३५-१॥

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् महायुगमना विषयमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे, हे लगवन् आपदेवानुप्रियतुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु कहीने गौतम स्वाभीणु प्रभुश्रीने वंदना करी अने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेणो संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. सू०३॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना पैंतीसवां शतकने पडेवो उद्देशो समाप्त ॥३५-१॥

अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते

मूलम्—पठमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिदिया णं भंते !
 कओ उववज्जंति ? गोयसा ! तहेव एवं जहेव पढमो उद्देसओ
 तहेव सोलसखुत्तो वितिओ वि भाणियव्वो तहेव सव्वं । नवरं
 इमाणि दस नाणत्ताणि ओगाहणा, जहन्नेणं अंगुलस्स असं-
 खेज्जइभागं उक्कोसेण वि अंगुलस्स अखेज्जइभागं १ । आउकम्म-
 स्स नो बंधगा अवंधगा २ । आउयस्स नो उदीरगा अणुदी-
 रगा ३ । नो उस्सासगा नो निस्सासगा नो उस्तासनिस्सासगा ४ ।
 सत्तविहबंधगा नो अट्टविहबंधगा ५ । ते णं भंते ! पठमसमय
 कडजुम्म कडजुम्म एगिदिय त्ति कालओ केवच्चिरं होति ?
 गोयसा ! एक्कं समयं ६ । एवं ठिईए वि ७ । समुग्घाया आदि-
 ल्ला दोल्लि ८ । समोहया न पुच्छिज्जंति ९ । उव्वट्टणा न पुच्छि-
 ज्जइ १० । सेसं तहेव सव्वं निरवसेसं । सोलससु वि गमएसु जाव
 अणंतखुत्तो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

छाया—प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
 चन्ते ? गौतम । तथैव एवं यथैव प्रथम उद्देशक स्तथैव षोडशकृतवो द्वितीयो-
 ऽपि भणितव्यः, तथैवं सर्वम् । नश्च मिथानि दश नानात्वानि अवगाहना जघ-
 न्येनांगुलस्यासंख्येयभागम् उत्कर्षेणापि अंगुलस्यासंख्येयभागम् १ आयुष्क
 कर्मणो नो बन्धकाः, अबन्धकाः २ आयुष्कस्य नो उदीरकाः अनुदीरकाः ३ ।
 'नो उच्छ्वासकाः नो निश्वासकाः नो उच्छ्वासनिश्वासकाः ४ । सप्तविध-
 बन्धकाः नो षष्ठ विधबन्धकाः ५ । ते खलु भदन्त ! प्रथमसमयकृतयुग्मकृत-
 युग्मैकेन्द्रिया इति कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? गौतम ! एक्कं समयम् ६ । एवं
 स्थितावपि ७ । समुद्घातावाधौ द्वौ ८ । समबहता न पृच्छन्ते ९ । उद्वर्तना न
 पृच्छन्ते ? । शेषं तथैव सर्वं निरवशेषम् । षोडशस्वपि गमकेषु यावदनन्त
 कृत्वः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू० १॥

टीका—'पठमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिदिया णं भंते !' प्रथमसमय
 कृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! एकेन्द्रियत्वेनोत्पत्तौ प्रथमः समयो

येवां ते प्रथमसमयैकेन्द्रियाः त एव कृतयुग्मकृतयुग्मा इति प्रथमसमयकृत-
युग्मकृतगमाः तादृशाश्चैकेन्द्रिया इति 'कभो उववज्जति' कुतः स्थानविशेषा-
दागत्य समुत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो वा देवेभ्यो
वा आगत्य समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा'
हे गौतम ! 'तहेव' तथैव 'तिर्यग्भ्य आगत्य उत्पद्यन्ते मनुष्येभ्य उत्पद्यन्ते देवेभ्य
उत्पद्यन्ते इति भावः । 'एवं जहेव पढमो उद्देशओ' एवं यथैव प्रथमउद्देशकः 'तहेव

दूररे उद्देशो का प्रारभ

'पढमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !' इत्यादि

टीकार्थ—'पढमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !' हे भदन्त !
एकेन्द्रिय रूपसे उत्पत्ति होने में जिनका प्रथम समय है ऐसे वे कृतयुग्म
कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीव प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग्म कृतयुग्म राशि-
प्रमित एकेन्द्रिय जीव—'कभो उववज्जति' किस स्थानविशेष से आकर
के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा
तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से
आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ?
इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! तहेव' हे गौतम ! ये तिर्य-
ग्योनिकों में से आकरके भी उत्पन्न होते हैं । मनुष्यों में से भी आक-
रके उत्पन्न होते हैं और देवों में से भी आकरके उत्पन्न होते हैं ।
'एवं जहेव पढमो उद्देशओ तहेव सोलसखुत्तो वित्तियो वि भणियन्वो'

॥पील उद्देशानो प्रारभ—

'पढमसमय कडजुम्म कडजुम्मएगिंदियाणं भंते !' इत्यादि

टीकार्थ—'पढमसमय कडजुम्म कडजुम्मएगिंदियाणं भंते !' हे भगवन्
एकेन्द्रियपक्षाशी उत्पन्न थवाभां जेओने प्रथम समय छे, ओवा ते कृतयुग्म
कृतयुग्म एकेन्द्रिय ओवा अर्थात् प्रथम समयमां उत्पन्न थयेवा कृतयुग्म कृतयुग्म
राशिवाणा एकेन्द्रिय ओवा 'कभो उववज्जति' कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? शु तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य'य
योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? के देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री
गौतमस्वामीने हडे छे के—'गोयमा ! तहेव' हे गौतम ! ये तिर्य'य योनिके
मांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे मनुष्येमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय
छे अने देवेमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे 'एवं जहेव पढमो उद्देशओ
तहेव सोलसखुत्तो वित्तियो वि भणियन्वो' हे गौतम ! आ संबंधमां

સોલસચુતો વિતિયો વિ મળિયવ્વો' તથૈવ-પ્રથમોદ્દેશકવદેવ ષોડશકૃત્વઃ ષોડ-
શરાશિભેદાનાશ્રિત્ય દ્વિતીયોઽપિ ઉદ્દેશકો મળિતવ્યઃ । 'તદેવ સર્વં' તથૈવ પ્રથમો-
દ્દેશકવદેવ સર્વમિદાપિ વક્તવ્યમ્ । 'નવરં ઇમાણિ ય દસ નાણત્તાણિ' નવરં-કેવલં
પ્રથમોદ્દેશકાપેક્ષયાઽત્ર ઇમાણિ અગ્રપદદર્શ્યમાનાનિ દશનાનાત્વાનિ પૂર્વોક્તસ્ય વિલક્ષ-
ણત્વ સ્થાનાનિ ભવન્તિ, કેપાશ્ચિત્ પૂર્વોક્તાનાં ભાવાનાં પ્રથમસમયોત્પન્નેષુ અસંભ-
વાત્ । તદ્વથા-'ઓગાહના જહન્નેણ અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' શરીરાવગાહના
અંગુલસ્યાસંખ્યેયભાગરૂપા જઘન્યેન 'ઉક્કોસેણ વિ અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' ઉત્ક-
ર્ષેણાપિ અંગુલસ્યાસંખ્યેયભાગમ્, તત્ર પ્રથમોદ્દેશકે વાદરવનસ્પત્યપેક્ષયા ઉત્કર્ષેણ
સાતિરેકયોજનસદ્સરૂપા મહત્યવગાહના પ્રોક્તા, અત્ર તુ પ્રથમસમયોત્પન્નત્વે-

'હે ગૌતમ ! હસ સમ્બન્ધ મેં જૈસા પ્રથમ ઉદ્દેશક કહા ગયા હૈ ડસી
પ્રકાર સે સોલહ રાશિ ભેદોંકો આશ્રિત કરકે યહ દ્વિતીય ઉદ્દેશક
મી કહ લેના ચાહિયે । 'તદેવ સર્વં' એવં પ્રથમ ઉદ્દેશકકે જૈસા હી
ઔર સવ કથન યહાં હૈ એસા જાનના ચાહિયે । 'નવરં ઇમાણિ ય દસ
નાણત્તાણિ' પરન્તુ પ્રથમ ઉદ્દેશકકી અપેક્ષા યહાં ઇન દશ વાર્તોં મેં
અન્તર હૈ-ક્યોંકિ પ્રથમ સમય મેં ઉત્પન્ન એકેન્દ્રિયોં મેં ઇનકી અસં-
ભવતા હૈ । વે દશ વાર્તેં યે હૈ--

'ઓગાહના જહન્નેણ અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' 'અવગાહના યહાં
અંગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ હૈ જઘન્ય સે તથા 'ઉક્કોસેણ વિ
અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' 'ઉત્કૃષ્ટ સે મી અંગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ
પ્રમાણ હૈ । પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં વાદરવનસ્પતિકાયિક કી અપેક્ષા કુછ

પડેલા ઉદ્દેશામાં જે પ્રમાણે કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે સોળરાશિ
ભેદોનો આશ્રય કરીને આ બીજો ઉદ્દેશો પણ કહી લેવો જોઈએ. 'તદેવ સર્વં'
આ રીતે પડેલા ઉદ્દેશામાં કહ્યા પ્રમાણે સમગ્ર કથન આ બીજા ઉદ્દેશામાં
સમગ્ર લેવું. 'નવરં ઇમાણિ ય દસ નાણત્તાણિ' પરંતુ પડેલા ઉદ્દેશાના કથન
કરતાં અહિંયાં નીચે બતાવેલ દસ બાબતોમાં અંતર આવે છે-કેમ કે પ્રથમ
સમયમાં ઉત્પન્ન થયેલા એકઇન્દ્રિયવાળાઓમાં તેનું અસંલવ પણ છે. તે
દસ બાબતો નીચે બતાવ્યા પ્રમાણે છે.--

'ઓગાહના જહન્નેણ અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' અહિંયાં અવગાહના
જઘન્યથી આંગળના અસંખ્યાતમા લાગ પ્રમાણ છે. તથા 'ઉક્કોસેણ વિ
અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં' ઉત્કૃષ્ટથી પણ આંગળના અસંખ્યાત લાગ પ્રમાણ
છે. પડેલા ઉદ્દેશામાં બાહર વનસ્પતિકાયિકની અપેક્ષાથી કંઈક વધારે એક
હબર યોજનની અવગાહના કહી છે. પરંતુ અહિંયાં તે પ્રથમ સમયમાં ઉત્પન્ન

नाल्पा, इत्येवं नानात्वमत्रेति ? एव मन्यान्यपि नानात्वानि स्वधिया समुहानीति ।
 'आउयकम्मस्स नो वंधगा अवंधगा' इमे प्रथमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियजीवाः
 आयुष्कर्मणो नो बन्धका भवन्ति अपि तु अवन्धका एव भवन्ति २ । 'आउ-
 यस्स नो उदीरगा अणुदीरगा' आयुष्कस्य कर्मण उदीरका न भवन्ति किन्तु अनु-
 दीरका भवन्तीति ३ । 'नो उस्सासगा नो नीसासगा, नो उस्सासनीसासगा' न
 उच्छ्वासका उच्छ्वासवन्तो न भवन्ति, नो निःश्वासकाः, नो वा उच्छ्वासनिःश्वास-
 का भवन्तीति ४ । 'सत्तविहवंधगा नो अट्टविहवंधगा' आयुष्कवर्जानां सप्तविध
 कर्मणामेव बन्धका भवन्ति नो न तु अष्टविधकर्मणां बन्धका भवन्तीति ५ 'ते णं

अधिक एक हजार योजन की अवगाहना कही गई है । पर यहाँ वह
 प्रथम समय में उत्पन्न होने के कारण अंगुल के असंख्यातवे भाग रूप
 से अल्प घतलाई गई है । इस प्रकार पूर्व उद्देशक की अपेक्षा अवगाहना
 कथन में भिन्नता है । इसी प्रकार से और भी अवशिष्ट भिन्नताएं
 अपनी बुद्धि से समझ लेनी चाहिये । 'आउकम्मस्स नो वंधगा
 अबंधगा' 'ये प्रथम समयोत्पन्न कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाण
 एकेन्द्रिय जीव आयुर्कर्म के बन्धक नहीं होते हैं किन्तु अवन्धक ही
 होते हैं । 'आउयस्स नो उदीरगा, अणुदीरगा' तथा ये आयुर्कर्म के
 उदीरक नहीं होते हैं किन्तु अनुदीरक होते हैं ३ । 'नो उस्सा-
 सगा नो नीसासगा नो उस्सासनीसासगा' ये उच्छ्वासवाले नहीं
 होते हैं निःश्वासवाले भी नहीं होते हैं उच्छ्वास निःश्वास वाले
 भी नहीं होते हैं, अर्थात् अनुच्छ्वास निःश्वासवाले होते
 हैं ४ 'सत्तविह वंधगा, नो अट्टविह वंधगा' ये आयुर्कर्म के सिवाय
 सात कर्मों के ही बन्धक होते हैं आठ कर्मों के बन्धक नहीं होते हैं ५ ।

थवाने कारणे आंगणना असंख्यातमा भाग इपथी अल्प भतावेद छे. आ
 रीते पडेदा उद्देशा करतां अवगाहनाना कथनमां लिन्न पणुं आवे छे. आञ्
 प्रमाणे णीणुं पणुं भाकीतुं लिन्न पणुं पोतानी बुद्धिथी समञ्च देवुं 'आउ
 कम्मस्स नो वंधगा अबंधगा' आ प्रथम समयमां उत्पन्न थयेत्त कृतयुगम
 कृतयुगम राशिवाणा 'एकेन्द्रि एवे आयुर्कर्मणे अंध करवावाणा होता नथी.
 परंतु अवंधक न् डोय छे. 'आउयस्स नो उदीरगा अणुदीरगा' तथा आ आयु
 कर्मणी उदीरवा करवावाणा होता नथी परंतु अनुदीरक डोय छे. ३ 'नो
 उस्सासगा नो नीसासगा नो उस्सासनीसासगा' तेआ उच्छ्वासवाणा होता नथी.
 निःश्वासवाणा पणुं होता नथी तथा उच्छ्वासनिश्वासवाणा पणुं होता नथी.
 ४ 'सत्तविहवंधगा, नो अट्टविहवंधगा' आ आयुर्कर्मणे छोडीने सात कर्म
 प्रकृतियेने न् अंध करवावाणा डोय छे. आठ कर्मप्रकृतियेने अंध करवावाणा

भंते ! पढमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होंति' ते खलु भदन्त ! प्रथमसमयकृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? इति प्रश्नः भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि' 'गोयमा' हे गौतम ! 'एकं-समयं' एकसमयमात्रमेव ते भवन्तीति ६ । 'एवं ठिईए वि' एवं स्थितावपि स्थितिरपि तेषामेकसमयमात्रैवेति ७ । 'समुग्घाया आदिल्ला दोन्नि' समुद्घातौ आद्यौ द्वौ वेदनाकषायरूपौ भवतः ८ । 'समोहया न पुच्छिज्जंति' समवहता इति न पृच्छयन्ते ९ । 'उव्वहणा न पुच्छिज्जंति' उद्वर्तना न पृच्छयते प्रथम-समयकत्वादेव एतयोः समुद्घातोद्वर्तनयोरसंभवादिति १० । 'सेसं तद्देव सव्वं निरवसेसं' शेषम्-उत्पादपरिणामादिकं सर्वं षोडशवपि महायुग्मेषु प्रथमोद्देशकवदेव

'ते णं भंते ! पढमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केव-च्चिरं होंति' हे भदन्त ! ये प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग्म कृतयुग्म राशि प्रमाण एकेन्द्रिय जीव कालकी अपेक्षा कितने समय तक रहते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—एकं समयं हे गौतम ! ये एक समय मात्र ही रहते हैं ६ । 'एवं ठिईए वि' इस प्रकार स्थिति भी इनकी एक समय मात्र की होती है ७ । 'समुग्घाया आदिल्ला दोन्नि' समुद्घात यहां आदि के दो होते हैं । वेदना समुद्घात और कषाय समुद्घात ८ । 'समोहया न पुच्छिज्जंति' ये मारणान्तिकसमुद्घात करते हैं क्या ऐसी बात यहां नहीं पूछनी चाहिये तथा उद्वर्तना के सम्बन्ध में भी नहीं पूछना चाहिये । क्योंकि ये प्रथमसमयवर्ती होते हैं, इसलिये इन दोनों की यहां संशयना नहीं है । १० 'सेसं तद्देव सव्वं निरवसेसं'

डोता नथी. ५ ते णं भंते ! पढमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होंति' हे भगवन् आ प्रथम समयमां उत्पन्न थयेदा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा ऐकेन्द्रिय एवे क्खणी अपेक्षाथी डेटला समय सुधी रडे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—'एकं समयं' हे गौतम ! आ ऐक समय मात्रए रडे छे. ६, 'एवं ठिईएवि' ऐए प्रभाए तेओनी स्थिति पए ऐक समयमात्रनी ए डोय छे. ७ 'समुग्घाया आदिल्ला दोन्नि' तेओने आदिना ये समुद्घातो डोय छे. ते ये वेदना समुद्घात अने कषाय समुद्घात छे. ८, 'समोहया न पुच्छिज्जंति' तेओ मारणान्तिक समुद्घात करे छे ? ऐ प्रभाए ने प्रश्न अडि थतो नथी तथा उद्वर्तनाना संभयमां पए प्रश्न करवेो नहीं डेमडे तेओ प्रथम समयमां रडेवावाणा डोय छे. तेथी ते भन्नेनी संभवना अडियां रडेती नथी. १० 'सेसं तद्देव सव्वं निरवसेसं' आकीनुं भीणुं सधणुं उत्पाद, परिभाष,

ज्ञातव्यम् 'सोलससु वि गमएसु जाव अणंतखुत्तो' षोडशस्यपि यावदनन्त कृत्वः,
इति पर्यन्तं विज्ञेयम्। सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति,
हे भदन्त ! प्रथमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाणामुपपातादिविषये यद् देवानु-
प्रियेण कथितं तत् सर्वथा सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति
वन्दित्वा नमस्वित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥सू०१॥३५॥२॥

इति श्री - विश्वविरुपातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचरि - 'जिनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालत्रिविरवितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३५-२॥

बाकी का और सब उत्पाद् परिमाण आदिका कथन सोलह महायुगों
में प्रथम उद्देशक के जैसा ही है। 'सोलससु वि गमएसु जाव अणंत-
खुत्तो' सोलह महायुगों में 'यावत् वे अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं'
इस पाठ तक और सब पाठ कह लेना चाहिये। 'सेव भंते ! सेवं भंते !
त्ति' हे भदन्त ! प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग कृतयुग एकेन्द्रियों के
उपपात आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियेने कहा है वह सर्वथा
सत्य ही है। इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्रीको वन्दना की और नम-
स्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्माको
भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू०१॥

द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥३५-२॥

विगेरेतुं कथन सोल महायुगोभां पडेदा उद्देशाभां दद्या प्रभाणे छे तेम
समञ्जसुं. 'सोलससु वि गमएसु जाव अणंतखुत्तो' सोल महायुगोभां
यावत् तेजो अनंतवार उत्पन्न थय युक्त्या छे. आ पाठना कथन सुधी
आक्षिणे। तमास पाठ समञ्ज देवे।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् प्रथम समयमां उत्पन्न थवावाणा
कृतयुगम, कृतयुगम ओक ईन्द्रियवाणाओना उपपात विगेरेता विषयमा आप
देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन्
आप देवानुप्रियेतु सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणे कडीने
गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी अने नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार
करीने ते पछी तेजो संयम अने तपसी पोताना आत्माने भावित करता
थका पोताना स्थान पर भिराजमान थया.

॥भीजे उद्देशे समाप्त ॥३५-२॥

तृतीयादारभ्यैकादशपर्यन्ता नवोद्देशकाः

मूलम्—अपढमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? एसो जहा पढमुद्देसो सोलससु वि जुम्मेसु
तहेव नेयव्वो जाव कलियोग कलियोगत्ताए जाव अणंतखुत्तो ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-३॥

चरमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ
उववज्जंति ? एवं जहेव पढमसमय उद्देसओ नवरं देवा न उव-
वज्जंति तेउलेस्सा न पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति ॥३५-४॥

अचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा—अपढसमय उद्देसओ तहेव निरव-
सेसो भाणियव्वो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-५॥

पढमपढमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा पढमसमय उद्देसओ तहेव निरवसेसं ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥३५-६॥

पढमअपढमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति जहा पढम समय उद्देसओ तहेव भाणियव्वो ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-७॥

पढमचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा चरमुद्देसओ तहेव निरवसेसं । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-८॥

पढमअचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा वीओ उद्देसो तहेव निरवसेसं । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥३५-९॥

चरमअचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा—पढमसमय उद्देसओ तहेव निरव-
सेसं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५—१०॥

चरमअचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा—पढमसमय उद्देसओ तहेव निरव-
सेसं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥३५—११॥

एवं एए एकारस उद्देसगा । पढमतइओ पंचमओ य
सरिसगमा । सेसा अट्ट सरिसगमा । नवरं चउत्थे छट्टे अट्टमे
दसमे य देवा न उववज्जंति तेउलेस्सा नत्थि ॥३५—११॥

पणतीसइमे सए पढमं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

छाया—अप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
चन्ते, एषो यथा प्रथमोद्देशकः षोडशस्वरपि युग्मेषु तथैव ज्ञातव्यो यावत् कलयोज
कलयोजतया यावदनन्तकृत्वः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५—३॥

चरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते ?
एवं तथैव प्रथमोद्देशकः । नवरं देवा नोत्पचन्ते तेजोल्लेखा न पृच्छन्ते, शेषं
तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५।४॥

अचरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते यथा
अप्रथमसमयोद्देशकः तथैव निरवशेषो भणितव्यः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति ॥३५।५॥

प्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते । यथा प्रथम
समयोद्देशक स्तथैव निरवशेषम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५ ६॥

प्रथमअप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुतः उत्प-
चन्ते ! यथा प्रथमसमयोद्देशक स्तथैव भणितव्यः ! तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति ॥३५।७॥

प्रथमचरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते ।
यथा—चरमोद्देशक स्तथैव निरवशेषम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त । इति ॥३५।८॥

प्रथमअचरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते

यथा—द्वितीयोद्देशक स्तथैव निरवशेषम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥३५।९॥

चरमचरमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते यथा—चतुर्थ उद्देशक स्तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ३५।१०।

चरमअचरमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते यथा—प्रथमसमयोद्देशक स्तथैव निरवशेषम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥३५।११॥

एवमेते एकादशोद्देशकाः । प्रथमस्त्रुतीयाः पञ्चमकश्च सदृशगमाः । शेषा अष्टौ सदृशगमाः । नन्दरं चतुर्थे षष्ठे अष्टमे दशमे च देवा नोत्पद्यन्ते तेजो-लेश्या नास्ति ॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके प्रथममेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३५॥१॥

टीका—‘अपठमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उवव-ज्जंति’ अप्रथमसमयकृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते । अत्रापथमः समयो येषामेकेन्द्रियत्वेन उत्पन्नानां द्वाद्यादयः समया स्ते अप्रथम समयैकेन्द्रियाः कृतयुगमकृतयुगम राशि प्रमाणाश्च ते तादृशा एकेन्द्रियाः कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य स्तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते

शतक ३५ उद्देशक ३ से ११ तक

‘अपठम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उवव-ज्जंति’ इत्यादि ।

टीकार्थ—हे भदन्त ! अप्रथम समयोत्पन्न कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? एकेन्द्रिय रूप से उत्पन्न होने में जिन्हे दो आदि समय हो चुके हों—ऐसे वे एकेन्द्रिय जीव अप्रथम समयोत्पन्न कहे गये हैं । क्या ऐसे ये एकेन्द्रिय जीव नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों

श्रीम उद्देशाने। प्रारंभ—

‘अपठमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इत्यादि।

टीकार्थ—हे भगवन् अप्रथम समयमां उत्पन्न थयेला कृतयुगम, कृतयुगम, राशिवाणा एकेन्द्रिय एवो क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? एकेन्द्रियपण्ठाथी उत्पन्न थवासां जेआने जे विगेरे समय थछियूरेल डोय—अवा ते एकेन्द्रिय एवो अप्रथम समयमां उत्पन्न थवावाणा कडेवासां आवेल छे. अवा एके छेन्द्रियवाणा एवो शुं नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा

इति प्रश्नः । उत्तरमाह—'एसो' इत्यादि । 'एसो जहा पढमुद्देशो सोलससु वि जुम्मेसु तहेव नेयव्वो' एव रत्तीयोद्देशकः यथा—येन रूपेण प्रथमोद्देशकः षोडशसु अपि युग्मेषु कथित इत्येव—तेनैव रूपेण अयमपि तृतीयोद्देशः षोडशराशि भेदानाश्रित्य ज्ञातव्यो विचारयितव्यः । कियत्पर्यन्त तत्राह—'जाव कलिभोग कलिभोगत्ताए' यावत्कलयोज कलयोजतया कृतयुगमकृतयुगमतया इत्यत आरभ्य कलयोज द्वापरयुगम इत्येतत् पर्यन्तराशीनां ग्रहणं यावत्पदेन भवति । 'जाव अणंत-

में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवोंमें से आकरके उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एसो जहा पढमुद्देशो सोलससु वि जुम्मेसु तहेव नेयव्वो' हे गौतम । जिस रीति से प्रथम उद्देशक सोलह युग्यों को लेकर कहा गया है । उसी रीति से (१६) सोलह राशि भेदों को आश्रित करके यह तृतीय उद्देशक भी कह लेना चाहिये । यावत् 'कलिभोग कलिभोगत्ताए' अप्रथम समयोत्पन्न कलयोज कलयोज राशि प्रथित एकेन्द्रिय जीव यावत् अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं' यहां तक इस उद्देशकको कहकर समाप्त करना चाहिये । यहां प्रथम यावत्पद से बीच की शेष राशियां गृहीत हुई हैं । इस प्रकार ये अप्रथम समयोत्पन्न एकेन्द्रिय जीव कृतयुगम त्रयोज रूप से, कृतयुगम द्वापर रूप से, कृतयुगम कलयोज रूपसे त्रयोज कृतयुगमरूप से, त्रयोजत्रयोजरूप से, द्वापरयुगम त्रयोजरूप से, द्वापरयुगम द्वापरयुगम कलयोज रूपसे, कलयोज कृतयुगमरूपसे,

तियं च योनिष्ठाभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—'एसो जहा पढमुद्देशो सोलससु वि जुम्मेसु तहेव नेयव्वो' हे गौतम । ये प्रमाणे पडेला उद्देशाभां सोण युग्मे ने लधने कडेल छे, ओण प्रमाणे (१६) सोण राशि भेदेने आश्रय करीने आ त्रीने उद्देशो पणु कडेवे लेधये. यावत् 'कलिभोग कलिभोगत्ताए' अप्रथम समयमां उत्पन्न थयेला कल्येण कल्येण राशिवाणा ओकेन्द्रिय लवे यावत् अनंतवार उत्पन्न थथ युद्धया छे, आ कथन सुधी आ उद्देशो पुरे कडेवे लेधये अहियां पडेला यावत्पदथी पचली पाकीनी राशियो ग्रहण करवामा आवेल छे. आ रीते आ अप्रथम समयमां उत्पन्न थयेला ओकेन्द्रियवाणा लवे कृतयुगम, त्र्येण पणुथी कृतयुगम द्वापरपणुथी कृतयुगम कल्येण पणुथी त्र्येण, कृतयुगम पणुथी त्र्येण त्र्येण पणुथी त्र्येण द्वापर पणुथी त्र्येण कल्येण पणुथी द्वापरयुगम कृतयुगम पणुथी द्वापरयुगम त्र्येण पणुथी

खुत्तो' यावद् अनन्तकृत्वः, अप्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः कुत उत्प-
द्यन्ते इत्यारभ्य असकृत् अथवा' इत्यन्तस्य समग्रस्यापि प्रकरणस्य संग्रहो
यावत्पदेन ज्ञातव्यः तिर्यङ्मनुष्यदेवेभ्य उत्पद्यन्ते इत्यादिकं सर्वं प्रथमोद्देशक-
वदेव ज्ञातव्यमिति, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति हे भदन्त ! अप्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाणामुत्पादादिविषये यत्
कथितं तत्सर्वमेव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दिस्वा
नमस्यित्वा यावदयथासुखम्, विहरतीति ।

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥३५॥३॥

कलयोज ऋयोजरूपसे कलयोजद्रापरयुग्मरूपसे वहां दूसरे यावत् पदसे कहां
से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न से लेकर 'असङ्—'असकृत्'
इस अन्तिम पाठ तक सब कथन का संग्रह प्रथम उद्देशकके जैसा ही
यहां जानना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! अप्रथम
समयोत्पन्न कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय जीवों के उत्पादादिके विषय में
जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार
कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना
नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए
अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥१॥

॥ तृतीय उद्देशक समाप्त ॥३५-३॥

द्रापरयुग्म द्रापरयुग्म पञ्चाथी द्रापरयुग्म ऋथ्योञ् पञ्चाथी ऋथ्योञ् कृतयुग्म
पञ्चाथी ऋथ्योञ् ऋथ्योञ्पञ्चाथी ऋथ्योञ् द्रापरयुग्मपञ्चाथी कथाथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? विगेरे प्रश्नथी लछने 'असङ्' 'असकृत्' आ छेवला पाठ सुधी
सधणुं कथन पछेला उद्देशा प्रभाणु सभणुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् अप्रथम समयमां उत्पन्न
थयेला कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीवोना उत्पाद विगेरेना संभंधमां
आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. छे भगवन्
आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न् छे. आ प्रभाणु कहीने गौतम-
स्वाभीञ्छे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥त्रीजे उद्देशो समाप्त ३५-३॥

चरमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति' चरमसमय कृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य स्तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्यो वोत्पद्यन्ते इत्यादि । अत्र चरमसमयशब्देन एकेन्द्रियाणां मरणसमयो विवक्षितः, स च परभवायुषः प्रथमसमये एव, तत्र च वर्त्तमानाः चरमसमयाः, संख्याया च कृतयुगमकृतयुगमराशिप्रमाणा ये एकेन्द्रिया स्ते चरमसमय कृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रिया इति । भगवानाह—'एवं' इत्यादि । 'एवं जहेव पढमसमय उद्देसओ' एवं यथैव प्रथमसमयादेशकः द्वितीयोदेशकः एतस्यैव

चौथे उद्देशो का प्रारंभ

'चरमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते' इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त चरमसमय में वर्त्तमान ऐसे कृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रियजीव किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? यहां चरम शब्द से एकेन्द्रियों का मरण समय विवक्षित हुआ है । और यह उनकी पर-भवाकी आयुका प्रथमसमय रूप है । इसमें वर्त्तमान एकेन्द्रिय चरमसमय शब्द से कहे गये हैं । अतः चरमसमय में वर्त्तमान और संख्या में कृतयुगम राशिप्रमाण एकेन्द्रिय जीव कहां से आकरके उत्पन्न होते हैं ? ऐसे इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुश्री कहते हैं—'एवं जहेव पढमसमय उद्देसओ' 'हे गौतम ! इस सम्बन्ध में जैसा प्रथम समयके

थाथा उद्देशानो प्रारंभ—

टीकार्थ—'चरमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते !' इत्यादि से लगवन् चरम समयमां रडेता एवा कृतयुगम कृतयुगम राशिराणा एकेन्द्र एवा कया स्थान विशेषशी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु' तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य'ओमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे के मनुष्ये-मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? के देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अहियां चरम शब्दशी एकेन्द्रियेनो मरण समय विवक्षित थयेद छे. अने आ तेओना परलवना आयुष्यना प्रथम समय इय छे. तेमा रडे-आरा एकेन्द्रिय चरम समय शब्दशी कहेद छे. तेथी चरम समयमां रडेता अने संख्यामां कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाणा एकेन्द्रिय एवा कयांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो उत्तर आपनां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—'एवं जहेव पढम समय उद्देसओ' से गौतम ! आ सं'धमा प्रथम समय

शतकस्य द्वितीये प्रथमसमयनामके उद्देशके यथा एकेन्द्रियाणां तिर्यगादिभ्य उत्पादादि कथितम्, तथैव सर्वमिहापि वक्तव्यम् प्रथमसमये औघिकोद्देशका-
पेक्षया दशानानात्वानि कथितानि तान्येव अत्रापि तेनैव रूपेण वक्तव्यानि उभयोः
समानरूपत्वात् प्रथमसमय चरमसमयैकेन्द्रियाणां यो विशेषः तदर्शयति-
'नवरं' इत्यादि, 'नवरं देवा न उववज्जति तेउलेस्सा न पुच्छिज्जति' नवरं केवलं
देवा नोत्पद्यन्ते चरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियेषु देवा नोत्पद्यन्ते अतोऽत्र
तेजोलेख्या न पृच्छयते । 'सेसं तहेव' शेषं तथैव-प्रथमसमयैकेन्द्रियप्रकरण-

सम्बन्ध में द्वितीय उद्देशक कहा गया है-अर्थात् इसी शतक के द्वितीय
प्रथम समय नाम के उद्देशक में जैसा एकेन्द्रियों के तिर्यग् आदि से
आकरके उत्पादादि के विषयमें कहा गया है वैसाही सब यहां पर
कहना चाहिये । प्रथम समयमें औघिक उद्देशक की अपेक्षा जो १० भिन्न-
ताएं कही गई हैं वे ही भिन्नताएं उसी रूप से यहां भी कह लेनी चाहिये
क्योंकि दोनों में समानरूपता है । प्रथम समयवर्ती और चरमसमय-
वर्ती एकेन्द्रिय जीवों में जो विशेषता है उसे प्रकट करने के लिये
'नवरं देवा न उववज्जति तेउलेस्सा न पुच्छिज्जति' सूत्रकार कहते हैं
कि चरमसमयवर्ती कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमाण एकेन्द्रिय जीवों में
देव उत्पन्न नहीं होते हैं इसीलिये यहां तेजोलेख्या के सम्बन्ध में प्रश्न
नहीं करना चाहिये क्योंकि वह यहां होती ही नहीं है । 'सेसं तहेव'
वाक्रीका और सब कथन यहां प्रथमसमयवर्ती एकेन्द्रिय जीव के प्रक-

ना सम्बन्धमां ने प्रमाणेतुं कथन भीज उद्देशामां करवामां आःयुः छे, अर्थात्
आ शतकना भीज प्रथम समय नामना उद्देशामां एकेन्द्रियोना तिर्यग्
विगेरेमांथी आवीने उत्पाद विगेरेना सम्बन्धमां कडेल छे. एजे प्रमाणेतुं
सधणुं कथन अडियां कडेपुं लेधये. पडेला उद्देशामां औघिक उद्देशानी
अपेक्षाथी ने १० दस प्रकारतुं भिन्न पाणुं कहुं छे. ते सधणुं भिन्न पाणुं
एजे प्रमाणे अडियां पधु कडेपुं लेधये. केम के अनेमां समान पाणुं छे.
प्रथम समयमां रडेल अने चरम समयमां रडेल एकेन्द्रिय जिवोमां ने विशेष
पाणुं छे, ते अताववा भाटे 'नवरं देवा न उववज्जति' तेउलेस्सा न पुच्छि
ज्जति' सूत्रकारे आ सूत्रपाठ कडेल छे. आ सूत्रपाठथी सूत्रकार अे कडे छे के-
चरम समयमां रडेनारा कृतयुग्म कृतयुग्म राशीवाणा एकेन्द्रिय जिवोमां देवा
उत्पन्न थता नथी. तेथी अडियां तेजोलेख्याना सम्बन्धमां प्रश्न करेद नथी, केम
के तेजोलेख्या अडियां डोती नथी. 'सेसं तहेव' भाडीनुं भीजुं सधणुं कथन
अडियां प्रथम समयमां रडेनारा एकेन्द्रिय जिवोना प्रकरण प्रमाणे समन्वुं.

वदेव सर्वं ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भते ! सेवं भते त्ति' तदेवं भदन्व ! तदेव भदन्त ! इति, हे भदन्त ! चरमसमयएकेन्द्रियाणा मुत्पादादि विषये यद् भावता कथितं तत्सर्वमेव सत्यमिति कथयित्वा यावत् संयमेन तपसाऽऽत्मान भावयन् विहरतीति ॥३५।४॥

'अचरमसमयकडजुम्मकडजुम्म एगिदियाणं भंते ! कओ उववज्जति' अचरमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते, न विद्यते मरणसमयात्मक चरमसमयो येषा मेकेन्द्रियायां तादृशकृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमाणानां ते अचरमसमयकृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः कथ्यन्त इति प्रश्नः,

रण के जैसा ही है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! चरमसमयवर्ती एकेन्द्रिय जीवों के उत्पाद आदि के विषय में जो आपने कहा है वह सर्व ही सत्य है । ऐसा कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संघम और तपसे आत्माको आविष्ट करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

शतक ३५ चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥३५-४॥

पांचवें उद्देशो का प्रारंभ

'अचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिदियाणं भंते ! कओ उववज्जति' टीकार्थ-हे भदन्त ! जो अचरमसमयवर्ती कृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव हैं वे किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? जिन एकेन्द्रिय जीवोंका मरण समयात्मक चरमसमय नहीं है और जो संख्या में कृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमाण है ऐसे वे एकेन्द्रिय जीव अचरम

सेवं भते ! सेवं भते ! त्ति' हे भगवन् अचरम समयमा रहेतारा अकेन्द्रिय लोकोना उत्पाद आदिना विषयमा आप देवानुप्रिये ने कथन करेला छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाषे कडीने गौतमस्वामीने प्रभुश्री ने वदना करी नमस्कार कर्या वदना नमस्कार करीने संघम अने तपसी पोताना आत्माने आविष्ट करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥३५०१॥

॥थोथो उद्देशो समाप्त ॥३५-४॥

पांचमा उद्देशानो प्रारंभ—

टीकार्थ-'अचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिदियाणं भंते ! कओ उववज्जति' इत्यादि हे भगवन् अचरम समयमा रहेतारा कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा ने अकेन्द्रिय लोको छे, तेओ कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? ने अकेन्द्रिय लोकोना मरण समयमात्मक अचरम समय नथी. अने ने संख्यामां कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाण छे ओवा ते अकेन्द्रिय लोको अचरम समयमा रहैला कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाणवाणा कडेतामां आया छे, आ प्रश्नता

उत्तरमाह—‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा अपढमसमय उद्देशो तद्देव निरवसेसो भाणियव्वो’ यथा अपथमसमयनामको तृतीयोद्देशक स्तथैव निरवशेषो भणितव्य एतच्छतकीय द्वितीयोद्देशकदेव यावनन्तकृत्यः, इति पर्यन्त सर्व ज्ञातव्यम्, अत्र देवा अपि उत्पद्यन्ते ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त ! अचरमसमयैकेन्द्रियाणां मुत्पादादि विषये यत् कथितं देवानुप्रियेण तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा वन्दित्वा नमस्यित्वा यावद्विहरतीति ॥३५॥५॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तने शतके पञ्चमोद्देशकः समाप्तः ॥३५॥५॥

समयवर्ती कृतयुग्म राशिप्रमाण कहे गये हैं। इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘जहा अपढमसमय उद्देशो तद्देव निरवसेसो भाणियव्वो’ हे गौतम जैसा अप्रथम समय नामक तृतीय उद्देशक कहा गया है उसी प्रकारसे यहाँ पर भी सब कथन कर लेना चाहिये और वह सब कथन ‘यावत् अनन्तवार वे वहाँ उत्पन्न हो चुके हैं’ इस अन्तिम सूत्रपाठ तक कह लेना चाहिये। यहाँ देव भी उत्पन्न होते हैं। ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! अचरमसमयवर्ती एकेन्द्रिय के उत्पाद आदिके विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सत्य ही है २। इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू०१॥

॥ शतक ३५ पञ्चमोद्देशक समाप्त ३५॥

उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के—‘जहा पढमसमयउद्देशो तद्देव निरवसेसो भाणियव्वो’ हे गौतम ने प्रमाणे प्रथम समय नामने जीले उद्देशो कही छे ओर प्रमाणे अडियां पणु सत्रणुं कथन समणुं लेधये, अने आ सधणुं कथन यावत् तेओ अनंतर त्वां उत्पन्न थरुं युक्रयां छे, आ प्रमाणे छेददा सूत्रपाठ सुधी कडेपुं लेधये, अडियां देवे। पणु उत्पन्न थाय छे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे लगवन् अचरम समयमां रडेवाणा ओकेन्द्रिय ओवेना उत्पाद त्रिगेरे विषयना संभंधमां आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे ते सर्वथा सत्य छे हे लगवन् आप देवानुप्रियणुं कथन सर्वथा सत्य न छे, आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वंदना करीने तेओने नमस्कार कथा वंदना नमस्कार करीने तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया, ॥सू०१॥

॥पांचमो उद्देशो समाप्त ॥३५-५॥

पहमपहम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जति ? प्रथमप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एकेन्द्रियोत्पादस्य प्रथमसमययोगाद् ये प्रथमाः प्रथमश्च समयः कृतयुग्मकृतयुग्मत्वानुभवस्य येषां मेकेन्द्रियाणां ते प्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कथ्यन्ते एते कुत उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह—अतिदेशद्वारेण 'जहा' इत्यादि, 'जहा पहमसमय उद्देशओ तद्देव निरवसेसं' यथा प्रथमसमयोद्देशको द्वितीयः तथैव निरवशेषम् एतच्छतकीयद्वितीयोद्देशके येन रूपेण एकेन्द्रियाणां

'पहम पहमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जति' इत्यादि हे भदन्त ! प्रथम प्रथम समयवर्ती कृतयुग्मकृतयुग्म-राशिप्रमाण एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेषसे आकरके उत्पन्न होते हैं ? एकेन्द्रिय रूपसे उत्पाद के प्रथम समय के योग से जो प्रथम हैं तथा कृतयुग्म कृतयुग्मत्व के अनुभव के प्रथम समय में जो वर्तमान हैं ऐसे एकेन्द्रिय जीव प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीव हैं । ये कहाँ से आकरके उत्पन्न होते हैं ? ऐसा यह गौतमका प्रश्न है इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'जहा पहमसमय उद्देशओ तद्देव निरवसेसं' हे गौतम ! जैसा प्रथमसमयोद्देशक-द्वितीय उद्देशक में कहा गया है उमी

॥छंका उद्देशानो प्रारंभ—

टीका—'पहमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जति' इत्यादि हे लगवन् नेओ प्रथम समयमां रडेवावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशी वाणा ओकेन्द्रिय ओवो कया स्थान विशेषथी आवीने त्यां उत्पन्न थाय छे ? ओकेन्द्रिय पणुथी उत्पादना प्रथम समयना योगथी नेओ प्रथम छे, तथा कृतयुग्म, कृतयुग्मपणुना अनुभवना प्रथम समयमां नेओ उत्पन्न थयेला हे, ओवा ओकेन्द्रिय ओवो प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ओकेन्द्रिय ओवो छे. ते ओवो कयांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रभाणे गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने पूछेल छे. आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—'जहा पहमसमय उद्देशओ तद्देव निरवसेसं' हे गौतम ! ने दीते पडेला उद्देशो भील उद्देशामां कडेवामां आवेल छे, अर्थात् पडेला उद्देशा प्रभाणेतु इधन भील उद्देशामां समज्जुं तेम कहेल छे, ओज प्रभाणे अहियां पणु ओकेन्द्रिय

मुपपातादारभ्य 'असकृत् अथवा अनन्तकृत्वः एतत्पर्यन्तं सर्वमिहापि वक्तव्यम् 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जात्र विहरह' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यात्रद्विहरति, हे भदन्त ! प्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाणा मुपपातादिविषये यद्देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्कृतिं वन्दित्वा नमस्यित्वा यात्रद्विहरतीति ॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके षष्ठोद्देशकः समाप्तः ॥३५६॥

'पहमअपहमसमय कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति' प्रथमाप्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते प्रथम-प्रकार से यहाँ पर भी एकेन्द्रिय जीवों के उत्पाद से लेकर 'यावत् वे वर्षा अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं' इस अन्तिम पाठ तक कह लेना चाहिये 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियों के उत्पाद आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब सत्य ही है ऐसा कहकर गौतमने प्रभुश्रीको वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

॥ शतक ३५ वां उद्देशक छट्टा लमाप्त ३५-६॥

'पहम अपहम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! इत्यादि' टीकार्थ-हे भदन्त ! प्रथम अप्रथम समयवर्ती कृतयुग्म कृतयुग्म राशि-प्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ?

श्रवोना उत्पादथी लभने यावत् तेओ त्यां अनंतवार उत्पन्न थथ युक्या छे. आ छेदला पाठ सुधी कडेपुं लेधंओ.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् पडेला पडेला समय कृतयुग्म कृतयुग्म ओकेन्द्रियोना उत्पाद विगेरे विषयना संणधमां आप देवानुप्रिये ने कथन थरुं छे, ते सधणुं कथन सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वाथा सत्य न छे आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

॥छट्टी उद्देशो समाप्त ॥३५-६॥

सातमा उद्देशानो प्रारंभ—

टीका-पहमअपहमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! इत्यादि हे भगवन् प्रथम अप्रथम समयमा रडेवावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा

स्तथैव ये अप्रथमो द्व्यादि समयः कृतयुगमकृतयुगमत्वानुभूते येषां मेकेन्द्रियाणां ते प्रथमाप्रथमसमयकृतयुगमकृतयुगमकेन्द्रिया इति कथ्यन्ते ते इत्थंभूता एकेन्द्रियाः कुत उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरयति—इहापि अतिदेशद्वारेण 'जहा' इत्यादि 'जहा पढमसमय उद्देशो तहेव भाणियव्वो' यथा—प्रथमसमयोद्देशो द्वितीयोद्देशक स्तथैव सप्तमोद्देशकोऽपि समग्रो वक्तव्यः। अत्र च एकेन्द्रियत्वोत्पाद-प्रथमसमयवर्तित्वे तेषां यद्विवक्षितसंख्यानुभवस्याप्रथमसमयवर्तित्वं तत्प्राग्भव सम्बन्धिनीं समयसंख्यामधिकृत्येति विज्ञेयम्। एवमुत्तरत्रापीति 'सेवं

इस प्रश्न का अतिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं— 'गोयमा ! जहा पढमसमय उद्देशो तहेव भाणियव्वो' हे गौतम ! जसा प्रथम समय उद्देशक अर्थात् द्वितीय उद्देशक कहा जा चुका है इसी प्रकार से यह सानत्रां उद्देशक भी सम्पूर्ण रूपसे कह लेना चाहिये। यहां एकेन्द्रिय रूप से उत्पन्न होने के प्रथम समयवर्ति होने पर भी कृतयुगम कृतयुगम राशिरूपसे विवक्षित संख्याका जो यहाँ अनुभवन है—अर्थात् विवक्षित संख्या के अनुभवन करने की अप्रथम समयवर्तिता है—वह पूर्वभव की समय संख्या को लेकर कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। तात्पर्य इसका ऐसा है कि एकेन्द्रिय रूप होने के प्रथम समय में वर्तमान जो जीव हैं उन्होंने पूर्वभव में विवक्षित राशि रूप संख्या का अनुभवन किया है—अतः ऐसे जीव प्रथमाप्रथम समयवर्ती एकेन्द्रिय जीव कहे गये हैं। आगे भी इसी प्रकार से जानना चाहिये। 'सेवं

એકેન્દ્રિય જીવો કયા સ્થાન વિશેષથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે? આ પ્રશ્નનો અતિદેશ (બલામણ) દ્વારા ઉત્તર આપતાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે— 'ગોયમા ! જહા પઢમસમય ઉદ્દેસો તહેવ ભાણિયવ્વો' હે ગૌતમ ! જે પ્રમણે પ્રથમ સમય સંબંધી ઉદ્દેશો અર્થાત્ બીજો ઉદ્દેશો કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે અહિયાં સાતમો ઉદ્દેશો પણ સમજવો. બેઠએ અહિયાં એકેન્દ્રિય પણાથી ઉત્પન્ન થવાના પ્રથમ સમયમા રહેનારા હોવા છતાં પણ કૃતયુગમ કૃતયુગમ રાશિરૂપ છે. અહિયાં વિવક્ષિત સંખ્યાનો અનુભવ કરવો તે અપ્રથમ સમયવર્તિ પણ કહેલ છે. આ પૂર્વભવની સમયસંખ્યાને લઇને કહેવામાં આવેલ છે તેમ સમજવું. કહેવાતુ તાત્પર્ય એ છે કે—એકેન્દ્રિય રૂપ હોવાના પ્રથમ સમયમા રહેનારા જીવો છે, તેઓએ પૂર્વભવમાં વિવક્ષિત રાશિરૂપ સંખ્યાનો અનુભવ કરેલ છે જેથી એવા જીવો પ્રથમ અપ્રથમ સમયમાં રહેનારા એકેન્દ્રિય જીવો કહેવાય છે હવે પછી પણ એજ પ્રમાણે સમજવું બેઠએ.

भंते । सेवं भंते ! त्ति' तद्देवं भदन्त । तद्देवं भदन्त । इति हे भदन्त ! प्रथमा प्रथमसमयकृतयुगकृतयुगमैकेन्द्रियाणां मुत्पात्तादिविषये यत् कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते यावद् यथासुखं विहरतीति ।

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके सप्तमोद्देशकः समाप्तः ॥३५॥७॥

'पहम चरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' प्रथमचरमसमय कृतयुगकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते प्रथमाश्च ते विवक्षितसंख्यानुभूतेः प्रथमसमयवर्तित्वात् चरमसमयाश्च मरणसमयवर्तिनः परिशाटगता इति प्रथमचरमसमयाः, इत्थंभूता स्ते च ते कृतयुगराशिप्रमाण एकेन्द्रिया स्ते प्रथमचरम कृतयुग कृतयुगमैकेन्द्रिया इति कथ्यन्ते एते कुत उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरयति-इहापि अतिदेशद्वारेणैव 'जहा' इत्यादि 'जहा

भंते ! सेवं भंते !' त्ति' हे भदन्त ! प्रथमाप्रथमसमयवर्ती कृतयुगकृतयुग एकेन्द्रिय जीवों के उत्पाद आदिके विषय में जो आपने कहा है वह सब सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संघम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । सू०१।

॥ शतक ३५ वां उद्देशक सातवां समाप्त ३५-७॥

'पहमचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि ।

टीकार्थ-हे भदन्त ! प्रथमचरमसमयवर्ती कृतयुगकृतयुग राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इस

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् प्रथम अप्रथम समयमां रडेवा वाणा कृतयुग्म कृतयुग्म ऐकेन्द्रिय एवेना उत्पाद विगेरेना संभंधमां आप देवानुप्रिये जे कथन कथुं छे, ते सघणुं कथन सर्वथासत्य छे, हे भगवन् आप देवानुप्रियतु सघणुं कथन सर्वथा सत्य जे छे. आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्री ने वंदना नमस्कार करीने. ते पछी संघमअने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

॥सातमो उद्देशो समाप्त ३५-७।

आठमा उद्देशानो प्रारंभ—

'पहम चरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि हे भगवन् प्रथम चरम समयमां रडेवावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म

चरमुद्देसओ तहेव निरवसेस' यथा चरमोद्देशकश्चतुर्थः कथित स्तथैव निरवशेषमष्ट-
मोद्देशकोऽपि भणितव्यः, अत्र देश नोत्पद्यन्ते ऽनस्ते नोलेक्ष्याऽपि न भवति उप-
पातादारभ्य 'असई अदुवा अणंतखुत्तो' 'असकृत् अथवा अनन्तकृत्वः' एतत्पर्यन्तं
संपूर्णमपि प्रकरणं वक्तव्यम् । सेव भते ! सेव भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं
भदन्त इति ॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतकेऽष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥३५।८।

सम्बन्धमें अतिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—
'जहा चरमुद्देसओ तहेव निरवसेस' जैसा चरम उद्देशक—चौथा उद्देशक—
कहा गया है। वैसा ही यह आठवां उद्देशक कहा गया है। जो एकेन्द्रिय
जीव विवक्षित संख्याकी अनुभूति के प्रथम समयवर्ती होकर मरणवर्ती
हैं ऐसे वे कृतयुग्मकृतयुग्म राशिरूप एकेन्द्रिय जीव प्रथम चरम समय-
वर्ती कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीव कहे गये हैं। यहां देव उत्पन्न
नहीं होते हैं। इसलिये तेजोलेश्या भी नहीं होती है। इनके उत्पादसे
लेकर 'ये यहाँ अनेकवार अथवा अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं' इस
अन्तिम प्रकरण तक सब प्रकरण वक्तव्य है। सेवं भंते ! सेवं भंते !
त्ति' 'हे भदन्त आपका यह सब कथन सर्वथा सत्य है २। इस प्रकार
कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वंदना

राशिवाणा एकेन्द्रिय एवो कथा स्थानथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना
उत्तरमां प्रभुश्री अतिदेश द्वारा गौतमस्वामीने कहे छे के—'जहा -चरमुद्देसओ
तहेव निरवसेस' ने प्रमाणे चरम उद्देशो अटझे के— योथो उद्देशो कडेल छे,
छे, एजे प्रमाणे आ आठमा उद्देशांतुं कथन पणु समज्जुं. ने एकेन्द्रिय
एवो विवक्षित संख्याना अनुभूतिना—अनुभवना प्रथम समयमां रडेवावाणा
थधने मरणुना समयवर्ति छे. एवा ते कृतयुग्म कृतयुग्म राशिइप एकेन्द्रिय
वाणा एवो प्रथम समयमां रडेवावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिइप कडेवामा
आवेल छे. तेमां हेवो पणु उत्पन्न थाय छे. तेथी तेओने तेजोलेश्या पणु
डोय छे. तेओना उत्पादथी लधने तेओ अडियां अनेकवार अथवा अनंतवार
उत्पन्न थधं चूक्या छे आ छेदशा प्रकरणु सुधीनुं प्रकरणु कडी देवुं.

'सेवं भते ! सेवं भंते ! त्ति' डे लगवन् प्रथम अप्रथम समयमां रडेवा-
वाणा कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय एवोना उत्पाद विगेरेना संभंधमां आप
हेवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणु कथन सर्वथा सत्य न छे, डे लगवन्
आप हेवानुप्रियुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कडीने गौतम-

‘पहम अचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदिया णं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति’ प्रथमाचरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते एकेन्द्रियत्वेनोत्पत्तौ प्रथमः समयो विद्यते येषां ते प्रथमाः
तथैवाचरमसमयास्तु एकेन्द्रियोत्पादापेक्षया प्रथम समयवर्तिन इह विव-
क्षिताः, चरमत्त्रनिषेधस्य तेषु विद्यमानत्वात्, अन्यथाहि द्वितीयोद्देशकोक्ताना-
मवगाहनादीनां यदि समत्वं कथितं तन्न स्यात् ततः कर्मधारयः अतः प्रथमा

नमस्कार कर बाद में वे संयम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए
अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥सू० १॥

३५ पैतीस वे शतक का आठवां उद्देशक समाप्त

‘पहम अचरम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदिया णं भंते ! कओ-
हिंतो उववज्जंति’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! प्रथम अचरम समयवर्ती कृतयुग्मकृतयुग्म राशि-
प्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ?
उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं हे गौतम ! जैसा द्वितीय उद्देशक में कहा गया
है वैसा ही इस उद्देशक में कह लेना चाहिये । जो एकेन्द्रिय जीव विव-
क्षित समय की अनुभूति के प्रथम समय में है ऐसे वे एकेन्द्रिय जीव
प्रथम कहलाते हैं और एकेन्द्रिय रूपसे उत्पाद की अपेक्षा जो प्रथमादि
समयवर्ती है ऐसे वे एकेन्द्रिय प्रथम अचरम है । इनमें चरमताका
निषेध किया गया है । यदि ऐसा न हो तो फिर उद्देशक में कथित

स्वामीने प्रभुश्रीने वदना करी तेओने नमस्कार कर्या वदना नमस्कार करीने ते
पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने लापित करता थका पोताना
स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

आठमो उद्देशो समाप्त ॥३५-८॥

नवमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘पहम अचरम कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओहिंतो !
उववज्जंति’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् प्रथम अचरम समयमां रडेवावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म
राशिवाणा एकेन्द्रिय लवो क्या स्थान विशेषमांथी आवांने उत्पन्न थाय-छे ?
आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के-डे गौतम ! योथा
उद्देशामां ने प्रमाद्येत्तुं कथन करवामां आण्युं छे, अत्र प्रमाद्येत्तुं कथन आ
उद्देशामां कडेत्तुं लेधंओ. एकेन्द्रिय पण्णाथी उत्पन्न थवामां नेओने प्रथम
समय लागे छे, ओवा ते एकेन्द्रिय लवो प्रथम अचरम कडेवाय छे. तेओमां
अरम पण्णानो निषेध करवामां आवेल छे. ने तेम न डोय तो पछी भीज

चरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः कथरन्ते एतेषा मुत्पत्तिः कुत आगत्य भवन्ति ? इति प्रश्नः उत्तरयति-अतिदेशेन 'जहा' इत्यादि, 'जहा वीभो उद्देश्यो तद्देव निरवसेसं' यथा द्वितीयोद्देशकस्तथैव निरवशेषम् एतच्छतकीय द्वितीयोद्देशक प्रथमसमयैकेन्द्रियाणां यथा उपपातादिकं कथितं तथैव निरवशेषमिहापि ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जात्र विहरइ' तद्देवं भदन्त ! तद्देवं भदन्त ! इति यात्रद्विहरति, हे भदन्त ! प्रथमाचरमकृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियाण उपपातादि विषये यद्देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते यात्रद्विहरतीति ।

॥ पञ्चविंशत्तमे शतके नवमोद्देशकः समाप्तः ॥३५१॥

अवगाहना आदि की जो समानता यहाँ कही गई है वह नहीं हो सकती है । हस्ती शतक के छिनीय उद्देशक में प्रथम समयमें एकेन्द्रियों का जैसा उत्पाद आदि कहा गया है वैसा ही भव कथन यहाँ ९ वें उद्देशक में है ऐसा जानना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जात्र विहरइ' हे भदन्त ! प्रथमाचरम कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों के उपपात आदि के विषय में जो आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे तप और संघमसे आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

॥ शतक ३५ वां उद्देशक नौवां समाप्त ॥३५-९॥

उद्देशाभां कडेल अवगाहना विगेरेतु ते समान पणु अडियां कडेवाभां आवेल छे, अणु प्रभाणेतु सधणु कथन अडियां आ ६ नवभां उद्देशाभां पणु कडेल छे, तेम समजणु'.

'सेवं भवे ! सेवं भते ! त्ति' छे भगवन् प्रथम चरम कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियणोना उपपात विगेरे विषयना सणधमां आप देवानुप्रिये ते कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वा सत्य छे छे भगवन् आप देवानुप्रियणुं सधणु कथन सर्वा सत्य ज छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीणे प्रभुश्रीने वंदना करी तेणेने नमस्कार कया वदना नमस्कार करीने ते पथी तेणे संघम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. । सू०१॥

॥ नवमो उद्देशो समाप्त ॥३५-६॥

‘चरमचरम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ चरमचरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते ? चरमाश्च ते विवक्षितसंख्यानुभूतेश्वरममयवर्तित्वात्, चरमसमया मरणसमयवर्तिनः, इत्थंभूता एकेन्द्रिया चरमचरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कथ्यन्ते एतेषा मुत्पादः कुत इति प्रश्नः, उत्तरयति-अतिदेशद्वारेण-‘जहा’ इत्यादि ‘जहा चउत्थो उद्देशओ तहेव’ यथा चतुर्थ उद्देशक स्तथैव एतच्छतकीय चतुर्थो-देशके यथा कथितं तदिहापि तथैव सर्वं ज्ञतव्यमिति, सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदंवं भदन्त ! तदंवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! चरमचरमसमय कृतयुग्म

‘चरम चरम कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उवव-ज्जंति’ हे भदन्त ! चरम चरम समयवर्ती कृतयुग्म कृतयुग्म राशि-रूप एकेन्द्रिय जिव किञ्च स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? विवक्षित संख्याकी राशिके अनुभव के अन्तिम समय में वर्तमान होने से चरम और मरण समयवर्ति होनेसे चरमवाले ऐसे जो कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव हैं वे चरमचरमसमय-कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय जीव हैं । इनका जन्म कहां से आकरके होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में अतिदेश द्वारा गौतम को समझाते हुए प्रभुश्री कहते हैं-‘जहा चउत्थो उद्देशओ तहेव’ हे गौतम ! इसी शतकके चतुर्थ उद्देशक में जैना कहा गया है वैसा ही वह सब यहां कह लेना चाहिये । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ ‘हे भदन्त ! चरम

दसमा उद्देशेनो प्रारंभ—

‘चरम चरम कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति, ध.

हे लगवन् अरम अरम समयमां रडेनारा कृतयुग्म कृतयुग्म राशि-रूप एकेन्द्रिय एवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? विवक्षित संख्यानी राशिना अनुभवना छेदना समयमां रडेनारा डोवाथी अरम अने मरण समयमां रडेवावाणा डोवाथी अरम संख्यावाणा एवा के कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय एवो छे, तेओ अरम अरम कृतयुग्म कृतयुग्म राशी वाणा एकेन्द्रिय एवो छे, तेओ अरम अरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय एवो छे. तेओनो जन्म कथाथी आवीने थाय छे ? आ प्रभना उत्तरमां अतिदेश-अलाभणथी प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के-डे गौतम ! आ यांतीसमा शतकना एथा उद्देशमां के प्रमाणे कडेवासां आवेद छे, ओज प्रमाणेनुं ते सधणुं कथन अहियां पणु समजवुं नोउओ.

कृतयुगमैकेन्द्रियाणामुपपातादि विषये यद् देवानुप्रियेण कथित तत्सर्वं सत्त्वमेवेति कथयित्वा गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥३५॥१०॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके दशमोद्देशकः समाप्तः ॥३५॥१०॥

‘चरम अचरमसमय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ चरमाचरमसमय कृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रियाः खल्ल भदन्त ! कुव उत्पद्यन्ते ? चरमाः विवक्षितसंख्यानुभूते श्रमा सपये ये वर्तमानाः तथा—अचरमसमयाः प्रागुक्तयुगदेरेकेन्द्रियोत्पादापेक्षया प्रथमसमयवर्तिनः इत्थंभूताः कृतयुगम

चरम समय कृतयुगम कृतयुगम राशि प्रमित एरेन्द्रिय जीवों के उत्पात आदि विषय में आप देवानुप्रियेने जोर कहा है वह सब सत्य ही है । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री की स्तुति की और नमस्कार किया स्तुति और नमस्कार कर फिर वे तप और संयम से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

॥ शतक ३५ वां उद्देशक १० वां समाप्त ॥३५-१०

टीकार्थ—‘चरम अचरमसमय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भदन्त ! जो एकेन्द्रिय जीव चरम और अचरम समयवर्ती कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित हैं वे किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? विवक्षित संख्यानी अनुभूत के चरम समय में वर्तमान होने से इनमें चरमता और एकेन्द्रिय रूपसे

‘सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति’ डे लगवन् अरमअरम समयमा रडेतावाणा कृतयुगमकृतयुगमराशिवाणा अेकेन्द्रिय अुवोना उगत विगेरे विषयना सअंधमा आप देवानुप्रिये ने कथन कथुं छे, ते सधणु कथन सत्य छे, आप देवानुप्रियनुं सधणु कथन सवथा सत्य छे आ प्रभाणु कहीने गौतमस्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कया वदना नमस्कार करेने ते पथी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थाया ॥३५०१॥

॥दसमो उद्देशो समाप्त ॥३५-१०॥

अगीयारमा उद्देशानो प्रार ल —

‘चरम अचरम समय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ डे लगवन् अेकेन्द्रिय अुवो अरम अने अचरम समयवर्ति कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा छे, तेअो कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? विवक्षितसंख्याना अनुभवनना अरम समयमां रडेतावा डे वाधी तेअोमां अरम

कृतयुग्मैकेन्द्रिया स्ते चरमाचरम कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कथयन्ते । एतेषा
 युत्पादः कृतः ? इति प्रश्नः, उत्तरयति अतिदेशद्वारेण—'जहा' इत्यादि, 'जहा
 पढममपय उद्देश्यो तद्देव निरवसेसं' यथा, प्रथमसमयोद्देशको द्वितीय स्तथै-
 वेहापि निरवशेषं ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति जाव विहरइ'
 तद्देवं भदन्त ! तद्देवं भदन्त ! इति यावद् विहरति, इति ॥

॥ पञ्चविंशतमे ज्ञानके एकादशोद्देशकः समाप्तः ॥३५१॥

उत्पाद की अपेक्षा प्रथमादि समयवर्ती होने से इनमें अचरम
 समयता कही गई है, इनका उत्पाद कहां से होता है ? तो हम
 समयव्य में उत्तर देने हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—'जहा पढम समय
 उद्देश्यो तद्देव निरवसेसं' हे गौतम ! जैसा इसी ज्ञानक के द्वितीय
 उद्देशक में कहा गया है वैसा ही समयक कथन यहां पर भी करलेना
 चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति जाव विहरइ' हे भदन्त चरमा-
 चरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों के उत्पाद
 आदि के विषय में जो आप देवानुप्रियने कहा गया है यह सब सत्य ही
 है । २ इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार
 किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को
 भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥३०१॥

पैतीसवे ज्ञानक का ?? ग्यान्हवां उद्देशक समाप्त ॥३६-११॥

पणु अने ओकेन्द्रियपणुधी उत्पादनी अपेक्षाधी प्रथम समयमां वर्तमान
 हेवाधी तेओमां अचरम समय पाणुं कहेव छे, तेओने उत्पात क्यांधी
 थाय छे ? तो आ प्रश्नो उत्तर आपतां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे हे-
 'जहा पढमसमयउद्देश्यो तद्देव निरवसेसं' हे गौतम ! आ शतकता भील
 उद्देश्यामां ने प्रभाणु कहेव मां आवेल छे, ओज प्रभाणुतुं सधणुं कथन
 अहियां पणु कहेवुं लेईओ

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति' हे भगवन् चरम अचरम समय कृतयुग्म
 कृतयुग्म राशिवाणा ओकेन्द्रियधियोना उत्पाद विगेरे विषयमां आप देवानुप्रिये
 ने कथन कथुं छे ते सधणु कथन सर्वथा सत्य न छे, २ आ प्रभाणु रहीने
 गौतमस्वामीओ प्रभुश्री ने वंदना करी तेओने नमस्कार कया वंदना नमस्कार
 करीने ते पथी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता यथा
 पोताना स्थान पर विराजमान यथा ॥३०१॥
 ॥अज्ञिगारभो उद्देशो समाप्त ॥३५-११॥

‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ एवम् उपरोक्त प्रदर्शितक्रमेणैकादशोद्देशकाः संज्ञाताः ‘पदमो तद्भो पंचमभो य सरिसगमा’ प्रथम स्तृतीयः पञ्चमकश्च सदृश गमाः सदृशालापकाः ‘सेसा अट्ट सरिसगमा’ शेपा अष्टौ द्वितीयचतुर्थ षष्ठ सप्तमाष्टम नवम दशमैकादशाः सदृशालापकाः ‘नवरं चउत्थे छट्टे अट्टमे दसमेय देवा न उववज्जंति तेउलेस्ता नत्थि’ नवरं चतुर्थे षष्ठे अष्टमे दशमे चोद्देशके देवा नोत्पद्यन्ते तथा तेषां तेजोलेश्या नास्ति तत्र चरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियोद्देशके, षष्ठे प्रथमप्रथम समयकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियोद्देशके, अष्टमे-प्रथमचरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियोद्देशके, दशमे-चरमचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियोद्देशके, एषु चतुर्षुद्देशकेषु देवोत्पत्तिर्न वक्तव्येति भावः ।

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके प्रथममेकेन्द्रिय महायुग्मशतं समाप्तम् । ३५।१॥

टीकार्थ-‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ इत्यु पूर्वोक्त क्रम से ११ उद्देशक हैं । ‘पदमो तद्भो पंचमभो य सरिसगमा’ इनमें प्रथम, तृतीय और पंचम ये उद्देशक सदृश आलापवाले हैं । ‘सेसा अट्ट सरिसगमा’ और द्वितीय, चतुर्थ षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम एवं ग्यारह वां ये आठ उद्देशक समान आलापवाले हैं । ‘नवरं चउत्थे छट्टे अट्टमे दसमे य देवा न उववज्जंति’ परन्तु चौथे छठवें, आठवें और दशवें उद्देशक में देवों का उत्पाद नहीं है । इसलिये वहां तेजोलेश्या नहीं है । चरमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय उद्देशक चतुर्थ उद्देशक है । प्रथम प्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय उद्देशक छठवां उद्देशक है । प्रथम चरम समय कृतयुग्म एकेन्द्रिय उद्देशक आठवां उद्देशक है । चरमचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय उद्देशक दशवां उद्देशक है । इनमें देवों की उत्पत्ति वक्तव्य नहीं हुई है ।

॥ पैंतीसवें शतक में एकेन्द्रिय महायुग्म शत समाप्तः ॥

‘एवं एए एकारस उद्देशगा’ आ पूर्वोक्त क्रमसे ११ अगियार उद्देश्याओ कल्या छे. ‘पदमो तद्भो पंचमभो य सरिसगमा’ तेमां पडेको अने त्रीले तथा पात्थमे सरभा आलापकोवाणा छे ‘सेसा अट्ट सरिसगमा’ तथा भीन्ने, योथो, छट्टो, सातमे आठमे नवमे, दसमे अने अगियारमे आ आठे उद्देश्याओ सरभा आलापकोवाणा छे ‘नवरं चउत्थे छट्टे अट्टमे दसमे य देवा न उववज्जंति’ परंतु योथा, छट्टा, आठमां तथा दसमा उद्देश्यामा देवोना उत्पात थना नथी. तेथी त्यां तेनेलेश्या डोती नथी अरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय उद्देशक छट्टो, उद्देशो छे प्रथम अरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियोना आठमे उद्देशो छे अरमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रियोना दसमे उद्देशो छे तेमा देवोनी उत्पात्ती कडेल नथी

एकेन्द्रिय महायुग्म शतक समाप्त

‘अह विवियं एगिदियमहाजुम्म सयं’

मूलम्--कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? गोयमा ! उववाओ तहेव एवं जहा ओहि
उद्देसए । नवरं इमं नाणत्तं--ते णं भंते ! जीवा किं कणहलेस्सा ?
हंता गोयमा ! कणहलेस्सा तेणं भंते ! कणहलेस्स कडजुम्म
कडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जह-
न्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं । एवं ठिईए वि । सेसं
तहेव जाव अणंतखुत्तो । एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५॥सू०२॥

पढम समय कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिदियाणं
भंते ! कओ उववज्जंति ? जहा--पढम समय उद्देसओ । नवरं
ते णं भंते ! जीवा कणहलेस्सा ? हंता कणहलेस्सा । सेसं तं चेव ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५--२॥सू०२॥

एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देसगा भाणिया तथा
कणहलेस्ससए वि एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा । पढमो तइओ
पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ट वि सरिसगमा । नवरं चउत्थ
छट्ट अट्टमदसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स । सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति ॥३५--२॥

छाया--कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ?
गौतम ! उपपात स्तथैव । एव यथा औघि ऋद्देशकः । नवरं सिदं नानात्वम्--ते खलु
भदन्त ! जीवाः किं कृष्णलेश्याः ? इत, गौतम ! कृष्णलेश्याः । ते खलु भदन्त !
कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? गौतम !
जघन्येन एकं समयम्, उत्कर्षेणान्तर्मुहूर्तम् । एवं स्थितावपि । शेषं तथैव यावदनन्त
कृत्वः, एवं षोडश अपि युग्मा भणितव्याः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ३५।

प्रथमसमय कृष्णलेश्य कृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते यथा प्रथमसमयोद्देशकः । नवरं ते खलु भदन्त ! जीवाः कृष्णलेश्याः ?
इन्त कृष्णलेश्याः शेषं तदेव । तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥३५॥२॥

एवं यथा औघिकशते एकादशोद्देशका भणिताः तथा कृष्णलेश्य शतेऽपि एकादशोद्देशका भणितव्याः । प्रथम स्तृतीयः पञ्चमश्च सदृशगमाः शेषा अष्टावपि सदृशगमाः । नवरं चतुर्थं षष्ठाष्टम-दशमेषु उपपातो नास्ति देवस्य । तदेव भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५॥२

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शते द्वितीयमेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् । ३५।२॥

टीका-‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिंदिया ण भंते । कओ उववज्जंति’ कृष्णलेश्य कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत आगत्य उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य स्तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो देवेभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा ! हे गौतम ! उववाओ तहेव एवं जहा ओहि उद्देसए’ उपपातः, कृष्णलेश्यैकेन्द्रियाणां तथैव एवं यथा औघिकोद्देशकः, अर्यैव शतकस्य प्रथमोद्देशको वर्णितः प्रथमोद्देशकवर्णितप्रकारेणैव कृष्णलेश्य कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाणामुपपातो ज्ञातव्य इति ‘नवरं इमं नाणत्तं’ नवरमिदं वक्ष्यमाणनानात्वं

द्वितीय एकेन्द्रिय महायुगम शत

‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाण भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ-हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरघिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘गोयमा ! उववाओ तहेव एवं जहा ओहि उद्देसए’ इन कृष्णलेश्यावाले कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रियों का उपपात जैसा कि इसी शतक के प्रथम उद्देशक में कहा गया है वैसा ही हैं । ‘नवरं इमं नाणत्तं’ परन्तु यहां ऐसी विशे-

णील एकेन्द्रिय महायुगम शतकने प्रारंभ-

‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते । धल्यादि

हे भगवन कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा एकेन्द्रिय एवो क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरघिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्येनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-‘गोयमा ! उववाओ तहेव एवं जहा ओहिउद्देसए’ आ कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा एकेन्द्रियेने उपपात नेम के आ शतकने पडेला उद्देशमा कडेवामा आवेस छे. ओज प्रमाणे छे. ‘नवरं इमं

भेदः सामान्यैकेन्द्रियेभ्यः कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रियाणाम् । 'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा' ते खल्ल भदन्त ! जीवाः किं कृष्णलेश्यावन्तः ? उत्तरमाह—'हंता गोयमा ! कण्हलेस्सा' इन्त गौतम ! ते जीवाः कृष्णलेश्यावन्तो भवन्तीति ! 'ते णं भंते ! कण्हलेस्स कडजुम्मकडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होति' ते खल्ल भदन्त ! कृष्णलेश्यकृतयुग्मकृतयुग्मैकेन्द्रिया इति कालतः क्रियच्चिरं भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, गोयमा' हे गौतम ! 'जहन्नेणं एकं समयं' जघन्येन एकं समयं जघन्यत एकसमयानन्तरं संख्यान्तरं भवन्तीति । 'उक्कोसेणं अंतो मुहुत्तं' उत्कर्षेणान्तर्मुहुत्तं यावत् कृष्णलेश्यैकेन्द्रिया भवन्तीति । तदनन्तरं कृतयुग्मकृतयुग्मत्वानुभवाभावात् 'एवं ठिईए वि' एवं

वता है—अर्थात् सामान्य एकेन्द्रियों की अपेक्षा इन कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रियों के कथन में ऐसी विशेषता है—'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा' हे भदन्त ! क्या ये जीव कृष्णलेश्यावाले होते हैं ? 'हंता गोयमा !' हां, गौतम ! ये जीव कृष्णलेश्यावाले होते हैं । 'ते णं भंते ! कण्हलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होति' हे भदन्त । ये कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव कालकी अपेक्षा इस रूप में कब तक रहते हैं ? 'गोयमा ! जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं' हे गौतम ! ये एकेन्द्रिय जीव इस रूप में जघन्य से तो एक समय तक रहते हैं और उत्कृष्ट से एक अन्तर्मुहुत्त तक रहते हैं । इस के बाद इनमें यह रूपता नहीं रहती है । 'एवं ठिईए वि' इसी प्रकार

नाणत्त' परंतु अडियां अे विशेष पल्लुं छे अर्थात् सामान्य अेकेन्द्रियो करतां आ कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा अेकेन्द्रिय अेवोना कथनमां आ प्रभाणु विशेषपल्लुं छे—'ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा' छे लगवन् शुं ते अेवो कृष्णलेश्यावाणा होय छे ? 'हंता गोयमा !' हा गौतम ! आ अेव कृष्णलेश्यावाणा होय छे. 'ते णं भंते ! कण्हलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिदियत्ति कालओ केवच्चिरं होति' छे लगवन् आ कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा अेकेन्द्रिय अेवो काणनी अपेक्षाअे आ इपथी कयां सुधी रडे छे ? उत्तरमां प्रलुश्री कडे छे कडे—'गोयमा ! जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं' छे गौतम ! आ अेकेन्द्रिय अेवो आ इपमां जघन्यथी तो अेक समय सुधी रडे छे, अने उत्कृष्टथी अेक अंतर्मुहुत्तं सुधी रडे छे. ते पथी 'तेअेमां आ प्रकार पल्लु रडेत्तुं नथी. 'एवं ठिईए वि' अेव प्रभाणु तेअेमां

पूर्वदेव स्थितात्रपि जघन्येनैकं समयमुत्कर्षणान्तं मुहूर्त्तम् कृष्णलेश्यावता स्थिति कृष्णलेश्या कालवदवसेयेत्यर्थः । 'सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो' शेषं स्थित्यतिरिक्तं सर्वं तथैव औघिकशतकीयमथमोदेशकवदेव यावदनन्तकृत्वः । 'एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा' एवं कथित प्रकारेण षोडशापि युग्मा कृतयुगमकृतयुगमदारभ्य कलयोजकलयोजा अपि पठनीया इति । 'सेवं भते ! सेवं भते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति हे भदन्त ! कृष्णलेश्यकृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रिय जीवानामु-

से इनकी स्थिति भी जघन्य से एक समय की और उत्कृष्ट से एक अन्तर्मुहूर्त्त की होनी है । 'सेस तहेव जाव अणंतखुत्तो' बाकी का और सब कथन सामान्य एकेन्द्रिय जीवों के जैसा ही है । और यह कथन इनके सम्बन्ध में 'यावत् ये हस रूप में अनन्तवार उत्पन्न होते हैं' यहाँ तक हैं । 'एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा' इसी प्रकारसे इनके सोलह महायुगम भी कहलेना चाहिये । अर्थात् इनके कृतयुगम कृतयुगम से लेकर कलयोज कलयोज महायुगम तक जो इन के महायुगम प्रकट किये हैं सो उन २ महाराशिवाले इन एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में पूर्वोक्त कथन के अनुसार ही कथन करलेना चाहिये और यह कथन 'यावत् वे इन इन महायुगमों के रूप में अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं' हस अन्तिम कथन तक जानना चाहिये ।

'सेवं भते ! सेवं भते ! त्ति हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीवों के उदपात आदि में जो आप

स्थिति पणु जघन्यधी अक समयनी अने उत्कृष्टधी अक अतर्मुहूर्त्तनी छे थ छे. 'सेस तहेव जाव अणंतखुत्तो' भाकीनुं भाकीनुं सधणु कथन सामान्य अकेन्द्रिय जीवोना कथन प्रमाणे थ छे. अने आ कथन तेना सधधमां यावत् तेओ आ प्रकारधी अनंतवार उत्पन्न थछ थूक्या छे, 'आ कथन सुधी कडेल छे. 'एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा' आ प्रमाणे आना सोण महायुगमे पणु कडेवा नेछ अे. अर्थात् आमने कृतयुगम कृतयुगमधी लधने कल्योजकल्योज महायुगम सुधी आमना ने महायुगमे पताव्या छे ते ते महाराशिवाणा आ अकेन्द्रियोना संबंधमां पडेला कडेल कथन प्रमाणे कथन कडेवुं नेछ अे. अने आ कथन यावत् तेओ अनंतवार उत्पन्न थछ थूक्यां छे आ छेला कथन सुधी समजवुं

'सेवं भते ! सेवं भते ! त्ति' हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगमकृतयुगम राशिवाणा अकेन्द्रिय जीवोना उदपात विगरेना संबंधमां आप देवानुप्रिये

पपात्वादि द्विपये यद् देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति कथयित्वा
गौतमो भगवन्तं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा यावद् विहरतीति ॥३५।२।१
इति पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयैकेन्द्रियमहायुगमशते प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥३५।२।१॥

‘पढम समय कण्हलेस्स कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! कओ उव्व
उंति’ प्रथमसमयकृष्णलेश्य कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरयति अतिदेशद्वारेण—‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा पढम
समय उद्देशओ’ यथा प्रथमसमयोद्देशकः, प्रथमसमयोद्देशके एतच्छतकस्य प्रथम

देवानुप्रियेने कहा है । यह सब सत्य ही है । २ इस प्रकार कहकर
गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार
कर फिर वे संघम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर विश्राजमान हो गये ॥सू०१॥

द्वितीय एकेन्द्रिय महायुगम शत में प्रथम उद्देशक समाप्त । ३५-२-१॥

‘पढम कण्हलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! प्रथम समय के कृष्णलेश्यावाले कृतयुगम
कृतयुगम राशिप्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के
उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न का अतिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री
गौतमस्वामी से कहते हैं ? ‘जहा पढम समय उद्देशओ’ हे गौतम !
जैसा कथन इसी शतक के प्रथम शत के द्वितीय उद्देशक में एकेन्द्रिय

के कथन धर्युं छे, ते सधणु कथन सत्य ज छे. छे लगवन् आप देवानुप्रियणु
आ विरय संणथी सधणु कथन सत्य ज छे. आ प्रभाणु कहीने गौतम-
स्वामीओ प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने
ते पथी समय अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थान पर विश्राजमान थया.

भीम एकेन्द्रिय महायुगम शतकमां पडेवो उद्देशो समाप्त

भीम उद्देशानो प्रारल—

‘पढमसमय कण्हलेस्स कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते ! इत्यादि

टीकार्थ—छे लगवन् प्रथम समयना कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगम कृतयुगम राशि-
वाणा एकेन्द्रिय ओवो कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
आ प्रश्नना उत्तरमां अतिदेश द्वारा प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के-
‘जहा पढमसमय उद्देशओ’ छे गौतम ! आ शतकना पडेला उद्देशामां एके

शतकीय द्वितीयोद्देशके येन प्रकारेणैकेन्द्रियाणां विषये कथितं तथैवात्रापि ज्ञान व्यमिति । 'नवरं तेणं भंते । जीवा किं कण्ठलेस्सा' नवरं प्रथम शतापेक्षया इदं वैलक्षण्यं यत् ते खलु भदन्त ! जीवाः किं कृष्णलेश्यारन्तः ? इति प्रश्नः । उत्तर-यति—'हंता' इत्यादि, 'हंता कण्ठ लेस्सा' हे गौतम ! ते जीवाः कृष्णलेश्यान्तो भवन्ति, इत्युत्तरम् 'सेसं तं चेव' शेषं तदेव यत् पूर्वशते कथितमिति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥

इति पञ्चत्रिंशत्तमेशतके द्वितीयैकेन्द्रियमहाशते द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥३५-२॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयशते तृतीयाद्येकादशोद्देशकाः पारभ्यन्ते ।

'एवं जहा ओहियसए एकारस उद्देशगा भणिया' एवं यथा औघिकशते पञ्चत्रिंशत्तमशतकस्य प्रथमे शतके औघिक-कृतयुग्मकृतयुग्माः १, प्रथमसमय

के सम्बन्ध में किया जा चुका है वैसा ही वह यहां पर जानना चाहिये । 'नवरं तेणं जीवा किं कण्ठलेस्सा' परन्तु यहां के कथन की अपेक्षा यहां के कथन में यही विशेषता है कि ये जीव कृष्णलेश्यावाले होते हैं । यही बात प्रश्नोत्तर रूप से प्रकट की गई है । 'सेसं तं चेव' अवशिष्ट कथन पूर्वशत में कहे गये अनुसार है । 'सेवं भंते । सेवं भंते । त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप के आन्ध्र को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥३५-२-२॥

पैंतीसवें शतक के दूसरे एकेन्द्रिय महाज्ञानक या

दूसरा उद्देशक समाप्त ॥३५-२॥

न्द्रिय लोकोत्ता संषधमां ने प्रमाणेनुं कथन कथुं छे, ऐञ प्रमाणेनुं कथन अहियां समञ्जुं 'नवरं ते णं जीवा किं कण्ठलेस्सा' परंतु त्यांना कथन करतां आ कथनमां ऐञ विशेष पणुं छे के आ लोको कृष्णलेश्यावाणा होय छे. ऐञ वात अहियां प्रश्नोत्तर इपथी प्रकट कटेल छे 'सेस तं चेव' भाकीनुं कथन पडेला शतकमां कहा प्रमाणे छे.

'सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रमाणेनुं कथन कथुं छे ते सधणुं कथन सत्य न छे २ आ प्रमाणे कहीने गौतम-स्वामीने प्रभुश्रीने वंदना करी अने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया.

षीण ऐकेन्द्रिय महाशतकमां णीने उद्देशो समाप्त ॥३५-२-२॥

कृतयुग्मकृतयुग्माः २, अप्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्माः ३, चरमसमय कृतयुग्म
 कृतयुग्माः ४, अचरमसमयकृतयुग्मकृतयुग्मा ५, प्रथमप्रथमसमय कृतयुग्म
 कृतयुग्माः ६, प्रथमाप्रथम समयकृतयुग्मकृतयुग्माः ७ । प्रथमचरमसमय
 कृतयुग्मकृतयुग्माः ८ । प्रथमाचरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्माः ९, चरम चरम
 समय कृतयुग्मकृतयुग्माः १०, चरमाचरमसमय कृतयुग्मकृतयुग्माः ११, इत्येत
 द्विशेषणविशिष्टानेकेन्द्रियानाश्रित्य ये एकादशेदेशका भणिताः कथिताः
 'तहा कण्ठलेस्ससए वि एकारस उद्देशगा भाणियन्वा' तथा तेनैव रूपेण
 कृष्णलेश्य पदविशिष्ट द्वितीयशतेऽपि एकादश उद्देशका भणितव्याः आलाप-

शतक ३५ उद्देशक ३-११ तक

टीकार्थ- 'एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देशगा भणिया' जिस
 प्रकार से औघिक शत में ३५ वे' शतक के प्रथम शतक में-कृतयुग्म
 कृतयुग्म १, प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म २, अप्रथम, समय कृतयुग्म
 कृतयुग्म ३, चरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ४, अचरम समय
 कृतयुग्म कृतयुग्म ५, प्रथम प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ६, प्रथमा-
 प्रथम चरमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म ७, प्रथम चरम समय कृतयुग्म
 कृतयुग्म ८, प्रथमाचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ९, चरम चरम
 समय कृतयुग्म कृतयुग्म १०, और चरमाचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म
 ११ इन विशेषणों से विशिष्ट एकेन्द्रियों को आश्रित करके ११
 उद्देशक कहे गये हैं। 'तहा कण्ठलेस्ससए वि एक्कारस उद्देशगा
 भाणियन्वा' उसी रूप से कृष्णलेश्यपद विशिष्ट द्वितीय शत में भी
 ११ उद्देशक कहलेना चाहिये। तथा इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार भी

त्रीलथी ११ भा सुधीना उद्देशाओनो प्रारंभ—

'एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देशगा भणिया'

टीकार्थ- ये प्रमाणे ३५ पात्रीसभा शतकना पडेला उद्देशाभां-कृतयुग्मकृतयुग्म१,
 प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म २, अप्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्म ३, चरमसमय
 कृतयुग्म कृतयुग्म ४, अचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ५, प्रथम प्रथमसमय
 कृतयुग्म कृतयुग्म ६, प्रथमाप्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ७ प्रथम चरम
 समय कृतयुग्म कृतयुग्म ८ प्रथम अचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म ९ चरम
 चरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म १० अने चरम अचरम समय कृतयुग्म कृतयुग्म
 ११ आ प्रकारना विशेषणोवाणा ओकेन्द्रिय ओवेनो आश्रय करीने ११ अणियार
 उद्देशाओ कड्या छे. 'तहा काउलेस्ससए वि एक्कारस उद्देशगा भाणियन्वा' ओ
 प्रमाणे कृष्णलेश्याना पडवाणा थील शतकभां पणु ११ अणियार उद्देशाओ

प्रकारश्च स्वयमूहनीय इति । तत्र 'पहमो तहओ पंचमो य सरिसगमा'
 प्रथमोद्देशक तृतीयोद्देशकः पञ्चमोद्देशकश्च सदृशगमाः समानालापका भवन्ति ।
 'सेसा अट्टवि सरिसगमा' शेषाः द्वितीयचतुर्थषष्ठसप्तषाष्टमनवमदशमैकादशा-
 त्मका अष्टावपि उद्देशकाः सदृशगमाः सदृशालापकाः सन्ति 'नवरं चउत्थ
 छट्ट अट्टम दसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स' नवरं चतुर्थषष्ठाष्टमदशमोद्देशकेषु
 उपपातो नास्ति देवस्य एषु देवा नोत्पद्यन्ते इति भावः । 'सेव भंते सेव भंते ।
 त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुत्तमादिपद्भूपितबालब्रह्मचारि - 'जनाचार्य'
 पूज्यश्री-घासीलालव्रतित्रिचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
 व्याख्यायां पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयशते तृतीयादारभ्य एकादशान्ताः
 उद्देशकाः समाप्ताः ॥३५२॥१॥

॥ इति पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयमेकेन्द्रियमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥३५२॥

अपने आप बना लेना चाहिये । इन में 'पहमो तहओ पंचमो य सरिसगमा'
 प्रथम उद्देशक, तृतीय उद्देशक और पंचम उद्देशक एक से आलापक
 वाले हैं । 'सेसा अट्ट वि सरिसगमा' और द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ,
 सप्तम, अष्टम, नवम, दशम और एकादश ये आठ उद्देशक एक से
 आलापकवाले हैं । 'नवरं चउत्थ, छट्ट, अट्टम, दसमेसु उववाओ नत्थि
 देवस्स' परन्तु चतुर्थ में, छठे में, आठवें में एतद् दशवें में देव का
 उपपात नहीं होता है । 'सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जेसा

उडेवा जेधजे तथा आ सअंधगां आलापनेा प्रकार पणु स्वयं जनावीने
 समलु लेवे। 'पहमो तहओ पंचमो य सरिसगमा' पडेला उ शे। नीजे उदेशे।
 अने पायमे उदेशे। जेकसरभा आलापकेवाणा छे, 'सेसा अट्ट वि सरिसगमा'
 तथा भीजे, येथे, छटठे, सातमे, आठमे, नवमे, दसमे, अने अजियारमे।
 आ आठ उदेशे। जेक सरभा आलापकेवाणा छे 'नवरं चउत्थ छट्ट अट्टम
 दसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स' परंतु येथे, छठे, आठमे अने दशमे उदेशे।
 देवेने। उपपात थते नथी।

आपने यह कहा है वह सब कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पैतीसवें शतक के द्वितीय शतक में तृतीय उद्देशक से लेकर ११ वें उद्देशक पर्यन्त के उद्देशक समाप्त ॥३५-२-११॥

द्वितीय एकेन्द्रिय महायुगम शतक समाप्त हुआ ॥३५-२॥

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! ति' हे भगवन् आपे जे प्रभाणु आ विषयमां कथन करेल छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. आ प्रभाणु कहीने गौतम स्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना पांतीसमा शतकमां पीठ्ठ उद्देशाथी लधने अगियारमा उद्देशा सुधीना सधणा उद्देशाओ समाप्त ॥३५-२-११

उप मा शतकमां पीठ्ठुं एकेन्द्रिय महायुगम शतक समाप्त ॥३५-२॥



‘अहं तइयं एगिंदियमहाजुम्मसयं

मूलम्—एवं नीललेस्सेहि वि सयं कणहलेस्स सयसरिसं एक्का-
रस उद्देसगा तहेव सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

पणतीसइमे सए तइयं एगिंदिय महाजुम्म सयं समत्तं ॥३५-३॥

छायाः--एवं नीललेश्यैरपि शतं कृष्णलेश्यशतसदृशम्, एकादशोद्देशका-
स्तथैव । तदेवं भदन्त । तदेवं भदन्त ! इति ॥

पञ्चत्रिंशत्तमे शतके तृतीयमेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३५।३॥

टीका—‘एवं नीललेस्सेहि वि सयं कणहलेस्ससयसरिसं’ एवं नीललेश्यैरपि
शतं कृष्णलेश्यशतसदृशं ज्ञातव्यम्, यथा—कृष्णलेश्यामन्तर्भाव्य शतमेकेन्द्रियं
महायुगमाख्यं निर्मितं तथैव नीललेश्यमन्तर्भाव्यापि तृतीयमेकेन्द्रियमहायुगमशतं
निर्मातव्यम् । ‘एकारस उद्देसगा तहेव’ यथैव कृष्णलेश्यशते औधिककृतयुगम कृत-

शतक ३५ तृतीय एकेन्द्रिय महायुगम शत

टीकार्थ—‘एवं नीललेस्सेहिं वि सयं कणहलेस्ससरिसं एक्कारस
उद्देसगा तहेव सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ कृष्णलेश्यावालों के
सम्बन्ध में जैसा कृष्णलेश्या शतक कहा गया है । उसी रीति से
नीललेश्यावालों के सम्बन्ध में नीललेश्या शतक भी कहलेना चाहिये
जैसे वहां ११ उद्देशक कहे गये हैं वैसे ही यहां पर भी ११ उद्देशक
हैं ऐसा समझना चाहिये । तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि जिस
रीति से कृष्णलेश्या को आश्रित करके एकेन्द्रिय महायुगम नाम का
शतक निर्मित हुआ है । उसी प्रकार से नीललेश्या को आश्रित करके
तृतीय एकेन्द्रिय महायुगम शतक भी निर्मित कर लेना चाहिये । तथा
‘एक्कारस उद्देसगा तहेव’ कृष्णलेश्यावालों के शत में औधिक

त्रीण्येकेन्द्रिय महायुगम शतकनो प्र२०ल—

‘एवं नीललेस्सेहिं सयं कणहलेस्ससरिसं एक्कारस उद्देसगा तहेव—सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति’ कृष्णलेश्यावाणाञ्चोना संबन्धमां ँ प्रभाण्णु कृष्णलेश्या शतक
कडेवाभां आवेल छे ँण्णु प्रभाण्णु नीललेश्यावाणाञ्चोना संबन्धमां नील-
लेश्या शतक पण्णु कडेवुं ञ्णुं ँ, त्यां ँ प्रभाण्णु ११ अगियार उद्देशाञ्चो क्ख्हा
छे, ँण्णु प्रभाण्णुना ११ अगियार उद्देशाञ्चो अड्डियां पण्णु छे तेम समण्णुं.
आ कथननुं तात्पर्यं ँ छे के-ञ्जे रीते कृष्णलेश्याना आश्रय करीने ँकेन्द्रिय
महायुगम नामनुं शतक कडेवाभां आवेल छे, ँण्णु प्रभाण्णु नीललेश्याना
आश्रय करीने ँकेन्द्रिय महायुगम शतक पण्णु समण्णु देवुं ञ्णुं ँ. तथा

युगमोद्देशादारभ्य चरमाचरमकृतयुगमकृतयुगमोद्देशपर्यन्तमेकादशोद्देशकाः कृता स्त-
थैव इहापि नीललेश्य पदमधिकृत्य कृतयुगम कृतयुगमादि घटिता एकादशोद्देशका
अपि करणीयाः । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितवालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'

पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां

व्याख्यायां पञ्चत्रिंशत्तमशतके तृतीयमेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३५॥३

कृतयुगम कृतयुगम उद्देशक से लेकर चरम चरम कृतयुगम कृतयुगम
उद्देशक तक ११ उद्देशक किये गये हैं उसी प्रकार से यहां पर भी
नीललेश्य पद को लगाकर कृतयुगम कृतयुगम आदि घटित ११ उद्देशक
कर लेना चाहिये । 'सेवं भंते सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने
यह कथन किया है, वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर
गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना
नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते
हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत

"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पैंतीसवें शतकका

तीसरा महायुगम शतक समाप्त ॥३५-३॥

'एककारस उद्देशगा तद्देव' कृष्णुदेश्यावाणाञ्चोना शतकमां औधिक कृतयुगम
कृतयुगम उद्देश्या लघुने चरम चरम कृतयुगम कृतयुगम उद्देशा सुधी ११
अगियार उद्देशाञ्चो कडेवाभा आवेल छे, अञ्च प्रमाणे अडिया यणु नीललेश्या
पद लगावीने कृतयुगम कृतयुगम विगेरे ११ अगियार उद्देशाञ्चो समञ्वा.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवातुप्रिये ने प्रमाणे आ
विषयमां कहुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे हे भगवन् आपनुं
कथन सत्य न छे, अे प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीञ्च प्रभुश्रीने वंदना करी
नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी

प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना पांतीसमा शतकनुं त्रीणु अेकेन्द्रिय महायुगम

शतक समाप्त ॥३५-३॥

॥ 'अह चउत्थं एगिदिय महाजुग्गसयं ॥

मूलम्—एवं काउलेस्सेहि वि सयं कणहलेस्सस्रियसरिसं ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

छाया—एवं कापोतलेश्यैरपि शतं कृष्णलेश्यशतसदृशम् । तदेवं भदन्त !
तदेवं भदन्त ! इति ।

टीका—एवं कापोतलेश्यैरपि शतं कृष्णलेश्यशतसदृशम् । अत्र कापोत
लेश्यपदमधिकृत्य एकादशोद्देशका कृष्णलेश्यकृतयुगमकृतयुगमोद्देशकवद्देव एका-
दशोद्देशकाः पठनीया इति भावः । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त !
तदेवं भदन्त ! इति ।

॥ पञ्चत्रिंशत्तमशतके चतुर्थमेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३५॥४

शतक ३५ चतुर्थ एकेन्द्रिय महायुगम शत

'टीकार्थ'—'एवं काउलेस्सेहि वि सयं कणहलेस्सस्रियसरिसं—सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति' कापोतलेश्यावालों के सम्बन्ध में श्री कृष्णलेश्या
शतक के जैसा शतक बना लेना चाहिये । यहां कृष्णलेश्या के स्थान
में कापोतलेश्यापद रखकर ११ उद्देशक बनता है । हे भदन्त ! जैसा
आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर
गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार
कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ चतुर्थ एकेन्द्रिय महायुगम शत समाप्त ॥३५—४॥

येथा ऐकेन्द्रिय महायुगम शतकने प्रारंभ—

'एवं काउलेस्सेहि' वि सयं कणहलेस्सस्रियसरिसं 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'
कापोतलेश्यावाणाओना स अ धमां पणु कृष्णलेश्या शतकनी जेम शतक अनावीने
कडेपुं जेधंओ अहियां कृष्णलेश्याना स्थानमां कापोतलेश्या पद भूरीने ११
अगियार उद्देशाओ अनावी देवा. डे लगवन् आपे आ विषयमां जे कडेल छे
ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. डे लगवन् आपनु कथन सर्वथा सत्य
ज छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वदना करी तेओने
नमस्कार कर्या वदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

येथुं ऐकेन्द्रिय महायुगम शतक समाप्त ॥३५—४॥

॥ अह ५-१२ सयाइं'

मूलम्-भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा ओहियसयं तहेव । नवरं एकारससु
वि उहेसएसु अह भंते ! सव्वे पाणा जाव सव्वे सत्ता भवसि-
द्धिय कडजुम्मकडजुम्म एगिंदियत्ताए उववन्न पुव्वा ? गोयमा !
णो इणट्टे समट्टे सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥सू० १॥

पणतीसइमे सए पंचमं सयं समत्तं ॥३५-५॥

कणहलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं
भंते ! कओहिंनो उववज्जंति ? एवं कणहलेस्स भवसिद्धिय
एगिंदिए वि सयं वितियसयं कणहलेस्ससरिसं भाणियव्वं ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-६॥

एवं नीललेस्स भवसिद्धिय एगिंदिएहि वि सयं । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-७॥

एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिंदिएहि वि तहेव एकारस
उहेसगलंजुत्तं सयं । एवं एयाणि चत्तारि भवसिद्धियसयाणि ।
चउसु वि सएसु सव्वे पाणा जाव उववन्नपुव्वा ? णो इणट्टे
समट्टे । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-८॥

जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाइं भणियाइं एवं अभव-
सिद्धिएहिं वि चत्तारि सयाणि लेस्सा संजुत्ताणि भाणियव्वाणि ।
सव्वे पाणा० तहेव नो इणट्टे समट्टे । एयाइं वारसएगिंदिय-
महाजुम्म सयाइं भवंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥३५-१२॥

पणतीसइमं सयं समत्तं ॥३५॥

छाया—भवसिद्धिय कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त । कु उत्प-
द्यन्ते यथौघिकशतं तथैव । नवरमेकादशस्वपि उद्देशकेषु अथ भदन्त ! सर्वे प्राणा-
यावत्सर्वे सखाः भवसिद्धिककृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियतया उत्पन्नपूर्वाः शौतम !
नायमर्थः समर्थः शेषं तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५५॥

कृष्णलेश्य भवसिद्धिककृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त । कु उत्पद्यन्ते
एवं कृष्णलेश्य भवसिद्धिकैरपि शतं द्वितीयशत कृष्णलेश्यसदृशं भणितव्यम् तदेवं
भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५॥६॥

एवं नीललेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि शतम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति ॥३५॥७॥

एवं कापोतलेश्य भवसिद्धिकैकेन्द्रियैरपि तथैव एकादशोद्देशकसंयुक्तं शतम्
एवमेतानि चत्वारि भवसिद्धिकशतानि । चतुर्ष्वपि शतेषु सर्वे प्राणा यावत् उत्पन्न
पूर्वाः, नायमर्थः समर्थः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥३५॥८॥

यथा—भवसिद्धिकैश्चत्वारि शतानि भणितानि एवमभवसिद्धिकैरपि चत्वारि
शतानि लेश्या संयुक्तानि भणितव्यानि । सर्वे प्राणा तथैव नायमर्थः समर्थः ।
एवमेतानि द्वादश एकेन्द्रियमहायुगमशतानि भवन्ति । तदेवं भदन्त । तदेवं
भदन्त इति ३५।१२॥

॥ पञ्चत्रिंशत्तमं शतकं समाप्तम् । ३५॥

टीका—‘भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिदियाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति’ भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कु उत्पद्यन्ते किं
नैरयिकेभ्य आगत्य तिर्यग्भ्यो वा आगत्य मनुष्येभ्यो वा आगत्य देदेभ्यो वा
आगत्य समुत्पद्यन्ते इति पूर्ववदेव प्रश्नः, उत्तरमाह—अतिदेशद्वारेण ‘जहा’ इत्यादि

शतक ३५ पंचम शत से लेकर १२ वें शतक

टीकार्थ—‘भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म एगिदियाणं भंते !
कओ उववज्जंति’ हे भदन्त ! भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम राज्ञि
प्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते
हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्य-
ग्घोनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर

पांचमा शतकने प्रारंभ—

‘भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे
लगवन् भवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगम राशिवाणा ऐकेन्द्रिय एवो कथा स्थान
विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेभाथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अथवा तिर्यग्घेयोनिकेभाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा

‘જહા ઓહિયસયં તહેવ’ યથા એતસ્યૈવ શતકમ્યૌધિકશતં પ્રથમશતં તથૈવ-પ્રથમ શતકવદેવ સર્વં પ્રશ્નોત્તરાદિ જ્ઞાતવ્યમ્ । ઔધિકશતાપેશ્વયા યદ્વૈલક્ષણ્યં તદર્શયતિ- ‘નવરં’ ઇત્યાદિના-‘નવરં એકારસસુ વિ ઉદેમણ્સુ’ નવરમેકાદશશ્વપિ ઉદેશકેષુ ‘અહ મંતે ! સઠ્વે પાળા જાવ સઠ્વે સત્તા’ મદન્ત ! સર્વે પાળા યાવત્ સર્વે સત્ત્વાઃ યાવત્પદેન મૂતજીવયોઃ સંગ્રહો ભવતિ ‘મવસિદ્ધિય કહજુમ્મ કહજુમ્મ ઇગિ- દિયત્તાણ ઉવવન્નપુવ્વા’ મવસિદ્ધિકકૃતયુગ્મકૃતયુગ્મેકેન્દ્રિયતયા ઉત્પન્નપૂર્વાઃ હે મદન્ત ! સર્વે પ્રાણજીવધૂતસત્ત્વાઃ મવસિદ્ધિક કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મેકેન્દ્રિયતયા કિં પૂર્વં સમુત્પન્ના ઇતિ પ્રશ્નઃ, મગધાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘નો ઇણદ્દે સમદ્દે’ નાયમર્થઃ સમર્થઃ સર્વે જીવાઃ નોન્પન્નપૂર્વા ઇતાદશૈકેન્દ્રિયતયેતિ

કે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? અથવા દેવોં મેં સ્થે આકર કે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ?-હસ પ્રશ્ન કા અતિદેશ દ્વારા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રમુશ્રી ગૌતમસ્વામી સ્થે કહતે હૈં-‘જહા ઓહિયસયં તહેવ’ હે ગૌતમ ! જૈસા ઔધિક શતક મેં- હસી શતક કે પ્રથમ શતક મેં કહા ગયા હૈં-વૈસા હી સવ પ્રશ્ન ઓર ઉત્તર કે સમ્બન્ધ મેં યહાં કથન જાનના યાહિયે । ‘નવર’ એકારસસુ વિ ઉદેમણ્સુ અહ મંતે ! સઠ્વે પાળા જાવ સઠ્વે સત્તા મવસિદ્ધિય કહજુમ્મ કહજુમ્મ ઇગિદિયત્તાણ ઉવવન્નપુવ્વા’ પરન્તુ ઔધિક શતક કી અપેક્ષા જો મિચ્છતા યહાં હૈં યહ એસી હૈં-‘હે મદન્ત ! કયા સમસ્ત પ્રાણ યાવત્ સઠ્વ મવસિદ્ધિક કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમિત એકેન્દ્રિય સ્થુપ સે પહિલે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં ? તો હસ પર પ્રમુશ્રીકહતે હૈં-‘ગોયમા ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈં । અર્થાન્ સમસ્ત

મતુબ્ધોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા દેવોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નનો અતિદેશ દ્વારા ઉત્તર આપતાં પ્રમુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘જહા ઓહિયસયં’ હે ગૌતમ ! ઔધિક શતકમાં એટલે કે આ શતકના પહેલા શતકમાં જે રીતે કથન કરવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણેનું કથન પ્રશ્ન અને ઉત્તરરૂપ સઘણ કથન અહિયાં કહેવું જોઈએ. ‘નવર’ એકારસસુ વિ ઉદેમણ્સુ અહ મંતે ! સઠ્વે પાળા જાવ સઠ્વે સત્તા મવસિદ્ધિય કહજુમ્મ કહજુમ્મ ઇગિ દિયત્તાણ ઉવવન્નપુવ્વા’ પરન્તુ ઔધિક શતકના કથન કરતાં આ કથનમાં જે મિન્નપણું છે, તે એવું છે કે-‘હે ભગવન શુ’ સઘળા પ્રાણો યાવત્ સઘળા સત્ત્વો ભવસિદ્ધિક કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય પણાથી પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચૂકયા છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રમુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘ગોયમા ! ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ હે ગૌતમ ! આ અર્થ બરાબર નથી. અર્થાત્ સઘળા પ્રાણ,

भावः । 'सेसं तहेव' शेषम्-एतदतिरिक्तं तथैव शेषम् उपपातादिकम् अस्यैव शत-
कस्य प्रथम शतोक्तमेव ज्ञातव्यमिति भावः । 'सेव भंते । सेवं भंते त्ति' तदेवं
भदन्त । तदेवं भदन्त इति ।

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुभादिपदभूषितवालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालत्रिविद्विचितायां "श्री भगवतीसूत्रय" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां पञ्चत्रिंशत्तमे शतके पञ्चममेकेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् । ३५।५।

प्राण, स्वप्नस्तजीव, स्वप्नस्तभूत, और स्वप्नस्त सत्व इस प्रकार के
एकेन्द्रिय के रूपसे पहिले उत्पन्न नहीं हुए हैं । 'सेसं तहेव' इस भिन्नता
के अतिरिक्त सब कथन उपपात आदि के सम्बन्ध का विवेचन-इसी
शतक के प्रथम शत में कहे गये अनुसार है । 'सेव भंते ! सेवं भंते !
त्ति' हे भदन्त ! आपके द्वारा कहा गया यह सब सर्वथा सत्य ही है
इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्रीको वन्दना की नमस्कार किया
वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित
करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पैंतीसवें शतकका
पांचवा एकेन्द्रिय महायुग शतक समाप्त ॥३५-५॥

सधणा लुवे, सधणा भुनो, अने सधणा सत्ये आ प्रकारना एकेन्द्रिय
पण्ठाथी पडेलां उत्पन्न थया नथी. 'सेसं तहेव' आ किन्नपण्ठा शिवायणाकीनुं
थीनुं सधणुं उपपात विगेरे संभंधी कथननुं विवेचन आण शतकना पडेला
शतकमां क्हा प्रमाणे छे.

'सेव भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये कहेल आ
सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे, हे लगवन् आपे प्रतिपादन करेल आ
सधणुं कथन सत्य न छे आ प्रमाणे कहीने जौतभस्वामीये प्रभुश्रीने वदना
करी तेओने नमस्कार कर्या वदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने
तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका थका पोताना स्थान पर विराज-
मान थया ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना पात्रीसमा शतकनुं पाचवुं एकेन्द्रिय महायुग
शतक समाप्त ॥३५-५॥

‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्मएगिंदियाणं भंते !’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगमैकेन्द्रियाः खलु भदन्त ‘कओर्हितो उववज्जंति’ कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य यावद् देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते पूर्ववदेव मश्रः, इति पूर्ववदेवोत्तरयति—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं’ कण्ठलेस्स भवसिद्धिय एगिंदिएहि वि सयं वितिय कण्ठलेस्ससरिसं भाणियव्व’ एवं कृष्णलेश्यभवसिद्धिककृतयुगम कृतयुगमैकेन्द्रियैरपि शतम् एतच्छतकस्यैव द्वितीय कृष्णलेश्यशतसदृशमेव भणितव्यं द्वितीय कृष्णलेश्य शते यत्—यथा कथितं तत् तथैव सर्वमिहापि ज्ञातव्यमिति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

पञ्चत्रिंशत्तमे शतके षष्ठं शतं समाप्तम् ॥३५६

टीकार्थ—‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते !’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगम राशि प्रमित एकेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं’ कण्ठलेस्स भवसिद्धिय एगिंदिए हिं वि वितियसयं कण्ठलेस्ससरिसं भाणियव्व’ हे गौतम ! इन कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम एकेन्द्रियों के सम्बन्ध भी यह शत इसी शतक के द्वितीय कृष्णलेश्या शतक के जैसा ही जानना चाहिये । अतः द्वितीय कृष्णलेश्यावालों के सम्बन्ध में जैसा

छट्ठा ऐकेन्द्रिय महायुगशतकने। प्रारंभ—

‘कण्ठलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म एगिंदियाणं भंते !’ हे लगवन् दृष्ट्युलेश्यावाणा भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा ऐकेन्द्रिय एवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकोभांथीआवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्योनिकोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? के देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—‘एवं’ कण्ठलेस्स भवसिद्धिय एगिंदिएहिं वि वितियसयं कण्ठलेस्ससरिसं भाणियव्व’—हे गौतम ! आ दृष्ट्युलेश्यावाणा भवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम ऐकेन्द्रियोना संभंधमां पणु शतके आ पांतीसमा शतकना भीन्ना दृष्ट्युलेश्याशतकना कथन प्रमाणे समञ्जुं भीम दृष्ट्युलेश्यावाणाओना संभंधमां ने प्रमाणे त्यां कडेवामां आवेल छे, ओ न प्रमाणेनुं ते तमान कथन अडियां पणु समञ्जुं.

‘एवं नीललेख भवसिद्धिय एगिदि एहि वि सयं’ एवमेव नीललेख्यभवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्मैकेन्द्रियैरपि शतम् एतत् शतमपि पूर्ववदेव प्रश्योत्तराभ्यां निरूपणीयम् । ‘सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

पञ्चत्रिंशत्तमे शतके सप्तमं शतं समाप्तम् ॥३५ ७॥

वहां कहा गया है वैसा ही वह सब यहां पर भी जानना चाहिये । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आपने यह सब कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर के फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । छट्ठा शत समाप्त ॥३५-६॥

टीकार्थ—‘एवं नीललेख भवसिद्धिय एगिदि एहिं वि सयं’ इसी प्रकार से नीललेखावाले भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिक जीवों के सम्बन्ध में भी शतक का निर्माण कर कथन कर लेना चाहिये । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! आपका कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इत्यादि सब कथन पूर्व के ही जैसा है ।
सातवां शत समाप्त ॥३५-७॥

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे लगवन् आप देवानुप्रिये के प्रभाणु आ विषयमां कडेल छे, ते सधणु कथन सर्वथा सत्य ज छे. हे लगवन् आपदेवानु प्रियनुं सधणु कथन सर्वथा सत्य ज छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीके प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेओ संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥सू०१॥

॥छठ्ठे अकेन्द्रिय शतके समाप्त ॥३५-६॥

‘एवं नीललेख भवसिद्धिय एगिदि एहि वि सयं’ आज प्रभाणु नीललेखावाणा भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा अकेन्द्रिय अवेना संबंधमां पणु शतक अनावीने कथन करी देवुं जेधअे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति’ हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां के कथन कर्युं छे ते सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आपनुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीके प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥सू०१॥

॥सातवुं अकेन्द्रिय शतके समाप्त ॥३५-७॥

‘एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिग्धि वि तहेव एकारस उद्देसगसंजुत्तं सयं’ एवं पूर्ववदेव कापोतलेश्य भवसिद्धिक कृन्युग्मकृतयुग्मैकैन्द्रियैरपि तथैव पूर्ववदेव एकादशोद्देशकसंयुक्तं शतं भवति । एते जीवा कुत उत्पद्यन्ते ? इत्यादि प्रश्नोत्तरादिकं पूर्ववदेषोहनीयम् । ‘एवं एयाणि चत्वारि भवसिद्धियसयाणि’ एवमेतानि चत्वारि भवसिद्धिकशतानि औधिक कृष्णनील कापोतलेश्याख्यानि चत्वारि भवन्ति ‘चउसु वि सएसु’ चतुर्ष्वपि शतकेषु ‘सव्वे पाणा जाव उव्वन्न-पुव्वा ? नो इणट्ठे समट्ठे’ सर्वे प्राणा यावद् उत्पन्न पूर्वाः ? नायमर्थः समर्थः ।

टीका—‘एवं काउलेस्स भवसिद्धिय एगिदिग्धि वि तहेव एकारस उद्देसगसंजुत्तं सयं’ इसी प्रकार से कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक कृन्युग्म राशिप्रसिद्ध एकेन्द्रिय जीवों के साथ भी पहिले के जैसा ११ उद्देशकों वाला शत होता है । अतः ये जीव कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं इत्यादि प्रश्न और हे गौतम ! ये जीव तिर्यग्योनि-कादिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं इत्यादि उत्तर पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये । ‘एवं एयाणि चत्वारि भवसिद्धियसयाणि चउसु वि सएसु’ इन औधिक, कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय सम्बन्धी चार शतकों में ‘सव्वे पाणा जाव उव्वन्नपुव्वा, नो इणट्ठे समट्ठे’ समस्त प्राण यावत् समस्त सत्त्व पहिले उत्पन्न हो चुके हैं यह अर्थ समर्थित नहीं है ऐसा कहना चाहिये । क्यों कि ऐसे अभव्य एकेन्द्रिय जीव अनन्त हैं जो इस रूप से उत्पन्न नहीं हुए हैं ।

“આઠમા એકેન્દ્રિય શતકનો પ્રારંભ—”

‘एवं काउलेस्स भवसिद्धियएगिदिग्धि वि तहेव एकारस उद्देसग संजुत्तं सयं’ આજ પ્રમાણે કાપોતલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિવાળા એકેન્દ્રિય જીવોની સાથે પણ પહેલાં કહ્યા પ્રમાણેના ૧૧ અગિયાર ઉદ્દેશ્યાવાળું શતક થાય છે. તેથી ‘જીવો કયાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? વિગેરે પ્રશ્નો અને હે ગૌતમ ! તે જીવો તિર્યગ્યોનિક વિગેરેમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે, વિગેરે ઉત્તર પહેલા કહ્યા પ્રમાણે સમજી લેવા. ‘एवं एयाणि चत्वारि भवसिद्धियसयाणि चउसु वि सएसु’ औधिक, कृष्ण, नील, અને कापोतलेश्यावाળા ભવસિદ્ધિક એકેન્દ્રિય જીવો સંબંધી ચાર શતકોમાં ‘સવ્વે પાણા જાવ ઉવ્વન્નપુવ્વા, નો ઇણટ્ઠે, સમટ્ઠે’ સઘળા પ્રણો યાવત્ સઘળા સત્ત્વો પહેલાં

एतत्प्रकरणं सर्वत्र चतुर्ष्वपि भवसिद्धिकक्षतेषु योज्यम् । न सर्वे जीवाः भव-
सिद्धिक कृष्णनीलकापोतकृतयुग्मतया नोत्पन्नपूर्वाः अनन्तत्वात् 'सेवं भंते !
सेवं भंते । त्ति तदेवं भदन्त । तदेवं भदन्त । इति ॥

पञ्चत्रिंशत्तमे शतकेऽष्टमं शतं समाप्तम् ॥३५॥८॥

'जहा भवसिद्धिर्हि चत्वारि सयाइं भणियाइं' यथा भवसिद्धिकै श्रुत्वारि
शतानि भणितानि 'एवं भवसिद्धिर्हि वि चत्वारि सयाणि संजुत्ताणि भणिय-
व्वाणि' एवमभवसिद्धिकैःपि चत्वारि शतानि औघिक कृष्णनीलकापोतलेश्या
संयुक्तानि भणितव्यानि 'सव्वे पाणा० तद्देव णो इण्ढे समङ्गे' सर्वे पाणाः तथैव,

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त । आपका यह कथन सर्वथा
सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की
और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप
से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

अष्टम शत समाप्त ॥३५-८॥

'जहा भवसिद्धिर्हि चत्वारि सयाइं भणियाइं' जिस पद्धति से
भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में औघिक शतक, कृष्णलेश्या
शतक, नीललेश्या शतक, और कापोतलेश्या शतक कहे गये हैं' उसी
पद्धति से इन्हीं शतकों को आश्रित करके भवसिद्धिक एकेन्द्रियजीवों
के सम्बन्ध में भी चार शतक कहलेना चाहिये । इन में भी ऐसा ही

उत्पन्न थछ चुक्या छे. आ अर्थ भरोभर नथी. तेम कडेपुं नेछये. केमके-
येवा ऐकेन्द्रिय एवे अनंत छे. जे अत्यार सुधी आ इपथी उत्पन्न थया नथी.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन आप देवात्तुप्रियतुं आ विषय
संभंधमां करेद कथन सर्वथा सत्य छे. २ आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये
प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम
अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
भिराजमान थया. ॥सू०१॥

॥आठमं शतक समाप्त ॥३५-८॥

भवमा शतकथी गारमा शतक सुधीना शतकोत्तुं कथन

'जहा भवसिद्धिर्हि चत्वारि सयाइं भणियाइं' जे प्रमाणे भवसिद्धिक
ऐकेन्द्रिय एवेना संभंधमां औघिक शतक, कृष्णलेश्या शतक नीललेश्या
शतक अने कापोतलेश्या शतक कडेवामां आवेल छे, जेन रीते जेन
शत कोना आश्रय करीने ऐकेन्द्रिय एवेना संभंधमां चार शतको कडेवा नेछये,

નાયમર્થઃ સમર્થ ઇતિ વ્યક્તવ્યમ્ અનન્તત્વાત્ । એવં એયાઈં વ્વારસ ઇગિંદિય મહા-
જુમ્મ સયાઈં ભવતિ' એવમેતાનિ દ્વાદશૈકેન્દ્રિય મહાયુગ્મશતાનિ ભવન્તીતિ, 'સેવં
મંતે । સેવં મંતે । ત્તિ' તદેવં મદન્ત ! તદેવં મદન્ત ઇતિ ॥

ઇતિ શ્રી - વિશ્વવિખ્યાતજગદ્વલ્લભાદિપદભૂષિતવાલ્ક્યવ્રહ્મચારિ - 'જૈનાચાર્ય'
પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલવ્રતિવિરચિતાયાં 'શ્રી મગવતીસૂત્રસ્ય' પ્રમેયચન્દ્રિકાખ્યાયાં
વ્યાખ્યાયાં પશ્ચત્રિંશચ્છતકે નવમતઃ દ્વાદશાન્તા શતાનિ સમાપ્તાનિ ૩૫-૯-૧૨ ।

॥ પશ્ચત્રિંશત્તમં શતકં સમાપ્તમ્ ॥

કથન કરના ચાહિયે કિ સમસ્ત પ્રાણ યાવત્ સમસ્ત સત્વ દ્વનમેં પહિલે
ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં એસા અર્થ સમર્થિત નહોં હુઆ હૈં । કયોં કિ એસે
મઘ્ય એકેન્દ્રિય જીવ અનન્ત હૈં જો હસ રૂપ સે ઉત્પન્ન નહોં હુએ હૈં ।
'એવં એયાઈં વારસ ઇગિંદિયમહાજુમ્મસયાઈં' ભવંતિ' હસ પ્રકાર યે
૧૨ એકેન્દ્રિય મહાયુગ્મ શત હોતે હૈં । 'સેવં મંતે । સેવં મંતે । ત્તિ'
હે મદન્ત ! આપકા યહ કથન સર્વથા સત્ય હી હૈ ૨ । ઇત્યાદિ સવ
ગૌતમ કે સમ્બન્ધ કી પ્રક્રિયા પૂર્વ કે જૈસી હી જાનની ચાહિયે ।

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત
'મગવતીસૂત્ર' કી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાકે પૈતીસવેં શતક કે
નવવેં સે ચારહવેં પર્યન્તકે શતક સમાપ્ત ॥૩૫-૯-૧૨॥

॥ ૩૫ વાં શતક સમાપ્ત ॥

આમાં પણ એજ પ્રમાણેનું કથન કહેવું જોઈએ. - સઘળા પ્રાણ યાવત્ સઘળા
સત્વો આમાં પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચૂક્યાં છે, એ પ્રમાણેનો અર્થ સમર્થિત
થતો નથી. કેમ કે એકેન્દ્રિય જીવો અનન્ત છે. કે જેઓ અત્યાર સુધી આ
રૂપથી ઉત્પન્ન થઈ શક્યા નથી 'એવં એયાઈં' વારસ ઇગિંદિયમહાજુમ્મસયાઈં
ભવંતિ' આ પ્રમાણે ૧૨ ખાર એકેન્દ્રિય મહાયુગ્મ શતક થાય છે તેમ સમજવું.

'સેવં મંતે । સેવં મંતે ! ત્તિ' હે ભગવન્ આપે કહેલ આ સઘળું કથન
સર્વથા સત્ય છે. હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયનું સઘળું કથન સર્વથા સત્ય
છે. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમસ્વામીએ પ્રભુશ્રીને વંદના કરી તેઓને નમસ્કાર
કર્યા વંદના નમસ્કાર કરીને તે પછી સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને
ભાવિત કરતા થકા પોતાના સ્થાન પર બિરાજમાન થયા ॥સૂ૦૧॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત 'ભગવતીસૂત્ર'ની
પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના પાંત્રીસમા શતકમાં નવમા શતકથી ખારમા શતક

સુધીના શતકો સમાપ્ત ॥૩૫-૯-૧૨॥

પાંત્રીસમું શતક સમાપ્ત ॥૩૫॥

॥ छत्तीसइमं सयं ॥

॥ (पढमं वेइंदियमहाजुम्मसयं) ॥

॥ (पढमो उद्देसो) ॥

पञ्चत्रिंशत्तमे शतके संख्यापदैरेकेन्द्रिजीवाः प्ररूपिताः अथ पद्त्रिंशत्तमे शतके तैरेव संख्यापदैः द्वीन्द्रियाः प्ररूप्यन्ते इत्येवं सम्बन्धेनायातस्य शतकस्येदमादिमं सूत्रम्—‘कडजुम्म’ इत्यादि ।

मूलम्—कडजुम्म कडजुम्म वेइंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? उववाओ जहा वक्कंतीए । परिमाणं सोलस वा संखेज्जा वा उववज्जंति, असंखेज्जा वा उववज्जंति । अवहारो जहा उप्पलुद्देसए । ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं बारस जोयणाइं । एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव । नवरं तिस्रो लेस्साओ देवा न उववज्जंति सम्मदिट्ठी, वा मिच्छादिट्ठी वा, नो सम्मामिच्छादिट्ठी । नाणी वा अन्नाणी वा । नो मणजोगी वयजोगी वा कायजोगी वा । ते णं कडजुम्मकडजुम्म वेइंदिया कालओ केवच्चिरं होति ? गोयमा ! जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं । ठिई जहन्नेणं एकं समयं, उक्कोसेणं बारससंवच्छराइं । आहारो नियमा छदिसिं । तिस्रो समुग्घाया । सेसं तहेव जाव अणांतखुत्तो । एवं सोलससु वि जुम्मेसु । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

छत्तीसइमे सए पढमे वेइंदिय महाजुम्मसए

पढमो उद्देसो समत्तो ॥३६-१-१॥

छाया—कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? उपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ । परिमाणं षोडश वा संख्येया नोत्पद्यन्ते असंख्येया नोत्पद्यन्ते । अपहारो यथा उत्पल्लोदेशके । अवगाहना जघन्येनांगुलभ्यासंख्येयभागम् उत्कर्षेण द्वादश योजनानि । एवं यथा—एकेन्द्रियमहायुग्मानां प्रथमोद्देशके तथैव नवरं तिस्रो लेश्याः, देवा नोत्पद्यन्ते । सम्यग्दृष्टयो वा, मिथ्यादृष्टयो वा नो सम्पद्यु मिथ्यादृष्टयः । ज्ञानिनो वा अज्ञानिनो वा, नो मनोगिनो वचोयोगिनो

वा काययोगिनो वा । ते खलु भदन्त ! कृतयुगम् कृतयुगम् द्वीन्द्रियाः कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? गौतम ! जघन्येन एकं समयम् उत्कर्षेण संख्येयं कालम् । स्थितिर्जघन्येनैकं समयम्, उत्कर्षेण द्वादशसंवत्सरान् । आहारो नियमात् षड-दिशम् । त्रयः समुद्राताः । शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः । एवं षोडशस्वपि युगेषु तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

॥ षट् त्रिंशत्तमे शतके प्रथमे द्वीन्द्रियमहायुगशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ३६॥

टीका—‘कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ कृतयुगम् कृतयुगम् द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो वा तिर्यग्भ्यो वा मनुष्येभ्यो वा देवेभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘उववाओ जहा वक्कंतीए’

३६ वां शतक का प्रारम्भ

प्रथम दो इन्द्रिय महायुग शतक प्रथम उद्देशक ।

३५ वें शतक में संख्यापदोंद्वारा एकेन्द्रिय जीवों की प्ररूपणा की गई है । अब इस ३६ वें शतक में उन्हीं संख्यापदोंद्वारा द्वीन्द्रिय जीवों की प्ररूपणा होती है । इसी सम्बन्धको लेकर इस ३६ वें शतक का प्रारम्भ हुआ है ‘कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इ.

टीकार्थ—‘कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते । कओ उववज्जंति’ हे भदन्त ! कृतयुगम् कृतयुगम् राशिप्रमित दो इन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा

छत्रीसभा शतकनेा प्रारंल—

प्रथम जे इन्द्रिय महायुग शतक नामनेा पडेवेा उद्देशेा

पांत्रीसभा शतकमां संख्यापदोद्वारा एकेन्द्रिय जिवोनी प्ररूपणा करवामां आवी छे, हवे आ छत्रीसभा शतकमां जे संख्यापदोद्वारा द्वीन्द्रिय जिवोनी प्ररूपणा करवामां आवशे आ संबंधने लधने आ छत्रीसभा शतकनेा प्रारंल करवामां आवे छे, ‘कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इ.

टीकार्थ—‘कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ जे लगवन् कृतयुगम् कृतयुगम् राशिप्रमित जे इन्द्रिय जिवो कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेजो नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्भ्योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ

उपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः पठे पदे तिर्यग्भ्यो वा मनुष्येभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इत्युत्तरम् । 'परिमाणं सोलस वा संखेज्जा वा उववज्जंति असंखेज्जा वा उववज्जति' परिमाणं षोडश वा संख्याता वा ते सहैतोत्पद्यन्ते असंख्येया वा सहैतोत्पद्यन्ते इति । 'अवहारो जहा उपपल्लुद्देशए' अपहारस्तु यथा उत्पल्लुद्देशके कथित स्तथैव तत एवाद्गन्तव्यः । एतस्या एव एकादश शतकस्य प्रथमोद्देशके । 'ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं' शरीरावगाहना द्वीन्द्रियजीवानां जघन्या अंगुलस्यासंख्येयभागपरिदिता 'उक्कोसेण वारस-

देवो' में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं ? उववाओ जहा वक्कंतीए' हे गौतम ! जेहा मि प्रज्ञापना के छटे व्युत्क्रान्ति पद में ऐसा कहा गया है कि ये तिर्याग्भ्यो' में से आकर के अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ऐसा ही कथन उहां पर कर लेना चाहिये । 'परिमाणं सोलस वा, संखेज्जा वा उववज्जंति वा उववज्जंति' एक समय में ये कितने उत्पन्न होते हैं ? तो इस सम्बन्ध में ऐसा कहना चाहिये । कि ये एक समय में १६ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । 'अवहारो जहा उपपल्लुद्देशए' उत्पल्ल उद्देशक में इसी के ११ वें शतक के प्रथम उद्देशक में अपहार के सम्बन्ध में जो कथन आया है वही यहां पर भी स्पष्टता चाहिये । 'ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं' इन द्वीन्द्रिय जीवों की शरीरावगाहना जघन्य से अंगुल के असंख्यात वे भाग प्रमाण होती है

प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमभ्वाभिने कडे छे डे—'उववाओ जहा वक्कंतीए' डे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्रना व्युत्क्रान्तिपदमां जे प्रमाणे कहु छे जेण प्रमाणे अहियां पणु समज्जु. अर्थात् व्युत्क्रान्ति पदमां जेपुं कडेल छे डे—तेज्जे तिर्यग्भ्यो निकेमांथी आवीने अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, जेण प्रमाणेपुं कथन अहिया पणु समज्जु लेपुं. 'परिमाणं सोलसवा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति' जेक समयमां आ डेटला उत्पन्न थाय छे ? ते आ संबंधमां जेपुं कडेवुं जेधंजे डे आ जेक समयमा १६ सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न थाय छे. 'अवहारो जहा उपपल्लुद्देशए' उत्पल्ल उद्देशमां जेटले डे आ भगवती सूत्रना ११ अगियारमा शतकना पडेला उद्देशमां आभना अपहारना संबंधमां कडेवामां आवेल छे, ते सधणुं कथन अहियां पणु समज्जु. 'ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं' आ जे ध्विन्द्रिय वाणा जेवोना शरीरनी अवगाहना जघन्य आगणता असंख्यातमां भाग

જોયનાઈ' ઉત્કર્ષેણ તુ દ્વાદશયોજનપ્રમાણા ભવન્તીતિ । 'एवं जहा एगिंदिय महाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव' एवं प्रकारेण यथा एकेन्द्रियमहायुग्मानां पञ्चत्रिंश-
 ळत्तकस्य प्रथमोद्देशके कथिता तथैवेहापि सामग्राऽपि ज्ञातव्या । 'नवरं तिन-
 लेस्साओ देवा न उववज्जंति' नवरं प्रथमोद्देशकापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत् प्रथमो
 देशके चतस्रो लेश्याः कथिता इहतु तिस्र एव कृष्णनीलकापोताख्या ज्ञातव्याः इह
 च देवा नोत्पद्यन्ते, अत्र तेजोलेश्याया असद्भावात् 'सम्मदिट्ठी वा मिच्छादिट्ठी वा'
 सम्यग्दृष्टयो वा अपर्याप्तावस्थायाम् सास्वादन सम्यक्त्वापेक्षया, मिथ्या दृष्टयो

और 'उक्कोसेणं वारसजोयणाइ' उत्कृष्ट ले १२ योजन प्रमाण होती
 है । 'एवं जहा एगिंदिय महाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव' इस प्रकार
 जैसा एकेन्द्रिय महायुग्मों के सम्बन्ध में ३५ वे शतक के प्रथम उद्देशक
 में कहा गया है वैसाही वह सब कथन यहां पर भी कहलेना चाहिये ।
 'नवरं तिन लेस्साओ देवा न उववज्जंति' परन्तु उस प्रथम उद्देशक की
 अपेक्षा केवल यहां विशेषता है कि वहां पर चारलेश्याओ का होना
 कहा गया है और यहां तीन लेश्याएं होती हैं ऐसा कहा गया है । वहां
 पर देवों का उनमें एकेन्द्रिय में उत्पाद बतलाया गया है पर यहां वह
 नहीं होता है ऐसा कहा गया है । इसीलिये यहां तेजोलेश्या नहीं होती
 है । 'सम्मदिट्ठी वा मिच्छादिट्ठी वा' ये सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होते
 हैं । अपर्याप्तावस्था में सास्वादन सम्यक्त्व का इनमें सद्भावपाया
 जाता है इस अपेक्षासे इन्हे सम्यग्दृष्टि कहा गया है । 'नो सम्मामि-

પ્રમાણની હોય છે. અને 'ઉક્કોસેણં વારસ જોયનાઈ' ઉત્કૃષ્ટથી ૧૨
 યોજન પ્રમાણની હોય છે. 'एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव'
 આ રીતે એકેન્દ્રિય મહાયુગ્મેના સંબંધમાં જે પ્રમાણે પાંત્રીસમા શતકના
 પહેલા ઉદ્દેશામાં કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણેતું કથન અહીંયાં પણ
 સંપૂર્ણ સમજ લેવું. 'नवरं तिन लेस्साओ देवा न उववज्जंति' પરંતુ પહેલા
 ઉદ્દેશાના કથન કરતાં આ કથનમાં કેવળ એજ વિશેષપણું છે કે—ત્યાં લેશ્યાઓ
 ચાર હોવાતું કથન કરવામાં આવેલ છે, તથા અહિયાં ત્રણ લેશ્યાઓ હોય
 છે તેમ કહેલ છે, ત્યાં દેવાનો ઉપપાત આ એકેન્દ્રિયોમાં હોવાતું કહેલ છે.
 પરંતુ અહિયાં દેવાની ઉત્પત્તી થતી નથી તેમ કહેલ છે તેથી આ પ્રકરણમાં
 તેજોલેશ્યાનો સંભવ હોતો નથી. 'सम्मदिट्ठी वा मिच्छादिट्ठी वा' આ સમ્ય
 દૃષ્ટીવાળા અને મિથ્યાદૃષ્ટીવાળા હોય છે. અપર્યાપ્ત અવસ્થામાં સાસ્વાદન
 સમ્યક્ત્વ તેઓમાં હોય છે. તે અપેક્ષાથી તેઓને સમ્યગ્ દૃષ્ટિવાળા કહેલ

वा द्वीन्द्रिय जीवाः 'नो सम्मामिच्छादिद्वी' नो सम्यग् मिथ्यादृष्टयः । 'नाणी वा अन्नाणी वा' ज्ञानिनो वा अज्ञानिनो वा भवन्ति द्वीन्द्रियाः । 'नो मणयोगी' नो मनोयोगिनो भवन्ति, 'वयजोगी वा, कायजोगी वा, वचो योगिनो वा भवन्ति काययोगिनो वा भवन्ति 'ते णं भते । कडजुम्म कडजुम्म वेदिया कालओ केव चिरं होति' ते खल्ल भदन्त । कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रियाः जीवाः कालतः किय-चिरं भवन्ति, इति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, गोयसा' हे गौतम ! 'जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं' जघन्येन एकं समयम् उत्कर्षेण संखेयेयं कालम्' ठिई जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं वारससंवच्छराइ' स्थिति जघन्येन एक समयप्रमाणा उत्कर्षेण तु द्वादशसंवत्सररूपा भवतीति । 'आहारो नियमं छदिसि' आहारो नियमात् षड्दिशमाश्रित्य षड्दिग्भ्यः इत्यर्थः द्वीन्द्रि-

च्छादिद्वी' ये मिश्रदृष्टि नहीं होते हैं । 'नाणी वा अन्नाणी वा' ये ज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं । 'नो मणो जोगी' ये मनोयोगी नहीं होते हैं । 'वयजोगी कायजोगी वा' वचनयोगी और काययोगी होते हैं । 'ते णं भते ! कडजुम्म कडजुम्म वेदिया कालओ केवचिरं होति' हे भदन्त ! ये कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रिय जीव कितने समय तक रहते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयसा ! जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं' हे गौतम ! ये इस रूप में जघन्य से तो एक समय तक रहते हैं और उत्कृष्ट से संख्यात काल तक रहते हैं । 'ठिई जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं वारस संवच्छराइ' इनकी स्थिति जघन्य से एक समय की और उत्कृष्ट से १२ वर्ष की होती

छे, 'नो सम्मामिच्छादिद्वी' आ सम्यग् मिथ्यादृष्टीवाणा होता नथी. अेटदे के मिश्रदृष्टीवाणा होता नथी. 'नाणी वा अन्नाणी वा' आ ज्ञानी अथवा अज्ञानी डोय छे. 'नो मणोजोगी' आ मनोयोगवाणा होता नथी. 'वयजोगी कायजोगी वा' वचन योगवाणाअने काय योगवाणा डोय छे. 'तेणं भते ! कडजुम्म कडजुम्म वेदिया कालओ केवचिरं होति' डे लगवन् आ कृतयुग्म कृतयुग्म ये द्वीन्द्रिय-वाणा लोवे कण्णी अपेक्षाथी डेटदा समय सुधी रहे छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने डडे छे के—'गोयसा ! जहण्णेणं एककं समयं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं' डे गौतम ! आ इपथी तेओ जघन्यथी तो ओक समय सुधी अने उत्कृष्टथी संप्यात काण सुधी रहे छे. 'ठिई जहण्णेणं एककं समयं उक्कोसेणं वारस संवच्छराइ' तेओनी स्थिति जघन्यथी ओक समयनी अने उत्कृष्टथी आर १२ वर्षनी डोय छे. 'आहारो नियमं छदिसि' तेओ आहार नियमधी

याणां लोकमध्ये एव स्थितत्वात् पृथु दिग्भ्यो आहारो जायते । 'तिन्नि समुद्राया' त्रयः वेदना कपाय मारणान्तिकाः समुद्राता भवन्तीति । 'सेसं तदेव जाव अणंत खुत्तो' शेषं समुद्रघातातिरिक्तं सर्वं यावत् द्वीन्द्रिया असकृत् अथवा अनन्तकृत्वः उत्पन्नपूर्वाः एतत्सर्वं पञ्चत्रिंशत्तमशतकीय प्रथमोद्देशकवदेव ज्ञातव्यम्, 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' एवमनेनैव प्रकारेण षोडशश्वदि युग्मेषु कृतयुग्मकृतयुग्मादारभ्य कलयोज कलयोजान्त महायुग्मेष्वपि उपपातादिकं सर्वं ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धनाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीगार्ह्यत्रपति कोल्हापुरराजमदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
दालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालप्रतिविरचितायां श्री
'भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाद् पञ्चत्रिंशत्तम शतके प्रथमे
द्वीन्द्रियमहायुग्मज्ञानं प्रथमोद्देशकः
समाप्तः ॥३५॥१॥१॥

है । 'आहारो नियमं छदिसि' ये आहार नियम से छहों दिशाओं से ग्रहण करते हैं । क्यों कि ये लोक के मध्य में ही स्थित रहते हैं । 'तिन्नि समुद्राया' वेदना कपाय और मारणान्तिक ये तीन समुद्रघात इन के होते हैं । 'सेसं तदेव जाव अणंतखुत्तो' याकी का और सब कथन ३५ वे शतक के प्रथमोद्देशक के जैसा ही है यावत् अनन्तवार इस रूप में उत्पन्न हो चुके हैं । यहाँ तक का यहाँ कह लेना चाहिये । 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' इसीप्रकार से १६ युग्मों में कृतयुग्म कृतयुग्म से लेकर कलयोज कलयोज तक के महायुग्मों में भी उपपात आदि का

छोद्देशशास्त्रोभांथी अडस करे छे. डेअ डे तेओ लोडनी मध्यमान स्थित रहे छे. 'तिन्नि समुद्राया' वेदना, कपाय, अने मारणान्तिक आ त्रय समुद्रघातो तेओने डेअ छे. 'सेसं तदेव जाव अणंतखुत्तो' याकीनुं गीनुं अथणुं कथन उप पात्रीसमा शतकना पडेला उद्देशाभां डेला प्रभाणे समजवुं यावत् तेओ अनंतवार आ इपे उत्पन्न थर् अडस छे, आ कथन सुधीनुं कथन अडियां समजवुं. 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' आन प्रभाणे सोण १६ युग्मोभां कृतयुग्म अथेअथी लर्ने डेथेअ डेथेअ सुधीना महायुग्मोभां यणु उपपात विगेरेनुं कथन समज लेवुं.

कथन कर लेना चाहिये । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे भदन्त जैसा
आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही २ । इस प्रकार कहकर
गौतमने प्रभुश्री को चन्दना की और नमस्कार क्रिया चन्दनानमस्कार
कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर विराजमान हो गये ॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छत्तीसवें शतक का
द्वीन्द्रिय महायुगम शतक में प्रथम उद्देशक समाप्त ॥३६-१-१॥

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रमाणे
कथन क्युं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आ विषयमां
आप देवानुप्रिये ने कथन क्युं छे, ते सधणुं कथन सत्य न छे आ प्रमाणे
कहीने गौतमस्वामीं प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कया वंदना नमस्कार
करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका
पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना छत्तीसवा शतकना द्वीन्द्रिय महायुगम शतकमां
पडेले उद्देशे समाप्त ॥३६-१-१॥



॥२-११ उद्देशगा

मूलम्—पढमसमयकडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते !
 कओ उववज्जंति एवं जहा एगिंदिय महाजुम्माणं पढमसमय
 उद्देशए, दस नाणत्ताइं ताइं चेव दस इह वि । एकारसमं इमं
 नाणत्तं नो मणजोगी नो वयजोगी कायजोगी सेसं जहा वेदि-
 याणं चेव पढमुद्देशए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति

एवं एएवि जहा एगिंदिय महाजुम्मेसु एकारस उद्देशगा
 तहेव भाणियत्वा । नवरं चउत्थ छट्ट अट्टमदसमेसु सम्मत्त
 नाणाणि न भवंति । जहेव एगिंदिएसु पढमो तइओ पंचमो
 य एक्कगमा सेसा अट्ट एक्कगमा ॥

छत्तीसइमे सए पढमं वेदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥३६-१॥

छाया—प्रथमसमयकृतयुग्मकृतयुग्म द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त कुत उत्पद्यन्ते ?
 एवं यथा एकेन्द्रियमहायुग्मानां प्रथमसमयोद्देशके । दशनानात्त्वानि तान्येव दश
 इहापि । एकादशमिदं नानात्वम्—नो मनोयोगिनो नो वचोयोगिनः, काययोगिनः
 शेषं यथा द्वीन्द्रियाणामेव प्रथमोद्देशके । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।
 एवमेतेऽपि यथा एकेन्द्रियमहायुग्मेषु एकादशोद्देशका स्तथैव भणितव्या । नवरं
 चतुर्थं षष्ठाष्टमदशमेषु सम्यक्त्वज्ञाने न भवतः । यथैवैकेन्द्रियेषु प्रथमं तृतीयः
 अक्षय एक्कगमाः शेषा अष्टौ एक्कगमाः ।

पट्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमं द्वीन्द्रियमहायुग्मतं समाप्तम् ३६।१॥

टीका—‘पढमसमयकडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते कओ उववज्जंति’
 प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त ! जीवाः कुत उत्पद्यन्ते किं

शतक ३६ उद्देशक २-११

‘पढमसमय कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
 इत्यादि सूत्र ॥१॥

टीकार्थ—हे भदन्त ! प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग्म कृतयुग्म राशि
 रूप दो इन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ?

श्रीम उद्देशाथी अगियारमा सुधीना उद्देशात्थोना प्रारंभ—

‘पढमसमय कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इ.

टीकार्थ—हे भगवन प्रथम समयमां उत्पन्न थयेला कृतयुग्म कृतयुग्म
 राशि.णा जे इन्द्रिय लवे कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?

नैरयिकेभ्यो यावद्देवेभ्यः ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह-अतिदेशद्वारेण 'एव जहा-
एगिंदिय महाजुम्माणं पढमसमय उद्देशए' एवं यथा एकेन्द्रिय महायुग्मानां प्रथम
समयोद्देशके कथितं तथैव प्रथमसमयद्वीन्द्रियाणामपि उपपातादिकमवगन्तव्यम्
'दसणाणत्ताइं ताइं चैव दस इह वि' । एकेन्द्रियमहायुग्मानां प्रथमोद्देशे यानि
दश नानात्वानि तान्येव दशापि नानात्वानि इहापि ज्ञातव्यानि । अत्र तु 'एका-
रसमं इमं नाणत्तं' एकादशमिदं नानात्वम् अत्र प्रथमोद्देशद्वीन्द्रियस्यौघिकापेक्षया
'नो मणजोगी नो वयजोगी कायजोगी' नो मनोयोगिनः प्रथमसमयद्वीन्द्रिया

क्यावे नैरयिको में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिको
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के
उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अति-
दश द्वारा इसका उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतमस्वामी से कहते हैं-
'एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमसमयउद्देशए' हे गौतम ! जैसा
कथन प्रथम समयोत्पन्न प्रथम कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित एकेन्द्रिय
जीवों के उत्पाद आदि के सम्बन्ध में किया गया है-उसी प्रकार का
कथन प्रथम समयोत्पन्न द्वीन्द्रिय जीवों के उत्पाद आदि के सम्बन्ध में
भी जानना चाहिये । 'दसणाणत्ताइं ताइं चैव दस इह वि' एकेन्द्रिय
महायुग्मों के प्रथम उद्देशक में जो भिन्नताएं प्रकट की गई हैं वे ही दश
भिन्नताएं यहां पर पर भी प्रकट कर लेनी चाहिये । तथा यहां पर एक
११ वीं भिन्नता है जो 'नो मणजोगी नो वयजोगी कायजोगी' इस

श्रुं तेऽप्यो नैरयिकेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्भांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
के देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो उत्तर अतिदेशद्वारा
आपतां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के-एवं जहा एगिंदियमहाजुम्मा
णं पढमसमयउद्देशए' हे गौतम ! पडेला समयमा उत्पन्न थनारा कृतयुग्म
कृतयुग्म राशिवाणा ऐकेन्द्रिय लुवेना उत्पाद विगेरेना संभधमां ने प्रमाणेतुं
कथन करवामां आवेल छे, ऐज प्रकारतु कथन प्रथम समयमां उत्पन्न
थवावाणा जे धन्द्रिय लुवेना उत्पाद विगेरेना संभधमां पणु समजवुं. लेधं ऐ
'दस नाणत्ताइं ताइं चैव दस इह वि' ऐकेन्द्रिय महायुग्मेना प्रथम उद्देशमां
दस प्रकारतु लिन्नपणुं प्रगट करवामां आवेल छे. ऐज प्रकारधी दस रीततुं
लिन्नपणुं अडियां पणु समजवुं तथा अडियां ऐक अगियार ११मुं लिन्नपणुं
आवे छे, ते 'नो मणजोगी नो वयजोगी कायजोगी' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रगट कर-

नो वचोयोगिनः किन्तु काययोगिनः । 'सेसं जहा वेदियाणं चैव पढमुद्देसए' जेपं-कथितव्यतिरिक्तं सर्वं यथा द्वीन्द्रियाणामेव प्रथमोद्देशके कथितं तथैव द्वितीयाद्येकादशान्तोद्देशकेषु ज्ञातव्यम्, 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

सूत्र द्वारा प्रकट की गई है कि प्रथम स्वयं उत्पन्न दो इन्द्रियजीव मनोयोगी तो होते ही नहीं हैं परन्तु न वचनयोगी होने का प्रसङ्ग प्राप्त होता है—सो इसके लिये कहा गया है कि वे वचनयोगी भी नहीं होते हैं क्यों कि अपर्याप्त अवस्था में वचनयोग नहीं होता है । केवल ये काययोगी ही होते हैं । 'सेसं जहा वेदियाणं चैव पढमुद्देसए' इसके अनिरिक्त और सब कथन जैसा द्वीन्द्रियों का प्रथम उद्देशक में कहा है वैसा ही वह सब कथन द्वितीय से लेकर ११ वे उद्देशक तक के उद्देशकों में जानना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार क्रिया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

वामां आवेल छे के-प्रथम समयमां उत्पन्न थयेला जे इन्द्रिय जेवो मनोयोगवाणा तो डोता नथी. तथा तेजोने वचनयोगीपणानो प्रसंग पणु प्राप्त थतो नथी. ते भाटे कडेवामां आवेल छे के-तेजो वचनयोगी पणु होना नथी. केम के अपर्याप्त अवस्थामां वचनयोग डोतो नथी केवण तेजो काययोगी न होय छे. 'सेसं जहा वेदियाणं चैव पढमुद्देसए' आ कथन शिवाय णाकीनुं सधणुं कथन जेरीते जे इन्द्रियवाणा जेवोना संबंधमां पडेला उद्देशामां कडेवामां आवेल छे. जेण प्रभाणुनुं सधणुं कथन णीज उद्देशार्थी लघने अगीयारमा उद्देशाज्जे सुधीना उद्देशाज्जेमां समणुं.

“सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आपे आ विषयना संबंधमां जे प्रभाणुनुं कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सत्य छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियनुं आ विषय संबंधमां कडेला सधणु कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेजोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपार्थी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ”

‘एवं एएवि जहा एगिदियमहाजुग्मेसु एकारस उद्देशगा तहेव भणियव्वा’ एवमेतैऽपि यथा एकेन्द्रियमहायुगमशतैषु एकादशोद्देशकाः कथिता स्तथैवेहापि तएव एकादशोद्देशकाः पञ्चत्रिंशच्छतकीय प्रथमशते वर्तमाना, भणितव्याः, आलापकपकारश्च पूर्ववदेव ऊहनीयः। ‘नवरं चउत्थ छट्ट अट्टम दसमेसु सम्मत्त नाणाणि न भवंति’ नवरमत्र चतुर्थ-पष्टा-ष्टम-दशमेषु, तत्र चतुर्थे-चरमसमयकृतयुगमकृत-युगोद्देशके ४, षष्ठे प्रथम समय कृतयुगमकृतयुगोद्देशके ६, अष्टमे-प्रथम चरमसमय कृतयुगमकृतयुगोद्देशके ८, दशमे-चरम चरम समय कृतयुगमकृतयुगोद्देशके १०, एषु चतुर्षुद्देशकेषु सम्यक्त्वं ज्ञानं च न भवति अतरते न वक्तव्ये ‘जहेव एगिदिएसु पहसो तइओ पंचसो च एकारना’ यथा-एकेन्द्रियेषु पञ्चत्रिंश

‘एवं एए वि जहा एगिदिय महाजुग्मेसु एकारस उद्देशगा तहेव भणियव्वा’ जिस रीति से एकेन्द्रिय महायुग शतों में ११ उद्देशक कहे गये हैं उसी प्रकार से ३५ वें शतक के प्रथम शत में वर्तमान वे ११ उद्देशक यहाँ पर भी कहलेना चाहिये। इस सम्बन्ध में आलाप प्रकार अपने आप पूर्व के जैसे बना लेना चाहिये। ‘नवरं चउत्थ छट्ट अट्टम दसमेसु सम्मत्त नाणाणि न भवंति’ परन्तु इन ११ उद्देशकों में से चरम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशक हैं (चतुर्थउद्देशक हैं) प्रथम प्रथम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशक हैं (छठे उद्देशक में) प्रथम चरम चरम कृतयुग कृतयुग उद्देशक हैं (८ वें उद्देशक में) और चरम चरम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशक हैं (१० वें उद्देशक में) इन चार उद्देशकों में सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होते हैं अतः वे यहाँ नहीं कहना चाहिये। ‘जहेव एगिदिएसु पहसो तइओ पंचसो च

‘एवं एएवि जहा एगिदिय महाजुग्मेसु एकारस उद्देशगा तहेव भणियव्वा’ के प्रमाणे एकेन्द्रिय महायुग शतकोंमें ११ अगियार उद्देशाओं केडेवाओं आवेल छे एज प्रमाणे ३५ पांतीसमा शतकना पडेलाशतकमां कडेल ते ११ अगियार उद्देशाओं केडेवा लोडओ. आ सणंधमां आलापना प्रकार पडेला कहा प्रमाणे पोते स्वयं जनावीने समल लेवो. ‘नवरं चउत्थ छट्ट, अट्टम दसमेसु सम्मत्त नाणाणि न भवंति’ परंतु आ ११ अगियार उद्देशाओंमाथी चरम समय कृतयुग, कृतयुग, उद्देशांमां ओटले के यथा उद्देशांमा प्रथम प्रथम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशांमां ओटले के ६ छटा उद्देशांमां प्रथम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशांमां ओटले के-८ आठमा उद्देशांमा अने चरम चरम समय कृतयुग कृतयुग उद्देशांमा ओटले के-१० दसमा उद्देशांमां आ आदे उद्देशांमां

ત્તમશતકેષુ પ્રથમઃ તૃતીયઃ પञ્ચમઃ તત્ર પ્રથમઃ, કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મરૂપઃ તૃતીયઃ અપ્રથમસમયકઃ, પञ્ચમઃ ચરમસમયકશ્ચ ૫કગમાઃ સદ્શાલાપકાઃ કથિતાઃ તથાઽ પ્રાપિ તે સદ્શાલાપકા એવ । ‘સેસા અદ્વ ૧કગમા’ શેષા અઠ્ઠી દ્વિતીય-ચતુર્થ-ષઠ-સપ્તમા-ઽષ્ટમ નવમ-દશમૈ-વાદશરૂપા ઉદ્દેશકા ૧કગમાઃ-સદ્શાલાપકાઃ સન્તિ, તત્ર-દ્વિતીયઃ પ્રથમસમયકઃ, ૧, ચતુર્થઃ ચરમસમયકઃ ૨, ષઠઃ પ્રથમ-પ્રથમસમયકઃ ૩, સપ્તમઃ પ્રથમાપ્રથમસમયકઃ ૪, અષ્ટમઃ પ્રથમચરમસમયકઃ ૫,

૧કગમા’ ૩૫ વેં શતક મેં પ્રથમ, તૃતીય, ઓર પંચમ યે ઉદ્દેશક સમાન આલાપકવાલે કહે ગયે હૈં-વૈસે હી વે સમાન આલાપવાલે યહાંપર મી કહે ગયે હૈં કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ પ્રથમ ઉદ્દેશક હૈ । અપ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ તૃતીય ઉદ્દેશક કહૈ ઓર ચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ પાંચવાં ઉદ્દેશક હૈ ‘સેસા અદ્વ ૧કગમા’ તથા વાકી કે આઠ ઉદ્દેશક-દ્વિતીય ઉદ્દેશક, ચતુર્થ ઉદ્દેશક, ષઠ ઉદ્દેશક, સપ્તમ, ઉદ્દેશક, અષ્ટમ ઉદ્દેશક નૌવાં ઉદ્દેશક દસવાં ઉદ્દેશક ઓર ગ્યારહવાં ઉદ્દેશક યે આઠ ઉદ્દેશક ૧ક સરીલે આલાપકવાલે કહે ગયે હૈં । પ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ દ્વિતીય ઉદ્દેશક હૈ । ચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ ચતુર્થ ઉદ્દેશક હૈ । પ્રથમ પ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ છટ્ટા ઉદ્દેશક હૈ । પ્રથમાપ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ સાતવાં ઉદ્દેશક હૈં । પ્રથમ ચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ આઠવાં ઉદ્દેશક હૈ । પ્રથમા ચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રૂપ ૧ વાં ઉદ્દેશક હૈ । ચરમ

સમ્યક્ત્વ અને જ્ઞાન થતા નથી. તેથી ત્યાં તેતુ’ કથન કરવું ન લેઈએ. ‘જહેવ ઇગિદિણ્ણુ પઠમો તદ્દઓ પંચમોય ૧કગમા’ ૩૫ પાંત્રીસમા શતકના પહેલા, ત્રીજા અને પાંચમા આ ઉદ્દેશાઓ સરખા આલાપકોવાળા જ કહેલ છે એજ પ્રમાણે અહિંયાં પણ તે સમાન પ્રકારવાળા જ કહ્યા છે. કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ પહેલો ઉદ્દેશો છે, અપ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ ત્રીજો ઉદ્દેશો કહેલ છે, અને અચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ પાંચમો ઉદ્દેશો છે તથા બાકીના આઠ ઉદ્દેશાઓ એટલે કે બીજો ઉદ્દેશો, ચોથો ઉદ્દેશો, સાતમો ઉદ્દેશો, આઠમો ઉદ્દેશો, નવમો ઉદ્દેશો, દશમો ઉદ્દેશો અને અગિયારમો ઉદ્દેશો આ આઠ ઉદ્દેશાઓ એક સરખા આલાપકોવાળાકહેલ છે. પ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ બીજો ઉદ્દેશો છે. ચરમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ ચોથો ઉદ્દેશો કહેલ છે. પ્રથમ પ્રથમ સમય કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ છઠો ઉદ્દેશો કહેલ છે. પ્રથમ અપ્રથમ કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ ૩૫ સાતમો ઉદ્દેશો કહેલ છે. પ્રથમ ચરમ સમય

नवमः प्रथमाऽचरमसमयकः ६, दशमः चरमचरमसमयकः ७, एकादशः चरमा-
चरमसमयकः ८, एते अष्टौ उद्देशकाः समानालापकाः सन्तीति भावः ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजपदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
-पूज्यश्री घासिलालव्रतिविरचितायां श्री "भग-
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां षट्त्रिंशत्तमे शतके प्रथमं
द्विन्द्रियमहायुगशतं समाप्तम् ॥३६।१॥

चरम समय कृतयुगम कृतयुगम रूप दसवां उद्देशक है और चरम चरम
समय कृतयुगम कृतयुगम रूप ग्यारहवां उद्देशक है । ये आठों उद्देशक
समान आलापक वाले हैं ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छतीसवें शतक का
प्रथम द्विन्द्रिय महायुगम शत समाप्त ॥३६-१॥

कृतयुगम कृतयुगम ३५ आठमो उद्देशो कहेल छे. प्रथम अचरम समय कृतयुगम
कृतयुगम ३५ नवमो उद्देशो कहेल छे. अरम अरम समय कृतयुगम कृतयुगम
३५ दसमो उद्देशो कहेल छे. अने अरम अचरम समय कृतयुगम कृतयुगम ३५
अगीयारमो उद्देशो छे. आ आठ-उद्देशाच्यो सरणा आलाप प्रकारवाणा छे.
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना छतीसमा शतकनुं प्रथम,
द्विन्द्रिय महायुगम शतक समाप्त ॥३६-१॥



॥२-४ वेदियमहाजुम्मसयाइं ॥

मूलम्—कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं चेव । कणहलेस्सेसु वि एक्कारस उद्देसग-
संजुत्तं सयं । नवरं लेस्सा संबिट्ठणा ठिई जहा एगिंदिय
कणहलेस्साणं ॥३६-२॥

एवं नीललेस्सेहि वि सयं ॥३६-३॥ एवं काउलेस्सेहि वि
सयं चउत्थं समत्तं ॥३६-४॥

छत्तीसइमे सए ॥२३॥४। वेदियमहाजुम्मसयाइं समत्ताइं

छाया—कृष्णलेश्य कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते ? । एवमेव कृष्णलेश्येष्वपि एकादशोद्देशकसंयुक्तं शतम् । नवरं लेश्यासं
स्थितिः, स्थितिर्यथा एकेन्द्रियकृष्णलेश्यानाम् ॥३-२॥

एवं नीललेश्यैरपि शतम् ॥३६-३॥ एवं कापोतलेश्यैरपि शतं चतुर्थं
समाप्तम् ॥३६-४॥

षट्त्रिंशत्तमे शतके द्वितीयतृतीय चतुर्थानि द्वीन्द्रियमहायुग्मशतानि समाप्तानि ॥

टीका—‘कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति,
कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्मद्वीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो

शतक ३६-२-४ दो इन्द्रिय महायुग्मशत ।

‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
इत्यादि सूत्र-

टीकार्थ—‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ
उववज्जंति’ हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित
द्वीन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या
वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के

भीलथी योथा सुधीना जेन्द्रिय महायुग्म शतक

‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ छं.

टीकार्थ—‘कणहलेस्स कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
छे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा इत्युग्म इत्युग्म राशिवाणा जेन्द्रिय जेवो
क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमाथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्य योनिकेमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?

यावद्देवभ्यो वेति प्रश्नः । उत्तरमाह—‘एवं’ इत्यादि । ‘एवं चेव’ एवमेव एवम् एतच्छतकीय कृतयुगमकृतयुगम द्वीन्द्रियाख्यप्रथमशतकवदेव ‘कण्ठलेस्सेसु एकारस उद्देशग संजुतं सयं’ कृष्णलेश्येऽपि औधिकप्रथमसमयाप्रथमसमयाद्येकादशोद्देशकसंयुक्त शतं भणितव्यम् । नवरं लेस्सा संचिद्वृणा ठिई जहा एगिदिय कण्ठलेस्साणं’ नवर मेतच्छतकीयप्रथमशतापेक्षया इदं वैलक्षण्य यदत्र लेश्या संस्थानं स्थितिश्च यथा एकेन्द्रियकृष्णलेश्यानां कथिता तथैव ज्ञातव्या ॥

पट्टत्रिंशत्तमे शतके द्वितीयं द्वीन्द्रियमहायुगम शतं समाप्तम् ॥३६-२॥

‘एवं नीललेस्सेहि वि सयं’ एवं यथा कृष्णलेश्यैरेकादशोद्देशकसंयुक्तं द्वितीयं

उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों से आकर के उत्पन्न होते हैं ! इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं चेव’ हे गौतम ! जैसा इस सम्बन्ध में इसी शतक में कृतयुगम कृतयुगम द्वीन्द्रिय नामक औधिक, प्रथम शतक में कहा गया है वैसा ही शतक कृष्णलेश्यावाले द्वीन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में भी औधिक प्रथम समय, अप्रथम समय आदि ११ उद्देशकों से युक्त यहाँ पर भी कहलेना चाहिये । ‘नवरं लेस्सा संचिद्वृणा ठिई जहा एगिदिय कण्ठलेस्साणं’ परन्तु इस शतक के प्रथम शत की अपेक्षा यहाँ पर ऐसी विलक्षणता है कि यहाँ लेश्या संचिद्वृणा स्थितिकाल और आयुष्य स्थिति ये कृष्णलेश्यावाले एकेन्द्रिय जीवों के जैसे ही कहे गये हैं ।

द्वितीय द्वीन्द्रिय महायुगम शत समाप्त ॥३६-२॥

‘एवं नीललेस्सेहि वि सयं’ जैसा ११ उद्देशकों से युक्त शत

अथवा मनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—‘एवं चेव’ छे गौतम ! आ संभंधमां आ शतकमां कृतयुगम कृतयुगम द्वीन्द्रिय नामनुं औधिक-पडेलुं शतक कडेल छे, अज प्रमाणेनुं शतक कृष्णलेश्यावाणा जे द्वीन्द्रियवाणा एवोना संभंधमा पणु औधिक प्रथम समय, अप्रथम समय विगेरे ११ अगियार उद्देशाओवाणुं शतक अहियां पणु समजणुं ‘नवरं लेस्सा संचिद्वृणाठिई जहा एगिदियकण्ठलेस्साणं’ परंतु आ शतकमां पडेला शतकना कथन करतां एणुं विलक्षण पणु छे के—अहियां लेश्या संचिद्वृणा स्थितिकाल अने आयुष्य स्थिति आ कृष्णलेश्यावाणा ओकेन्द्रिय एवोनी जे म ज कडेल छे.

॥पीणु द्वीन्द्रिय महायुगम शतक समाप्त ॥३६-२॥

‘एवं नीललेस्सेहि वि सयं’ अगियार उद्देशावाणुं शतक कृष्णलेश्या-

शतं निर्मितं तथैव नीललेश्यैरपि शतं नीललेश्यापदमन्तर्भाव्यं शतं निर्मातव्यम् ॥

पट्टत्रिंशत्तमशतके तृतीयं द्वीन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३६-३॥

‘एवं काउलेस्सेहि वि’ एवमेव कापोतलेश्यैरपि शतं भणितव्यम्,
पट्टत्रिंशत्तमे शतके चतुर्थं द्वीन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥३६-४॥

अह ५-१२ वेदियमहाजुम्मसयाह’

मूलम्-भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म बेदियाणं भन्ते ! एवं
भवसिद्धियसयापि चत्तारि तेणैव पुठ्व गमएणां नेयठ्वा । नवरं
सव्वे पाणा० णो इणट्ठे समट्ठे । सेसं तहेव ओहियसयाणि
चत्तारि । सेवं भन्ते ! सेवं भन्ते ! त्ति ॥३६-५-८॥

जहा भवसिद्धिय सयाणि चत्तारि एवं अभवसिद्धिय
सयाणि चत्तारि । नवरं समत्तं नाणाणि नत्थि सेसं तं चेव ।

कृष्णलेश्यावालों के सम्बन्ध में कहा गया है वैसा ही शत ग्यारह
उद्देशकों से युक्त नीललेश्यावाले द्विन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में भी
कहलेना चाहिये । सिर्फ कृष्णलेश्यापद के स्थान में नीललेश्यापद लगा-
कर आलापक बना लेना चाहिये । इस प्रकार से नीललेश्यावाले
द्विन्द्रियों के सम्बन्ध में ११ उद्देशकों वाला एक तृतीय शत बन जाता है ।

तृतीय शत समाप्त ॥३६-३॥

‘एवं काउलेस्सेहि विसम’ इसी प्रकार से ११ उद्देशकों से युक्त कापोत-
लेश्यावाले द्विन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में चतुर्थ शत बना लेना चाहिये ।

चौथा महायुगम शत समाप्त ॥३६-४॥

पाणाओना संभंधमां ळे प्रमाणेनु कडेवामा आवेदा छे ओण प्रमाणेनुं शतक
अग्यार उद्देशाओवाणुं नीललेश्यावाणा ळे द्विन्द्रियवाणा लोवोना संभंधमां पणु
समण्वुं इकत ‘कृष्णलेश्या ओ पटना स्थाने “नीललेश्या” ओ पद लगावीने
संधणा आलापके अनावीने कडेवा लोथओ. आ रीते नीललेश्यावाणा द्विन्द्रिय
लोवोना संभंधमां ११ अगियार उद्देशाओवाणुं ओक त्रीणु शतक अनावीने
कडी लेवुं लोथओ

॥त्रीणु शतक समाप्त ॥३६-३॥

‘एवं काउलेस्से हि विसय’ आ उपर अतावेदा प्रकारथी ११ अगियार
उद्देशावाणुं कापोतिकलेश्यावाणा द्विन्द्रिय लोवोना संभंधमां ओथुं शतक
अनावी लेवुं लोथओ.

॥ओथुं शतक समाप्त ३६-४॥

एवं एयाणि बारस वेदियमहाजुम्मसयाणि भवंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

पंचमओ बारस पज्जत्ताइं वेदियमहाजुम्मसयाइं समत्ताइं । ५-१२।
छत्तीसइमं सयं समत्तं ॥३६॥

छाया—भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्मद्वीन्द्रिया खलु भदन्त ! एवं भव-
सिद्धिशतान्यपि चत्वारि तेनैव पूर्वगमकेन नेतव्यानि । नवरं सर्वे प्राणाः,
नाशमर्थः समर्थः । शेषं तथैव औघिकशतानि चत्वारि । तदेवं भदन्त ! तदेवं
भदन्त ! इति ॥३६-५-८॥

यथा भवसिद्धिकशतानि चत्वारि एवमभवसिद्धिकशतानि चत्वारि भणि-
तव्यानि । नवरं सख्यक्त्वज्ञाने न स्तः । शेषं तदेव । एतानि द्वादश द्वीन्द्रिय
महायुग्मशतानि भवन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

पञ्चम आरभ्य द्वादशपर्यन्तानि द्वीन्द्रियमहायुग्मशतानि समाप्तानि ॥५-१२॥
षट्त्रिंशत्तमं शतं समाप्तम् ॥३६॥

टीका—‘भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म वेदियाणं भंते !’ भवसिद्धिक कृत
युग्मकृतयुग्म द्वीन्द्रियाः खलु भदन्त कुत उत्पद्यन्ते किं नैरधिकेभ्यो यावद्देवेभ्य-
वेति प्रश्नः, उत्तरमाह—हे गौतम ! नो नैरधिकेभ्यः’ इत्यादिरूपेणोपपातविषयकं

॥शतक ३६-५-१२ दो इन्द्रिय महायुग्म शत॥

‘भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म वेदियाणं भंते !’ इत्यादि सूत्र
टीकार्थ—हे भदन्त ! भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित
दो इन्द्रिय जीव कहां से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरधिकों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर
के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! ये नैर-

पांचमा शतकथी आठमा सुधीना महायुग्म शतकेनु कथन

‘भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्मवेदियाण भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा ओ इन्द्रिय
जिवो कथांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरधिकेमाथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्योनिकेमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
अथवा मनुष्येमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमाथी आवीने

पूर्ववदेवोत्तरम् एवं परिमाणादिकमपि प्रथमशतवदेव ज्ञातव्यम् एतदभिप्रायेणै-
वाह—‘एव’ इत्यादि ‘एवं’ भवसिद्धियसया वि चत्वारि तेणेव पुण्यगमएणं
नेयव्वा’ एवं भवसिद्धिकशतान्यपि चत्वारि पूर्वगमकेन ज्ञातव्यानि, यथा कृत-
युग्मकृतयुग्मद्वीन्द्रियस्य चत्वारि शतानि औधिक कृष्णलेश्य नीललेश्य कापोत-
लेश्याख्यानि कथितानि तथैव भवसिद्धिकद्वीन्द्रियाणामपि चत्वारि औधिक
कृष्णनीलकापोतलेश्याख्यानि वक्तव्यानि सर्वत्र शतेषु पूर्ववदेव एकादश एकादशो-
देशका अपि वक्तव्याः । ‘नवरं सव्वे पाणा० णो इणट्ठे समट्ठे’ नवरं सर्वे प्राणाः०
नायमर्थः समर्थः सर्वे प्राणा यावत् सर्वे सत्त्वाः भवसिद्धिककृतयुग्मकृतयुग्मद्वीन्द्रि-
यतया समुत्पन्नपूर्वा इति प्रश्नस्य नायमर्थः समर्थः इत्युत्तरम् । अत्र सर्वे प्राणभूत
जीव सत्त्वा भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म द्वीन्द्रियतया पूर्वं नोत्पन्ना आसन्
अतोऽत्र ‘असइं अदुवा अनंतखुत्तो’ इति पाठो न वाच्य इति । ‘सेसं तहेव’ शेषं

धिको’ में से आकर के उत्पन्न नहीं होते हैं इत्यादि रूप से उपपान
विषयक उत्तर पहिले कहे गये जैसा ही जानना चाहिये ।

‘एवं भवसिद्धिय सया वि चत्वारि तेणेव पुण्यगमएणं नेयव्वा’
जिस प्रकार से कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रिय जीव के औधिक शत,
कृष्णलेश्य शत, नीललेश्य शत, और कापोतलेश्य शत ये चार शतक
कहे गये हैं उन्ही प्रकार से भवसिद्धिक द्वीन्द्रिय जीवों के भी ये ही चार
शत कहलेना चाहिये सर्वत्र शतों में पूर्व के जैसे ११-११ उद्देशक
वक्तव्य कहे गये हैं । ‘नवरं सव्वे पाणा० णो इणट्ठे समट्ठे’ परन्तु इन
उद्देशकों में ‘समस्त प्राण यावत् समस्त सत्त्व अनन्तवार भवसिद्धिक
कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रिय रूप से जन्म धारण कर चुके हैं’ ऐसा पाठ

उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के डे गौतम ! तेज्जा
नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थता नथी विगेरे प्रकारथी उपपत्तना संबंधमां
पडेला कहा प्रमाणेने उत्तर समल देवे।

‘एवं भवसिद्धियसया वि चत्वारि तेणेव पुण्यगमएणं नेयव्वा’ के
प्रमाणे कृतयुग्म कृतयुग्म जे द्वीन्द्रियवाणा जेवोना संबंधमां औधिक शतक,
कृष्णलेश्या शतक, नीललेश्या शतक अने कापोतलेश्या शतक आ आर शतके
कडेवामां आवेल छे, जेज प्रमाणे भवसिद्धिक द्वीन्द्रिय जेवोना संबंधमां
पण आज प्रमाणेना आर शतके कडेवा जेधजे जधा ज शतकेमां पडेला
कहा अनुसार ११-११ अगियार अगियार उद्देशाज्जा कडेवानुं कडेल छे.
‘नवरं सव्वे पाणा० णो इणट्ठे समट्ठे’ परंतु सधणा प्राणे यावत् सधणा सत्त्वे
अनंतवार भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म द्वीन्द्रिय पण्थाथी जन्म लई चुकेल

नवरमित्यादिना यत् कथितं तदतिरिक्तं पूर्ववदेव ज्ञातव्यम् 'ओहिय सयाणि च चारि' औघिक शतयुक्तानि चत्वारि भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म-भवसिद्धिक कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक नीललेश्य-भवसिद्धिक कापोतलेश्याख्यानि ज्ञातव्यानि । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

पट्टत्रिंशत्तमे शतके पञ्चमादारभ्याष्टमपर्यन्तानि

द्वीन्द्रिय महायुग्मशतानि समाप्तानि ॥३६-५-८॥

समर्थित नहीं हुआ है । इसलिये यहाँ 'असइ' अहुवा अनंतखुत्तो' ऐसा पाठ वाच्य नहीं बतलाया गया है । 'सेस' तहेव' इस भिन्नता कथन से अतिरिक्त और सब कथन पूर्व के जैसा ही है ऐसा जानना चाहिये । 'ओहियसयाणि चत्वारि' भवसिद्धिक दो इन्द्रिय जीवों के औघिक शतक युक्त ४ शत इस प्रकार से हैं-भवसिद्धिक कृतयुग्म १, भवसिद्धिक कृष्णलेश्या शत २, भवसिद्धिक नीललेश्या शत ३ और भवसिद्धिक कापोतलेश्या शत ४ । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । ऐसा कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

पांचवे से आठ वे महायुग्म ज्ञान समाप्त ॥३६-५-८॥

छे, ये प्रमाणेना पाठ समर्थित थयेल नथी तेथी अहियां 'असइ' अहुवा अणंतखुत्तो' आ प्रमाणेना पाठ कडेवानुं कडेल छे. 'सेस' तहेव' आ अलग प्रकारना कथन शिवायनु भीळुं सधणुं कथन पडेलां कह्या प्रमाणे न छे, तेम समजपुं. 'ओहिय सयाणि चत्वारि' भवसिद्धिक ये इन्द्रियवाणा जीवोना औघिक शतक युक्त आर ४ शतके आ प्रमाणे छे.-भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म १ भवसिद्धिक कृष्णलेश्या शतक २ भवसिद्धिक नीललेश्याशतक ३ अने भवसिद्धिक कापोतलेश्या शतक ४

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आपे आ विषयमां जे प्रमाणे कथन कर्युं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे हे भगवन् आप देवानु प्रियनु कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्री ने वंदना करी तेज्जाने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

॥पांचमाथी आठमा सुधीना आर शतके समाप्त ३६-५-८॥

‘जहा भवसिद्धियसयाणि चत्वारि एव अभवसिद्धियसयाणि चत्वारि भाणियव्याणि’ यथा भवसिद्धिकशतानि चत्वारि कथितानि एवमेव अभवसिद्धिकशतान्यपि चत्वारि, तत्रैकमभवसिद्धिकशतार्थाधिकं१, द्वितीयं कृष्णलेश्या भवसिद्धिकशतं२, तृतीयं नीललेश्या भवसिद्धिकशतं३, चतुर्थं कापोतलेश्याऽभवसिद्धिकशतं४, तदेवमभवसिद्धिकशतं चत्वारि शतानि भवन्ति । प्रत्येकस्मिन् शते एकादश एकादशोद्देशका अपि वक्तव्याः । ‘नवरं सम्मत्त नाणानि नत्थि’ नवरं केवलमेतस्मिन् शतचतुष्टये सम्यक्त्वं ज्ञानं च न भवति ‘सेसं तं चेव’ शेषं नवरमित्यादिना यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वस्युपपातपरिमाण्णादिकं सर्वत्र तदेव पञ्चत्रिंशच्छतकीय प्रथमशतकथितमेवेति, ‘एवं एयाणि वारस वेदियमहाजुम्म-

टीकार्थ-‘जहा भवसिद्धिकसयाणि चत्वारि एवं अभवसिद्धियसयाणि चत्वारि भाणियव्याणि’ जिस रीति से भवसिद्धिक द्वीन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में चार शत कहे गये हैं उसी रीति से अभवसिद्धिक द्वीन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में भी चार शत कह लेना चाहिये । जैसे प्रथम औघिक अभवसिद्धिक शत, द्वितीय कृष्णलेश्या अभवसिद्धिक शत, तृतीय नीललेश्या अभवसिद्धिक शत और चतुर्थ कापोतलेश्या अभवसिद्धिक शत । इन प्रत्येक शत में ११-११ उद्देशक है । ‘नवरं सम्मत्त नाणानि नत्थि’ इन चार शतों में विशेषना केवल इतनी सी है कि इनमें अभवसिद्धिक दो इन्द्रिय होने के कारण सम्यक्त्व एवं ज्ञान नहीं कहे गये हैं-क्यों कि दोनों यहां नहीं होते हैं । इस अन्तर के अतिरिक्त और सब उपपात परिमाण आदि का कथन सर्वत्र ३५ वें शतक

‘जहा भवसिद्धियसयाणि चत्वारि एवं अभवसिद्धियसयाणि’ चत्वारि भाणियव्याणि’ के प्रमाणे भवसिद्धिक द्वीन्द्रिय होनेवाला संबंधमां चार शतके उद्देशमां आवेद छे. अने प्रमाणे अबवसिद्धिक द्वीन्द्रियेना संबंधमां पणु चार शतके उद्देशे. नेम के-प्रथम औघिक अबवसिद्धिक शतके द्वितीय कृष्णलेश्या भवसिद्धिक शतके, तृतीय नीललेश्या भवसिद्धिक शतके, अने ये थु कापोतलेश्या भवसिद्धिक शतके आ दरेके शतकेमां ११-११ अणियार उद्देशेमां उद्देशे छे. ‘नवरं सम्मत्त नाणानि नत्थि’आ चार शतकेमां केवल अने विशेषपणु छे के-तेमांमां अबवसिद्धिक द्वीन्द्रिय होवाने कारणे सम्यक्त्व अने ज्ञान उद्देशे नथी. केम के अने अने अही होता नथी आ बुद्धापणु शिवाय आकीना उपपात, परिमाणु विगेरे संबंधी सधणु कथन अथे उद्देशे पात्रीसमा शतकेना पडेल शतकेना कथन प्रमाणु छे. ‘एवं

सयाणि भवंति' एवमुपरोक्तप्रकारेण एतानि द्वीन्द्रियमहायुग्मशतानि द्वादशसंख्य-
कानि भवन्ति औघिक द्वीन्द्रियशतमेकम्, कृष्णनीलकापोतलेश्यात्रययुक्तं शत-
त्रयमिति चत्वारि ४, भवसिद्धिकस्य चतुष्टयम् ८, अभवसिद्धिकस्य चतुष्टयम् १२,
सङ्कलनया द्वादशशतानि कृतयुग्मकृतयुग्मद्वीन्द्रियाणाम् । एवं कृतयुग्मत्रयोज
द्वीन्द्रियत आरभ्य यावत् कल्योजकलत्रयोजद्वीन्द्रियाणां त्रिपयेऽपि ज्ञातव्यम् ।
एवमेतानि द्वादशशतकानि भवन्ति' प्रत्येकं शतके एकादशैकादश उद्देशा सन्ति
ततः द्वादश १२ एकादशैर्गुणे द्वात्रिंशदधिकमेकं शतम् (१३२) उद्देशकानाम-
स्मिन् पद्त्रिंशत्शतके भवन्तीति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त !

के प्रथम शतक के जैसा ही हैं । 'एवं एयाणि वारस वेद्दियहाजुम्म
सयाणि भवंति' यहां ये द्वीन्द्रिय महायुग्म शत १२ हैं । जैसे-औघिक
द्वीन्द्रिय शत १ कृष्ण नील कापोतलेश्या त्रय युक्त तीन शत ३ भव-
सिद्धिकद्वीन्द्रिय शत ४ अभवसिद्धिक द्वीन्द्रिय शत ४ इस प्रकार से
कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित द्वीन्द्रिय जीवों के १२ महायुग्मशत हैं ।

इसी प्रकार से कृतयुग्मकृतयुग्मत्रयोज राशिप्रमित द्वीन्द्रिय से लेकर
कल्योज कलत्रयोज राशिप्रमित द्वीन्द्रियों के संबंध में भी समझ लेना
चाहिये । इस प्रकार ये १२ बारह शतक होते हैं । प्रत्येक शतक में
ग्यारह ग्यारह उद्देशक हैं अतः (१२×११=१३२) बारह को ग्यारह से
गुणा करने पर एकसौ बत्तीस उद्देशक इसी छत्तीस वे शतक में हैं ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! अभवसिद्धिक द्वीन्द्रिय
जीवों के उपपातादि के सम्बन्ध में जो आप देवानुप्रियने कहा है वह सब

एयाणि वारस वेद्दिय महाजुम्मसयाणि भवंति' अडियां आ रीते १२ पार
द्वीन्द्रिय सभंधी महायुग्म शतके औघिक द्वीन्द्रिय शतक १ कृष्णलेश्या
नीललेश्या अने कापोतलेश्या सभंधी त्रयु शतक, अवसिद्धिक द्वीन्द्रियना ४
चार शतक अवसिद्धिक जे द्वीन्द्रिय सभंधी ४ शतक आ रीते कृतयुग्म
कृतयुग्म राशिवाणा द्वीन्द्रिय जेवोना सभंधमां १२ महायुग्म शतके क्छा छे.

आज प्रमाणे कृतयुग्मत्रयोज राशिवाणा द्वीन्द्रिय जेवोथी लधने
कल्योज कलत्रयोज राशिवाणा द्वीन्द्रिय जेवोना सभंधमां पण १२-१२ पार
शतके छाय छे. तेथी से जे महा शतकेमां पधा भणीने कुन १३२ ओकसो
पत्तीस शतके थछ नय छे. १२- मां ११-११ उद्देशाओ छे. तेथी सधणा
उद्देशाओनी कुल संख्या २११२ ओकपीससो पारनी थछ नय छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् अवसिद्धिक द्वीन्द्रिय जेवोना
उपपात विगेरेना सभंधमां आप देवानुप्रिये जे कथन कर्तुं छे ते सधणुं कथन

तदेवं भदन्त ! इति हे भदन्त ! अभवसिद्धिं द्वीन्द्रियाणामुपपातादि विषये यत्कथितं तत्सर्वं सत्यमिति कथयित्वा यावत्त्यथासुखं विहरतीति ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक, वादिमानमर्दक-श्रीशाहच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त- 'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-वाळ-ब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री वासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां अष्टमः द्वादशान्तानि द्वीन्द्रिय महायुगशतानि समाप्तानि ॥३६-५-१२॥

॥ षट्त्रिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥३६॥

सर्वथा सत्य ही है। इस प्रकार कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्मा को आविष्ट करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री वासीलालजीमहारजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठीसवे शतक में आठवें से बारहवें पर्यन्तके द्वीन्द्रिय महायुग शत समाप्त ॥३६-५-१२॥

॥ ३६ वां शतक समाप्त ॥

सर्वथा सत्य न छे, हे भगवन् आप देवानुप्रियतुं सधुं कथन आप्त होवाथी सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने प्रभुश्रीने वन्दना करी तेआने नमस्कार कया वन्दना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने आविष्ट करता यका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥३६०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री वासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना छठीसवां शतकना आठवाथी बारमा सुधीना द्वीन्द्रिय महायुग शतको समाप्त ॥३६-५-१२॥

॥ छठीसभु शतक समाप्त ॥



अह सत्ततीसइम तेदियसयं

मूलम्—कडजुम्मकडजुम्म तेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं तेदिएसु वि बारससया कायव्वा वेदियसयसरिसा। नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं । ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं एगूणवन्नं राइंदियाइं । सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति

सत्ततीसइमे सए तेदियमहाजुम्मसया समत्ता ॥३७-१२॥

सत्ततीसइमं तेदियसयं समत्तं ॥३७॥

छाया—कृतयुग्मकृतयुग्म त्रीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते एवं त्रीन्द्रियेष्वपि द्वादशशतानि कर्त्तव्यानि द्वीन्द्रियशतसदृशानि नवरमवगाहना जघन्येनांगुलस्यासंख्येयभागम् उत्कर्षेण तिस्रो गव्यूतयः । स्थितिर्जघन्येनैकं समयम् उत्कर्षेण एकोनपञ्चाशद्रात्रिदिनानि । शेषं तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

सप्तत्रिंशत्तमे शते त्रीन्द्रिय महायुग्मशतानि समाप्तानि ॥३७-१२॥

॥ सप्तत्रिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥३७॥

टीका—‘कडजुम्मकडजुम्म तेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ कृतयुग्म-कृतयुग्मत्रीन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते यावद्देवेभ्य आगत्य उत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह अतिदेशद्वारेण—‘एवं’

॥३७ चां शतक त्रीन्द्रिय शत॥

टीकार्थ—‘कडजुम्म कडजुम्म तेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति, हे भदन्त ! कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित त्रीन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा

साक्षात्त्रीसभा शतकने। प्रारंभ—

कडजुम्म कडजुम्म तेदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ धृत्यादि

हे भगवन् कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा त्रयु धन्द्रियवाणा एवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने

इत्यादि, 'एवं तेऽदिपसु वि वारससया कायव्वा वेऽदिय सयसरिसा' एवं त्रीन्द्रिये-
ष्वपि द्वादशशतानि अभूवन् तथैवान्नापि द्वादशशतानि कर्त्तव्यानि प्रथमर्माधिकं
शतं द्वितीयं कृष्णलेशघटितं तृतीयं नीललेशघटितम् चतुर्थं कापोतलेशघटितं
भवसिद्धिकस्यैवमेव चत्वारि शतानि एवमेव अभवसिद्धिकस्य चत्वारि शतानि
सर्वशतेषु एकादश एकादशोद्देशकाः प्रथमसमयादिका अपि वक्तव्याः । द्वीन्द्रिय-
शतकापेक्षया यद् वैलक्षण्यं तद्दर्शयति—'नवरं' इत्यादि, 'नवरं ओगाहणा जहन्नेणं
अंगुलस्त असंखेज्जभागं' नवरं—केवलं शरीरावगाहना त्रीन्द्रियाणां जघन्येनां-
गुलस्यासंख्येयभागप्रमाणा 'उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं' उत्कर्षेण तिस्रो गव्यू-

देवો' નેં સે આકર કે ઉત્પન્ન હોતે હૈ ? 'एवं तेऽदिपसु वि वारस
सया कायव्वा वेऽदिय सयसरिसा' इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुश्री
गौतमस्वामी कहतेहैं—'हे गौतम ! जिस रीति से द्वीन्द्रिय जीवों के
सम्यन्त्र में १२ शत प्रकट किये गये हैं, इसी रीति से यहां पर भी
१२ शत प्रकट कर लेना चाहिये । जैसे प्रथम औषिक शतक द्वितीय
कृष्णलेश्या घटित शत, तृतीय नीललेश्या घटित शत, चतुर्थ कापोत-
लेश्या घटित शत, भवसिद्धिक त्रीन्द्रिय जीव के भी ऐसे ही चार शत
और अभवसिद्धिक त्रीन्द्रिय के भी चार शत इन सब शतों में ११-
११ उद्देशक भी कहना चाहिये । परन्तु द्वीन्द्रिय शतक की अपेक्षा जो
इस शतक में भिन्नता है वह ऐसी है कि 'नवरं ओगाहणा जहन्नेणं
अंगुलस्त असंखेज्जभागं' यहां जघन्य अवगाहना तो अंगुल के
असंख्यान वे' भाग प्रमाण है और 'उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं'

ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે
કે 'एवं तेऽदिपसु वि वारससया कायव्वा वेऽदियसयसरिसा' હે ગૌતમ !
દ્વીન્દ્રિય જીવોના સંબંધમાં જે પ્રમાણે બાર શતકો બતાવ્યા છે, એજ પ્રમાણેના
બાર શતકો અહિયાં આ ત્રણ ઈન્દ્રિયવાળા જીવોના સંબંધમાં પણ કહેવા નેઈએ.
જેમ કે—પહેલું ઔષિક શતક ખીજું કૃષ્ણલેશ્યાવાળા યુક્ત, ત્રીજું નીલલેશ્યા
યુક્ત, શતક, ચોથું કાપોતલેશ્યા યુક્ત, શતક ભવસિદ્ધિક ત્રણ ઈન્દ્રિયવાળા
જીવોને પણ એજ પ્રમાણેના ચાર શતકો તથા અભવસિદ્ધિક ત્રણ ઈન્દ્રિયવાળા
જીવોને પણ ચાર શતકો એ રીતે આ બારે શતકોમાં ૧૧-૧૧ અગિયાર
અગિયાર ઉદ્દેશાઓ પણ કહેવા નેઈએ પરંતુ એ ઈન્દ્રિયવાળા જીવોના
શતક કરતાં આ શતકોમાં જે બુદ્ધાપણું આવે છે, તે એવું છે કે—'नवरं
ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्त असंखेज्जभागं' અહિયાં જઘન્ય અવગાહનાતો
આંગળના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણની છે, અને 'उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं'

तयः । 'ठिई जहन्नेणं एककं समयं' स्थितिर्जघन्येन एकसमयप्रमाणा 'उक्कोसेणं एगूणवन्नं राइदियाइं' उत्कर्षेण एकोनपञ्चाशत् रात्रिं दिवानि, 'सेसं तहेव' शेष मवगाहनास्थित्यतिरिक्तं सर्वं द्वीन्द्रियशतशदेव त्रीन्द्रियशतकेऽपि ज्ञातव्यम् 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ इति त्रीन्द्रियमहायुग्वशतानि समाप्तानि ॥३७-१२॥

॥ सप्तत्रिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥३७॥

उत्कृष्ट अवगाहना तीन कौश की है । 'ठिई जहन्नेणं एककं समयं' एगूणवन्नं राइदियाइं' तथा स्थिति जघन्य से एक समय की है और उत्कृष्ट ४९ दिक् रातकी है । 'सेसं तहेव' अवगाहना एवं स्थिति से अतिरिक्त और उपपात आदि का कथन द्वीन्द्रिय शतक के जैसा ही है 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है यह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भाविन करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ ३७ वां शतक समाप्त ॥

उत्कृष्टी अवगाहना त्रयु गाठनी छे, 'ठिई जहण्णेणं एककं समयं उक्कोसेणं एगूणवन्नं राइदियाइं' तथा स्थिति जघन्यथी ऐक समयनी छे, अने उत्कृष्टथी ४९ ओगणुपय्यास द्विस रातनी कडेल छे. 'सेसं तहेव' अवगाहना अने स्थितिना कथन शिवाय भाझीना उपपात विगेरे संभंधी कथन जे छिन्द्रियवाणा लुवेना शतकमां कइया प्रभाणु जे छे

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ त्रयु छिन्द्रियवाणा लुवेना संभंधमां जे प्रभाणुनुं कथन क्युं छे ते सर्वथा सत्य जे छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य जे छे. आ प्रभाणु कहीने गौतमस्वाभीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कया वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर भिराज्म न थया ॥सू०१॥

॥साउत्रीसभुं शतक समाप्त ॥३७॥

‘अह अद्वतीसइमं चउरिदियसयं’

मूलम्—चउरिदिएहि वि एवं चेव बारससया कायव्वा, नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइं । ठिई जहन्नेणं एकं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा, सेसं जहा बेदियाणं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति

चउरिदियसहाजुम्मसया समत्ता ॥३८-१२॥

अद्वतीसइमं सयं समत्तं ॥३८॥

छाया—चतुरिन्द्रियैरपि एवमेव द्वादशशतानि कर्त्तव्यानि, नवरम्—अवगाहना जघन्येन अंगुलस्य असंख्येयभागम्, उत्कर्षेण चतस्रो गव्यूतयः स्थिति-जघन्येन एकं समयम्, उत्कर्षेण षण्मासाः, शेषं यथा द्वीन्द्रियाणाम्, तदेवं भदन्त । तदेवं भदन्त । इति ॥

चतुरिन्द्रिय महायुग्मशतानि समाप्तानि ॥३८-१२॥

अष्टत्रिंशत्तमं शतं समाप्तम् ॥३८॥

टीका—‘चउरिदिएहि वि एवंचेव बारससया कायव्वा’ पञ्चत्रिंशत्तमशतगतैकेन्द्रिय शतवत् चतुरिन्द्रियैरपि एवमेव द्वादशशतानि कर्त्तव्यानि । औधिक कृतयुग्मकृतयुग्म चतुरिन्द्रियादारभ्य चरमाचरम कृतयुग्मकृतयुग्म चतुरिन्द्रियपर्यन्तमेकादशोद्देशक-गर्भितानि प्रत्येकम् औधिक-कृष्णनीलकापोतलेश्या घटितानि चत्वारि शतानि

शतक ३८ वां चौइन्द्रिय शत

टीकार्थ—चौइन्द्रिय जीवों के साथ भी ३५ वें शतक में वर्णित एकेन्द्रिय शतके जैसे १२ शतक कर्त्तव्य हैं । औधिक कृतयुग्मकृतयुग्म चौइन्द्रिय से लेकर चरमाचरम कृतयुग्म कृतयुग्म चौइन्द्रिय तक के ११ उद्देशकों से युक्त औधिक शत, कृष्णलेश्या घटित शतक, नील

॥आडनीसमा शतकनो प्रारंभ—

टीकार्थ—चार छन्द्रियवाणा लुवेना संभंधमां पणु ३५ पांत्रीसमा शतकमां वणुवेद ओकेन्द्रिय लुवेना शतके प्रमाणेना १२ आर शतके कडेवा लोधमे. औधिक कृतयुग्म कृतयुग्मथी लधने चरम-अचरम कृतयुग्म कृतयुग्म चार छन्द्रियवाणा सुधीमां ११ अगियार उद्देशाओथी युक्त औधिक शतक, कृष्णलेश्यवाणुं शतक, नीललेश्याथी युक्त, शतक, कापोतिक लेश्यायुक्त शतक

एवमेव भवसिद्धिकघटितानि चत्वारि शतानि, तथा अभवसिद्धिकघटितानि चत्वारि शतानि चेति, सर्वसंक्रुलितानि चतुरिन्द्रियैरपि कर्तव्यानीतिभावः । अत्र यद् वैलक्षण्यं तदाह—‘नवरं’ इत्यादि, नवरं केवलं विशेषस्त्वयम् यत् एषां चतुरिन्द्रियाणाम् ‘ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं’ अवगाहना जघन्ये नांगुलस्यासंख्येयभागप्रमिता, ‘उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइ’ उत्कर्षेण चत्सो गव्यूतयः, इति चतुर्गव्यूति प्रमिता चतुःक्रोशप्रमाणा उत्कर्षेण तादृशचतुरिन्द्रियाणामवगाहना प्रोक्तेति भावः । एषां ‘ठिई जहन्नेणं एकं समयं’ स्थितिर्जघन्येन एकं समयं यावत्, ‘उक्कोसेणं छम्मासा’ उत्कर्षेण स्थिति’ षण्णासान् यावत् एतदेव वैलक्षण्यम्, ‘सेसं जहा वेइंदियाणं’ शेषम्—अवगाहना स्थित्यतिरिक्तं सर्वं

लेइया घटित शत, कापोतलेइया घटित शत, भवसिद्धिक घटित चार शतक और अभवसिद्धिक घटित चार शतक इस प्रकार से सब शतक १२ हो जाते हैं । ये १२ शत चौइन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में हैं । पूर्व शतक की अपेक्षा जो यहाँ अन्तर आता है उसे ‘ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइ भागं उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइ’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट किया गया है—यहाँ जघन्य से अवगाहना-शरीर की ऊचाई अंगुल के असंख्यात वे भाग प्रमाण है और उत्कृष्ट से चार क्रोश की है । ‘एवं ठिई जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं छम्मासा’ इनकी जघन्य स्थिति एक समय की और उत्कृष्ट स्थिति छहमास की हैं । ‘सेसं जहा वेइंदियाणं’ अवगाहना और स्थिति के अतिरिक्त और सब कथन जैसा दो इन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में कहा

भवसिद्धिकवाणा चार शतको अने अभवसिद्धिवाणा चार शतको आ रीते सधणा भणीने १२ चार शतको थछ ज्ञय छे. आ चार शतको चार इन्द्रिय लुवेना संबधमां कहेल छे पडेला शतकना कथन करतां आ कथनमां ले अंतर आवे छे, ते ‘ओगाहणा जहणेणं अंगुलस्स असंखेज्जइ भागं, उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइ’ आ सूत्रद्वारा प्रकट करेले छे. अद्वियां जघन्यथी अवगाहना शरीरनी उचाई आंगणना असंख्यातमा भाग प्रमाणवाणी छे अने उत्कृष्ट अवगाहना चारगाउनी कहेले छे. ‘एसो ठिई जहणेणं एकं समयं उक्कोसेणं छम्मासा’ आभनी जघन्य स्थिति एक समयनी अने उत्कृष्टथी स्थिति छे मासनी कही छे. ‘सेसं जहा वेइंदियाणं’ अवगाहना अने स्थितिना कथन करतां आकीनु सधणुं कथन जे इन्द्रियवाणा लुवेना संबधमां ले प्रमाणे कहेवामां आवेले छे, तेज प्रमाणेनुं छे

यथा द्वीन्द्रियाणां तथा वाच्यम् । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्गुरुलभादिपदभूषितवालव्रतचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चतुरिन्द्रियमहायुगमस्रतानि समाप्तानि ॥३८-१२॥
अष्टत्रिंशत्तमशतं समाप्तम् ॥३८॥

हे वेसा ही है 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त आपका यह सब कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके अडतीसवें शतक का
चौहन्द्रिय महायुगम शत समाप्त ॥३८-१२॥
३८ वां शतक समाप्त

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ' हे भगवन् आपनुं आ विषय संण'धमां ढडेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन् आप देवानुप्रिये ढडेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणुे ढहीने गौतमस्वामीण्ये प्रभुश्रीने वंदना करी तेण्योने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना आडतीसमा शतकेतुं
महायुगम शतक समाप्त ॥३८-१२॥
॥आडतीसमुं शतक समाप्ता॥



‘अह एगूणयालीसइमं सयं’

मूलम्—कडजुम्मकडजुम्म असन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति जहा वेदियाणं तहेव असन्नि सु वि वारससया कायवा । नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसहस्सं । संचिट्टणा जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं । ठिई जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, सेसं जहा वेदियाणं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

असन्निपंचिदियमहाजुम्मसया समत्ता ॥३९-१२॥

एगूणयालीसइमं सयं समत्तं ॥३९॥

छाया--कृतयुग्मकृतयुग्मासंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? यथा द्वीन्द्रियाणां तथैवासंज्ञिष्वपि द्वादशशतानि कर्तव्यानि । नवरमवगाहना जघन्येनांगुलयासंख्येयभागम्, उत्कर्षेण योजनसहस्रम्, संस्थितिः कायस्थिति-जघन्येनैकं समयम् उत्कर्षेण पूर्वकोटिः । शेषं यथा द्वीन्द्रियाणाम् । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

असंज्ञिपञ्चेन्द्रिय महायुग्मशतानि समाप्तानि ॥३९-१२॥

एकोनचत्वारिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥३९॥

टीका--‘कडजुम्मकडजुम्म असन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ कृतयुग्मकृतयुग्माऽसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः,

३९ वां शतक

‘कडजुम्म कडजुम्म असन्नि पंचिदियाणं भंते ॥इत्यादि सूत्र ॥

टीकार्थ--हे भदन्त ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित असंज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैर-यिकों से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते

ओगाणुयालीसभा शतकेना आरंभ--

‘कडजुम्म कडजुम्म असन्नि पंचिदियाणं भंते । इत्यादि

हे लगवन् कृतयुग्म कृतयुग्म राशि प्रमाणवाणा असंजी पञ्चेन्द्रिय लुवे क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु तेओ नैरयिकेभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा

ઉત્તરમાહ અતિદેશદ્વારેણ-‘જહા’ ઇત્યાદિ, ‘જહા વેદિયાણં તહેવ અસન્નિસુ વિ વારસસયા કાયવ્વા’ યથા દ્વીન્દ્રિયાણાં દ્વાદશશતાનિ કથિતાનિ તથૈવાસંજિ-
 વ્વપિ દ્વાદશશતાનિ કર્તવ્યાનિ । પ્રત્યેકસ્મિન્ શતે એકાદશ એકાદશોદેશકા,
 અપિ વક્તવ્યાઃ । દ્વીન્દ્રીયાપેક્ષયા યદ્વૈલક્ષણ્યં તદ્વાહ-‘નવરં’ ઇત્યાદિના ‘નવરં
 ઓગાહના જહન્નેણં અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં’ નવરં કેવલં વૈલક્ષણ્યં દ્વીન્દ્રિય-
 શતાપેક્ષયા ઇદમેવ યત્ત શરીરાવગાહના ચતુરિન્દ્રિયાણાં જઘન્યેનાંગુલસ્સ્યાસંખ્યેય-
 માગપ્રમાણા ‘ઉક્કોસેણં જોયણસહસ્સં’ ઉત્કર્પેણ યોજનસહસ્સમ્ । ‘સંચિટ્ટણા જહ-
 ન્નેણં એકં સમયં’ ‘સંચિટ્ટણા’ કાલતઃ કાયસ્થિતિ જઘન્યેન એકસમયપ્રમાણા

હેં ? અથવા દેવોં મેં શ્ચે આકર કે ઉત્પન્ન હોતે હેં ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર
 કે સ્તમ્બન્ધ મેં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામી શ્ચે કહતે હેં-‘જહા વેદિયાણં તહેવ
 અસન્નિસુ વિ વારસ સયા કાયવ્વા’ હે ગૌતમ ! જિસ રીતિ સે દ્વીન્દ્રિય
 જીવોં કે ૧૨ શતક કહે ગયે હેં ઊસી રીતિ શ્ચે અસંજી જીવોં કે મી
 ૧૨ શતક કહલેના ચાહિયે ઔર પ્રત્યેક શતક મેં ૧૧-૧૧ ઉદેશક મી
 કહના ચાહિયે । દ્વીન્દ્રિય કી અપેક્ષા જો યહાં અન્તર હેં વહ ‘નવરં ઓગા-
 હના જહન્નેણં અંગુલસ્સ અસંખેજ્જહમાગં’, ઉક્કોસેણં જોયણસહસ્સં’
 હસ સૂત્રદ્વારા કિયા ગયા હેં-યહાં જઘન્ય અવગાહના અંગુલ કે અસંખ્યાત
 વેં માગ પ્રમાણ હેં ઔર ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના એક હજાર યોજન કી હેં ।
 ‘સંચિટ્ટણા જહન્નેણં એકં સમયં’ કાલ કી અપેક્ષા કાયસ્થિતિ રુપ સંચિ-

મનુષ્યોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા દેવોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન
 થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-“જહા
 વેદિયાણં તહેવ અસન્નિસુ વિ વારસસયા કાયવ્વા’ હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે જે
 ઈન્દ્રિયાણા ઊવેના સંબંધમાં ૧૨ બાર શતકો કહેલ છે, એજ પ્રમાણે આ
 અસંજી ઊવેના સંબંધમાં પણ ૧૨ શતકો કહી લેવા અને દરેક શતકમાં
 ૧૧-૧૧ અગિયાર-અગિયાર ઉદેશાઓ પણ કહી લેવા. જે ઈન્દ્રિયાણા ઊવે
 કરતાં આ કથનમાં જે અંતર છે, તે ‘નવરં ઓગાહના જહણેણં અંગુલસ્સ
 અસંખેજ્જહમાગં ઉક્કોસેણં જોયણસહસ્સં’ આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રગટ કરવામાં આવેલ
 છે. અહિયાં જઘન્ય અવગાહના આંગળના અસંખ્યાત ભાગ પ્રમાણ છે અને
 ઉત્કૃષ્ટ એકહજાર યોજનની કહેલ છે. ‘સંચિટ્ટણા જહણેણં એકં સમયં
 ઉક્કોસેણં’ કાળની અપેક્ષાથી કાયસ્થિતિ રૂપ સંચિટ્ટણુ જઘન્ય એક સમય

समयानन्तर संख्यानंतरसद्भावात् 'उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं' उत्कर्षेण पूर्वकोटि पृथक्त्वं द्वि पूर्वकोटित आरभ्य नव पूर्वकोटिपर्यन्तमित्यर्थः। 'ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं' स्थितिरायुषः जघन्येनैकसमयप्रमाणा समयानन्तरं भवान्तरसद्भावात् 'उक्कोसेणं पुव्वकोडी, उत्कर्षेण पूर्वकोटिः। 'सेसं जहा वेदियाणं' शेषम् अवगाहना स्थित्यतिरिक्तं यथा द्वीन्द्रियाणां वधितं तथैव ज्ञेयमिति। 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति ॥

इत्थसंज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुग्मशतानि सगाप्तानि ॥३९-१२॥

। एकोनचत्वारिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥३९॥

दृष्ट्वा जघन्य से एक समय प्रमाण और 'उक्कोसेणं' उत्कृष्ट से 'पुव्वकोडी पुहुत्तं' पूर्वकोटि पृथक्त्व है। अर्थात् दो पूर्वकोटि से लेकर नौ पूर्वकोटि तक है। 'ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडी' इनके आयुष्य की स्थिति जघन्य से एक समय की और उत्कृष्ट से एक पूर्व कोटि की है। 'सेसं जहा वेदियाणं' इस प्रकार अवगाहना और स्थिति इन दोनों भिन्नताओं के अतिरिक्त और सब कथन द्वीन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में जैसा कहा गया है वैसा ही है 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आपने जो यह कथन किया है। वह सब सर्वथा सत्य ही है २। इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार क्रिया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संघम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये।

॥असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय शत समाप्त ३९ वां शतक समाप्त॥

प्रमाण्णे अने उत्कृष्टथी 'पुव्वकोडी पुहुत्तं' पूर्वकोटि पृथक्त्व छे. अर्थात् जे पूर्वकोटीथी लक्षणे नव पूर्वकोटि सुधी कडेल छे. 'ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं पुव्वकोडी' स्थिति आयुष्य कर्मान्नी स्थिति जघन्यथी जेक समयनी अने उत्कृष्ट जेक पूर्वकोटिनी छे. 'सेसं जहा वेदियाणं' आ रीते अवगाहना अने स्थिति आ जे विषयना लिप्तपण्णा शिवाय भाठीनुं सधणु कथन जे धन्द्रियवाणा ज्ञेयाना संभंधमां जे प्रमाण्णे कडेवामां आवेल छे, जेज प्रमाण्णु छे, तेम समज्जुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आपे आ विषयमां जे कथन कर्तुं छे, ते सर्वथा सत्य छे. २ आ प्रमाण्णे कडीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तप अने संघमथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थका. ॥सू०१॥

असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय शतक समाप्त
॥योगबुधाणीसमु शतक समाप्त ॥३९॥

‘अह चत्तालीसइमं सय’

मूळम्-कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? उववाओ चउसु वि गइसु । संखेज्ज वासाउय असंखेज्जवासाउय पज्जत्तअपज्जत्तएसु य न कओ वि पडिसेहो जाव अणुत्तरविमाणत्ति । परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा असन्निपंचिदियाणं । वेयणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं कम्म-पगडीणं बंधगा वा, अबंधगा वा, वेयणिज्जस्स बंधगा नो अबंधगा । मोहणिज्जस्स वेदगा वा, अवेदगा वा, सेसाणं सत्त-ण्ह वि वेदगा नो अवेदगा । सयावेयगा वा असायावेयगा वा मोहणिज्जस्स उदई वा अणुदई वा सेसाणं सत्तण्ह वि उदई नो अणुदई । नामस्स गोयस्स य उदीरगा नो अणुदीरगा वा, कणहलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा, सम्मदिट्ठी वा मिच्छा-दिट्ठी वा, सम्मामिच्छादिट्ठी वा । णाणी वा अन्नाणी वा, मणजोगी वयजोगी कायजोगी, उवओगो वन्नमाई, उसासगा वा नीसासगा वा, आहारगा य जहा एगिंदियाणं, विरयाय अविरयाय विरयाविरयाय । सकिरिया नो अकिरिया । ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहबंधगा वा अट्टविहबंधगा वा, छव्विह बंधगा वा एगविहबंधगा वा ? गोयमा ! सत्तविहबंधगा वा, जाव एगविहबंधगा वा । ते णं भंते ! जीवा किं आहारसन्नो-वउत्ता वा जाव परिग्गहसन्नोवउत्ता वा नो सन्नोवउत्ता वा, गोयमा ! आहारसन्नोवउत्ता जाव नो सन्नोवउत्ता वा । सबत्थ पुच्छा भाणियव्वा कोहकसाई वा जाव लोभकसाई वा अकसाइ वा । इत्थिवेयगा वा पुरिसवेयगा वा नपुंसगवेयगा वा अवेदगा वा । इत्थिवेयबंधगा वा, पुरिसवेयबंधगा वा, णपुंसगवेयबंधगा

वा अवंधगा वा । सन्नी नो असन्नी । सइंदिया णो अणिंदिया ।
 संचिद्वणा जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं सागरोवमस्यपुहुत्तं
 सातिरेगं । आहारो तहेव जाव नियमं छदिसिं । ठिई जहन्नेणं
 एकं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमइं । छ समुग्घाया
 आदिल्लगा । मारणांतियसमुग्घाएणं समोहया वि मरंति असमो-
 हया वि मरंति । उव्वट्टणा जहेव उववाओ न कत्थइ पडिसेहो
 जाव अणुत्तरविमाणत्ति । अह भंते ! सव्व पाणा जाव अणंत-
 खुत्तो । एवं सोलससु वि जुम्मेसु भाणियव्वं जाव अणंतखुत्तो ।
 नवरं परिमाणं जहा वेदियाणं सेसं तहेव । सेवं भंते ! २ त्ति ॥४०-१॥

पढमसमय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते !
 कओ उववज्जंति ? उववाओ, परिमाणं, आहारो, जहा एएसिं
 चेव पढमुद्देसए । ओगाहणा बंधो वेदो वेयणा उदयी उदीरगा
 य जहा वेदियाणं पढमसमयाणं तहव । कणहलेस्सा वा जाव
 सुक्कलेस्सा वा । सेसं जहा वेदियाणं पढमसयाणं जाव अणं-
 तखुत्तो । नवरं इत्थेवेयगा वा पुरिसवेयगा वा नपुंसगवेयगा
 वा, सन्नी णो असन्नीणो सेसं तहेव । एवं सोलससु वि
 जुम्मेसु परिमाणं तहेव सव्वं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४० १॥

एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देसगा तहेव । पढमो तइओ
 पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ट वि सरिसगमा । चउत्थ छट्ट
 अट्टमदसमेसु नत्थि विसेसो कायव्वो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

चत्तालीसइमे सए पढमं सन्निपंचिदिय
 महाजुम्मसयं समत्तं ॥४०-१२॥

छाया--कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? उपपातश्चतसृभ्योऽपि गतिभ्यः । संख्येयवर्षायुष्कासंख्येयवर्षायुष्क पर्याप्तापर्याप्त-
 केभ्यश्च न कुतोऽपि प्रतिषेधो यावदनुत्तरविमानमिति, परिमाणमपहारोऽवगाहना
 च यथा असंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणाम् । वेदनीयवर्जानां सप्तानां कर्मप्रकृतीनां बन्धका वा
 अवन्धका वा वेदनीयस्य बन्धका नो अवन्धकाः । मोहनीयस्य वेदका वा अवेदका
 वा शेषाणां सप्तानामपि वेदका नो अवेदकाः । सातावेदका वा असातावेदका वा
 मोहनीयस्योदयिनो वा. अनुदयिनो वा, शेषाणां सप्तानामपि उदयिनो नो अनुद-
 यिनः । नाम्नो गोत्रस्य चोदीरका नो अनुदीरकाः शेषाणां पणामपि उदीरका
 अनुदीरका वा । कृष्णलेश्या वा यावत् शुक्ललेश्या वा । सम्यग्दृष्टयो वा, मिथ्या
 दृष्टयो वा, सम्यग्मिथ्यादृष्टयो वा । ज्ञानिनो वा अज्ञानिनो वा, मोनोयोगिनो
 वा वचोयोगिनः काययोगिनः । उपयोगो वर्णादिः, उच्छ्वासका वा निश्वासका
 वा आहारकाश्च यथा एकेन्द्रियाणाम् । विरताश्चाविरताश्च विरताविरताश्च ।
 सक्रिया नो अक्रिया । ते खलु भदन्त ! जीवाः किं सप्ताविधबन्धका वा अष्टवि-
 धबन्धका वा पञ्चविधबन्धका वा ? गौतम ! सप्तविधबन्धका वा यावत् एकविध-
 बन्धका वा । ते खलु भदन्त ! जीवाः किमाहारसंज्ञोपयुक्ता यावत् परियह
 संज्ञोपयुक्ता वा नो संज्ञोपयुक्ता वा, गौतम ! आहारसंज्ञोपयुक्ता यावत् नो संज्ञो-
 पयुक्ता वा सर्वत्र पृच्छा भणितव्या, क्रोधकपायिनो वा यावत् लोभपाययिनो वा
 अकपायिनो वा । स्त्रीवेदका वा पुरुषवेदका वा नपुंसकवेदका वा अवेदका वा ।
 स्त्रीवेदबन्धका पुरुषवेदबन्धका वा नपुंसकवेदबन्धका वा अवन्धका वा । संज्ञिनः,
 नो असंज्ञिनः । सेन्द्रिया नो अन्दिन्द्रियाः । संस्थितिः जघन्येनैकं समयमुत्कर्षेण
 सागरोपमशतपृथक्त्वं सातिरेकम् । आहारस्तथैव यावत् नियमतः पद्दिशि ।
 स्थितिर्जघन्येनैकं समयमुत्कर्षेण त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि । पट्ट समुद्घाता आदिकाः
 मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता अपि म्रियन्ते । असमवहता अपि म्रियन्ते ।
 उद्धर्तना यथैवोपपातः न कुत्रापि प्रतिषेधो यावदनुत्तरविमानमिति । अथ भदन्त ! सर्वे
 प्राणा यावदनन्त कृत्वः । एवं षोडशस्वपि युग्मेषु भणितव्यं यावदनन्तकृत्वः नवरं
 परिमाणं यथा द्वीन्द्रियाणाम् शेषं तथैव । तदेव भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । ४० ।

प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते
 उपपातः परिमाणमाहारो यथा एतेषामेव प्रथमोद्देशके । अवगाहना बन्धो वेदो
 वेदना उदयिन उदीरकाश्च यथा द्वीन्द्रियाणां प्रथमसमयानाम् । तथैव कृष्णलेश्या
 वा यावत् शुक्ललेश्या वा । शेषं यथा द्वीन्द्रियाणां यावदनन्तकृत्वः । नवरं स्त्री-
 वेदका वा पुरुषवेदका वा नपुंसकवेदका वा संज्ञिनोऽसंज्ञिनः । शेषं तथैव । एवं
 षोडशस्वपि युग्मेषु परिमाणं तथैव सर्वम् तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

एवमत्रापि एकादशोद्देशकास्तथैव प्रथमात्तृतीयः पञ्चमश्च सदृशगमाः शेषा
अष्टावपि सदृशगमाः । चतुर्थपष्ठाष्टमदशमेषु नास्ति विशेषः कर्त्तव्यः । तदेवं
भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

॥चत्वारिंशत्तमे शतके प्रथमं संज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुगभ्रशतम्, समाप्तम् ॥४०-१-१२॥

टीकार्थ—कडजुम्मकडजुम्म सञ्ज्ञिपञ्चिदियाणं भंते ! कभो उववज्जति' कृतयुगम
कृतयुगम संज्ञि पञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत आगत्योत्पद्यन्ते इत्यादि, उत्तरमाह-
उववाओ' इत्यादि, 'उववाओ चउसु वि गइसु' उपशातश्चतसृभ्योऽपि गतिभ्यः,
अत्र सूत्रे पञ्चम्यर्थे सप्तमी, हे गौतम ! त इमे कृतयुगमकृतयुगम संज्ञिपञ्चेन्द्रियजीवाः
नरकेभ्योऽपि आगत्य एतादृशपञ्चेन्द्रियतया उत्पद्यन्ते तिर्यग्भ्यो वा आगत्य मनु-
ष्येभ्यो वा आगत्य देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति भावः । 'संखेज्जवासा-
उय असंज्जवासाउय पज्जत्त अपज्जत्तएसु न कभो वि पडिसेहो जाव अणुत्तर-

ज्ञानक ४०

'कडजुम्मकडजुम्म सञ्ज्ञि पञ्चिदियाणं भंते ! कभो उववज्जति' इ.

टीकार्थ—हे भदन्त ! कृतयुगमकृतयुगम संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव किस
स्थानविशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर
के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते
हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से
आकर के उत्पन्न होते हैं ? 'उववाओ चउसु वि गइसु' हे गौतम !
कृतयुगमकृतयुगम राशि प्रक्षालण संज्ञिपञ्चेन्द्रियजीव नैरयिकों में से आकर
के उत्पन्न होते हैं । तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ।
मनुष्यों में से भी आकर के उत्पन्न होते हैं और देवों में से आकर के

याणीसमा शतकने। प्रारंभ—

'कडजुम्म कडजुम्मसञ्ज्ञिपञ्चिदियाणं भंते ! कभो उववज्जति' इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् कृतयुगम कृतयुगम संज्ञिपञ्चेन्द्रियजिव क्या स्थान विशेषधी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेभाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
उ तिर्य'य येनिकेभाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येभाथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेभाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? उत्तरमां प्रभुश्री
कहे छे हे—'उववाओ चउसु वि गइसु' हे गौतम ! कृतयुगम कृतयुगम राशिवाजा
संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जिवे नैरयिकेभाथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे तिर्य'य
येनिकेभाथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे, मनुष्येभाथी आवीने पणु उत्पन्न
थाय छे अने देवेभाथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे 'संखेज्जवासाउय असं-
खेज्जवासाउय पज्जत्त अपज्जत्तएसु य न कभो वि पडिसेहो जाव अणुत्तरविमाणत्ति'

विमाणत्ति' संख्येयवर्षायुष्कासंख्येयवर्षायुष्क पर्याप्तकापर्याक्तेश्यो न कुतोऽपि प्रतिषेधो यावदनुत्तरविमानादिति, संख्यातवर्षायुष्केश्योऽपि आगत्या संख्यातवर्षायुष्केश्योऽपि आगत्य पर्याप्तेश्यो वा आगत्य अपर्याप्तकेश्यो वा आगत्य संज्ञिपञ्चेन्द्रियतया जीवानां समुत्पादः सम्यग्ति न कुतोऽपि निषेधो दिद्यते, नरकादारभ्य यावदनुत्तरविमानपर्यन्तरधानेश्यः समुत्पद्यन्ते संज्ञिपञ्चेन्द्रिया इति भावः । 'परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा-असन्निपंचिदियाणं' परिमाणमवहारोऽवगाहनाच यथा असंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां कथिता स्तथैव परिमाणं तावत् षोडश वा संख्याता वा असंख्याता वा । शरीरादगाहना जघन्येनांगुलस्यासंख्येय-भाग्यमाणा उत्कर्षेण योजनसहस्रप्रमाणा च भवतीति, 'वेयणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं

भी उत्पन्न होते हैं । 'संखेज्जवासाउय असंखेज्जवासाउय पज्जत्त अपज्जत्तएसु न कओवि पडिसेहो जाव अनुत्तरविमाणत्ति' संख्यात वर्षकी आयुवालों में से आकर के उत्पन्न होते हैं असंख्यातवर्ष की आयुवालों में से भी आकर के उत्पन्न होते हैं । पर्याप्तों में से भी आकर के उत्पन्न होते हैं अपर्याप्तों में से भी आकर के भी उत्पन्न होते हैं । संज्ञि पंचेन्द्रिय जीव रूप से उत्पाद होने का निषेध किसी भी अवस्था से नहीं है । नरक से यावत् अनुत्तरविमान तक के जीव संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीव से उत्पन्न होते हैं ।

'परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा असन्नि पंचिदियाणं' परिमाण, अवहार और अवगाहना के सम्वन्ध में जैसा असंज्ञि पञ्चेन्द्रियों के सम्वन्ध में कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये । असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीवों के परिमाण सोलह, संख्यात अथवा असंख्यात

संख्यात वर्षानी आयुष्यवाणाओमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे, असंख्यात वर्षानी आयुष्यवाणाओमांथी पणु आवीने उत्पन्न थाय छे, पर्याप्तोमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे, अपर्याप्तोमांथी आवीने पणु उत्पन्न थाय छे, संज्ञिपञ्चेन्द्रिय-लवपणुाथी उत्पाद थवानो केअपणु अवस्थाभां निषेध नथी, नरकथी लधने यावत् अनुत्तर विमान सुधीना लवो देव संज्ञि पञ्चेन्द्रिय लव पणुाथी उत्पन्न थाय छे.

'परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा असन्निपंचिदियाणं' परिमाण, अवहार अने अवगाहना ना संबंधमां ने रीते असंज्ञि पञ्चेन्द्रियोना संबंधमां कडेल छे, ओज प्रमाणेतुं कथन समणुं. आ रीतना कथनथी. व्युत्कंतिपद ना अतिदेशथी असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय लवोना परिमाणु कथन प्रमाणु संज्ञि लवोतुं परिमाणु सोण, अथवा संख्यात अथवा असंख्यात आवे छे. तेना शरीरनी

પગડીળં વંધગા વા અવંધગા વા' વેદનીયવર્જાનાં સપ્તાનાં કર્મપ્રકૃતિનાં વન્ધકા વા અવંધકા વા વેદનીયસ્ય કર્મણો વન્ધપ્રકારં વિશેષરૂપેણ કથયિષ્યતીતિ કૃત્વા વેદનીયવર્જાનામિત્યુક્તમ્, તત્ર ચોપશાંતમોહાઃ ક્ષીણમોહાશ્ચ સપ્તાનાં પ્રકૃતીનામ-વંધકા એવ, તદ્વિરિક્તાસ્તુ યથાસમ્પ્રવં વન્ધકા ભવન્તિ । 'વેયણિજ્જસ્સ વંધગા નો અવંધગા' વેદનીયસ્ય કર્મણઃ સર્વે વન્ધકા એવ ભવન્તિ ન તુ અવન્ધકાઃ કેવલિત્વપ્રાપ્તિપૂર્વે સર્વેઽપિ સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયા ઇતિ, તે ચ વેદનીયકર્મણો વન્ધકા એવ ભવન્તિ નત્ત્વવન્ધકા ઇતિ ભાવઃ । 'મોહણિજ્જસ્સ વેદગા વા અવેદગા વા, મોહનીયસ્ય કર્મણઃ સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયા વેદકા વા અવેદકા વા ભવન્તિ, તત્ર મોહનીયસ્ય કર્મણો વેદકાઃ સૂક્ષ્મ સંપરાયાન્તા ભવન્તિ, અવેદકાસ્તુ ઉપશાન્તમોહાઃ ક્ષીણમોહા

આતા હૈ । દુનકે શરીર કી અવગાહના જાન્ય સે અંગુલ કે અસંરુયાતવે' ભાગ પ્રમાણ આતી હૈ ઓર ઉક્રુષ્ટ સે એક હજાર યોજન પ્રમાણ આતી હૈ । 'વેયણિજ્જજ્ઞાણં સત્તપ્પહં પગડીળં વંધગાવા અવંધગાવા' વેદનીય કર્મ' કો છોડકર એ સ્થાત પ્રકાર કી કર્મપ્રકૃતિયો કે વન્ધકા હોતે હૈ ઓર અવન્ધકા હી હોતે હૈ । દુન સે ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવ ઓર ક્ષીણ મોહવાલે જીવ સ્થાત કર્મપ્રકૃતિયો' કે અવન્ધકા હી હોતે હૈ યાકી કે જીવ યથાસંભવ વન્ધકા હોતે હૈ । 'વેયણિજ્જસ્સ વંધગા નો અવંધગા' કેવલિ-પદ કી પ્રાપ્તિ કે પહિલે સમસ્ત સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવ વેદનીય કર્મ' કે વન્ધકા હી હોતે હૈ । અવન્ધકા નહીં હોતે હૈ । 'મોહણિજ્જસ્સ વેદગા વા અવેદગા વા' સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવ મોહનીય કર્મ' કે વેદકા હી હોતે હૈ ઓર અવેદકા હી હોતે હૈ । સૂક્ષ્મ સંપરાય તક્ર કે સમસ્ત સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવ મોહનીય કર્મ' કે વેદકા હી હોતે હૈ । ઉપશાન્ત ગુણસ્થાનવર્તી'

અવગાહના જાન્યથી આંગળના અક્ષંબ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ આવે છે, અને ઉક્રુષ્ટથી એક હજાર યોજન પ્રમાણ આવે છે. 'વેયણિજ્જવજ્ઞાણં સત્તપ્પહ પગડીળં વંધગા વા અવંધગા વા' વેદનીય કર્મને છોડીને તેઓ સાત કર્મપ્રકૃતિ-યોના અંધ કરે છે, અને અબંધક પણ હોય છે. તેમાં ઉપશાંત મોહવાળા જીવો અને ક્ષીણ મોહવાળા જીવો સાત કર્મપ્રકૃતિયોના અબંધક હોય છે. યાકીના જીવો યથાસંભવ અંધક હોય છે. 'વેયણિજ્જસ્સ વંધગા નો અવંધગા' કેવલિ પદની પ્રાપ્તિ પહેલા સમગ્ર સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવો વેદનીય કર્મના અબંધક જ હોય છે. અબંધક હોતા નથી. 'મોહણિજ્જસ્સ વેદગા વા અવેદગા વા' સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવો મોહનીય કર્મના વેદક પણ હોય છે, અને અવેદક પણ હોય છે, સૂક્ષ્મ સંપરાય સુધીના સમગ્ર સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવો મોહનીય

અથ ભવન્તીતિ । ‘સેસાણં સત્તળ્હવિ વેદગા નો અવેદગા’ શેષાણાં સપ્તાનામપિ કર્મણાં મોહનીયવ્યતિરિક્તાનાં સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયા વેદકા एव भवन्ति नो अवेदका भवन्ति, उपशान्तमपि मोहादयः संज्ञिपश्चેન્દ્રિયાસ્તે મોહનીય વ્યતિરિક્તાનાં સપ્તાનામપિ કર્મણાં વેદકા एव नो अवेदका भवन्ति । यद्यपि केवलिनश्चतसृणामघाति કર્મપ્રકૃતિનાં વેદકા ભવન્તિ તથાપિ કેવલિન ઇન્દ્રિયવ્યાપારાતીતત્વાત્ ન પશ્ચેન્દ્રિયા ઇતિ કથ્યન્તે, ઇતિ શ્રાવઃ ‘સાયાવેયગા વા અસાયાવેયગા વા’ સંજ્ઞિ-પશ્ચેન્દ્રિય જીવાઃ સાતાવેદકા અપિ અસાતાવેદકા અપિ સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયાણામેવં વિધસ્વરૂપત્વાદિતિ । ‘મોહણિજ્જરસ્સ ઉદર્હ વા અણુદર્હ વા, સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિયા જીવા મોહનીયકર્મપ્રકૃતે રુદ્યિકો વા અનુદ્યિનો વા ભવન્તિ, તત્ર સૂક્ષ્મ સંપરાયાન્તાઃ

સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિય જીવ ઓર ક્ષીણ મોહવાલે સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવ મોહનીય કર્મ કે વેદક નહીં હોતે હે ‘સેસાણં સત્તળ્હ વિ વેદગા નો અવેદગા’ વાકી કે સાત કર્મો કે મોહનીય કે સિવાય સાતકર્મો કે યે સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવ વેદક હોતે હે અવેદક નહીં હોના હે । યદ્યપિ કેવલી જીવ ચાર આઘાતિયા કર્મપ્રકૃતિયો કે વેદક હોતે હે તથા ઓ કેવલી ઇન્દ્રિય વ્યાપારાતીત હોને સે પશ્ચેન્દ્રિય નહીં કહલાતે હે । ‘સાયાવેદગા વા અસાયા વેદગા વા’ યે સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવ સાતા કે ઓ વેદક હોતે હે ઓર અસાતા કે ઓ વેદક હોતે હે । યદ્યો કિ સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો કા એસા હી સ્વભાવ હોતા હે । ‘મોહણિજ્જરસ્સ ઉદર્હ વા અણુદર્હ વા’ યે સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવ મોહનીય કર્મપ્રકૃતિ કે ઉદયવાલે ઓ હોતે હે ઓર અનુદયવાલે ઓ હોતે હે । ઇનમેં જો સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ

કર્મનુ વેદન કરનારા જ હોય છે. ઉવાશ ત શુશુ સ્થાનમા રહેવાવાળા સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો અને ક્ષીણ મોહવાળા સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો મોહનીય કર્મનુ વેદન કરવાવાળા હોતા નથી. ‘સેસાણં સત્તળ્હ વિ વેદગા નો અવેદગા આક્રીના સાત કર્મપ્રકૃતિયોનુ મોહનીય કર્મ શિવાયની આ સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો વેદન કરવાવાળા હોય છે. જો કે કેવલી જીવો ચાર આઘાતિયા કર્મપ્રકૃતિયોનુ વેદન કરવાવાળા હોય છે. તે પછુ તે કેવલી ઇન્દ્રિયનાવ્યાપારથી પર હોવાથી પશ્ચેન્દ્રિય કહેવાતા નથી. ‘સાયાવેદગાવા અસાયા વેદગા વા’ સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો સાતાનુ પછુ વેદન કરવાળા હોય છે, અને અસાતાનુ પછુ વેદન કરવાળા હોય છે. કેમ કે-સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવોનો સ્વભાવ જ એવો હોય છે, ‘મોહિણિજ્જરસ્સ ઉદર્હ વા અણુદર્હ વા આ સંજ્ઞિ પશ્ચેન્દ્રિય જીવો મોહનીય કર્મપ્રકૃતિના ઉદયવાળા પછુ હોય છે, અને અનુદયવાળા પછુ હોય છે. આમાં

संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः मोहनीयकर्मप्रकृतेरुदयिनो भवन्ति, उपशान्तमोहादयस्तु संज्ञि-
पञ्चेन्द्रिया अनुदयिनो भवन्तीति । 'सेसाणं सत्तण्हं वि उदई नो अनुदई' शेषाणां
मोहनीयव्यतिरिक्तानां सर्वेषामपि कर्मणां संज्ञिपञ्चेन्द्रिया उदयिन एव भवन्ति
न तु अनुदयिनो भवन्तीति । वेदनोदययोः को भेदः ? इत्याह—वेदकत्वमनुक्रमेणो-
दीरणाकरणेन च उदयागतानां कर्मणामनुभवनम्, उदयस्तु अनुक्रमागतानां
कर्मप्रकृतीनामनुभवनमिति भेद इति । 'नामस्स गोयस्स य उदीरगा नो अणु
दीरगा' नाम्नो गोत्रस्य च कर्मणः सर्वे संज्ञिपञ्चेन्द्रिया अकपायान्ता उदीरका एव
भवन्ति न तु अनुदीरका भवन्तीति । 'सेसाणं छण्हं वि उदीरगा वा अणुदीरगा
वा' शेषाणां नामगोत्रवर्जानां षण्णामपि ज्ञानावरणीयादीनां यथासंभवम् उदीरका

संपराय गुणस्थान तक के हैं वे तो मोहनीय कर्म के उदयवाले होते हैं
और उपशान्त मोहवाले हैं अथवा क्षीणमोहवाले हैं वे मोहनीय कर्म
के उदयवाले नहीं होते हैं । 'सेसाणं सत्तण्हं वि उदई नो अनुदई' मोह-
नीय कर्म के सिवाय शेष सात कर्मप्रकृतियों के ये उदयवाले ही होते
हैं अनुदयवाले नहीं होते । वेदना और उदय में क्या अन्तर है ? उत्तर
—अनुक्रम से अथवा उदीरणा करण से उदय में आये हुए कर्मों का
अनुभव करना सो वेदकता है और अनुक्रम से उदय में आये हुए कर्मों
का अनुभवन करना वह उदय है । 'नामस्स गोयस्स य उदीरगाणो
अणुदीरगा' ये समस्त संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीव नामकर्म के और गोत्र कर्म
के क्षीणमोह गुणस्थान तक उदीरक होते हैं अनुदीरक नहीं होते हैं ।
'सेसाणं छण्हं वि उदीरगा वा अणुदीरगा वा' पात्री के छह कर्मप्रकृ-
तियों के नामगोत्र को छोड़कर ज्ञानावरणीय आदि ६ कर्मप्रकृतियों के

वे संज्ञि पञ्चेन्द्रिय ज्ञानो सूक्ष्म संपराय शुष्ण स्थान सुधीना छे, तेज्जो तो
मोहनीय कर्मना उदयवाणा छे। अने उपशान्त मोहवाणा छे। तेज्जो
मोहनीय कर्मना उदयवाणा छे। तेज्जो मोहनीय कर्मना उदयवाणा छे।
मोहनीय कर्म शिवाय पात्रीनी सात कर्मप्रकृतियोना तेज्जो उदयवाणा न छे।
अनुदयवाणा छे। वेदन अने उदयमा शुं अंतर छे ? उत्तरमां
प्रलुश्री कडे छे के—अनुक्रमथी अथवा उदीरणा करणथी उदयमा आवेला कर्मोना
अनुभव करवे। ते वेदनपणुं छे अने अनुक्रमथी उदयमा आवेला कर्मोना
अनुभव करवे। ते उदय छे 'नामस्स गोयस्स य उदीरगा णो अणुदीरगा' आ
सधणा ज्ञानो नाम कर्मना तथा गोत्र कर्मना क्षीण मोहशुष्ण स्थान सुधी उदीरक

श्रानुदीरकाश्च भवन्ति । अत्रायं क्रमः प्रमत्ताः सर्वेऽपि सामान्यतोऽण्डानामपि कर्मणामुदीरकाः आवलिकाशेषायुष्कारतु तएव आयुर्वर्जसप्ततानामुदीरका भवन्ति, तथा यदा ते वेदनीय कर्मण उदीरणां न कुर्वन्ति तदा वेदनीययुर्वर्ज शेष षट् कर्मणा मुदीरका भवन्ति अप्रमत्तादि चतुर्गुणास्थानवर्तिनो वेदनीयायुर्वर्जानां षण्णामुदीरकाः तथा सूक्ष्मसंपरायाः आवलिकायां रवाद्यायाः शेषायां मोहनीय वेदनीयायुर्वर्जानां पञ्चानामपि कर्मणामुदीरकाः उपशान्तमोहास्तु उक्तरूपाणां पञ्चानां कर्मणां मोहनीयवेदनीयायुष्कवर्जानामेव उदीरकाः, क्षीणकषायाः पुनः

ये यथा संभव उदीरक भी होते हैं और अनुदीरक भी होते हैं । उदीरणा का क्रम इस प्रकार से है—प्रमत्त स्वस्त संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीव सामान्यत आठों ही कर्मप्रकृतियों के उदीरक होते हैं और जब इनकी आवलिमात्र आयुशेष रहती है तब ये आयु के सिवाय सात कर्मप्रकृतियों के उदीरक होते हैं । तथा जिस समय ये वेदनीय कर्म की भी उदीरणा न करते हों । उस समय ये वेदनीय और आयुष्क के सिवाय शेष छह कर्मों के उदीरक होने के कारण अप्रमत्त आदि गुणस्थान से वेदनीय और आयुष्क कर्म को छोड़कर छह कर्मप्रकृतियों के उदीरक होते हैं । तथा सूक्ष्मसंपरायवाले संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीव जब अपना अर्थात् सूक्ष्म संपराय गुणस्थानका काल आवलिका मात्र षाकी रह जाता है तब वह मोहनीय वेदनीय और आयुष्क कर्म के सिवाय शेष पांच कर्मप्रकृतियों का उदीरक होना है । तथा उपशान्त मोहवाले संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीव भी मोहनीय आदि तीन कर्मप्रकृतियों को छोड़कर शेष पांच कर्मप्रकृतियों के ही उदीरक होते हैं । तथा क्षीण कषायवाले संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीव जब

होय छे. अनुदीरक होता नथी. 'सेसाणं छण्ह वि उदीरगा वा अणुदीरगा वा' षाकीनी छ कर्मप्रकृतियेने नाम गोत्रने छोडीने ज्ञानावरणीय विगेरे छ कर्मप्रकृतियेना आ यथ संभव-कमथी उदीरक पणु होय छे, अने उदीरणाने कम आ प्रमाणेने छे.—प्रमत्त सुधीना सधणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जेवे सामान्य रीते आठे कर्मप्रकृतियेना उदीरक होय छे, अने न्यारे तेजोनी आवलिका मात्रनी आयुष्य षाकी रहे त्यारे तेजो आयुष्य शिवाय सात कर्मप्रकृतियेना उदीरक होय छे. अप्रमत्त विगेरे चार वेदनीय अने आयुष्य कर्मने छोडीने छ कर्मप्रकृतियेना उदीरक होय छे. तथा सूक्ष्म सांपरायवाणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जेवे न्यारे पोताने काण आवलिका मात्र षाकी रहे त्यारे ते मोहनीय, वेदनीय अने आयुष्य कर्म शिवाय षाकीनी पांच कर्मप्रकृतियेना उदीरक होय छे. तथा उपशान्त मोहनीयवाणा संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जेवे पणु मोहनीय विगेरे पणु कर्मप्रकृतियेने छोडीने षाकीनी पांच कर्मप्रकृतियेना न उदीरक होय छे.

સ્વાદ્યાયા આવલિકાયાં શેપાયાં નામ-ગોત્રયોરેવ કેવલમુદીરકા ભવન્તિ. સયો-
ગિનોડપિ કેવલં નામગોત્રયોરેવોદીરકા ભવન્તિ, અયોગિનસ્તુ અનુદીરકા एव
કેવલં ભવન્તીતિ ભાવઃ । ‘કળહલેસ્સા વા જાવ સુકલેસ્સા વા’ સંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિયાઃ
કૃષ્ણલેશ્યા વા ભવન્તિ યાવત્ શુકલલેશ્યા વા ભવન્તિ, અત્ર યાવત્પદેન નીલ-
કાપોતતેજઃ પદ્મલેશ્યાનાં સંગ્રહો ભવતિ । તથા ચ કૃષ્ણલેશ્યાત આરભ્ય યાવન્કુ-
વકલેશ્યાન્તા ઇમે પચ્ચેન્દ્રિયા ભવન્તીતિ ભાવઃ । ‘સમ્મદિટ્ટી વા મિચ્છાદિટ્ટી વા
સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી વા’ સંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિયાઃ સમ્યગ્દષ્ટયો વા ભવન્તિ મિથ્ય દષ્ટયો વા
ભવન્તિ સમ્યગ્ મિથ્યાદષ્ટયો મિશ્રદષ્ટયો વા ભવન્તીતિ । ‘નાણી વા અન્નાણી વા
જ્ઞાનિનો વા ભવન્તિ અજ્ઞાનિનો વા ભવન્તિ સંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિયાઃ । ‘મળજોગી વયજોગી
કાયજોગી’ મનોયોગિનો વા ભવન્તિ-વચ્ચોયોગિનો વા ભવન્તિ કાયયોગિનો વા

ક્ષીણમોહ ગુણસ્થાન કા વાલ એક આવલિકા માત્ર બાકી રહતા હૈં ઉસ
સમય નામગોત્ર इन दो कर्मों के ही उदीरक होते हैं । सयोगी जीव
भी इन्ही दो कर्मों के उदीरक होते हैं । ‘एवं अयोगी जीव
अनुदीरक होते हैं ।

‘કળહલેસ્સા વા જાવ સુકલેસ્સા વા’ સંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિય જીવ કૃષ્ણલે-
શ્યાવાલે યાવત્ શુકલલેશ્યાવાલે હોતે હૈં । યહાં યાવત્પદ સ્વે શેષ નીલ,
કાપોત, તેજ, પદ્મ इन लेश्याओं का संग्रह हुआ है । तथा च ये संज्ञि-
पच्येन्द्रिय जीव कृष्णलेश्या से लेकर शुक्ललेश्यावाले तक होते हैं ।
‘સમ્મદિટ્ટી વા, મિચ્છાદિટ્ટી વા’ સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી વા’ યે સમ્ય-
ગ્દષ્ટિ મી હોતે હૈં, મિથ્યાદષ્ટિ મી હોતે હૈં ઓર મિશ્રદષ્ટિ મી હોતે
હૈં । ‘મળજોગી વયજોગી કાયજોગી’ મનોયોગવાલે, વચ્ચનયોગવાલે

તથા ક્ષીણ કષાયવાળા સંજ્ઞિ પચ્ચેન્દ્રિય ભવે બ્યારે પોતાને કાળ એક આ
વલિકામાત્ર બાકી રહે છે. ત્યારે નામગોત્ર આ બે કર્મોના જ ઉદીરક હોય
છે, સયોગી ભવ પણ આજ બે કર્મોના ઉદીરક હોય છે, અને અયોગી ભવે
અનુદીરક હોય છે.

‘કળહલેસ્સા વા જાવ સુકલેસ્સા વા’ સંજ્ઞિ પચ્ચેન્દ્રિય ભવે કૃષ્ણલેશ્યા
વાળા યાવત્ શુકલલેશ્યાવાળા હોય છે. અહિયાં યાવત્પદથી બાકીની નીલ,
કાપોત, તેજ, પદ્મ, આ લેશ્યાઓનો સંગ્રહ થયેલ છે તથા આસંજ્ઞિ પચ્ચેન્દ્રિય
ભવે કૃષ્ણલેશ્યાથી લઈને શુકલલેશ્યાવાળા સુધી હોય છે. ‘સમ્મદિટ્ટી વા,
મિચ્છાદિટ્ટી વા, સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી વા’ આ સમ્યગ્દષ્ટીવાળા પણ હોય છે. અને
મિથ્યાદષ્ટીવાળા પણ હોય છે અને મિશ્રદષ્ટીવાળા પણ હોય છે ‘નાણી વા
અન્નાણી વા’ તેઓ જ્ઞાની પણ હોય છે, અને અજ્ઞાની પણ હોય છે. મળજોગી,

भवन्तीति । 'उबजोगो वन्तमाई उस्सासगा वा नीसासगा वा आहारगा वा जहा एगिंदियाणं' उपयोगो वर्णादिः उच्छ्वासका वा निःश्वासका वा आहारकाश्च यथा एकेन्द्रियाणाम् एकेन्द्रियवद्देवोपयोगादयः पञ्चेन्द्रियाणामपि ज्ञातव्याः तत्र उपयोगो द्विविधोऽपि, पञ्चापि वर्णाः, द्वौ गन्धौ, पञ्चापि रसाः, अष्टौ स्पर्शा भवन्ति उच्छ्वासका वा भवन्ति निःश्वासका वा भवन्ति । आहारकाश्च भवन्ति यथा एकेन्द्रियाणां प्रकरणे तथा 'विरयाय अविरयाय विरया विरयाय' संज्ञिपञ्चेन्द्रिया विरताश्च भवन्ति अविरताश्च भवन्ति । विरताविरताश्चापि भवन्तीति । 'सक्रिया नो अक्रिया' सक्रिया भवन्ति पञ्चेन्द्रियाः, नो न तु अक्रिया भवन्ति । 'ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहवंधगा वा अट्टविहवंधगा वा' ते खलु भदन्त ! जीवाः संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः सप्त विधकर्मप्रकृतीनां बन्धका वा भवन्ति, अष्टविधकर्मप्रकृतीनां बन्धका वा भवन्ति 'छुविहवंधगा वा एगविहवंधगा' वा पड्विधकर्मप्रकृतीनां बन्धका वा एकविधकर्म-

और काययोगवाले होते हैं । 'उबजोगो, वन्तमाई, उस्सासगा वा नीसासगा वा आहारगा वा जहा एगिंदियाणं' ये दोनो प्रकार के उपयोगवाले होते हैं । पांचो रसोवाले, दो गंधोवाले, पांचो वर्णोवाले और आठ प्रकार के स्पर्श वाले होते हैं । उच्छ्वासवाले निश्वासवाले होते हैं और आहारक होते हैं । इत्यादि जैसा एकेन्द्रिय के प्रकरण में कहा है वैसा ही समझलेना चाहिये । 'विरया य अविरया य विरया विरया य' ये संज्ञीपञ्चेन्द्रिय विरत, अविरत एवं विरताविरत होते हैं । 'सक्रिया नो अक्रिया' क्रिया सहित होते हैं, अक्रिया-क्रिया रहित नहीं होते हैं । 'ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविह वंधगा वा अट्टविह वंधगा वा' हे भदन्त ! ये जीव क्या सात प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं ? अथवा आठ प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते

वयजोगी, कायजोगी भनोयोगवाणा वयनयोगवाणा अने काययोगवाणा डोय छे । 'उबजोगो वन्तमाई, उस्सासगा वा नीसासगावा, आहारगावा जहा एगिंदियाणं' एकेन्द्रिय एवोनी नेम तेओ अन्ने प्रकारना उपयोगवाणा डोय छे पांचे प्रकारना रसोवाणा डोय छे, दो गंधोवाणा, पांचवर्णोवाणा अने आठ प्रकारना स्पर्शोवाणा डोय छे । उच्छ्वास निःश्वासवाणा डोय छे, अने आहारक डोय छे । 'विरयाय अविरया य विरयाविरयाय' ते संज्ञी पञ्चेन्द्रिय विरत-अविरत अने विरताविरत डोय छे 'सक्रिया नो अक्रिया' क्रिया सहित डोय छे, अक्रिया-क्रिया विनाना डोय नथी । 'ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहवंधगा वा अट्टविह वंधगा वा' हे भगवन आ एवो शुं सात प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना अथ कवावाणा डोय छे ? अथवा आठ प्रकारनी कर्म प्रकृतियोना अथ कवावाणा

प्रकृतीनां बन्धका वा भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह—गोयमा ! इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सत्तविहबंधगा वा जाव एगविहबंधगा वा' सप्तविधकर्मप्रकृतीनां बन्धका वा संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः यावत् एकविधबन्धका वा, अत्र यावत्पदेन अष्टविधबन्धका वा पञ्चविधबन्धका वा, एतयोः संग्रहो भवतीति । 'तेषां संते ! जीवा किं आहारसन्नोदत्ता जाव परिग्गहसन्नोदत्ता' ते खलु भदन्त ! जीवाः संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः किमाहारसंज्ञोपयुक्ता भवन्ति यावत्परिग्रहसंज्ञोपयुक्ता वा भवन्ति अत्र यावत्पदेन भयसैथुनसंज्ञयोः परिग्रहो भवति 'नो सन्नोदत्ता वा' नो संज्ञोपयुक्ता वा भवन्ति ? 'सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा' सर्वत्र पृच्छा—प्रश्नरूपा भणितव्या, पृथक् पृथक् रूपेण सर्वप्रश्नः करणीय इति । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा !' हे गौतम ! 'आहारसन्नोदत्ता जाव नो सन्नोदत्ता' आहारसंज्ञोप-

है ! 'छविह बंधगा वा' छ प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं अथवा 'एगविह बंधगा वा' एक प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बंधक होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! ये जीव 'सत्तविहा बंधगा वा जाव एगविह बंधगा वा' सात प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं यावत् एक प्रकार की कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं । यहाँ यावत् शब्द से 'अष्टविधबंधका वा पञ्चविध बन्धका वा' इन पदों का संग्रह हुआ है । 'तेषां संते ! जीवा किं आहारसन्नोदत्ता जाव परिग्गहसन्नोदत्ता' हे भदन्त ! वे संज्ञोपचेन्द्रिय जीव क्या आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् पश्चिह संज्ञोपयुक्त होते हैं ? यहाँ यावत् पद से 'भय सैथुन संज्ञाथो' का ग्रहण हुआ है । अथवा 'नो सन्नोदत्ता वा' ये नो संज्ञोपयुक्त होते हैं ? इस प्रकार 'सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा' पृथक् पृथक् रूप से प्रश्न कर लेना चाहिये ।

डोय छे ? अथवा 'छविह बंधगा वा' छ प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना बंध करवावाणा डोय छे ? अथवा 'एगविहबंधगा वा' एक प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना बंध करवाणा डोय छे. ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे क—'गोयमा । हे गौतम ! आ एवे 'सत्तविह बंधगा वा जाव एगविह बंधगा वा' सात प्रकारनी कर्मप्रकृतियोना बंध करवाणा पणु डोय छे अडियां यावत् शब्दथी 'अष्टविध बंधगावा पञ्चविध बंधगावा' आ पदेना संग्रह थयो छे 'तेषां संते ! जीवा किं आहारसन्नोदत्ता जाव परिग्गहसन्नोदत्ता' हे भगवन ते संज्ञोपचेन्द्रिय एवे शु आहार संज्ञोपयोगवाणा डोय छे ? यावत् परिग्रह संज्ञोपयोगवाणा डोय छे ? अडियां यावत्पदथी 'भय अने सैथुन संज्ञाथो' ग्रहण करवामा आवेल छे अथवा 'नोसन्नोदत्ता वा' आ नोसंज्ञोपयोगवाणा डोय छे ? आ रीते 'सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा' जुदा जुदा रूपथी प्रश्न करी देवे जेहणे.

યુક્તાઃ યાવત્ નો સંજ્ઞોપયુક્તા વા ભવન્તિ । ‘કોહકસાઈ વા જાવ લોભકસાઈ વા અકસાઈ વા’ સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયાઃ ક્રોધકષાયિનો વા લોભકષાયિનો વા અકષાયિનો વા ભવન્તિ । ‘ઈત્થિવેયગા વા, પુરિસવેદગા વા, નપુંસગવેયગા વા અવેયગા વા’ તે સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયજીવાઃ સ્ત્રીવેદકા વા ભવન્તિ, પુરુષવેદકા વા ભવન્તિ નપુંસકવેદકા વા ભવન્તિ અવેદકા વા ભવન્તીતિ । ‘ઈત્થિવેદવંધગા વા, પુરિસવેદવંધગા વા, નપુંસગવેદવંધગા વા, અવંધગા વા’ સ્ત્રીવેદબન્ધકા વા ભવન્તિ પુરુષવેદવન્ધકા વા ભવન્તિ નપુંસકવેદવન્ધકા વા ભવન્તિ અવન્ધકા વા ભવન્તીતિ ‘સન્ની નો અસન્ની’ સંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયજીવાઃ સંજ્ઞિનો ભવન્તિ નો અસંજ્ઞિનો

इस के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘गोयमा ! आहारसन्नोवउत्ता, जाव नो सन्नोवउत्ता’ हे गौतम ! ये आहार संज्ञोपयुक्त होते हैं यावत् नो संज्ञोपयुक्त होते हैं । ‘कोहकसाई वा जाव लोभकसाई वा’ ये क्रोध कषाय से लेकर लोभकषाय से युक्त होते हैं । तथा कषायों से रहित भी होते हैं । ‘इत्थिवेयगा वा पुरिसवेयगा वा नपुंसगवेयगा वा’ ये स्त्री वेदवाले भी होते हैं, पुरुष वेदवाले भी होते हैं और नपुंसक वेदवाले भी होते हैं । तथा—‘अवेयगा वा भवन्ति’ विना वेदवाले भी होते हैं । ‘इत्थिवेदवंधगा वा, पुरिसवेदवंधगा वा नपुंसगवेदवंधगा वा, अवंधगा वा’ ये स्त्रीवेद के बन्धक होते हैं, पुरुषवेद के बन्धक होते हैं और नपुंसक वेद के भी बन्धक होते हैं । तथा इन तीनों वेदों के अवंधक भी होते हैं । ‘सन्नी नो असन्नी’ ये संज्ञी ही होते हैं असंज्ञी नहीं होते हैं । ‘सइंदिद्या नो अणिंदिद्या’ ये सेन्द्रिय होते हैं इन्द्रियों से रहित नहीं होते हैं ।

આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે—‘ગોયમા ! આહારસન્નોવઉત્તા, જાવ નો સન્નોવઉત્તા’ હે ગૌતમ ! આ આહારસંજ્ઞોપયોગવાળા યાવત્ અથ સંજ્ઞોપયોગવાળા હોય છે ‘કોહકસાઈ વા જાવ લોભકસાઈ વા અકસાઈ વા’ આ ક્રોધ કષાયથી લઈને લોભકષાયવાળા હોય છે, તથા કષાયોથી રહિત પણ હોય છે ‘ઈત્થિવેયગા વા પુરિસવેયગા વા નપુંસગવેયગા વા’ આ સ્ત્રીવેદવાળા પણ હોય છે, પુરુષવેદવાળા પણ હોય છે, અને નપુંસક વેદવાળા પણ હોય છે. તથા ‘અવેદગા વા ભવન્તિ’ તેઓ વેદવિનાના પણ હોય છે. ‘ઈત્થિવેદવંધગા વા, પુરિસવેદવંધગા વા નપુંસકવેદવંધગા વા, અવંધગા વા’ આ સ્ત્રીવેદનો બંધ કરવાવાળા પણ હોય છે, પુરુષવેદનો બંધ કરવાવાળા પણ હોય છે, અને નપુંસકવેદનો બંધ કરવાવાળા પણ હોય છે. અને ત્રણે પ્રકારના વેદોનો બંધ નથી પણ કરતા. ‘સન્ની નો અસન્ની’ આ સંજ્ઞી જ હોય છે. અસંજ્ઞી હોતા નથી. ‘સેઈંદિયા નો અણિંદિયા’ આ ઈન્દ્રિયોવાળા હોય છે. ઈન્દ્રિય

भवन्तीति । 'संज्ञिदिया नो अणिदिया' सेन्द्रियाः संज्ञिपञ्चेन्द्रिया इन्द्रिय-
वन्तो भवन्ति नो अनिन्द्रिया भवन्ति । 'संचिद्वृणा जहन्नेण एक्कं समयं'
संस्थानमवस्थितिः संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां जघन्येनैकं समयं कृतयुग्म कृतयुग्म
संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामवस्थितिरेकं समयं समयानन्तरं संख्यानन्तरसदूभावा
दिति । 'उक्कोसेणं सागरोवमसयपुहुत्तं साइरेगं' उत्कर्षेणावस्थिति सागरो-
पमशतपृथक्त्वम्, सातिरेकम्, कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामुत्कर्षेण
अवस्थानं कालस्थितिः सागरोपमशतपृथक्त्वं द्विसागरोपमशतादारभ्य नव
सागरोपमशतपर्यन्तं सातिरेकं भवति, यत् इतः परं ते संज्ञिपञ्चेन्द्रियतया न
भवन्तीति भावः । 'आहारो तहेव जाव नियमं छदिसि' आहार स्तथैव आहारो
देशकवदेव, क्रियत्पर्यन्तं तत्राह-यावत् नियमात् षड्दिशि संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामाहारो
नियमतः षड्दिग्भ्योऽपि भवति लोकमध्येऽवस्थितानामेषां व्याघाताभावत् इति,

'संचिद्वृणा जहन्नेण एक्कं समयं' संचिद्वृणा इन कृतयुग्मकृतयुग्म राशि-
प्रमित संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीवों की अवस्थिति जघन्य से एक समय की होती
है कारण कि एक समय के बाद संख्यानंतर होने की संभवना रहती है
और 'उक्कोसेणं सागरोवमसयपुहुत्तं साइरेगं' उत्कृष्ट से कुछ अधिक
सागरोपम शतपृथक्त्व की होती है । बाद में ये अन्य राशिप्रमित हो
जाते हैं । अर्थात् संज्ञिपञ्चेन्द्रिय रूपता इनमें नहीं रहती है दो सागरो-
पम शत से लेकर नौ सागरोपम शतका नाम सागरोपम शत पृथक्त्व
है । 'आहारो तहेव जाव नियमं छदिसि' आहार का प्रकरण प्रज्ञापना
के आहार पद २८ वां के जैसे है अर्थात् इनका आहार लोक के मध्य
में इनकी स्थिति होने के कारण नियम से यावत् छहों दिशाओं से
होता है । क्योंकि उस में इन्हे किसी भी प्रकार का व्याघात नहीं होता

विनाना होता नथी. "संचिद्वृणा जहन्नेण एक्कं समयं" आ कृतयुग्म कृतयुग्म
राशि प्रमाणवाणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय एवोनी संचिद्वृणा-अवस्थिति जघन्यथी
ओक्क समयनी होय छे, डारणु के ओक्क समय पछी सञ्च्यंतर होवानी संलवना
रहे छे. अने 'उक्कोसेणं सागरोवमसयपुहुत्तं साइरेगं' उत्कृष्टथी कंधं वधादे
सागरोपमशत पृथक्त्वनी होय छे. ते पछी तेओ :अन्य २.२१ प्रमाणवाणा
थर्जनय छे अर्थात् संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पणुं तेओमां रहेतुं नथी छे सागरो-
पम शतथी नव सागरोपमशतनुं नाम सागरोपम शत पृथक्त्व छे, 'आहारो
तहेव जाव नियमं छदिसि' तेओनो आहार लोकनी मध्यमा तेओ रहेला
होवने डारणु नियमथी यावत् छे दिशाओथी होय छे. केम के तेमां तेओने
डोषपणु रीतने व्याघात थतो नथी. अडियां यावत्पदथी तणु दिशाओथी पणु

‘ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं’ संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां स्थिति र्जघन्येनैकं समयं भवति,
 ‘उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं’ उत्कर्षेण त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि । ‘छ समुग्घाया
 आदिल्ला’ पट्ट समुद्घाता आदिमाः वेदना कषायदिकाः पट्ट केवल्लि समुद्घात-
 वर्जा भवन्तीति । संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामेवमाद्याः वेदनाकषायमारणान्तिकवैक्रिय
 तैजसाहारकारुषाः पडेव समुद्घाता भवन्ति, सप्तमरतु केवल्लिसमुद्घातः
 केवल्लिनामेव भवति तेषां शेषाः पट्टसमुद्घाता न भवन्ति, इन्द्रियोपयोगाभावेन
 केवल्लिनामनिन्द्रियत्वादिति ते संज्ञिपञ्चेन्द्रियत्वेन न गृह्यन्ते इति भावः ।
 ‘मारणांतिय समुग्घाएणं समोहया वि मरंति’ ते संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीवाः मारणान्तिक
 समुद्घातेन समवहता अपि म्रियन्ते ‘असमोहया वि मरंति’ असमवहता अपि
 म्रियन्ते । ‘उवट्टणा जहेव उवत्ताओ’ उद्वर्तना यथैवोपपातः चतसृभ्योऽपि गतिभ्यः

है । ‘ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं’ इनकी जघन्य स्थिति एक समय की
 होती है और ‘उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं’ उत्कृष्ट स्थिति ३३
 सागरोपम की होती है । ‘छ समुग्घाया आदिल्ला’ आदि के छहसमुद्-
 घात होते हैं । इन के केवल्लि समुद्घात नहीं होता है । वेदना, कषाय
 मारणान्तिक वैक्रिय तैजस और आहारक ये छ समुद्घात इनके होते
 हैं । केवल्लियों के वे ६ समुद्घात नहीं होते हैं । क्यों कि इनमें इन्द्रिय
 जन्य उपयोग का अभाव रहता है । इसलिये इनमें संज्ञी पंचेन्द्रिय संज्ञा
 नहीं होती है । इसीलिये इन्हे अनिन्द्रिय कहा गया है । ‘मारणांतिय
 समुग्घाएणं समोहया वि मरंति’ ये संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव मारणान्तिक
 समुद्घात से समवहत होकर भी मरते हैं । ‘असमोहया वि मरंति’

‘थाय छे. आर दिशाओथी पणु थाय छे अने पांय दिशाओथी पणु डोय छे.
 आ पाठ अडुथु करायो छे. ‘ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं’ तेओनी जघन्य
 स्थिति-आयुकाण ओक समयनी डोय छे. अने ‘उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं’
 उत्कृष्ट स्थिति तेत्रीश सागरोपमनी थाय छे. ‘छ समुग्घाया आदिल्ला’ अने
 तेओना आदिना ओरले के-वेदना कषाय मारणान्तिक वैक्रिय अने तैजस, आ
 छ समुद्घातो डोय छे तेओने केवली समुद्घात डोतो नथी. केम के केवली
 समुद्घात केवलीओने न डोय छे, केवल्लियोने छ समुद्घातो डोता नथी.
 इन्द्रिय जन्य उपयोगने अभाव रहे छे. तेथी तेओमां संज्ञी पंचेन्द्रिय
 संज्ञा डोती नथी. तेथी तेओने अनिन्द्रिय कहा छे. ‘मारणांतिय समुग्घाएणं
 समोहया वि मरंति’ आ संज्ञी पंचेन्द्रिय ओयो मारणान्तिक समुद्घातथी
 समुद्घात-करीने पणु भरे छे. अने ‘असमोहया वि मरंति’ मारणान्तिक

પ્રોક્તસ્તથૈવ ઉદ્વર્તના નિસ્સ્મરણમ્ ઉદ્વૃત્ત્ય ગમનમપિ તેષાં ચતસૃષ્ઠપિ ગતિષુ નૈરયિક તિર્યગ્-મનુષ્ય-દેવેષુ મત્રતીતિ ભાવઃ, ન કત્થહ પહિસેહો' ન કુત્રચિદપિ પ્રતિ- પેધઃ 'જાવ અણુત્તરવિમાણ ત્તિ' યાવદ્નુચરવિમાનમિતિ, નારકાદિ ચતુર્ગતિષ્વપિ પચ્છેન્દ્રિયાણા મુદ્વર્તના યત્રતિ અણુત્તરવિમાનપર્યન્તં કસ્યાપિ સ્થાનસ્ય પ્રતિપેધો નાસ્તીતિ । 'અહ મંતે ! સઁવે પાણા જાવ અણંતસુતો' અથ મદન્ત ! સર્વે પ્રાણા યાવત્ સર્વે સત્તાઃ કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મ સંજ્ઞિપચ્છેન્દ્રિયતયા કિં સમુત્પન્ન પૂર્વા ? હે ગૌતમ ! સર્વે પ્રાણાઃ સર્વે ભૂતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્તાઃ કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મસંજ્ઞિપચ્છેન્દ્રિયતયા અસકૃત્ અથવા અનન્તકૃત્વઃ સમુત્પન્નપૂર્વા ઇતિ । 'એવં સોલસસુ વિ જુમ્મેસુ માણિય-

और मारणान्तिक समुद्घात से समबहल हुए विना भी मरते हैं । 'उवट्टणा जहेव उववाओ' इनमें उपपात के जैसे उद्वर्तना होती हैं । अर्थात् इनका चारों गतियों में उपपात होता है और चारों गतियों के जीवों का इनमें उत्पाद होता है । 'न कत्थह' पडिसेहो' इन्हें आनेजाने की कहीं पर भी रुकावट नहीं है । 'जाव अणुत्तरविमाणत्ति' यावत् ये अनुत्तर विमानों तक जाते हैं अर्थात् वहाँ तक इनका उत्पाद होता है । 'अह मंते ? सवे पाणा जाव अणंतसुतो' हे भदन्त ! क्या समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व, कृतयुगम कृतयुगमसंज्ञिपचछेन्द्रिय रूप से उत्पन्न हो चुके हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'सवे पाणा सवे भूआ सवे जीवा सवे सत्ता' हे गौतम ! समस्त प्राण, समस्त भूत, समस्त जीव और समस्त सत्त्व अक्षत-दारंवार अथवा अनन्तवार कृतयुगमकृतयुगम संज्ञिपचछेन्द्रिय रूप से उत्पन्न हो चुके हैं । 'एवं सोलससु वि जुम्वेसु

સમુદ્ઘાત કયાં વિના પણ મરે છે. 'ઉવટ્ટણા જહેવ ઉવવાઓ' તેઓને ઉપપાતની જેમ જ ઉદ્વર્તના પણ હોય છે. અર્થાત્ તેઓને ચારે ગતિયોમાં ઉપપાત હોય છે. અને ચારે ગતિયોના જીવોનો તેઓમાં ઉત્પાદ હોય છે. 'ન કત્થહ પહિસેહો' તેઓને અવશ્યવરમાં ક્યાંઈ પણ રૂકાવટ થતી નથી. 'જાવ અણુત્તરવિમાણત્તિ' યાવત્ તેઓ અણુત્તર વિમાનો સુધી જાય છે અર્થાત્ ત્યાં સુધી તેઓનો ઉત્પાદ હોય છે 'અહમંતે ! સવે પાણા જાવ અણંતસુતો' હે ભગવન સઘળા પ્રાણો, સઘળા સત્વો, કૃતયુગમ, કૃતયુગમ સંજ્ઞિ પચ્છેન્દ્રિય પણાથી ઉત્પન્ન થઈ ચુકયા છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—'સવે પાણા સવે ભૂઆ સવે જીવા સવે સત્તા' હે ગૌતમ ! સઘળા પ્રાણો સઘળા ભૂતો, સઘળા જીવો. અને સઘળા સત્વો, અસકૃત-વારંવાર અથવા અનંતવાર કૃતયુગમ કૃતયુગમ સંજ્ઞિ પચ્છેન્દ્રિય પણાથી ઉત્પન્ન થઈ ચુકયા

व्वं जाव अणंतखुत्तो' एवं कृतयुग्म कृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रिययुग्मेषु उपपातादारभ्य अनन्त कृत्वः समुत्पन्न पूर्वा इति कथितं तथैव 'सोलससु वि वि जुम्मेसु भाणियव्वं जाव अणंत खुत्तो' षोडशष्वपि द्वितीय कृतयुग्म त्रयोज संज्ञिपञ्चेन्द्रियत आरभ्य यावत् कलयोजकलयोज संज्ञिपञ्चेन्द्रियपर्यन्तेषु युग्मेषु भणितव्यं यावद् अनन्त कृत्वः अनन्तशस्तद्रूपेण पूर्वं समुत्पन्ना इति पर्यन्तमिति भावः । 'नवरं परिमाणं जहा वेदियाणं' नवरं कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञेन्द्रियाणां यथा द्वीन्द्रियाणां षोडश, संख्याता वा असंख्यातावेति । 'सेसं तहेव' शेषं परिमाणव्यतिरिक्तमुपपातादिकं तथैव-पूर्ववदेव पूर्वोक्त प्रथमयुग्मवदेव प्रथमयुग्मे यत् यथा कथितं तत्सर्वं तथैव

भाणियव्वं जाव अणंतखुत्तो' इसी प्रकार से 'कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञी पञ्चेन्द्रियों में समस्त प्राणादि जीवों का जैसा उपपात से लेकर अनन्त बार तक का उपपात हो चुकना कहा गया है 'द्वितीय कृतयुग्म त्रयोज संज्ञिपञ्चेन्द्रिय रूप से उनके उपपात को लेकर यावत् कलयोज कलयोज संज्ञिपञ्चेन्द्रिय पर्यन्त युग्मों से ये अनन्तबार उत्पन्न हो चुके हैं ऐसा कह लेना चाहिये । 'नवरं परिमाणं जहा वेदियाणं' द्वीन्द्रिय जीवों का जैसा परिमाण १६ अथवा संख्यातआदि रूप से कहा गया है उसी प्रकार से इन कृतयुग्म कृतयुग्मादि संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीवों का भी परिमाण जानना चाहिये । 'सेसं तहेव' परिमाण से अतिरिक्त उपपात आदि जिस जिस प्रकार से प्रथम युग्म में कहे गये हैं वैसे ही वे सब जानना चाहिये 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्न ! जैसा आपने यह कहा है वह सब

छे, 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु भाणियव्वं जाव अणंतखुत्तो' आज प्रमाणे कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञी पञ्चेन्द्रियोमां सधणा प्राणु विगेरे लवेना उपपातथी लधने अनंतवार सुधीना उपपात थधं युद्धयो छे, ओ कथन सुधी ने रीते कडेल छे, ओज प्रमाणे षीज कृतयुग्म त्रयोज संज्ञि पञ्चेन्द्रिय पणुथी तेना उपपातथी लधने यावत् कलयोज कलयोज संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्यन्तना युग्मोमां तेओ अनंतवार उत्पन्न थधं युद्धया छे. तेम कडेवुं लेधओ. 'नवरं परिमाणं जहा वेदियाणं' ओ धन्द्रिय लवेनुं परिमाणु ने प्रमाणे १६ सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात पणुगी कडेल छे, ओज प्रमाणे आ कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञी पञ्चेन्द्रिय लवेनु परिमाणु पणु समजवुं. 'सेस तहेव' परिमाणु शिवाय उत्पात विगेरे ने रीते पडेदा युग्मोमां कडेल छे. तेज प्रमाणे ते सधणुं कथन समल लेवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन आप देवानुप्रिये ने आ विषयना

ज्ञातव्यमिति 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥
इति चत्वारिंशत्तमे शतके प्रथमे शते प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥४०॥१॥

॥ इति चत्वारिंशत्तमे शतके प्रथमे शते प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥४०॥१॥

द्वितीयोद्देशकः २

'पहम समय कडजुम्मकडजुग्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति'
प्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ?
इत्यादि प्रश्नः, उत्तरमाह—'उववाओ परिमाणं आहारो जहा एएसिं चैव पढमुद्दे-

सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना
की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर ये संयम और तप
से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

४० वें शतक के प्रथम शत में प्रथम उद्देशक समाप्त ॥४०-१॥

'पहमसमय कडजुम्मकडजुग्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ
उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित
संज्ञिपचेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न
होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इसके उत्तर में
प्रभुश्री कहते हैं—'उववाओ परिमाणं आहारो जहा एएसिं चैव पढमु-

संभ'धमां कथन करेला छे. ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. हे लगवन्
आप हेवानुप्रियनु कथन सत्य न छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने
वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने तप अने संयमथी पोताना
आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥आणीसमां शतकमा पडेला शतकने पडेला उद्देशो समाप्त ॥४०-१॥

॥पडेला शतकना नीळ उद्देशाने प्रारंभ—

'पहमसमय कडजुम्मकडजुग्मसन्नि पंचिदियाण भंते कओ उववज्जंति' छ.

टीकार्थ—हे लगवन् प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा संज्ञि
पचेन्द्रिय लुवे कया स्थान विशेषी आवाने उत्पन्न थाय छे ? शु' तेओ
नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्येनिकेमांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे
हे—'उववाओ परिमाणं आहारो जहा एएसिं चैव पढमुद्देसप' हे गौतम ! तेओने

सए' उपपातः परिमाणमाहारो यथा एतेषामेव चत्वारिंशत्तमशतके प्रथमोद्देशके उपपातपरिमाणाहारो यथा एतेषां प्रथमोद्देशके कथिता रतथैव विज्ञेयाः । तत्रोपपातो नैरयिकादिभ्य सर्वेभ्यः न कुत्रतोऽपि प्रतिषेधः, परिमाणं षोडश वा संख्याता असंख्याता वा उत्पद्यन्ते । आहारो नियमात् पङ्क्तिश्च । 'ओगाहणा वंधो वेदो वेदना उदय उदीरणाय जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं' अवगाहना बन्धो वेदो वेदना उदय उदीरणा च यथा—द्वीन्द्रियाणां प्रथमसामयिकानाम्, यथा प्रथमसामयिक द्वीन्द्रियाणां बन्धवेद वेदनादिक विषये कथितं तथैव इहापि ज्ञातव्यमिति । 'तद्देव कण्ठलेस्सा वा जात्र सुदकलेस्सा वा' तथैव कृष्णलेस्या वा यावत्

हेसए' हे गौतम ! इनका उपपात परिमाण और आहार जैसा इसी शतक के प्रथम उद्देशक में कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये । इस प्रकार इन का उपपात स्वयंस्व चारों गतियों में से होता है । किसी भी गति में से आकर के इनके उपपात होने का प्रतिषेध नहीं है एक साथ इनके उत्पन्न होने का परिमाण १६ अथवा संख्यात अथवा असंख्यात है । आहार इनका नियम से चारों दिशाओं से होता है । 'ओगाहणा वंधो, वेदो वेदना, उदय उदीरणा य जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं' प्रथम सामयिक दो इन्द्रिय जीवों की जैसी अवगाहना कही गई है, जैसा बन्ध कहा गया है, वेद कहा है, वेदना कही गई है । जैसा उदय कहा गया है और जैसी उदीरणा कही गई है वैसा ही यह सब कथन इन कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाण संज्ञीपचेन्द्रियों के सम्बन्ध में भी कर लेना चाहिये । प्रथम समयवर्ती कृतयुगम कृतयुगमसंज्ञीपचेन्द्रिय जीव

उपपात, परिमाण अने आहार आ शतकना पडेल। उद्देशां में प्रमाणे कहेल छे, तेज प्रमाणेने समझवे। आ रीते तेओने उपपात आरे गतिवाणा लुपोमांथी होय छे। केठ पण गतिमांथी आवीने तेओने उपपात थवाने निषेध कहेल नथी। ओक साथे तेओने उत्पन्न थवानुं परिमाण १६ सोण अथवा संख्यात अथवा असंख्यात कहेल छे तेओने आहर नियमथी छ ओ दिशाओथी होय छे। 'ओगाहणा वंधो, वेदो वेदना उदयी उदीरणाय जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं' प्रथम समयवाणा जे इन्द्रिय लुपोनी अवगाहना जे प्रमाणेनी कहेल छे, जे रीतने बंध कहेल छे जे रीते वेदना कहेल छे, वेदनापणु जे रीते कहेल छे, जेवा उदयवाणा तेओने कहेल छे, जे रीतना उदीरक कहेल छे, ओज प्रमाणेनु आ सधणुं कथन आ कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा संज्ञी पचेन्द्रिय लुपोना संबंधमां पणु कहेलुं जेठओ प्रथम समयवर्ती कृतयुगम कृतयुगम राशिवाणा संज्ञी पचेन्द्रिय लुव कृष्णलेस्याथी

शुक्ललेश्याः प्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिया भवन्तीति । 'सेसं जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं जाव अणंतखुत्तो' शेषं पूर्वं कथितातिरिक्तं सर्वं यथा द्वीन्द्रियाणां प्रथम सामयिकानां कथितं तथैव अनन्तवारं समुत्पन्नपूर्वाः एतत्पर्यन्तम् 'नवरं इत्थिवेदगा वा पुरितवेदगा वा नपुंसगवेदगा वा, सन्निणो असन्निणो' नवरं-केवलम् द्वीन्द्रिय प्रकरणापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत् प्रथमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिया स्त्रीवेदका वा भवन्ति पुरुषवेदका वा भवन्ति नपुंसकवेदका वा भवन्ति, किन्तु अवेदका न भवन्तीत्येतदेव वैलक्षण्यम् । संज्ञिनो असंज्ञिनो वा भवन्तीति । तत्र तु 'नो अहन्वी' इति पाठः एतदेव वैलक्षण्यम् । 'सेसं

कृष्णलेश्या से लेकर यावत् शुक्ललेश्यावाले होते हैं सो इनके सम्बन्ध में भी ऐसा ही कथन जानना चाहिये । 'सेसं जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं जाव अणंतखुत्तो' वाक्यी का और कथन प्रथम समयवतीं दो इन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में जैसा कहा गया है वैसा ही है । यह कथन 'यावत् ये सप्तसप्त प्राण आदि जीव अनन्तवार प्रथम समयवतीं कृतयुग्म कृतयुग्म रूप से उत्पन्न हो चुके हैं' यहाँ तक करना चाहिये । परन्तु जो विशेषता द्वीन्द्रिय प्रकरण की अपेक्षा हल में है वह 'नवरं इत्थिवेदगा वा पुरितवेदगा वा नपुंसगवेदगा वा सन्निणो असन्निणो' इस सूत्र पाठ द्वारा यहाँ स्पष्ट की गई है द्वीन्द्रिय जीव केवल एक नपुंसक वेदवाले ही होते हैं तब कि ये तीनों वेदवाले होते हैं । ये अवेदक नहीं होते हैं । द्वीन्द्रिय असंज्ञी ही होते हैं । ये प्रथम समयवतीं कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमित पंचेन्द्रिय जीव संज्ञी भी होते हैं और असंज्ञी भी होते हैं ।

लघने यावत् शुक्ललेश्यावाणा होय छे. आ कथन सुधीनु सधणुं कथन आभना संभंधमा पणु कडेपुं लेधंये. 'सेसं जहा वेदियाणं पढमसमइयाणं जाव अणंतखुत्तो' भासीनुं सधणुं कथन प्रथम समयमा रहेनारा जे धन्द्रिय लुवेना सभंधमां ने प्रमाणे कडेल छे, जेअ प्रमाणे आ सधणुं कथन यावत् तेज्जे सधणा प्राणो विगेरे लुवे अनंतवार प्रथम समयमां रहेनारा कृतयुग्म कृतयुग्म रूपथी उत्पन्न थर्धं युधया छे आ कथन सुधी कडेपुं लेधंये. परंतु ने विशेषपणु छे. जेटले के जे धन्द्रिय प्रकरणु करतां ने लुदापणुं आवे छे, ते 'नवरं इत्थिवेयगा वा पुरितवेयगा वा नपुंसगवेयगा वा सन्निणो असन्निणो' आ सूत्र पाठ द्वारा अडियां पतावेल छे. जे धन्द्रिय लुवे केवल जेक नपुंसक वेदवाणा न होय छे. न्यारे आ त्रणे वेदवाणा होय छे आ अवेदक होता नथी. द्वीन्द्रिय लुवे असंज्ञी न होय छे, आ प्रथम समयवतीं कृतयुग्म

तद्देव' शेषं नवरमित्यादिना यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वं प्रथमसामयिक द्वीन्द्रिय-
वदेव ज्ञातव्यमिति । 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' एवं प्रथमसमय कृतयुग्मकृतयुग्म
संज्ञिपञ्चेन्द्रियस्य यथा कथितं तथैव कृतयुग्म त्र्योजादिरूप द्वितीय युग्मत आरभ्य
षोडशस्वपि युग्मेषु ज्ञातव्यम्, 'परिमाणं तद्देव सत्त्वं' परिमाणं तथैव सर्वं परिमाणं
सर्वमपि प्रथमसमय द्वीन्द्रियवदेव ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति' तद्देवं
भदन्त ! तद्देवं भदन्त ! इति ॥

॥ इति चत्वारिंशत्तमे शतके प्रथमे शते द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥४०११२

'एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देशगा तद्देव' एवमत्रापि शते प्रथमे एकादशो-

'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' जैसा यह कथन प्रथम समय कृतयुग्म
जीवों के सम्बन्ध में कहा गया है उसी प्रकार से प्रथम समय कृतयुग्म
त्र्योजादि रूप द्वितीययुग्म से लेकर सोलहयुग्मों में भी कह लेना
चाहिये । 'परिमाणं तद्देव सत्त्वं' प्रथम समयवर्ती द्वीन्द्रिय के जैसा
सर्वत्र की कथन यहाँ कर लेना चाहिये ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' 'हे भदन्त जैसा आपने यह कहा है
वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को
वन्दना की नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और
तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

४० वे शतक में प्रथम शत में यह द्वितीय उद्देशक समाप्त हुआ

॥४०-१-२॥

कृतयुग्म राशिवाणा पञ्चेन्द्रिय लोवा संज्ञी पण्डु डोय छे, अने असंज्ञी पण्डु
डोय छे, 'सेस' तद्देव' आझीनुं भीनुं सधणुं कथन प्रथम समयवाणा द्वीन्द्रिय
लोवोना कथन प्रमाणे न छे. 'एवं' सोलससु वि जुम्मेसु' आ कथन न प्रमाणे
प्रथम समय कृतयुग्म कृतयुग्म त्र्योजा विजेरे इपथी भीन युग्मथी लधने
सोणे युग्मोमां पण्डु कडेवुं लोधये 'परिमाणं' तद्देव सत्त्वं' प्रथम समयमां
रडेवावाणा द्वीन्द्रिय लोवोना कथन प्रमाणे न गधे ठेकाण्डे अडिया परिमाण
संभधी कथन कडेवुं अेधये.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
ने प्रमाणे कथन करेव छे. ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न हे लगवन् आप
देवानुप्रियनुं ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे आ प्रमाणे कहीने गौतम-
स्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी तेअोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करी
ने ते पछी संयम अने तपथी चोताना आत्माने भावित करता थका चोताना
स्थान पर विराजमान थया. ॥४०१॥

आणीसभा शतकेमां पडेला शतकेने भीजे उद्देशो समाप्त ॥४०-१-२॥

देशकाः ज्ञातव्याः । तत्र 'पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा' प्रथमस्तृतीयः पञ्च-
मश्च सदृशगमा एकालापका इत्यर्थः । 'सेसा अट्टवि सरिसगमा' शेषा अष्टावपि
द्वितीयचतुर्थषष्ठसप्तमाष्टम नवम दशमैकादशाख्याः सदृशगमा समानाः । 'चउत्थ
छट्ट अट्टम दसमेसु नत्थि विसेमो कायव्वो' चतुर्थ षष्ठाष्टम दशमेपु नास्ति विशेषः
कर्तव्य इति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति
॥ चत्वारिंशत्तमे शतके प्रथमं संज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०।१।२॥

टीकार्थ—'एवं एत्थ वि एककारस उद्देशगा' इस प्रथम शत में भी
११ उद्देशक हैं । इन में 'पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा' प्रथम
द्वितीय उद्देशक और पांचवा उद्देशक ये तीन एकसरीखे आलापकवाले
हैं । और 'सेसा अट्ट वि सरिसगमा'वाकी के आठ उद्देशक द्वितीय,
चतुर्थ, षष्ठ, उद्देशक सप्तम, अष्टम, नवम, दसम और ११ वां ये आठ
उद्देशक समान आलापवाले हैं । 'चउत्थ छट्ट अट्टम दसमेसु नत्थि
विसेसो कायव्वो' चतुर्थ छट्टे आठ वें इन उद्देशको में कोई विशेषता
कर्तव्य नहीं है 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आपका यह
कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को
वन्दना की और नमस्कार क्रिया वन्दना नमस्कार कर फिर वे
संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर
विराजमान हो गये ।

४० वें शतक में संज्ञिपञ्चेन्द्रिय महायुग्म शत समाप्त हुआ ॥४०-१॥

'एवं एत्थवि एककारस उद्देशगा' आ पडेला शतकमां पणु ११ अगियारे
उद्देशाओ छे. तेमां 'पढमो तइओ प चमो य सरिसगमा' पडेला उद्देशो भीजे उद्देशो
अने पांचमो उद्देशो आ त्रणु उद्देशाओ सरभा आलापकेवाणा होय छे. अने
'सेसा अट्ट वि सरिसगमा' आधीना आठ उद्देशाओ अट्टे के भीजे, येथो.
छट्ठो, सातमो आठमो नवमो दशमो अने अगियारमो आ आठ उद्देशाओ
सरभा आलापकेवाणा छे. 'चउत्थ छट्ट अट्टमदसमेसु नत्थि विसेसो कायव्वो'
येथो, छट्ठो आठमो दशमो आ उद्देशाओमां कांछि पणु विशेषपणु कहेल नथी.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं आ कथन
सर्वथा सत्य न छे, हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं आप्त कथन सर्वथा सत्य
न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने
नमस्कर कर्था वंदना नमस्कार कर्था पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने
भावित करता थका पोताना स्थानपर विराजमान थया. ॥सू०१॥

आणीसमा शतकमां संज्ञि पञ्चेन्द्रिय महायुग्म शतक समाप्त ॥४०-१-२॥

‘अह वितियं कणहलेस्स सन्नि पंचिदियमहाजुम्मसयं’

मूलम्—कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति, तहेव जहा पढमुद्देसओ सन्नीणं । नवरं बंधो वेओ उदय उदीरणा लेस्सा बंधगसन्ना कसायवेद बंधगा य एयाणि जहा वेदियाणं । कणहलेस्साणं वेओ तिविहो अवेदगा नत्थि । संचिट्टणा जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमवभहियाइं । एवं ठिईए वि । नवरं ठिईए अंतोमुहुत्तमवभहियाइं न भन्नंति । सेसं जहा एएसिं चैव पढमुद्देसए जाव अणंतखुत्तो । एवं सोलससु वि जुम्मेसु । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४०—२॥

पढमसमय कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदिया-
णं भंते ! कओ उववज्जंति जहा सन्नि पंचिदिय पढमसमय
उद्देसए, तहेव निरवसेसं । नवरं तेषां भंते ! जीवा कणहलेस्सा
सेसं तं चैव । एवं सोलससु वि जुम्मेसु । सेवं भंते ! सेवं भंते !
त्ति । एवं एएवि एक्कारस वि उद्देसगा कणहलेस्साए । पढमतइय
पंचमा सरिसगमा । सेसा अट्ट वि एक्क गमा । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति ॥४०—२॥

चत्तालीसइमे सए वितियं सन्नि महाजुम्मसयं समन्तं ॥४०—२॥

छाया—कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्य-
न्ते ? तथैव यथा ग्रथमादेशकः संज्ञिनाम् । नवरं बन्धो वेद उदयी उदीरणा लेश्या-
ग्रन्थक संज्ञा कपाय वेदवन्धका श्रैतानि यथा—द्वीन्द्रियाणाम् । कृष्णलेश्यानां वेद-
स्त्रिविधः अवेदका न सन्ति । संस्थानं जघन्येनेकं समयम्, उष्कर्षेण त्रयस्तिशता-
गरोपमाणि अन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि । एवं स्थितावपि । नवरं स्थितौ अन्तर्मुहूर्त्ताभ्य-
धिकानि न भण्यन्ते । शेषं यथा एतेषामेव प्रथमे उद्देशके यावदनन्तकृत्वः । एवं
पोडशस्वपि युग्मेषु । तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥

प्रथमसमय कृष्णलेश्य कृतयुग्म कृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत

उत्पद्यन्ते ! यथा संज्ञिपञ्चेन्द्रियप्रथमसमयोद्देशके तथैव निरवशेषम् । नवरं ते खलु भदन्त ! जीवाः कृष्णलेश्याः ? हन्त कृष्णलेश्याः । शेषं तदेव । एवं षोडश-स्वपियुग्मेषु । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । एवमेतेऽपि एकादशापि उद्देशकाः कृष्णलेश्यशते ! प्रथमतृतीयपञ्चमाः सदृशगमाः, शेषा अष्टावपि एक-गमाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४०॥२॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके द्वितीयं संज्ञि महायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०॥३॥

टीका — 'कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदिया णं भंते ! कओ उवव उजंति' कृष्णलेश्य कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत्र उत्पद्यन्ते ? किं नैरयिकेभ्यो यात्रत् देवेभ्यो वोत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह पूर्वातिदेशेन— 'तहेव' इत्यादि, 'तहेव पढमुद्देसए सन्नीणं' तथैव यथा प्रथमोद्देशके संज्ञिनाम्, संज्ञिनां चत्वारिंशत्तमशतकस्य प्रथमोद्देशे येन रूपेणोपपान श्रतुर्गतिभ्यः कथित

॥द्वितीय कृष्णलेश्य संज्ञिपञ्चेन्द्रिय महायुग्म शत॥

'कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदिया णं भंते ! इत्यादि टीकार्थ—हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रमाण संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीव किल स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अति-देश द्वारा इसके उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'तहेव जहा पढमुद्देसए सन्नीण' हे गौतम ! जैसा संज्ञी जीवों के सम्बन्ध में प्रथम उद्देशक कहा गया है वैसा ही यहां पर भी कह लेना चाहिये । ४० वे' शतक

भील कृष्णलेश्या संज्ञि पञ्चेन्द्रिय महायुग्म शतकना प्रारंभ—

'कणहलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! इत्यादि

हे लगवन् कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म राशिवाणा संज्ञि पञ्चेन्द्रिय एवे। क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यग्योनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे छे—'तहेव जहा पढमुद्देसए सन्नीण' हे गौतम ! सज्ञी एवेना सम्बन्धमां पडेला उद्देशमां ने प्रमाणेतु कथन करवामां आवेल छे, ओज प्रमाणेतु कथन अद्वियां पणु कडेवु नेउओ. ४० आणीसमा शतकना पडेला उद्देशमां यादे

સ્તથૈવ ચતુર્ગતિનારકતિર્યદ્મનુષ્યદેવેભ્યઃ કૃષ્ણલેહ્ય કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મ સંજ્ઞિપંચેન્દ્રિયાણામપિ વક્તવ્ય ઇતિ । 'નવરં વંધો વેઓ ઉદયી ઉદીરણા લેસ્સા વન્ધગ સન્ના કસાય વેદવંધગાય' નવરં-કેવલં પ્રથમોદેશકાપેક્ષયા ઇદં વૈલક્ષણ્યં તત્ર વન્ધઃ જ્ઞાનાવરણીયસ્ય વન્ધકા નો અવન્ધકા । વેદો જ્ઞાનાવરણીયાદીનાં વેદકા નો અવેદકાઃ । ઉદયિનો નો અનુદયિનઃ । કર્મણા મુદીરકા વા અનુદીરકા વા । લેહ્યા કૃષ્ણૈવ, કર્મપ્રકૃતીનાં સપ્તવિધ વન્ધકા અપિ અષ્ટવિધવન્ધકા અપિ । સંજ્ઞા-આહા-

કે પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં ચારોં ગતિયોં મેં સે આયે હુએ જીવોં કા કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમિત સંજ્ઞિપંચેન્દ્રિય રૂપ સે ઉપપાત કહા ગયા હૈ ડસી પ્રકાર યહાં પર ઘી ચારોં ગતિયોં મેં સે આયે હુએ જીવોં કા ઉપપાત હોના હૈ એસા જાનના ચાહિયે । અર્થાત્ કૃષ્ણલેહ્યાવાલેકૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ સંજ્ઞિપંચેન્દ્રિય જીવ રૂપ સે ચારોં ગતિયોં મેં સે આયે હુએ જીવ ઉત્પન્ન હોતે હૈ । 'નવરં વંધો, વેઓ, ઉદયી, ઉદીરણા, લેસ્સા વન્ધગસન્ના' કસાય વેદ, વંધગાય' પરન્તુ પ્રથમોદેશક કી અપેક્ષા યહાં યહ અન્તર હૈ કિ વંધ, વેદ, ઉદયી, ઉદીરણા લેહ્યા વંધક, સંજ્ઞા, કપાય, ઓર વેદ વંધક યે સવ દો હન્દ્રિયોં કે જૈસે કહે ગયે હૈ વૈસે યહાં કહલેના ચાહિયે । અર્થાત્ યે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વન્ધક હોતે હૈ કિન્તુ અવન્ધક નહીં હોતે હૈ, વેદક હોતે હૈ, કિન્તુ અવેદક નહીં હોતે હૈ, ઉદયવાલે હી હોતે હૈ, કિન્તુ અનુદયવાલે નહીં હોતે હૈ । કર્મોં કે ઉદીરકમી હોતે હૈ ઓર અનુદીરક ઘી હોતે હૈ । ઇનકે કૃષ્ણલેહ્યા હી હોતી

ગતિવાણાઓમઠી આવેલા ઇવે કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિ પ્રમાણવાણા સંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય પણાથી ઉત્પન્ન થાય છે. તેમ કહેવામાં આવેલ છે એજ પ્રમાણે અહિયાં પણ ચારે ગતિયોમાંથી આવેલા ઇવેનો ઉપપાત થાય છે, તેમ સમજવું અર્થાત્ કૃષ્ણલેહ્યાવાણા કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ સંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય પણાથી ચારે ગતિયોમાંથી આવેલા ઇવે ઉત્પન્ન થાય છે.

'નવરં વંધો, વેઓ, ઉદયી, ઉદીરણા, લેસ્સા, વંધગસન્ના કસાય, વેદ વંધગાય,' પહેલા ઉદ્દેશા કરતા આ કથનમાં એ અંતર છે કે-વંધ, વેદ, ઉદયી, ઉદીરણા, લેહ્યા, વંધક, સંજ્ઞા, કપાય, અને વેદવંધ આ તમામ બેદન્દ્રિયોને જે પ્રમાણે કહેલ છે તેજ પ્રમાણે અહિયાં કહેવા નોઈએ. અર્થાત્ આ જ્ઞાનાવરણીય વિગેરે કર્મોના વંધ કરવાવાળા પણ હોય છે, અને અવંધક પણ હોય છે. વેદક પણ હોય છે. અને અવેદક પણ હોય છે. ઉદયવાળા પણ હોય છે, અને અનુદયવાળા પણ હોય છે, કર્મોના ઉદીરક પણ હોય છે અને અનુદીરક પણ હોય છે. તેઓને છ એ લેહ્યાઓ હોય

રાદિરૂપા, વેદઃ સ્ત્રીવેદાદિઃ સ્ત્રીવેદાદીનાં વન્ધકાવેતિ । ‘एयाणि’ एतानि वन्धा-
 दीनि ‘जहा वेदियाणं’ यथा द्वीन्द्रियाणं कथितानि तथैव इहापि ज्ञातव्यानि
 द्वीन्द्रियशतं षट्त्रिंशत्तमशतकम्, तत्र पञ्चत्रिंशत्तमशतकस्यातिदेशः ततः पञ्चत्रिं-
 शत्तमशतकात् सर्वं ज्ञातव्यम् अत्र यद् वैलक्षण्यं तदेव स्पष्टयति—‘कण्ठलेस्साणं वेदो
 तिविहो’ कृष्णलेश्यानां वेदस्त्रिविधः स्त्रीपुंनपुंसकरूपा स्रयो वेदा भवन्ति, ‘अवेदगा
 नत्थि’ कृष्णलेश्यावन्तोऽवेदका न भवन्ति इति । ‘संचिदृणा जहन्नेणं एकं समयं’
 संस्थानम्—अवस्थितिकालो जघन्येन एकं समयं भवति । ‘उक्कोसेणं तेत्तीसं
 सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्महियाइं’ उत्कर्षेण त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि अन्त-

है ये कर्मप्रकृतियों के सप्तविध बन्धक भी होते हैं और अष्ट-
 विध बन्धक भी होते हैं। आहारादि रूप चारों प्रकारकी संज्ञावाले
 होते हैं। स्त्रीवेदादि रूप तीनों वेदवाले होते हैं और उनके
 ये बन्धक होते हैं। द्वीन्द्रिय शत यह ३६ वां शतक है। इसके निरूपण
 में ३५ वें शतक का अतिदेश किया गया है इसलिये ३५ वे शतक से
 ही यह सब जानना चाहिये। यहां वेद्विन्द्रिय शतक की जो विलक्षणता
 है वह इस प्रकार से—है—‘कण्ठलेस्साणं वेदो तिविहो’ कृष्णलेश्यावालो
 के तीनवेद होते हैं, स्त्रीवेद होता है, पुरुषवेद होता है और नपुंसक वेद
 होता है। ‘अवेदगा नत्थि’ ये अवेदक नहीं होते हैं। ‘संचिदृणा जह-
 न्नेणं एकं समयं’ अवस्थिति काल यहां जघन्य से एक समय का
 है और ‘उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्महियाइं’

છે તેઓ કર્મપ્રકૃતિઓના બધ કરવાવાળા પણ હોય છે અને અબંધક પણ
 હોય છે આહાર વિગેરે ૩૫ ચારે પ્રકારની સંજ્ઞાવાળા હોય છે. સ્ત્રીવેદ વિગેરે
 ત્રણે વેદવાળા હોય છે અને તેનો બંધ કરવાવાળા હોય છે. દ્વીન્દ્રિય શતક
 એ છત્રીસમા શતકમાં આવે છે. તેનું નિરૂપણ કરવામાં ૩૫ પાંત્રીસમા શતક
 નો અતિદેશ કહેલ છે. તેથી ૩૫ પાંત્રીસમાં શતકમાંથી જ આ તમામ પ્રકરણ
 સમજી લેવું તેનું સ્પષ્ટી કરણ આ પ્રમાણે છે. ‘કણ્ઠલેસ્માણં વેદો તિવિહો’
 કૃષ્ણલેશ્યાવાળાને ત્રણ વેદ હોય છે. એટલે કે—સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુંસક
 વેદ એ ત્રણે વેદ હોય છે. ‘અવેદગા નત્થિ’ આ અવેદક હોતા નથી ‘સંચિદૃણા
 જહણેણ એકકં સમયં’ અવસ્થિતે કાળે જઘન્યથી અહિયા એક સમયનો કહેલ
 છે અને ‘ઉક્કોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાઈં અંતોમુહુત્તમવ્મહિયાઈં’ ઉત્કૃષ્ટથી એક

मुहूर्त्ताभ्यधिकानि, इदं च कृष्णलेश्य संज्ञिपञ्चेन्द्रियावस्थानं सप्तमपृथिव्युत्कृष्ट-
स्थितिं पूर्वभवपर्यन्तवर्त्तिनं च कृष्णलेश्या परिणाममाश्रित्य कथितमिति । 'एवं
ठिईए वि' एवं स्थितावपि एवं संस्थानवदेव स्थितौ अपि जघन्येनैकं समयमुत्क-
र्षेण त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि । 'नवरं ठिईए अंतो मुहुत्तमन्महियाइं न भन्नंति'
नवरं-केवलं स्थितौ अन्तमुहूर्त्ताभ्यधिकानि, अवस्थानं पूर्वभवपर्यन्तवर्त्तीकालो-
गृहीतः आयुष्कं तु न तदपेक्षया अतोऽन्तमुहूर्त्तमिह न कथितमिति अन्तमुहूर्त्ता-
भ्यधिकानि न भण्यन्ते । 'सेसं जहा एएसि चैव पढये उद्देसए जाव अणंतखुत्तो'
शेषमवस्थानस्थित्यतिरिक्तं सर्वमपि यथा एतेषां संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामेव चत्वारि-
उत्कृष्ट से एक अन्तमुहूर्त्त अधिक ३३ सागरोपम का है । यहाँ जो
इसका काल कहा गया है वह सप्तम पृथिवी के नारक की उत्कृष्ट
स्थिति और पूर्वभव पर्यन्त वर्त्ती कृष्णलेश्या के परिमाण को आश्रित
करके कहा गया है । 'एवं ठिईए वि' संस्थान के जैसे ही स्थिति भी
जघन्य से एक समय की और उत्कृष्ट से ३३ सागरोपम की है यहाँ एक
अन्तमुहूर्त्त अधिक नहीं कहना चाहिये । अर्थात्-अवस्थान में पूर्वभव
पर्यन्तवर्त्ती काल गृहीत हुआ है । इसलिये वहाँ एक अन्तमुहूर्त्त की
अधिकता कही गई है परन्तु आयुष्क में यह अपेक्षा होती नहीं है ।
इसलिये यहाँ अन्तमुहूर्त्त की अधिकता नहीं कही है । 'सेसं जहा
एएसि चैव पढये उद्देसए जाव अणंतखुत्तो' इस प्रकार अवस्थान और
स्थिति के अतिरिक्त और सब कथन इन संज्ञिपञ्चेन्द्रियों के सम्बन्ध में
४० वें शतक के प्रथम उद्देशक में जैसा कहा गया है वैसा ही यहाँ भी

अंतमुहूर्त्त अधिक ३३ त्रेत्रिस सागरोपमनो छे. अहियां ७ आ प्रभाणेनो
तेओनो काण कडेल छे, ते सातमी पृथ्वीना नारकनी उत्कृष्ट स्थिति अने
पूर्वभव पर्यन्तमां रडेल कृष्णलेश्याना परिणामनो आश्रय करीने कडेल छे.

'एवं ठिईए वि' संस्थानना कथन प्रभाणे ७ स्थिति पणु जघन्यथी ओक
समय अने उत्कृष्टथी ३३ त्रेत्रिस सागरोपमनी छे. अहियां ओक अंतमुहूर्त्तनुं
अधिकपणुं कडेल नथी. अर्थात् अवस्थानमां पूर्वभव पर्यन्तवर्त्तीकाण थडणु
थयेल छे. तेथी त्यां ओक अन्तमुहूर्त्तनुं अधिकपणुं कहुं छे, परंतु
आयुष्यकमां ते अपेक्षा रडेली नथी. तेथी अहियां ओक अंतमुहूर्त्तनुं
अधिकपणुं कडेल नथी 'सेसं' जहा एएसि चैव पढये उद्देसए
जाव अणंतखुत्तो' आ रीते अवस्थान अने स्थितिना कथन शिवाय
आहीनुं सधणुं कथन आ संज्ञी पञ्चेन्द्रियना संबंधमां ४० आणीसमा शत-

शतमशतकस्य प्रथममोदेशके कथितं तथैवेहापि ज्ञातव्यम् । कियत्पर्यन्तं ? तत्राह-
 'जाव' इत्यादि, 'जाव अणंतसुतो' यावदनन्तकृत्वः, अथ भदन्त ! सर्वे प्राणा
 यावत् सर्वे सत्वाः कृष्णलेश्य संज्ञिपञ्चेन्द्रियतया समुत्पन्नपूर्वाः किम्, हे गौतम !
 अनन्तकृत्वः समुत्पन्न पूर्वाः इत्युत्तरपर्यन्तं ज्ञातव्यमिति । 'एवं सोलससु वि
 जुम्सेसु' एवं कृष्णलेश्यकृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां यथा उपपातादिः
 कथितं स्तैनैव रूपेण षोडशसु युग्मेषु कृष्णलेश्य कृतयुग्मयोजाद् द्वितीय युग्मा-
 दारभ्य कल्पयोजकल्पयोजपर्यन्तेषु यावदनन्तकृत्व इ-यादिकं वक्तव्यमिति ।
 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति ॥

जानना चाहिये । और यह कथय यावत् समस्त प्राण यावत् समस्त
 सत्व अनन्तवार हल रूप से पूर्व में उत्पन्न हो चुके हैं इस पाठ तक
 ज्यों का त्यों कहलेना चाहिये । 'एवं सोलससु वि जुम्सेसु' जिस रीति
 से यह कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञी पञ्चेन्द्रियों का उपपात
 आदि कहा है उसी प्रकार-से उसी रीति से सोलह युग्मों में-कृष्ण-
 लेश्यावाले कृतयुग्म योजराशि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय रूप द्वितीययुग्म से
 लेकर फल्योज कल्पयोज राशिप्रमित कृष्ण लेश्यावाले संज्ञी पञ्चेन्द्रिय के
 जीवों में समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं"
 इत्यादि सब कहलेना चाहिये । । 'सेवं भंते सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त !
 जैसा आपने यह कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार
 कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया ।
 वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को आवृत
 करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

कना पडेला उदेशामां ने प्रभाणे कडेल छे, जेज प्रभाणे गडीया पणु समजतुं.
 अने आ कथन यावत् सधणा प्राणे सधणा सत्वे अनंतवार आ इपथी
 पडेलां उत्पन्न थर्ध चूकेल छे, आ पठ सुधी नेमनुं तेम कडेपु नेधजे.
 'एवं सोलससु वि जुम्सेसु' ने प्रभाणे आ कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म कृतयुग्म
 संज्ञी पञ्चेन्द्रियेना उपपात कडेल छे, जेज प्रभाणे-सोणे युग्मेमां कृष्णलेश्य-
 वाणा कृतयुग्म जेज राशिप्रभाणुवाणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय इप थीला युग्मथी
 लधने कडेजेज कडेजेज राशिप्रभाणुवाणा कृष्णलेश्यावाणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय
 लवेमां सधणा प्राणे यावत् सधणा सत्वे अनंतवार उत्पन्न थर्ध चूक्या
 छे, विगेरे सधणुं कथन कडी लेपु नेधजे

'सेव भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
 ने प्रभाणे कडेल छे, ते सधणुं कथन सर्वाथा सत्य ज छे, छे लगवन् आपनुं

‘पढमसमय कण्हलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ प्रथमसमय कृष्णलेश्य कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद् देवेभ्यो वेति प्रश्नः, उत्तरमाह अतिदेशद्वारेण—‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा सन्नि पंचिदिय—पढमसमय उद्देशए तहेव निरवसेसं’ यथा संज्ञिपञ्चेन्द्रिय प्रथमसमयोद्देशके चत्वारिंशच्छतकस्य प्रथमशत द्वितीयोद्देशके तत्रापि अतिदेशेन प्रथमोद्देशके यथा कथितं तेनैव रूपेण निरवशेषं सर्वमपि अत्र भणितव्यम् । ‘नवरं ते णं भते ! जीवा कण्हलेस्सा’ नवरं केवलमयं विशेषः ते खलु

‘पढमसमय कण्हलेस्स कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! प्रथम समयवर्ती कृष्णलेश्यावाले कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित संज्ञी जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यग्योनिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्नहोते हैं ? अतिदेश द्वारा इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतमस्वामी से कहते हैं—‘जहा सन्निपंचिदिय पढमसमय उद्देशए तहेव निरवसेसं’ हे गौतम ! जैसा प्रथम समयवर्ती संज्ञीपंचेन्द्रियों के उद्देशक में कहा गया है— ४० वें शतक के प्रथम शतके द्वितीय उद्देशक में—वहां पर भी अतिदेश से प्रथम उद्देशक में—जैसा कहा गया है वसी रूप से सब कथन यहां पर

कथन सर्वथा सत्य न्छे. आ प्रभाषु कहीने गौतमस्वामीन्धि प्रभुश्रीने वंदना करी नभस्कार कर्या वंदना नभस्कार करीने संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया.

‘पढमसमय कण्हलेस्स कडजुम्मकडजुम्म पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ हे भगवन् प्रथम समयमां रडेनारा कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म कृतयुग्मराशि प्रभाषुवाणा संज्ञीपंचेन्द्रिय लुवे कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेन्ने नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यंयोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नने उत्तर अतिदेश द्वारा आपता प्रभुश्री कडे छे के—‘जहा सन्निपंचिदिय पढमसमय उद्देशए तहेव निरवसेसं’ हे गौतम ! प्रथम समयमां रडेला संज्ञी पंचेन्द्रियेना संभंधमां ने प्रभाषु कडेला छे, अटले के—४० आणीसमा शतकना पडेला शतकना पीले उदेशा

भदन्त ! जीवाः कृष्णलेश्याः केवलं चत्वारिंशत्तमशतके प्रथमशतापेक्षया द्वितीयशते कृष्णलेश्यपद घटितया प्रश्नः कर्तव्यः तथा तद् घटितरूपेण उत्तरं दातव्यमेतदेव वैलक्षण्यमिति, 'सेसं तं चेव' शेषं तदतिरिक्तं सर्वमपि प्रथमसमय कृतयुगमोद्देशकत्वं देवज्ञातव्यमिति । 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' एवं यथा कृष्णलेश्य-कृतयुगम कृतयुगमे कथितं तथैव षोडशसु कृष्णलेश्य कृतयुगम त्रयोजादारभ्य कलयोज कलयोज पर्यन्तेष्वपि सर्वस्युपपांतादिकं ज्ञातव्यमिति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्गुरुललादिपदभूषितवाल्म्वरचारि - 'जैनाचार्य' पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां चत्वारिंशत्तमे शतके द्वितीय प्रथमसमय कृष्णलेश्य कृतयुगम कृतयुगम संज्ञिपञ्चेन्द्रिय शतम् समाप्तम् ॥

भी कर लेना चाहिये । 'नवरं तेणं भंते ! जीवा कणहलेस्सा' हे भदन्त ! क्या वे सब जीव कृष्णलेश्यावाले हैं ? 'हंता, कणहलेस्सा' हां गौतम । वे सब जीव कृष्णलेश्यावाले हैं-तात्पर्य इसका ऐसा है कि ४० वें शतक के प्रथम शतकी अपेक्षा इस द्वितीय शत में कृष्णलेश्यापद लगाकार प्रश्न कहना कहा गया है और उसी पदको रखकर उत्तर देना कहा गया है यही दोनों में अन्तर है ऐसा जानना चाहिये । 'सेसं तं चेव' इसके सिवाय और सब कथन प्रथम समयवर्ती कृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमित संज्ञि पचेन्द्रियो के उद्देशक के जैसा ही है । 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' इस प्रकार जैसा कृष्णलेश्या कृतयुगम कृतयुगम में कहा गया है वैसा ही कृष्णलेश्य कृतयुगम त्रयोज से लेकर कलयोज कलयोज तक के सोलह

प्रमाणे कडेवानुं कडेल छे. ओज प्रमाणेनुं सधणुं कथन अडियां पणु कडेवुं नधंओ. 'नवरं तेणं भंते ! जीवा कणहलेस्सा' परंतु विशेषपणुं ओ छे के-डे लगवन् शुं तेओ. सधणा ओवे. कृष्णलेश्यावाणा डोय छे ? 'हंता कणहलेस्सा' हां गौतम । ते अथा ओवे. कृष्णलेश्यावाणा डोय छे. कडेवानुं तात्पर्यं ओ छे के व्याणिसभा शतकना पडेला शतकनी अपेक्षाथी आ भीन शतकमां कृष्णलेश्यापद लगावीने प्रश्न करवानुं कडेल छे. अने ओज पढने राणीने उत्तर आपवे. नधंओ. 'सेसं तं चेव' आ कथन शिवाय भाकीनुं सधणुं कथन प्रथम समयमां रडेल कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रमाणवाणा संज्ञी पचेन्द्रियोना उद्देशाना कथन प्रमाणे ओ छे 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' आ रीने कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगम कृतयुगममां कडेल छे, ओज प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा कृतयुगम ओजथी लधने

युगमों में भी समस्त उपपात आदि कह लेना चाहिये। 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह सब कथन सत्य ही है २। इस प्रकार कहकर गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये। जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चालीसवें शतक का प्रथम समय कृष्णलेश्य कृतयुगम कृतयुगम संज्ञिपञ्चेन्द्रिय नाम का द्वितीय शत का द्वितीय उद्देशक समाप्त

कल्योञ्ज कल्योञ्ज सुधीना सोण युग्मां पणु उपपात विगेरे सधणुं कथन कडी देवु, नोछञ्जे.

'सेवं भंते ! सेवं ! भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये ञे कथन करेव छे ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ञ छे. हे लगवन् आपनुं कथन सर्वथा सत्य ञ छे. आ प्रमाञ्जे कडीने गौतमस्वामीञ्जे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना चालीसमा शतकनुं प्रथम समय कृष्णलेश्य कृतयुगम कृतयुगम संज्ञिपञ्चेन्द्रिय नामना णीञ्ज शतकने। णीञ्जे उद्देशे। समाप्त ॥



‘एवं एएवि उद्देशगा कण्ठलेस्ससए’ एवमेतेऽप्रथम समयादारभ्य चरमाचरम समयपर्यन्ता एकादशापि नव उद्देशकाः सङ्कलनया एकादशादेशका भवन्ति कृष्णलेइयशतके । तत्र ‘पढमतइयपचमा सरिसगमा’ प्रथम तृतीय पञ्चमा इति उद्देशकत्रयम् सदृशगमं सदृश प्रकारकमिति । ‘सेसा अट्ट वि एक्कगमा’ शेषा अष्टौ द्वितीयचतुर्थषष्ठसप्तमाष्टमनवमदशमैकादशोद्देशकाः सदृशाः समानालापका भवन्तीति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! तदेव भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके द्वितीयं संज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०॥२॥

टीकार्थ-‘एवं एएवि उद्देशगा कण्ठलेस्ससए’ इसी रीति से अप्रथम समय से लेकर चरम समय पर्यन्त बाकी के नौ उद्देशक होते हैं-अतः पहिले के दो उद्देशक और ९ उद्देशक ये कुल ११ उद्देशक इस कृष्णलेइय शतक में होते हैं । इन में ‘पढमतइय पंचमा सरिसगमा’ प्रथम तृतीय और पंचम वे तीन उद्देशक एक सरीखे आलापवाले हैं और ‘सेसा अट्ट वि एक्कगमा’ बाकी के द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम और ११ वां ये आठ उद्देशक समान आलापवाले हैं । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥४० वे शतक में दूसरा संज्ञिमहायुग्म शत समाप्त ४०-२॥

‘एवं एएवि उद्देशगा कण्ठलेस्ससए’ आज रीतथी अप्रथम समयथी लधने अरम अरम समय पर्यन्त आकीना नव उद्देशाओ थाय छे. जेथी पडैलाना जे उद्देशाओ अने आ नव उद्देशाओ मणीने कुल ११ अगियार उद्देशाओ आ कृष्णलेइया शतकमां डाय छे. तेमां ‘पढमतइयपंचमा सरिसगमा’ पडैले नीले अने पांचमो जे त्रण उद्देशाओ जेक सरभा आलापवाणा कइया छे. अने ‘सेसा अट्ट वि एक्कगमा’ आकीना नीले, जे.थो, छठ्ठा सातमो, आठमो, नवमो, दशमो, ११ अगियारमो आ आठ उद्देशाओ सरभा आलापवाणा कइया छे.

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ डे लगवन् आप देवानुप्रिये जे कथन कर्तुं छे, ते सद्यु कथन सर्वथा सत्य न छे. डे लगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥ ४० आणीसमा शतकमां णीजु संज्ञी महायुग्म शतक ॥ समाप्त ॥४०-२॥

॥ अह तइयं सन्निमहाजुम्मसयं ॥

मूलम्—एवं नीललेस्सेसु वि सयं । नवरं संचिट्टुणा जहन्नेणं
एकं समयं उक्कोसेणं दससागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखे-
ज्जइभागमवभहियाइं । एवं तिसु उद्वेसएसु सेसं तं चेव । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

॥ चत्तालीसइमे सए तइयं सन्निमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

छाया—एवं नीललेश्येष्वपि शतम् । नवरं संस्थाना जघन्येनैकं समयम्
उत्कर्षेण दशसागरोपमाणि पत्योपमस्यासंख्येयभागाभ्यधिकानि । एवं त्रिषूद्देश-
केषु शेषं तदेव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके तृतीयं संज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०॥३॥

टीका—‘एवं नीललेस्सेसु वि सयं’ नीललेश्येष्वपि शतं यथा कृष्णलेश्या-
शतं निरूपितं तेनैव रूपेण नीललेश्यशतमपि भणितव्यम् । प्रथमसमयादिका
एकादशोद्देशका अपि पूर्ववदेव ज्ञातव्याः । ‘नवरं संचिट्टुणा जहन्नेणं एकं
समयं’ नवरं संस्थाना—अवस्थितिकालः जघन्येनैकं समयम् ‘उक्कोसेणं दस-
सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमवभहियाइं’ उत्कर्षेण दश सागरोप-
माणि पत्योपमस्यासंख्येयभागाभ्यधिकानि पञ्चमनारकपृथिव्या धूमपभाया

शतक ४० तृतीय संज्ञि महायुग्म शत

टीकार्थ—‘एवं नीललेस्सेसु वि सयं’ जिस प्रकार से कृष्णलेश्या-
वालों के सम्बन्ध में शत निरूपित हुआ है, उसी प्रकार से नीललेश्या
वालों के सम्बन्ध में भी शतक निरूपित कर लेना चाहिये । यहाँ पर
भी प्रथम समयादिक ११ उद्देशक पहिले के जैसा ही जानना चाहिये ।
‘नवरं संचिट्टुणा जहन्नेणं एकं समयं’ परन्तु यहाँ पर अवस्थान
काल जघन्य से एक समय का है और उत्कृष्ट से पत्योपम के असं-

त्रीण संज्ञी महायुग्म शतकेना प्ररंल—

‘एवं नीललेस्सेसु वि सयं’ के प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणाना संबंधमा
शतकं कडेवाभां आवेल छे. ओज प्रमाणे नीललेश्यावाणाना संबंधमां पण
शतकेनुं निउपण्ठ करी लेवुं लेउंओ. अडियां पण्ठ प्रथम समय विगेरे ११
अगियार उद्देशाओ पडेता प्रमाणे समजवा ‘नवरं संचिट्टुणा जहन्नेणं एकं
समयं’ परंतु अडियां अवस्थान काण जघन्यथी ओउ समयने छे. अने
उत्कृष्टथी पत्योपमना असंभ्यात लाग अधिक दश सागरोपमने छे. आ

उपरितनप्ररतटे दशसागरोपमाणि पल्योपमस्यासंख्येयभागाधिकान्यायुः सम्भवति नीललेश्या च तत्र स्यादत उक्तम् 'उक्कोसेणं' इत्यादि, यदिह पूर्वभवस्यान्तिमान्तर्मुहूर्त्तं तत्पल्योपमस्यासंख्येयभागे एव सन्निवेश्य प्रकृष्टमिति न भेदेन कथितमिति भावः। 'एवं ठिईए वि' एवं भवस्थितिकालवदेव स्थितावपि ज्ञातव्यम्। इति। 'एवं तिसु उद्देसएसु' एवं त्रिष्वपि प्रथमतृतीयपञ्चमेपूद्देशकत्रयेषु नवरमित्यादिना कथितं वैलक्षण्यं ज्ञातव्यम्। 'सेसं नवरमित्यादिना यद्वैलक्ष्यं दर्शितं तदतिगिक्तं सर्वं प्रथम शतवदेव ज्ञातव्यम्, इहापि एकादशेद्देशकाः

ख्यात वे' भाग अधिक दश सागरोपम का है। यह उत्कृष्ट हाल पांचवीं धूमप्रभा नरक पृथिवी के ऊपर के प्रतर की अपेक्षा से कहा गया है। क्यों कि यहां पर उत्कृष्ट आयु पल्योपम के असंख्यात वे' भाग से अधिक दश सागरोपम की है वहां नीललेश्या है। यहां जो पूर्व भव का अन्तिम अन्तर्मुहूर्त्त गणना में नहीं आया है उसका कारण उसका पल्योपम के असंख्यात वे' भाग में समाविष्ट कर लेना है। 'एवं ठिई ए वि' अवस्थान काल के जैसी ही भवस्थिति यहां है। 'एवं तिसु उद्देसएसु' 'नवरम्' पद से जो अवस्थान काल में एवं भवस्थिति में यह भिन्नता कृष्णलेश्याशत की अपेक्षा प्रकट की गई है सो ऐसी ही भिन्नता इनकी प्रथम तृतीय और पञ्चम इन तीन उद्देशकों में भी जाननी चाहिये। 'सेसं त चेव' वाकी का और सब कथन प्रथम शत के ही जैसा है। यहां पर भी पूर्व के जैसे ११ उद्देशक हैं और इन

उत्कृष्टकाण पायमी धूमप्रभा नरक पृथ्वीना उपरना प्रतरनी अपेक्षथी कडेल छे. कैम के त्यां उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपमना असंख्यातमा भागथी वधारे दश सागरोपनुं छे. त्यां नीललेश्या छे. अडिया ने पूर्वभवतु छेदुंअंतर्मुहूर्त्त गणनामा आवेल नथी. तेनुं कारण तेना पल्योपमना असंख्यातमा भागमां समावेश करी लेवानु छे.

'एवं ठिईए वि' अवस्थान काणमां कक्षा प्रभावेतुं न भवस्थितितुं कथन कडेल छे 'एवं तिसु उद्देसएसु' 'नवरम्' पदथी ने अवस्थान काणमां अने भवस्थितिमां आ भिन्नपणु दृष्युलेश्या शतकनी अपेक्षाथी प्रगट करेल छे अने अण पभावेतुं भिन्नपणु तेना पडेला, त्रील, अने पायमा आ त्रणु उद्देशाओमां पणु समणुपुं. सेसं तं चेव' णाडीतुं णीणु सधणु कथन पडेला शतकना कथन प्रभावे न छे अडियां पणु पडेला प्रभावे ११ अगियार उद्देशाओ छे. अने ते णमां आलापडेना प्रकार पणु पडेला कक्षा प्रभावेना न छे,

पूर्वदेव ज्ञातव्याः सर्वत्राऽऽपकारः पूर्वदेवोदनीयः 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापाळापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-
वालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
-पूज्यश्री घासिलालव्रतिविरचितायां श्री "भग-
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चत्वारिंशत्तमे शतके
तृतीयं नीलछेद्य संज्ञि महायुगम
शतं समाप्तम् ॥४०-३॥

सब में आलाप प्रकार भी पूर्वके ही जैसा है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आपका यह सब कथन सर्वथा सत्य ही २ इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपस्ये आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । ४०।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चालीसवें शतक का
तृतीय नीलछेद्य संज्ञि महायुगम शत समाप्त ॥४०-३॥

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं आ विषय संभंधी सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे भगवन् आप देवानुप्रिये कहेला आ सधणु कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु उड़ीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वंदना करी तेणेने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थका.

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना आणीसमा शतकसां त्रीणु नीलछेद्यावाणुं

संज्ञा महायुगम शतक समाप्त ॥४०-३॥



‘अह चउत्थ सन्निमहाजुग्मसयं’

शूलम्—एवं काउलेस्ससयं वि । नवरं संचिट्टणा जहन्नेणं
एक्कं समयं, उक्कोसेणं तिल्लि सागरोवसाइं पलिओवसस्स
असंखेज्जइभागमवभहिआइं । एवं ठिईए वि, एवं तिरु वि
उद्देसएसु सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ॥

चत्तालीसइमे सए चउत्थं सन्निमहाजुग्मसयं समत्तं ॥४०—४॥

छाया—एवं कापोतलेइयशतमपि । नवरं संस्थाना जघन्येनैकं ममयम् उत्-
कर्षेण त्रीणि सागरोपनाणि पल्लयोदगस्वासंख्येयधानाभ्यधिकानि एवं स्थिता-
वपि । एवं त्रिष्वपि उद्देशकेषु, शेषं तदेव ! तदेतं भवन्ति । तदेवं भवन्ति । इति ।

॥ इति चत्वारिंशत्तमे शतके चतुर्थं संक्षिप्तमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०॥४॥

टीका—‘एवं काउलेस्ससयं वि’ एवं यथा कृष्णलेइयशतं कथितं तथैव
कापोतलेइयशतमपि वक्तव्यम् । अत्रापि पूर्ववदेव औघिकप्रथमसमयाचारभ्य
चरमाचरमसमयपर्यन्ता एकादशोद्देशका अपि वक्तव्याः । केवलं पूर्वापेक्षयाऽस्य
शतस्य यद्वैलक्षण्यं तददर्शयति—‘नवरं’ इत्यादिना, ‘नवरं संचिट्टणा जहन्नेणं एक्कं

शतक ४० चतुर्थं संक्षिप्तमहायुग्म शत

‘एवं काउलेस्ससयं वि-नवरं संचिट्टणा’ इत्यादि

टीकार्थ—जैसा कृष्णलेइयाघालों के सम्बन्ध में पूर्व शत में कहा
गया है उसी प्रकार से कापोतलेइयाघालों के सम्बन्ध में भी यह शत
कह लेना चाहिये । वहाँ पर भी पूर्व के जैसे औघिक प्रथम समय आदि से
लेकर चरमाचरम समय तक ११ उद्देशक हैं । परन्तु जो नित्त वा पूर्व की
अपेक्षा इस शत में है वह ‘नवरं संचिट्टणा जहन्नेणं एक्कं समय
उक्कोसेणं तिल्लि सागरोवसाइं पलिओवसरत्त असंखेज्जइतागमवभ-

येथा सन्नि महायुग्म शतकेना प्रारंभ—

‘एव काउलेस्ससयं वि नवरं संचिट्टणा’ इत्यादि

टीकार्थ—कृष्णलेइयावाणाओना सम्बन्धमां पूर्वशतकमां उद्देवामां आवेद
छे, ओज प्रभाणे कापोतलेइयावाणाओना सम्बन्धमा पण्ण आ शतक उद्देवु
नेधओ अधिया पडेदां उद्देवा प्रभाणे औघिक प्रथम समय विजेरेथी लधने
यरमा यरम समय सुधी ११ अजियार उद्देशाओ थाय छे. परंतु ने नित्तपाणुं
पडेदा शतके उन्ता आ उधनमा आवे छे ते ‘नवरं संचिट्टणा जहन्नेणं

समयं' संस्थाना-अवस्थितिकालो जघन्येनैकं समयम् 'उक्कोसेणं तिन्नि सागरो-
वमाइं पल्लिओवमस्स असंखेज्जइभागमव्वहियाइं' उत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि
पल्योपमस्यासंख्येयभागाभ्यधिकानि इदं तु कथनं तृतीयपृथिव्या उपरितन
प्रस्तटस्थितिमाश्रित्य तृतीय पृथिव्या उपरितनप्रस्तटे पल्योपमस्यासंख्येयभागा-
धिकानि त्रीणि सागरोपमाण्यायुर्भवतीति पूर्वभवान्तिमान्तमुहूर्त्तं तु पार्थक्येन
न कथितं तादृशान्तमुहूर्त्तस्य पल्योपमासंख्येयभाग एव सभादिष्टत्वादिति । 'एवं
ठिईए वि' एवं स्थितावपि स्थितिरपि जघन्येन एकममयात्मिका उत्कर्षेण पल्यो-
पमरयासंख्येयभागाधिका त्रिसागरोपमप्रमाणैव ज्ञातव्या इति । 'एवं तिसु वि-
उद्देसएसु' एवं त्रिष्वपि प्रथमतृतीयपञ्चमेषु देशकेषु अवस्थानकालस्थितिकालौ
जघन्योत्कृष्टाभ्यां क्रमशः कथितप्रकारेण समयमात्रः, पल्योपमासंख्येयभागाभ्य-

हियाइ' इस सूत्र पाठ द्वारा सूत्रकार प्रकट करते हैं—यहां अवस्थान काल
जघन्य से एक समय का है और उत्कृष्ट से पल्योपम के असंख्यातवे'
भाग से अधिक तीन सागरोपम का है । यह कथन तृतीय पृथिवी के
उपरितन प्रस्तट की स्थिति को लेकर कहा गया है । क्योंकि यहां पर
पल्योपमके असंख्यातवे' भाग से अधिक तीन सागरोपम की स्थिति है ।
यहां पर भी पूर्वभव अन्तमुहूर्त्त पृथक् रूप से नहीं कहा गया है क्योंकि
इसका समावेश पल्योपम के असंख्यातवे' भागमें कहा है । 'एवं ठिईए
वि' उसी के जैसी स्थिति भी है । अर्थात् जघन्य स्थिति एक समय की
और उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यात वे' भाग से अधिक तीन
सागरोपम की है । 'एवं तिसु वि उद्देसएसु' इसी प्रकार से अवस्थान
काल और स्थितिकाल जघन्य और उत्कृष्ट प्रथम, तृतीय और पंचम

एककं समयं उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं पल्लियोवमस्स असंखेज्जइभागमव्व-
हियाइं' आ सूत्रपाठ द्वारा सूत्रकारे प्रकट करेला छे. अहियां अवस्थानकाण
जघन्यथी ओक समयने छे, अने उत्कृष्टथी पल्योपमना असंख्याता भागथी
वधारे त्रण सागरोपमने छे. आ कथन त्रीण पृथ्वीना उपरना प्रस्तटनी
स्थितिने लधने कहेल छे. केम के—अहियां पल्योपमना असंख्यातमा भागथी
वधारे त्रण सागरोपमनी स्थिति छे. अहियां पण पूर्वलवने अंतमुहूर्त्त
अलगइपथी कहेल नथी केम के तेना सभावेश पल्योपमना असंख्यातमा
भागमां कहेल छे. 'एवं ठिईए वि' अने स्थिति पण तेना प्रमाणे न छे.
अर्थात् जघन्य स्थिति ओक समयनी कहेल छे. अने उत्कृष्ट स्थिति पल्योपमना
असंख्यातमा भागथी वधारे त्रण सागरोपमनी छे. 'एवं तिसु वि उद्देसएसु'
आ न प्रमाणे अवस्थानकाण अने स्थितिकाण जघन्य अने उत्कृष्टथी पडेला,

धिक त्रिसागरोपपप्रमाणश्चेति ज्ञातव्यौ । 'सेसं तं चेव' शेषं - तदतिरिक्तं सर्वम्
एषुदेशकत्रितयेषु तथा शेषाष्टोदेशकेषु प्रथमशतवदेव ज्ञातव्यमिति । अत्रापि पूर्व-
वदेवैकादशोदेशका ज्ञातव्या इति । 'सेवं भंते । सेवं भंते त्ति तदेवं भदन्त !
तदेवं भदन्त ! इति ।

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके चतुर्थं संज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०॥४॥

॥ 'अहं पंचमं संज्ञिमहायुग्मसयं' ॥

मूलम्—एवं तेउलेस्सेसु वि सयं । नवरं संचित्ठुणा जहन्नेणं
एककं समयं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखे-
उज्जइभागसठभहियाइं । एवं ठिईएसु वि । नवरं नो सन्नोवउत्ता वा ।
एवं तिसुवि उदेसएसु सेसं तं चेव । सेवं भंते सेवं भंते ! त्ति । ४०-५।

इन उद्देशकों का भी है ऐसा जानना चाहिये । 'सेसं तं चेव' पाक्षीका
और सच कथन इन ३ उद्देशकों में एवं अवशिष्ट आठ उद्देशकों में
प्रथम शतक के जैसा ही जानना चाहिये । यहाँ पर भी पूर्व के जैसे ही
११ उद्देशक हैं । 'सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने
यह कहा है वह सच कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर
गौतमस्वामीने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना
नमस्कार कर फिर वे गौतम संघम और तप से आत्मा को भावित
करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये॥

४० वे शतक में यह चतुर्थं संज्ञि महायुग्म शत समाप्त ॥४०-४॥

नील, अने पांचमा उद्देशाओमां पणु छे तेम समजणुं 'सेसं तं चेव' ते
शिवाय पाक्षीतुं पीणु सधणुं कथन आ उद्देशाभां अने पाक्षीना आठ उद्देशाभां
पडेला क्हा प्रभाणु ११ अगिथार उद्देशाओ क्हा छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रभाणु आ
विषयमां कडेला छे ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. छे लगवन् आप
देवानुप्रियणुं आ विषय संणधीतुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ
प्रभाणु क्हीने गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वदना करी तेओने नमस्कार कर्या
पंदना नमस्कार करीने ते पछी संघम अने तपधी पोताना आत्माने लावित
करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया ॥४०॥५॥

॥आणीसमा शतकमां आ योथुं संज्ञिमहायुग्म नामणुं शतक समाप्त ॥४०-४॥

छाया—एवं तेजोलेइयेष्वपि शतम् । नवरं संस्थाना जघन्येन एकं समयम्
उत्कर्षेण द्वे सागरोपमे पल्योपमस्यासंख्येयभावाभ्यधिके । एवं स्थितावपि ।
नवरं नो संज्ञोपयुक्ता वा । एवं त्रिष्वपि उद्देशकेषु शेषं तदेव । तदेवं भदन्त !
तदेव भदन्त ! इति ॥४०॥५॥

टीका—‘एवं तेजोलेइयेषु वि सयं’ एवं तेजोलेइयेष्वपि शतम्, तेजोलेइयः
कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञिपञ्चिन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुन उत्पद्यन्ते किं, नैरयिकेभ्यो
यावदेवेभ्यो वा आगस्योत्पद्यन्ते ? इत्यादि समप्रमपि एतच्छतकीय प्रथमशत
मत्रावर्तनीयम् । प्रथमशतापेक्षया यद्वैलक्षण्यं तद्दर्शयति—‘नवरं’ इत्यादिना—
‘नवरं संचिद्वृणा जहन्नेणं एककं समयं’ नवरं संस्थाना—अवस्थितिकालो जघन्येन
एकं समयम्, ‘उक्कोसेणं दो सागरोवमाहं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमव्वहि-
याइ’ उत्कर्षेण द्वे सागरोपमे पल्योपमस्यासंख्येयभावाभ्यधिके पल्योपमा

ज्ञानक ४० पांचवां सञ्ज्ञि महायुग्म शत

‘एवं तेजोलेइयेषु वि सयं’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! कृतयुग्म कृतयुग्म शशिप्रमित तेजोलेइयावाले
संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीव तिस्र स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
क्यावे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में
से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि रूप से सम्पूर्ण प्रथम शत इसी
४० वें ज्ञानक या सूत्रों का लेना गान्धर्व परन्तु यहाँ जो प्रथम शत
की अपेक्षा कथन से अन्तर है, उसे ‘नवरं संचिद्वृणा जहन्नेणं एककं
समयं उक्कोसेणं दो सागरोवमाहं, पलिओवमस्स असंखेज्जइभाग
मव्वहियाइ’ सूत्रकार ने इस सूत्रपाठ द्वारा प्रदर्शित किया है—यहाँ

॥पाचमा सञ्ज्ञी महायुग्म शतकने प्रारंभ—

‘एवं तेजोलेइयेषु वि सयं’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् कृतयुग्म कृतयुग्म शशिप्रमात्युवाणा तेजोलेइयावाणा
संज्ञि पञ्चेन्द्रिय एवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ
नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्यथेनिकेमांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ विगेरे प्रकारथी आ आणीसमा
शतकतुं पडेकुं शतक संपूणुं रीते अडियां कडेवुं जेधं ओ. परंतु ते पडेला
शतकना कथन करतां अडियां जे विशेषपणुं छे, ते ‘नवरं संचिद्वृणा जहन्नेणं
एककं समयं उक्कोसेणं दो सागरोवमाहं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमव्वहियाइ’
सूत्रकारे आ सूत्रपाठ द्वारा प्रगट करेले छे. अडियां अवस्थान काण व्यन्यथी

संख्येयभागाधिक सागरद्वयात्मकावस्थान काल कथन मीशानदेव परमायुराश्रित्य ज्ञातव्यमिति । 'एवं ठिईए वि' एवं स्थितावपि एवमायुषः स्थितिरपि जघन्यो उत्कृष्टाभ्यामेकसमयप्रमाणा पत्योपमासंख्येयभागाभ्यधिकद्विसागरोपमप्रमाणा च भवतीति भावः । 'नवरं नोसन्नोवउत्ता वा' नवरं तैजोलेश्य संज्ञिपञ्चेन्द्रिया नो संज्ञीपयुक्ता वा भवन्तीति । 'एवं तिसु वि उद्देशसु' एवमेव त्रिष्वपि प्रथम तृतीय पञ्चमोद्देशकेष्वपि अवस्थिति स्थित्यादे ज्ञातव्यम् 'सैसं तं चेव' शेष-तदतिरिक्तं सर्वं त्रिपूर्वोद्देशकेषु शेषाष्टोद्देशकेषु च तदेव प्रथमशतकोक्तमेव ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके पंचमं सञ्ज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०१५॥

अवस्थान काल जघन्य से एक समय का और उत्कृष्ट से पत्योपम के असंख्यातवे भाग से अधिक दो सागरोपम का है ऐसे अवस्थान काल का कथन यहां तैजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति को लेकर कहा गया है । क्यों कि ईशानदेवलोक के देवों की उत्कृष्ट आयु पत्योपम के असंख्यातवे भाग से अधिक दो सागरोपम की है । 'एवं ठिईए वि' स्थितिकाल भी अवस्थान काल के जैसा ही है । 'नवरं नो सन्नोवउत्ता' ये तैजोलेश्यावाले संज्ञि पंचेन्द्रिय जीव नो संज्ञीपयुक्त भी होते हैं । 'एवं तिसु वि उद्देशसु' इसी प्रकार से अवस्थानकाल और स्थिति काल आदि का कथन प्रथम, तृतीय और पंचम इन तीन उद्देशकों में भी कर लेना चाहिये 'सैसं तं चेव' इनके अतिरिक्त और सब कथन अवशिष्ट आठ उद्देशकों में ३ तीन और ८-११ उद्देशों में प्रथम शतक में जैसा कहा गया है वैसा ही है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है ।

એક સમયનો અને ઉત્કૃષ્ટથી પત્યોપમના અસંખ્યાતમા ભાગથી વધારે એ સાગરોપમનો છે. એવા અવસ્થાન કાળનું કથન અહિયાં તૈજોલેશ્યાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને લઈને કહેલ છે. કેમકે-ઈશાન દેવમાં દેવોનું ઉત્કૃષ્ટ આયુ પત્યો-પમના અસંખ્યાત ભાગથી વધારે એ સાગરોપમનું છે. 'एवं ठिईए वि' સ્થિતિકાળ પણ અવસ્થાનકાળ પ્રમાણે જ છે. 'एवं तिसुवि उद्देशसु' આજ પ્રમાણે અવસ્થાનકાળ અને સ્થિતિકાળનું કથન પહેલા, ત્રીજા, અને પાંચમા આ ત્રણ ઉદ્દેશાઓમાં પણ કરી લેવું જોઈએ. આ કથન શિવાય બીજા સઘળું કથન બાકીના આઠ ઉદ્દેશાઓમાં ૩ અને ૮-૧૧ ઉદ્દેશાઓમાં પહેલા શતકમાં જે પ્રમાણે કહેલ છે, એજ પ્રમાણે છે.

॥ 'अह छटं महाजुम्म सयं' ॥

मूलम्—जहा तेउलेस्सा सयं तथा पम्हलेस्सासयं पि ।
नवरं संचिट्टणा जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं दस सागरो-
वसाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं । एवं ठिईए वि । नवरं अंतो-
मुहुत्तं न भन्नइ । सैसं तं चैव । एवं एएसु पंचसु सएसु
जहा कणहलेस्सासए गसओ तथा नेयव्वो जाव अणंतखुत्तो ।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

॥ चत्तालीसइमे सए छटं महाजुम्मसयं समत्तं ॥

छाया—यथा तेजोलेश्याशतं तथा पद्मलेश्याशतमपि । नवरं संस्थाना
जघन्येनैकं समयम् उत्कर्षेण दश सागरोपमाणि अन्तर्मुहूर्ताभ्यधिकानि । एवं स्थिता-
वपि नवरमन्तर्मुहूर्तं न भण्यते शेषं तदेव । एवमेतेषु पञ्चसु शतेषु यथा कृष्ण-
लेश्याशते गमकं स्तथा नेतव्यो यावदन्तकृत्वः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके षष्ठं संज्ञिमहायुगप्रशतं समाप्तम् ॥४०॥६॥

टीका—'जहा तेउलेस्सासयं तथा पम्हलेस्सासयं पि' यथा तेजोलेश्या

इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया ।
वन्दना नमस्कार कर फिर वे संघस्य और तप से आत्मा को भावित
करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥४० वे शतक में यह पाँचवां संज्ञि महायुगप्रशत समाप्त हुआ ॥४०-५॥

शतक ४० छट्टा महायुग शत

'जहा तेउलेस्सासयं तथा पम्हलेस्सासयं पि' इत्यादि ४०-६॥

टीकार्थ—जिस प्रकार ११ उद्देशकों से समन्वित तेजोलेश्या शत

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' के लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
ने प्रभाण्णे कडेल छे, ते सधणुं कथन सर्वाथा सत्य छे. के लगवन् आप
देवानुप्रियतुं सधणुं कथन सर्वाथा सत्य न छे. आ प्रभाण्णे कडीने गौतमस्वामीणे
प्रभुश्रीने वंदना करी अने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर
विराजमान थया.

॥आणीसभा शतकमां आ पांचमुं संज्ञि महायुग नामतु' शतक समाप्ता॥

॥४०-५॥

छट्टा महायुग शतकने प्रारंभ—

'जहा तेउलेस्सासयं तथा पम्हलेस्सासयं पि' इत्यादि

ने प्रभाण्णे अगियार उद्देशाओवाणुं तेजोलेश्या शतक कडेल छे, अने

શતમેકાદશોદેશકસંયુક્તં મણિતં તથા તેનૈવ પ્રકારેણ પદ્મલેશ્યાશતમપિ એકા-
દશોદેશકસંયુક્તં મણિતવ્યમ્ । એવમેવ તેજોલેશ્યાશતે યત્ યત્-યથા-યથા
કથિતં તત્ તત્ સર્વં તેનૈવ રૂપેણાત્ર પદ્મલેશ્યાશતૈઽપિ જ્ઞાતવ્યમિતિ । તેજો-
લેશ્યશકાપેક્ષયા યદ્વૈલક્ષણ્યં તદ્દર્શયતિ-‘નવરં’ ઇત્યાદિના ‘નવરં સંચિદ્વળા જહ-
ન્નેણં એકકં સમયં’ નવરં સંસ્થાના-તેપામવરિથતિકાલો જઘન્યેન એકં સમયમ્-
એકસમયાત્મકઃ ‘એકકોસેણં દસસાગરોવમાહં અંતોમુહુત્તમવ્મહિયાહં’ ઉત્કૃષ્ટેણાવ-
સ્થિતિકાલો દસસાગરોપમાપ્યન્તર્મુહૂર્ત્તધ્વધિકાનિ । ઉત્કૃષ્ટેણ દસ સાગરોપ-

કહા ગયા છે । ઊભી પ્રકાર સે યહ પદ્મલેશ્યાશત ઓ એકાદશ ઉદ્દેશકો
સે સમન્વિત કરકે કહ લેના યાહિયે । હસ પ્રકાર તેજોલેશ્યાશત મે
જેસા જેસા કહા ગયા છે વેસા વેસા પદ્મલેશ્યા શત મે ઓ કહના
યાહિયે । પરન્તુ જો ઊસકી અપેક્ષા યહાં મિત્રતા છે ઊસે સૂત્રકારને
‘નવરં સંચિદ્વળા જહન્નેણં એકકં સમયં એકકોસેણં દસ સાગરોવમાહં’
અંતોમુહુત્તમવ્મહિયાહં’ હસ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ ક્રિયા છે-યહાં
અવસ્થાન કાલ જઘન્ય સે એક સમય કા ઓર ઉત્કૃષ્ટ એક અન્તર્મુહૂર્ત્ત
અધિક દસ સાગરોપમ કા છે । ઉત્કૃષ્ટ સે અવસ્થાન કાલ જો હમ
પ્રમાણ કા કહા ગયા છે વહ વ્રહ્મલોક કે દેવો કી આયુ કો આશ્રિત
કર કે કહા ગયા છે । વ્રહ્મલોક મે પદ્મલેશ્યા હોતી છે ઓર વહાં હતની
આયુ હોતી છે । યહાં જો હસે એક અન્તર્મુહૂર્ત્ત કો વિશેષિત ક્રિયા છે
વહ પૂર્વમવ કે અન્તિમ અન્તર્મુહૂર્ત્ત કો આશ્રિત કર કે ક્રિયા છે ।

પ્રમાણે આ પદ્મલેશ્યા શતક પશુ અગિયાર ઉદ્દેશ્યાઓથી યુક્ત કહેવુ નેઈએ
આ રીતે તેજોલેશ્યા શતકમાં જે જે રીતથી કહેવામાં આવેલ છે. એજ
પ્રમાણે આ પદ્મલેશ્યા શતકમાં પશુ કહેવું નેઈએ. પરંતુ તે કથન કરતાં આ
કથનમાં જે વિશેષપણ છે તે સૂત્રકારે ‘નવરં સંચિદ્વળા જહન્નેણ એકકં સમયં’
એકકોસેણં દસસાગરોવમાહં અંતોમુહુત્તમવ્મહિયાહં’ આ સૂત્ર પાઠ દ્વારા પ્રગટ કરેલ
છે અહિયાં અવસ્થાનકાળ રહેવા નો સમય જઘન્યથી એક સમયનો અને ઉત્કૃષ્ટથી
એક અંતર્મુહૂર્ત્ત દસ સાગરોપમનો છે ઉત્કૃષ્ટથી અવસ્થાન કાળનું જે આ
પ્રમાણ કહેલ છે, તે બ્રહ્મલોકના દેવોની આયુષ્યનો આશ્રય કરીને કહેલ છે.
બ્રહ્મલોકમાં પદ્મલેશ્યા હોય છે અને ત્યા તે પ્રમાણેનું આયુષ્ય હોય છે.
અહિયાં જે તેને એક અંતર્મુહૂર્ત્તનું વિશેષણ કહેલ છે તે પૂર્વમવના છેલ્લા
અંતર્મુહૂર્ત્તનો આશ્રય કરીને કહેલ છે ‘જવ ઠિઈણ વિ’ સ્થિતિકાળ પશુ
અવસ્થાન કાળ પ્રમાણેનો જ છે. ‘નવરં અંતોમુહુત્તન મન્નદ’ પરંતુ સ્થિતિકાળના

माणीत्यादि यत् कथितं तद्ब्रह्मलोकदेवानामायुराश्रित्येति ज्ञातव्यम्, ब्रह्मलोके हि पद्मलेश्या भवति एतावदायुश्च भवति अन्तर्मुहूर्त्तं च याक्तुं भयावसानवर्त्तीति 'एवं ठिईए वि' एवं स्थितावपि स्थितिरपि जघन्योत्कर्षाभ्यामेतावत् प्रमाणैव । 'नवरं अंतोमुहुत्तं न भन्नइ' नवरं केवलं स्थितौ अन्तर्मुहूर्त्तं न भण्यते दशसागरोपममात्रमेव वक्तव्यमिति । 'सेसं तं चेव' शेषं-नवरमित्यादिना यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वं तेजोलेश्यावदेव वक्तव्यमिति । 'एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्ठलेस्साए गमओ तथा नेयव्वो' एतेषु पञ्चसु शतेषु कृष्णनीलरूपोत्तेजः पद्मलेश्याशतेषु यथा कृष्णलेश्याशते गमकस्तथैव गमको नेतव्यः सर्वाण्यपि एतानि शतानि कृष्णलेश्याशतवदेव ज्ञातव्यानि, इति । एकादश एकादशौधिकाद्युद्देशयुक्तानि । कियत्प-

'एव ठिईए वि' स्थितिकाल भी अवस्थानकाल के जैसा ही है । 'नवरं अंतोमुहुत्तं न भन्नइ' परन्तु स्थितिकाल के कथन में अन्तर्मुहूर्त्त नहीं है अतः यहाँ स्थितिकाल केवल दश सागरोपम का ही है । एक अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दश सागरोपम का नहीं है । 'सेसं तं चेव' इन के सिवाय-अवस्थान और स्थिति काल के विना और सब कथन यहाँ तेजोलेश्या के कथन के जैसा ही है । 'एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्ठलेस्साए गमओ तथा नेयव्वो' इस प्रकार इन पांच शतों में कृष्ण, नील, कापोत, तेज, और पद्मलेश्या शतों में-कृष्णलेश्या शत में जैसा पाठ कहा गया है उसी प्रकार से पाठ कहना चाहिये । ये सब शत ११-११ उद्देशकों में से युक्त हैं । कृष्णलेश्या शत के जैसे समस्त प्राण, यावत् समस्त सत्व कृष्णलेश्यावाले जीव रूप से पहिले यावत् अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं । यहाँ तक का कथन

कथनमा अंतर्मुहूर्त्तं हेतुं नथी. तेथी अडियां स्थितिकाण केवण दस सागरोपमनो न्ने अडे अंतर्मुहूर्त्तं अधिक दस सागरोपमनो नथी 'सेसं तं चेव' आ कथन सिवाय अवस्थान अने स्थितिकाणना कथन सिवाय आकीनुं सधणुं कथन अडियां तेजोलेश्याना कथन प्रमाणे न्ने अडे. 'एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्ठलेस्साए गमओ तथा नेयव्वो' आ रीते आ पांच शतकेमा अडेके के कृष्ण, नील, कापोत तेजे अने पञ्च लेश्यावाणा शतकेमा कृष्णलेश्यावाणा शतकेमा न्ने प्रमाणे कडेल अडे, अन्ने प्रकारनुं कथन सधणी लेश्याओना संअधमां कडेपुं न्नेअडे आ अथा शतके ११-११ अगियार अगियार उद्देशाओवाणा थांअडे. कृष्णलेश्यावाणा शतकेमा पाठ सधणा आओ यावत् सधणा सत्तो कृष्णलेश्यावाणा अन्ने पञ्चाथी पडेलां यावत् अनन्तवार उत्पन्न थर्धं युक्त्या अडे. आ कथन सुधीनुं कथन अडियां कडेपुं न्नेअडे.

र्यन्तं कृष्णलेखाशताज्ञातव्यं तत्राह—‘जाव’ इत्यादि, ‘जाव अणंतखुत्तो’ याव-
दनन्तकृत्वः उपपातदारभ्य अथ भदन्त ! सर्वे प्राणाः यावत्सर्वे सत्त्वाः कृष्णादि-
लेख्यतया समुत्पन्नपूर्वाः किम् ? गौतम ! सर्वे प्राणाः यावत्सर्वे सत्त्वाः असकृत्
अनन्तकृत्वो वा समुत्पन्नपूर्वाः कृष्णलेखादि लेख्यतया, एतत्पर्यन्तं ज्ञातव्यमिति
‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके षष्ठं संक्षिप्तमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०॥६॥

॥ ‘अह सत्तमं सन्निमहाजुग्मसयं

मूलम्—सुक्कलेस्ससयं जहा ओहिसयं । नवरं संचिट्टुणा
ठिईय जहा कण्हलेस्ससए सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

चत्तालीसइमे सए सत्तमं सन्नि महाजुग्मसयं समत्तं ॥४०—७॥

छाया—शुक्ललेख्यशतं यथौघिकशतम् । नवरं संस्थाना स्थितिश्च यथा—
कृष्णलेख्यशते । शेषं तथैव यावदनन्तकृत्वः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके सप्तमं संक्षिप्तमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०॥७॥

यहां कहना ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आपने यह
कहा है वह सर्वथा सत्य ही हैं २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री
को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे
संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराज-
मान हो गये ।

४० वे शतक में यह छठा संक्षिप्त महायुग शत समाप्त हुआ ॥४०—६॥

शतक ४० सातवा संक्षिप्त महायुग शत

‘सुक्कलेस्ससयं जहा ओहिसयं’ इत्यादि०

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ से लगवन् आ विषयमां आप देवानुप्रिये
ने प्रमाद्येत्तुं कथन करेला छे, ते सद्यं कथन सर्वथा सत्य न छे, से लगवन्
आप देवानुप्रियेत्तुं सद्यं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाद्ये कहीने
गौतमस्वाभीजे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कथां वंदना नमस्कार करीने ते
पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
पर विशजमान थया. १२००॥

॥याणीसमां शतकमां छट्ठं संक्षिप्तमहायुगम शतक समाप्त ॥४०—६॥

सातमा संक्षिप्त महायुगम शतकने आरंभ—

‘सुक्कलेस्ससयं जहा ओहिसयं’ इत्यादि

ટીકા--'કૃતલેસસયં જહા ઔદ્ધિવસયં' શુકલલેશ્યશતં યથૌધિકશતમ્' પરમયેવ ચાર્વારિશત્તમશતકસ્ય યદ્વ પ્રથમં શતં તત્ ઔધિકશતં તસ્મિન્ પ્રથમ-શતકે કૃતયુગમકૃતયુગમસંજ્ઞિપञ્ચેન્દ્રિયાણાં યેન રુપેણોત્પાતાદિકં કથિતં તેનૈવ રુપેણ ઉપપાતાદિકં યથાગ્નિરુપ્ય શુકલલેશ્યશતમપિ ભણિતવ્યમ્ । પ્રથમ શતા-પેક્ષયા યદ્દેલક્ષણ્યં તદ્દર્શયતિ 'નવરં' इत्यादिना--'नवरं संचिदृणा ठिईय जहा कणहलेससए' नवरं-केवलं संस्थानाऽत्र स्थितिकालः स्थितिरायुपो यथा कृष्णलेश्य-शते अवस्थितिकालो जघन्येन एकं समय मुत्कर्षेण त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि अन्त-मुद्गृहीभ्यधिकानि शुक्ललेश्यावस्थानमित्यर्थः । एतच्च पूर्वं भवगतान्तिमान्त-

ટીકાર્થ-જૈહા ઔધિક શત કહા ગયા હૈ વૈસો હી શુકલલેશ્યા શલે જીવો કે સમ્બન્ધ મેં મી કહ લેના ચાહિયે । ચાલીશ વેં શતક કા જો પ્રથમ શત હૈ હસકા નામ ઔધિક શત હૈ । હસ પ્રથમ શત મેં કૃતયુગમ કૃતયુગમ સંજ્ઞિ પञ્ચેન્દ્રિય જીવોં કા જિસ રુપ સે ઉત્પાદ આદિ કહા ગયા હૈ હસી રુપ સે કૃતયુગમ કૃતયુગમ રાશિપ્રમિત શુકલ-લેશ્યાવાલે હન સંજ્ઞિ પञ્ચેન્દ્રિય જીવોં કા મી હસ શત મેં ઉત્પાદ આદિ કહ લેના ચાહિયે । 'નવરં સંચિદૃણા ઠિઈં ય જહા કણહલેસસए' પરન્તુ હસ પ્રથમ શત કી અપેક્ષા હસ શુકલલેશ્ય શત મેં અવસ્થાન ઔર સ્થિતિ કો લેકર મિત્તતા હૈ । યહાં અવસ્થાન કાલ ઔર સ્થિતિકાલ કૃષ્ણલેશ્ય શત મેં જૈસા કહા ગયા હૈ વૈસા હી હૈ । હસ પ્રકાર અવસ્થાન કાલ યહાં પર જઘન્ય સે ૧ સમય કા ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે અન્તમુદ્ગૃહીત

ટીકાર્થ-ઔ ધિક શતકમાં જે પ્રમાણેનું કથન કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણેનું કથન શુકલલેશ્યાવાળા હોવેના સમ્બન્ધમાં પણ શતક કહેવું બેઈએ. ચાળીસમા શતકનું જે પહેલું શતક છે, તેનું નામ ઔધિક શતક કહેલ છે. તે પહેલા શતકમાં કૃતયુગમ કૃતયુગમ સંજ્ઞિ પञ્ચેન્દ્રિય હોવેનો ઉત્પાદ જે પ્રમાણે કહેલ છે, એજ પ્રમાણે કૃતયુગમ કૃતયુગમ રાશિપ્રમાણવાળા શુકલ-લેશ્યાવાળા આ સંજ્ઞિ પञ્ચેન્દ્રિય હોવેના આ શતકમાં ઉત્પાદ વિગેરે કહેવા બેઈએ. 'નવરં સંચિદૃણા ઠિઈં ય જહા કણહલેસસए' પરંતુ તે પહેલાં શતકની અપેક્ષાએ આ શુકલલેશ્યા શતકમાં અવસ્થાન અને સ્થિતિ સંબંધી જૂદાપણું કહેલ છે. અહિયાં અવસ્થાન કાળ અને સ્થિતિ કાળ કૃષ્ણલેશ્યાશતકમાં જે પ્રમાણે કહેલ છે, એજ પ્રમાણે છે. આ રીતે અહિયાં અવસ્થાનકાળ જઘન્યથી ૧ એક સમયનો અને ઉત્કૃષ્ટથી અન્તમુદ્ગૃહીત વધારે ૩૩ તેત્રીસ સાગરોપમનો

मुहूर्त्तम्, अनुत्तरविमानदेवायुष आश्रित्य विज्ञेयम् स्थितिस्तु त्रयस्त्रिंशत्तापते
पमाणीति । अत्र 'अन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि' इति न वक्तव्यमिति 'सेव' तदेव जाव
अंगंतखुत्तो' शेषं नपरमित्यादिना यत् कथितं तदभिरिक्तं सर्वं परिमाणादिकं

अधिक ३३ सागरोपम यहाँ उत्कृष्ट से जो इतना काल कहा गया है
वह पूर्वभव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त्त को लेकर तो अन्तर्मुहूर्त्त अधिक
कहा है और अनुत्तर देवों की उत्कृष्ट आयु ३३ सागरोपम की होती
है और वहीं शुक्ललेख्या होती है । इस आद को आश्रित कर ३३
सागरोपम काल कहा है । स्थिति के सम्बन्ध से भी ऐसा ही कथन है ।
परन्तु ३३ सागरोपम को यहाँ 'एक अन्तर्मुहूर्त्त से अधिक' इस विशेष-
ण से विशेषित नहीं किया है । 'सेव' तदेव जाव अंगंतखुत्तो' वाक्य
का और सब उत्पाद आदि का कथन प्रथम शत के जैसा ही है । इस
प्रकार यहाँ प्रथमशत का कथन 'सर्वस्त प्राण यावत् स्यरत सर्व
कृतयुग्म कृतयुग्म राशि प्रमित शुक्ललेख्यावाले संज्ञि पंचेन्द्रिय जीव
रूप से अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं' इस अन्तिम पाठ तक का यहाँ
पर कथन करना चाहिये । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा
आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर

कहेल छे. अहियां उत्कृष्टथी ने आटलो काण कहेल छे, ते पूर्वभवना छेला
अंतर्मुहूर्त्त ने लघने अंतर्मुहूर्त्त अधिक कहेल छे. अने अनुत्तर देवानुं
उत्कृष्ट आयुष्य उ३ सागरोपमनु होय छे अने शुक्ललेख्यानुं आयुष्य पणु
अेण प्रभाणु होय छे. आ लावने आश्रय करीने उ३ तेन्नीस सागरोपमकाण
कहेल छे. स्थितिना संबंधमां पणु अेण प्रभाणुनुं कथन समन्तुं परंतु उ३
तेन्नीस सागरोपमने अहियां अेक अंतर्मुहूर्त्तथी अधिक अेम कहेल नथी.
'सेव' तदेव जाव अंगंतखुत्तो' भाडीनुं पीणुं सधणुं अेटवे के उत्पाद विगेरे
संघधी कथन पडेला शतकमां कहा प्रभाणु छे. आ रीते अहियां पडेला
शतकनुं कथन सधणा प्राणु। यवत् सधणा सत्वे कृतयुग्म कृतयुग्म, राशि-
प्रभाणुवाणा शुक्ललेख्यावाणा संज्ञि पंचेन्द्रिय एव यणुथी अन तवार उत्पन्न
थध चुकेल छे, आ छेला पाठ सुधीनु कथन अहियां कहेलुं नोछअे.

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' छे लगवन् आ विषयमां आप देवानुप्रिये
ने प्रभाणु कहेल छे ते सधणु कथन सर्वथा सत्य छे छे लगवन् आप देवानुप्रियनु
सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणु कडीने गौतमस्वामीअे प्रलुघीने

तदेव प्रथमशतवदेव ज्ञातव्यं यावत् अनन्तकृत्वः । एतत्पर्यन्तं प्रथमशतमिहाध्ये-
त्वयमिति । सेवन् भंते ! सेवन् भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापक्रमविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री
“भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायाम् चत्वारिंशत्तमे शतके सप्तमं
संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् । ४०।७॥

गौतमने प्रभुश्री को वन्दना और नमस्कार क्रिया । वन्दना नमस्कार
कर फिर वे संघम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत,
“भगवतीसूत्र” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चालीसवें शतक का
सातवां संज्ञि महायुगम शत समाप्त ४०-७॥

वंदना करी तेआने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संघम
अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
णिराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना आणीसभा शतकेभां सातवुं शतके समाप्त ॥४०-७॥



‘अह अहमं सन्निमहाजुम्मसयं’ ॥

मूलम्—भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? जहा पढमं सयं तथा णेयव्वं भवसिद्धियाभिलावेणं । नवरं सव्वपाणा० णो इणट्टे समट्टे । सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! च्चि ॥

चत्तालीसइमे सए अट्टमं सन्निमहाजुम्मसयं समत्तं ॥४०-८॥

छाया—भवद्विककृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? यथा प्रथमं संज्ञिशतं तथा ज्ञातव्यं भवसिद्धिकाऽभिलाषेन । नवरं सर्वे प्राणाः० नायमर्थः समर्थः । ज्ञेयं तदेव । तदेव भदन्त ! २ इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके अष्टमं संज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥४०-८॥

टीका—‘भवसिद्धिरुडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ भवद्विक कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावदेवेभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते इति प्रश्नः । उत्तरमाह—अतिदेशद्वारेण—‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा पढमं सन्निमयं तथा नेयव्वं भवसिद्धिया-

शतक ४० आठवां संज्ञि महायुग्म शत

‘भवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पंचेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘जहा पढमं सन्निमयं तथा नेयव्वं भवसिद्धिय अभिलावेणं’ हे गौतम ! जिस प्रकार से

आठवां संज्ञि महायुग्म शतकने प्रारंभ—

‘भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—हे लगनन भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीवों का क्या स्थान विशेष थी आवीने उत्पन्न थाय छे ? थु तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्यथेनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो उत्तर आपतां प्रभुश्री अतिदेशथी कडे छे क—‘जहा पढमं सन्निमयं तथा नेयव्वं भवसिद्धिय अभिलावेणं’ छे गौतम ! ते प्रभाणे

भिलाषेण' यथा प्रथमं संज्ञितं तथा ज्ञातव्यम्, भवसिद्धिकाभिलाषेण एतस्य चत्वारिंशत्प्रथमशतकप्रथमशते संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामुपपातो येन रूपेण कथित स्तेनैव रूपेण भवसिद्धिकाभिलाषेण 'भवसिद्धिककृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु एवं रूपाभिलाषेण उपपातादि वर्णनीयः । अत्रापि एकादशोद्देशका वक्तव्याः । संज्ञिपञ्चेन्द्रियज्ञतापेक्षया यद्वैलक्षण्यं तददर्शयति—'नवरं' इत्यादि, 'नवरं सव्वपाणा, णो इणट्टे समट्टे' नवरं सर्वे प्राणाः० नायमर्थः समर्थः, हे भदन्त ! सर्वे प्राणा यावत् सर्वे सत्त्वाः किं भवसिद्धिककृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतया समुत्पन्नपूर्वाः, इति प्रश्नस्य प्रथमशते अनन्तकृत्वः समुत्पन्नपूर्वा इत्युत्तरं दत्तम्, इदं तु 'नायमर्थः समर्थः' सर्वे जीवाः नाम संज्ञिपञ्चेन्द्रियत्वे भवसिद्धिकतया समु-

इसी ४० वें शतकके प्रथम शतक में संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीवों का उपपात कहा गया है उसी प्रकार से भवसिद्धिक अभिलाष से—हे भदन्त ! भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीव 'इस रूप अभिलाष से—इनका भी उपपात आदि वर्णित कर लेना चाहिये । यहां पर भी ११ उद्देशक हैं । संज्ञि पञ्चेन्द्रिय शत की अपेक्षा जो इस शत में भिन्नता है वह 'नवरं सव्वे पाणा णो इणट्टे समट्टे' इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है—अर्थात् हे भदन्त ! समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व क्या कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय रूप से पहिले उत्पन्न हो चुके हैं ? हां, गौतम ! यावत् अनन्तवार वे इस रूप से उत्पन्न हो चुके हैं' ऐसा उत्तर प्रभुश्रीने कहा है । सो ऐसा उत्तर इस प्रश्न का यहां पर नहीं कहना । क्यों कि समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व यहां संज्ञि

आ आणीसभा शनकना पडेला शतकमां संज्ञि पञ्चेन्द्रिय लुवोना उपपात कडेल छे, ओण प्रमाणे लवसिद्धिक अभिलाषथी डे लागवन् ! लवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रिय लुवो आ प्रमाणेना अभिलाषथी तेओना उपपात विगेरेनुं वणुंन करी लेवुं जेधओ. अडियां ११ अगियार उद्देशाओ कडेल छे. ते 'नवरं सव्वे पाणा णो इणट्टे समट्टे' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट करवामां आवेल छे. अर्थात् डे लागवन् सधणा प्राणो यावत् सधणा सत्वो शुं लवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय पञ्चाथी पडेलां उत्पन्न थध युकेला छे ? हां गौतम ! यावत् अनन्तवार तेओ ओ इपथी उत्पन्न थध युकया छे. आ प्रमाणेना प्रश्नोत्तर प्रभुश्रीओ कडेल छे तो आ प्रमाणेना उत्तर अडियां कडेवानो नथी. केम डे—सधणा प्राणो यावत् सधणा सत्वो आ इपथी अनन्तवार उत्पन्न थया नथी. आ कथन शिवाय णाकीनुं सधणुं कथन पडेला शतक प्रमाणे न छे.

त्पक्षपूर्वा इत्युत्तरम् अत एतद् उभयोः शतयो वैलक्षण्यमिति । 'सेसं तदेव' शेषं
भयरमित्यनेन यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वं प्रथम शतवदेव ज्ञातव्यम् । 'सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके अष्टमं संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०८॥

॥ 'अह नवमं सन्निमहाजुम्मसयं' ॥

मूलम्—कृणहलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्नि-
पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं एएणं अभिलावेणं
जहा ओहियकणहलेस्ससयं सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

चत्तालीसइमे सए नवमं सन्निमहाजुम्मसयं समत्तं ॥४०-९॥

छाया—कृष्णलेश्य भवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु
भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते एवमेतेनाभिलापेन यथा औघिककृष्णलेश्यशतम् ।
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके नवमं संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०९॥

पंचेन्द्रिय में भवसिद्धिक रूप से अनन्तवार उत्पन्न नहीं हुए हैं ।
'सेसं तदेव' वाक्यी का और सब कथन प्रथम शतक के जैसा ही है ।
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आप का यह कथन सर्वथा
सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना एवं
नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से
आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥४० वें शतक में यह आठवां महायुगमशत समाप्त ४०-८॥

शतक नौवां महायुगमशत

'कृणहलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते !'

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रियतुं आ कथन
सर्वथा सत्य न्छे, हे भगवन् आप्तुं आ कथन सर्वथा सत्य न्छे, आ
प्रमाणे इहीने प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार करीने ते
पछी संयम अने तपधी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थान पर विराजमान थया.

॥याणीसमा शतकमां आ आठमुं मडायुगम शतक समाप्त ॥४०-८॥

नवमा मडायुगम शतकेना प्रारंभ--

'कृणहलेस्स भवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! इत्यादि

टीका—‘कण्ठलेस्स भवसिद्धि कृतयुगकृतयुग सन्निपंचिन्द्रियाणं भंते । कथो उत्पन्नजंति’ कृष्णलेश्ये भवसिद्धिक कृतयुगकृतयुग संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य यावद् देवेभ्यो वा आगत्ये-त्यादि प्रश्नः, उत्तरमाह—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिय कण्ठलेस्ससयं’ एवमेतेनाभिलापेन यथा औघिककृष्णलेश्यशतम् तत्र यथा कृष्णलेश्यानाद्युपपात्तादिको वर्णित स्तथैव कृष्णलेश्यभवसिद्धिक कृतयुगकृतयुग संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामपि उपपातो वक्तव्यः । एकादशोद्देशका अपि वक्तव्याः ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके नवमं संज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०१॥

टीकार्थ—हे भदन्त ! कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक कृतयुग कृत-युग संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिय कण्ठलेस्ससयं’ हे गौतम ! इस अभिलाप द्वारा जैसा कृष्णलेश्यावालों के सम्बन्ध में औघिक-कृष्ण-लेश्यशत कहा गया है वैसा ही यहां पर भी कह लेना चाहिये । औघिक कृष्णलेश्या शत यह ४० वें शतक का द्वितीयशत है । उस में कृष्ण-लेश्यावालों का उपपात आदि वर्णित हुआ है । सो उसी प्रकार से इस शत में भी कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक कृतयुग कृतयुग संज्ञि पञ्चेन्द्रियों के भी उपपात आदि का वर्णन कर लेना चाहिये । यहां

टीकार्थ—हे भगवन् कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिक कृतयुग कृतयुग संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय एवो कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेज्यो नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तियं यथोनिक्केमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—‘एवं एएणं अभिलावेणं जहा कण्ठलेस्ससयं’ हे गौतम ! आ अभिलाप द्वारा कृष्णलेश्यावाणाओना संभंधमां औघिक कृष्णलेश्याशतक कहेल छे, ओज प्रभाषे अहियां पण्ठ कहेवुं नेधंओ औघिक कृष्णलेश्याशतक ओ ४० याणीसमा शतकनुं भीगु शतक छे, तेमां कृष्णलेश्यावाणाओना उपपात आदिनुं वण्ठन करवामां आवेल छे, ओज प्रभाषे आ-शतकमां पण्ठ कृष्णलेश्यावाणा लव-सिद्धिक कृतयुग कृतयुग संज्ञि पञ्चेन्द्रियोना उपपात विगेरेनुं वण्ठन पण्ठ करी देवुं नेधंओ, अहियां पण्ठ ११ अगियार उद्देशाओ कहेवा नेधंओ,

॥ 'अहं दसमं सन्निमहाजुम्मसयं' ॥

मूळम्—एवं नीललेश्य भवसिद्धिएहि वि सयं । सेवं भंते ।
सेवं भंते ! त्ति

चत्तालीसइमे दसमं सन्निमहाजुम्मसयं ॥४०—१०॥

छाया—एवं नीललेश्यसिद्धिकैरपि शतम् । तदेवं भदन्त । तदेवं भदन्त ।
चत्वारिंशत्तमे शतके दशमं संज्ञि महायुगमशतं समाप्तम् ॥४०१०॥

टीका—'एवं नीललेश्य भवसिद्धिए हि वि सयं' एवं नीललेश्य भवसिद्धि-
कैरपि शतं यथा कृष्णलेश्यभवसिद्धिककृतयुगमकृतयुग संज्ञिपञ्चेन्द्रियशतम्
अस्यैव शतकस्य तथैव नीललेश्य भवसिद्धिककृतयुगमकृतयुगसंज्ञिपञ्चेन्द्रिय

पर भी ११ उद्देशक कहना चाहिये । 'सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति' हे
भदन्त । जेसा आपने यह कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार
कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना
नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते
हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

शतक ४० दशवां संज्ञि महायुगम शत

चालीसवां वे शत में नववां महायु महायुग्म शत समाप्त ॥४०—१॥

'एवं नीललेश्य भवसिद्धिए वि सयं—सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'

टीकार्थ—इसी प्रकार नीललेश्यावाले कृतयुगमकृतयुगम राशि प्रमित
भवसिद्धिक संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में भी यह शत कहलेना
चाहिये । यह शत भी ११ उद्देशकों से युक्त है । यहाँ अतिदेश द्वारा

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन आप देवानुप्रिये आ विषयमा
ने प्रभाणुं कथन करेल छे. ते सधणुं कथन सत्य न छे. हे लगवन आप
देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे आ प्रभाणुं कहीने गौतमस्वामीजे
प्रभुश्रीने वंदना करी तेज्याने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
पर गिराजमान थया ॥सू०१॥

॥नवमुं महायुगम शतके समाप्त ॥४०—१॥

दशमा संज्ञि महायुगम शतकेनो आरंभ—

'एवं नीललेश्यभवसिद्धिए वि सयं—'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'

टीकार्थ—आज प्रभाणुं ओटले के उपर दद्या प्रभाणुं नीललेश्यावाणा कृतयुगम
कृतयुगम राशिप्रभाणुवाणा भवसिद्धिक पञ्चेन्द्रिय श्रवणा संबंधमां पद्यु आ
शतके कहेपुं लेपये, आ शतके पद्यु अगियार उद्देशाओधी युक्त छे. अहियां

प्रातमपि एकादशोद्देशकयुक्तं भवति केवलं कृष्णपदस्थाने नीलपदे घटगित्वा
शतं वक्तव्यम्, तथाहि-नीललेश्य भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः
खलु भदन्त । कृत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावदेवेभ्य इति प्रश्नं कृत्वा चतुर्ग-
तिकेभ्य आगत्य नीललेश्यभवसिद्धिकृतया समुत्पद्यन्ते इत्यादिकं सर्वम् औघिक-
नीललेश्यप्रातमिव सर्वं ज्ञातव्यमिति संक्षेपः, सेव' भंते । सेव' भंते ! त्ति' तदेव'

यह बातलाया गया है कि जैसा कृष्णलेस्यावाले भवसिद्धिक कृतयुग्म
कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में ११ उद्देशकों से युक्त
शत कहा गया है । ओ वैसा ही यह ज्ञान भी कहना चाहिये । परन्तु
यहां कृष्णलेस्या पद के स्थान में नीललेश्य पद को जोड़कर आलापक
कहना चाहिये । जैसे-नीललेस्यावाले भवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म
संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीव हे भदन्त ! किस स्थान विशेष से आकर के
उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर के उत्पन्न होते हैं ?
अथवा यावत् देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के
उत्तर में ऐसा कहना चाहिये कि वे चारों गतियों में से आकर के
उत्पन्न होते हैं इत्यादि रूप से सद्य कथन औघिक नीललेश्य शत के
जैसा ही जानना चाहिये । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे भदन्त !
जैसा आपने यह नीललेश्य भवसिद्धिक के विषय में कहा है वह
सद्य सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को

अतिदेश द्वारा ओ कलुं छे के-ने प्रमाणे दृष्टुदेश्यावाणा लवसिद्धिक कृतयुग्म
कृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय लवोना संभ'धमां ११ अगिय २ उद्देशाओ
वाणुं शतक कडेवामां आवेल छे, ते ओन प्रमाणेतुं आ शतक पणु कडेवुं
परंतु आ शतकमां दृष्टुदेश्या पदना स्थानमां नीललेस्या ओ पद भूकीने
आलापके कडेवा लेधओ. ओम के-नीललेस्यावाणा लवसिद्धिक कृतयुग्म कृतयुग्म
संज्ञिपञ्चेन्द्रिय लवो छे लगवन् कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां ओवुं कडेवुं लेधओ के-तेओ चारे गतियोमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे. विगेरे प्रकारथी सधणुं कथन औघिक दृष्टुदेश्या
शतकना कथन प्रमाणे न रामनवुं.

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये आ नीललेस्या
भवसिद्धिकना विषयमां ने प्रमाणेन' कथन करेव छे, ते सधणु कथन सर्वथा
सत्य न छे. छे लगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे आ

भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति, हे भदन्त ! नीललेश्य भवसिद्धिकल्पिये यद्
देवानुप्रियेण कथितं तत्सर्वं सर्वथैव सत्यमिति कथयित्वा गौतमो यावत्
यथासुखं विहरतीति ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके दशम संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०॥१०॥

‘११-१४ संनिमहाजुम्मसयाइं’

मूलम्—एवं जहा ओहियाणं सन्नि पंचिंदियाणं सत्त
सयाणि भणियाणि एवं भवसिद्धिएहि वि सत्त सयाणि काय-
व्वाणि । नवरं सत्तसु वि सएसु सव्व पाणा० जाव णो इणट्टे
समट्टे, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

भवसिद्धिय सया समत्ता

चत्तालीसइमे सए ११-१४ सन्निमहाजुम्मसयाणि समत्ताणि

छाया—एवं यथीधिकानि संज्ञियश्चेन्द्रियाणां सप्त शतानि भणितानि एवं
भवसिद्धिकैरपि सप्तशतानि कर्त्तव्यानि । नवरं सप्तस्वपि शतेषु सर्वपाणा यावत्
नायमर्थः समर्थः । शेषं तदेव । तदेव भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ भवसिद्धिकशतानि समाप्तानि ॥

चत्वारिंशत्तमे शतके एकादशादारभ्य चतुर्दशं

संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०॥११-१४॥

वन्दना की और नमस्कार क्रिया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम
और तप से आत्मा को भाविन करते हुए अपने स्थान पर विराजमान
हो गये ।

॥४० वे शतक में यह १० वां संज्ञि महायुगम शत समाप्त ४०-१०॥

शतक ४० ग्यारहवां, चारहवां, तेरहवां, और चौदहवां, महायुगम शत
‘एवं जहा ओहियाणि सन्निपंचिंदियाणं सत्त सयाणि भणियाणि
एवं भवसिद्धिएहि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि ॥४०-१०॥

प्रभाणे कहीने गौतमस्वाभीणे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कथा वंदना
नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने आवित धरता
थका पोताना स्थान पर विराजमान थया.

चाणीसभा शतकभां आ दसभुं संज्ञिमहायुगम शतक समाप्त ॥४०-१०॥

अग्यारभा धारभा तेरभा चौदभा महायुग्मेने प्रारंभ--

एवं जहा ओहियाणि सन्नि पंचिंदियाणं सत्त सयाणि भणियाणि एवं
भवसिद्धिए हि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि’

टीका--'एवं जहा ओहियाणि सन्निपंचिदियाणं सत्त सयाणि भणियाणि' एवं यथा औधिकानि सेज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां सप्तशतानि प्रथमम् औधिकम्, द्वितीयं कृष्णलेश्यम् २, तृतीयं नीललेश्यम् ३, चतुर्थं कापोतलेश्यम् ४, पञ्चमं तेजोले- श्यम् ५, षष्ठं पद्मलेश्यम् ६, सप्तमं शुक्ललेश्यम् ७, एवंरूपाणि औधिक संज्ञिपञ्चेन्द्रियसम्बन्धीनि चत्वारिंशत्तमशतकस्य प्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थपष्ठ- सप्तमरूपाणि शतानि भणितानि-कथितानि 'एवं भवसिद्धि एहि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि' एवं भवसिद्धिकैरपि सप्तशतानि कर्त्तव्यानि तत्र प्रथममौधिकं भवसिद्धिशतम् १, द्वितीयं कृष्णलेश्यभवसिद्धिशतम्, तृतीयं नीललेश्यभव- सिद्धिशतम् ३, चैतित्रयं भवसिद्धिशतं पूर्वं कथितम्, अस्मिन् सूत्रे तु

टीकार्थ-जैसे संज्ञि पंचेन्द्रियों के सम्बन्ध में सात औधिक शतक कहे गये हैं। वैसे ही संज्ञि पंचेन्द्रिय भवसिद्धिकों के सम्बन्ध में भी सात शतक कह लेना चाहिये औधिक संज्ञि पंचेन्द्रियों के वे सात शतक इस प्रकार से हैं-औधिकशत १, कृष्णलेश्यशत २, नीललेश्य शत ३, कापोतलेश्यशत ४, तेजोलेश्यशत ५, पद्मलेश्यशत ६, और शुक्ललेश्यशत ७, इस प्रकारसे ये संज्ञि पंचेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में ४० वें शतक में प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ और सप्तम शत रूप से कहे गये हैं। इसी प्रकार से 'भवसिद्धि एहि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि' भवसिद्धिक जीवों के सम्बन्ध में भी सात शत कह लेना चाहिये। इन में प्रथम औधिक भवसिद्धिक शत है १ द्वितीय कृष्णलेश्य भवसिद्धिक शत है। तृतीय नीललेश्य भवसिद्धिक शत है। ये तीन भवसिद्धिक शत तो पहिले कहे जा चुके हैं। इस सूत्र में तो

संज्ञि पंचेन्द्रियोना सम्बन्धमां सात औधिक शतको कहेला छे, जेण प्रमाणे संज्ञि पंचेन्द्रिय भवसिद्धिकोना सम्बन्धमां पणु सात शतको कहेवा लेधजे. संज्ञि पंचेन्द्रियोना ते सात औधिक शतको आ प्रमाणे छे.-औधिक शतक १ कृष्णलेश्या शतक २ नीललेश्या शतक ३ कापोतलेश्या शतक ४ तेजोलेश्या शतक ५ पद्मलेश्या शतक ६ अने शुक्ललेश्या शतक ७ आ रीते आ औधिक संज्ञि पंचेन्द्रिय जेवोना सम्बन्धमां आणीसमा शतकमां पडेला, भील, त्रील, योथ', पांचमां, छठा अने सातमा शतक रूपथी कहेव छे. जेण प्रमाणे 'भवसिद्धि एहि वि सत्तसयाणि कायव्वाणि' भवसिद्धिक जेवोना सम्बन्धमां पणु सात शतको कहेवा लेधजे. तेमां पडेलु' औधिक भवसिद्धिक शतक छे. १ भीलु कृष्णलेश्य भवसिद्धिक शतक छे. त्रीलु नीललेश्य भवसिद्धिक शतक छे. आ त्रणु शतकोतो पडेला कहेला छे. आ सूत्रमां तो जेवण कापोत, तेण,

कापोत-तेजः-पद्म-शुक्ललेश्याविशिष्टानि चत्वारि शतानि एवं सङ्कलितानि सप्तशतानि प्रत्येकमेकादशोद्देशरुग्मितानि क्रमेण कर्त्तव्यानि । आलापप्रकार-स्तु सर्वत्र पूर्ववदेव कर्त्तव्य इति । 'नवरं सत्तसु वि सव्य पाणा जाव णो इणट्टे समट्टे' नवरं-केवलमीधिकशतापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत् सप्तस्वपि शतेषु सर्वे प्राणा यावत् सर्वे सत्त्वाः औधिक भवसिद्धिककृष्णलेश्यादिक भवसिद्धिकतया समुत्पन्नपूर्वाः किमिति प्रश्नं कृत्वा नायमर्थः समर्थः, एवं रूपेण सर्वत्रापि उत्तर मुन्नेयम्, 'सेसं तं चेव' शेषं नवर-मित्यनेन यद्वैलक्षण्यं प्रतिपादितं ततोऽन्यत् सर्वम्-औधिक संज्ञिपञ्चेन्द्रियसप्तशतसदृशमेव ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! २ इति ।

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके एकादशशतादारभ्य चतुर्दशशतपर्यन्तं
चत्वारि संज्ञिमहायुग्मशतानि समाप्तानि ॥४०-११-१४॥

केवल कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल इन लेश्याओं से विशिष्ट चार ही शत कहे हैं । अतः सब मिलकर कुल सात शत हो जाते हैं । ये सात शत हैं प्रत्येक शत ११ उद्देशक कों से युक्त हैं । अतः इन में प्रत्येक में आलाप प्रकार पूर्व में जैसा कहा गया है वैसा कहलेना चाहिये 'नवरं सत्तसु वि सव्य पाणा जाव णो इणट्टे समट्टे' परन्तु यहां ऐसा नहीं कहना चाहिये कि समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व औधिक भवसिद्धिक रूप से अथवा कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक रूप से पहिले यावत् अनन्तवार उत्पन्न हो चुके हैं । यही विलक्षणता यहां औधिकशत की अपेक्षा से है । 'सेसं तं चेव' पाकी का और सब कथन औधिक संज्ञी पञ्चेन्द्रिय सप्त शत के जैसा ही है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ ।

पञ्च अने शुक्ल आ लेश्याओथी युक्त आर शतके ७ कडेला छे तेथी णधा भणीने कुल ७ सात शतके धरु णय छे. आ साते शतकेभां-दरेक शतकेभा ११-११ अगियार अगियार उद्देश्याओ कडेला छे तेथी दरेकभां आलापकेने प्रकार पडेलां क्ख्हा प्रभाणेने समज्जेवे 'नवरं सत्तसु वि सव्य पाणा जाव णो इणट्टे समट्टे' परंतु अडियां ओ प्रभाणे कडेपु लेधओ के-सधणा प्राणे यावत् सधणा सत्त्वे औधिक भवसिद्धिक पञ्चाथी अथवा कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक पञ्चाथी पडेलां यावत् अनन्तवार उत्पन्न धरु थूकेल छे औधिक शतकेना कथन करता अडियां ओर लुटापणु छे. 'सेसं तं चेव' पाकीनुं ओरु सधणु कथन औधिक पञ्चेन्द्रिय शतकेना कथन प्रभाणे ७ छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन आप देवानुप्रिये आ विषयभां

॥ 'अह पन्नरसमं सन्नि महाजुम्मसयं'

मूलम्—अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? उववाओ तहेव अणुत्तरविमाणवज्जो । जहा परिमाणं अवहारो उच्चत्तं बंधो वेदो वेदणं उदयो उदीरणा य कणहलेससए । कणहलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा । नो सम्म-
दिट्ठी, मिच्छादिट्ठी, नो सम्मामिच्छादिट्ठी । नो नाणी, अन्नाणी,
एवं जहा कणहलेस्ससए । नवरं नो विरया अविरया नो विरया-
विरया संचिट्ठणा ठिईय जहा ओहिय उद्देसए । समुग्घाया
आदिल्ला पंच । उव्वट्ठणा तहेव अणुत्तरविमाणवज्जं । सव्व-
पाणा जाव णो इणट्ठे समट्ठे, सेसं जहा कणहलेस्ससए जाव
अणंतखुत्तो । एवं सोलससु वि जुम्मेसु । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति । ॥४०-१५-१॥

पढमसमय अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचि-
दियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? जहा—सन्नीणं पढमसमय
उद्देसए तहेव । नवरं सम्मत्तं सम्मामिच्छत्तं नाणं च सव्वत्थ

इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार
क्रिया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को
भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ इस प्रकार ४० वें शतक में ग्यारहवें शत से लेकर चौदहवें
शतक के चार संज्ञि महायुगम शत समाप्त हुए ॥

जे प्रमाणे कडेल छे ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. जे भगवन आप देवानुप्रियनुं
कडेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीजे
प्रभुश्रीने वंदनाकरी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥आ रीते आणीसभा शतकमां अगियारमां शतकथी लछने चौदहा शतक
सुधीना आर संज्ञि महायुगम शतके समाप्त ॥४०-११-१४॥

नत्थि सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४०-१५-२॥

एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देशगा कायत्वा पढमतइय पंचमा
एकगमा सेसा अट्ट वि एक्कगमा । सेवं भंते । सेवं भंते । त्ति ।
चत्तालीसइमे सए पन्नरसमं सन्नि महाजुम्मसयं समत्तं । ४०-१५।

छाया--अभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते ? उपपात स्तथैव अनुत्तरविमानवर्जः । परिमाणमपहार उच्चत्वं बन्धो
वेदन मुरय उदीरगा च यथा कृष्णलेश्यशते । कृष्णलेश्या वा यावत् शुक्ल-
लेश्या वा नो सम्यग्दृष्टयः मिथ्यादृष्टयः नो सम्यग् मिथ्यादृष्टयः । नो ज्ञानिनः
अज्ञानिनः एवं यथा कृष्णलेश्यशते । नवरं नो विरताः अविरताः नो विरता-
विरता । संस्थाना स्थितिश्च यथा औघिकोद्देशके । समुद्घाता आघाः पञ्च
चद्वर्तनाः तथैवानुत्तरविमानवर्जाः सर्वे प्राणाः यावत् नायमर्थः समर्थः शेषं यथा
कृष्णलेश्यशते यावदनन्तकत्वः । एवं षोडश्वपि युग्मेषु तदेवं भदन्त !
तदेवं भदन्त ! इति ॥४०।१५।१॥

प्रथमसमयाभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त !
कुत उत्पद्यन्ते ? यथा संज्ञिनां प्रथमसमयोद्देशके तथैव । नवरं सम्भूतत्वं सम्यग्-
मिथ्यात्वं ज्ञानं च सर्वत्र नास्ति । शेषं तथैव । तदेवं भदन्त ! तदेवं
भदन्त ! इति ॥४०।१५।२॥

एव सत्रापि एकादशोद्देशकाः कर्तव्याः प्रथमतृतीयपञ्चमाः एकगमकाः,
शेषा अष्टावपि एकगमकाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

चत्वारिंशत्तमे शतके पञ्चदशं महायुग्मशत समाप्तम् । ४०।१५

टीका-‘अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिद्विघाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति’ अभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्य

‘अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिद्विघाणं भंते ! कओ
उववज्जंति ।

टीकार्थ—हे भदन्त ! अभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञि पञ्चे-
न्द्रिय जीव किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे

पदरमां स ज्ञि महायुग्म शतकेनो आरंभ--

‘अभवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म पंचिद्विघाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
टीकार्थ—हे भगवन् अभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रिय जीवो
क्या स्थानविशेषથી आवीने उत्पन्न धाय छे ? शुं तेजो नैरयिकेमांथी आवीने

ન્તે ? કિં નૈરયિકેભ્ય આગત્ય યાવદેવેભ્ય આગત્ય સમુત્પન્તે ઇતિ પ્રશ્નઃ, મગધ-
 ચાનાહ-અતિદેશદ્વારેણ-‘ઉવવાઓ’ ઇત્યાદિ, ‘ઉવવાઓ તદેવ અનુત્તરવિમાણવજ્જો’
 ઉપપાત સ્તથૈવ અનુત્તરવિમાણવર્જઃ અનુત્તરવિમાણદેવાન્ પરિત્યજ્યાન્યતઃ સર્વત
 ઇવ નૈરયિકતિર્યગ્મહુપ્યદેવેભ્ય ઉપપાત ઇપાં વક્તવ્ય ઇતિ । ‘પરિમાણં અવહારો
 ઉચ્ચત્તં વંધો વેદો વેયળં ઉદીરણા ચ જહા ક્ષણ્ણલેસ્સપ્પ’ પરિમાણઅપહાર ઉચ્ચત્તં
 વંધો વેદો વેદનમુદય ઉદીરણા ચ યથા ક્ષણ્ણલેશ્યશતે ક્ષણ્ણલેશ્યશતે ચ દ્વીન્દ્રિય
 શતકસ્યાતિદેશઃ ક્ષતઃ, તચાપિ એકેન્દ્રિયશલાતિદેશોડ્ધોગ્થા પરિમાણાદિક-
 મુદીરણાન્તં કથિતં તથૈવેવાપિ ચથાસમ્ભવં તત્ર તત્રતઃ જ્ઞાતવ્યમ્ । ‘ક્ષણ્ણલેસ્સા

નૈરયિકોં એં સે આકરકે ઉત્પન્ન ઇતિં હેં ? યાવત્ દેવોં મેં સે આકરકે
 ઉત્પન્ન હોતે હેં ? હસકા અતિદેશ દ્વારા પ્રમુ ઉત્તર દેતે હુપ કદતે હેં-
 ‘ઉવવાઓ તદેવ અનુત્તર વિમાણવજ્જો’ હે ગૌતમ ! અનુત્તરવિમાણવાસી
 દેવોં કો છોડકર સ્વય જગહોંસે નૈરયિકોં મેં સે, તિર્યગ્ગોનિકોં મેં સે
 મનુષ્યોં મેં સે ઔર દેવોં મેં સે-હનકા ઉપપાત હોતા હે । ‘પરિમાણં
 અવહારો, ઉચ્ચત્તં વંધો, વેદો, વેયળં, ઉદીરણા ચ જહા ક્ષણ્ણલેસ્સપ્પ’
 પરિમાણ અપહાર ઝંચાઈ વન્ધ, વેદ વેદન, ઉદીરણા ચે સવ ક્ષણ્ણલેશ્ય-
 શતકે જૈસે જાનને ચાહિયે । ક્ષણ્ણલેશ્ય શત મેં દ્વીન્દ્રિય શતક કા
 અતિદેશ ક્રિયા ગયા હે । દ્વીન્દ્રિય શતક મેં મી એકેન્દ્રિય શતકા અતિ-
 દેશ હુઆ હે । હસલિયે વજાં પરિમાણ સે લેકર ઉદીરણા તકકા કથન
 જૈસા ક્રિયા ગયા હે ડસી પ્રકાર સે યહાં પર મી હનકા કથન
 યથા સંભવ વહોં સે જાનના ચાહિયે । ‘ક્ષણ્ણલેસ્સા વા જાવ સુક્કલેસ્સા

ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા તિર્યગ્ગોનિકોમાથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા
 મનુષ્યોમાથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ? અથવા દેવોમાથી આવીને ઉત્પન્ન
 થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી ગૌતમસ્વામીને કહે છે કે-‘ઉવવાઓ
 તદેવ અનુત્તરવિમાણવજ્જો’ હે ગૌતમ ! અનુત્તર વિમાણવાસી દેવોને છોડીને
 દરેક સ્થળોમાથી અર્થાત્ નૈરયિકોમાથી તિર્યગ્ગોનિકોમાથી, મનુષ્યોમાથી,
 અને દેવોમાથી તેઓને ઉપપાત થાય છે. ‘પરિમાણં અવહારો, ઉચ્ચત્તં, વંધો,
 વેદો, વેયળં, ઉદીરણા ચ જહા ક્ષણ્ણલેસ્સપ્પ’ પરિમાણ અપહાર ઝંચાઈ,
 વન્ધ, વેદ, વેદન ઉદીરણા આ બધા ક્ષણ્ણલેશ્યા શતકમાં દ્વીન્દ્રિય શતકને
 અતિદેશ-લલામણુ કરેલ છે. અને દ્વીન્દ્રિય શતકમાં પણ એકેન્દ્રિય શતકને
 અતિદેશ કરેલ છે. તેથી ત્યાં પરિમાણથી લઈને ઉદીરણા સુધીનું કથન જે
 રીતે કરેલ છે, એજ રીતે અહિયાં પણ યથાસંભવ તેઓનું કથન ત્યાના કથન
 પ્રમાણે કરી લેવું. ‘ક્ષણ્ણલેસ્સા વા, જાવ સુક્કલેસ્સા વા’ આ અભવસિદ્ધિક

वा जाव सुकलेस्ता वा' इमे अभवसिद्धिकाः कृष्णलेश्या भवन्ति यावत् शुक्ल-
 लेश्या वा भवन्ति यावत् पदेन नीलकापोततेजःपद्मलेश्यानां संग्रहो भवतीति ।
 'नो सम्मदिष्टी' इमे अभवसिद्धिका नो सम्यग्दृष्टयो भवन्ति किन्तु 'मिच्छादिष्टी'
 मिथ्यादृष्टयो भवन्ति 'नो सम्मामिच्छादिष्टी' नो न वा सम्यग्मिथ्यादृष्टयो
 मिथ्यादृष्टयो भवन्तीति । 'नो नाणी अन्नाणी' नो ज्ञानिनो भवन्ति, किन्तु
 अज्ञानिनः तत्रापि नियमतो व्यज्ञानिनः मत्त्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनो विभङ्गज्ञानिन
 भेति । 'एवं जहा कण्णलेस्सए' एवं यथा कृष्णलेश्यशतके कथितं तथैवात्रापि
 एतस्यैव द्वितीयशते ज्ञातव्यमिति । कृष्णलेश्यशतापेक्षया यद्वैलक्षण्यं तद्वक्ति
 'नवरं नो विरया अविरया नो विरयाविरया, नवरं' विशेषस्तावदयम्-इमे अभव-

वा' ये अभवसिद्धिक जीव कृष्णलेश्यावाले होते हैं यावत् शुक्ललेश्या-
 वाले होते हैं । यहां यावत्पद से 'नील, कापोत तेजः और पद्मले-
 श्याओं का संग्रह हुआ है । 'नो सम्मदिष्टि' ये सम्यग्दृष्टि नहीं होते
 हैं । किन्तु-'मिच्छादिष्टि' मिथ्यादृष्टि ही होते हैं । 'नो सम्मामिच्छा-
 दिष्टी' ये मिथ्यादृष्टि भी नहीं होते हैं । 'नो नाणी, अन्नाणी' ये ज्ञानी
 नहीं होते हैं अज्ञानी ही होते हैं । अज्ञान में इनके तीन अज्ञान होते
 हैं-मति अज्ञान श्रुत अज्ञान और विभंगज्ञान ये तीन अज्ञान होते हैं
 'एवं जहा कण्णलेस्सए' इस प्रकार से जैसा कृष्णलेश्य शतक में
 कहा गया है वैसा ही यहां पर समझना चाहिये । कृष्णलेश्यशत इसी
 ४० वें शतकका द्वितीय शत है । 'नवरं नो विरया अविरया, नो
 विरया विरया' कृष्णलेश्य शतकी अपेक्षा यहां जो अन्तर आता है

एवो दृष्णुदेश्यावाणा डोय छे. नीलदेश्यावाणा डोय छे कापोतदेश्यावाणा
 डोय छे. तेज्जदेश्यावाणा डोय छे. अने पद्मलेश्यावाणा डोय छे तथा शुक्ल-
 देश्यावाणा डोय छे. 'नो सम्मदिष्टी' आ सम्यग्दृष्टि डोता नथी. परंतु
 'मिच्छादिष्टी' मिथ्यादृष्टिवाणा न डोय छे. 'नो सम्मामिच्छादिष्टी' तेज्जो
 मिथ्यादृष्टिवाणा पणु डोता नथी. 'नो नाणी अन्नाणी' तेज्जो ज्ञानी पणु डोता
 नथी. अज्ञानी डोय छे, तेज्जोने अज्ञानमां मतिअज्ञान अने श्रुतअज्ञान अे छे
 न अज्ञान डोय छे तेमने विभंग अज्ञान डोतुं नथी 'एवं जहा कण्णलेस्सए'
 तेज्ज प्रमाणे दृष्णुदेश्या शतकमां ते प्रमाणे डडेवामां आवेल छे. तेज्ज प्रमाणे
 अहीयां पणु समज्जपुं दृष्णुदेश्या शतक आ ४० अणीसमा थनकनुं
 थीनुं शतक छे. 'नवरं नो विरया अविरया नो विरयाविरया' दृष्णुदेश्याशतकनी

શ્લિષ્ટિકા નો વિરતા અવસ્થિત, અવિરતા ભવન્તિ કિન્તુ નો વિરતાવિરતા ભવન્તીતિ ।
 'સંચિદ્વળા ઠિર્દ્ય જહા ઓહિય ઉદેસપ' સંસ્થાના અવસ્થિતિકાલઃ સ્થિતિરાયુષ્ય-
 કાલઃથ યથોધિક્કશતે ચત્વારિંશત્તમશતકસ્ય પ્રથમોદેશકે કથિતસ્તથૈવ જ્ઞાતવ્યઃ
 સપ્તાવસ્થિતિકાલો જઘન્યેનૈકં સમય મુત્કર્ષેણ સાગરોપમશતપૃથક્ત્વં સાતિરેકમ્
 સ્થિતિસ્તુ જઘન્યેનૈકં સમયમુત્કર્ષેણ ત્રયસ્તિંશત્સાગરોપમાણિ । 'સમુઘાયા
 આદિલ્લા પંચ' સમુદ્ઘાતા આઘાઃ પંચ વેદનાકપાયમારણાન્તિકવૈક્રિયતૈજ-

શ્લેષી ઇલ્લ સૂત્રપાઠ દ્વારા યહાં પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ-ઉસ કૃષ્ણલેઙ્ગશત
 ણી અપેક્ષા ઇલ્લે યહી અન્તર હૈ કિ યે કૃતયુગ્મકૃતયુગ્મ રાશિપ્રમાણ
 અભવસિદ્ધિક સંજ્ઞી જીવ વિરતિયુક્ત નહીં હોતે હૈ । અવિરતિવાલે
 હોતે હૈ । વિરતાવિરત-દેશસંયમી-મી યે નહીં હોતે હૈ । 'સંચિદ્વળા
 ઠિર્દ્ય જહા ઓહિય ઉદેસપ' અવસ્થાના કાલ ઓર આયુષ્કાલ જૈસા
 ૪૦ વેં શતકકે પ્રથમ ઉદેશક મેં કહા ગયા હૈ વૈસા હી યહાં પર મી
 જાનના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર અવસ્થિતિ કાલ જઘન્ય સે એક સમય
 કા ઓર ઉત્કૃષ્ટ સે કુછ અધિક સાગરોપમશત પૃથક્ત્વકા હૈ । તથા
 સ્થિતિ જઘન્ય સે એક સમય કી ઓર ઉત્કૃષ્ટ સે ૩૩ સાગરોપમ કી
 હૈ । 'સમુઘાયા, આદિલ્લા પંચ' યહાં સમુદ્ઘાત આદિ કે પાંચ હોતે
 હૈ-વેદનાસમુદ્ઘાત કપાયસમુદ્ઘાત, મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, વૈક્રિય
 સમુદ્ઘાત ઓર તૈજસસમુદ્ઘાત । આહારક સમુદ્ઘાત એવં કેવલિસમુ-

અપેક્ષાએ આ કથનમાં જે અંતર આવે છે તેજ આ સૂત્રદ્વારા પ્રગટ
 કરવામાં આવેલ છે. તે કૃષ્ણલેશ્યા શતકની અપેક્ષાએ આમાં એજ
 અંતર છે કે આ કૃતયુગ્મ કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમાણવાળા અભવસિદ્ધિક
 સંજ્ઞી હોયો વિરતિવાળા હોતા નથી. અવિરતિવાળા હોય છે. વિરતા-
 વિરત-દેશસંયમી શ્રાવકો પણ તેઓ હોતા નથી. 'સંચિદ્વળા ઠિર્દ્ય
 જહા ઓહિય ઉદેસપ' અવસ્થાનાકાળ અને આયુષ્યકાળ ૪૦ આળીસમા શતકના
 પહેલા ઉદેશમાં જે પ્રમાણે કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે અહિયાં પણ
 સમજવું. આ રીતે અવસ્થિતિકાળ જઘન્ય એક સમયનો અને ઉત્કૃષ્ટથી કંઈક
 વધારે સાગરોપમશત પૃથક્ત્વનો છે તથા સ્થિતિ જઘન્ય એક સમયની અને
 ઉત્કૃષ્ટથી ૩૩ તેત્રીસ સાગરોપમની કહેલ છે. 'સમુઘાયા અદિલ્લા' પંચ' તેઓને
 આદિના પાચ સમુદ્ઘાતો હોય છે.-એટલે-વેદના સમુદ્ઘાત ૧ કપાયસમુદ્ઘાત
 ૨, મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, ૩ વૈક્રિય સમુદ્ઘાત ૪ અને તૈજસમુદ્ઘાત ૫
 આહારક સમુદ્ઘાત અને કેવલી સમુદ્ઘાત એ એ સમુદ્ઘાતો અહિં કહેલ

साख्याः आहारककेवलिसमुद्घातवर्जाः 'उब्बट्टणा तद्देव अणुत्तर विमाणवज्जा' उद्धर्तना तथैव-उपपातवदेव अनुत्तरविमानवर्जिताः एते स्वभनाद् उद्घृत्य अनुत्तर विमानेषु नोत्पद्यन्ते तदरिक्तेषु सर्वे स्थानेषूपत्पद्यन्ते, इति भावः । 'सव्वप्पाणा जाव णो इण्ठे समट्ठे' सर्वे प्राणाः यावत् सर्वे सत्त्वाः अभवसिद्धिमसंनिपञ्चन्द्रियतया समुत्पन्नपूर्वाः किमिति प्रश्नस्य, नाथमर्थः समर्थः, इत्युत्तरम् । 'सेसं जहा कण्हलेस्ससए' शेषम्-उपरि यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वं कृष्णलेश्यशतव ज्ञातव्यम्, कियत्पर्यन्तं कृष्णलेश्यशतं ज्ञातव्यं तत्राह-'जाव' इत्यादि, 'जाव अणंतखुत्तो' यावत् अनन्तकृत्वः एतत्पर्यन्तं सर्वं ज्ञातव्यमिति । 'एवं सोलसतु

द्घात यहां नहीं होते हैं । 'उब्बट्टणा तद्देव अणुत्तरविमाणवज्जा' उद्धर्तना अनुत्तरविमानो' को छोड़कर उपपात के जैसी ही है । तात्पर्य कहने का यह है कि ये जब अपने भव से उद्घृत्त होते हैं तो अनुत्तर विमानों में उत्पन्न नहीं होते हैं । इनके सिवाय और सब स्थानों में ये उत्पन्न हो जाते हैं । 'सव्वप्पाणा जाव णो इण्ठे समट्ठे' हे भदन्त ! समस्त प्राण यावत् समस्त सत्व अभवसिद्धिक रूप से पहिले उत्पन्न हो चुके हैं ? तो इस प्रश्न के उत्तर में ऐसा कहना चाहिये कि हे गौतम ! त्व अर्थ समर्थ नहीं हैं । 'सेसं जहा कण्हलेस्ससए' इस प्रकार से जो ऊपर में कहा गया है उसके अतिरिक्त और सब कथन जैसा कृष्णलेश्यशत में कहा गया है वैसा ही है । 'जाव अणंतखुत्तो' और यह वाक्य 'यावत् पूर्व में अनन्तवार उत्पन्न नहीं हुए हैं' यहां तकका यहां का जग

नथी. 'उब्बट्टणा तद्देव अणुत्तरविमाणवज्जा' उद्धर्तना अनुत्तर विमानोने छोडीने उपपात प्रमाणे न् छे. कडेवानु तात्पर्यं ये छे के-ते न्यादे पोताना लवधी उद्धर्तना करे छे, तो ते अनुत्तरविमानोमां उत्पन्न थता नथी अनुत्तरविमान शिवाय अथा न् स्थानोमां तेयो उत्पन्न थाय छे 'सव्वप्पाणा जाव णो इण्ठे समट्ठे' छे लगवन् सधणा प्राणो यावत् सधणा सत्त्वे शुं अबवसिद्धिपण्णथी पडेलां उत्पन्न थर्ध युक्था छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां येवुं क्खुं छे के छे गौतम ! आ अर्थं अरोअर नथी 'सेसं जहा कण्हलेस्ससए' आ रीते उपर ने प्रमाणे कथन करेल छे, ते शिवाय आडीनुं सधणुं कथन कृष्णलेश्या शतकमां ने प्रमाणे कडेवामा आवेल छे, तेज प्रमाणे समन्वयुं. 'जाव अणंतखुत्तो' अने आ कथन यावत् पडेलां अनन्तवार उत्पन्न थया छे आ कथन सुधीनुं कृष्णलेश्याना अकरणुनुं कथन क्खुं छे तेज प्रमाणे कथन कडेवु

वि जुम्मेसु' एवं कृतयुग्मकृतयुग्मेषु यथा उपपातादारभ्य अनन्तकृत्व इत्येत-
त्पर्यन्तं कथितं तथैव कृतयुग्मत्रयोज महायुग्मादारभ्य कलयोजकलयोज पर्यन्ते
षोडशमहायुग्मेषु उपपातादारभ्य अनन्तकृत्व एतत्पर्यन्तं वक्तव्यमिति । 'सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालब्रह्मविरचितायां "श्री भगवतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां चत्वारिंशत्तमशतकस्य पञ्चदशे शते प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥४०॥१५॥१॥

चाहिये। 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' जिस प्रकार से कृतयुग्मकृतयुग्मों
में उपपात से लेकर अनन्तकृत्व तक पाठ कहा गया है उसी प्रकार से
कृतयुग्म त्रयोज से लेकर कलयोज कलयोज तक के सोलह महायुग्मों में
भी उपपात से लेकर अनन्तकृत्व पाठ तक सब कथन कह लेना चाहिये।
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा यह कथन आप देवानु-
प्रियने कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने
प्रभुश्री को वन्दना की नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे
संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर
विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चालीसवें शतक के
१५ वें शतमें प्रथम उद्देशक समाप्त ॥४०-१५-१॥

लेखने. 'एवं सोलससु वि जुम्मेसु' ने प्रमाणे कृतयुग्म कृतयुग्मोमां उप-
पातथी लक्षणे अनन्तकृत्व सुधीना पाठ कहेल छे, अथ प्रमाणे कृतयुग्म
त्रयोजथी लक्षणे कलयोज कलयोज सुधीना सोणे महायुग्मोमां यथु उप-
पातथी लक्षणे अनन्तकृत्व पाठ सुधी सधणुं कथन कहेवुं लेखने.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रिये ने रीते आ
कथन कहेल छे, ते सधणुं कथन सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रिये आ
विषयमां कहेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कर्षिने गौतम-
स्वाभीने प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार करी वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना आणीसमा शतकमां पडेलो उद्देशे. समाप्तः ॥४०-१५-१॥

अथ द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते-

‘पढम समय अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ प्रथमसमयाभवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगमसंज्ञपञ्चेन्द्रियाः खल्ल भदन्त ! कुत उत्पचन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावदेवेभ्य इति प्रश्नः। उत्तरमाह अतिदेशद्वारेण-‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा सन्नीणं पढमसमयउद्देशए तहेव’ यथा संज्ञिनां प्रथमसमयोद्देशके तथैव प्तथैव प्रथमशतकस्य द्वितीयोद्देशके कथितं तथैवोपपातादिकं सर्वं ज्ञातव्यमिति। पूर्वापेक्षया गृह्यैलक्षण्यं तद्दर्शयति-‘नवरं’ इत्यादि, ‘नवरं सम्मत्तं सम्माप्तिच्छत्तं नाणं च सव्वत्थ नत्थि’ नवरं सम्यक्त्वं सम्यग्मिथ्यात्वं ज्ञानं च न सन्ति, एतावान् एव पूर्वापेक्षया भेदः ‘सेसं तहेव’

‘पढमसमय अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते !’

टीकार्थ-हे भदन्त प्रथमसमयवर्ती अभवसिद्धिक कृतयुगमकृतयुगम राशिप्रमित संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव किस स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं? अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं? अतिदेशद्वारा इसका उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं-‘जहा सन्नीणं पढमसमय उद्देशए तहेव’ हे गौतम! जैसा इसी के प्रथमशतक के द्वितीय उद्देशक में कहा गया है वैसा ही उपपात आदिक सब कथन यहां जोनना चाहिये। परन्तु यहां सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और ज्ञान ये नहीं है। यही बात-‘नवरं सम्मत्तं सम्माप्तिच्छत्तं नाणं च सव्वत्थ नत्थि’ इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है। इस अन्तर के अतिरिक्त और सब कथन प्रथमसमय-

णील उद्देशानो प्रारंभ--

‘पढमसमय अभवसिद्धिय कडजुम्म कडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! ६।

टीकार्थ-हे लगवन् प्रथम समयमां रहेवावाणा अभवसिद्धिक कृतयुगम कृतयुगम राशिप्रभाषुवाणा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय लुपे कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? अथवा तिथं अथोनिक्केमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? अथवा मनुष्यो-मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? अतिदेश द्वारा आ प्रश्नो उत्तर आपतां प्रभुश्री कडे छे ६-‘जहा सन्नीणं’ पढमसमयउद्देशए तहेव’ हे गौतम! आ आणीसमा शतकना पडेला संज्ञि भडायुगम पडेला शतकना णील उद्देशामां ने प्रभाषे कडेल छे, ओण प्रभाषे कडेल छे, ओण प्रभाषे उपपात विगेरे सव्वत्थं कथन समणुणं, परंतु अदियां सम्यक्त्व सम्यग् मिथ्यात्व अने ज्ञान ओ डोता तथी ओण वात ‘नवरं’

शेषं नवरमित्यादिना यत् कथितं तदतिरिक्तं सर्वं तथैव—संज्ञिनां प्रथमसमय-
वदेवेति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

इति चत्वारिंशत्तमशतकस्य पञ्चदशे शते द्वितीयोद्देशकः ॥४०॥१५॥२॥

'एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देशगा कायव्वा' एवमत्रापि अभवसिद्धिकमकर-
णोऽपि एकादशोद्देशकाः कर्तव्याः । तत्र—औघिकोद्देशकः प्रथमसमयोद्देशकः,
इत्युद्देशद्वयं कथितमेव शेषा अप्रथमसमयादारभ्य चरमाचरमसमयपर्यन्ता नवोद्दे-

वतीं संज्ञी जीवों के जैसा ही जानना चाहिये । सेवं भंते ! सेवं भंते !
त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वैसा ही वह सब सत्य है
२ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार
किया वन्दना नमस्कारकर फिर वे संयम और तप से आत्मा को
भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥४० वे शतक के १५ वे शत में यह द्वितीय

उद्देशक समाप्त हुआ ॥४०-१५-२॥

'एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देशगा कायव्वा' इस अभवसिद्धिक
प्रकरण में भी ११ उद्देशक कहना चाहिये । इन में औघिक उद्देशक
और प्रथम समय उद्देशक ये दो उद्देशक तो सूत्रकार ने स्वयं कह दिये
हैं । बाकी के अप्रथम समय से लेकर चरमाचरम समय तक के ९ उद्दे-

सम्मतं सम्मामिच्छत्तं नाणं च स्रव्वत्थ नत्थि' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रगट
करेला छे. आ इेरकार शिवाय भाकीनुं सघणुं कथन प्रथम समयमां रडेला
संज्ञि एवेना कथन प्रम णे न छे तेम समजनुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये न प्रभाण्णे
आ विषयना संधमां कडेला छे, ते सघणुं कथन सत्य न छे. हे लगवन्
आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य छे. आ प्रभाण्णे कडीने गौतमस्वाभीजे
प्रभुश्रीने वंदना करी तेज्जाने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
पर गिराजमान थया. ॥सू०१॥

॥आणीसमा शतकना पंदरमां शतकमां आ जीजे उद्देशो समाप्त ॥४०-१५-२॥

'एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देशगा कायव्वा' 'आ अबवसिद्धिकना प्रकरणुमां
११ अगियार उद्देशाओ कडेवा नेधओ. आमां औघिक उद्देशाओ तथा प्रथम
समय उद्देशो आ जे उद्देशाओ सूत्रकारे स्वयं कया न छे भाकीना अप्रथम
समयथी लधने अरम अरम समय सुधीना ६ नव उद्देशाओ अडियां पडेलां

शका अत्र पूर्वोक्तवदेव वाच्या इति भावः । 'पढमतइय पंचमा एकगमा' तत्र प्रथमतृतीयपञ्चमा उद्देशका एकगमाः सदृशा ज्ञातव्याः 'सेसा अट्टवि एकगमा' शेषा अष्टावपि उद्देशका एकगमाः सदृशा ज्ञातव्याः । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

प्रथममभवसिद्धिकमहायुगमशतं समाप्तम् ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके पञ्चदशं संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥

शक यहाँ पूर्वोक्त जैसे ही हैं । 'पढमतइय पंचमा एकगमा' इनमें प्रथम तृतीय पंचम ये तीन उद्देशक एक सरीखे गम जैसे हैं । 'सेसा अट्ट वि एकगमा' बाकी के जो द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम और ग्यारहवां ये ८ उद्देशक हैं—वे सब एक सरीखे गम-वाले हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर गौतम संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

प्रथम अभवसिद्धिक महायुगमशत समाप्त और इस प्रकार ४० वें शतक में १५ वां संज्ञिमहायुगमशतक समाप्त हुआ ॥४०-१५॥

४४। प्रम.श्ले ७ छे. 'पढम तइय पंचमा एकगमा' तेभां पडेदो त्रीणे अने पांथभोअे त्रशु उद्देशाअो अेक सरभा आलापडोवाणा छे. 'सेसा अट्ट वि एकगमा' भाडीना ने भांणे, थोथो, छडो सातभो, आठभो, नवभो, दसभो, अने अग्यारभो आ आठ उद्देशाअो अेक सरभा आलापडोवाणा छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयना संबंधभां ने प्रभाणेतु कथन करेले छे ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ७ छे, हे भगवन् आप देवानुप्रिधनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य ७ छे. आ प्रभाणेतु कहीने गौतमस्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी तेअोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी तेअो संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥४०१॥

॥पहेलुं अलवसिद्धिक महायुगम शतक समाप्त याणीसभा शतकभां पहरसुं संज्ञि महायुगम शतक समाप्त ॥४०-१५॥

॥ 'अह सोलसमं सन्निमहाजुम्मसयं' ॥

सूलम्--कणहलेस्स अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? जहा एएसिं षेव ओहिय सयं तथा कणहलेस्ससयं पि । नवरं ते णं भंते ! जीवा कणहलेस्सा हंता कणहलेस्सा संचिट्टणा ठिईय जहा कणहलेस्ससए सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

चत्तालीसइमे सए सोलसमं सन्निमहाजुम्मसयं समत्तं

छायः--कृष्णलेश्याभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म संज्ञि पञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते यथा एतेषामेव औधिकशतं तथा कृष्णलेश्यशतमपि । नवरं ते खलु भदन्त ! जीवाः कृष्णलेश्यशते शेषं तदेव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

द्वितीयमभवसिद्धिकशतं समाप्तम् ॥

॥ चत्वारिंशत्तमे शतके षोडशं संज्ञिमहायुग्मशतं समाप्तम् ॥

टीका--'कणहलेस्स अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृष्णलेश्याभवसिद्धिककृतयुग्मकृतयुग्मसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाः खलु भदन्त ! जीवाः कुत आगत्योत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य यावत् देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह अतिदेशद्वारेण

सोलहवां संज्ञिमहायुग्मशतक

'कणहलेस्स अभवसिद्धिय कडजुम्मकडजुम्म सन्नि पंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति'

टीकार्थ--हे भदन्त ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीव किस स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अतिदेशद्वारा इस

सोणमा संज्ञि मङ्गयुग्म शतकने। प्रारंभ--

'कणहलेस्स अभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिदियाणं भंते ! कओ उववज्जंति'

टीकार्थ--हे लगवन् कृतयुग्म कृतयुग्म राशिप्रभाशुवाणा कृष्णलेश्यावाणा अभवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रिय एव क्या स्थानविशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तियं अथोनिडेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?

‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा एएसि चैव ओहियसयं तथा कणहलेस्ससयंपि’ यथा एतेपामेव अभवसिद्धिकानामेवौघिकशतं पञ्चदशं शतं तथा कृष्णलेश्याभवसिद्धिकशतमपि अस्यैव वत्वारिंशच्छतकस्य पञ्चदशे शते यथा औघिका भवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणामुपपातादिः कथित-स्तेनैव रूपेण कृष्णलेश्याभवसिद्धिकानामपि उपपातादयो ज्ञातव्याः । औघिकाभवसिद्धिकापेक्षया कृष्णलेश्याभवसिद्धिकशते यद्वैलक्षण्यं तत् स्वयमेव सूत्रकार आह-‘नवरं’ इत्यादि, ‘नवरम्-विशेष स्वयम्-‘ते णं भंते ! जीवा कणहलेस्सा’ ते खलु भदन्त ! जीवाः किं कृष्णलेश्यावन्तो भवन्तीति प्रश्नः । उत्तरमाह-‘हंता’ इत्यादि ‘हंता कणहलेस्सा’ इन्त हे गौतम ! ते जीवाः कृष्णलेश्यावन्तो भवन्तीत्युत्तरम् ‘संचिट्टणा ठिईय जहा कणहलेस्सासए’

प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं-‘जहा एएसि चैव ओहियसयं तथा कणहलेस्स सयं पि’ हे गौतम ! जैसा इन अभवसिद्धिकों का औघिक शतक कहा गया है उसी प्रकार से इनका यह कृष्णलेश्या शतक भी कह लेना चाहिये । अर्थात् ४० वें शतक के १५ वें शतमें जिस रीति से औघिक अभवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रियों के उपपात आदि कहे गये हैं उसी रीति से कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रियों के भी उपपात आदि कह लेना चाहिये । औघिक अभवसिद्धिकों की अपेक्षा इनमें जो अन्तर है वह इस प्रकार से है-‘ते णं भंते ! जीवा कणहलेस्सा’ हे भदन्त ! ये जीव क्या कृष्णलेश्यावाले होते हैं ? ‘हंता, कणहलेस्सा’ हां, गौतम ! ये जीव कृष्णलेश्यावाले होते हैं । ‘संचिट्टणा ठिईय जहा कणहलेस्सासए’ इनका अवरधानकाल और आयुकाल जैसा

अथवा देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अतिदेश द्वारा आ प्रश्नो उत्तर आपतां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के-‘जहा एएसि चैव ओहियसयं तथा कणहलेस्ससयं पि’ हे गौतम ! ने प्रभाण्णे आ अलवसिद्धिकेणुं औघिक शतक कहेल छे, ओण प्रभाण्णे तेओना सभंधमां आ कृष्णलेश्या शतक पण्ण कहेवुं नेधओ. अर्थात् याणीसमा शतकना १५ पंदरमां शतकमां ने प्रभाण्णे औघिक अलवसिद्धिक संज्ञि पञ्चेन्द्रियोना उपपात विगेरे कहेवामां आओया छे. ओण रीते कृष्णलेश्यावाणा अलवसिद्धिक संज्ञि पञ्चेन्द्रियोना उपपात विगेरे पण्ण कहेवा नेधओ. औघिक अलवसिद्धिकवाणाओनी अपेक्षाओ आमां ने अंतर आवे छे, ते आ प्रभाण्णे छे. ‘ते णं भंते ! जीवा कणहलेस्सा’ हे लगवन् आ लोवे कृष्णलेश्यावाणा होय छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के-‘हंता गोचमा । कणहलेस्सा’ हां गौतम ! ते लोवे कृष्णलेश्यावाणा होय छे. ‘संचिट्टणा ठिई य

संस्थाना स्थितिश्च अत्रस्थानकाल आयुः कालश्च कृष्णलेश्यजीवानां यथाऽस्यैव शतकस्य कृष्णलेश्यशतै कथित स्तेनैव रूपेणात्रापि ज्ञातव्यः । 'सेसं तं चेव' शेषम्-अवस्थान स्थित्यतिरिक्तं सर्वमपि तदेव-औधिकशतौक्तमेव ज्ञातव्यमिति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त । इति ॥

द्वितीयमभवसिद्धिक महायुगमशतं समाप्तम् ॥

चत्वारिंशत्तमे शतके षोडशं कृष्णलेश्याभवसिद्धिक

संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥४०॥१६॥

इस्वी शतकके कृष्णलेश्याशत में कहा गया है वैसा ही यहां पर भी कह लेना चाहिये । 'सेसं तं चेव' इनके अतिरिक्त और सब कथन औधिक शत में जैसा कहा गया है वैसा ही है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आपका यह कथन सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्माको भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । दूसरा अभवसिद्धिक महायुगमशत समाप्त ।

चालीसवें शतकमें सोलहवां कृष्णलेश्य अभवसिद्धिक संज्ञिमहायुगमशतक समाप्त हुआ ।

जहा कण्हलेश्यसप्त तेजोने अवस्थान काण अने आयुकाण आ ४० आणीसभा शतकना कृष्णलेश्या शतकभां कडेल छे, जे प्रभाषे अडियां यत्तु कडेपुं लेधिये. 'सेसं तं चेव' आ कथन शिवाय आधीतुं सधणुं कथन औधिक शतकभां कद्या प्रभाषेतुं समजपुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आ विषयना संबंधभां आप देवानुप्रिये जे प्रभाषे कथन करेल छे. जे सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियतुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीजे प्रभुश्रीने वंदना करी तेजोने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू०१॥

॥णीजुं अलवसिद्धिक महायुगम शतक समाप्त॥

आणीसभा शतकभां सोणमुं कृष्णलेश्या अलवसिद्धिक संज्ञिमहायुगम शतक समाप्त ॥४०-१६

॥ 'अह १७-२१ सयाइ' ॥

मूलम्—एवं छहि वि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं । नवरं संचिट्ठणा ठिईय जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा । नवरं संचिट्ठणा सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एकतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्वहियाइं, ठिई एवं चैव, नवरं अंतो-मुहुत्तं नत्थि जहन्नगं तहेव । सव्वत्थ सम्मत्त नाणाणि नत्थि । विरई विरयाविरई अणुत्तरविमाणोव्वत्तीय एयाणि नत्थि सव्व-पाण० जाव णो इणट्ठे समट्ठे । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । एवं एयाणि सत्त अभवसिद्धिय महाजुम्मसया भवंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । एवं एयाणि एकवीसं सन्नि महाजुम्मसयाणि । सव्वाणि वि एक्काशीतिमहाजुम्मसयाइं समत्ताइं ॥

चत्तालीसइमं सन्निमहाजुम्मसयं समत्तं

छाया—एवं षड्भिल्लेश्याभिः षट्शतानि कर्त्तव्यानि यथा कृष्णलेश्या-शतम् । नवरं संस्थाना स्थितिक्ष यथैव औधिकशते तथैव भणितव्या । नवरं संस्थाना शुक्ललेश्यायाम् उत्कर्षेण एकत्रिंशत्सागरोपमाणि अन्तर्मुहूर्त्ताभ्य-धिकानि । स्थितिरेवमेव, नवर मन्तर्मुहूर्त्तनास्ति । ज्ञान्यकं तथैव । सर्वत्र सम्यक्त्वं ज्ञानानि सन्ति । विरतिः विरताविरतिः अनुत्तरविमानोन्पत्तिश्च, एतानि न सन्ति । सर्वमाणा यावन्नायमर्थः समर्थः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति । एवमेतानि सप्त अभवसिद्धिकमहायुगमशतानि भवन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । एवमेतानि एकत्रिंशतिः संज्ञिमहायुगमशतानि । सर्वाण्यप एकाशीतिमहायुगमशतानि समाप्तानि ॥

चत्वारिंशत्तमं संज्ञिमहायुगमशतं समाप्तम् ॥

सप्तदशतः एकत्रिंशतितम शतकानि

टीका—'एवं छहि वि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं' एवं

'एवं छहिं वि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं'

टीकार्थ—जिस प्रकार कृष्णलेश्यापदको जोडकर अभवसिद्धिक

सत्तरमा महायुग शतकथी ऐकवीसमा सुधीना पाथ महायुग शतकेने प्रारंभ

'एवं छहिं वि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं' ७

पट्टमिरपि लेश्याभिः पट्टशतानि कर्त्तव्यानि यथा कृष्णलेश्याशतं यथा कृष्णलेश्या मन्तर्भाव्य अभवसिद्धिकस्य द्वितीयं शतं भवति तथैव नीलकापोत तैजसपद्म-शुक्ललेश्या मन्तर्भाव्यापि शतानि कर्त्तव्यानि तदेवमभवसिद्धिकमधिकृत्य सप्त-शतानि भवन्ति एकमौधिकं पट्टलेश्यान्तर्भावेन पट्टशतानीति । 'नवरं संचिदृणा ठिई जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा' नवरं-केवलं विशेषोऽयं यत् संस्थानाऽव-स्थिति कालः स्थितिरायुष्यकालश्च यथैव औधिक नीललेश्यादिशते कथिता तथैव तेनैव रूपेण ज्ञातव्या । न तु कृष्णलेश्यशतवदिति । 'नवरं संचिदृणा सुक्कलेस्साए उक्को-सेणं एकतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्वहियाइं' नवरं-केवलमेतावदेव वैलक्षण्यं यत् संस्थाना-अवस्थितिकालः शुक्ललेश्यायां शुक्ललेश्यशते, उत्कृष्टैकत्रिंशत्साग-

संज्ञी पञ्चेन्द्रियके सम्बन्ध में द्वितीयशत कहा गया है, उसी प्रकार से नील कापोत, तैजस, पद्म, शुक्ललेश्या इन पदों को जोड़कर भी ६ शत कहे गये हैं । इस प्रकार अभवसिद्धिक संज्ञिपञ्चेन्द्रिय जीव को लेकर सातशत हो जाते हैं । जैसे-एक औधिक शतक और ६ लेश्या सम्बन्धी ६ शतक 'नवरं संचिदृणा ठिई जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा' परन्तु यहां जो विशेषता है वह ऐसी है कि यहां अव-स्थिति काल और आयुष्यकाल ये दो बातें जैसी अभवसिद्धिक के औधिक नीललेश्यादिशत में कही गई हैं वैसी ही यहां पर कह लेनी चाहिये । कृष्णलेश्यशत के जैसे इन्हें यहां नहीं कहना चाहिये । 'नवरं संचिदृणा सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एकतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्वहियाइं' परन्तु शुक्ललेश्य शतक में उत्कृष्ट से एक

प्रमाणे कृष्णलेश्यापट्ट लघने अलवसिद्धिकवाणा संज्ञीपञ्चेन्द्रियना संणंधमां णीणु शतकं कडेवामां आवेल छे, अण प्रमाणे नील, कापोत, तैजस, पद्म, शुक्ललेश्याना संणंधमां ते ते पट्टाने लेईने छ शतके कडेला छे. आ रीते अलवसिद्धिक संज्ञि अकेन्द्रिय एवने लघने सात शतकं अने छ लेश्याओना संणंधमां छ शतके अ रीते सात शतके थधं जय छे. 'नवरं संचिदृणा ठिई जहेव ओहियसए' तहेव भाणियव्वा' परंतु अहियां ने विशेषणं छे, ते अणुं छे-के-अहियां अवस्थितिकाण अने आयुष्यकाण आ जे णाणतो ने प्रमाणे अलवसिद्धिक संणंधी औधिक शतकमां कडेल छे, अण प्रमाणे छे, तेम समज्जुं कृष्णलेश्या शतकना कथन प्रमाणे तेने अहियां कडेवातुं नथी. 'नवरं संचिदृणा सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एकतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमव्वहियाइं' शुक्ललेश्यामां-अट्टे के शुक्ललेश्याशतकमां उत्कृष्टी अंक अंतमुहुत्तं

रोपमाणि अन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि, एतावत्परिमिता ज्ञातव्या अन्तर्मुहूर्त्ताधिकैकत्रिंशत्सागरोपमकथनं तु उपरितनग्नैवेयकदेवमाश्रित्य ज्ञातव्यम् तत्र देवानामेतावदेवायुर्भवति शुक्ललेश्या च भवति, अभवसिद्धिकजीवा श्रोत्कर्षनस्तत्रैव देवतयोन्पद्यन्ते न तु ततः परतः समुत्पद्यन्ते अन्तर्मुहूर्त्तं च पूर्वमत्रावसानसम्बन्धीति । 'ठिई एवमेव' स्थितिरपि एवमेव संस्थानाप्रमितैव किन्तु 'नवरं' संस्थानकालादेतद् वैलक्षण्यं तदेवाह—'अंतोमुहूर्त्तं नत्थि' अंतर्मुहूर्त्तं नास्ति अत्र स्थितौ 'अंतोमुहूर्त्तमवमहियाई' इति पदं न वक्तव्यम्, स्थितिरेषामेकत्रिंशत्सागरोपमाणि, इति भावः । 'जहन्नगं तद्देव' जघन्यकं तथैव स्थितेर्जघन्यकालः संस्थानकालस्य जघन्य-

अन्तर्मुहूर्त्तं अधिक ३१ सागरोपम का अवस्थितिकाल है । उपरितनग्नैवेयकके देवों को आश्रित करके शुक्ललेश्या का यह अवस्थान काल कहा गया है । क्योंकि वहां पर देवों की इतनी ही आयु होती है और शुक्ललेश्या होती है । अभवसिद्धिक जीव उत्कृष्ट से नौवें ग्रैवेयक तक जाते हैं । इसके आगे नहीं जाते हैं अभवसिद्धिक संज्ञीपत्रेन्द्रिय जीवकी शुक्ललेश्या की स्थिति जो अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ३१ सागरोपमकी कही गई है, सो इसमें कारण तो पूर्व में प्रकट किया ही जा चुका है, परन्तु अन्तर्मुहूर्त्त अधिकता जो यहां बतलाई गई है वह पूर्वभव के अन्त के अन्तर्मुहूर्त्त को लेकर बताई गई है ऐसा जानना चाहिये । 'ठिई एवंचेव' स्थितिकाल आयुष्ककाल भी अवस्थानकाल के ही जैसा है । परन्तु 'अंतोमुहूर्त्तं नत्थि' यहां एक अन्तर्मुहूर्त्त की अधिकता नहीं है । आयुष्ककाल यहां केवल ३१ सागरोपम का ही है । 'जहन्नगं तद्देव'

वधारे ३१ ओकत्रीस सागरोपमने। अवस्थितिकाण कडेल छे. उपरितनग्नैवेयकना देवोने। आश्रय करीने शुक्लवेश्याने। आ अवस्थान काण कडेल छे. केम के त्यां देवोनुं आयुष्य ओटलुं न होय छे अने शुक्लवेश्या होय छे. अभवसिद्धिक लुवे। उत्कृष्टथी नवमां ग्रैवेयक सुधी नय छे. तेथी आगण नता नथी. अवसिद्धिक संज्ञीपत्रेन्द्रिय लुवेनी शुक्लवेश्यानी स्थिति ने अंतर्मुहूर्त्त वधारे ३१ ओकत्रीस सागरोपमनी कडेल छे. तो तेनुं कारण तो पहिला अताववामां आयुं न छे. परंतु अंतर्मुहूर्त्त अधिकपल्लुं अहियां कहुं छे, ते पूर्वभवना अन्तना अंतर्मुहूर्त्तने लधने कडेल छे, तेम समजलुं. 'ठिई एव चेव' स्थितिकाण अने आयुष्यकाण पल्लु अवस्थानकाण प्रमाणे न छे. परंतु 'अंतोमुहूर्त्तं नत्थि' अहियां ओक अंतर्मुहूर्त्तनुं अधिकपल्लुं कडेल नथी. अर्थात् आयुष्यकाण अहियां केवण ३१ ओकत्रीस सागरोपमने न छे. 'जहन्नगं तद्देव' स्थितिकाण संस्थानना जघन्यकाण प्रमाणेने न छे. जघन्य

काळवदेवेति । 'सर्व्वत्थ सम्मत्तनाणाणि नत्थि' सर्व्वत्रापि सम्यक्त्वं ज्ञानं च न भवतीति, 'विरई विरया विरई अणुत्तरविमाणोववत्ती एयाणि नत्थि' विरतिः विरताविरतिस्तथा अनुत्तरविमानादुपपातश्चेत्येतानि न सन्ति अभवसिद्धिक प्रकरणे अभवसिद्धिक स्वभावत्वात् । 'सर्व्वप्पाणा जाव णो इणट्ठे समट्ठे' हे भदन्त ! सर्व्वे प्राणा यावत् सर्व्वे-सत्त्वा अभवसिद्धिकसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतया समुत्पन्नपूर्वाः किमिति प्रश्नः, हे गौतम ! नायमर्थः समर्थः, इत्युत्तरम्, चेह वक्तव्यमिति 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । 'एवं एयाणि सत्त अभवसिद्धिय महाजुम्म सया भवंति' एवम्-उपरोक्तदर्शित क्रमेण सप्त सप्त संख्यकानि

स्थितिकाल संस्थानकाल के ही जघन्यकाल के बराबर है । अर्थात् जघन्यकाल १ एकसमय मात्र है । 'सर्व्वत्थ सम्मत्तनाणाणि नत्थि' यहाँ समस्त स्थानों में सम्यक्त्व एवं ज्ञान नहीं है । 'विरई अणुत्तरविमाणोववत्ती एयाणि नत्थि' विरति विरताविरति और अनुत्तर विमान से आकरके उपपात ये सब नहीं हैं । क्योंकि यह अभवसिद्धिक का प्रकरण है । इस में ये सब अभवसिद्धि स्वभाव होने से नहीं होते हैं । 'सर्व्वप्पाणा जाव णो इणट्ठे समट्ठे' हे भदन्त ! समस्त प्राण यावत् समस्त सत्त्व क्या अभवसिद्धिक संज्ञि पंचेन्द्रिय रूप से पहिले उत्पन्न हो चुके हैं ? तो इस प्रश्न के उत्तर में यहाँ ऐसा कहना चाहिये कि यह अर्थ समर्थ नहीं है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर

काल अथ समय मात्र न् ए. 'सर्व्वत्थ सम्मत्तनाणाणि नत्थि' अडियां सधणा स्थानोभां सम्यक्त्व अने ज्ञान कडेल नथी. 'विरई विरया विरई अणुत्तरविमाणोववत्ती एयाणि नत्थि' विरति विरताविरति अनुत्तर विमानथी आवीने उपपात आ णधा कडेल नथी. केम के-आ अभवसिद्धिकतुं प्रकरण्णुं ए. तेभां आ णधा अभवसिद्धिक स्वभाव डोवाथी डोता नथी. 'सर्व्वप्पाणा जाव णो इणट्ठे समट्ठे' डे लगवन् सधणा प्राणो यावत् सधणा सत्त्वा शुं अभव सिद्धिक पण्णाथी पडेलं उत्पन्न थर्ण चूक्यांछे ? आ प्रश्नना उत्तरभां अडियां अेषुं कडेषुं जेधं अे के-आ अर्थ समर्थ नथी.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' डे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयभां न् प्रमाणे कडेल छे, ते सधणुं कथन सत्य न् छे, डे लगवन् आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न् छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीअे

अभवसिद्धिकानां महायुगमशतानि एकौघिक पड़लेश्यान्तर्भूतानि पट् तदेवं सप्त शतानि भवन्तीति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । 'एवं एयाणि एकवीसं सन्नि महाजुम्मसयाणि' एवमुपरोक्तदर्शितक्रमेण चत्वारिंशत्तमे शतके संज्ञिनामेकविंशतिर्महायुगमशतानि भवन्तीति । 'सव्वाणि वि एकासीई महाजुम्मसयाइं समत्ताइं' सर्वाण्यपि एकाशीतिर्महायुगमशतानि समाप्तानि, तथाहि-पञ्चत्रिंशत्तमे शतके द्वादश महायुगमशतानि १२ पट्त्रिंशत्तमे

फिर वे संघम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

'एवं एयाणि सत्त अबवसिद्धिय महाजुम्मसया भवंति' इस प्रकार उपरोक्त दर्शित क्रमानुसार सात अबवसिद्धिक जीवों के महायुगम शत होते हैं । एक औघिकशत और ६ छहलेश्याओं के । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! यह ऐसा ही है २ । इस प्रकार 'एवं एयाणि एकवीसं सन्निमहाजुम्म सयाणि' उपर्युक्त दर्शित क्रम से ४० वें शतक में संज्ञी जीवों के २१ महायुगमशत होते हैं । 'सव्वाणि वि एकासीई महाजुम्मसयाइं समत्ताइं' ये सब मिलकर ८१ महायुगमशत समाप्त हुए । ८१ महायुगमशत इस प्रकार से होते हैं-३५ वें शतक में १२

प्रबुश्रीने वंढना करी तेज्जोने नमस्कार कर्या वंढना नमस्कार करीने ते पछी संघम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया.

'एवं एयाणि सत्त अबवसिद्धियमहाजुम्मसया भवंति' आ प्रभाणु उपर अतावेल, डम प्रभाणु अबवसिद्धिक एवोना सात महायुगम शतके थाय छे. तेमां ओक औघिक शतक अने छ लेश्याज्जोना छ शतके भणीने सात शतके समल देवा.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां कडेल सघणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे हे लगवन् आपनुं कथन सर्वथा सत्य ज छे ये प्रभाणु कडीने गीतमस्वाभीजे प्रबुश्रीने वंढना करी तेज्जोने नमस्कार कर्या ते पछी संघम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया.

'एवं एयाणि एकवीसं सन्निमहाजुम्म सयाणि' उपर अतावेल डमप्रभाणु आ आणीसमा शतकमां २१ ओकवीस महायुगम शतके होय छे. 'सव्वाणि वि एकासीई महाजुम्म सयाइं समत्ताइं' आ कुल भणीने ८१ ओकाशी महायुगम शतके समाप्त थया. आ ओकाशी महायुगम शतके आ प्रभाणु कड्या

सप्तमेऽपि द्वादश २४, सप्तत्रिंशत्तमेऽपि द्वादश ३६, अष्टत्रिंशत्तमेऽपि द्वादश ४८, एकौनचत्वारिंशत्तमेऽपि द्वादशशतानि ६० चत्वारिंशत्तमे एकविंशतिः ८१ शतानि सर्वसङ्कलनया एकाशीति महायुगमशतानि भवन्ति । एकाशीतेः प्रत्येक-मुद्देशाना मेकादशत्वेन एकादशसंख्यया गुणने एकनवत्युत्तराष्टशतानि उद्देश-कानां भवन्ति । तानि च महायुगमशतानि समाप्तानि ॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुलभादिपदभूषितवाल्मज्जिवारि - 'जैनाचार्य' पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां चत्वारिंशत्तमं शतकं समाप्तम् ॥४०॥

महायुगमशत हैं, ३६ वें शतक में भी १२ महायुगमशत हैं, ३७ वें शतक में भी १२ महायुगमशत हैं, ३८ वें शतक में भी १२ महायुगम-शत हैं, ३९ वें शतक में भी १२ महायुगमशत हैं और ४० वें शतक में २१ महायुगमशत हैं । इन सब ८१ शतों के ११-११ उद्देशक हैं । इसलिये इन सब उद्देशकोंकी संख्या ८९१ होती है । ये सब महायुगमशत समाप्त हुए ।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके चालीसवां शतक समाप्त ॥४०॥

छे. पांत्रीसमां शतकमां १२ आर महायुगम शतक कहेल छे उ६ छत्रीसमा शतकमां पञ्च १२ आर मनायुगम शतके अताव्या छे. उ७ साउत्रीसमां शतकमां पञ्च १२ महायुगम शतके कहेल छे. उ८ आउत्रीसमा शतकमां पञ्च १२ आर महायुगम शतके कहेल छे. उ९ आगणुयाणीसमा शतकमां पञ्च आर १२ महायुगम शतक कहेल छे. अने ४० आणीसमां शतकमां २१ अेकवीस अेक वीस महायुगम शतके कहेल छे. आ अथा मणीने ८१ अेकाशी महायुगम शतके थाय छे. ते अथा शतकेमां ११-११ अगियार-अगियार उद्देशाअे कहेल छे. तेथी अथा उद्देशाअेनी संख्या ८९१ आठसेअेकाणुनी थाय छे. ॥सत्तरमाथी २१ अेकवीसमा महायुगमे सुधीना पांच महायुगम शतके समाप्त ॥४०-१७-२१॥

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवतीसूत्र"नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना आलीसमा शतकतुं आणीससुं शतक समाप्त ॥४०॥

अथ एक चत्वारिंशत्तमं शतम्

अह पदमो उद्देशो

मूलम्—कडू णं भंते ! रासिजुम्मा पन्नत्ता ? गोयसा ! चत्तारि
 रासिजुम्मा पन्नत्ता तं जहा—कडजुम्म कलिओगे । से
 केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्तारि रासिजुम्मा पन्नत्ता
 तं जहा—जाव कलिओगे । गोयसा ! जे णं रासी चउक्कएणं
 अवहारेणं अवहीरमाणे चउवज्जवसिए से त्तं रासिजुम्मकड-
 जुम्मे । एवं जाव जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीर-
 माणे एगपज्जवसिए से त्तं रासीजुम्मकलिओगे । से तेणट्टेणं
 जाव कलिओगे । रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ
 उववज्जंति ? उववाओ जहा वक्कंतीए । ते णं भंते ! जीवा
 एगसमएणं केवइया उववज्जंति ? गोयसा ! चत्तारि वा अट्ट
 वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति ।
 ते णं भंते ! जीवा किं संतरं उववज्जंति निरंतरं उववज्जंति ?
 गोयसा ! संतरं पि उववज्जंति निरंतरं पि उववज्जंति । संतरं
 उववज्जमाणा जहन्नेणं एककं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जा
 समया अंतरं कट्टु उववज्जंति । निरंतरं उववज्जमाणा जह-
 न्नेणं दो समया उक्कोनेणं असंखेज्जा तसया अणुसमयं
 अविरहियं निरंतरं उववज्जंति । ते णं भंते ! जीवा जं समयं
 कडजुम्मा, तं समयं तेओगा, जं समयं तेओगा तं समयं कड-
 जुम्मा ? णो इणट्टे समंटे । जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावर-
 जुम्मा जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा नो इणट्टे
 समट्टे । जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलिओगा, जं समयं

कलिओगा तं समथं कडजुम्मा । णो इणट्ठे समट्ठे । ते णं भंते !
जीवा कंहं उववज्जंति ? गोयमा ! से जहानामए पवए पव-
माणे एवं जहा उववायसए जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति ।
ते णं भंते ! जीवा किं आयजसेणं उववज्जंति आयअजसेणं
उववज्जंति ? गोयमा ! नो आयजसेणं उववज्जंति आयअज-
सेणं उववज्जंति । जइ आयअजसेणं उववज्जंति किं आयजसं
उवजीवंति आयअजसं उवजीवंति ? गोयमा ! नो आयजसं
उवजीवंति, आयअजसं उवजीवंति । जइ आयजसं उव-
जीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ? गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा ।
जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ? गोयमा ! सकिरिया
नो अकिरिया । जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्जंति,
जाव अंतं करेति ? णो इणट्ठे समट्ठे । रासिजुम्म कडजुम्म असुर-
कुमाराणं भंते ! कओ उववज्जंति ? जहेव नेग्ग्या तहेव निर-
वसेसं । एवं जाव पंचिदियतिरिक्खजोणिया । नवरं वणस्सइ-
काइया जाव असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति सेसं एवं
चेव । मणुस्सा वि एवं चेव जाव नो आयजसेणं उववज्जंति,
आयअजसेणं उववज्जंति । जइ आयअजसेणं उववज्जंति किं
आयजसं उवजीवंति आयअजसं उवजीवंति ? गोयमा ! आय-
जसंपि उवजीवंति आयअजसंपि उवजीवंति । जइ आयजसं
उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ? गोयमा ! सलेस्सा वि
अलेस्सा वि । जइ अलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ? गोयमा !
नो सकिरिया, अकिरिया । जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं
सिज्जंति जाव अंतं करेति ? हंता सिज्जंति जाव अंतं करेति ।

जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ? गोयमा ! सकिरिया
नो अकिरिया । जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव
अंतं करेति ? गोयमा ! अत्थेगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति
जाव अंतं करेति, अत्थेगइया नो तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति
जाव अंतं करेति । जइ आयअजसं उद्वज्जंति किं सलेस्सा
अलेस्सा । गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा जइ सलेस्सा किं सकि-
रिया अकिरिया ? गोयमा ! सकिरिया नो अकिरिया । जइ
सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेति ? नो
इणट्टे समट्टे । वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया जहा नेरइया ।
सेवं भंते ! २ त्ति ॥सू०१॥

इक्कचत्तालीसइमे सए रासिजुग्मसए पढमो उदेसो समत्तो

छाया-कति खलु भदन्त ! राशियुग्माः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! चत्वारो राशि-
युग्माः प्रज्ञप्ताः ? तद्यथा कृतयुग्मो यावत् कलयोजः । तत्केनार्थेन भदन्त ! एव-
मुच्यते चत्वारो राशियुग्माः प्रज्ञप्ता इत्यथा यावत् कलयोजः ? गौतम ! यः
खलु राशिचतुष्केणापहारेणाऽपहियमाणश्चतुःपर्यवसितः सोऽयं राशियुग्म कृत-
युग्मः एवं यावद् यः खलु राशिचतुष्केणापहारेणैरुपर्यवसितः सोऽयं राशियुग्म
कलयोजः । तत्केनार्थेन यावत् कलयोजः । राशियुग्मकृतयुग्मनैरयिकाः खलु
भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? उपपातैः यथा व्युत्क्रान्तौ । ते खलु भदन्त ! जीवा
एकसमयेन क्रियन्त उत्पद्यन्ते ? गौतम ! चत्वारो वा अष्टौ वा द्वादश वा षोडश
वा संख्याता वा असंख्यातानोत्पद्यन्ते । ते खलु भदन्त ! जीवाः किं सान्तर
मुत्पद्यन्तैः निरन्तरमुत्पद्यन्ते ? गौतम ! सान्तरमपि उत्पद्यन्ते निरन्तरमपि
उत्पद्यन्ते ? सान्तरमुत्पद्यमाना जघन्येनैकं समयम् उत्कर्षेणासंख्येयान् समयान्
अनन्तरं कृत्वोत्पद्यन्ते । निरन्तरमुत्पद्यमाना जघन्येन द्वौ समयौ, उत्कर्षेण संख्ये-
यान् समयान् अनुपमयमद्विरहितं निरन्तरं मुत्पद्यन्ते । ते खलु भदन्त ! जीवाः
यस्मिन् समये कृतयुग्मा स्तस्मिन् समये त्रयोजाः, यस्मिन् समये त्रयोजा स्तस्मिन्
समये कृतयुग्माः ? नायमर्थः समर्थः । यस्मिन् समये कृतयुग्मा स्तस्मिन् समये
द्वापरयुग्माः, यस्मिन् समये द्वापरयुग्माः तस्मिन् समये कृतयुग्माः ? नायमर्थः
समर्थः । यस्मिन् समये कृतयुग्माः तस्मिन् समये त्रयोजाः, यस्मिन् समये
कलयोजो स्तस्मिन् समये कृतयुग्माः ? नायमर्थः समर्थः । ते खलु भदन्त !

जीवाः कथमुत्पद्यन्ते ? गौतम ! स यथानामकः प्लवकः प्लवमानः, एवं यथोप-
 पातगते यावत् नो परमयोगेगोत्पद्यन्ते । ते खलु भदन्त ! जीवाः किमात्मयशसा
 उत्पद्यन्ते आत्माऽयशसोत्पद्यन्ते ? गौतम ! नो आत्मयशसोत्पद्यन्ते आत्मा-
 यशसोत्पद्यन्ते । यदि आत्मायशसोत्पद्यन्ते । किमात्मयश उपजीवन्ति,
 आत्मायश उपजीवन्ति ? गौतम ! नो आत्मयशसोपजीवन्ति आत्मायशसो-
 पजीवन्ति । यदि आत्मायश उपजीवन्ति किं सलेश्या अलेश्याः ? गौतम !
 सलेश्याः नो अलेश्याः । यदि सलेश्याः । किं सक्रिया अक्रियाः ? गौतम !
 सक्रियाः, नो अक्रियाः । यदि सक्रिया स्तेनैव भवग्रहणेण सिद्ध्यन्ति यावदन्तं
 कुर्वन्ति ? नायमर्थः समर्थः । राशियुग्मकृतयुग्मान्मुरकुमाराः खलु भदन्त !
 कुत उत्पद्यन्ते ? यथैव नैरयिका स्तथैव निरवशेषम् । एवं यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्य-
 ग्योनिक्काः । नवरं वनरपतिक्रायिका यावत् असंख्येषा वा अनन्तावोत्पद्यन्ते,
 शेषम् एवमेव । सन्नुष्या अपि एवमेव यावत् नो आत्मयशसा उत्पद्यन्ते आत्मा-
 यशसा उत्पद्यन्ते । यदि आत्मायशसा उत्पद्यन्ते किमात्मयश उपजीवन्ति आत्मा-
 यश उपजीवन्ति ? गौतम ! आत्मयशोऽपि उपजीवन्ति आत्मायशसोऽपि उपजी-
 वन्ति । यथात्मयश उपजीवन्ति किं सलेश्याः अलेश्या ? गौतम ! सलेश्या अपि
 अलेश्या अपि । यदि अलेश्याः किं सक्रिया अक्रियाः ? गौतम ! नो सक्रिया
 अक्रियाः । यदि अक्रियाः तेनैव भवग्रहणेण सिद्ध्यन्ति यावत् अन्तं कुर्वन्ति ?
 हन्त सिद्ध्यन्ति यावदन्तं कुर्वन्ति । यदि सलेश्याः किं सक्रिया अक्रियाः ?
 गौतम ! सक्रियाः, नो अक्रियाः । यदि सक्रिया स्तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति
 यावदन्तं कुर्वन्ति ? गौतम ! अस्त्येकके तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति यावदन्तं
 कुर्वन्ति, अस्त्येकके नो तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति यावदन्तं कुर्वन्ति । यथात्मा-
 यश उपजीवन्ति किं सलेश्या अलेश्याः ? गौतम ! सलेश्या नोऽलेश्याः । यदि
 सलेश्याः किं सक्रिया अक्रियाः ? गौतम ! सक्रिया नो अक्रियाः । यदि सक्रिया
 स्तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति यावदन्तं कुर्वन्ति ? नायमर्थः समर्थः । वानव्यन्तर-
 ज्योतिष्कर्मणानिका यथा नैरयिकाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥मू०१॥

॥ एक चत्वारिंशत्तमे राशियुग्मशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ।

टीका—‘कह णं भंते ! रासिजुम्मा पन्नत्ता ?’ कति खलु भदन्त ! राशियुग्माः

शतक ४१ प्रथम उद्देशक

‘कह णं भंते ! रासिजुम्मा पन्नत्ता’ इत्यादि सूत्र १॥

श्रेष्ठताणीसभा शतधनो प्रारंभ—

पडेके। ७६शे।

‘कहि णं भंते ! रासिजुम्मा पणत्ता’ इत्यादि

प्रज्ञप्ताः ? युग्मशब्दो युगलवाचकोऽपि अस्ति इत्यतोऽसौ इह राशिशब्देन विशेष्यते तेन राशिरूपाः युग्माः न तु द्वितीयरूपा इति राशियुग्माः, ते सम्यग्या कतीति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘चत्वारि रासिजुम्मा पन्नत्ता’ चत्वारः राशियुग्माः प्रज्ञप्ता—कथिताः । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘कडजुम्मे जाव कलिओगे’ कृतयुग्मो यावत् कल्योजः अत्र यावत्पदेन ञ्योज द्वापरयुग्मयोः संग्रहः । तदेव सूत्रकारः स्पष्टयति—‘से केणट्टेणं भंते । एवं वुच्चइ चत्वारि रासिजुम्मा पन्नत्ता तं जहा जव कलिओगे’ तत्केनार्थेन भदन्त । एदमुच्यते चत्वारो राशियुग्माः प्रज्ञप्ताः तद्यथा यावत् कल्योजः, अत्र यावत्पदेन कृत युग्मञ्योज द्वापरयुग्मानां संग्रहो भवतीति प्रश्नः । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि,

टीकार्थ—हे भदन्त । राशियुग्म कितने कहे गये हैं ? युग्म जगद युगल का भी वाचक होता है इसलिये उसे यहां राशि शब्द से विशेषित किया गया है । अतः राशिरूपा जो युग्म हैं वे राशियुग्म हैं किन्तु द्विकरूप ये राशियुग्म नहीं हैं । ये संख्या में कितने होते हैं ? ऐसा यह प्रश्न है । इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं—‘गोयमा ! चत्वारि रासिजुम्मा पन्नत्ता’ हे गौतम ! चार राशिरूप युग्म कहे गये हैं । ‘तं जहा’ जैसे—‘कडजुम्मे जाव कलि ओगे’ कृतयुग्म यावत् कल्योज यहां यावत् पदसे ञ्योज और द्वापरयुग्म इनका ग्रहण हुआ है ।

गौतमस्वामी अब प्रभुश्री से ऐसा प्रश्न करते हैं—‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्वारि रासि जुम्मा पन्नत्ता तं जहा कडजुम्म जाव कलिओगे’ हे भदन्त । ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि कृतयुग्म से लेकर

टीकार्थ—हे भगवन् राशियुग्मे डेटला प्रक्षान्ना कडेवामा आवेल छे ? युग्म शब्द युगलने वाचक पणु होय छे. तेथी तेने अडियां राशि शब्दथी कडेवामां आवेल छे. जेथी राशि इप जे युग्म छे, ते राशियुग्म छे जे इप युग्म राशियुग्म नथी. ते सण्णामा डेटला होय छे ? आ रीतने अडिं गौतमस्वामीओ प्रश्न कदेव छे. आ प्रश्ना उत्तरमा प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—‘गोयमा ! चत्वारि रासिजुम्मा पन्नत्ता’ डे गौतम ! राशियुग्मे चार प्रकारना कडेवामा आवेल छे. ‘तं जहा’ जेभडे—कडजुम्मे जाव कलिओगे’ कृतयुग्म यावत् कल्योज अडिया यावत्पदथी ञ्ये.ए अने द्वापरयुग्म अडणु कदायेल छे.

हे गौतमस्वामी प्रभुश्रीने ओपु पूछे छे डे—‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ चत्वारि रासिजुम्मा पन्नत्ता तं जहा कडजुम्मकडजुम्म जाव कलिओगे’ डे भगवन् आप ओपुं शा कारणथी कडे छे ? डे कृतयुग्म कृतयुग्मथी लडने कल्योज

‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જે ણં રાસી ચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ચઠપજ્જવસિણ સેત્તં રાસીજુમ્મ કલ્હજુમ્મે’ યઃ સ્વલ્લુ રાશિશ્ચતુઃ સમુદાયરૂપશ્ચતુષ્ક્રેણાપહારેણાપહિયમાણશ્ચતુષ્પર્યવસિતઃ સોડયં રાશિયુગ્મકૃતયુગ્મમ્મ ઇતિ વચ્ચયતે । ‘એવં જાવ જે ણં રાસિચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપજ્જવસિણ સેત્તં રાસિજુમ્મકલિઓમે’ એવં યાવદ્ યઃ સ્વલ્લુ રાશિશ્ચતુષ્ક્રેણાપહારેણાપહિયમાણ એકપર્યવસિતો ભવતિ સોડયં રાશિયુગ્મ કલ્પોજઃ અત્ર યાવત્પદ્દેન યઃ સ્વલ્લુ રાશિશ્ચતુષ્ક્રેણાપહારેણાપહિયમાણે દ્વિપર્યવસિતો ભવતિ સોડયં રાશિયુગ્મ ત્રયોજઃ ૨, યઃ સ્વલ્લુ રાશિચતુષ્ક્રેણાપહિયમાણો દ્વિપર્યવસિતો ભવતિ સોડયં રાશિયુગ્મ દ્વાપરઃ ૩, ઇત્યનયોઃ સંગ્રહો ભવતિ ઇતિ । ‘સે તેણદ્દેણં યંતે ! જાવ કલિઓમે’ તત્તેનાર્યેન ગૌતમ ! એવમુચ્ચયતે

કલ્પોજ પર્યન્ત રાશિયુગ્મ ચાર કહે ગયે હિં ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હિં—‘ગોયમા ! જે ણં રાસી ચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ચઠપજ્જવસિણ સેત્તં રાસીજુમ્મ કલ્હજુમ્મે’ હે ગૌતમ ! જો રાશિ ચાર સે વિભક્ત્ત હોતી હુઈ અન્ત મેં ચાર વચ્ચાતી હૈ એસા વહ રાશિ કૃતયુગ્મ-રાશિ કહી ગઈ હિં । ‘એવં જાવ જે ણં રાસિ ચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપજ્જવસિણ સેત્તં રાસિજુમ્મ કલિઓમે’ હસી પ્રકાર યાવત્ત જો રાશિ ચાર હે વિભક્ત્ત હોતી હુઈ અન્ત મેં એક વચ્ચાતી હૈ વહ રાશિ-યુગ્મ કલ્પોજ કહા ગયા હૈ । યહાં યાવત્તદ સે ‘જો રાશિ ચાર સે વિભક્ત્ત હુઈ અન્ત મેં ત્રીન વચ્ચાતી હૈ વહ રાશિયુગ્મ ત્રયોજ હૈ । તથા જો રાશિ ચાર સે દ્વિભક્ત્ત હોતી હુઈ અન્ત મેં દો વચ્ચાતી હૈ વહ રાશિયુગ્મ દ્વાપરયુગ્મ હૈ’ ઇન દોનોં કા સંગ્રહ હુમા હૈ ।

શુધીના રાશિ યુગ્મે ચાર કહ્યા છે. આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે— ‘ગોયમા ! જે ણં રાસી ચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ચઠપજ્જવસિણ સેત્તં રાસિજુમ્મ કલિઓમે’ હે ગૌતમ ! જે રાશિ ચારથી વહેંચવામાં આવતાં છેવટે ચાર બચે તે રાશિને કૃતયુગ્મ રાશિ કહેવામાં આવે છે. ‘એવં જાવ જે ણં રાસિ ચઠક્રુણં અવહારેણં અવહીરમાણે ઇમપજ્જવસિણ સે ત્ત રાસિ જુમ્મ કલિઓમે’ આજ પ્રમાણે યાવત્ જે રાશિને ચારથી વહેંચવામાં આવતાં છેવટે એક વધે છે તે રાશિ યુગ્મને કલ્પોજ કલ્પોજ રાશિયુગ્મ કહેવય છે. અહિયાં યાવત્પદથી “જે રાશિ ચારથી વહેંચાઇને છેવટે ત્રણ બચાવે છે, તે રાશિયુગ્મ ત્રયોજ” છે, તથા જે રાશિ ચારથી વહેંચાઇને છેવટે બે બચાવે છે, તે રાશિયુગ્મ દ્વાપરયુગ્મરાશિ છે. આ બન્નેનો સંગ્રહ થયેલ છે. ‘સે તેણ દેણં જાવ કલિઓમે’ આ કારણથી છે હે ગૌતમ ! મેં એણું કહ્યું છે કે—રાશિયુગ્મ-

चत्वारः राशियुग्माः प्रज्ञप्ताः राशियुग्म कृतयुग्मो १, राशियुग्म ऽप्योजो २, राशि युग्म द्वापरो ३, राशियुग्म कल्पयोजः ४, इति । 'राशियुग्म कडजुग्म नैरहयाणं भंते । कओ उववज्जंति' राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्य यान्देवेभ्यो वा आगत्य उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—'उववाओ जहा वक्कंतीए' उपपातो यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः पठ्यपदे न नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते न वा देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते किन्तु तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते, इत्युत्तरमिति । 'ते णं भंते ! जीवा एगममएणं

'से तेणट्टेणं जाव कलिओगे' इत्य कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि राशियुग्म कृतयुग्म, राशियुग्म ऽप्योज, राशियुग्म द्वापरयुग्म और राशियुग्म कल्पयोज ऐसे चार राशियुग्म होते हैं ।

'राशियुग्म कडजुग्म नैरहयाणं भंते । कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! जो नैरयिक राशियुग्म कृतयुग्म कृतयुग्म प्रमित है—वे किस स्थान-विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों से आकरके उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'उववाओ जहा वक्कंतीए' हे गौतम ! जैसा इस सम्बन्ध में कथन प्रज्ञापना के व्युत्क्रान्तिपद में—उठे पद में किया गया है वैसा ही यहाँ पर कर लेना चाहिये । इस प्रकार वे न नैरयिकों से आकरके उत्पन्न होते हैं और न देवों से आकरके उत्पन्न होते हैं । किन्तु तिर्यगों में से और मनुष्यों में से आकरके वे उत्पन्न होते हैं ऐसा जानना

कृतयुग्म कृतयुग्म राशियुग्म, कृतयुग्म ऽप्योजराशियुग्म, द्वापरयुग्म कृतयुग्म कल्पयुग्म राशियुग्म ओ प्रमाणेना चार राशियुग्मो छे.

'राशियुग्म कडजुग्म नैरहयाण भंते । कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! नैरयिको राशियुग्म प्रमाणेना छे तेओ कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा यावत् देवोमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? या प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री छे छे—'उववाओ जहा वक्कंतीए' हे गौतम ! या विषयना सम्बन्धमां प्रज्ञापना सूचना व्युत्क्रान्ति पदमां उठेके छे छे पदमां प्रमाणेनुं कथन कदावा आवेल छे, ओन् प्रमाणेनु कथन अडिया छे छे कुछेओ. या रीने तेओ नैरयिकेमाथी आवीने उत्पन्न थता नथी. तथा देवोमाथी आवीने पठ्य उत्पन्न थता नथी. परंतु तिर्यग्भ्यो नैरयिकेमाथी अने मनुष्येमाथी आवीने तेओ उत्पन्न थाय छे. तेभ समज्जु. 'ते णं भंते ! जीवा एगममएणं नैरहया उववज्जंति' हे

केवइया उववज्जति' ते खलु भदन्त ! जीवा राशियुग्मकृतयुगनारका एक-
समयेन एकस्मिन् समये इत्यर्थः कियन्त उत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह—
'गोयमा' हे गौतम ! 'चत्वारि वा अट्ट वा वारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा
उववज्जति' चत्वारो वा अष्टौ वा द्वादश वा संख्याता वा असंख्याता वा समु-
त्पद्यन्ते इति । 'ते णं भंते ! जीवा किं संतरं उववज्जति निरंतरं उववज्जति' ते
खलु भदन्त ! जीवाः किं सान्तरम् अन्तरसहितं यथा भवेत्तथोत्पद्यन्ते अथवा
निरन्तरम्—अन्तररहितं समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि'
'गोयमा' हे गौतम ! 'संतरंपि उववज्जति निरंतरंपि उववज्जति' सान्तरमपि उत्प-
द्यन्ते निरन्तरमपि उत्पद्यन्ते ! 'संतरं उववज्जमाणा जहन्नेणं एकं समयं' सान्तर-
मुपपद्यमाना जघन्येन एकं समयं जघन्यतः समयमात्रस्य व्यवधानं कृत्वा समुत्प-
द्यन्ते इत्यर्थः । 'उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अन्तरं कट्टु उववज्जति' उत्कर्षेणा

चाहिये । 'ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जति' हे भदन्त !
वे जीव एकसमय में कितने उत्पन्न होते हैं ? 'गोयमा ! चत्वारि वा, अट्ट
वा, वारस वा, सोलस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जति'
हे गौतम ! वे जीव एक समय में चार अथवा आठ, अथवा वारह,
अथवा सोलह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । 'ते णं
भंते ! जीवा किं संतरं उववज्जति' निरंतरं उववज्जति' हे भदन्त ! वे जीव
क्या सान्तर—अन्तररहित—उत्पन्न होते हैं ? अथवा निरन्तर—अन्तर-
रहित उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'गोयमा ! संतरंपि
उववज्जति निरंतरं वि उववज्जति' हे गौतम ! वे जीव सान्तर भी
उत्पन्न होने हैं और निरन्तर भी उत्पन्न होते हैं । 'संतरं उववज्जमाणा
जहन्नेणं एकं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अन्तरं कट्टु उववज्जति'

भगवन् ते लुवे ओक समयमां डेट्ठा उत्पन्न थाय्ये ? उत्तरमां प्रभुश्री
कडे छे के—'गोयमा ! चत्वारि वा, अट्ट वा, वारस वा, संखेज्जा वा, असंखे-
ज्जा वा, उववज्जति' हे गौतम ! ते लुवे ओक समयमां चार, अथवा आठ,
अथवा बारह, अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न थाय्ये । 'ते णं
भंते ! जीवा किं संतरं उववज्जति, निरंतरं उववज्जति' हे भगवन् ते लुवे
शुं सान्तर—अन्तर सहित उत्पन्न थाय्ये ? अथवा निरंतर अन्तर विना
उत्पन्न थाय्ये ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—'गोयमा ! संतरंपि उववज्जति,
निरंतरं वि उववज्जति' हे गौतम ! ते लुवे सान्तर पणु उत्पन्न थाय्ये ।
अने निरंतर पणु उत्पन्न थाय्ये । 'संतरं उववज्जमाणा जहन्नेणं एकं समयं
उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अन्तरं कट्टु उववज्जति' सान्तर—अन्तर सहित

संख्येयान् समयान् अन्तरं कृत्वा समुत्पद्यन्ते । 'निरन्तरं उद्ववज्जमाणा जहन्नेणं दो समया' निरन्तरमुद्यमानाः जघन्येन द्वौ समयौ यावत् 'उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अणुसमयं अत्रिरहियं निरन्तरं उद्ववज्जन्ति' उक्कोसेणासंख्येयान् समयान् यावत् अनुसमयमविरहितं निरन्तरं समुत्पद्यन्ते । 'अनुसमय' इत्यादि पदत्रयमेकार्थकम् । 'ते णं भते ! जीवा जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' ते खलु भदन्त ! जीवा यस्मिन् समये कृतयुग्मा इत्वभिधीयन्ते तस्मिन् समये किं त्र्योज पदवाच्याः सम्भवन्ति ? तथा—'जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा' यस्मिन् समये त्र्योज पदवाच्याः तस्मिन् समये कृतयुग्म शब्दवाच्याः सम्भवन्ति किमिति प्रश्नः, उत्तरमाह—'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः ममर्थः एक संख्याश्रितानां

सान्तर उत्पन्न होने पर वे जघन्य से एकसमय का और उत्कृष्ट से असंख्यात समयका अन्तर कर के उत्पन्न होते हैं । 'निरन्तरं उद्ववज्जमाणा जहन्नेणं दो समया' और निरन्तररूप से जब वे उत्पन्न होते हैं तब वे जघन्य से दो समय तक एवं 'उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अणुसमयं अत्रिरहियं निरन्तरं उद्ववज्जन्ति' उत्कृष्ट से असंख्यात समय तक प्रत्येक समय में विना अन्तर के उत्पन्न होते रहते हैं । 'अनुसमय आदि ये तीन पद एक ही अर्थवाले हैं । 'ते णं भते ! जीवा जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' हे भदन्त ! वे जीव जिस समय में कृतयुग्मपदवाच्य होते हैं उस समय में वे क्यों त्र्योजपदवाच्य होते हैं ? तथा—'जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा' वे जिस समय में त्र्योजपदवाच्य होते हैं उस समय में वे कृतयुग्मपदवाच्य होते हैं ?

उत्पन्न थाय त्त्यारे तेओो जघन्यथी ओक समयथीअने उत्कृष्टथी असंख्यात समयना अंतरथी उत्पन्न थाय छे. 'निरन्तरं उद्ववज्जमाणा जहण्णेण दो समया' अने निरन्तरपण्णथी त्त्यारे तेओो उत्पन्न थाय छे, त्त्यारे तेओो जघन्यथी ओ समय सुथी अने 'उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अणुसमयं अत्रिरहियं निरन्तरं उद्ववज्जन्ति' उत्कृष्टथी असंख्यात समय सुथी प्रत्येक समयमां अंतर विना उत्पन्न थता रहे छे. "अनु समय विगेरे आ त्रणु पटो ओक ज प्रकारना अर्थने णताववावाणा छे. 'ते णं भते जीवा जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' छे लगवन् ते ओवो ओ समयमां कृतयुग्म पदवाणा छेय छे, ते वण्णे तेओो शुं त्र्योज पदवाणा छेय छे ? तथा 'ज समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा' ओ वण्णे तेओो त्र्योजपदथी युक्त छेय छे, ते वण्णे तेओो शुं कृतयुग्म पदवाणा छेय छे ? आ प्रश्नता उत्तरमां प्रबुध्नी जीतभ-

विरुद्धसंख्यान्तराधिकरणत्वादिति । एवम् 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' यस्मिन् समये कृतयुग्माः तस्मिन् समये द्वापरयुग्माः संभवन्ति ? 'जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा' यस्मिन् समये द्वापरयुग्माः तस्मिन् समये कृतयुग्माः संभवन्ति किमिति प्रश्नः, उत्तरमाह—'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः । 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलियोगा' यस्मिन् समये कृतयुग्मास्तस्मिन् समये कलयोजाः किम् ? तथा—'जं समयं कलियोगा' तं समयं कडजुम्मा' यस्मिन् समये कलयोजास्तस्मिन् समये कृतयुग्माः किमिति प्रश्नः,

इस प्रश्न के उत्तर में प्रसुथी कहते हैं—'णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । क्योंकि जो एक संख्याश्रित हैं उनमें विरुद्ध संख्यान्तर की अधिकरणता नहीं बनती है । इस प्रकार 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' यह प्रश्न भी कि जिस समय वे कृतयुग्म रूप होते हैं उस समय में वे क्या द्वापरयुग्म रूप होते हैं ? 'णो इणट्ठे समट्ठे' इस सूत्र के अनुसार समर्थित नहीं हुआ है । और इसी प्रकार से—'जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा' यह प्रश्न भी कि "जिस समय वे द्वापरयुग्म रूप होते हैं, उस समय में वे क्या कृतयुग्म रूप भी होते हैं ? 'णो इणट्ठे समट्ठे' सूत्र के अनुसार समर्थित नहीं हुआ है । 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलियोगा' तथा—'जिस समय में कृतयुग्मपदवाच्य होते हैं उस समय में वे कलयोज पदवाच्य होते हैं तथा 'जं समयं कलियोगा तं समयं कडजुम्मा' जिस समय वे कलयोज पदवाच्य होते हैं उस समय वे क्या कृतयुग्म पद-

स्वामीने कडे छे के—'णो इणट्ठे समट्ठे' छे गौतम ! आ अर्थ अरोअर नथी केम के—'णो अके संख्याना आश्रयवाणा छे, तेओमां विरुद्ध प्रकारना संख्यान्तरनुं अधिकरणपाणु बनतुं नथी ओण प्रभाणु 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' ओ समये कृतयुग्म होय छे, ते समयमां तो शुं द्वापरयुग्म रूप होय छे ? आ प्रश्न पणु 'णो इणट्ठे समट्ठे' आ सूत्रपाठना कथन प्रभाणु समर्थित थयेल नथी. अने ओण प्रभाणु 'जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा' आ प्रश्न के—'न्यारे तेओ द्वापरयुग्म पदवाणा होय छे, ते समये तेओ शुं कृतयुग्म रूप पणु होय छे ? आ प्रश्न पणु 'णो इणट्ठे समट्ठे' आ सूत्रपाठ प्रभाणु समर्थित थयेला नथी. 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलियोगा' तथा ओ समये कृतयुग्म पदवाणा होय छे, ते वअते तेओ कथेओण पदथी युक्त होय छे. 'जं समयं कलियोगा तं समयं कडजुम्मा' न्यारे तेओ कथेओण पदथी युक्त होय छे, ते वअते तेओ

उत्तरमाह—‘णो इण्टे समट्टे’ नायमर्थः समर्थः, इत्युत्तरम्. युक्ति पूर्वोक्तव ‘तेणं भंते ! जीवा कहिं उववज्जंति’ ते खलु भदन्त ! जीवाः कथमुत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘से जहानामए पवए पवमाणे एवं जहा उववायसए जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ स यथानामकः प्लवकः प्लवमानः एवं यथा उपपातशतके भगवत्या एव त्रिंशत्तमशतके प्रथमो देशके कथितं तथाऽत्रापि ज्ञातव्यम् कियत्पर्यन्तं तत्राह—‘जाव’ इत्यादि, यावत् ‘नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ नो परमयोगेणोत्पद्यन्ते एतत्पर्यन्तम् उपपात-शतकमत्राध्येतव्यम् एकत्रिंशत्तमशतके पञ्चविंशतिगतकीयाष्टमोदेशकस्यातिदेशो विद्यते तथा च अध्यवसानयोगनिर्वर्तितेन करणोपायेनेत्यारभ्य आत्मप्रयोगेणो-

वाच्य होते हैं ? क्या यह प्रश्न भी ‘णो इण्टे समट्टे’ सूत्र के अनु-सार हे गौतम ! समर्थित नहीं हुआ है ।

‘ते णं भंते ! जीवा कहिं उववज्जंति’ हे भदन्त ! वे जीव कैसे किस प्रकार से उत्पन्न होते हैं ? ‘गोयमा ! से जहानामए पवए पवमाणे एवं जहा उववायसए जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ हे गौतम ! जैसे कोई एक प्लवक कूदता कूदता अपने स्थान से आगे के स्थान पर पहुँच जाता है—इत्यादि रूप से जैसा उपपात शतकमें इसी भगवती के ३१ वें शतक में प्रथम उद्देशक में कहा गया है वह यहाँ पर कह लेना चाहिये । ‘जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ इस सूत्रपाठ तक तात्पर्य कहने का यह है कि ३१ वें शतक में पञ्चवीस वें शतक के आठ वें उद्देशकका अतिदेश है जो वहाँ के ‘अध्यवसान योग निर्वर्तितेन करणो-

कृतयुग्म पदधी युक्त होय छे ? आ प्रश्न पछु ‘णो इण्टे समट्टे’ आ सूत्र पाठना कथन प्रमाणे छे गौतम समर्थित थयेल नथी.

‘ते णं भंते ! जीवा कहिं उववज्जंति’ छे भगवन् ते लये केवी रीते उत्पन्न थय छे ? उत्तरमां प्रबुध्री छडे छे छे—‘गोयमा ! से जहानामए पवए पवमाणे एवं जहा उववायसए जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ छे गौतम ! जेम केअं ओक इन्दार पुइय इदते इदते पोताना स्थानधी आगणना स्थान पर पडोअी लय छे, विगेरे प्रकारधी जे प्रमाणे उपपात शतकमां ओटवे छे आ भगवती सूत्रना उ ओकत्रीसमा शतकना पडेला उद्देशमा कडेवामां आवेल छे, जेअ प्रमाणेनुं सधशुं कथन अदिया समल देवुं. ‘जाव नो परप्पओगेणं उववज्जंति’ आ सूत्रपाठ सुधी ते कथन छडी लवु आ कथननुं तात्पर्य जे छे छे—ओकत्रीसमा शतकमां पञ्चीसमा शतकना

उत्पद्यन्ते एतत्संयन्तं पञ्चविंशतिशतकीयाष्टमोद्देशकप्रकरणमिहाध्येतव्यमिति । 'ते णं भन्ते ! जीवा किं आयजसेणं उद्वज्जंति आयजसेणं उद्वज्जंति' ते खलु भदन्त ! जीवाः किमात्मयशसा उत्पद्यन्ते आत्मनः स्रष्टवन्धि यशः यशःकारणत्वात् आत्मनः यशः-संयम आत्म यज्ञ स्तेन आत्मयशसा समुत्पद्यन्ते अथवा आत्मनोऽयशसा समुत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, भगवानाह- 'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो आयजसेणं उद्वज्जंति आयजसेणं उद्वज्जंति' नो आत्मयशसा उत्पद्यन्ते किन्तु आत्माऽयशसोत्पद्यन्ते इह च सर्वेषामात्माऽयशसैवोत्पत्ति भवति उत्पत्तौ सर्वेषां मन्विरत्वादिति । 'जह आयजसेणं उद्वज्जंति किं आयजसं उद्वजीवंति आयजसं उद्वजीवंति' यदि आत्माऽयशसा उत्पद्यन्ते तदा किमात्म

पायेन' हस्त पाठ से लेकर 'आत्मप्रयोगेण उत्पद्यन्ते' हस्त पाठ तक पच्चीस वे शतक का अष्टमोद्देशक प्रकरण ग्रहण कर लेना चाहिये । 'ते णं भन्ते ! जीवा किं आयजसेणं उद्वज्जंति' हे भदन्त । ये जीव कया अपने यज्ञ से उत्पन्न होते हैं ? अथवा 'आयजसेणं उद्वज्जंति' अथवा अपने असंयम से उत्पन्न होते हैं ? 'गोयमा । नो आयजसेणं उद्वज्जंति, आयजसेणं उद्वज्जंति' हे गौतम । वे अपने संयम से उत्पन्न नहीं होते हैं, किन्तु अपने असंयम से उत्पन्न होते हैं । यहां समस्त जीवों की उत्पत्ति अपने असंयम से ही होती है । क्यों कि उत्पत्ति में यहां समस्त जीवों की अविरत अवस्था ही कारण है । 'जह आयजसेणं उद्वज्जंति' किं आयजसं उद्वजीवंति' आयजसं उद्वजीवंति यदि वे आत्म असंयम से उत्पन्न होते हैं तो कया वे आत्म संयम का आश्रय करते हैं ? अथवा आत्म असंयम का

आठमा उद्देशानी लक्ष्मणु करेल छे, तो त्याथी 'अव्यवधानयोगनिवर्तित्वेन करणोपायेन' आ पाठथी लक्ष्मणे 'आत्मप्रयोगेण उत्पद्यन्ते' आ पाठ सुधी पच्चीस शतकना आठमा उद्देशानु' कथन अहियां प्रहस्य करीने कडेवुं लेईये. 'ते णं भन्ते ! जीवा आयजसेण उद्वज्जंति' हे भगवन् ते एवे शु' पोताना यशथी संयमथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा 'आयजसेणं उद्वज्जंति' अथवा पोताना असंयमथी उत्पन्न थाय छे ? उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के- 'गोयमा ! नो आयजसेणं उद्वज्जंति, आयजसेणं उद्वज्जंति' हे गौतम ! तेअो पोताना संयमथी उत्पन्न थता नथी. परंतु पोताना असंयमथी न उत्पन्न थाय छे. केम के 'जह आयजसेणं उद्वजीवंति किं आयजसं उद्वजीवंति आयजसं उद्वजीवंति' ने ते आत्म असंयमथी उत्पन्न थाय छे, तो शु'

यशः-आत्मसंयममुपजीवन्ति-आश्रयन्ति विदधतीत्यर्थः अथवा आत्मनोऽयशः
 आत्मनोऽसंयममुपजीवन्ति-आश्रयन्ति किमिति प्रश्नः, भगवानाह-‘गोयमा’
 इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘नो आयजसं उवजीवंति आय अजसं उवजीवंति’
 नो आत्मनो यश-आत्मसंयम रतम् नो उपजीवन्ति किन्तु आत्मायशः आत्मनोऽ
 संयममुपजीवन्ति आश्रयन्तीति । ‘जइ आय अजसं उवजीवंति सलेस्सा अलेस्सा’
 हे भदन्त ! यत्रात्मयशः आत्मनोऽसंयममुपजीवन्ति, तदा किं ते जीवाः सलेश्या
 भवन्ति अलेश्या वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह-‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’
 हे गौतम ! ‘सलेस्सा नो अलेस्सा’ सलेश्याः लेश्यावन्त एव भवन्ति न तु लेश्या-
 रहिता भवन्तीति । ‘जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया’ हे भदन्त ! यदि ते
 जीवाः सलेश्याः तदा सक्रिया अक्रिया वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह-‘गोयमा’
 इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सकिरिया नो अकिरिया’ सक्रिया एव भवन्ति
 न तु क्रिया रहिता भवन्तीति । ‘जइ सकिरिया तेणेव भवमगहणेण सिज्जंति जाव

आश्रय करते हैं ‘गोयमा ! नो आयजसं उवजीवंति आय अजसं
 उवजीवंति’ हे गौतम ! वे आत्म संयम वा आश्रय नहीं करते हैं
 किन्तु आत्म असंयम का ही आश्रय करते हैं । ‘जइ आय अजसं
 उवजीवंति, सलेस्सा अलेस्सा’ हे भदन्त ! यदि वे आत्म असंयम का
 आश्रय करते हैं तो क्या ये लेश्यासहित ही होते हैं अथवा लेश्या-
 रहित होते हैं ? ‘गोयमा सलेस्सा नो अलेस्सा’ हे गौतम ! ये लेश्या
 सहित ही होते हैं लेश्या रहित नहीं होते हैं । ‘जइ सलेस्सा किं
 सकिरिया अकिरिया’ हे भदन्त ! यदि ये लेश्यासहित होते हैं तो
 क्या वे क्रियायुक्त होते हैं ? अथवा क्रियायुक्त नहीं होते हैं ? ‘गोयमा !

तेजो आत्म संयमनो आश्रय करे छे ? अथवा आत्म असंयमनो आश्रय
 करे छे ? ‘गोयमा ! नो आयजसं उवजीवंति, आय अजसं उवजीवंति’ छे गौतम !
 तेजो आत्म संयमनो आश्रय करता नथी परतु आत्म असंयमनो न
 आश्रय करे छे ‘जइ आय अजसं उवजीवंति, सलेस्सा, अलेस्सा’ छे लगवन्
 ने तेजो आत्म असंयमनो आश्रय करे छे तो शुं तेजो लेश्या सहित होय
 छे ? छे लेश्या विनाना होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री छे छे छे ‘गोयमा !
 सलेस्सा नो अलेस्सा छे गौतम ! तेजो लेश्या सहित न होय छे, लेश्यारहित
 होता नथी ‘जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया’ छे लगवन् ने तेजो लेश्या
 सहित होय छे, तो शुं क्रिया युक्त होय छे ? अथवा क्रियायुक्त होता नथी ?
 उत्तरमां प्रभुश्री छे छे छे-‘गोयमा ! सकिरिया नो अकिरिया’ छे गौतम तेजो
 क्रियारहित होय छे, क्रिया विनाना होता नथी. ‘जइ सकिरिया तेणेव भवमग-

अंतं करेति' हे भदन्त । यदि तै जीवाः सक्रियाः तदा तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति यावदंतं कुर्वन्ति अत्र यावदादेन बुद्ध्यन्ते मुच्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामित्यस्य ग्रहणं भवतीति प्रश्नः, भगवानाह—'णो इणट्टे समट्टे' नायमर्थः समर्थः । ते तेनैव भवग्रहणेन न सिद्ध्यन्ति ५ इति भावः ।

'रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणां भंते ! कओ उववज्जंति' राशियुग्म कृतयुग्मासुरकुमाराः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते यावद्देवेभ्य आगत्योत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह—अतिदेशद्वारेण 'जहेव' इत्यादि

सकिरियानो अकिरिया' हे गौतम ! ये क्रिया सहित ही होते हैं क्रिया रहित नहीं होते हैं । 'जह सकिरिया तेणेव भवग्रहणेणं सिज्जंति जाव अंतं करेति' हे भदन्त । यदि क्रिया सहित ही होते हैं तो क्या वे उसी भव से सिद्ध हो जाते हैं यावत् अन्त कर देने हैं ? यहां यावत्पद से 'बुद्ध्यते, मुच्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वं दुःखानाम्' इन पदों का ग्रहण हुआ है । उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'णो इणट्टे समट्टे' हे गौतम ! यह अर्थ समर्थित नहीं हुआ है । इस कारण ये भी इसी भव से न सिद्ध होते हैं न बुद्ध होते हैं न मुक्त होते हैं न परिनिर्वात होते हैं न समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ।

'रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणां भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! राशियुग्म कृतयुग्म राशिप्रमाण असुरकुमार किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ?

हणेणं सिज्जंति जाव अंतं करेति' हे भदन्त ! जो क्रिया सहित न होय छे, तो शुं तेओ ओण लवमां सिद्धि प्राप्त करी ले छे ? बुद्ध थर्ष जय छे ? मुक्त थर्ष जय छे ? यावत् सर्वं दुःखेणो अंतं करी दे छे ? अहिया यावत् एथी बुद्ध्यन्ते, मुच्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानाम्' आपहोने संथइ थये छे आ प्रश्ना उत्तमा प्रभुश्री कहे छे के—'णो इणट्टे समट्टे' हे गौतम ! आ अर्थ समर्थित थयेल नथी, तेथी तेओ ओण लवमां सिद्ध थता नथी, मुक्त थता नथी परिनिर्वात थता नथी, अने सधणा दुःखेणो अंतं करता नथी ।

'रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणां भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! राशियुग्म कृतयुग्म राशि प्रमाण असुरकुमार क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा भुज्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अति

‘जहेव नेरइया तहेव निरवसेस’ यथैव नैरयिकास्तथैव निरवजोपम् तिर्यग्भ्यो-
मनुष्येभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते इत्यादि सर्वे नैरयिक प्रकरणवद्देशवगन्तव्यं नवर
नैरयिकस्थाने असुरकुमारेति पदं संयोज्य अलापको वक्तव्यः, आलापप्रकारश्च
स्वयमेव ऊहनीय इति । ‘एवं जाव पंचिदियतिरिक्खजोणिया’ एवं नैरयिक
वदेव यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोणिकाः यावत्पदेन असुरकुमारादारभ्य चतुरिन्द्रिया-
न्तानां संप्रहस्तथा च एकेन्द्रियादारभ्य पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोणिकानामुपपानादयः
नारकवदेव ज्ञातव्याः । ‘नवरं वणस्सइकाइया जाव असखेज्जा वा अणता वा
उववज्जंति’ नवरं—केवलं नारकप्रकरणापेक्षया इदमेव वैश्वरूपं यद् वनस्पति-

अतिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री कहते हैं—‘जहेव नेरइया तहेव
निरवसेस’ हे गौतम ! जैसा नैरयिकों के सम्वन्ध में कहा जा चुका
है वैसा ही इनके सम्वन्ध में कहलेना चाहिये । इस प्रकार ये तिर्यग्गो-
निकों में से आकर के अथवा मनुष्यों में से आकर के उत्पन्न होते हैं
इत्यादि समस्त प्रकरण यहाँ जानने का ही जाता है । आलापक की
रचना करते समय नैरयिक के स्थान में असुरकुमार पद रखना चाहिये
और आलाप प्रकार अपने आप समझ लेना चाहिये ‘एवं जाव पंचिदिय
तिरिक्ख जोणिया’ इसी प्रकार से यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गोणिक जीवों के
भी उत्पाद आदि जानना चाहिये । यहाँ यावत्पद से ‘एकेन्द्रिय नागकुमार
से लेकर चौहेन्द्रिय तक के जीवों का ग्रहण हुआ है । तथा च असुरकुमार
से लेकर पंचेन्द्रिय तिर्यग्गोणिकों का उत्पात आदि नारक के जैसा ही
होता है । ‘नवरं वणस्सइकाइया जाव असखेज्जा वा अणतावा उवव
ज्जंति’ परन्तु वनस्पतिकायिक जीव यावत् असुरगण अधना अनन्त

देश द्वारा या प्रश्नो उत्तर आपतां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे हे-
‘जहेव नेरइया तहेव निरवसेस’ हे गौतम ! नैरयिकोना संबंधना ने प्रमाणे
कडेवाभां आवेद छे, ओण प्रमाणेतुं कथन या राशियुग्म द्वु-युग्म अयुग्
कुमारोना संबंधनां पणु समन्वुं. या गीते तेओ तिर्यग्गोणिकोभाया
अथवा मनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे, विगेरे मधुणु प्रहरणु अदियां
समलु देवुं. आलापको कडेती वणने नैरयिकोना स्थाने असुरकुमार या पद
भूठीने आलापको कडेवा नेधये आलापकोना प्रकार स्वयं समलु देवे ‘एवं
जाव पंचिदियतिरिक्खजोणिया’ ओण प्रम छे यावत् पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्गोणिकोना
उपपात विगेरे पणु समन्वया. अदिया यावत् पहरी ओकेन्द्रियो लईने
थार धेन्द्रिय सुधीना लुवे अडणु इराया छे. ओटवे हे ओकेन्द्रियो लईने
पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्गोणिकोना उपपात विगेरे नारकोना कथन प्रमाणे होय छे
‘नवरं वणस्सइकाइया जाव असखेज्जा वा अणता वा उववज्जंति’ परन्तु

कायिका यावद् असंख्याता वा अनन्ता नोत्पद्यन्ते इति यावत्पदेन चत्वारोऽष्टौ द्वादश षोडश संख्याता वा एतदन्तस्य ग्रहणम् । 'सैसं एवं चेव' शेषम्-परिमाण-तिरिक्तं सर्वमपि एवमेव-नारकवदेव ज्ञातव्यमिति । 'मणुस्सा वि एवं चेव जाव नो आयजसेणं उव्वज्जंति आयअजसेणं उव्वज्जंति' मनुष्या अपि एवमेव-नैर-यिकवदेव ज्ञातव्याः कियन्तं प्रकरणं मनुष्ये योज्यं तत्राह-'जाव' इत्यादि, यावत् आत्मयशसा नोत्पद्यन्ते किन्तु आत्मायशसामुत्पद्यन्ते एतत्पर्यन्तं नारकप्रकरणमव-गन्तव्यमिति । 'जइ आय अजसेणं उव्वज्जंति किं आयजसं उव्वजीवंति आय-अजसं उव्वजीवंति' हे भदन्त । ते मनुष्याः यदि आत्मनोऽयशसा-असंयमेनोत्प-द्यन्ते तदा किम् आत्मयशः-आत्मनः संयममुपजीवन्ति-आश्रयन्ति, अथवा आत्मनोऽसंयममुपजीवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'आयजसंपि उव्वजीवंति आयअजसंपि उव्वजीवंति' आत्मयशः आत्मनः

होते हैं । यहाँ यावत् पद से चार आठ बारह सोलह अथवा संख्यात इस पाठका ग्रहण हुआ है । 'सैसं एवं चेव' परिमाण के अतिरिक्त और सब कथन नारक के प्रकरण के जैसा ही है । 'मणुस्सा वि एवं चेव जाव नो आयजसेणं उव्वज्जंति आय अजसेणं उव्वज्जंति' इस प्रकार से मनुष्य भी यावत् आत्मसंयम से उत्पन्न नहीं होते हैं किन्तु आत्म असंयम से ही उत्पन्न होते हैं । इस पाठनक मनुष्यों के सम्बन्ध में भी सब कथन नारक के प्रकरण जैसा ही कह लेना चाहिये । 'जइ आय अजसेणं उव्वज्जंति, किं आयजसं उव्वजीवंति, आय अजसं उव्वजीवंति' हे भदन्त । यदि वे मनुष्य आत्म असंयम से उत्पन्न होते हैं तो क्या वे आत्म संयमका आश्रय करते हैं अथवा आत्म असंयमका

वनस्पतिप्रयुक्त एवो यावत् असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न थाय छे, अद्विधां यावत्पत्थी ओक अथवा जे यावत् इस अथवा असंख्यात आ पाठ ग्रहण कराये छे, 'सैसं एवं चेव' परिणामना कथन शिवाय पाकीतुं सधणुं कथन नारकना प्रकरणुं प्रमाणे न छे, 'मणुस्सा वि एवं चेव जाव नो आय जसेणं उव्वज्जंति आय अजसेणं उव्वज्जंति' ओन प्रमाणे मनुष्य पणु यावत् आत्म संयमथी उत्पन्न थना नथी, परंतु आत्म असंयमथी न उत्पन्न थाय छे, आ पाठ सुधी मनुष्येना संयमं पणु परिणामना कथन शिवाय पाकीतुं सधणुं कथन नारकना प्रकरणं कथा प्रमाणे कहेतुं जे छे 'जइ आयजसेणं उव्वज्जंति किं आयजसं उव्वजीवंति आय अजसं उव्वजीवंति' छे लगवन जे ते मनुष्ये आत्मसंयमथी उत्पन्न थाय छे, तो शु तेओ आत्म संयमने आश्रय करे छे ? अथवा आ असंयमने आश्रय करे छे ? उत्तरमां

संयममपि उपजीवन्ति ते मनुष्याः तथा-आत्मनोऽयशः असंयममपि उपजीवन्तीति 'जइ आयजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा' यदि ते मनुष्या आत्मयशः आत्मनः संयममुपजीवंति तदा किं ते सलेश्या लेश्यासहिताः किं वा अलेश्याः-ले.य.रहिता वा भवन्तीति प्रश्नः। भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सलेस्सा वि अलेस्सा वि' सलेश्या अपि भवन्ति अलेश्याः-लेश्यारहिता अपि भवन्ति। 'जइ अलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया' यदि सलेश्या भवन्ति तदा किं ते मनुष्याः सक्रिया भवन्ति अक्रियाः-क्रियारहिता वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो सकिरिया अकिरिया नो सक्रिया भवन्ति, किन्तु अक्रिया भवन्तीति। 'जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करे'ति' यदि ते मनुष्याः अक्रियाः तदा किं तेनैव भवग्रहणेन

आश्रय करते हैं ? 'गोयमा ! आयजसं वि उवजीवंति आय अजसंपि उवजीवंति' हे गौतम ! वे आत्म संयमका भी आश्रय करते हैं और आत्म असंयम का भी आश्रय करते हैं। 'जइ आयजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा' हे भदन्त ! यदि वे आत्म संयम का आश्रय करते हैं तो क्या वे सलेश्य होते हैं अथवा अलेश्य होते हैं ? 'गोयमा ! सलेस्सा वि अलेस्सा वि' हे गौतम ! वे सलेश्य भी होते हैं और अलेश्य भी होते हैं। 'जइ अलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया' यदि वे अलेश्य होते हैं तो वे क्या क्रिया सहित होते हैं ? अथवा क्रिया रहित होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-'गोयमा ! नो सकिरिया अकिरिया' वे सक्रिय नहीं होते हैं किन्तु अक्रिय होते हैं। 'जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करे'ति' हे भदन्त ! यदि वे अक्रिय होते हैं तो क्या वे उसी भदसे सिद्धिक होते हैं यावत् अन्त करते हैं ? यहाँ यावत्

प्रभुश्री कहे थे- 'गोयमा ! आयजसं वि उवजीवंति आय अजसं वि उवजीवंति' हे गौतम ! तेज्जे आत्म संयमने पणु आश्रय करे थे. अने आत्म असंयमने पणु आश्रय करे थे. 'जइ आयजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा' हे लगवन् ने तेज्जे आत्म संयमने आश्रय करे थे, तो शुं तेज्जे लेश्यावाणा होय थे ? अथवा लेश्या विनाना होय थे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे थे- 'गोयमा ! सलेस्सा वि अलेस्सा वि' हे गौतम ! तेज्जे लेश्या वाणा पणु होय थे, अने लेश्याविनाना पणु होय थे. 'जइ अलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया' ने तेज्जे लेश्याविनाना होय थे, हो शुं किया सदिन होय थे ? के किया विनाना होय थे ? उत्तरमां प्रभुश्री कहे थे- 'गोयमा ! नो सकिरिया अकिरिया' तेज्जे कियावाणा होता नधी पणु अकिया-किया विनाना होय थे. 'जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करे'ति' हे लगवन् ने तेज्जे किया विनाना होय थे, तो शुं तेज्जे अने लवमां

सिद्ध्यन्ति बुद्ध्यन्ते मुच्यन्ते परिनिर्वान्ति सर्वदुःखानामन्तं कुर्वन्तीति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘हंता’ इत्यादि, ‘हंता सिञ्जति जाव अंतं करेति’ हन्त गौतम ! इत्थं भूता मनुष्याः सिद्ध्यन्ति बुद्ध्यन्ते मुच्यन्ते परिनिर्वान्ति सर्वदुःखानामन्तं च कुर्वन्त्येवेति । ‘जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया’ हे भदन्त ! ते मनुष्या यदि सलेइयाः तदा किं सक्रिया भवन्ति अक्रिया वा भवन्तीति प्रश्नः भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सक्रिया नो अकिरिया’ ये सलेइयास्ते सक्रिया एव भवन्ति नो अक्रिया भवन्ति, इति । ‘जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति जाव अंतं करेति’ यदि ते सक्रियाः तदा किं तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति यावत्सर्वदुःखानामन्तं कुर्वन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अत्येगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति जाव अंतं करेति’

पद से बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाण होते हैं और सर्व दुःखों का (अन्त करते हैं) इन पदों का ग्रहण हुआ है । उत्तर में प्रमुथ्री कहते हैं—‘हंता, सिञ्जति जाव अंतं करेति’ हाँ गौतम ! वे उसी भव से सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं । ‘जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया’ हे भदन्त ! यदि वे सलेइय होते हैं तो क्या सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय होते हैं ? ‘गोयमा ! सक्रिया नो अकिरिया’ हे गौतम ! वे सक्रिय होते हैं अक्रिय नहीं होते हैं । ‘जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति जाव अंतं करेति’ यदि वे सक्रिय होते हैं तो क्या वे उसी भव से सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ? ‘गोयमा ! अत्येगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति, जाव

सिद्ध थाय छे, यावत् अंत करे छे ? अडियां यावत्पट्ठी पुद्ध थाय छे ? मुक्त थाय छे ? परिनिर्वाण थाय छे ? अने सर्व दुःखोने अंत करे छे ? आ पटोने अग्रह थये छे. आ प्रश्नना उत्तरमा प्रमुथ्री गौतमस्वामीने कहे छे छे—‘हंता ! सिञ्जति जाव अंतं करेति’ हाँ गौतम ! तेओ अण लवमां सिद्ध थाय छे. यावत् सधणा दुःखोने अंत करे छे ‘जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया’ ई लणवन् ने तेओ देशवाणा डाय छे तो शुं तेओ सक्रिय-क्रिया सहित डाय छे ? अथवा अक्रिय-क्रिया विनाना डाय छे ? उत्तरमां प्रमुथ्री कहे छे छे—‘गोयमा ! सक्रिया नो अकिरिया’ हे गौतम ! तेओ क्रिया सहित डाय छे, क्रियाविनाना डायता नथी. ‘जइ सक्रिया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति, जाव अंतं करेति’ ने तेओ क्रिया सहित डाय छे, तो शुं तेओ अण लवमां सिद्धि थय नथ छे ? यावत् सधणा दुःखोने अंत करे छे ? उत्तरमां प्रमुथ्री कहे छे छे—‘गोयमा ! अत्येगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिञ्जति, जाव

अस्त्येकके तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयति यावत् अन्तं कुर्वन्ति । तेषां मोक्षस्य प्राप्स्यमानत्वेन तत्समये अक्रियत्व सद्भावात्, 'अत्येगइया नो तेणेव भवग्रहणेणं सिज्जन्ति जाव अंतं करे'ति' अस्त्येकके मनुष्या नो तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयन्ति यावत् सर्वदुःखानामन्तं कुर्वन्तीति । 'जइ आय अजसं उवजीवन्ति किं सलेस्सा अलेस्सा' यद्यात्मनोऽयं उवजीवन्ति तदा किं ते मनुष्याः सलेस्सा अलेस्सा वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा' हे गौतम ! तदा ते सलेस्सा नो अलेस्सा भवन्तीति । 'जइ सलेस्सा किं सकिरिया अक्रिया' यदि सलेस्सास्ते मनुष्या स्तदा किं सक्रिया अक्रिया वा भवन्तीति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सक्रिया नो

अंतं करे'ति' हे गौतम ! इन में कितनेक ऐसे मनुष्य होते हैं जो उन्ही भवसिद्धिक होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं । वहाँ मोक्ष की भविष्यत् में प्राप्ति के सद्भाव में अक्रियता का सद्भाव ही जाना है । 'अत्येगइया नो तेणेव भवग्रहणेणं सिज्जन्ति जाव अंतं करे'ति' तथा इन में कितनेक मनुष्य ऐसे होते हैं जो उन्ही भव से सिद्ध नहीं होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त नहीं करते हैं 'जइ आय अजसं उवजीवन्ति किं सलेस्सा अलेस्सा' यदि वे आत्म असंयम का आश्रय करते हैं तो क्या वे मनुष्य सलेस्स्य होते हैं अथवा अलेस्स्य होते हैं ? 'गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा' हे गौतम ! वे सलेस्स्य होते हैं अलेस्स्य नहीं होते हैं ? 'जइ सलेस्सा किं सकिरिया अक्रिया' यदि वे सलेस्स्य होते हैं तो क्या क्रिया सहित होते हैं अथवा क्रिया रहित होते हैं ? 'गोयमा !

अंतं करे'ति' हे गौतम ! तेओमा डेटलाक मनुष्यो ओवा डोय छे डे—ओन लवमां सिद्ध थध नय छे, यावत् सधणा दुःणेनो अंत करे छे. अहिया लविष्यमां मोक्ष प्राप्तिना सद्भावथी अक्रियणानो सद्भाव थध नय छे. 'अत्येगइया नो तेणेव भवग्रहणेणं सिज्जन्ति जाव अंतं करे'ति' तथा तेओमां डेटलाक मनुष्यो ओवा डोय छे डे—ओओ ओन लवमां सिद्ध थता नथी. यावत् सधणा दुःणेनो अंत करता नथी. 'जइ आय अजसं उवजीवन्ति किं सलेस्सा अलेस्सा' ने तेओ आत्म असंयमनो आश्रय करे छे तो शुं ते मनुष्यो देख्या सहित डोय छे ? डे देख्या विनाना डोय छे ? उत्तरमा प्रबुध्री कहे छे डे—'गोयमा ! सलेस्सा नो अलेस्सा' हे गौतम ! तेओ देख्यावाणोडोय छे, देख्या विनाना डोता नथी. 'जइ सलेस्सा किं सकिरिया अक्रिया' ने तेओ देख्यावाणा डोय छे, तो शुं क्रिया सहित डोय छे डे क्रिया विनाना डोय छे ? उत्तरमां प्रबुध्री कहे छे डे—'गोयमा ! सकिरिया नो अक्रिया' हे गौतम ! तेओ क्रिया सहित

અક્રિયા' સક્રિયાસ્તે ભવન્તિ નતુ અક્રિયા ભવન્તીતિ । 'જહ સક્રિયા તેજેવ ભવગ્ગહણેણં સિજ્ઞંતિ જાવ અંતં કરેતિ' યદિ તે સક્રિયા સ્તદા કિં તેનૈવ ભવગ્ગહણેન સિદ્ધયન્તિ યાવદન્તં કુર્વન્તીતિ પ્રશ્નઃ, ઉત્તરમાહ—'જો ઇણદ્દે સમદ્દે' નાયમર્થઃ સમર્થઃ । એતે તેનૈવ ભવગ્ગહણેન ન સિદ્ધયન્તિ આત્માડયશસ્કત્વેન તદ્ભાવમોક્ષાડપદ્ધાવાત્ । 'વાણમંતર જોહસિયવેમાણિયા જહા નેરહયા' વાનવ્યન્તર જ્યોતિષ્ક વૈમાનિકા યથા નૈરયિકાઃ નૈરયિકવદેવ એતેષામપિ તિર્યગ્મનુષ્યાભ્યામાગત્યોત્પત્તિરિત્યાદિકં સર્વં જ્ઞાતવ્યમિતિ । 'સેવં ! મંતે ! સેવં મંતે ત્તિ' તદેવં

સક્રિયા નો અક્રિયા' હેગૌતમ ! વે સક્રિય હોતે હૈં અક્રિય નહીં હોતે હૈં । 'જહ સક્રિયા તેજેવ ભવગ્ગહણેણં સિજ્ઞંતિ, જાવ અંતં કરેતિ' યદિ વે સક્રિય હોતે હૈં તો કયા વે ઉણી ભવ સે સિદ્ધ હોતે હૈં યાવત્ સમસ્ત દુઃખોં કા અન્ત કરતે હૈં ? 'જો ઇણદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થિત નહીં હુઆ હૈં । કયોંકિ આત્મ અસંયમવાલે હોને સે વે તદ્ભવ મોક્ષગામી નહીં હોતે હૈં । 'વાણમંતર જોહસિય વેમાણિયા જહા નેરહયા' વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક ઓર વૈમાનિક હન કે સમ્બન્ધ મેં મી નૈરયિકોં કે જૈસા હી કથન જાનના યાહિયે । હનકી મી ઉત્પત્તિ તિર્યગ્ચોનિક જીવોં મેં સે ઓર મનુષ્યોં મેં સે આયે હુએ જીવોં સે હોતી હૈં । અર્થાત મનુષ્ય ગતિ સે ઓર તિર્યગ્ગતિસે આયે હુએ જીવ હી વાનવ્યન્તરાદિ રુપ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં । હત્યાદિ સબ કથન નૈરયિકોં કે જૈસા હી જાનના યાહિયે । 'સેવં ! મંતે ! સેવં ! મંતે ! ત્તિ' હે મદન્ત જૈસા આપને યહ કહા હૈ વહ સબ સર્વથા સત્ય હી હૈં ૨ । હસ પ્રકાર કહકર ગૌતમને

હોય છે. ક્રિયા વિનાના હોતા નથી. 'જહ સક્રિયા તેજેવ ભવગ્ગહણેણ સિજ્ઞંતિ, જાવ અંતં કરેતિ' જો તેઓ ક્રિયા સહિત હોય છે ? તો શું તેઓ એજ ભવમાં સિદ્ધ થાય છે ? યાવત્ સઘણા દુઃખોના અંત કરે છે ? જો ઇણદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! આ અર્થ અરોઅર નથી. કેમકે—આત્મ સંયમવાળા હોવાથી તેઓ એજ ભવમાં મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોતા નથી 'વાણમંતર જોહસિય વેમાણિયા જહા નેરહયા' વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક અને વૈમાનિકોના સંબંધમાં પણ નૈરયિકોના કથન પ્રમાણે જ કથન સમજવું. તેઓની ઉત્પત્તિ પણ તિર્યગ્ચોનિવાળા જીવોમાંથી અને મનુષ્યોમાંથી આવેલા જીવોમાંથી થાય છે. અર્થાત મનુષ્યગતિથી અને તિર્યગ્ચગતિથી આવેલા જીવો જ વાનવ્યન્તર વિગેરે પણથી ઉત્પન્ન થાય છે. વિગેરે તમામ કથન નૈરયિકોના કથન પ્રમાણે જ સમજવું.

'સેવં ! મંતે ! સેવં ! મંતે ! ત્તિ' હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયે આ વિષયમાં જે કથન કર્યું છે, તે સર્વથા સત્ય જ છે. હે ભગવન્ આપ દેવાનુપ્રિયનું સઘણું

भदन्त ! तदेवं भदन्त इति । हे भदन्त ! राशियुगम कृतयुगम नारकादिवैमानिकान्त
जीवानामुत्पादादि विषये यत् कथितं देवानुप्रियेण तत्सर्वं सत्यमेवेति कथ-
यित्वा गौतमो यावद्विहरतीति ॥

॥ इति श्री विश्वदिख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापाठ्यपरुप्रविश्वद्वगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूञ्जपति कोल्हापुरराजपदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मद्विवाकर
-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भग-
वतीसूत्रस्य" प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां एकचत्वारिंशत्तमे राशि
युगशतके प्रथमोद्देशकः
समाप्तः ॥४१।१।१॥

प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर
फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान
पर विराजमान हो गये ।

जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकतालीसवें शतक के
राशियुग शतक में प्रथम उद्देशक समाप्त ॥४१-१॥

कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाषे कहीने गौतमस्वामीसे प्रभुश्रीने वन्दना
करी नमस्कार कर्या वन्दना नमस्कार करीने ते पथी संयम अने तपथी पोताना
आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥४०१॥
जैनाचार्य जैनधर्मद्विवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी
प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना अकताणीसमां शतकमां राशियुगशतकने
पडेले उद्देशे समाप्त ॥४१-१॥



॥ 'अह वीओ उद्देशो' ॥

मूलम्—रासिजुम्म तेओगनेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति एवं चेव उद्देशो भाणियव्वो । नवरं परिमाणं तिन्नि वा
सत्त वा पंचदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति ।
संतरं तहेव । ते णं भंते ! जीवा जं समयं तेओगा तं समयं
कडजुम्मा जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा ? णो इणट्टे
समट्टे । जं समयं तेओगा तं समयं दावरजुम्मा जं समयं दावर-
जुम्मा तं समयं तेओगा ? णो इणट्टे समट्टे । एवं कलिओगेण
वि समं सेसं तं चेव जाव वेमाणिया । नवरं उववाओ सव्वेसिं
जहा वळ्ळंतीए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४१-२॥

॥ वीओ उद्देशो समत्तो ॥

छाया—राशियुग्म त्र्योज नैरयिकाः खलु भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते एवमेव
उद्देशो भणितव्यः । नवरं परिमाणं त्रयो वा, सप्त वा, एकादश वा, पञ्चदश वा,
संख्याता वा, असंख्यातावोत्पद्यन्ते । सान्तरं तथैव । ते खलु भदन्त । जीवाः
यस्मिन् समये त्र्योजा स्तस्मिन् समये कृतयुग्माः यस्मिन् समये कृतयुग्मा
स्तस्मिन् समये त्र्योजाः नायमर्थः समर्थः । यस्मिन् समये त्र्योजा स्तस्मिन्
समये द्वापरयुग्माः यस्मिन् समये द्वापरयुग्मा स्तस्मिन् समये त्र्योजाः नायमर्थः
समर्थः । एवं कल्योजेनापि समष्ट्, शेषं तदेव यावद्वैमानिकाः । नवरमुपपातः
सर्वेषां यथा व्युत्क्रान्ती । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥४०॥२॥

टीका—'रासिजुम्म तेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' राशियुग्म-
त्र्योज नैरयिकाः खलु भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद्देवेभ्यो वेति

शतक ४१ उद्देशक २

'रासिजुम्म तेओगनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त !
राशियुग्म त्र्योज नैरयिक किंस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते

शील उद्देशानो प्रारंभ—

'रासिजुम्म तेओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' धृत्यादि

टीकार्थ—हे लगवन् राशियुक्त त्र्योज नैरयिक कथा स्थान विशेषधी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?

प्रश्नः, उत्तरमाह—‘एवं चेव उद्देशो भाणियव्वो’ एवमेव प्रथमोद्देशकवदेव द्वितीयोद्देशकोऽपि भाणितव्यः । प्रथमोद्देशके यथा यथा कथितं तत्सर्वमिहापि तथैव वक्तव्यमिति । प्रथमोद्देशकापेक्षया द्वितीये वैलक्षण्यं दर्शयति—‘नवरं’ इत्यादि, ‘नवरं परिमाणं तिन्नि वा सत्त वा एकारस वा पंचदस वा संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा उववज्जंति’ नवरं परिमाणं त्रयो वा सप्त वा एकादश वा, पञ्चदश वा, संख्याता वा असंख्यातावोत्पद्यन्ते इति । ‘संतरं तहेव’ सान्तरमुत्पद्यन्ते निरन्तरं वोत्पद्यन्ते इत्यस्योत्तरं प्रथमोद्देशकवदेव ज्ञातव्यमिति । ‘तेणं भंते ! जीवा’ ते खलु मदन्त ! राशियुगमञ्चोर्नैरयिकी जीवाः ‘जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा’ यस्मिन्

हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? ‘एवं चेव उद्देशो भाणियव्वो’ हे गौतम ! इस सम्बन्ध में जैसा प्रथम उद्देशक कहा गया है उसी प्रकार से यह द्वितीय उद्देशक भी कह लेना चाहिये । परन्तु उसकी अपेक्षा जो यहां भिन्नता है वह ‘नवरं परिमाणं तिन्नि वा सत्त वा एकारस वा पंचदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति’ इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है—इससे यह प्रकट किया गया है कि राशियुगम नैरयिक एक समय में तीन, अथवा सात अथवा ग्यारह अथवा पन्द्रह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । ‘संतरं तहेव’ ये नारक सान्तर उत्पन्न होते हैं अथवा निरन्तर उत्पन्न होते हैं ? इस सम्बन्ध में उत्तर प्रथम उद्देशक में जैसा कहा गया है

अथवा तिर्यञ्चोर्नैरयिकी आवीने उत्पन्न थाय्ये ? अथवा मनुष्योर्नैरयिकी आवीने उत्पन्न थाय्ये ? अथवा देवोर्नैरयिकी आवीने उत्पन्न थाय्ये ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रलुथ्री जीतमस्वामीने कळे छे के—‘एवं चेव उद्देशो भाणियव्वो’ हे गौतम ! आ सञ्जंघमां पडेला उद्देशामा ने प्रमाणेनुं कथन करवामां आवेल छे, अण प्रमाणेनुं कथन आ णीण उद्देशामां पणु कही देबु लेणजे. परंतु पडेला उद्देशाना कथन करतां आ उद्देशामां ने इरक्षार आवे छे, ते ‘नवरं परिमाणं तिन्नि वा सत्त वा एकारस वा पंचदस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति’ आ सूत्रपाठ द्वाग अहिया प्रकट करवामां आवेल छे—आ सूत्रपाठथी अण अतावेल छे के—राशियुगमञ्चोर्नैरयिकी अण समयमां त्रयु अथवा सात अथवा अग्यार अथवा पंचदस अथवा सञ्जंघ्यात अथवा असञ्जंघ्यात उत्पन्न थाय्ये. ‘संतरं तहेव’ आ नारक सान्तर—अंतरसहित पणु उत्पन्न थाय्ये अने निरंतर पणु उत्पन्न थाय्ये, आ विषय सञ्जंघी उत्तर पडेला उद्देशामां कळा प्रमाणे न छे. ‘ते णं

समये ऽधोजा स्तस्मिन् समये कृतयुग्माः 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' यस्मिन् समये कृतयुग्माः तस्मिन् समये ऽधोजाः किपिति प्रश्नः, उत्तरमाह—'नो इणट्टे समट्टे' नायमर्थः समर्थः यस्मिन् समये ऽधोजाः न तस्मिन् समये कृत-युग्माः तथा यदा कृतयुग्मा स्तदा न ऽधोजा इति भावः । 'जं समयं तेओगा तं समयं दावरजुम्मा जं समयं दावरजुम्मा तं समयं तेओगा' यस्मिन् समये ऽधोजाः तस्मिन् समये द्वापरयुग्माः यस्मिन् समये द्वापरयुग्मा स्तस्मिन् समये ऽधोजाः,

वैसा ही है । 'ते णं भंते ! जीवा जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा' हे भदन्त ! ये राशियुग्म ऽधोज जीव जित्त समय ऽधोज राशिप्रमाण होते हैं उस समय में वे क्या कृतयुग्म राशिप्रमाण हो जाते हैं ? 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' और जिस समय ये कृतयुग्म राशिप्रमाण होते हैं उस समय क्या वे ऽधोज राशिप्रमाण हो जाते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'णो इणट्टे समट्टे' हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । अर्थात् जिस समय ये ऽधोजराशिप्रमित होते हैं उस समय में ये कृतयुग्म राशि रूप नहीं होते हैं तथा जब ये कृतयुग्म राशीरूप होते हैं, तब वे ऽधोज राशिरूप नहीं होते हैं । 'जं समयं तेओगा तं समयं' हे भदन्त ! ये जीव जित्त समय ऽधोजराशिरूप होते हैं तब क्या ये उस समय 'दावरजुम्मा' द्वापरयुग्म रूप होते हैं ? और जिस समय ये द्वापरयुग्म होते हैं उस समय क्या ये ऽधोजराशि रूप हो जाते हैं ?

भंते ! जीवा जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा' हे भगवन् आ राशियुग्म ऽधोज एव न्यारे ऽधोज राशिप्रमाणो ङाय छे ते समये तेओगा शुं कृतयुग्मराशि प्रमाणवाणा थछं नय छे ? 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा' अने न्यारे तेओगा कृतयुग्म राशिप्रमाणवाणा ङाय छे, त्यारे तेओगा ऽधोज राशिइय थछं नय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे है—'णो इणट्टे समट्टे' हे गौतम ! आ अर्थं णरोणर नथी. अर्थात् न्यारे तेओगा ऽधोज राशिइय होय छे, त्यारे तेओगा कृतयुग्म राशिइय होता नथी. तथा न्यारे तेओगा कृतयुग्म राशिइय होय छे, त्यारे तेओगा ऽधोज राशिइय होता नथी. 'जं समयं तेओगा तं समयं' हे भगवन् आ एवो न्यारे ऽधोजराशि प्रमाणवाणा ङाय छे, त्यारे शुं तेओगा 'दावरजुम्मा' द्वापरयुग्म इय ङाय छे, अने न्यारे तेओगा

भवन्ति किमिति प्रश्नाः, उत्तरमाह—‘णो इण्टे समट्टे’ नायमर्थः समर्थः ‘एवं कलिओगेण वि समं’ एतन्नेव कलयोजेनापि सह प्रश्नं कृत्वा उत्तरणीयम् इति । ‘सेसं तं चेव जाव वेमाणिया’ अपि तदेव यावद्वैमानिकाः ते खलु भदन्त ! जीवाः कुत उत्पद्यन्ते ? इत्यारब्ध वेमानिकपर्यन्तं प्रथमोद्देशकवदेव ज्ञातव्यमिति । ‘नवरं उववाओ सव्वेसिं जहा वक्कंतीए’ नवरमुपपातः सर्वेषां यथा व्युत्क्रान्तौ प्रज्ञापनायाः पण्ठे पदे कथित इत्यैवेहापि ज्ञातव्य इति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति’ तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति ।

इति श्री — विश्वरिख्यातजगद्बल्लभादिपद्भूषितवाक्यब्रह्मचारि — ‘जैनाचार्य’ पूज्यश्री—घाण्डीलालव्रतिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां एतच्चत्वारिंशत्तमशतकस्य द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥४१॥२॥

उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—‘णो इण्टे समट्टे’ हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । ‘एवं कलिओगेणं वि समं’ इसी प्रकार से कलयोज के साथ भी प्रश्न करके उत्तर कह लेना चाहिये । ‘सेसं तं चेव जाव वेमाणिया’ हे भदन्त ! ये जीव किन्व स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? यहां से लेकर वैमानिकों तक जैसा प्रथम उद्देशक में कहा गया है वैसा ही यहां पर भी कह लेना चाहिये । ‘नवरं उववाओ सव्वेसिं जहा वक्कंतीए’ परन्तु उपपात के विषय में जैसा कथन प्रज्ञापना के

द्विपरयुग्म रूप होय छे, ते वणते शुं तेओ अणोरशि प्रमाणु होय छे ? आ प्रश्ना उत्तरमां प्रभुश्री कडे छे के—‘णो इण्टे समट्टे’ हे गौतम ! आ अर्थ अणोर नथी. ‘एवं कलिओगेण वि समं’ आ प्रमाणु इत्येण संबंधमां पणु प्रश्न उपस्थित करीने तेना उत्तर कडेयो लेधये. ‘सेसं तं चेव जाव वेमाणिया’ हे भगवन् आ एवो कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नथी लधने वैमानिके सुधी पडेता उदेशामां ले प्रमाणु कडेल छे. अणु प्रमाणु अडियां पणु कडेवु लेधये. ‘नवरं उववाओ सव्वेसिं जहा वक्कंतीए’ परन्तु उपपातना संबंधमां प्रज्ञापना सूत्रना छट्टा व्युत्क्रान्ति पदमा ले प्रमाणुनु कथन करवामा आवेल छे. अणु प्रमाणुनु कथन मनुष्येमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे. अणु प्रमाणु समन्तुं लेधये.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां ले प्रमाणुनु कथन कथुं छे, ते सधुं कथन सर्वथा सत्य छे हे भगवन्,

छट्टे व्युत्क्रान्ति पद में क्रिया है वैसा ही यहां पर भी कर लेना चाहिये। 'खेवं भंते ! खेवं भंते ! त्ति' इन पदों का अर्थ पूर्व में जैसा कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकतालीसवें शतक का द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥४१-२॥

आप देवानुप्रियतुं सघणुं कथन सर्वथा न सत्य छे. आ प्रभाणे कहीने गौतमस्वामीके प्रबुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पधी संयम अने तपशी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर भिराजमान थया. ॥सू०१॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र' की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना एकतालीसवा शतकने भीजे उद्देशे समाप्त ॥४१-२॥



॥ 'अह तद्दो उद्देसो' ॥

मूलम्—रासिजुम्म दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति ? एवं चेव उद्देसओ । नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस
वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति संवेहो । ते णं भंते !
जीवा जं समयं दावरजुम्मा तं लसयं कडजुम्मा जं लसयं कड-
जुम्मा तं समयं दावरजुम्मा ? णो इणट्टे समट्टे । एवं तेओएण
वि समं, एवं कलिओगेण वि समं । सेसं जहा पढमे उद्देसए
जाव वेमाणिया । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

॥ तद्दो उद्देसो समत्तो ॥४१-३॥

छाया—राशियुग्म द्वापरयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते एव-
मेवोद्देशकः । नवरं परिमाणं द्वौ वा पडू वा दश वा संख्याता वा, असंख्याता-
वोत्पद्यन्ते संवेद्यः । ते खलु भदन्त ! जीवाः यस्मिन् समये द्वापरयुग्माः तस्मिन्
समये कृतयुग्माः यस्मिन् समये कृतयुग्मा स्तस्मिन् समये द्वापरयुग्माः ? नाय-
मर्थः समर्थः । एवं त्र्योजेनापि समम्, एवं कल्योजेनापि समम् । शेषं यथा
प्रथमोद्देशके यावद्वैमानिकाः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥१

॥ तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥४१-३॥

टीका—'रासिजुम्प दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' राशि-
युग्म द्वापरयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? किं नैरयिकेभ्यो
यावदेवेभ्यो वेति प्रश्नः, उत्तरमाह—'एवं चेव उद्देसओ' एवमेवोद्देशको यथा

शतक ४१ उद्देशक ३

'रासिजुम्म दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ—हे भदन्त ! राशियुग्म त्रै द्वापरयुग्म राशिप्रमित नैरयिक
किस स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों
में से आकर के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकर

श्रील उद्देशानो प्रारंभ—

'रासिजुम्म दावरजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ—हे लगवन् राशियुग्मभां द्वापरयुग्म राशिप्रभाषुवाणा नैरयिके
क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेभांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्यथेभाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा

प्रथमोद्देशकः तथैव तृतीयोद्देशकोऽपि ज्ञातव्य इति । 'नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जति' 'नवरं परिमाणं द्वी वा पइ वा दश वा संख्याता वा असंख्याता वा उत्पन्नन्ते एदान्तनेव भेदः प्रथमोद्देशकापेक्षयेति । 'संवेहो' संवेधः, संवेधोऽप्यत्र वाच्यः । 'तेणं भंते ! जीवा' ते खलु भदन्त ! जीवा राशियुग्म द्वापरयुग्म नैरयिकाः 'जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा' यस्मिन् समये द्वापरयुग्मा स्तस्मिन् समये कृतयुग्माः 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' यस्मिन् समये कृतयुग्मा स्तस्मिन् समये द्वापरयुग्मा के उत्पन्न होते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'एवं चेव उद्देशओ' हे गौतम ! इस सम्बन्ध में प्रथम उद्देशक के जैसा ही कथन जानना चाहिये 'नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जति' परन्तु परिमाण प्रकरण में यहां ऐसा ही कहना चाहिये कि ये नैरयिक एक साथ में दो उत्पन्न होते हैं अथवा छह उत्पन्न होते हैं, अथवा दस उत्पन्न होते हैं, अथवा संख्यात उत्पन्न होते हैं, अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । बस यही एक विशेषता प्रथम उद्देशक की अपेक्षा इस तृतीय उद्देशक में है । 'संवेहो' यहाँ संवेध भी वाच्य है । 'तेणं भंते ! जीवा' हे भदन्त ! ये राशियुग्म में द्वापरयुग्म राशिप्रमित नैरयिक 'जं समयं दावरजुम्मा' जिस समय में द्वापरयुग्म होते हैं उस समय में क्या ये कृतयुग्म रूप हो जाते हैं ? 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' और जिस समय में ये कृतयुग्म रूप होते हैं उस समय में क्या ये द्वापरयुग्म रूप हो जाते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री

भनुप्येमांधी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांधी आवीने उत्पन्न उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे डे—'एवं चेव उद्देशओ' हे गौतम ! आ विषयना संधमां पडेल। उद्देशामां कहा प्रमाणेनुं सधणुं कथन समज्जु 'नवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जति' परन्तु परिमाणना संधमां अडियां ओपुं कडेपुं नेधंओ डे आ नैरयिके ओप्री साथे जे उत्पन्न थाय छे. अथवा छ उत्पन्न थाय छे. अथवा दस उत्पन्न थाय छे, अथवा संख्यात उत्पन्न थाय छे, अथवा असंख्यात केवण ओण विशेषपणु पडेल। उद्देशाना कथन करतां आ त्रीण उद्देशामां छे. 'संवेहो' अडिया संवेध पणु कडेल छे, 'तेणं भंते ! जीवा' हे भगवन् आ राशियुग्ममां द्वापर युग्म राशि प्रमाणवाणा नैरयिके 'जं समयं दावरजुम्मा' जे समये द्वापर युग्म होय छे, ते समये शुं तेणो कृतयुग्म थधं जय छे ? 'जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा' अने ज्वारे तेणो कृतयुग्म इप

भवन्ति क्रिमिति मन्त्रः, उत्तरमाह—‘णो हण्टे समष्टे’ नायमर्थः समर्थः । ‘एव तेओ-
एण वि समं एवं कलिभोगेण वि समं’ एवमेव त्र्योजेनापि समम्, एवमेव कल्यो-
जेनापि समं प्रश्न कृतः । उत्तरणीयमिति । ‘सेसं जहा पढमुद्देसण जाव वेमाणिया’
शेषं परिमाणतिरिक्तं सर्वं यथा प्रथमोद्देशके वैमानिकान्त पर्यन्तं कथितं तथैवा-
त्रापि ज्ञातव्यम् । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

इति श्री-विश्वविख्यातजगद्बल्लभादिपदभूषितबालब्रह्मचारि— ‘जैनाचार्य’
पूज्यश्री-घासीलालब्रतिविरचितायां “श्री भगवतीसूत्रस्य” प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां एकचत्वारिंशत्तमे राशियुग्मशतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥४२॥३॥

कहते हैं । ‘णो हण्टे समष्टे’ हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है ।
‘एवं तेओएण वि समं एव कलिभोगेण वि समं’ इसी प्रकार से
त्र्योज के साथ भी और इसी प्रकार से कल्योज के साथ भी प्रश्न
करके उत्तर कह लेना चाहिये । ‘सेसं जहा पढमुद्देसण जाव वेमाणिया’
परिमाण के अतिरिक्त और सब कथन प्रथमोद्देशक में जैसा वैमानिकों
तक कहा गया है वैसे ही यहाँ पर कह लेना चाहिये । ‘सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति’ इन पदों का अर्थ पूर्वोक्त जैसा ही है ।

॥४१ वे राशियुग्म शतक में तृतीय उद्देशक समाप्त ४१-३॥

होय छे, त्पारे गुं तेओ द्वापरयुग्म इप होय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां
प्रलुश्री उडे छे डे-डे गौतम ! आ अर्थ णरोणर नथी. आन रीते त्र्योजनी
साथे पणु अने आन रीने इत्योजना संभ धमा प्रश्नो करीने उत्तर वाडयो
इही लेवा लेधये. ‘सेसं जहा पढमुद्देसण जाव वेमाणिया परिमाणना कथन
शिवाय णाडीनु सधणु कथन पडेण उद्देशामां इहा प्रभाणु वैमानिके सुधीना
कथन पर्यन्त उडेल छे ओर प्रभाणु अडियां पणु इडेवु लेधये

‘सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति’ डे लगवन् आप देवातुप्रिये आ विषयमां
ने प्रभाणु उडेल छे, ते सधणुं कथन सर्वाथा सत्य न छे. डे लगवन्
आप देवातुप्रियतुं सधणुं कथन सत्य न छे आ प्रभाणु इहीने
गौतमस्वामीणे प्रलुश्रीने वंदना करी तेओने नभस्कार इया वदना नभस्कार
करीने ते पछी सयम अने तपथी पोताना आत्माने आवित करता थका
पोताना स्थान पर णिगजमान थया ॥४०१॥

॥श्रीले उद्देशो समाप्त ॥४१-३॥

॥ 'अह चउत्थो उद्देशो' ॥

मूलम्—राशिजुम्म कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति एवं चेव । नवरं परिमाणं एक्को वा पंच वा नव वा
तेरस्स वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति । संवेहो । तेणं
भंते ! जीवा जं समयं कलिओगा तं समयं कडजुम्मा जं समयं
कडजुम्मा तं समयं कलिओगा ? णो इणट्टे समट्टे । एवं तेओगेण
वि समं दावरजुम्मेण वि समं । सेसं जहा पढमुद्देशए जाव
वेमाणिया । सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ॥

चउत्थो उद्देशो समत्तो ॥४१-४॥

छाया—राशियुग्म कल्योज नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते एवमेव ।
नवरं परिमाणम् एको वा पञ्च वा नव वा त्रयोदश वा संख्याता वा असंख्याता-
वोत्पद्यन्ते । संवेधः । ते खलु भदन्त ! जीवाः यस्मिन् सभये कल्योजा स्तस्मिन्
समये कृतयुग्माः यस्मिन् समये कृतयुग्माः तस्मिन् समये कल्योजाः ? नायमर्थः
समर्थः । एवं त्रयोजेनापि समसम्, एवं द्वापरयुग्मेनापि समम् । शेषं यथा प्रथमो-
द्देशके यावद् वैमानिकाः । तदेव भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू. २॥

॥ चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥

टीका—'राशिजुम्म कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' राशियुग्म
कल्योजनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद्देवैभ्यो-
वेति प्रश्नः, उत्तरमाह—'एवं चेव' एवमेव यथा प्रथमोद्देशके कथितमत्रापि तथैव

। शतक ४१ चतुर्थ उद्देशकः ॥

'राशिजुम्म कलिओग नेरइयाणं भंते कओ । उववज्जंति' इत्यादि
टीकार्थ—हे भदन्त राशियुग्म कल्योज राशिप्रमित नैरयिक किस
स्थान विशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से
आकर के उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से आकर के उत्पन्न

येथा उद्देशानो प्रारंभ—

'राशिजुम्म कलिओग नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ—हे भगवन् राशियुग्म कल्योज राशिप्रमाणाणां नैरयिके कया
स्थान विशेषतः आवीने उत्पन्नं थाय्ये ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने
उत्पन्नं थाय्ये ? अथवा तियं अथेनिओमांथी आवीने उत्पन्नं थाय्ये ? अथवा
अनुप्येमांथी आवीने उत्पन्नं थाय्ये ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्नं

સર્વં જ્ઞાતવ્યમિતિ । 'નવરં પરિમાણં એકો વા પંચ વા નવ વા તેરસ વા સંખેજ્જા-
વા, અસંખેજ્જા વા ઉવવજ્જંતિ' નવરં પરિમાણમેકો વા ૫૨ વા નવ વા ત્રયોદશ
વા, સંખ્યાતા વા, અસંખ્યાતા વા, ઉત્પદ્યન્તે ઇતિ । 'સંવેહો' સંવેધઃ કાયસંવેધો-
ડપિ અત્ર વક્તવ્યઃ । 'તે ણં મંતે ! જીવા જં સમયં કલિભોગા તં સમયં કલ્પજુમ્મા
જં સમયં કલ્પજુમ્મા તં સમયં કલિભોગા' હે મદન્ત ! તે રાશિયુગ્મ કલ્પોજ નારકા
યસ્મિન્ સમયે કલ્પોજાઃ કિં તસ્મિન્ સમયે કૃતયુગ્માઃ ? યસ્મિન્ સમયે કૃતયુગ્મા
સ્તસ્મિન્ સમયે કિં કલ્પોજાઃ સમ્ભવન્તીતિ પ્રશ્નઃ, ઉત્તરમાહ—'ણો ઇણદ્દે સમદ્દે'

હોતે હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રભુશ્રી કહતે હૈં—'એવં ચેવ' હે ગૌતમ । જૈસા પ્રથમ
ઉદ્દેશક મેં કહા ગયા હૈં વૈસા હી સવ કથન હસ ઉદ્દેશક કે સમ્યન્ધ
મેં શ્રી જાનના ચાહિયે । પરન્તુ પરિમાણ મેં યહાં ઉસ ઉદ્દેશક કી અપેક્ષા
મિન્નતા આતી હૈં જો 'નવરં પરિમાણં એકો વા પંચ વા નવ વા તેરસ
વા સંખેજ્જા વા અસંખેજ્જા વા ઉવવજ્જંતિ' હસ સૂત્રપાઠ દ્વારા વતલાઈ
ગઈ હૈં—હસસે યહાં એકસમય મેં એક અથવા પાંચ, અથવા નૌ અથવા
તેરહ, અથવા સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત નૈરિક ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।
'સંવેહો' કાયસંવેધ શ્રી યહાં પર વક્તવ્ય હૈં । 'તે ણં મંતે ! જીવા જં
સમયં કલિભોગા તં સમયં કલ્પજુમ્મા, જં સમયં કલ્પજુમ્મા તં સમયં
કલિભોગા' હે મદન્ત । વે જીવ જિસ સમય કલ્પોજ રાશિપ્રમિત રહતે
હૈં ઉસ સમય કયા વે કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમિત હો જાતે હૈં ? ઔર જિસ
સમય વે કૃતયુગ્મરાશિપ્રમિત હોતે હૈં ઉસ સમય કયા વે કલ્પોજ રાશિ

થાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં પ્રભુશ્રી કહે છે કે—'એવંચેવ' હે ગૌતમ !
પહેલા ઉદ્દેશમાં જે પ્રમાણે કથન કરેલ છે, એજ પ્રમાણેતુ સઘણું કથન
આ ઉદ્દેશમાં સંબંધમાં પણ સમજવું. પર તુ પરિમાણમાં અહિયાં તે ઉદ્દેશાની
અપેક્ષાએ ભિન્નપણું આવે છે, જે 'નવર પરિમાણં એકો વા પંચવા નવ વા
તેરસ વા સંખેજ્જા વા અસંખેજ્જા વા ઉવવજ્જંતિ' આ સૂત્રપાઠ દ્વારા કહેલ છે
તેથી અહિયાં એક સમયમાં પાંચ અથવા નવ અથવા તેર અથવા સંખ્યાત
અથવા અસંખ્યાત નૈરિકો ઉત્પન્ન થાય છે. 'સંવેહો' કાયસંવેધ પણ
અહિયાં કહેવો જોઈએ 'તેણં મંતે ! જીવા જ સમયં કલિભોગા તં સમયં
કલ્પજુમ્મા જં સમયં કલ્પજુમ્મા તં સમયં કલિભોગા' હે ભગવન્ તે જીવો જે
સમયે કલ્પોજ રાશિપ્રમાણવાળા હોય છે. તે સમયે શું કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમાણ-
વાળા થઈ જાય છે ? અને ત્યારે જે સમયે કૃતયુગ્મ રાશિપ્રમાણવાળા હોય
છે ત્યારે શું તેઓ કલ્પોજ રાશિપ્રમાણવાળા થઈ જાય છે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તરમાં

नायमर्थः स्वयर्थः । 'एवं तेओण वि समं एवं दावरजुम्मेण वि समं' एवमेव कुत-
युग्मवदेव ऽप्योजेनापि समं द्वापरयुग्मेनापि च समं प्रश्नं-कृत्वा समुत्तरणीयमिति ।
'सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया' शेषं कथितातिरिक्तं सर्वं तथैव ज्ञात-
व्यम् यथा-प्रथमोद्देशके वैमानिकपर्यन्तं कथितमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !
त्ति' तदेव भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥१

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुलभादिपदभूषितवाल्म्वरहचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीसूत्रस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां एकवत्वारिंशत्तमे राशियुगमशतके चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥४१॥४॥

प्रमित हो जाते हैं ? उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—'जो इणट्टे समट्टे' हे
गौतम ! यह अर्थ स्वयर्थ नहीं है । 'एवं तेओण वि समं एवं दावर-
जुम्मेण वि समं' इसी प्रकार से ऽप्योज के साथ भी और इसी प्रकार
से द्वापर युग्म के साथ भी प्रश्न करके उत्तर कह लेना चाहिये । 'सेसं
जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया' इस कथन के अतिरिक्त और सब
कथन वैमानिकों तक प्रथम उद्देशक में किया है वैसे ही सब यहाँ पर
भी जानना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' इन पदों का
अर्थ पूर्वोक्त जैसा ही है ।

॥४१ वे शतक में राशियुगमशतक में यह चतुर्थ उद्देशक समाप्त
हुआ । ४१-४॥

प्रभुश्री गौतमस्वामीने कहे छे के—'जो इणट्टे समट्टे' हे गौतम ! अर्थ
अशुभ नथी. 'एवं तेओण वि समं एवं' दावरजुम्मेण वि समं' आञ्
प्रमाणे ऽप्योजनी साथे अने आञ् प्रमाणे द्वापर युग्मनी साथे पणु प्रश्नोत्तरो
भनावीने समणु देवा. 'सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया' आ कथन
शिवाय भाडीनुं सधणुं कथन ने रीते वैमानिके सुधी पडेला उद्देशामां कहेल
छे. अने प्रमाणेनुं सधणुं कथन अहियां पणु समणुवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
ने प्रमाणे कहु छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आप देवानु
प्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने
प्रभुश्रीने वंदना करी नभरकर कर्या वंदना नभरकार करीने ते पछी संयम
अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोतानास्थान पर पिराञ्-
मान थया. ॥४१॥४॥

॥अथोद्देशो समाप्त ॥४१-४॥

॥ 'अह ५-८ उद्देशगा' ॥

प्लम्-कणहलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति उववाओ धूमप्पभाए सेसं जहा पढमुद्देसए ।
असुरकुमाराणं तहेव, एवं जाव वाणअंतराणं । मणुहसाण वि
जहेव नेरइयाणं आयअजसं उवजीवंति । अलेस्सा अकिरिया
तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति एवं न भाणियच्चं । सेसं जहा
पढमुद्देसए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥५१-५॥

कणहलेस्स तेओएहि वि एवं चेव उद्देसओ । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति ॥४१-६॥

कणहलेस्स दावरजुम्मेहिं एवं चेव उद्देसओ । सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति ॥४१-७॥

कणहलेस्स कलिओएहि वि एवं चेव उद्देसओ । परिमाणं संवेहो
य जहा ओहिएसु उद्देसएसु । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४१-८॥

॥ ५-८ उद्देशगा समत्ता ॥

छाया—कृष्णलेश्य राशियुग्म कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते उपपातो धूमपभायां शेष यथा प्रथमोद्देशके । असुरकुमाराणां तथैव एवं
यावद्दानव्यन्तराणाम्, मनुष्याणानपि यथैव नैरयिकाणाम् आत्मायश उव
जीवन्ति । अलेश्याः अक्रियाः तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यन्ति एवं न मणितव्यम् ।
शेषं यथा प्रथमोद्देशके । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१।५।

कृष्णलेश्य ऋजैरपि एवमेवोद्देशकः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१।६।
कृष्णलेश्य द्वापरयुग्मैरेवमेवोद्देशकः । तदेवं भदन्त । तदेव भदन्त ! इति ॥४१।७॥

कृष्णलेश्य कल्योजैरपि एवमेवोद्देशकः । परिमाणं संवेधश्च यथा औघिकेपृ-
द्देशकेषु । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१।८॥

॥ पञ्चमादारभ्याष्टमान्ता उद्देशकाः समाप्ताः ॥४१।५।८॥

॥ शतक ४१ उद्देशक ५ से ८ तक ॥

'कणहलेस्मरासिजुम्मकडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति'

पाथमा उद्देशाथी आहमा सुधीना चार उद्देशानो प्रारंभ—

'कणहलेस्स रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाण भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि.

टीका—‘कण्ठलेख्यस्य रासियुग्म कण्ठजुग्म नैरय्या णं भंते ! कथो उववज्जंति’ हे भदन्त ! कृष्णलेख्यराशियुग्मकृतयुग्म नैरयिकाः कुतः खल्वुत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद्देवेभ्य इति प्रश्नः, उत्तरमाह—अतिदेशद्वारेण—‘उववाओ जहा’ इत्यादि, ‘उववाओ जहा धूमप्पभाए’ उपपातो धूमप्रभानरके येन प्रकारेण कथितस्तेनैव रूपेणात्रापि ज्ञातव्यः ‘सेसं जहा पढमुद्देसए’ शोभुपपातातिरिक्तं सर्वं यथा प्रथमोद्देशके कथितं तथैव सर्वत्रापि ज्ञातव्यमिति। ‘असुरकुमाराणं तहेव’ असुरकुमाराणामपि तथैव नारकवदेव सर्वं ज्ञातव्यमिति। ‘एवं जाव वाणमंतराणं’ एवमेव नारकवदेवोपपात्तादिकं सर्वं यावद् वानव्यन्तराणामपि ज्ञातव्यमिति। ‘मणुस्साण

टीकार्थ—हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्म प्रमाण कृष्णलेख्यावाले नैरयिक किस स्थानविशेष से आकर के उत्पन्न होते हैं? क्या वे नैरयिक में से आकरके उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं? अतिदेश द्वारा उत्तर में प्रशुश्री कहते हैं—‘उववाओ जहा धूमप्पभाए’ हे गौतम ! जैसा उपपात के सम्बन्ध में कथन धूमप्रभानारक में किया जा चुका है वैसा ही यहाँ पर भी कर लेना चाहिये। ‘सेसं जहा पढमुद्देसए’ तथा उपपात के अतिरिक्त और सब कथन प्रथम उद्देशक के अनुसार ही जानना चाहिये। ‘असुरकुमाराणं तहेव’ तथा असुरकुमारों के सम्बन्ध में भी नारक के जैसा ही कथन समझना चाहिये। ‘एवं जाव वाणमंतराणं’ और यह कथन यावत् वानव्यन्तरो तक नैरयिकों के कथन जैसा ही है ऐसा ज्ञात करना चाहिये।

टीकार्थ—हे लगवन् राशियुग्ममां कृतयुग्म प्रमाणवाणा कृष्णलेख्यावाणा नैरयिको कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु तेज्जो नैरयिको मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्ययोनिडोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो उत्तर अतिदेश द्वारा आपतां प्रशुश्री कहे छे कहे—‘उववाओ जहा धूमप्पभाए’ हे गौतम ! उपपातना संबन्धमां कथन धूमप्रभानारकमां करवामां आवेल छे, ओज्ज प्रमाणेनुं कथन अडियां पणु करी लेवुं लेधज्जे. ‘सेसं जहा पढमुद्देसए’ उपपातना कथन शिवाय णाकीनुं सधणुं कथन पडेला उदेशामां कथा प्रमाणे ज्ज समज्जुं. ‘असुरकुमाराणं भंते ! तहेव’ तथा असुरकुमारोना संबन्धमां पणु नारकना कथन प्रमाणेनुं ज्ज कथन समज्जुं लेधज्जे. ‘एवं जाव वाणमंतराणं’ अने आ कथन यावत् वानव्यन्तरना कथन सुधी नैरयिकेना कथन प्रमाणे ज्ज छे. तेम समज्जुं लेवुं.

वि तहेव जहा नेरइयाणं' मनुष्याणामपि तथैव ज्ञातव्यं यथैव नारकाणामुपपाता
दिकं कथितमिति । 'आय अजसं उवजीवंति' मनुष्या आत्मनऽयशः असंयममुपजीव-
न्तीति विशेषो वक्तव्यः । 'अलेस्सा अकिरिया तेणेव भवग्गहणेण सिज्जंति एवं
न भाणियव्वं' अलेइया अक्रिया हतेनैव भवग्रहणेण सिद्धयन्ति इत्येवमत्र कृष्णलेइय-
प्रकरणे नो भणितव्यं कृष्णलेइयानामलेइयत्वस्याऽक्रियत्वस्य तद्भवसिद्धेश्चाभावा
दिति भावः । 'सेसं जहा पढमुहेसए' शेषं कथितव्यतिरिक्तं सर्वं यथा प्रथमो-
द्देशके कथितं तथैवात्रापि ज्ञातव्यमिति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं
भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१॥५

॥ पञ्चमोद्देशकः समाप्तः ॥४१॥५॥

'मणुस्साण वि तहेव जहा नेरइयाणं' नारकों के जैसे उपपात आदि
कहे गये हैं वैसे ही वे मनुष्यों के भी जानना चाहिये । 'आय अजसं
उवजीवंति' मनुष्य आत्मा के असंयम का आश्रय करते हैं । 'अलेस्सा
अकिरिया तेणेव भवग्गहणेण सिज्जंति एवं न भाणियव्वं' ये लेइया
रहित होते हैं क्रिया रहित होते हैं, उसी भव से सिद्ध होते हैं यह सब
यहां कृष्णलेइय के प्रकरण में नहीं करना चाहिये । क्योंकि कृष्णलेइया-
वालों में अलेइयत्व अक्रियत्व और तद्भवसिद्धत्व का अभाव रहता
है । 'सेसं जहा पढमुहेसए' वाकी का और सब कथन प्रथम उद्देशक में
जैसा कहा गया है वैसे ही है ऐसा जानना चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं
भंते ! त्ति' इन पदों का अर्थ जैसा पहिले कहा गया है वैसे ही है ।

॥ पञ्चम उद्देशक समाप्त हुआ-४१-५॥

'मणुस्साण वि तहेव जहा नेरइयाणं' नारकों का संघर्षमां ले प्रमाणे उपपात
विगेरे कडेवामा आवेल छे, जेए प्रमाणे मनुष्योना संघर्षमां पणु समज्जुं
'आय अजसं उवजीवंति' मनुष्य असंयम आत्मानो आश्रय इरीने उत्पन्न
थाय छे 'अलेस्सा अकिरिया तेणेव भवग्गहणेण सिज्जंति एवं न भाणियव्वं' आ
लेइया विनाना डेय छे, क्रियाविनाना डेय छे, जेए लवमा सिद्ध थाय छे,
आ सघणुं कथन अहियां आ कृष्णलेइयाना प्रकरणुं न करेवुं जेइओ. केमके
-कृष्णलेइयावागओमां अलेइयापणाने अक्रियपणाने तद्भवसिद्धपणाने अभाव
रडे छे. 'सेसं जहा पढमुहेसए' ण इरीनु सघणुं कथन पडेअ उद्देशमां ले
प्रमाणे कडेवामा आवेल छे जेए प्रमाणे समज्जुं जेइओ.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' ले लणवन् आपन् कथन सर्वाथा सत्य ल
विगेरे पडेला कइया प्रमाणे आ पढोने अर्थ समज्जो.

॥पांचमो उद्देशो समाप्त ४१-५॥

‘कण्हलेस्स तेओए हि वि समं एवं चेव उद्देशओ’ कृष्णलेश्य त्र्योजैरपि एवमेवोद्देशको वाच्यः । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते । त्ति’ तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥४१॥६॥

पष्ठं देशकः समाप्तः ॥

‘कण्हलेस्स दावरजुम्मेहि एवं चेव उद्देशओ’ कृष्णलेश्य द्वापरयुगैरपि एवमेव पूर्ववदेव उद्देशको वक्तव्यः । सर्वं प्रथमोद्देशकवदेव ज्ञातव्यम् । ‘सेवं भंते ! सेवं

‘कण्हलेस्स तेओए वि समं एवंचेव उद्देशओ’ कृष्णलेश्यावाले राशियुगम प्रमाण नैरयिकों के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार से उद्देशक कह लेना चाहिये । अतः प्रथम उद्देशक के जैसा ही यह उद्देशक है ऐसा जानना चाहिये । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सर्वथा सत्य प्रमाण है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

छट्टा उद्देशक समाप्त हुआ ४१-६॥

‘कण्हलेस्स दावरजुम्मेहि एवं चेव उद्देशओ’ इत्यादि ।
कृष्णलेश्यावाले द्वापरयुगम प्रमित नैरयिकों के सम्बन्ध में भी

छट्टा उद्देशानो प्रारंभ—

‘कण्हलेस्स तेओएहि वि समं एवं चेव उद्देशओ’ इत्यादि

टीकार्थ—कृष्णलेश्यावाणा राशियुगममां त्र्योजैरुगम प्रमाणवाणा नैरयिकेना संभंधमां पणु आण प्रमाणेना उद्देशाओ कडेवा नेधणे.

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ संभंधमां ने प्रमाणे कथन करेद छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रमाणे कडीने गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पधी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थानपर विराजमान थया.

॥छट्टा उद्देशो समाप्त ॥४१-६॥

॥सातमा उद्देशानो प्रारंभ—

‘कण्हलेस्स दावरजुम्मेहि एवं चेव उद्देशओ’ इत्यादि

टीकार्थ—कृष्णलेश्यावाणा द्वापरयुगम प्रमाणवाणा नैरयिकेना संभंधमां

भंते । त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥४१।७॥

॥ सप्तमोद्देशकः समाप्तः ॥

'कण्ठलेस्स कलिओए हि वि एवं चेव उद्देसओ' कृष्णलेश्य कल्योजनारकै-
रपि एवमेव-पूर्ववदेव उद्देशको वक्तव्यः । 'परिमाणं संवेहो य जहा ओहिएसु
उद्देसएसु' परिमाण कायसंवेधश्च औघिकेपूद्देशकेषु कथित स्तथैवात्रापि ज्ञातव्यः
'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥४१।८॥

अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥

इसी प्रकार से उद्देशक कह लेना चाहिये । तात्पर्य यही है कि यहां सब
कथन प्रथम उद्देशक के जैसा ही है ऐसा जानना चाहिये । 'सेवं
भंते । सेवं भंते ! त्ति' इन पदों की व्याख्या पहिले की गई व्याख्या
जैसी ही है ।

सप्तम उद्देशक समाप्त हुआ-४१-७॥

'कण्ठलेस्स कलिओएहि वि एवं चेव उद्देसओ' इत्यादि ।

'कल्योज राशिप्रमाण कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों के सम्बन्ध में भी
पूर्व के जैसे ही उद्देशक कह लेना चाहिये । 'परिमाणं संवेहो य जहा
ओहिएसु उद्देसएसु' परिमाण और कायसंवेध जैसा औघिक उद्देशकों
में कहा गया है वैसा ही यहां पर भी कह लेना चाहिये । 'सेवं भंते !

पणु आञ्ज प्रमाणे उद्देशात्थे उद्देवा लेधत्थे उद्देवानुं तात्पर्यं अथे छे उद्दे-
आ विषयमां सधत्थु कथन पडेला उद्देशाना कथन प्रमाणे अथे छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे भगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
ले कथन करेला छे. ते सधत्थु कथन सर्वथा सत्य छे. छे लागवन् आप देवानु
प्रियनुं सधत्थु कथन सर्वथा सत्य अथे छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीअ
प्रलुश्रीने वदना करी तेअने नमस्कार कर्या वदना नमस्कार करीने ते पछी
संथम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान
पर णिञ्जमान थया.

॥सातमो उद्देशो समाप्त ॥४१-७॥

'कण्ठलेस्स कलिओएहि वि एवं चेव उद्देसओ' इत्यदि

टीकाथं—कथ्येअ राशिप्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेना संबंधमां
पणु पडेलाता कथन प्रमाणेनः उद्देशको उद्देवा लेधत्थे. 'परिमाणं संवेहो य
जहा ओहिएसु उद्देसएसु' परिमाण अने कायसंवेध ले प्रमाणे औघिक
उद्देशामां उद्देवामां आवेला छे. अथेअ प्रमाणे अहीया पणु उद्दी देवा. लेधत्थे.

॥ 'अह ९-१२ उद्देशगा' ॥

मूलम्—जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा निरवसेसा । नवरं उववाओ नेरइयाणं जहा वालुयप्पभाए सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥९-१२॥

छाया—यथा कृष्णलेश्यै एव नीललेश्यैरपि चत्वार उद्देशका भणितव्या निरवशेषाः । नवरमुपपातो नैरथिकाणां यथा वालुकाप्रभायाम् । शेषं तदेव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥९-१२॥

टीका—'जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा निरवसेसा' यथा—कृष्णलेश्यनारकाणां चत्वार उद्देशकाः कृथिता स्तथैव नीललेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः कृतयुग्म-त्रयोज-द्वापर-बलभोजपदविशिष्टा भणितव्याः निरवशेषाः । 'नवरं' नवरं—केवलम् 'नेरइयाणं उववाओ जहा वालुयप्पभाए' कृष्णलेश्यप्रकरणापेक्षया इदं वैलक्षण्यं यद्देषां नारकाणामुपपातो यथा वालुका-

सेवं भंते ! त्ति' इन पदों की व्याख्या पूर्व में की गई व्याख्या के ही जैसी है ।

आठवां उद्देशक समाप्त हुआ ॥४१-८॥

॥ शतक ४१ उद्देशक ९ से १२ तक ॥

'जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा निरवसेसा' इत्यादि ।

टीकार्थ—जिस प्रकार से कृष्णलेश्यावालों के सम्बन्ध में पूर्वोक्तरूप से चार उद्देशक कहे गये हैं, उसी प्रकार से नीललेश्यावालों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक कह लेना चाहिये । 'नवरं उववाओ नेरइयाणं जहा वालुयप्पभाए' परन्तु यहाँ पर नारकों का उपपात वालुका-

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' आ पदोनी व्याख्या पडेला कइया प्रमाणे न छे.

आठमो उद्देशो समाप्त ॥४१-८ ।

नवमा उद्देशाथी आरमा सुधीना आर उद्देशाओनो आरंल—

'जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा भाणियव्वा निरवसेसा' इत्यादि

टीकार्थ—जे प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणाओना संबन्धमां पूर्वोक्त प्रकारथी आर उद्देशाओ कडेवामां आवेल छे, ओन प्रमाणे नीललेश्यावाणां संबन्धमां पणु आर उद्देशाओ कडेवा नोछये 'नवरं उववाओ नेरइयाणं जहा वालुयप्पभाए' परंतु अडियां नारकोनो उपपात वालुकाप्रभां जे प्रमाणे कडेवामां आवेल

प्रभायां कथित स्तथैव भणितव्यमिति । 'सेसं तं चैव' जेषमुपपातातिरिक्तं सर्वमपि कृष्णलेश्यवदेवेति भावः । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति ॥

॥ एकचत्वारिंशत्तमे शतके नवसादि द्वादशान्ता उद्देशकाः समाप्ताः ॥९।१२

प्रभा में जैसा कहा गया है वैसा ही कहना चाहिये । तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि जिस रीति कृतयुग्म राशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों के, त्र्योजराशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों के द्वापरयुग्म राशिप्रमित कृष्णलेश्यावालों नैरयिकों के और कल्योजराशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों के सम्बन्ध में चार उद्देशक पूर्वोक्त रूपसे प्रकट किये गये हैं उसी प्रकारसे कृतयुग्म राशिप्रमित नीललेश्यावाले नैरयिकों के सम्बन्ध में त्र्योजराशि प्रमित नीललेश्यावाले नैरयिकों के सम्बन्ध में द्वापरयुग्म राशिप्रमित नीललेश्यावाले नैरयिकोंके सम्बन्ध में और कल्योज राशिप्रमित नीललेश्यावाले नैरयिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक बनाकर कह लेना चाहिये । परन्तु यहाँ पर कृष्णलेश्यावाले नैरयिकों की अपेक्षा यदि कोई विशेषता है तो वह उपपान की अपेक्षा से है । अतः यहाँ पर उपपान बालुका प्रभा में जैसा बतलाया गया है वैसा ही है । कृष्णलेश्यावाले नारकों के प्रकरण दो जैसा नहीं है । यात्रीका और सब कथन कृष्णलेश्य प्रकरण के जैसा ही है । 'सेवं भंते !

छे, ओज प्रभाणे कडेवा लेधये आ कथननुं तात्पर्यं ओ छे डे-ले प्रभाणे कृतयुग्म राशिप्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेना तथा त्र्योज राशिप्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेना तथा द्वापरयुग्म राशिप्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेना अने कल्योज राशिप्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेना संबन्धमां पडेला कथा प्रभाणेना चार उद्देशाओ कडेवामां आव्या छे, ओज प्रभाणे कृतयुग्म राशिप्रभाणु नीललेश्यावाणा नैरयिकेना संबन्धमां त्र्योज राशिप्रभाणु नीललेश्या नैरयिकेना संबन्धमां द्वापरयुग्म राशिप्रभाणु नीललेश्यावाणा नैरयिकेना संबन्धमां अने कल्योज राशिप्रभाणु नीललेश्यावाणा नैरयिकेना संबन्धमां पद्य चार उद्देशाओ बनावीने कडेवा लेधये परंतु अडिया कृष्णलेश्यावाणा नैरयिकेनी अपेक्षाथी कंठ विशेषणुं होय तो ते उपपातनी अपेक्षाओ न छे. लेथी अडियां उपपात वासुकाप्रभांमां ले प्रभाणे कडेल छे ओज प्रभाणे छे. कृष्णलेश्यावाणा नारकेना प्रकरण प्रभाणे नथी यात्रीनुं सद्यु कथन कृष्णलेश्यावाणा प्रकरणमा कथा प्रभाणे न छे.

॥ 'अह १३-२० उद्देशगा' ॥

मूलम्—काउलेस्सेहि वि एवं चेत्र चत्तारि उद्देशगा काय-
व्वा । नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए । सेसं तं
चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥१३-१६॥

तेउलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते ! कओ
उववज्जंति एवं चेत्र । नवरं जेसु तेउलेस्सा अत्थि तेसु भाणि-
यव्वं । एवं एए वि कण्हलेस्सा सरिसा चत्तारि उद्देशगा काय-
व्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४१-१६-२ ॥

छाया—कापोतलेश्यैरपि एवमेव चत्वार उद्देशकाः कर्तव्या । नवरं नैरयि-
काणामुपपातो यथा रत्नप्रभायाम् । शेषं तदेव । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त !
इति । १३-१६॥

तेजोलेश्या राशियुग्म कृतयुग्मासुरकुमाराः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते
एवमेव । नवरं येषु तेजोलेश्या अस्ति तेषु भणितव्यम् । एवमेतेऽपि कृष्ण-
लेश्यसदृशाश्चत्वारः उद्देशकाः कर्तव्याः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

त्रयोदशदारभ्य विंशन्त्यतोद्देशकाः समाप्ताः ॥४११३-२०॥

टीका—'काउलेस्सेहि वि एवं चेत्र चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' यथा कृष्ण-

सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! आपका कडा हुआ यह सब विषय सर्वथा
सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और
नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से
आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

॥ ४१ वें शतक का ९ से १२ उद्देशक समाप्त ॥

॥ शतक ४१ उद्देशक १३ से २० तक ॥

'काउलेस्सेहिं वि एवं चेत्र चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' इत्यादि ।

टीकार्थ—कापोतलेश्यावाले नैरयिकों के सम्यग्ध में भी कृष्णलेश्या

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन आये कहेल आ तभाम विषय
सर्वथा सत्य न छे, २ आ प्रभाषे कहीने वंदना नमस्कार करी गौतमस्वामी
तप अने संयमथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थानपर विरजमान थया.

॥नवमा उद्देशाथी ॥१३मा सुधीना ॥२ उद्देशाथी समाप्त ॥४१-६-१२

तेरमा उद्देशाथी सोणमा सुधीना ॥२ उद्देशाथीने ॥४१-६-१२

टीकार्थ—'कण्हलेस्सेहिं वि एवं चेत्र चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' कापोत-

उद्देश्यैश्चत्वार उद्देशकाः कथिता एवमेव कापोतलेइयैरपि चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः कापोतलेइय कृतयुग्मनारकादेः प्रथमः, कापोतलेइय त्र्योजनारकादे द्वितीयः, कापोतलेइय द्वापरयुग्मनारकादेस्तृतीयः, कापोतलेइय कलयोजनारकादेश्वर्तुयोद्देशकः। 'नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए' नवरं पूर्णपेक्षया कापोतलेइय प्रकरणे इदमेव वैलक्षण्यं यत् अत्र नारकाणामुपपातो रत्नप्रभायामिव वक्तव्यः।

वाले नैरयिकों के जैसे चार उद्देशक हैं जो इस प्रकार से हैं। जैसे-कृतयुग्म राशिप्रमितवाले नैरयिकों का प्रथम उद्देशक है। त्र्योजराशि-प्रमित कापोतलेइयावाले नैरयिकादिभों का द्वितीय उद्देशक है। द्वापर-युग्म राशिप्रमित कापोतलेइयावाले नैरयिकों का तृतीय उद्देशक है और कलयोजराशिप्रमित कापोतलेइयावाले नैरयिकों का चतुर्थ उद्देशक है। 'नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए' परन्तु कृष्णलेइय प्रकरण की अपेक्षा इस कापोतलेइया प्रकरण में यदि कोई विलक्षणता है तो वह उपपात की अपेक्षा से है-यही बात 'नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए' इस सूत्र द्वारा प्रकट की गई है। अतः यहाँ उपपात रत्नप्रभा पृथिवी में जैसा उतलाया गया है-वैसा ही कहना चाहिये। 'सेसं तं चेव' उपपात से अतिरिक्त और सब कथन कृष्णलेइय प्रकरण के जैसा ही है। 'सेवं भते! सेवं भते! त्ति' हे भद्रन्! आप

देश्यावाणा नैरयिकेना संभंधमां पणु कृष्णदेश्यावाणा नैरयिकेना इथन प्रभाण्णेना चार उद्देशाणो कथा छे जे आ प्रभाण्णे छे, -जेभके-कृतयुग्म राशिप्रभाण्णे कापोतदेश्यावाणा नैरयिकेना संभंधमां पणुवेले उद्देशो कहेल छे. १ ज्येण राशिप्रभाण्णे कापोतदेश्यावाणा नैरयिकेना संभंधमां भिले उद्देशो कहेल छे. २ द्वापरयुग्म राशिप्रभाण्णे कापोतदेश्यावाणा नैरयिकेना संभंधमां त्रिले उद्देशो कहेल छे उ अने कल्येण राशिप्रभाण्णे कापोतदेश्यावाणा नैरयिकेना संभंधमां चोथो उद्देशो कहेल छे. 'नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए' परन्तु कृष्णदेश्याना प्रकरणे करतां आ कापोतदेश्या प्रकरणमां जे कांछे विलक्षणपाण्णे छे, तो ते उपपातना संभंधमां कहेल छे. ज्येण बात 'नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए' आ सूत्रपाठ द्वारा प्रकट कहेल छे जेथी अहियां उपपात रत्नप्रभा पृथ्वीना संभंधमां जे प्रभाण्णे कहेवामां आवेल छे, जे ४ प्रभाण्णे अहियां कहेवुं जेछणे. 'सेसं तं चेव' उपपातना इथन करतां भाकीनुं सधणुं इथन कृष्णदेश्याना प्रकरणे नी जे म ज छे. तेम अमण्णेणुं.

‘सेसं तं चेव’ शेषं सुपपातातिरिक्तं सर्वं तदेव कृष्णलेश्यप्रकरणवदेवेति भावः ।
‘सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति’ तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥

त्रयोदशादारभ्य षोडशान्तोद्देशनाः समाप्ताः ॥१३।१६॥

‘तेउलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते । कओ उववज्जंति’
तेजोलेश्य रासियुग्मासुरकुमाराः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो
यावदेवेभ्य इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘एवं चेव’ एवमेव—कृष्णलेश्यवदेवेति इहापि
सर्वसुपपातादिकं पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति भावः । ‘नवरं जेषु तेउलेस्सा अत्थि तेसु

देवानुप्रियने जौसा यह कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इत्यादिरूप
से इन पदों की व्याख्या पूर्व के जैसी ही जाननी चाहिये ।

॥४१ वे शतकका १३-१६ उद्देशक समाप्त हुआ ॥

उद्देशक १७ से २० पर्यन्त

“तेउलेस्सरासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—‘तेउलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते ! कओ
उववज्जंति’ हे भदन्त ! रासियुग्म में कृष्णयुग्म राशिप्रमाण तेजोलेश्यावाले
असुरकुमार किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैर-
यिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकरके
उत्पन्न होते हैं ? ‘एवं चेव’ उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं—हे गौतम !

जे कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे छे लगवन् आप
देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीजे
प्रभुश्रीने वंदना करी तेणे ने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करना थका पोताना स्थान पर
गिराजमान थया. ॥२४०१॥

॥तेरमा उद्देशाथी सोण सुधीना आर उद्देशाणे समाप्त ॥४१-१३-थी१६॥

सत्तरमा उद्देशाथी वीसमा सुधीना आर उद्देशाने प्रारंभ—

‘तेउलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते !’ इत्यादि

टीकार्थ—‘तेउलेस्स रासिजुम्म कडजुम्म असुरकुमाराणं भंते ! कओ उववज्जंति’
हे लगवन् रासियुग्ममां कृष्णयुग्म राशिप्रमाण तेजोलेश्यावाणा असुरकुमारो
क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेणे नैरयिकेमांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा तियं अथोनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
भनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय
छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे के—‘एवं चेव’ हे गौतम ! कृष्णलेश्याना

भाणियव्वं' नवरं जेषु असुरकुमारेषु तेजोलेश्या अस्ति तेष्वेव इदं सूत्रं भाणितव्यं नान्यत्रेति । 'एवं एए वि कण्हलेस्सा सरिसा चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' एवमेतेऽपि चत्वार उद्देशकाः तेजोलेश्य कृतयुग्म, तेजोलेश्यव्योज-तेजोलेश्य द्वापरयुग्म-तेजोलेश्य कलयोजरूपाः कर्त्तव्या-वक्तव्या इति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥

एकचत्वारिंशत्तमे शतके सप्तदशादिविंशत्यन्ता उद्देशकाः समाप्ताः । ४१।१७ २० ।

॥ 'अह २१-२८ उद्देशगा' ॥

मूलम्-एवं पम्हलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा ।
पंचिदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं वेभाणियाणं य एएसिं
पम्हलेस्सा सेसाणं नत्थि । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । ४१-२१-२४।

कृष्णलेश्य प्रकरण के समान ही यहाँ पर समस्त उपपात आदि वाच्य हुए हैं ऐसा जानना चाहिये । 'नवरं जेषु तेजोलेश्या अस्ति तेषु भाणियव्वं' परन्तु जिन असुरकुमारों में तेजोलेश्या है उन्हीं के सम्बन्ध में इस सूत्र का कथन करना चाहिये अन्य में नहीं । 'एवं एए वि कण्हलेस्स सरिसा चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' इस प्रकार कृष्णलेश्य प्रकरण के जैसे ही यहाँ तेजोलेश्य कृतयुग्म तेजोलेश्य व्योज, तेजोलेश्य द्वापर-युग्म, तेजोलेश्य कलयोजरूप चार उद्देशक वक्तव्य है । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' इन पदों का अर्थ पूर्वोक्त जैसा ही है ।

१७-२० उद्देशक समाप्त हुआ । ४१-१७-२०॥

प्रकरणमां इत्था प्रमाणे ञ अडियां उपपात विगेरे सधणुं कथन कडेपुं नेधंणे. तेम समणुपुं 'नवरं जेषु वेउलेस्सा अत्थि तेषु भाणियव्वं' परंतु ञे ञे असुर कुमारोमा तेनेदेश्या डोय तेज्जोना संणंधमा आ सूत्रनु कथन कडेपु नेधंणे. धीणमां नही. एवं एए वि कण्हलेस्स सरिसा चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' आ रीते कृष्णलेश्या प्रकरणनी नेम ञ अडियां तेनेदेश्या कृतयुग्म, तेनेदेश्या व्योज तेनेदेश्या द्वापरयुग्म, अने तेनेदेश्या कलयेणरूप आर उद्देशाओ समणु देवा.

'सेवं भंते ! सेव भंते ! त्ति' डे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विपयमां ञे कथन कथुं छे, ते सर्वाथा सय ञ छे २ आ प्रमाणे इत्थिने गौतम स्वाभीणे प्रबुध्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने सावित करता थका पोताना स्थान पर बिराजमान थया. ॥सू०१॥

अत्तरमा उद्देशाथी वीसमा उद्देशा सुध्रीना आर उद्देशाओ समाप्त ॥१७-२०॥

जहा पद्मलेस्साए एवं सुकलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा
कायव्वा । नवरं मणुस्साणं गमओ जहा आंहि उद्देशएसु सेसं तं
चेव । एवं एए छसु लेस्सासु चौवीसं उद्देशगा ओहिया चत्तारि
सवे ते अट्टावीसं उद्देशगा भवन्ति । सेवं भन्ते ! सेवं भन्ते ! त्ति । २४-२८ ।

छाया—एवं पद्मलेश्यायामपि चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः । पञ्चेन्द्रियति-
र्यगूयोनिकानां मनुष्याणां वैमानिकानां चैतेषां पद्मलेश्या, शेषाणां नास्ति ।
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ २१-२४

यथा पद्मलेश्यायामेवं शुक्ललेश्यायामपि चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः । नवरं
मनुष्याणां गमको यथा औघिकोद्देशकेषु । शेषं तदेव । एवमेते पद्मसु लेश्यासु
चतुर्विंशतिरुद्देशका, औघिकाश्चत्वारः, सर्वे ते अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति ।
तदेवं भदन्त ! २ इति । २४-२८ उद्देशकाः समाप्ताः ।

टीका—‘एवं पद्मलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ एवं कृष्णलेश्यादिवदेव
पद्मलेश्यायामपि चत्वार उद्देशकाः पद्मलेश्याकृतयुग्माः पद्मलेश्यात्रयोजाः पद्मलेश्या
द्वापरयुग्माः पद्मलेश्याकलयोजाः इत्येवंरूपाः कर्तव्याः सर्वत्रालापकप्रकारः स्वय-
मेवोद्देशनीयः । केषां जीवानां पद्मलेश्या भवतीति तान् दर्शयति—‘पंचिदिय’

शतक ४१ उद्देशक २१ से २८ तक

‘एवं पद्मलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—कृष्णलेश्या प्रकरण में जैसे चार उद्देशक प्रकट किये जा
चुके हैं वैसे ही चार उद्देशक पद्मलेश्या जीवों के सम्बन्ध में भी कह
लेना चाहिये । जैसे पद्मलेश्या कृतयुग्म उद्देशक १ पद्मलेश्या त्रयोज
उद्देशक २ पद्मलेश्याद्वापरयुग्म उद्देशक ३ और पद्मलेश्या कलयोज
उद्देशक ४ इन सब में आलाप प्रकार अपने आप उद्भावित कर लेना
चाहिये । पद्मलेश्या किन् किन् जीवों के होनी है सो सूत्रकारने ‘पंचि-

अेकवीसमा उद्देशाथी अठ्यावीसमा सुधीना आठ उद्देशानो प्रारंभ—

‘एवं पद्मलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ इत्यादि

टीकार्थ—कृष्णलेश्यानां प्रकरणमांने प्रमाणेन कथन करवाना आवेल छे. अेण
प्रमाणेन कथन आर उद्देशाद्य पद्मलेश्या नारके विगेरेना संबंधमां पणु कडेवा
लेधअे ते आ प्रमाणे समजवा पद्मलेश्या कृतयुग्म उद्देशो १ पद्मलेश्या त्रयो
उद्देशो २ पद्मलेश्या द्वापरयुग्म उ अने पद्मलेश्या कलयोज उद्देशक ४ आ अधामां
आलापनो प्रकार स्वयं अनापीने समज लेवो. पद्मलेश्या कथा कथा अेवोने होय

इत्यादि 'पञ्चिन्द्रियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं वेमाणियाणय एएसि पम्ह-
लेस्सा' पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां मनुष्याणां वैमानिकानां च एतेषां जीवानां
पद्मलेश्या भवति । 'सेसाणं नत्थि' शेषाणामेतद्व्यतिरिक्तानां पद्मलेश्या न
भवतीति 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! २ इति ।

'जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' यथा-
पद्मलेश्यायां चत्वार उद्देशकाः कथिता एवमेव शुक्ललेश्यायामपि चत्वार उद्देशकाः
कर्तव्या सर्वत्राऽऽलापप्रकारः स्वयमेवोद्दनीय इति । 'नवरं मणुस्साणं गमओ

दिय तिरिक्ख जोणियाणं मणुस्साणं वेमाणियाण य एएसि पम्हलेस्सा'
इस सूत्र पाठ द्वारा स्पष्ट किया है—पञ्चेन्द्रियतिर्यग्घो के, मनुष्यों के एवं
वैमानिक देवों के पद्मलेश्या होती है । 'सेसाणं नत्थि' इनके सिवाय
और जो जीव बचते हैं उनके पद्मलेश्या नहीं होती है । 'सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा
सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की
और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे
आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।

'जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा'
पद्मलेश्या में जिस पद्धति से चार उद्देशक प्रकट किये गये हैं

छे ? ते भाटे सूत्रधारे 'पञ्चिन्द्रियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साण वेमाणियाणय एएसि
पम्हलेस्सा' आ सूत्र पाठद्वारा स्पष्ट करेता छे. पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्घोने, मनुष्योने,
तथा नैरयिक देवोने पद्मलेश्या होय छे. 'सेसाण नत्थि' आभना शिवाय
ने लोवा भाडी रहे छे, तेओने पद्मलेश्या होती नथी.

'सेव भते ! सेव भते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये ने प्रभाणे कहुं
छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे छे लगवन् आप देवानुप्रियणुं आ
विषयना संधमां कहेल सधणु कथन सर्वथा सत्य न छे आ प्रभाणे कहुंने
गौतमस्वामीओ प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार
करीने ते पथी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका
पोताना स्थान पर विराजमान थया

'जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साए वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा' पद्म
लेश्याना कथनमां ने प्रभाणे चार उद्देशाओ कहेला छे, ओन प्रभाणे शुक्ल
लेश्याना संधमां पणु चार उद्देशाओ सभल देवा. तथा आ षधमां

जहा ओहि उद्देशए' नवरं मनुष्याणां गमकः प्रकारो यथा औघिकोद्देशकेषु एतस्यैव शतकस्य पथमोद्देशके कथित स्तथैव ज्ञातव्यः । 'सेसं तं चेव' शेषं तदेव-पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति । 'एवं एष छसु लेस्सासु चउवीसं उद्देशगा' एवम् उपरोक्त प्रकारेण एते उद्देशका पदसु लेश्यासु चतुर्विंशति भवन्ति । प्रत्येकलेश्यानां कृत-युग्मादि चतुश्चतुर्दशकसद्भावात् । 'ओहिया चत्तारि' औघिकाश्चत्वार उद्देशका भवन्ति । 'सव्वे ते अट्ठावीसं उद्देशगा भवन्ति' सर्वे ते सङ्कलनया अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्तीति । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! ति' तदेव' भदन्त ! तदेव' भदन्त ! इति ।

॥ एकचत्वारिंशत्तमे शतके २१-२८ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

उसी पद्धति से शुक्ललेश्या में भी चार उद्देशक कह लेना चाहिये । तथा इन सब में आलाप प्रकार स्वयं ही उद्भावित कर लेना चाहिये । परन्तु मनुष्यों के सम्बन्ध में गमक प्रकार जैसा औघिक उद्देशक में कहा जा चुका है वैसा ही यहां वक्तव्य हुआ है । यही बात 'नवरं मणुस्साणं गमओ जहा ओहि उद्देशए' इस सूत्रपाठ द्वारा यहां समझाई गई है । 'सेसं तं चेव' बाकी का और सब कथन पूर्व के ही जैसा है । 'एवं एष छसु लेस्सासु चउवीसं उद्देशगा' इस प्रकार छह लेश्याओं के सम्बन्ध में समस्त उद्देशक २४ होते हैं । क्योंकि प्रत्येक लेश्या में प्रत्येक लेशपात्रालो में कृतयुग्मादिरूप चार चार उद्देशक हैं । तथा—'ओहिया चत्तारि' औघिक उद्देशक ४ हैं । इस प्रकार से सब

आलापनेा प्रकार स्वयं अनापीने समलु लेवेा लेधये परंतु मनुष्येना संभ-धमां गमकेना प्रकार औघिक उद्देशामां अटले के-आ भगवती सूत्रना अक-ताणीसमा शतकना पडैला उद्देशामां ये प्रभाणे कडेवामां आवेल छे, अण प्रभाणेतुं कथन समलु लेपुं. अण वात 'नवरं मणुस्साणं गमओ जहा ओहि उद्देशए' आ सूत्रपाठद्वारा अडियां समलवेल छे, 'सेसं तं चेव' आधीतुं भीणु तमाभ कथन पडैला कथा प्रभ णेतुं अ छे. 'एवं एषसु छसु लेस्सासु चउवीसगं' उद्देशगा' आ रीते आ छ लेश्याओना संभंधमां सधणा मणीने २४ शोवीस उद्देशाओ थर्ध नय छे केअ के दरेक लेश्यामां-अटले के दरेक लेश्यानाणा ओमां कृतयुग्म कृतयुग्मादि ३प चार चार उद्देशाओ थाय छे. तथा 'ओहिया चत्तारि' औघिक उद्देशाओ ४ चार छे. आ रीते अथा मणीने २८ अड्यावीस उद्देशाओ थर्ध नय छे.

॥ 'अह २९-५६ उद्देसगा' ॥

मूल्-भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति जहा ओहिया पढमगा चत्तारि उद्देसगा तहैव
निरवसेसं एए चत्तारि उद्देसगा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । २९-३२।

कणहलेस्स भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति जहा कणहलेस्साए चत्तारि उद्देसगा भवंति
तहा इमे वि भवसिद्धिय कणहलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा
कायव्वा ॥४१-३३-३६॥

एवं नीललेस्स भवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देसगा काय-
व्वा ॥४१-३७-४०॥

एवं काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ॥४१-४१-४४॥

तेउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा । ४१-४५-४८।

पम्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ॥४१-४९-५२॥

सुकलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा । एवं
एए वि भवसिद्धिएहि वि अट्टावीसं उद्देसगा भवंति । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥४१-५३-५६॥

४१-२९-५६-उद्देसगा समत्ता

मिलकर २८ उद्देशक होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति' इन पदों
की व्याख्या पूर्व के ही जैसी है ।

४१ वे शतक में २१ से लेकर २८ तकके उद्देशक समाप्त हुए ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' छे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमा
कडेल सधणुं कथन सत्य छे छे लगवन् आप देवानुप्रिये कडेल सधणुं कथन
सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाणे कडीने गौतमस्वामीणे प्रभुश्रीने वंदना करी
नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी सयम अने तपथी पोताना
आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया ॥सू०१॥
अेकवीसमा उद्देशाथी अडथावीसमा सुधीनाआठ उद्देशाथी समाप्त ४१-२९थी२८

छाया--'भवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते यथा औघिकाः प्रथमका श्रवण उद्देशका स्तथैव निरवशेषम् एते चत्वार उद्देशकाः तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१. २९-३२॥

कृष्णलेश्य भवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? यथा कृष्णलेश्यायां चत्वार उद्देशका भवन्ति तथा-इमेऽपि भवसिद्धिक कृष्णलेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्याः ॥४१. ३३-३६॥

एवं नीललेश्य भवसिद्धिकैरपि चत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्याः ॥३७-४०॥

एवं कापोतलेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः ॥४१, ४१-४४॥

तेजोलेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः ॥४१, ४५-४८॥

पद्मलेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः ॥४१, ४९-५२॥

शुक्ललेश्यैरपि चत्वार उद्देशका औघिकसदृशाः । एवमेतेऽपि भवसिद्धिकैरपि अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥४१, ५३-५३ ॥४१, २९-५६ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

टीका--'भवसिद्धियरासिजुम्म कडजुम्म नैरइयाणं भंते ! कओ भववज्जंति' भवसिद्धिकराशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद्देवेभ्यः ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह--'जहा' इत्यादि, 'जहा ओहिया-पढमगा चत्वारि उद्देशगा' यथा औघिकाः सामान्याः प्रथमका आद्या श्रवण

शतक ४१ उद्देशक २९ से ५६ तक

'भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नैरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' टीकार्थ-हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्म राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिक किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहने हैं--'जहा ओहिया पढमगा चत्वारि उद्देशगा' 'हे गौतम ! जैसे पहिलेके चार औघिक उद्देशक कहे

आगणुत्रीसभा उद्देशाथी अत्रीसभा सुधीना चार उद्देशाने प्रारंभ--

'भवसिद्धिय रासिजुम्मकडजुम्म नैरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' छ

टीकार्थ--हे भगवन् राशियुग्ममां कृतयुग्म राशिप्रभाषणाणा लवसिद्धिक नैरयिके कथा स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु' तेज्यो नैरयिके-मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तियं अथेनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री कहे छे छे--'जहा ओहिया पढमगा

उद्देशकाः कथिता एतस्मिन्नेव शतके 'तद्देव निरवसेसं एए चत्तारि उद्देशगा' तथैव तेनैव रूपेण निरवशेषम् एतेऽपि भवसिद्धिक कृतयुग्मादि नारकादीनामपि चत्वार उद्देशका वक्तव्या इति, 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' तदेव' भदन्त ! तदेव' भदन्त ! इति ॥

॥ ४१, २९-३२ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

कणहलेस्स भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृष्णलेश्य भवसिद्धिकराशियुग्म कृतयुग्म नारकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पचन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावत् देवेभ्यो वा समुत्पचन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह-पूर्वातिदेशेन

गये हैं इसी शतक में 'तद्देव निरवसेसं एए चत्तारि उद्देशगा' उन्नी प्रकार से इन भवसिद्धिक कृतयुग्मादि नारक आदिकों के भी चार उद्देशक यहाँ वक्तव्य हुए हैं । 'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' इन पदों की व्याख्या पूर्वके जैसी है ।

॥ ४१ वे शतक में २९ से लेकर ३२ तक के उद्देशक समाप्त हुआ ।

'कणहलेस्स भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि ।

टीकार्थ-हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्मराशिप्रमित कृष्णलेश्य भवसिद्धिक नैरयिक किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ?

चत्तारि उद्देशगा' हे गौतम ! जैसी रीते आ शतकमां पडेलाना चार औषिक उद्देशाओ कडेवामां आवेल छे, ओज प्रभाणे 'तद्देव निरवसेसं' एए चत्तारि उद्देशगा' आ लवसिद्धिक कृतयुग्म विगेरे नारकांना संणंधमां पणु चार उद्देशाओ पडेलां क्हा प्रभाणे अडियां समजवा.

'सेव' भंते ! सेव' भंते त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां कडेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य ज छे. हे लगवन् आप देवानुप्रिये कडेल सधणुं कथन सत्य ज छे. आ प्रभाणे कहीने गौतमस्वामीओ प्रबुश्रीने वंदना करी तेओने नभस्कार कर्या वंदना नभस्कार करीने ते पछी सयम अने तपथी पोताना आत्माने लाविन करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ओगणुत्रीसमा उद्देशाथी लज्जे अत्रीसमा सुधीना चार उद्देशाओ समाप्त

॥४१-२९-३२॥

तेत्रीसमा उद्देशाथी छत्रीसमा सुधीना चार उद्देशाओनुं कथन—

'कणहलेस्स भवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ—हे लगवन् राशियुग्ममा कृतयुग्म राशिप्रभाणु कृष्णलेश्यावाणा लवसिद्धिक नैरयिके कथा स्थान विशेषथी आव'ने उत्पन्न थाय छे ? अं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिय'अथेनिकेमांथी आवीने

‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा कणहलेस्साए चत्तारि उद्देशगा भवन्ति’ यथा कृष्णलेश्या प्रकरणे एतस्यैव शतकस्य पञ्चमाद्युद्देशकेषु चत्वार उद्देशका भवन्ति ‘तहा इमे वि’ तथा—तेनैव प्रकारेण इमेऽपि । ‘कणहलेस्स भवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिक नैरयिकादिकैरपि कृष्णलेश्य भवसिद्धिक कृत-युग्म कृष्णलेश्य भवसिद्धिक त्रयोज भवसिद्धिक कृष्णलेश्य द्वापरयुग्म कृष्णलेश्य भवसिद्धिक कलयोज रूपा श्रत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्या इति

त्रयस्त्रिंशत्तमात् षट्त्रिंशत्तमपर्यन्तोद्देशकाः समाप्ताः ॥३३-३६॥

क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं? इसका पूर्वातिदेश से उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—‘जहा कणहलेस्साए चत्तारि उद्देशगा भवन्ति’ हे गौतम ! इसी शतक के पंचमादि चार उद्देशकों में जिस प्रकार से बताये गये हैं ‘तहा इमे वि’ उसी प्रकार से ये ‘कणहलेस्स भवसिद्धिए हि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ कृष्णलेश्य भवसिद्धिक नैरयिकादि जीवों के साथ भी चार उद्देशक बना लेना चाहिये । जैसे—कृष्णलेश्य कृतयुग्म भवसिद्धिकोद्देशक १, कृष्णलेश्य त्रयोज भवसिद्धिकोद्देशक २, कृष्णलेश्य द्वापरयुग्म भवसिद्धिकोद्देशक ३, और कृष्णलेश्य कलयोज भवसिद्धिकोद्देशक ४ इस प्रकार से राशियुग्म में कृष्णलेश्य भवसिद्धिक नैरयिकों के सम्बन्ध में ये चार उद्देशक हो जाते हैं । इस प्रकार ३३ वें उद्देशक से लेकर ३६ वें उद्देशक तकके ४ उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए । ४१, ३३-३६।

उत्पन्न थाय छे? अथवा मनुष्योभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? अथवा देवोभांथी आवीने उत्पन्न थाय छे? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रभुश्री उडे छे के ‘जहा कणहलेस्साए चत्तारि उद्देशगा भवन्ति’ छे गौतम ! आ ओऽताणीस शतकना पांथमा उद्देशांभां जे प्रभाण्णेना चार उद्देशाओ उडेवांभां आव्या छे, ‘तहा इमे वि’ ओज प्रभाण्णे आ ‘कणहलेस्स भवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिक नैरयिक उदेवना संभंधमां पणु चार उद्देशाओ उडेवां जेठओ. जेभ के—कृष्णलेश्यावाणा कृतयुग्म भवसिद्धिक नैरयिकेना संभंधमां पडेवे। उद्देशो १ कृष्णलेश्यावाणा ओज भवसिद्धिक नैरयिकेना संभंधमां णीने उद्देशो २ कृष्णलेश्यावाणा द्वापरयुग्म भवसिद्धिक नैरयिकेना संभंधमां त्रीने उद्देशो ३ अने कृष्णलेश्यावाणा कल्येज भवसिद्धिक नैरयिकेना संभंधमां चोथे। उद्देशो ४ आ रीते राशियुग्ममां कृष्णलेश्यावाणा

‘एवं नीललेस्स भवसिद्धिर्एहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ एवमेव कृष्ण-
लेश्य भवसिद्धिकवदेव नीललेश्य भवसिद्धिकैरपि चत्वार उद्देशकाः कृतयुग्मादि
रूपाः कर्तव्याः ॥ सप्तत्रिंशत्तमाच्चत्वारिंशत्तम पर्यन्ताः समाप्ताः ॥३७-४०॥

‘एवं काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा’ एवमेव कापोतलेश्यैरपि चत्वार
उद्देशकाः कर्तव्याः । एते चत्वारिंशत्तमात् चतुश्चत्वारिंशत्तमपर्यन्ता उद्देशका
समाप्ताः ॥४१-४४॥

‘एवं नीललेस्स भवसिद्धिर्एहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’

टीकार्थ—इसी प्रकार से—कृष्णलेश्य भवसिद्धिक जैसे ही नील-
लेश्य भवसिद्धिक नैरयिक्यादिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक कर्तव्य
होते हैं। जैसे—नीललेश्य कृतयुग्म भवसिद्धिकोद्देशक १ नीललेश्ययोज
भवसिद्धिकोद्देशक २, नीललेश्य द्वापरयुग्म भवसिद्धिक उद्देशक ३ और
नीललेश्य कल्पयोज भवसिद्धिक उद्देशक ४ इस प्रकार ३७ वें उद्देशकसे
लेकर ४० वें उद्देशक तक के ४ उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए ।

भवसिद्धिक नैरयिक्या संभंधमां आ चार उद्देशाञ्चो धर्ष नय छे. आ रीते
तेत्रीसमा उद्देशाथी लधने छत्रीसमा उद्देशा सुधीना ४ उद्देशाञ्चो समाप्त
॥४१-३३ थी ३६॥

॥तेत्रीसमा उद्देशाथी ३६ सुधीना उद्देशाञ्चो समाप्त॥

‘एवं नीललेस्स भवसिद्धिर्एहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ धत्यादि

टीकार्थ—आज प्रमाणे—कृष्णलेश्यावाणा भवसिद्धिकना कथन प्रमाणे न
नीललेश्यावाणा भवसिद्धिक नैरयिक्याना संभंधमा पणु चार उद्देशाञ्चो कडेवा
जेधञ्चे जेभके—नीललेश्यायुक्त कृतयुग्म भवसिद्धिक नैरयिक्याना संभंधमां पडेदी
उद्देशो १ नीललेश्यावाणा योज भवसिद्धिक नैरयिक्याना संभंधमां भीजे उद्देशो.
नीललेश्यावाणा द्वापरयुग्म भवसिद्धिक नैरयिक्याना संभंधमा त्रीजे उद्देशो
३ अने नीललेश्यावाणा कल्पेज भवसिद्धिकना संभंधमा ४ योथो उद्देशो साड
त्रीसमा उद्देशाथी ४० सुधीना चार उद्देशाञ्चो समाप्त थया ॥४१-३७थी४०॥

‘एवं काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा कायव्वा’ धत्यादि

टीकार्थ—आज प्रमाणे कापोतलेश्यावाणा भवसिद्धिक नैरयिक्याना संभंध-
धमां पणु चार उद्देशाञ्चो कडेवा जेधञ्चे.

आ रीते आ ऐकताणीसमा ४१ शतकमां ४१ ऐकताणीसमा उद्देशाथी
लधने युग्माणीस सुधीना चार उद्देशाञ्चो समाप्त ॥४१-थी ४१ ४४॥

'तेजलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा ओहिय सरिसा' तेजलेश्यैरपि तेजोलेश्य भवसिद्धिकासुरकुमारादिकैरपि चत्वार उद्देशका औघिकसदृशाः कर्तव्याः ॥ पञ्चवत्वारिंशत्तमात् अपृचत्वारिंशत्तमपर्यन्ता उद्देशकाः समाप्ताः ॥४५-४८॥

'पद्मलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा' पद्मलेश्यामाश्रित्यापि पद्मलेश्य भवसिद्धिक तिर्यक् पञ्चेन्द्रियादिकमाश्रित्यापि कृतयुग्मादिरूपा श्रुत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः । एकोनपञ्चाशत्तमाद् द्विपञ्चाशत्तमपर्यन्ता उद्देशका समाप्ताः ॥४९-५२

'एवं काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा कायववा' इत्यादि ।

इसी प्रकार से कापोतलेश्य भवसिद्धिक नैरयिकादिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक करने योग्य होते हैं । इस प्रकार ४१ वें उद्देशक से लेकर ४४ वें उद्देशक तक के ४ उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए । ४१, ४१-४४॥

'तेजलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा ओहिय सरिसगा' इत्यादि ।

तेजोलेश्य भवसिद्धिक असुरकुमारादिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक औघिक उद्देशक के जैसे करने योग्य होते हैं । इस प्रकार ४५ वें उद्देशक से लेकर ४८ वें उद्देशक तक के ४ उद्देशक ४१ वे शतकके समाप्त हुए । ४१, ४५-४८॥

'पद्मलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि'

पद्मलेश्य भवसिद्धिक तिर्यक्पञ्चेन्द्रियादिकों को लेकर भी कृतयुग्मादिरूप चार उद्देशक कर लेना चाहिये । इस प्रकार ४९ वे उद्देशक से लेकर ५२ वे उद्देशक तक के ४ उद्देशक ४१ वे शतक में समाप्त हुए ४१, ४९-५२॥

'तेजलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा ओहिय सरिसगा' इत्यादि

टीका—तेजोलेस्या भवसिद्धिक नैरयिकाना सम्बन्धमां पञ्च चार उद्देशाञ्चो औघिक उद्देशाना कथन प्रमाणे इही देवा लेख्ये.

आ रीते पिस्ताणीसमा उद्देशाथी लधने अउताणीसमा उद्देशा सुधीना चार उद्देशाञ्चो समाप्त ॥४५-४५ थी ४८॥

'पद्मलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि

टीका—पद्मलेश्यामाश्रिता भवसिद्धिक तिर्यक् पञ्चेन्द्रियेने लधने पञ्च कृतयुग्म विगेरे इपे चार उद्देशाञ्चो गतावीने सप्रल देवा.

आ रीते ओगणुपयासमा उद्देशाथी पर भावन सुधीना चार उद्देशाञ्चो समाप्त ॥४९-४९-थी पर॥

‘सुकलेस्सेहि वि चत्तारि ओहिय सरिसा’ शुक्ललेश्य मन्तर्भाव्यापि कृतयु-
ग्मादिरूपा अत्रार उद्देशका औघिकरादशा एव कर्त्तव्या इति । ‘एवं एएवि भव-
सिद्धिए वि अट्टावीसं उद्देशगा भवन्ति’ एवं पूर्ववदेव एते भवसिद्धिकैरपि अष्टा-
विंशतिरुद्देशका भवन्तीति । ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ तदेव मदन्त तदेवं-
मदन्त । इति । त्रिपञ्चाशत्तमात् पट् पञ्चाशत्तम पर्यन्ता उद्देशका समाप्ताः ॥५३ ५६

‘सुकलेस्सेहिं वि चत्तारि ओहिय सरिसा’ इत्यादि ।

शुक्ललेश्यावालों को आश्रित करके भी औघिक उद्देशकों के
जैसे ही कृतयुग्मादि रूप चार उद्देशक घना लेना चाहिये । ‘एवं एए
वि भवसिद्धिएहिं वि अट्टावीसं उद्देशगा भवन्ति’ इस प्रकार भवसिद्धिकों
के सम्बन्ध में भी २८ उद्देशक हो जाते हैं । तात्पर्य कहने का यह है
कि भवसिद्धिक जीवों के कृतयुग्मादिरूप से चार उद्देशक तो औघिक
हैं और ६ लेश्याओं सम्बन्धी चार चार उद्देशक होने से चौबीस उद्दे-
शक ये हो जाते हैं । इस प्रकार से कुल यहां २८ उद्देशक हैं । ‘सेव
भंते ! सेव भंते ! त्ति’ इन पदों की व्याख्या पूर्ववत् ही है । इस प्रकार
५३ वें उद्देशक से लेकर ५६ वें उद्देशक तक के ४ उद्देशक ४१ वें
शतक में समाप्त हुए ४१, ५३-५६॥

‘सुकलेस्सेहिं चत्तारि ओहिय सरिसगा’ शुक्ललेश्यावाणाञ्चोने आश्रय
करीने औघिक उद्देशाञ्चोनि जेम ज कृतयुग्मादि इप चार उद्देशाञ्चो उडेवा
जेउञ्चो. ‘एवं एए वि भवसिद्धिएहिं वि अट्टावीसं उद्देशगा भवन्ति’ आ
रीते भवसिद्धिकाना सम्बन्धमां पणु २८ अठ्यावीस उद्देशाञ्चो थर्ध जय छे,
उडेवानुं तात्पर्यं जे छे के-शुक्ललेश्यावाणाञ्चोना कृतयुग्मादि इप चार उद्देशाञ्चो
तो औघिक छे. अने छ लेश्याञ्चो सम्बन्धी चार चार उद्देशाञ्चो थवाथी तेना
२४ चोवीस उद्देशाञ्चो थाय छे. आ रीते अडियां अघा भणीने कुल २८
अठ्यावीस उद्देशाञ्चो थाय छे

‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ छे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
जे कथन कथुं छे ते सधणुं कथन सर्वाथा सत्य ज छे, छे लगवन् आप
देवानुप्रियनुं सधणुं कथन सत्य ज छे आ प्रमाणे कडीने जौतमस्वाभीञ्चो प्रलुश्रीने
वंदना करी नमस्कार कर्था वंदना नमस्कार करीने सयम अने तपथी पोताना
आत्माने लावित उरता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥सू०१॥
आ रीते पउ तेपनमां उद्देशाथी लर्धने पद छप्यन सुधीना ४ चार उद्देशाञ्चो
अभापत ॥४१-५३ थी पद॥

‘अह ५७-८४ उद्देशगा’

गूलम्—अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? जहा पढसो उद्देशो । नवरं मणुस्सा नेरइया
य हरिस्सा भाणियव्वा सेसं तहेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।
एवं चउसु वि जुम्मैसु चत्तारि उद्देशगा ॥५७-६०॥

कणहलेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं
भंते ! कओ उववज्जंति एवं चेव चत्तारि उद्देशगा ॥६१-६४॥
एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं
चत्तारि उद्देशगा ॥६५-६८॥ काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा
॥६९-७२॥ तेउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा ॥७३-७६॥ पम्ह-
लेस्सेहि वि चत्तारि उद्देशगा ॥७७-८०॥ सुकलेस्स अभवसि-
द्धिएहिावे चत्तारि उद्देशगा ॥८१-८४॥ एवं एएसु अट्टावीसाए वि
अभवसिद्धिय उद्देशएसु मणुस्सा नेरइयगमेणं णेयव्वा । सेवं
भंते ! सेवं भंते ! त्ति । एवं एए वि अट्टावीसं उद्देशगा ॥६१-८४॥

छाया—अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते
यथा प्रथम उद्देशकाः । नवरं मनुष्याः नैरयिकाश्च सदृशा भणितव्याः । शेषं तथैव,
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । एवं चतुर्विंशत्युग्मेषु चत्वार उद्देशकाः ॥५९-६०

कृष्णलेख्याभवसिद्धिक राशियुग्मकृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते एवमेव चत्वार उद्देशकाः । एवं नीललेख्याऽभवसिद्धिकराशियुग्म-
नैरयिकाणां चत्वार उद्देशकाः । कापोतलेख्यैरपि चत्वार उद्देशकाः । तेजोल्लेख्यै-
रपि चत्वार उद्देशकाः । पद्मलेख्यैरपि चत्वार उद्देशकाः । शुक्ललेख्याऽभवसिद्धि-
कैरपि चत्वार उद्देशकाः । एवमेतेषु अष्टाविंशत्वामपि अभवसिद्धिकदेशकेषु मनुष्या
नैरयिकभेदेण नेतव्याः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । एवमेतेऽपि
अष्टाविंशतिरुद्देशकाः ॥

सप्त पञ्चाशत्तमात् चतुरशीतितमपर्यन्ताः,

एकचत्वारिंशत्तमे शतके समाप्ताः ॥५९-८४॥

टीका—‘अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त । कुत उत्पद्यन्ते किं नैर-
यिकेभ्यो यावद्देवेभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते ? इति प्रश्नः, उत्तरमाह—पूर्वातिदेशेन
‘जहा’ इत्यादि, ‘जहा पढमो उद्देशो’ यथा प्रथम उद्देशकः, एतस्यैव शतकस्य प्रथमो-
द्देशके नारकाणां वक्तव्यता कथिता तथैवात्रापि ज्ञातव्या । तिर्यग्भ्यो मनुष्येभ्यो
वाऽऽगत्योत्पद्यन्ते । शेषं प्रथमोद्देशकवदेव ज्ञातव्यमिति । ‘नवरं मणुस्सा नेरइयाय

शतक ४१ उद्देशक ५७ से ८४ तक ॥

‘अभवसिद्धिया रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इत्यादि । ५७-६०॥

टीका—‘अभवसिद्धिया रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति’ हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्म प्रमाण अभव-
सिद्धिक नैरयिक किस स्थान विशेष से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या
वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से
आकरके उत्पन्न होते हैं ? पूर्वातिदेश द्वारा इस प्रश्न का उत्तर देते
हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—‘जहा पढमो उद्देशो’ हे गौतम ! जैसी
वक्तव्यता नारकों के सम्बन्ध में इसी शतक के प्रथम उद्देशक में कही
गई है वैसी वक्तव्यता इनके सम्बन्ध में यहां जाननी चाहिये । तथा
च—ये नैरयिक तिर्यगों में से आकरके और मनुष्यों में से आकरके
उत्पन्न होते हैं—ऐसा इस प्रश्न का उत्तर है । बाकी वा और कथन
प्रथम उद्देशक के जैसा ही है । ‘नवरं मणुस्सा नेरइयाय म मरिसा

सत्तावनमा उद्देशाथी साधकमा सुधीना चार उद्देशाओनु कथन

‘अभवसिद्धिया रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ छ.

टीकार्थ—हे लगवन राशियुग्ममां कृतयुग्म प्रमाण अवसिद्धिक नैरयिक
क्या स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु तेओ नैरयिकेमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्ययोनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय
छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नो उत्तर अतिदेश द्वारा आपतां प्रभुश्री गौतम
स्वामीने कडे छे के—‘जहा पढमो उद्देशो’ हे गौतम ! नारकोना संबंधमां आ
ओकताणीसमा शतकना पडेला उद्देशामां ने प्रमाणे उद्देशामां आवेल छे, ओज
प्रमाणेनुं सधणुं कथन तेओना संबंधमां अडि पणु सभणु ओटये के—
ते नैरयिके तिर्ययोनिकेमांथी आवीने अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे, आ प्रमाणेना आ प्रश्नो उत्तर छे, आकीनु सधणुं कथन पडेला

सरिसा भाणियव्वा' नवरम्-केवलं प्रथमोद्देशकापेक्षया इदमेव वैलक्षण्यं यत्
अत्राभवत्सिद्धिकप्रकरणे मनुष्या नारकाश्च सदशा एव वक्तव्या इति । 'सेसं तद्देव'
शेषं तथैव प्रथमोद्देशकत्रयेव ज्ञातव्यम् 'चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा' चतु-
र्ष्वपि युग्मेषु कृतयुग्म त्रयोज द्वापरयुग्म कलयोजरूपयुग्मचतुष्टयेषु चत्वार उद्दे-
शका भवन्ति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

एकचत्वारिंशत्तमे शतके सप्त पञ्चाशत्तमाद् आरभ्य षष्ठि पर्यन्ता उद्देशकाः
समाप्ताः । ५७-६०॥

भाणियव्वा' परन्तु प्रथम उद्देशककी अपेक्षा यहां केवल यही विशेषता
है कि इस अभवत्सिद्धिक प्रकरण में मनुष्य और नारक समान रीति
में कहना चाहिये । 'सेसं तद्देव' और घाकी का कथन प्रथमोद्देशक के
ही जैसा है । 'चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा' यहां पर भी चार
युग्मों में-कृतयुग्म, त्रयोज, द्वापरयुग्म और कलयोज-इन युग्मों में
चार उद्देशक होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा
आपने यह कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर
गौतमने प्रभुश्रीको वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार
कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर विराजमान हो गये । इस प्रकार ५७ वें उद्देशक से लेकर
६० वें उद्देशक तकके ४ उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त ॥४१, ५७, ६०

उद्देश्यामां क्ख्या प्रभाणु ७ छे. 'नवरं मणुस्सा नेरइया य सरिसा भाणियव्वा'
परंतु पड़ेला उद्देशा करतां आ कथनमां देवण ञ्जेण विशेषणु' आवे छे-आ
अभवत्सिद्धिकता प्रकरणुमां मनुष्य अने नारका सरणा ७ कहेवा ञ्जेण्जे. 'सेसं
तद्देव' आ शिवाय भाकीतुं सधणुं कथन पड़ेला उद्देश्यामां क्ख्या प्रभाणु ७ छे.
'चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा' अद्वियां पणु आर युग्मोमां-कृतयुग्म-
त्रयोज द्वापरयुग्म अने कल्योज आ आर युग्मोना आर उद्देश्याओ थाय छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां
७ प्रभाणु कहेल छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आप
देवानुप्रियतुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य छे आ प्रभाणु कहीने गौतमस्वामीओ
प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी
संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर
विराजमान थया ॥सू०१॥

आ प्रभाणु ५७ सत्तावनमा उद्देश्याथी लधने ६० साठठमा उद्देशा सुधीना आर
उद्देश्याओ समाप्त ॥४१-५७ थी ६०

१) 'कण्ठलेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उव-
वज्जंति' कृष्णलेइयाऽभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कृत
उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावदेवभ्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते इति प्रश्नः, उत्तरमाह-
पूर्ववदेव 'एवं चेव' इत्यादि, 'एवं चेव चत्तारि उद्देशगा' एवं पूर्ववदेव चतुरो
युग्मानाश्रित्य चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः ॥६१-६४॥

'एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं चत्तारि उद्दे-
कण्ठलेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्मकडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ-
उववज्जंति' इत्यादि सूत्र-६१-६४ ।

टीकार्थ- 'कण्ठलेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं
भंते ! कओ उववज्जंति'

हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्म प्रमाण कृष्णलेइयावाले अभव-
सिद्धिक नैरयिक किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ?
क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में
से आकरके उत्पन्न होते हैं ? 'एवं चेव' हे गौतम ! पूर्वके जैसे यहां
पर भी चार युग्मों को आश्रित करके चार उद्देशक कह लेना चाहिये ।
इस प्रकार ६१ वे उद्देशक से लेकर ६४ वे उद्देशक तकके चार उद्देश
४१ वे शतक के समाप्त हुए । ४१, ६१-६४॥

एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं चत्तारि
उद्देशगा इत्यादि ६५-६८॥

'कण्ठलेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ
उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ- हे भगवन राशियुग्ममां कृतयुग्म प्रमाणे कृष्णलेइयावाणा
अभवसिद्धिक नैरयिके कया स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? तेज्जा
नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्यथेनिकेमांथी आवीने
उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? इ देवे
मांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना उत्तरमां प्रबुथी कडे छे इ-
'एवं चेव' हे गौतम ! पडेलां ने प्रमाणे कडेवामां आवेल छे, जेव प्रमाणे
अडिथां पणु चार युग्मेनो आश्रय करीने चार उद्देशाज्जे कडेवा नेधज्जे.
आ रीते ६१ जेकसठमा उद्देशाथी लधने ६४ जेसठमा उद्देशाज्जे समाप्त

॥४१-६१- थी ६४॥

'एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं चत्तारि
उद्देशगा' इत्यादि.

सगा' एवमौघिक प्रकरणवदेव अभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नारकाणामपि चतुरो युग्मानाश्रित्य चत्वार उद्देशका वक्तव्याः ॥६५-६८॥

'काउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इहापि पूर्ववदेव कापोतलेश्यैः कापोत-
केश्यामन्तर्भाव्यापि चतुरो युग्मानाश्रित्य चत्वार उद्देशकाः कर्तव्याः ॥६९-७२॥

तेउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' तेजोलेश्यैरपि चत्वार उद्देशकाः इहापि
पूर्ववदेव तेजोलेश्यामन्तर्भाव्याभवसिद्धिकराशियुग्मकृतयुग्मादि नारकाणां युग्म-
भेदात् चत्वार उद्देशकाः कर्तव्या इति ॥७२-७६॥

टीकार्थ- 'एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेर-
इयाणं चत्तारि उद्देशगा' औघिक प्रकरण के जैसे राशियुग्म में कृत-
युग्म प्रमाण नीललेश्यावाले अभवसिद्धिक नैरयिको के सम्बन्ध में भी
चार उद्देशक कहना चाहिये। इस प्रकार ६५ वें उद्देशक से लेकर ६८
वें उद्देशक तकके चार उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए ४१, ६५-६८॥

'काउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि ६९-७२॥

'काउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' पहिले के जैसे ही यहाँ पर भी
कापोतलेश्यावालों अभवसिद्धिक नैरयिकों के सम्बन्ध में चार युग्मों
को आश्रित करके चार उद्देशक होते हैं, ऐसा जानना चाहिये। इस
प्रकार ६९ वें उद्देशक से लेकर ७२ वें उद्देशक तक के चार उद्देशक ४१
वें शतक में समाप्त हुए। ४१, ६९-७२॥

'तेउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि ७३-७६॥

टीकार्थ- 'एवं नीललेस्स अभवसिद्धिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं चत्तारि
उद्देशगा' औघिक प्रकरणमां कथा प्रमाणे राशियुग्ममां कृतयुग्म प्रमाणे नील-
लेश्यावणा अवसिद्धिक नैरयिकाना सम्बन्धमां पण्य चार युग्मेना आश्रय
करीने चार उद्देशाओ कडेवा जेधओ.

आ रीते ६५ पासठमा उद्देशाथी लधने ६८ अडसठमा उद्देशा सुधीना चार
उद्देशाओ समाप्त ॥४१-६५ थी ६८॥

'काउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि

टीकार्थ- 'काउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' पहिलानी जेम न अडियां
पण्य कापोतलेश्यावणा अवसिद्धिक नैरयिकाना सम्बन्धमां चार युग्मेना
आश्रय करीने चार उद्देशाओ थाय छे, तेम समनवु,

आ प्रमाणे ६९ ओगाणुसित्तरमा उद्देशाथी लधने चार उद्देशाओ समाप्त
थया. ॥४१-६९ थी ७२॥

'तेउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इत्यादि

‘पम्हलेस्से हि वि चत्तारि उद्देशगा’ पद्मलेश्याैरपि चत्वार उद्देशकाः पद्म-
लेश्या घटिताऽभवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म त्र्योज द्वापरयुग्म कल्योज नार-
काणामपि चत्वार उद्देशकाः कर्त्तव्याः ॥७७-८०॥

‘सुक्कलेस्स अभवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देशगा’ सुक्कलेश्याऽभवसिद्धि-

‘तेउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ राशियुग्म में कृतयुग्मादि प्रमाण
प्रमित तेजोलेश्यावाले अभवसिद्धिक नैरयिकों के सम्बन्ध में भी चार
उद्देशक बनते हैं । ऐसा जानना चाहिये । इस प्रकार ७३ वें उद्देशक से
लेकर के ७६ वें उद्देशक तक के चार उद्देशक ४१ वें शतक में
समाप्त हुए । ४१, ७३-७६॥

‘पम्हलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ इत्यादि ७७-८०॥

‘पम्हलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ पद्मलेश्यावाले अभवसिद्धिक
नैरयिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक बनते हैं—अर्थात् राशियुग्म में
कृतयुग्म प्रमाण, त्र्योज प्रमाण, द्वापरयुग्म प्रमाण और कल्योजप्रमाण
प्रमित पद्मलेश्यावाले अभवसिद्धिक नैरयिकों के चार उद्देशक
बनते हैं, ऐसा जानना चाहिये । इस प्रकार ७७ वें उद्देशक से लेकर
८० वें उद्देशक तकके चार उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त
हुए ४१, ७७-८०॥

‘सुक्कलेस्स अभवसिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—‘तेउलेस्सेहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ राशियुग्ममां कृतयुग्म विगेरे
प्रमाणवाणा नीलेश्यावाणा अलवसिद्धिक नैरयिकेना सन्धमां पणु चार
उद्देशाओ थाय छे, तेम समजवुं.

आ रीते ७३ तांतेरमा उद्देशाथी लधने ७६ छोतेरमा उद्देशा सुधीना चार
उद्देशाओ समाप्त ॥४१-७६ थी ७६

‘पम्हलेस्सेहिं चत्तारि उद्देशगा’ इत्यादि

टीकार्थ—‘पम्हलेस्सेहिं चत्तारि उद्देशगा’ पद्मलेश्यावाणा अलवसिद्धिक
नैरयिकेना सन्धमां पणु चार उद्देशाओ थाय छे, अर्थात्—राशियुग्ममां
कृतयुग्म प्रमाण, त्र्योज प्रमाण द्वापरयुग्म प्रमाण अने कल्योज प्रमाण
प्रमित पद्मलेश्यावाणा अलवसिद्धिक नैरयिकेना चार उद्देशाओ अने
छे, तेम समजवुं.

आ रीते सत्योतेरमा उद्देशाथी लधने ८० ओसीमा उद्देशा सुधीना चार
उद्देशाओ समाप्त ॥४१-७७-८०॥

‘सुक्कलेस्स अभवसिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देशगा’ इत्यादि

कैरपि चत्वार उद्देशका भवन्तीति । 'एवं एषु अष्टावीसाए वि अभवसिद्धिय उद्देशेषु मणुस्सा णेरइयगमेणं नेयव्वा' एवमेतेषु अष्टाविंशतावपि उद्देशकेषु मनुष्याणां वक्तव्यता नैरयिकवदेव ज्ञातव्येति । 'सेवं भंते ! सेवं भते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । ८१-८४॥

'एवं एषु अष्टावीसं उद्देशगा' एवमेतेऽपि अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्तीति ।

'सुकलेस्स अभवसिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देशगा' इसी प्रकार से सुकल्लेश्यावाले अभवसिद्धिकों के सम्बन्ध में भी चार उद्देशक बनते हैं । 'एवं एषु अष्टावीसाए वि अभवसिद्धिय उद्देशेषु मणुस्सा णेरइयगमेणं नेयव्वा' जैसी इन २८ उद्देशकों में नैरयिकों की वक्तव्यता प्रकट की गई है वैसे ही वक्तव्यता मनुष्यों के सम्बन्ध में भी कर लेनी चाहिये । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे भगवन् ! जैसा आपने यह विषय कहा है वह सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये । इस प्रकार ८१ वें उद्देशक से लेकर के ८४ वें उद्देशक तक के चार उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए । ४१, ८१-८४॥

'एवं एषु अष्टावीसं उद्देशगा' इस प्रकार से ये भी २८ उद्देशक

टीका—'सुकलेस्स अभवसिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देशगा' आ० प्रमाणे सुकल्लेश्यावाणा अलवसिद्धिकेना संभंधमां पणु अ.२ उद्देशाओ भने छे, 'एवं एषु अष्टावीसाए वि अभवसिद्धिय उद्देशेषु मणुस्सा णेरइयगमेणं नेयव्वा' आ अठ्यावीस उद्देशाओमां नैरयिके संभंधी कथन प्रगट करवामां आवेल छे, ओ० प्रमाणुं कथन मनुष्याणा संभंधमां पणु समणु लेवुं.

'सेवं भंते ! सेवं भते ! त्ति' हे भगवन् आप देवानुप्रिये २ प्रमाणुं कथन कथुं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य ० छे. हे भगवन् आप देवानु प्रियनुं सधणुं कथन सर्वथा सत्य ० छे. आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीये प्रभुश्रीने वंदना करी तेओने नमस्कार कयां वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥२०१॥

आ रीते ८१ ओक्यासीमा उद्देशाथी लईने ८४ ओकाशी सुधीना आर उद्देशाओ समाप्त ॥४१-८१-थी ८४॥

'एवं एषु अष्टावीसं उद्देशगा' आ रीते आ अठ्यावीस उद्देशाओ थाय छे.

एकचत्वारिंशत्तमे शतके सप्त पञ्चाशत्तमोद्देशतश्चतुरशीत्यन्ता अष्टाविंशतिरुद्देशका समाप्ताः ॥५७-८४॥

अह ८१-११२ उद्देशगा

मूलम्—सम्मदिष्टि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति एवं जहा पढमो उद्देशओ । एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा भवसिद्धियसरिसा कायव्वा । सेवं भंते ! २ त्ति ॥८५-८८॥

कणहलेस्स सम्मदिष्टि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति ? एए वि कणहलेस्ससरिसा चत्तारि वि उद्देशगा कायव्वा । एवं सम्मदिष्टीसु वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायव्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥८९-११२ उद्देशगा॥

छाया—सम्यग्दृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एव यथा प्रथम उद्देशकः । चतुर्ष्वपि युग्मेषु चत्वार उद्देशका भवसिद्धिकसदृशाः कर्त्तव्याः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥८५-८८॥

कृष्णलेश्य सम्यग्दृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते ? एतेऽपि कृष्णलेश्य सदृशाश्चत्वारोऽपि उद्देशकाः कर्त्तव्याः । एवं सम्यग्दृष्टिष्वपि भवसिद्धिसदृशा अष्टाविंशतिरुद्देशकाः कर्त्तव्याः । तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥८८-११२ उद्देशकाः ॥

टीका—‘सम्मदिष्टि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ सम्यग्दृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरहोते हैं । ५७ उद्देशक से लेकर ८४ उद्देशक समाप्त ॥

॥ शतक ४१ उद्देशक ८५-११२॥

‘सम्मदिष्टि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’

टीकार्थ—‘सम्मदिष्टि रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उव-

सत्तावनमा उद्देशाथी योयाशी सुधीना उद्देशाओ समाप्त ॥४१-५७-८४॥

पंथ्यासीमा उद्देशाथी अठयासी उद्देशासुधी

‘सम्मदिष्टी रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ ध.

यिकेभ्यो यावद्देवभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति पूर्वदेव प्रश्नः । उत्तरमाह—
पूर्वातिदेशेन—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं’ जहा पढमो उद्देशो’ एवं यथा प्रथम उद्देशकः
एतस्यैव शतकस्य प्रथमे उद्देशके येन प्रकारेण उपपातादिकं कथितं तेनैव रूपेण
इहापि सर्वं ज्ञातव्यमिति । ‘एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा भवसिद्धिय
सरिसा कायव्वा’ एवं चतुर्ष्वपि युग्मेषु कृतयुग्मत्रयोजद्वापरयुग्मकत्योजेषु
चत्वार उद्देशकाः भवसिद्धिकसदृशाः कर्तव्या यथा भवसिद्धिकप्रकरणे युग्म चतु-
ष्टयमन्तर्भाव्य चत्वार उद्देशका औघिकाः कथिता स्तथाऽत्रापि युग्म चतुष्टयघटिता

वज्जंति’ हे भदन्त ! राशियुग्म में कृतयुग्म प्रमाण सम्यग्दृष्टि नैरयिक
किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से
आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते
हैं ? पूर्वातिदेश से उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—‘एवं जहा
पढमो उद्देशो’ हे गौतम ! जिस प्रकार से इसी शतक के प्रथम उद्दे-
शक में उपपात आदि कहे गये हैं उसी प्रकार से वे सब यहां पर भी
कह लेना चाहिये । ‘एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा भवसिद्धिय
सरिसा कायव्वा’ इस प्रकार चार युग्मों में कृतयुग्म त्रयोज द्वापरयुग्म
एवं कत्योज में चार उद्देशक भवसिद्धिक नैरयिकादिकों के जैसे
कर लेना चाहिये । अर्थात्—जैसे भवसिद्धिक प्रकरण में युग्म चतुष्टय
को लेकर चार औघिक उद्देशक कहे गये हैं वैसे ही युग्म चतुष्टय को
लेकर यहां पर भी चार औघिक उद्देशक कह लेना चाहिये । ‘सेव’ भंते !

टीकार्थ—‘सगमदिद्वि रासिजुम्म कडजुम्म नैरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
हे भगवन् राशियुग्ममां कृतयुग्म प्रमाण सम्यग्दृष्टिनैरयिके। क्या स्थान विशेषथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ?
अथवा तियंअथेनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमांथी
आवीने उत्पन्न थाय छे ? के देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? आ प्रश्नना
उत्तरमां प्रभुश्री गौतमरवाभीने कडे छे के—‘एवं’ जहा पढमो उद्देशो’ हे गौतम !
ने प्रमाणे आ ओकताणीसमा शतकना पडेला उद्देशमां कडेवामां आवेल छे.
ओअ प्रम छे तेओना उपपात विगेरे सधणुं कथन अडियां पणु कडेबुं नेधंओ.
‘एवं’ चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देशगा भवसिद्धियसरिसा कायव्वा’ आअ प्रमाणे
भवसिद्धिक नैरयिकेना कथन प्रमाणे आर युग्मेमां कृतयुग्म, त्रयोअ द्वापरयुग्म
अने कत्येओमां आर उद्देशेओ। भवसिद्धिक नैरयिकेना कथन प्रमाणे कडेवा
नेधंओ. अर्थात् ने प्रमाणे भवसिद्धिक प्रकरणमां आर युग्मने लधने आर
औघिक उद्देशेओ कडेल छे, ओअ प्रमाणे आर युग्मने आश्रय करीने अडियां
पणु आर औघिक उद्देशेओ कडेवा नेधंओ.

शुक्ल उद्देशका : कर्तव्या इति । सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति । ॥८५-८८॥

एकचत्वारिंशत्तमे शतके सम्यग्दृष्टेश्वरवार औघिकाः समाप्ताः ।

'कण्ठलेख्य सम्मदिद्विरासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' कृष्णलेख्य सम्यग्दृष्टि राशियुगम कृतयुगम नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैरयिकेभ्यो यावद्देवेभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति पूर्ववदेव प्रश्नः । उत्तरमाह-पूर्वातिदेशेन 'एएवि' इत्यादि, 'एएवि कण्ठलेख्य सरिसा चत्तारि वि उद्देशगा कायव्वा' एतेऽपि कृष्णलेख्य सदृशा एतच्छतकीय पञ्चमोद्देशकसदृशा सेव' भंते । त्ति' इन पदों का अर्थ पूर्वोक्त जैसा ही है ।

४१ वे' शतक में ये सम्यग्दृष्टि के चार औघिक उद्देशक समाप्त हुए ॥४१, ८५-८८॥

'कण्ठलेख्य सम्मदिद्वि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते । कओ उववज्जंति' इत्यादि ।

टीकार्थ—'कण्ठलेख्य सम्मदिद्वि रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे भदन्त ! राशियुगम में कृतयुगम प्रमित कृष्णलेख्यावाले सम्यग्दृष्टि नैरयिक किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? पूर्वातिदेश द्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—'एएवि कण्ठलेख्यसरिसा चत्तारि वि उद्देशगा

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे लगवन् व्याप देवानुप्रिये ७ प्रभाषु कडेल छे, ते सधणु' कथन सर्वथा सत्य ७ छे, हे लगवन् व्याप देवानुप्रिये कडेल सधणु' कथन सर्वथा सत्य छे, आ प्रभाषु कडीने गौतमस्वामीणे प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया. ॥आ रीते सम्यग्दृष्टिना चार औघिक उद्देशाओ समाप्त ॥४१-८५-८८॥

'कण्ठलेख्य सम्मदिद्वि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते । कओ उववज्जंति'

टीकार्थ—'कण्ठलेख्य सम्मदिद्वि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति' हे लगवन् राशियुगममां कृतयुगम प्रभाषु कृष्णलेख्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिके कया विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शु तेओ नैरयिकेमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा तिर्य्य येनिकेमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनुष्येमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमाथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? प्रश्नो उत्तर अतिदेश द्वारा आपतां गौतमस्वामीने प्रभुश्री कडे छे के—'एएवि कण्ठलेख्यसरिसा चत्तारि वि उद्देशगा कायव्वा' हे गौतम ।

चत्वारोऽपि उद्देशकाः कृतयुगम ज्योतिषं द्वापरयुगम कल्योज घटिताः कर्तव्याः । 'एवं सम्मद्विद्विषु वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायव्वा' एवं सम्यग्दृष्टिष्वपि राशियुगम कृतयुगमस्यैकः, सम्यग्दृष्टियोजस्य द्वितीयः सम्यग्दृष्टि द्वापरयुगस्य तृतीयः, सम्यग्दृष्टि कल्योजस्य चतुर्थः, ते एते चत्वार उद्देशका औघिकाः ४, ततः कृष्णलेश्य सम्यग्दृष्टेः कृतयुगमादि घटितस्य चत्वारः ८ । 'एवं नीललेश्य

कायव्वा' हे गौतम ! इनके सम्बन्ध में भी कृष्णलेश्यावालों के जैसे-इसी शतक के पांचवें उद्देशक के जैसे-चार उद्देशक-कृतयुगम, ज्योतिषं द्वापरयुगम और कल्योज पद घटित चार उद्देशक-बनालेना चाहिये । 'एवं सम्मद्विद्विषु वि भवसिद्धिय सरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायव्वा' इसी प्रकार से सम्यग्दृष्टियों के सम्बन्ध में भी भवसिद्धिक नैरयिक-आदिकों के जैसे अठारह उद्देशक, बनालेना चाहिये । वे इस प्रकार से बनते हैं—राशियुगम में कृतयुगमप्रमित सम्यग्दृष्टि नैरयिकादिकों का प्रथम उद्देशक ज्योतिषं राशिप्रमित सम्यग्दृष्टि नैरयिक आदिकों का द्वितीय उद्देशक, द्वापरयुगम राशिप्रमित सम्यग्दृष्टि नैरयिकादिकों का तृतीय उद्देशक कल्योजराशिप्रमित सम्यग्दृष्टि नैरयिकादिकों का चतुर्थ उद्देशक ऐसे ये चार उद्देशक औघिक हैं । तथा-कृतयुगमादिराशिप्रमित कृष्णलेश्यावाले सम्यग्दृष्टि नैरयिकादिकों के चार उद्देशक, तथा

आ राशियुगममां कृतयुगम प्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां पणु कृष्णलेश्यावाणाना कथन प्रमाणे अर्थात् आ एकतालीसमा शतकना पांचमा उद्देशाना कथन प्रमाणे अष्टके के-कृतयुगम, ज्योतिषं, द्वापरयुगम, अने कल्योजपदयुक्त चार उद्देशाओ अठारह देवा 'एवं सम्मद्विद्विषु वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायव्वा' आण प्रमाणे सम्यग्दृष्टि वाणाओना सम्बन्धमां पणु भवसिद्धिक नैरयिकाना कथन प्रमाणे अठारह देवा उद्देशाओ समष्ट देवा, ते आ प्रमाणे अने छे राशियुगममां कृतयुगम प्रमाणे सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां पडेले उद्देशो. १ ज्योतिषं राशि प्रमाणे सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां अने उद्देशो. २ द्वापरयुगमराशिप्रमाणे सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां त्रीजे उद्देशो. ३ कल्योज राशिप्रमाणे सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां चोथे उद्देशो. ४ आ प्रमाणे चार औघिक उद्देशाओ तथा कृतयुगम विगेरे राशिप्रमाणे कृष्णलेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां चार उद्देशाओ तथा कृतयुगम विगेरे राशिप्रमाणे नीललेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां चार उद्देशाओ तथा कृतयुगम विगेरे राशिप्रमाणे तेजलेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकाना सम्बन्धमां चार

कापोतलेश्य तेजोलेश्य पद्मलेश्य शुक्ललेश्यानां मत्स्यकश्य चत्वार चत्वार उद्देशका स्तदेवं सर्वे संकुलनया अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति, इति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति' जाव बिहरइ' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति यावद्विहरति ।

'एकचत्वारिंशत्तमे शतके ८९-११२ उद्देशकाः समाप्ताः ॥

कृतयुग्मादिराशिप्रमित नीललेश्यावाले सम्यग्दृष्टि नैयिकादिकों के चार उद्देशक, तथा कृतयुग्मादिराशिप्रमित कापोतलेश्यावाले सम्यग्दृष्टि नैरयिकादिकों के चार उद्देशक तथा कृतयुग्मादि राशिप्रमित तेजोलेश्यावाले सम्यग्दृष्टि असुरकुम्भारादिकों के चार उद्देशक, तथा कृतयुग्मादिराशिप्रमित पद्मलेश्यावाले सम्यग्दृष्टि तिर्यक्पंचेन्द्रिय आदिकों के चार उद्देशक और कृतयुग्मादिराशिप्रमित शुक्ललेश्यावाले सम्यग्दृष्टि तिर्यक्पंचेन्द्रियआदिकों के चार उद्देशक इस प्रकार ६ लेश्या सम्यन्धी २४ उद्देशक ये हैं सब कुल मिलाकर यहां २८ उद्देशक होते हैं । 'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति जाव बिहरइ' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

शतक ४१ उद्देशक ८९से११२ तक समाप्त हुए ॥

उद्देशाञ्चो तथा कृतयुग्म विगेरे राशिप्रभाषु पद्मलेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकोना संणधमां चार उद्देशाञ्चो तथा कृतयुग्म राशिप्रभाषु शुक्ललेश्यावाणा सम्यग्दृष्टि नैरयिकोना संणधमां चार उद्देशाञ्चो आ रीते छ लेश्यासंणधी २४ चोवीस उद्देशाञ्चो थाय छे. अने षधा भणीने अहियां २८ अठ्यावीस उद्देशाञ्चो थाय छे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति जाव बिहरइ' हे भगवन् आप देवानुप्रिये आ विषयमां ने कथन कर्युं छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं कथन सर्वथा सत्य न छे, आ प्रभाषु कहीने गौतमस्वामीञ्चो प्रभुश्रीने वंदना करी नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर विराजमान थया. ॥सू.०१॥

नेव्यासीमा उद्देशाथी ११२ अेकसोणार सुधीना चोवीस उद्देशाञ्चो समाप्त ॥४१-८६ थी ११२॥

॥ अह ११३-१४० उद्देशगा ॥

मूलम्—मिच्छादिद्वि रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते !
कओ उववज्जंति ? एवं एत्थ वि मिच्छादिद्वि अभिलावेणं
अभवसिद्धिय खरित्ता अट्टावीसं उद्देशगा कायव्वा । सेवं भंते !
सेवं भंते ! ति ॥

॥११३-१४० उद्देशगा समाप्ता॥

छाया—मिथ्यादृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते ? एवमत्रापि मिथ्यादृष्ट्यभिलाषेनाभवसिद्धिकसदृशा अष्टाविंशतिरुद्देशकाः
कर्त्तव्याः । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ।

११३-१४० उद्देशकाः समाप्ताः ॥

टीका—‘मिच्छादिद्विरासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
मिथ्यादृष्टि राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं नैर-
यिकेभ्यो यावद्देवैभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति पूर्वदेव प्रश्नः । उत्तरयत्यति-
देशद्वारेण—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं एत्थ वि मिच्छादिद्वि अभिलावेणं अभवसिद्धिय

॥ शतक ४१ उद्देशक ११३-१४०॥

‘मिच्छादिद्विरासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति’ इत्यादि ।

टीकार्थ—‘मिच्छादिद्विरासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति हे भदन्त ! राशियुग्म ये कृतयुग्मराशिप्रमित मिथ्यादृष्टि नैरयिक
किस स्थानविशेष से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकर
के उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ?
अतिदेशद्वारा उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते हैं—‘एवं एत्थ वि

अेकसोत्तरमा उद्देशाथी अेकसोत्थाणीस सुधीना उद्देशात्थोनुं कथन

‘मिच्छादिद्वि रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’ इत्यादि

टीकार्थ—‘मिच्छादिद्वि रासिजुम्मकडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उववज्जंति’
हे भगवन् राशियुग्ममां कृतयुग्म रशिप्रमाणु मिथ्यादृष्टि नैरयिके कथा स्थान
विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेत्थो नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अथवा तिर्य्यथोनिडेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनु-
ष्योमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न थाय
छे ? अतिदेश द्वारा आ प्रश्नने उत्तर आपतां प्रभुश्री गौतमस्वामीने अे

सरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायवा' एवं पूववदेवत्रापि मिथ्यादृष्ट्यभिलाषेना भवसिद्धिक सदशा अष्टाविंशतिरुद्देशकाः कर्तव्याः, यथाऽभवसिद्धिकप्रकरणे अष्टाविंशतिरुद्देशकाः कथिता स्तेनैव रूपेण औघिकोद्देशकस्तथा पड्लेश्यान्तर्भावेण पड्लेशका मिलित्वा सप्तोद्देशकाः सर्वत्र कृतयुग्मादिवत्तुर्विधयुग्मानु प्रवेशेनाष्टाविंशतिरुद्देशका वक्तव्याः, पूर्वं यत्राभवसिद्धिकपदं दत्तं तत्र प्रकृते मिथ्यादृष्टिपदं देयम् । 'सेव' भंते । सेव' भंते । त्ति' तदेव' भदन्त तदेव' भदन्त इति ।
११३-१४० उद्देशकाः समाप्ताः ॥

मिच्छादिद्वि अभिलाषेणं अभवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायवा' हे गौतम ! इनके सम्बन्ध में भी मिथ्यादृष्टि पद के उच्चारण से अभवसिद्धिक नैरयिकादिकों के जैसे २८ उद्देशक बनालेना चाहिये । इनमें चार औघिक उद्देशक हैं । और ६ लेश्या सम्बन्धी २४ उद्देशक हैं । सब मिलकर २८ उद्देशक हो जाते हैं । इनके बनाने की विधि ऊपर प्रकट की जा चुकी है । इस प्रकार पहिले जहां भवसिद्धिक पदका प्रयोग किया गया है वहां वहां प्रकृत में मिथ्यादृष्टि पदका प्रयोग करना चाहिये । 'सेव' भंते । सेव' भंते ! त्ति' हे भदन्त । जैसा आपने यह कहा है वह सब सत्य ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतम ने प्रभुश्री को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान

छे के—'एव' एत्यवि मिच्छादिद्वि अभिलाषेणं अभवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देशगा कायवा' हे गौतम ! आ स'अंधमां पशु मिथ्यादृष्टि अे पदनाउत्थारणु साथे अबवसिद्धिक नैरयिकाना कथन प्रभाषेना २८ अठ्यावीस उद्देशाओ कडेवा जेधंअे. आमां पशु ४ थार औघिक उद्देशाओ थाय छे. अने छ लेश्या स'अंधी २४ थोवीस उद्देशाओ थाय छे. अे रीते अंधा भणीने २८ अठ्यावीस उद्देशाओ थधं नय छे आ अठ्यावीस उद्देशाओ कडेवानी रीत उपर पडेलां अताववामां आवेल छे, ते प्रभाषेनी समजवी. आ रीते पडेलां नयां अबवसिद्धिक अे पदना प्रयोग करवामां आवेल छे. त्यां त्यां मिथ्यादृष्टि पदना प्रयोग करीने समणुं कथन कडेवुं जेधं अे.

'सेव' भंते ! सेव' भंते ! त्ति' हे लगवन् आप देवानुप्रिये आ स'अंधमां जे कथन कथुं छे, ते समणुं कथन सर्वथा सत्य छे. हे लगवन् आप देवानुप्रियतुं समणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. आ प्रभाषे कडीने गौतमस्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी अने नमस्कार कर्या वंदना नमस्कार करीने ते पछी

‘अह १४१-१६८ उद्देशगा’

मूलम्—कण्हपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उव्वज्जंति एवं एत्थ वि अभवसिद्धियसरिसा अट्टा-
वीसं उद्देशगा कायठ्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

॥१४१-१६८ उद्देशगा समत्ता॥

छाया—कृष्णपाक्षिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्प-
द्यन्ते एवमत्रापि अभवसिद्धिकसदृशा अष्टाविंशतिरुद्देशकाः समाप्ताः । तदेवं
भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति

॥१४१-१६८ उद्देशका समाप्ताः ॥

टीका—‘कण्हपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उव्व-
ज्जंति’ कृष्णपाक्षिक राशियुग्म कृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते
किं नैरयिकेभ्य आगत्य यावद्देवस्यो वा आगत्योत्पद्यन्ते इति पूर्ववदेव प्रश्नः,
उत्तरमाह अतिदेशद्वारेण—‘एवं’ इत्यादि, ‘एवं एत्थ वि अभवसिद्धियसरिसा

पर विराजमान हो गये । शतक ४१ उद्देशक ११३-१४० समाप्त हुए ॥

शतक ४१ उद्देशक १४१-१६८॥

‘कण्हपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उव्वज्जंति’

टीकार्थ—‘कण्हपक्खियरासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उव्व-
ज्जंति’ हे भदन्त ! राशियुग्म कृतयुग्मराशिप्रमित कृष्णपाक्षिक नैरयिक
क्रिय स्थानविशेष से आकरके उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से
आकरके उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते
हैं ? अतिदेशद्वारा इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुश्री गौतम से कहते

संयम अने तपथी पोताना आत्माने लावित करता थका पोताना स्थान पर
भिराजमान थया. ॥सू०१॥

એકસોતેરમા ઉદ્દેશાથી એસોઆળીસ સુધીના અઠ્યાવીસ ઉદ્દેશાઓ સંપૂર્ણ
॥४१-११३-થી १४०॥

એકસોએકતાળીસમા ઉદ્દેશાથી એકસોઅડસઠ સુધીના અઠ્યાવીસ ઉદ્દેશાઓનું કથન
પ્રારંભ—‘કણ્હપક્કિય રાસિજુમ્મ કડજુમ્મ નેરइयाणं भंते ! कओ उव्वज्जंति’ ધ.

टीकार्थ—‘कण्हपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ! कओ उव्वज्जंति’
हे भगवन् राशियुग्ममां कृतयुग्म राशिप्रमाणा कृष्णपक्षवाणा नैरयिके कया स्थान
विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अथवा तिर्यंथयेनिकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा
मनुष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवोमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अतिदेश द्वारा आ प्रश्नो उत्तर गौतमस्वामीने आपतां प्रभुश्री

अष्टावीसं उद्देशगा कायव्वा' एवम्-पूर्वदेशत्रापि कृष्णपाक्षिक प्रकरणेऽपि अभव-
सिद्धिक्रमदेवाष्टाविंशतिरुद्देशकाः कर्तव्याः, यथा-अभवसिद्धिक प्रकरणेऽष्टा-
विंशतिरुद्देशकाः कथिताः तथैत्रापि तेनैव रूपेण अष्टाविंशतिरुद्देशकाः कर्तव्याः
सेवं भंते । सेवं भंते । त्ति' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ।

'एकचत्वारिंशत्तमे शतके एकचत्वारिंशदधिक शततमादारभ्याष्ट पष्टयधिक
शत पर्यन्ता-उद्देशकाः समाप्ताः ॥१४१-१६८॥

हैं-हे गौतम ! 'एवं एत्थ वि अभवसिद्धिय सरिसा अष्टावीसं उद्देशगा
कायव्वा' पहिले के जैसे यहां पर भी-इस कृष्णपाक्षिक प्रकरण में
भी-अभवसिद्धिक नैरयिककादिकों के जैसे २८ उद्देशक बनालेना
चाहिये । अतः अवसिद्धिक प्रकरण में जैसे अष्टाईस उद्देशक कहे
गये हैं वैसे ही उद्देशक २८ यहां पर कह लेना चाहिये । 'सेवं भंते !
सेवं भंते ! त्ति' हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सर्वथा सत्य
ही है २ । इस प्रकार कहकर गौतमने प्रभुश्री को वन्दना की और
नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तपसे
आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ।
॥१४१ से लेकर १६८ तक के उद्देशक ४१ वें शतक में समाप्त हुए ।

कहे छे के-एवं एत्थ वि अभवसिद्धियसरिसा अष्टावीसं उद्देशगा कायव्वा'
हे गौतम पडेलां कहे प्रमाणे अडियां पणु आ कृष्णपाक्षिकना प्रकरणुमां पणु
अभवसिद्धिक नैरयिकेना कथन प्रमाणे अठ्यावीस २८ उद्देशाओ अनावीने
कडेवा लेणं अे. अेथी अभवसिद्धिक प्रकरणुमां अे प्रमाणे अठ्यावीस उद्देशाओ
कडेवामां आंवा छे, अेअ प्रमाणेना २८ अठ्यावीस उद्देशाओ अडियां पणु
कडेवा लेणंअे.

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति' हे लगवन् आ विषयमां आप देवानुप्रिये
अे प्रमाणे कडेल छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य अे छे. हे लगवन् आप
देवानुप्रिये कडेल सधणुं कथन सर्वथा सत्य अे छे. आ प्रमाणे कहीने गौतम-
स्वामीअे प्रभुश्रीने वंदना करी तेअेने नमस्कार कयां वदना नमस्कार करीने
ते पछी संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना
स्थान पर विराजमान थया ॥सू०१॥

अेकसे अेकताणीसमा उद्देशाथी अकसे अउसठ सुधीना अठ्यावीस उद्देशाओ
समाप्त ॥४१-१४१ थी १६८॥

‘अह १६९-१९६ उद्देशगा’

मूलम्—सुकूपखिलय रासिजुम्म कडजुम्म नेरड्याणं भंते !
कओ उववजंति एवं एत्थ वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं
उद्देशगा भवंति । एवं एए सव्वे वि छन्नउयं उद्देशगसयं
भवंति रासिजुम्मसयं ॥४१-१९६॥

जाव सुक्कलेस्सा सुकूपखिलय रासिजुम्म कलिओगवेमा-
णिया जाव जइ सकिरिया तेणैव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव
अंतं करेति ? णो इणट्टे समट्टे । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति, भगवं
गोयमे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं
करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-
एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं
भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छियपडि-
च्छियमेयं भंते ! सच्चेणंए समट्टे जे णं गब्भे वयह त्ति कट्टु
अपूतिवयणा खलु अरिहंता भगवंतो समणं भगवं महावीरं
वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तपसा अप्पाणं
भांवेमाणे विहरइ ॥१६९-१९६॥

इगचत्तालीसइमं रासिजुम्मसयं समत्तं ॥४१॥ भगवई समत्ता॥

छाया—शुक्लपाक्षिकराशियुग्म कृतयुग्मनैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत
उत्पद्यन्ते ? एवमत्रापि भवसिद्धिक सहशा अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति एवमेते
सर्वेऽपि पणवतीकमुद्देशकशतं १९६ भवति राशियुग्मशते ॥४१-१९६॥

यावत् शुक्ललेश्याः शुक्लपाक्षिकराशियुग्म कलयोज वैमानिकाः यावत् यदि
सक्रियाः तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयन्ति यावदन्तं कुर्वन्ति ? नायमर्थः समर्थः ।
तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमः श्रवणं भगवन्तं महावीरं
त्रिकृत्व आदक्षिणपदक्षिणं करोति कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा
एवमवादीत्—एवमेतद् भदन्त ! तथ्यमेतद् भदन्त ! अवितथमेतद् भदन्त ! असं-
दिग्धमेतद् भदन्त ! इच्छितमेतद् भदन्त ! प्रतीच्छितमेतद् भदन्त ! इच्छित-
प्रतीच्छितमेतद् भदन्त ! सत्यः खलु एषोऽर्थः यत् खलु यूयं वदथ इति कृत्वा

अपूर्तिवचनाः खलु अर्हन्तो भगवन्तः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति
वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥४१॥

एकचत्वारिंशत्तमं राशियुग्म शतं समाप्तम् ॥४१॥

भगवती समाप्ता

टीका — 'सुकपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते । कओ उववज्जंति'
शुक्लपाक्षिकराशियुग्मकृतयुग्म नैरयिकाः खलु भदन्त ! कुत उत्पद्यन्ते किं
नैरयिकेभ्य आगत्य यावद्देवभ्यो वा आगत्य समुत्पद्यन्ते इति पूर्ववदेव प्रश्नः उत्तर-
माह—इहापि पूर्वातिदेशेनैव 'एवं' इत्यादि, 'एवं एत्थ वि भवसिद्धियसरिसा
अट्टावीसं उद्देसगा भवन्ति' एवं पूर्ववदेवात्रापि शुक्लपाक्षिकेऽपि भवसिद्धिक
सदृशा अष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति चत्वार औघिकाः कृतयुग्मादि चतुष्टय घटिताः

॥ शतक ४१ उद्देशक १६९-१९६॥

'सुकपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते ! कओ उवव-
ज्जंति' इत्यादि ।

टीकार्थ — 'सुकपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्मनेरइयाणं भंते ।
कओ उववज्जंति' राशियुग्म से कृतयुग्मराशिप्रमाण शुक्लपाक्षिक
नैरयिक हे भदन्त ! किस स्थान विशेष से आकरके उत्पन्न होते
हैं ? क्या वे नैरयिकों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? अथवा
यावत् देवों में से आकरके उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न का
उत्तर भी पूर्वातिदेशद्वारा देते हुए भगवान् गौतमस्वामी से
कहते हैं—'एवं एत्थ वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देसगा भवन्ति'
हे गौतम ! पूर्व के जैसे यहाँ शुक्लपाक्षिक के सम्बन्ध में भी भव-
सिद्धिक नैरयिकादिकों के प्रकरण के जैसे २८ उद्देशक होते हैं । इन

એકસો ઝાગણસિત્તેરમા ઉદ્દેશાથી એકસો છન્નુ સુધીના ઉદ્દેશાઓનું કથન

'સુકપક્કિય રાસિજુમ્મ કડજુમ્મ નેરइयाणं भंते । कओ उववज्जंति' इत्यादि

टीकार्थ — 'सुकपक्खिय रासिजुम्म कडजुम्म नेरइयाणं भंते । कओ उववज्जंति'
राशियुग्ममां कृतयुग्म राशिप्रमाण शुक्लपाक्षिकना नैरयिके उे लगवन् कया
स्थान विशेषथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? शुं तेओ नैरयिकेमांथी आवीने उत्पन्न
थाय छे ? अथवा तिर्य'यये निकेमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा मनु
ष्येमांथी आवीने उत्पन्न थाय छे ? अथवा देवेमांथी आवीने उत्पन्न थाय
छे ? आ प्रश्नेने उत्तर अतिदेश द्वारा आपतां प्रलुश्री कडे छे के—'एवं एत्थ
वि भवसिद्धियसरिसा अट्टावीसं उद्देसगा भवन्ति' उे गौतम भवसिद्धिकेना
कथन प्रम छे अहियां शुक्लपाक्षिकना संबंधमा पणु २८ अठ्यावीस उद्देशाओ

पङ्कलेश्या घटिता अतुर्विंशतिरित्येवमष्टाविंशतिरुद्देशका भवन्ति, 'एवं एए सव्वे वि छन्नउयं उद्देशगसयं भवन्ति रासिजुम्मसए' अष्टाविंशतिरौघिकाः, अष्टाविंशति-
 भवसिद्धिकस्य, अष्टाविंशत्यभवसिद्धिकस्य सभ्यगट्टि मिथ्यादृष्टि कृष्णपाक्षिक
 शुक्लपाक्षिकानां सर्वसङ्कलनया एवमेते एवंपि पण्णवतिकमुद्देशकशतं भवति
 राशियुग्मशते राशियुग्मशतके एतच्चत्वारिंशत्तमे सर्वेऽपि उद्देशकाः पण्णवायुत्तर-
 शतप्रमाणा भवन्तीत्यर्थः । 'जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खियरासिजुम्मकलियोग-

में कृतयुग्मादि चार पद घटित चार तो औघिक उद्देशक हैं' और
 कृष्णलेश्यादि ६ लेश्याओं के ४-४ उद्देशक हैं । इस प्रकार सब २४
 उद्देशक हो जाते हैं । 'एवं एए सव्वे वि छन्नउयं उद्देशगसयं भवन्ति
 रासिजुम्मसए' इस प्रकारसे इस राशियुग्म शतक में समस्त उद्देशक
 १९६ हो जाते हैं । इनमें २८ औघिक उद्देशक हैं । भवसिद्धिक नैर-
 यिकों के २८ उद्देशक हैं । अभवसिद्धिक नैरयिकोंके २८ उद्देशक हैं ।
 सभ्यगट्टि नैरयिकों के २८ उद्देशक हैं । मिथ्यादृष्टि नैरयिकों के २८
 उद्देशक हैं शुक्लपाक्षिक नैरयिकों के २८ उद्देशक हैं । और कृष्ण-
 पाक्षिक नैरयिकों के २८ उद्देशक हैं । सब मिलकर ये इस राशियुग्म
 शतक में १९६ उद्देशक हैं ।

**'जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खिय रासिजुम्म कलियोग वेमाणिया'
 हे भदन्त ! यावत् राशियुग्म में कलियोग राशिप्रमित शुक्ललेश्या**

थाय छे, तेमां कृतयुग्म विगेरे चार पट्टे युक्त चार उद्देशाओ औघिक उद्दे-
 शाओ थाय छे, अने कृष्णलेश्या विगेरे छ लेश्याओना चार-चार उद्देशाओ
 थाय छे. अथा भणीने अठ्यावीस उद्देशाओ थछ जय छे. 'एवं एए सव्वे वि
 छन्नउयं उद्देशगसयं भवन्ति रासिजुम्मसए' आ रीते आ राशियुग्म शतकमां
 अथा भणीने ओकसोछन्नु उद्देशाओ थाय छे तेमां २८ अठ्यावीस उद्देशाओ
 छे, भवसिद्धिक नैरयिकेना २८ अठ्यावीस उद्देशाओ छे. अबवसिद्धिक नैर-
 यिकेना संभंधमां २८ अठ्यावीस उद्देशाओ थाय छे. सभ्यगट्टि नैरयिकेना
 संभंधमां अठ्यावीस उद्देशाओ थाय छे. मिथ्यादृष्टि नैरयिकेना संभंधमां
 अठ्यावीस उद्देशाओ थाय छे. शुक्लपाक्षिक नैरयिकेना संभंधमां अठ्यावीस
 उद्देशाओ थाय छे अने कृष्णपाक्षिक नैरयिकेना संभंधमां अठ्यावीस उद्दे-
 शाओ थाय छे. आ अथा भणीने आ राशियुग्म शतकमां १९६ ओकसोछन्नु
 उद्देशाओ थाय छे.

'जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खिय रासिजुग्म कलियोगवेमाणिया' हे भगवन्
 यावत् राशियुग्ममां कलियोग राशिप्रमाण शुक्ललेश्यावाणा शुक्लपाक्षिक नैरयिक

वैमानिया' यावच्छुक्ललेश्या शुक्लपाक्षिक राशियुग्म कलयोज वैमानिकाः यावत्पदेन कृष्णलेश्य नीललेश्य कापोतलेश्य तेजोलेश्य पद्मलेश्य शुक्लपाक्षिक कृतयुग्मत आरभ्य शुक्लपाक्षिक राशियुग्म कलयोज वैमानिकान्तानां पूर्ववर्तिनां संग्रहो भवति इति । 'जाव जइ सकिरिका तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति-जाव अंतं करे'ति' यावत् यदि सक्रिया स्तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयन्ति यावदन्तं कुर्वन्ति ? अत्र प्रथम यावत्पदेन प्रथमोद्देशकीयः 'यदि सक्रिया' एतत्पूर्वतन संपूर्णस्य प्रकरणस्य संग्रहो भवति । द्वितीय यावत्पदेन बुद्ध्यन्ति मुच्यन्ते परिनिर्वान्ति सर्वदुःखाना मित्यस्य ग्रहणं भवतीति सक्रियाः सर्वे तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयन्तीत्यादि प्रश्नः, उत्तरमाह-

वाले शुक्लपाक्षिक वैमानिक 'जाव जइ सकिरिया' यावत् यदि वे सक्रिय है' तो क्या 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति' उसी भव से सिद्ध होते हैं 'जाव अंतं करे'ति' यावत् समस्त दुःखोंका अन्त करते हैं ? यहाँ प्रथम यावत्पद से ऐसा पाठ गृहीत हुआ है कि राशियुग्म में कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, तेजोलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले कृतयुग्म राशिप्रमाण प्रमित, योजराशि प्रमाण प्रमित, द्वापरयुग्मराशिप्रमाण प्रमित एवं कलयोज राशिप्रमाण प्रमित शुक्लपाक्षिक तक के वैमानिकदेव हैं वे क्या उन्नी भव ग्रहण से सिद्ध होते हैं-यावत्-बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वात होते हैं और सर्व दुःखोंका अन्त करते हैं ? 'जाव जइ सकिरिया' इस पाठ में जो यावत्पद आया है उससे सक्रियपद के पूर्व में आगत जो पाठ है वह सब गृहीत हुआ है । यह पाठ इसी शतक के प्रथम उद्देशक में आ चुका है । इस

'जाव जइ सकिरिया' यावत् ने तेओ डिया सडित डोय तो शु 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति' ओए लवमां सिद्ध थाय छे ? 'जाव अंतं करे'ति' यावत् सभस्त दुःखेनो अंत करे ? अडियां पडेला यावत्पदथी ओवे पाठ अडुषु करायो छे डे-राशियुग्ममां कृष्णलेश्यावाणा नीललेश्यावाणा कापोतलेश्यावाणा तेजोलेश्यावाणा, पद्मलेश्यावाणा ने कृतयुग्म राशिप्रमाण प्रमित, योजराशि प्रमाण प्रमित, द्वापरयुग्म राशिप्रमाण प्रमित, अने इत्येओ राशिप्रमाण प्रमित, शुक्लपाक्षिक सुधीना वैमानिक देवो छे, तेओ शु ओए लवअडुषुथी सिद्ध थर्ध लय छे ? यावत् बुद्ध थाय छे ? मुक्त थाय छे ? परिनिर्वात थाय छे ? अने सर्व दुःखेनो अंत करे छे ? 'जाव जइ सकिरिया' आ पाठमां ने यावत्पद आवेल छे, तेनाथी सक्रिय ओ पदनी पडेलां ने पाठ आवेल छे, ते सधणे पाठ अडुषु करायो छे, आ पाठ आ शतकना पडेला उद्देशमा

‘णो इण्टे समट्टे’ नायमर्थः समर्थः देवा एते तेनेव भवग्रहणेन न सिद्धयन्ति देवानो सिद्धयमावादिति भावः । ‘सेव’ भंते ! सेव’ भंते ! त्ति’ तदेव’ भदन्त ! तदेवं भद-
न्त । इति कथयित्वा ‘भगवं गोयमे’ भगवान् गौतमः ‘समणं भगवं महावीरं’
श्रमणं भगवान् महावीरम् ‘तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ’ त्रिकृतः -त्रिवा-
रम् आदक्षिणं प्रदक्षिणं करोति, ‘करेत्ता’ कृत्वा ‘वंदइ नमंसइ’ वन्दते नमस्यति’
वंदित्ता नमंसित्ता’ वन्दित्वा नमस्यित्वा ‘एवं वयासी’ एवम्-वक्ष्यमाणप्रकारेण
अत्रादीत्-‘एवमेयं भंते’ एवमेव भदन्त । यद् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव
‘तहमेयं भंते !’ तथ्यं-सत्यमेतद् भदन्त ! ‘अवितहमेयं भंते !’ अवितथमेतद् भदन्त !

प्रश्न के उत्तर में प्रभुश्री कहते हैं-‘णो इण्टे समट्टे’ हे गौतम ! यह अर्थ
समर्थित नहीं हुआ है । क्यों कि जो देव होते हैं वे इसी भवग्रहण से
सिद्ध नहीं होते हैं देवों के सिद्धि का अभाव रहता है । ‘सेव’ भंते ! सेव’
भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! जैसा आपने यह कहा है वह सब सर्वथा सत्य
ही है २ । इस प्रकार कहकर ‘भगवं गोयमे’ भगवान् गौतमने ‘समणं
भगवं महावीरं’ श्रमण भगवान् महावीरको ‘तिक्खुत्तो आयाहिणं पया-
हिणं करेइ’ तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण किया । ‘करेत्ता वंदइ, नमंसइ’
आदक्षिण प्रदक्षिण करके वन्दना की, नमस्कार किया । ‘वंदित्ता नम-
सित्ता’ वन्दना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभुश्री से ‘एवं वयासी’ ऐसा
कहा ‘एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! ‘अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं
भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! ‘हे भदन्त ! जैसा

आपेल छे, आ प्रश्नता उत्तरमां प्रभुश्री गौतमस्वामीने कडे छे के-‘णो इण्टे
समट्टे’ हे गौतम ! आ अर्थ अशोभर नथी. केम के-ले सकिय होय छे, तेओ
आण लवप्रदण्णी सिद्धयता नथी सकियेने-सिद्धिनी प्राप्तिने अलावरहे छे.

‘सेव’ भंते ! सेव’ भंते ! त्ति’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये ले प्रमाणे कथन
करेल छे, ते सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे. हे भगवन् आप देवानुप्रियनुं
सधणुं कथन सर्वथा सत्य न छे आ प्रमाणे कहीने ‘भगवं गोयमे’ भगवान्
गौतमस्वामीओ ‘समणं भगवं महावीरं’ श्रमणु भगवान् महावीरने ‘तिक्खुत्तो
आयाहिणं पयाहिणं करेइ’ त्रवार आदक्षिणु प्रदक्षिणु करी ‘करेत्ता वंदइ नमंसइ’
आदक्षिणु प्रदक्षिणु करीने वंदना करी नमस्कार करी. ‘वंदित्ता नमंसित्ता’ वंदना
नमस्कार करीने तेओओ प्रभुश्रीने ‘एवं वयासी’ आ प्रमाणे इहुं ‘एवमेयं भंते
तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडि-
च्छियमेयं भंते !’ हे भगवन् आप देवानुप्रिये ले प्रमाणे कडेल छे, ते सधणुं कथन

हे भदन्त ! अवितर्क सर्वथैव सत्यमित्यर्थः 'असंदिग्धमेयं भंते !' असंदिग्धम्-
सन्देहरहितं यथा भवेत्तथा एतत् 'इच्छियमेयं भंते !' इच्छितम् अधिकपात्रिप-
यीभूतम् एतद् भवदुक्तम् 'पडिच्छियमेयं भंते' प्रतीच्छितं प्रकृपेणाभिलषितमेतत् ।
'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते' इच्छित प्रतीच्छितमेतत् भदन्त ! 'सच्चेणं एसमट्टे'
हे भदन्त ! देवानुप्रियेण कथित एषः खलु अर्थः सर्वथैव सत्यः । 'जण्णं तुब्भे
वदह' यत् खलु यूयं वदथ त्ति कट्टु' इति कृत्वा-कथयित्वा, इत्यर्थः, 'अपूर्ति-
वयणा खलु अरिहंता भगवंतो' अपूर्ति वचनाः खलु अर्हन्तो भगवन्तः । पूर्तिर्दोषः
स गतो यस्य वचनात् इत्थं भूत्वा स्वीर्थकरा भवन्ति, एतावता वचनातिशयत्वं बोधि-
तम् एवं कथनानन्तरं भगवान् गौतमः 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमणं
भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्वति 'वंदिता नमंसिता' वन्दित्वा नमस्यित्वा 'संजमेण
तपसा अप्पाणं स्थावेपाणे विहरइ' संजमेण तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥

इति श्री - विश्वविख्यातजगद्गुरुललादिपदभूषितबालब्रह्मचारि - 'जैनाचार्य'
पूज्यश्री-वासीलालव्रतिविरचितायां 'श्री भगवतीश्रुतस्य' प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां राशियुग्मशतमेकचत्वारिंशत्तमं शतं समाप्तम् ॥४१॥

॥ भगवती समाप्ता ॥

आप देवानुप्रियेने कहा है वह ऐसा ही है । 'तहमेयं भंते' हे भदन्त !
यह सर्वथा सत्य ही है । हे भदन्त ! यह असंदिग्ध ही है हे भदन्त !
यह सुझे इष्ट है । हे भदन्त ! यह सुझे स्वीकृत है । 'इच्छियपडिच्छिय-
मेयं भंते !' हे भदन्त ! यह सुझे ईच्छित प्रतीच्छित है । 'सच्चेणं
एसमट्टे जं ण तुब्भे वदह' हे भदन्त ! जो आप देवानुप्रियेने कहा है ऐसा
यह अर्थ सर्वथा सत्य ही है 'त्ति कट्टु' ऐसा कहकर गौतमने 'अपूर्ति
वयणा खलु अरिहंता' अर्हन्त भगवन्त निर्दोष वचनवाले होते हैं इस
लिये 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमण भगवान् महावीर को

तेम न् छे. 'तहमेयं भंते !' हे भगवन् ते सर्वथा सत्य न् छे हे भगवन् आ
कथन असंदिग्ध न् छे. सन्देह वगरनुं छे. हे भगवन् ते भने धण्ट छे हे भगवन्
ते कथन भने स्वीकार्यं छे. 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !' हे भगवन् ते भने
धच्छित प्रतीच्छित छे. 'सच्चेणं एसमट्टे जं ण तुब्भे वदह' हे भगवन् आप
देवानुप्रिये न् छडेल छे, ते तेमन् छे, अर्थात् सर्वथा सत्य न् छे. 'त्तिकट्टु'
आ प्रमाणे कहीने गौतमस्वामीने 'अपूर्तिवयणा खलु अरिहंता' अर्हन्त भगवान्
निर्दोष वचनवाला डोःय छे, तेथी 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ'

वन्दना की नमस्कार क्रिया । 'वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर विराजमान हो गये ॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
"भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके एकतालीसवां
राशियुग्म शतक समाप्त ॥४१॥

॥ भगवतीसूत्र का अनुवाद समाप्त हुआ ॥

श्रमणु भगवन भडावीरने वंदना करी नमस्कार कर्या 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार करीने 'संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरइ' संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थका पोताना स्थान पर गिराजमान थया.

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराजकृत 'भगवतीसूत्र'नी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याना एकतालीसवुं राशियुग्म शतक समाप्त ॥४१॥

॥ भगवती सूत्रने अनुवाद समाप्त ॥



अथ शास्त्रप्रशस्तिं प्ररूपयन् पूर्वं शास्त्रस्य शतकानामुद्देशकानां च परिमाण-
माह—‘सव्वाए’ इत्यादि,

मूळम्—सव्वाए भगवईए अट्टतीसं सतं सयाणं १३८ उद्दे-
सगाणं एगूणवीसई पंचवीसाइं सयाइं १९२५॥

छाया—सर्वस्या भगवत्या अष्टत्रिंशं शतं शतानाम् उद्देशकानाम् एकोन-
विंशतिः पञ्चविंशानि शतानि १९२५॥

टीका—‘सव्वाए भगवईए’ सर्वस्या भगवत्याः सर्वस्य भगवतीसूत्रस्य ‘अट्ट-
तीसं सयं सयाणं’ शतानां शतकानाम् अष्टत्रिंशम्—अष्टत्रिंशदधिकं शतं १३८
भवति । अत्र भगवत्यामष्टत्रिंशदधिकं शतसंख्यकानि १३८ शतकानि
सन्तीति । तथाहि—प्रथमादारभ्य द्वात्रिंशत्पर्यन्तानि शतकानि अत्रान्तरशतक-
रहितानि ३२ त्रयस्त्रिंशत्तमशतकादारभ्य एकोनचत्वारिंशत्तमशतकं यावत् सप्तसु
शतकेषु प्रतिशतकं द्वादश द्वादश अत्रान्तर शतकानीति चतुरशीतिः
शतकानि ८४ । चत्वारिंशत्तमशतके एकविंशतिः शतकानि २१, एकचत्वारिंशत्तमे

शास्त्र प्रशस्ति की प्ररूपणा करते हुए सूत्रकार पहिले इस शास्त्र
के शतको का परिमाण प्रकट करते हैं—

‘सव्वाए भगवईए अट्टतीसं सतं सयाणं उद्देसगाणं एगूणवीसई
पंचवीसाइं सयाइं’ इस समस्त भगवती शास्त्र के १३८ शतक हैं ।
इनकी गणना इस प्रकार से है—प्रथम शतक से लेकर ३२ वें शतक तक
अवान्तर शतक नहीं हैं । ३३ वे शतक से लेकर ३९ वे शतक तक के
७ शतको में १२-१२ अवान्तर शतक हैं । इस प्रकार ८४ शतक हैं ।
४० वे शतक में २१ अवान्तर शतक हैं । ४१ वे शतक में अवान्तर

शास्त्र प्रशस्ति

शास्त्र प्रशस्तिनी अर्पण्णु करतां सूत्रकार सौथी पडेलीं शास्त्रना शतके।
अने उद्देशाञ्जाना प्रमाणुं कथन प्रगट कडे छे.—‘सव्वाए भगवईए अट्टतीसं
सतं सयाणं, उद्देसगाणं एगूणवीसई पंचवीसाइं सयाइं’ आ संपूर्ण भगवती
सूत्रना १३८ अेकसोआठतीस शतके कछा छे तेनी गण्णुती आ प्रमाणे छे,
पडेली शतकथी आर बाने णतीसमा शतक सुधीमां अवान्तर शतके आवता
नथी ३२ णतीसमा शतकथी ३६ अेगण्णुआणीसमा शतक सुधी ७ सात
शतकेमां १२-१२ आर आर अवान्तर शतके आवे छे. आ रीते ८४ अेर्याशी
शतके थर्ध णय छे, आणीसमा शतकेमां २१ अेकवीस अवान्तर शतके कछा

शतके तु अवान्तरशतकं नास्तीत्येकमेव शतकम् १, तदेवं-३२-८४=२१= १ सर्वसंकलनया अष्टत्रिंशदधिकमेकं शतं (१३८) शतकानां भवति । तथा- 'उद्देशगाणं' उद्देशकानाम्- 'एगूणवीसई पंचवीसाइं सयाइं' पञ्चविंशत्यधिकानि एकोनविंशतिः शतानि १९२५ भवन्तीति ॥

अथोपसंहरन् भगवतीसूत्रस्थितपदानां संख्याप्रतिपादिकां गाथामाह- 'चुलसीइ' इत्यादि ।

मूलम्-चुलसीइ सय सहस्सा, पयाण पवरवरनाणदंसीहिं ।

भावाभावमणंता, पन्नत्ता एत्थ मंगंमि ॥१॥

छाया-चतुरशीति शतसहस्राणि, पदानां प्रवरवरज्ञानदर्शिभिः ।

भावाभावा अनन्ताः, प्रज्ञप्ता अत्राक्के ॥१॥

टीका- 'चुलसीइ सयसहस्सा पयाणं पवरवरनाणदंसीहिं' चतुरशीति शत प्रवरवरज्ञानदर्शिभिः प्रज्ञप्तानि अस्मिन्-भगवत्याख्य पञ्चमाङ्गे पदानि चतुर-शीति शतसहस्राणि विद्यन्ते इति पदानि विशिष्टसंप्रदायगम्याणि पवराणां वरं यज्ज्ञानं तेन ज्ञानेन पश्यन्तीति प्रवरवरज्ञानदर्शिन रतैः केवलिभिरित्यर्थः

शतक नहीं हैं । एक ही शतक हैं । इस प्रकार ३२-८४-२१ ये सब मिलकर १३८ शतक होते हैं । तथा उद्देशको की संख्या १९२५ है ।

अब भगवतीसूत्र स्थित पदों की संख्या प्रतिपादक गाथाका कथन सूत्रकार करते हैं--

'चुलसीइ सयसहस्सा पयाण पवरवरनाण दंसीहिं ।

भावाभाव मणंता पन्नत्ता एत्थ मंगंमि ॥१॥

इस भगवती नामके पंचम अङ्ग में पदों की संख्या केवली भगवन्तोने ४४ लाख कही है । यह पदों की संख्या विशिष्ट संप्रदाय गम्य

छे. तथा ४१ ऐकताणीसमा शतकमां अवान्तर शतके थता नथी. ऐक ७ शतक छे. आ रीते ३२-८४-२१-१ आ यथा मणीने कुल १३८ ऐकसेने आउत्रीस शतके थथ जय छे. तथा उद्देशाओनी स'भ्या कुल १९२५ ऐक डण्णर नवसे पचीसनी कडेल छे.

इवे भगवती सूत्रमां कडेल पढोनी स'भ्यानुं प्रतिपादन करनार गाथानुं सूत्रकार कथन करे छे.--

'चुलसीई सयसहस्सा पयाण पवरवरनाणदंसीहिं ।

भावाभावमणंता पन्नत्ता एत्थ मंगंमि ॥१॥

आ भगवती सूत्र नामना पांथमा अंगमां पढोनी स'भ्या केवली भगवानोअे ८४ चोयशीलाथ कडेल छे. आ पढोनी स'भ्या विशेष संप्र-

प्रज्ञप्तानीति योगः । इदमतेस्य सूत्रस्य पदपरिमाणं कथितम् अथार्थ स्वरूपमाह—
 'भावाभावमणंता' भावाः जीवादयः पदार्थाः अभावाश्च ते एव जीवादयः अन्या-
 पेक्षया इति भावाभावाः, अथवा भावा विधयः अभावा निषेधा इति भावाभावाः
 ते च भावाभावाः अनन्ताः 'एत्थ मंगंमि अत्र अस्मिन् भगवतीनामके पञ्चमाङ्गे
 अथवा भावाभावैः विषय भूतैरनन्तानि इति भावानन्तानि चतुरशीति शतसहस्राणि
 पदानि प्रज्ञप्तानीति गार्थः ॥१॥

मूलम्—पणत्तीए आइमाणं अट्टण्हं सयाणं दो दो उद्देसगा
 उद्दिसिज्जंति । णवरं चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ट, वित्तिय-
 दिवसे दो उद्देसगा उद्दिसिज्जंति । णवमाओ सयाओ आरद्धं
 जावइयं जावइयं पवेइ तावइयं तावइयं एगदिवसेणं उद्दि-
 सिज्जइ, उक्कोसेणं सयं पि एगदिवसेणं, मज्झिसेणं दोहिं दिव-
 सेहिं सयं, एवं जाव वीसइमं सयं, णवरं गोसालो एगदिवसेणं
 उद्दिसिज्जइ । जइ ठिओ एगेण च्चव आयंविलेणं अणुन्नच्चइ ।
 अहणं ठिओ आयंविलेणं छट्ठेणं अणुपणच्चइ । एकवीस-
 वावीस-तेवीसमाइं सयाइं एककेक दिवसेणं उद्दिसिज्जंति । चउ-
 वीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देसगा । पंचवीसइमं दोहिं
 दिवसेहिं छ छ उद्देसगा । वंधिसयाइं अट्टसयाइं एगेणं दिव-
 सेणं, सेढिसयाइं वारस एगेणं, एगिंदिय महाजुम्मसयाइं वारस
 एगेणं । एवं वेदियाणं वारस, तेइंदियाणं वारस, चउरिंदियाणं

है । तथा भगवती सूत्र में जीवादिरूप भावपदार्थ एवं अन्य की अपेक्षा
 से अभाव रूप वे ही जीवादिरूप अभाव पदार्थ अथवा भाव-विधि और
 अभाव-निषेध रूप भावाभाव अनन्त कहे हैं । अथवा विषयभूत भावा-
 भावों से अनन्त चौरासी लाख पद कहे गये हैं । ऐसा यह गार्थ है ।

हाथथी नएली शक्याय छे. तथा आ भगवती सूत्रमां उवाट्टिइय लाव पदार्थ
 अथवा लाव विधि अने अभाव निषेधइय लावालाव अनन्त कहेल छे.
 अथवा विषयइय लावालावोधी अनन्त चौराशीलाखपदे उडेवामां आवेले छे.
 आ प्रभाषे आ गार्थाने अर्थ थाय छे.

चारस एगे वा । असन्नि पञ्चिदियमहाजुम्मसयाइं एकवीसं
एगदिवसेणं उदिसिज्जंति । रासिजुम्मसयं एगदिवसेणं उदिसिज्जइ ।

छाया-प्रज्ञप्त्याम् आदिमानाम् अष्टानां शतकानां द्वौ द्वौ उद्देशकौ च उद्दि-
श्येते, नवरं चतुर्थे शतके प्रथमदिसे अष्ट, द्वितीय दिवसे द्वौ च उद्दिश्यन्ते ।
नवमात् शतकात् आरब्धं यावत्कं यावत्कं प्रवेचने तावत्कं तावत्कम् एकदिवसेन
उद्दिश्यते, उत्कर्षेण शतकमपि एकदिवसेन, मध्यमेन द्वाभ्यां दिवसाभ्यां शतकम्
एवं यावत् विंशतितमं शतकम्, नवरं गोशालम् (अध्ययनम्) एकदिवसेन उद्दिश्यते
यदि स्थितः एकेनैव आचामाम्भेन अनुज्ञाप्यते । अथ खलु स्थितः आचामाम्भेन
पण्ठेन अनुज्ञाप्यते एकविंशद्वाविंशत्रयोविंशतितमानि शतकानि एकैकदिवसेन
श्रेणिशतकानि द्वादश एकेन एकेन्द्रियमहायुग्मशतकानि द्वादश एकेन । एवं
द्वीन्द्रियाणां द्वादश, त्रीन्द्रियाणां द्वादश, चतुरिन्द्रियाणां द्वादश एकेन । असंज्ञि-
पञ्चेन्द्रियाणां द्वादश, संज्ञि पञ्चेन्द्रियमहायुग्म शतकानि एकविंशतिः एकदिवसेन
उद्दिश्यन्ते । राशियुग्मशतकम् एकदिवसेन उद्दिश्यन्ते ॥

टीका-कस्मिन् दिने कति उद्देशका उद्दिश्यन्ते इत्याह-‘पण्णत्तीए’ प्रज्ञप्त्याम्
‘आइमाणं अट्ठहं सयाणं’ आद्यानामष्टानां शतानाम् ‘दो दो उद्देशगा उदिसिज्जंति
द्वौ द्वौ उद्देशकौ उद्दिश्यन्ते ‘नवरं चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ठ’ नवरं विशेषस्त्वयं
चतुर्थे शतके प्रथमदिवसे अष्ट उद्देशका उद्दिश्यन्ते तथा ‘वितीयदिवसे दो उद्देशगा
उदिसिज्जंति’ द्वितीयदिवसे द्वौ उद्देशकौ उद्दिश्यते ‘नवमाओ सयाओ आरद्धं’

‘पण्णत्तीए आइमाणं अट्ठहं सयाणं दो दो उद्देशगा उदिसिज्जंति’ इ.

टीकार्थ-एकदिन में कितने उद्देशक उपदिष्ट होते हैं इसके लिये
कहा गया है कि प्रज्ञप्ति में आदि के आठ शतकों के दो दो उद्देशक एक
एकदिन में उपदिष्ट होते हैं । परन्तु ‘चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ठ’ पहिले
दिन चतुर्थ शतक के आठ उद्देशक और दूसरे दिन दो उद्देशक उपदिष्ट
होते हैं । ‘नवमाओ सयाओ आरद्धं जावहयं २ पवेइ तावहयं २ एग

‘पण्णत्तीए आइमाणं अट्ठहं सयाणं दो दो उद्देशगा उदिसिज्जंति’
इत्यादि सूत्र ओकदिवसमां उट्टला उद्देशाओने। उपदेश करी शकय छे ?
आ प्रश्नना उत्तरमां उट्टेल छे के-प्रज्ञप्तिमां पडेल्ला आठ शतकेना अण्णे
उद्देशाओ। ओक ओक दिवसमां उपदेश आपी शकय छे अर्थात्
पडेल्ला आठ शतकेना अण्णे उद्देशाओतुं कथन दरेशेण करी शकय
छे. परंतु ‘चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ठ’ पडेल्ला दिवसे यथा शतकेना
आठ उद्देशाओ। अने थीण दिवसे जे उद्देशाने। उपदेश आपी शकय छे,

नवमात् शतादारब्धम् 'जावइयं जावइयं' यावत्तिकं यावत्तिकं यावत्
 'पवेइ' प्रवेदयति-प्रवेदयति-शक्यते 'तावइयं तौवइयं' तावत्प्रमाणम् तावत्प्र-
 माणम् 'एगदिवसेणं' एकदिवसेन 'उदिसिज्जइ' उदिस्यते नवमशतादारभ्य
 अग्रे यावत्प्रमाणं व्याख्यातुं शक्यते तावत्प्रमाणं यथेच्छं व्याख्यातव्यमि-
 तिभावः । कियत्पर्यन्तं व्याख्यातव्यमित्याह- 'उक्कोसेणं सयंपि एगदिवसेणं'
 उत्कर्षेण परिपूर्णं शतमपि एकदिवसेन 'मज्झिमेणं' मध्यमेन मध्यमतया 'दोहिं
 दिवसेहिं सयं' द्वाभ्यां दिवसाभ्यां शतम् 'उदिसिज्जइ' उदिस्यते 'जहन्नेणं
 तिहिं दिवसेहिं सयं' जघन्येन त्रिभिर्दिवसैः शतकमुदिस्यते 'एवं जाव वीसइमं
 सयं' एवं यावत् त्रिंशत्तितमं शतकं त्रिंशत्तितमशतक पर्यन्तं मुदिस्यते 'नवरं' विशेष-
 स्त्वयम् 'गोसालो एगदिवसेणं उदिसिज्जइ' गोशालकशतं पञ्चदशम् एकदिवसेन
 उदिस्यते 'जइ ठिओ' यदि स्थितः यदि गोशालकाधिकारः स्थितः अवशिष्टो भवे-

दिवसेण उदिसिज्जइ' तथा नीचं शतक से लेकर आगे जितना जितना
 एकदिन में कहा जा सके उतना उतना इच्छानुसार उपदिष्ट करना
 चाहिये-व्याख्यान में कहना चाहिये । इस प्रकार यदि एकदिन में भी
 उत्कृष्ट रूप से एन पूरा शतक व्याख्यात उपदिष्ट हो सकता हो तो
 व्याख्यात कर देना चाहिये और मध्यम रूप से यदि वह दो दिन में
 उपदिष्ट हो सकता हो तो उसे दो दिन में भी उपदिष्ट कर देना
 चाहिए और जघन्य से उसे तीन दिन में भी उपदेश में कह देना चाहिये
 'एवं जाव वीसइमं सयं' ऐसा यह शतक के उपदिष्ट होने का कथन
 वीसवें शतक तक कहा गया जानना चाहिए । परन्तु 'गोसालो एग-
 दिवसेणं उदिसिज्जइ, पन्द्रहवां जो गोशालक शतक है उसका तो

'नवमाओ सयाओ आरद्धं जावइयं २ तावइयं २ एगदिवसेणं उदिसिज्जइ' तथा
 नवमा शतकथी लघने आगण नेटला नेटला उद्देशाओ ओक द्विसभां कही शक्य
 नेटला नेटला उद्देशाओ उच्छा प्रमाणे कडेवा नेधओ.-अर्थात् व्याख्यानमां
 कथन करवा नेधओ. आ रीते ने ओकद्विसभां पणु उत्कृष्ट रूपथी ओक शतक
 पूरेपूरे व्याख्यानमां कही शक्य तेम डोय तो पूरेपूरा ओक शतकने उपदेश
 कडेवा नेधओ. अर्थात् उपदेश आपवा नेधओ. अने मध्यम पणुथी ने ते
 ने द्विसभां उपदेश कही शक्य तेम डोय तो ने द्विसभां पणु तेने उपदेश
 आपवा. अने लघन्यथी त्रसु द्विसभां पणु उपदेश रूपे कडेवा नेधओ. 'एवं
 जाव वीसइमं सयं' आ रीते आ शतकेने उपदेश आपवा संअंधी कथन
 वीसभा शतक सुधी कडेवा छे. तेम समल्लु. परन्तु 'गोसाले एगदिवसेणं
 उदिसिज्जइ' पदरमु ने गोशालक शतक छे, तेने उपदेश-व्याख्यान ओक न

तदा 'एणेण चैव आयंविलेणं' एकनैव आचामाम्भेन एकमाचामाम्भं कृत्वा द्वितीय दिवसे 'अणुन्नच्चह' अनुज्ञाप्यते उद्दिश्यते 'अह णं' अथ खलु पुनरपि च यदि 'ठिओ' स्थितः अवशिष्टो भवेत्तदा सः 'आयंविलेणं छट्टेण अणुण्णच्चह' आचामाम्भेन पष्ठेन-आचामाम्भ द्वयेन तृतीय दिवसे अनुज्ञाप्यते उद्दिश्यते 'एकवीस वावीस तेवीस इमाइं सयाइं एक्केक्कदिवसेणं उद्दिसिज्जांति' एकविंशति-द्वाविंशति-त्रयो-विंशति-तमानि शतकानि एकदिवसेनैव उद्दिश्यन्ते । 'चउवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं' छ छ उद्देशगा' चतुर्विंशतितमं शतकं द्वाभ्यां दिवसाभ्यां पट् पट्ट इति द्विपङ्गमेकने द्वादश भवन्ति, तेन प्रत्येक दिवसे द्वादशेति द्वाभ्यां दिवसाभ्यां चतु-र्विंशतिरुद्देशका उद्दिश्यन्ते, इत्यर्थो बोध्यः, चतुर्विंशतितमशतके चतुर्विंशत्युद्देश-कानां सदभावात् 'पंचवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं' छ-छ उद्देशगा' पञ्चविंशतितमं

व्याख्यान उपदेश एक ही दिन में करना चाहिए । यदि वह कुछ बाकी बचा रहता है तो उसका एक आयंबिलकरके दूसरे दिन उपदेश करना चाहिए । फिर भी यदि वह बाकी बचा रहता है तो दो आयंबिलकरके तृतीय दिन उसका उपदेश करना चाहिए 'एकवीसवावीस तेवीस इमाइं सयाइं एक्केक्क दिवसेणं उद्दिसिज्जांति' २१ वां शतक, २२ वां शतक एवं २३ वां शतक इनका उपदेश एक एक दिन में करना चाहिए 'चउवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं ६-६ उद्देशगा' चौबीस वें शतकका एकदिन में छ-छ उद्देशको को लेकर व्याख्यान करना चाहिए इस प्रकार एकदिन में १२ उद्देशको का व्याख्यान हो जाता है । इसी प्रकार दो दिन में इसके २४ उद्देशको का व्याख्यान हो जाता है ।

दिवसमां करी देवे। नेधये. ओक दिवसमां उपदेश करतां ने कदाच भाडी रही नय तो ओक आयंबिल करीने नीने दिवसे तेनुं व्याख्यान-उपदेश करी देवे। नेधये. तो पष्प ने भाडी रही नय तो ये आयंबिल करीने नीने दिवसे तेनुं कथन करपुं नेधये. 'एक्कवीसवावीसतेवीसइमाइं सयाइं एक्केक्कदिवसेणं उद्दिसिज्जांति' २१ ओकवीसमुं शतक २२ वावीसमुं शतक अने २३ तेवीसमुं शतक आने। उपदेश ओक ओक दिवसे करी देवे। नेधये. 'चउवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं' छ छ उद्देशगा' चौबीसमा शतकना ओकदिवसमां छ छ उद्देशाओ लधने उपदेश करवे। नेधये. आ रीते ओक दिवसमां १२ आर उद्देशाओनु कथन थध नय छे. आण प्रमाणे नीने दिवसे पष्प आर उद्देशाओनुं व्याख्यान करी देपुं नेधये. आ प्रमाणे ये दिवसमां तेना २४ चौबीस उद्देशाओनुं व्याख्यान थध नय छे. चौबीसमा शतकमां २४ चौबीस

शतकं द्वाभ्यां दिवसाभ्यां षट् षट् उद्देशकानुद्दिश्य उपदिश्यन्ते । 'बन्धिसयाइं अट्ट-
सयाइं एगेणं दिवसेणं' बन्धिशतकाद्यष्टशतानि एकेन दिवसेनोपदिश्यन्ते 'सेदि-
सयाइं बारस एगेणं' श्रेणि शतानि द्वादश एकेन दिवसेनोपदिश्यन्ते । 'एगिंदिय
महाजुम्मसयाइं बारस एगेणं' द्वादश एकेन्द्रिय महायुग्मशतानि एकदिवसेनोपदि-
श्यन्ते । 'एवं वेदियाणं बारस' एवं द्वीन्द्रियाणां द्वादशशतानि 'तेइंदियाणं
बारस चउरिंदियाणं बारसएगेणं' त्रीन्द्रियाणां द्वादशशतानि चतुरिन्द्रियाणां
द्वादशशतानि एकेन दिवसेनोपदिश्यन्ते 'असन्निपंचिदियाणं बारस सन्निपंचिदिय-
महाजुम्म सयाइं एकवीसं एगदिवसेण उदिसिञ्जंति' असंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां द्वादश

चौबीसवे शतक में २४ उद्देशक हैं । 'पंचवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं'
छ छ उद्देशगा पञ्चीसवे शतकका व्याख्यान २-६ उद्देशको को लेकर २
दिनमें करना चाहिये । 'बन्धिसयाइं अट्टसयाइं एगेणं दिवसेणं' बन्धिशतक
आदि आठ शतोंका व्याख्यान एकदिनमें करना चाहिये । 'सेदिसयाइं
बारस एगेणं' श्रेणि शत आदि १२ शतोंका व्याख्यान एकदिन में करना
चाहिए । 'एगिंदिय महाजुम्मसयाइं बारस एगेणं' एकेन्द्रियके १२महायु-
ग्म शतों का व्याख्यान एकदिन में करना चाहिए । 'एवं वेदियाणं बारस'
दोइन्द्रियके १२ महायुग्म शत तेइन्द्रियके १२ महायुग्म चौइन्द्रियोंके
४१ महायुग्मशत और असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंके ४१ महायुग्मशत एवं संज्ञी

उद्देशाञ्चो कथा छे. 'पंचवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देशगा' पञ्चीसमा
शतकेतुं व्याख्यान छ छ उद्देशाञ्चो लधने २ जे दिवसमां कडेवुं लेधञ्जे.
'बन्धिसयाइं अट्टसयाइं एगेणं दिवसेणं' बन्धिशतक विगेरे आठ शतकेतुं व्या-
ख्यान ओक ज दिवसे कडेवुं लेधञ्जे. 'सेदिसयाइं बारस एगेणं' श्रेणिशतक
विगेरे बार शतकेतुं व्याख्यान ओक ज दिवसमां करवुं लेधञ्जे 'एगिंदिय
महाजुम्मसयाणं बारस एगेणं' ८ ओकेन्द्रियेना १२ बार महायुग्म शतकेतुं
व्याख्यान ओक ज दिवसमां करवुं लेधञ्जे. 'एवं वेदियाणं बारस' जे इन्द्रिय
वाणा लुवेना संभंधना १२ बार महायुग्म शतके, त्रयु इन्द्रियवाणा लुवेना
संभंधमां १२ महायुग्म शतके, चार इन्द्रियवाणा लुवेना संभंधमां १२
बार महायुग्म शतके, तथा पांच इन्द्रियवाणा लुवेना संभंधमां १२ बार
महायुग्म शतके अने संज्ञी पञ्चेन्द्रियेना संभंधमां २१ ओकवीस महायुग्म

शतानि तथा संज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुगमशतानि एकत्रिंशतिरेकदिवसेनोपदिश्यन्ते ।
 'रासीजुम्मसयं एगदिवसेणं ऊदिसिज्जइ' राशियुगमशतमेकचत्वारिंशं शतकं
 समग्रमपि एकदिवसेन उपदिश्यते इति ।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
 कलितकलितकलापालापकपविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक,
 वादिमानमर्दक-श्रीशाहूरुच्छत्रपति कोल्हापुरराजपदत्त-
 'जैनाचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु-
 बालब्रह्मचारि — जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
 -पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री "भग-
 वतीसूत्रस्य " प्रमेयचन्द्रिकाख्या

व्याख्या समाप्ताः

॥ भगवती सम्पूर्णा ॥

पञ्चन्द्रिय के ४१ महायुगम शत ये सब महायुगम शत एक एक दिन में
 उपदिष्ट करदेना चाहिए तथा राशियुगम शत ४१ वां शतक पूरा का
 पूरा एक दिन में उपदिष्ट करना चाहिए ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
 "भगवतीसूत्र" की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या समाप्त ।

भगवती सूत्र समाप्त ॥

शतक आ महायुगम शतकेनुं कथन ओक ओक दिवसमां करी लेवुं नैधं ओ.
 तथा राशियुगम शतक ४१ ओकताणीसमां शतकेनुं व्याख्यान पूरेपूरे ओक न
 दिवसमा करी लेवुं नैधं ओ. आ प्रभाणे आ शास्त्र प्रशस्ति कहेल छे.

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर श्री पूज्य श्री घासीलाल महाराजकृत
 'भगवतीसूत्र' की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या समाप्त ॥

॥ भगवतीसूत्र समाप्ता ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

॥ श्री स्तुभे ॥

श्री मह घासीलाल मुनीश्वरे विनयेतेतराम



